इतिहास

एक अध्ययन

रायल इन्स्टिट्यूट आव इंटरनेशनल अफेयर्स गैर-सरकारी तथा अराजनैतिक संस्था है। यह सन् १९२० में अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नों के वैज्ञानिक अध्ययन को सुविधाजनक बनाने तथा प्रोत्साहित करने के लिए स्थापित की गयी थी।

ऐसा होने के कारण इंस्टिट्यूट किसी अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्न पर नियमतः अपना मत नहीं दे सकता। इस पुस्तक में जो मत व्यक्त किये गये हैं वे व्यक्तिगत हैं।

हिन्दी समिति ग्रन्थमाला—१३५

इतिहास : एक अध्ययन

लेखक
आरनाल्ड जे० ट्वायनबी
आनरेरी डी० लिट्० अक्सफोर्ड तथा वरमिंघम
आनरेरी एल० एल० डी० प्रिंसटन, एफ० बी० ए०
अध्ययन के निदेशक रायल इंस्टिटचूट आव इंटरनेशनल अफेयर्स
अंतर्राष्ट्रीय इतिहास के रिसर्च प्रोफ़ेसर, लंदन विश्वविद्यालय
[दोनों सर डैनियल स्टिवेनसन की आय (फाउंडेशन) पर]

संक्षेपकर्ता
डी० सी० सोमरवेल

अनुवादक
कृष्णदेव प्रसाद गौड, एम०ए० (अंग्रेजी तथा राजनीति)
अवसरप्राप्त प्रिंसिपल, डी० ए० वी० कालेज, वाराणसी

हिन्दी समिति
सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश
लखनऊ

प्रथम संस्करण

१९६६

[Hindi Translation of A STUDY OF HISTORY by ARNOLD J TOYNBEE, D Litt Issued under the auspices of the Royal Institute of International Affairs OXFORD UNIVERSITY PRESS, London New York, Toronto 1946]

मूल्य

१२.००

बारह रुपये

प्रथम खण्ड

पुस्तक की योजना

(यह खण्ड १–५ भाग का सक्षेप है)

१ विषय प्रवेश
२ सभ्यताओ की उत्पत्ति
३ सभ्यताओ का विकास
४ सभ्यताओ का विनाश
५ सभ्यताओ का विघटन

(भाग ६ से १३ तक का सक्षेप दूसरे खण्ड में है)

६ सार्वभौम राज्य
७ सार्वभौम धर्मतन्त्र
८ वीर काल
९ देश (स्पेस) में सभ्यताओ का सम्पर्क
१० काल में सभ्यताओ का सम्पर्क
११ सभ्यताओ के इतिहास में लय
१२ पश्चिमी सभ्यता का भविष्य
१३ इतिहासकारों की प्रेरणा

प्रस्तावना

हिन्दी और प्रादेशिक भाषाओं को शिक्षा के माध्यम के रूप में अपनाने के लिए यह आवश्यक है कि इनमें उच्चकोटि के प्रामाणिक ग्रन्थ अधिक-से-अधिक संख्या में तैयार किये जायें। भारत सरकार ने यह कार्य वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग के हाथ में सौंपा है और उसने इसे बड़े पैमाने पर करने की योजना बनायी है। इस योजना के अन्तर्गत अंग्रेजी और अन्य भाषाओं के प्रामाणिक ग्रन्थों का अनुवाद किया जा रहा है तथा मौलिक ग्रन्थ भी लिखाये जा रहे हैं। यह काम अधिकतर राज्य सरकारों, विश्वविद्यालयों तथा प्रकाशकों की सहायता से प्रारम्भ किया गया है। कुछ अनुवाद और प्रकाशन-कार्य आयोग स्वयं अपने अधीन भी करवा रहा है। प्रसिद्ध विद्वान और अध्यापक हमें इस योजना में सहयोग दे रहे हैं। अनूदित और नये साहित्य में भारत सरकार द्वारा स्वीकृत शब्दावली का ही प्रयोग किया जा रहा है ताकि भारत की सभी शिक्षा संस्थाओं में एक ही पारिभाषिक शब्दावली के आधार पर शिक्षा का आयोजन किया जा सके।

'इतिहास : एक अध्ययन' नामक पुस्तक हिन्दी समिति सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश शासन, लखनऊ द्वारा प्रस्तुत की जा रही है। इसके मूल लेखक आरनाल्ड जे० टवायनबी, डी० लिट० और अनुवादक श्री कृष्णदेव प्रसाद गौड एम० ए०, अवकाशप्राप्त प्रिंसिपल, डी० ए० वी० कालेज, वाराणसी, हैं। आशा है कि भारत सरकार द्वारा मानव ग्रन्थों के प्रकाशन सम्बन्धी इस प्रयास का सभी क्षेत्रों में स्वागत किया जायगा।

निहालकरण सेठी

अध्यक्ष, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग।

प्रकाशकीय

उत्थान-पतन, ह्रास और विकास का चक्र प्रकृति में सदैव चलता रहता है। मानव जगत् भी उससे अलग नही है। सभ्यताएँ बनती और बिगडती हैं। पुरानी सभ्यता का कोई गुण जब किसी नयी सभ्यता में प्रकट होता है, तो उसे इतिहास की पुनरावृत्ति कहा जाता है। ज्ञात सभ्यताओ की इसी पृष्ठभूमि को लेकर सुप्रसिद्ध विद्वान् प्रो० टवायनबी ने ऐतिहासिक तथ्यो का अनुसधान किया है। प्रस्तुत ग्रन्थ उनके गम्भीर एव विवेकपूर्ण अध्ययन का परिणाम है।

अंग्रेजी में इस महान् ग्रन्थ का सक्षिप्तीकरण श्री सामरवेल द्वारा दो खण्डो में किया गया है, जिनका भारत सरकार ने अपनी मानक ग्रन्थ योजना में लेकर हिन्दी समिति से राष्ट्रभाषा में प्रकाशित करने का अनुरोध किया था। अतएव इसके प्रथम खण्ड का हिन्दी रूपान्तर वाराणसी के सुप्रसिद्ध कवि एव लेखक श्री कृष्णदेव प्रसाद गौड से और दूसरे खण्ड का हिन्दी अनुवाद इलाहाबाद के प्रतिष्ठित विद्वान् श्री रामनाथ 'सुमन' द्वारा सम्पन्न कराया गया है। हिन्दी समिति इन दोनो विद्वानो के प्रति आभारी है, जिनके सत्प्रयास से अन्तर्राष्ट्रीय विषयो के ममज्ञ टवायनबी-जैसे इतिहासकार की कृति की अवतारणा हिन्दी में सुलभ हुई। हमें विश्वास है, विश्वविद्यालयो की उच्च कक्षाओ के विद्यार्थियो और जिज्ञासुओ का इस प्रकाशन से यथेष्ट लाभ होगा।

रमेशचन्द्र पन्त
सचिव, हिन्दी समिति।

अनुवादक को भूमिका

एक भाषा से दूसरी म अनुवाद करना बहुत कठिन होता है। द्वायनवी की भाषा बडी लच्छेदार, साहित्यिक और स्थल-स्थल पर सन्दर्भों से भरी हुई है। पुस्तक पढने वाला को पता चलेगा कि वह इतिहास के ही एक प्रकाण्ड विद्वान् नही ह, साहित्य के कुशल कलाकार भी ह। ऐसी अवस्था में अनुवाद का काय और भी कठिन हो गया। हिन्दी की प्रकृति की रक्षा करते हुए जहाँ तक सम्भव हुआ है लेखक के भाव तथा अथ को अनुवाद में लाने की चेष्टा की गयी है। तकनीकी शब्दा का अथ भारत सरकार के पारिभाषिक शब्द-सग्रह से लिया गया है।

पुस्तक के सम्बन्ध में कहना अनावश्यक है। इस महान् ग्रन्थ का प्रकाशन करके हिन्दी समिति ने हिन्दी को गौरवान्वित किया है।

पुस्तक पहले ही प्रकाशित हो जाती किन्तु अस्वस्थता के कारण इसमें विलम्ब हुआ। हिन्दी समिति ने मुझे समय देने में उदारता दिखायी इसके लिए म समिति के अधिकारियो का आभारी हूँ।

—अनुवादक

लेखक की भूमिका

आगे के नोट में श्री डी० सी० सोमरवेल ने बताया है कि उन्होने किस प्रकार मेरी पुस्तक के छ खण्डो का सक्षेप किया है। इसके पहले कि मुझे इसकी कुछ जानकारी हो मुझ से कई स्थानो से विशेषत सयुक्त राज्य से यह पूछा गया कि जितने खण्ड छप गये हैं उनके सक्षिप्त सस्करण की कोई सम्भावना है, इसके पहले कि कि पूरे खण्ड प्रकाशित हो क्योकि युद्ध के कारण अनिवाय रूप से उनका छपना स्थगित हो गया था। इस माँग की शक्ति का अनुभव तो कर रहा था किन्तु समझ नही पा रहा था कि किस प्रकार यह काय हो। म युद्ध के कामो में फँसा हुआ था। यकायक एक पत्र पाने पर यह समस्या सुलझ गयी। श्री सोमरवेल ने मुझे लिखा कि एक सक्षेप मेरे पास तैयार है।

जब श्री सोमरवेल ने पाण्डुलिपि मेरे पास भेजी ४–६ खण्डो को प्रकाशित हुए चार साल बीत चुके थे। और १–३ खण्ड को प्रकाशित हुए नौ वष। मेरा खयाल है कि लेखक के लिए जो चीज प्रकाशन के पहले उसकी निजी होती है, प्रकाशन के बाद दूसरे की हो जाती है। और इस अवस्था मे तो १९३९–४५ का युद्ध भी बीच में आ गया। उसके साथ वातावरण तथा मेरा काय भी बदल गया। ये भी मेरे तथा मेरी पुस्तक के बीच आ गये। ४–६ खण्ड युद्ध आरम्भ होने के इकतालीस दिन पहले प्रकाशित हुए थे। इस कारण जब मने श्री सोमरवेल का सक्षेप पढा तो यद्यपि उन्होन मेरे ही शब्द रखे ह मुझे ऐसा जान पडा कि म कोई नयी पुस्तक पढ रहा हूँ जो किसी दूसरे की लिखी है। मने जहाँ-तहा—श्री सोमरवेवल की सहमति से—भाषा में परिवतन किया है ज्यो ज्यो मैं पढ़ता गया हूँ, किन्तु मने भूल से तुलना नही की है। मैंने एसा कोई अश नही रखा है जिसे सोमरवेल ने छोड दिया हो, क्योकि लेखक ही इस बात को अच्छी तरह समझ सकता है कि कौन अश पुस्तक के लिए आवश्यक है।

चतुराई से किया हुआ सक्षेप लेखक की बडी सेवा करता है जिसे लेखक स्वय नही कर सकता और इस खण्ड के पाठक जिन्होने मूल पुस्तक भी पढी है वह मुझसे सहमत होगे कि श्री सोमरवेल न अच्छी साहित्यिक कला का परिचय दिया है। उन्होने पुस्तक के विषय की रक्षा की है और अधिकाश मेरे ही शब्दो को रखा है। साथ ही साथ छ खण्डो को एक खण्ड में कर दिया है। यदि यह काय मने किया होता तो सन्देह है कि म उसे कर पाता।

यद्यपि श्री सोमरवेल ने सक्षेप करके मेरा काम बहुत हल्का कर दिया परन्तु इसे दोहराने में मुझे दो साल और लग गये। हफ्तो बिना स्पश किये यह मेरे सिरहाने पडा रहता था। यह विलम्ब युद्ध की आवश्यक बातो के कारण हुआ। शेष पुस्तको के नोट मैंने ज्यो-के-त्यो न्यूयाक के विदेशी सम्पक विभाग की कौंसिल के पास सुरक्षित रखने के लिए भेज दिये। मने म्यूनिख सप्ताह म कौंसिल के मन्त्री श्री मेलोरी के पास भेज दिया और उन्होने कृपा करके उसकी सुरक्षा

का भार लिया और जब तक जीवन है यह आशा की जा सकती है कि कार्य समाप्त हो जाय। श्री सामरवेल के संक्षेपीकरण के लिए मैं एक कारण से और भी आभारी हूँ कि मैं अपना। आगे के खण्डों के लिखने में लगा सका।

मेरे लिए यह भी प्रसन्नता की बात है कि पूरी पुस्तक की भाँति यह संक्षेप भी आक्स युनिवर्सिटी प्रेस प्रकाशित कर रहा है। इसका इण्डेक्स कुमारी वी० एम० बा ने बनाया है जिनके प्रति पाठक इसलिए आभारी है कि उन्होंने खण्ड १–३ तथा खण्ड ४–६ इण्डेक्स भी बनाया है।

१९४६

—आरनाल्ड जे० ट्वा

नोट

सक्षेपकर्ता के सपादक का

श्री टवायनबी के 'इतिहास का अध्ययन' मानव-जाति की ऐतिहासिक अनुभूति के रूप तथा प्रकृति का क्रमवद्ध विपय है। यह उस समय से आरम्भ होता है जब इस जाति ने इस समाज ने, जिसे सभ्यता कहते ह पथ्वी पर ज म लिया। इस विपय की जहाँ तक सामग्री उपलब्ध है, तथा जहाँ तक आज तक मानव इतिहास की जानकारी है प्रत्येक स्थल पर पर्याप्त उदाहरणो से 'प्रमाणित' किया गया है। कुछ उदाहरण वहुत ब्योरे से दिये गये है। पुस्तक के इस रूप के होने के कारण सक्षेप करने वाले सम्पादक का काय मूलत सरल हो गया है। सारे विपयो को ज्या-का-त्या रखा गया है यद्यपि सक्षप में। कुछ सीमा तक उदाहरणो की सख्या कम कर दी गयी है, और ब्योरे में कुछ अधिक कमी की गयी है।

मेरी समझ में इस खण्ड द्वारा श्री टवायनबी के ऐतिहासिक दशन का समुचित निरूपण हो जाता है जैसा कि उ हाने अपने छ खण्डा में किया है यद्यपि अभी सम्पूण काय समाप्त नही हुआ है। यदि ऐसा न होता तो श्री टवायनबी इसके प्रकाशन की आज्ञा न देते। किन्तु मुझे दुख होगा यदि इसे मूल पुस्तक का प्रतिरूप मान लिया जायगा। काम चलाने के लिए यह प्रतिरूप हो सकता है किन्तु आन द के लिए नही, क्योकि मूल पुस्तक का सौंदय उसके आन ददायक उदाहरणो में है। विपय की महत्ता की दष्टि से मूल पुस्तकें ही समुचित है। मने मूल पुस्तक के ही वाक्य तथा अनुच्छेद रखे ह और मुझे इस बात की आशका नही है कि वे नीरस होगे। किन्तु साय ही मेरा यह भी मत है कि मूल पुस्तक अधिक आन द देंगी।

मने यह सक्षप अपने मनोरजन के लिए किया था। श्री टवायनबी का इसका पता न था और प्रकाशित करने की दृष्टि भी न थी। समय काटने के लिए मुझे यह अच्छा व्यसन मिल गया था। पूरा होने पर ही मैंन श्री टवायनबी का वताया और उनको दे दिया कि यदि उनकी इच्छा हो तो इसका उपयोग कर। इस पुस्तक का इस प्रकार ज म हुआ, इसलिए मने कहा-कही अपनी ओर से भी उदाहरण दे दिये है जो मूल पुस्तक में नही है। कहा भी गया है कि उस बैल का मुह नही ब द करना चाहिए जो अपने मालिक का अनाज खा रहा हो। मने जो उदाहरण दिये ह वे बहुत कम ह और उनका महत्त्व भी कम है। मेरी पाण्डुलिपि का श्री टवायनबी न दोहरा दिया है और उनकी स्वीकृति भी मिल गयी है। उनका विवरण यहाँ अथवा पाद-टिप्पणी में देना आवश्यक नही है। यहाँ उसको बता देना इसलिए आवश्यक था कि यदि कोई मूल से तुलना करे तो यह न समझे कि सक्षेप करने में ईमानदारी नही बर्ती गयी है। मूल पुस्तक के प्रकाशित होने तथा इसके प्रकाशन के बीच कुछ घटनाएँ ऐसी हो गयी है जिनके कारण मैंने अथवा श्री टवायनबी ने कही-कही एकाध वाक्य इसमें जोड दिये ह। किन्तु यह देखते हुए

कि पहले तीन खण्ड सन् १९३३ में प्रकाशित हुए थे और शेष १९३९ में, फिर भी इसकी आवश्यकता बहुत ही कम पड़ी।

परिशिष्ट में जो अनुक्रमणिका दी गयी है वह एक प्रकार से सक्षेप का सक्षेप है। इस पुस्तक में मूल पुस्तक के ३,००० पृष्ठों का ५६५ पृष्ठों में सक्षेप किया गया है और उसी की अनुक्रमणिका में २५ पृष्ठों में संक्षिप्त किया गया है। यदि उसी को पढ़ा जाय तो वह निहायत नीरस और निरर्थक जान पड़ेगा। किन्तु सन्दर्भ जानने के लिए वह उपयोगी होगा। वास्तव में वह एक प्रकार से विषय सूची है। उसे आरम्भ में न रखने का कारण केवल यही है कि चित्र के सामने वह भद्दी वस्तु-सी लगेगी।

जो पाठक मूल पुस्तक से इसका सम्बन्ध जानना चाहेंगे उनकी सुविधा के लिए नीचे का समीकरण दिया जाता है जो उपादेय होगा।

पृष्ठ	१	से पृष्ठ	६६ तक	मूल पुस्तक का खण्ड	१
पृष्ठ	६७	से पृष्ठ	१३७ तक	मूल पुस्तक का खण्ड	२
पृष्ठ	१३८	से पृष्ठ	२०३ तक	मूल पुस्तक का खण्ड	३
पृष्ठ	२०४	से पृष्ठ	२९९ तक	मूल पुस्तक का खण्ड	४
पृष्ठ	३००	से पृष्ठ	४१४ तक	मूल पुस्तक का खण्ड	५
पृष्ठ	४१४(६)	से पृष्ठ	४७७ तक	मूल पुस्तक का खण्ड	६

—डी० सी० सोमरवेल

विषय सूची

१ विषय-प्रवेश

२ सभ्यताओ की उत्पत्ति

३ सभ्यताओं का विकास

४ सभ्यताओं का विनाश

५ सभ्यताओं का विघटन

इतिहास : एक अध्ययन

प्रथम खण्ड

१

विषय-प्रवेश

१ ऐतिहासिक अध्ययन की इकाई

इतिहासकार जिस समाज में रहते है और काम करते है उस समाज के विचारो का परिष्कार नही करते, अपितु उसी को अपने सिद्धान्तो के उदाहरणस्वरूप प्रस्तुत करते है। इधर कुछ शतियो में, विशेषत कुछ पीढियो म, आत्मनिर्भर होने वाले स्वतन्त्र राष्ट्रो में जो विकास हुआ है उसके आधार पर इतिहासकारो ने राष्ट्रो को ही ऐतिहासिक अध्ययन के लिए चुना है। किन्तु यूरोप के किसी राष्ट्र अथवा राष्ट्रीय राज्य (नेशनल स्टट) का इतिहास ऐसा नही है जिसके द्वारा उसके इतिहास की व्याख्या की जा सके। यदि कोई ऐसा राज्य हो सकता तो वह ग्रट ब्रिटेन होता। यदि ग्रेट ब्रिटेन (और आरम्भिक कालो में इग्लैड) में अपने में ही ऐतिहासिक अध्ययन का समुचित क्षेत्र नही मिलता तो हम अच्छी तरह इस निष्कर्ष पर पहुँच सकते है कि कोई वतमान यूरोपीय राष्ट्रीय राज्य इस अध्ययन के उपयुक्त नही है।

क्या इग्लैड मात्र के इतिहास के अध्ययन से वहाँ का इतिहास स्पष्ट हो सकता है? क्या वहाँ के और बाहर के देशो के सम्बन्ध में हम वहाँ का आन्तरिक इतिहास पा सकते है। यदि यह सम्भव है तब क्या बाहरी देशो के सम्बन्ध का महत्त्व कम है? और जब हम इसका विश्लेषण करेंगे तब क्या हम इस परिणाम पर पहुचेंगे कि इग्लड पर विदेशी प्रभाव कम है और इग्लड का विदेशो पर अधिक प्रभाव पडा है? यदि इन प्रश्नो का उत्तर हाँ में है, तो हमारा यह निष्कर्ष ठीक होगा कि इग्लैड का इतिहास पढे बिना दूसरे देशो के इतिहास को समझना सम्भव न होगा, किन्तु दूसरे देशो के इतिहास को पढे बिना इग्लैड का इतिहास प्राय समझा जा सकता है। इन प्रश्नो पर भली भाति विचार करने के लिए हमको इग्लैड के इतिहास की प्रमुख घटनाओ पर उलटे क्रम से ध्यान देना चाहिए। इस उल्टे क्रम से मुख्य अध्याय इस प्रकार हो सकते है —

(क) औद्योगिक प्रणाली पर आर्थिक व्यवस्था की स्थापना
(अठारहवी शती के अन्तिम चतुर्थांश से)

(ख) उत्तरदायी ससदीय शासन की स्थापना
(सत्रहवी शती के अन्तिम चतुर्थांश से)

(ग) विदेशो में विस्तार
(सोलहवी शती के तीसरे चतुर्थांश में समुद्री डकैती से आरम्भ होकर उसका विश्वव्यापी विदेशी व्यापार में विकास, उष्ण कटिबन्ध के देशो का ग्रहण और शीतोष्ण जलवायु के प्रदेशो में अग्रेजी बोलने वाली जातियो के नये समुदायो की स्थापना।)

(घ) धार्मिक सुधार (रिफार्मेशन)
(सोलहवी शती के दूसरे चतुर्थांश से)

(च) पुनर्जागरण—(रेनसा)—आदोलन के राजनीतिक, आर्थिक, कलात्मक तथा बौद्धिक सभी पहलू (पन्द्रहवी शती के अतिम चतुर्थांश स)

(छ) सामती तत्र की स्थापना। (ग्यारहवी शती से)

(ज) तथाकथित वीरकालीन धम स अग्रजा का पश्चिम रा चल ईसाई धम में परिवतन (छठी शती के अतिम वर्षों से)

साधारणत अग्रेजी इतिहास को जब हम आज से पीछे की ओर देखत ह तब हमें जान पडता है कि जितना ही पहले जाते ह उतना ही आत्मनिभरता अथवा सबसे अलग रहन का कम प्रमाण मिलता है। वास्तव में धार्मिक परिवतन काल से अग्रेजी इतिहास का सब कुछ आरम्भ होता है। यह धम-परिवतन आत्म निभरता के बिल्कुल विपरीत था। इसके कारण लगभग आधे दजन बबर समुदाय नवजात पश्चिमी समाज में मिल गये जिनमें उनका सामान्य कल्याण था। जहाँ तक सामती तन्त्र की बात है 'विनो ग्रेडाफ' न सुदर ढग स बता दिया है कि नारमन विजय के पहले इग्लड की धरती पर उसका बीज उग चुका था। फिर भी इस अकुर को पनपने में शक्ति मिली बाहरी कारणा से, और वह थी डनिश चढाई। ये चढाइयाँ स्कडिनेविया की जनरेला (फोल्कर वन डुरग) का अश थी जिसके परिणामस्वरूप उसी समय फ्रास में भी सामती तत्र पनप रहा था। नारमन विजय ने इस तत्र को पूण रूप से स्थापित कर दिया। पुनर्जागरण के बारे में सभी स्वीकार करते ह कि उसका सास्कृतिक तथा राजनीतिक दोनो ही रूप, उत्तरी इटली के प्राण का उच्छ्वास था। यदि मानवतावाद (ह्यूमनिज्म) निरकुशतावाद (ऐब्सोल्युटिज्म) तथा शक्ति-सन्तुलन (बलेंस आव पावर) बाग में रोपे गये अकुर के समान छोटे रूप में उत्तरी इटली में १२७५ स १४७५ के बीच दो शतियो में न उगाये गय होते तो १४७५ के बाद आल्प्स के उत्तर में वे न जम पात। एक बात और। धम-सुधार विशेषत इग्लड की घटना न थी। वह सारे उत्तर-पश्चिमी यूरोप का आदोलन था जिसका अभिप्राय दक्षिण यूरोप के प्रभाव से अपने को मुक्त करना था क्योंकि इसका दृष्टि भूमध्य सागर के उन पश्चिमी देशो की ओर थी जो समाप्त हो चुके थ। धम-सुधार आदोलन में इग्लड का नेतृत्व नहा था। यूरोप के अतलान्तक तट के राष्ट्रा में विदेशा को विजय करने की जो होड चल रही थी उसमें भी इग्लड अगुआ नही था। जा शक्तियाँ पहले स मदान में थी, उनसे लडकर बाद में उसने विजय प्राप्त की।

अब दो अतिम प्रकरणो पर विचार करना है। ससदीय व्यवस्था और औद्योगिक व्यवस्था की उत्पत्ति जिनके सम्बन्ध में कहा जाता है कि इनका जन्म और विकास इग्लड में हुआ और यही से ससार के दूसरे देशा में ये गयी। विद्वान इस मत का समथन नही करते। ससदीय व्यवस्था के सम्बन्ध में लाड ऐक्टन का कहना है —साधारण इतिहास उन कारणा का परिणाम नही है जो राष्ट्रीय ह। इनका कारण बहुत व्यापक है। फ्रास में जो वतमान राजत्व व्यवस्था है (किंगशिप) वह इग्लड के उसी प्रकार के आदोलन का अग है। बूरबन और स्टुअट परिवार एक ही सिद्धान्त के अनुगामी थे यद्यपि उस सिद्धान्त के परिणाम भिन्न थे।' दूसरे शब्दा में इग्लड में जो ससदीय व्यवस्था आया वह उन शक्तिया का परिणाम थी जो केवल इग्लड में ही नही काय कर रहा था इग्लड और फ्रास में साथ-साथ काम कर रही था।

इग्लैंड औद्योगिक क्रान्ति के जन्म के बारे में 'हैमड' दम्पति से बढकर और दूसरे विद्वान के मत लिखने की आवश्यकता नही है। 'द राइज आव माडन इडस्ट्री' की भूमिका मे उन्होने यह मत प्रकट किया है कि इग्लैंड म औद्योगिक क्रान्ति के आविर्भाव का कारण ढूढने के लिए महत्त्वपूण बात यह देखनी है कि अठारहवी शती में अतलान्तक में उसकी भौगोलिक स्थिति अन्य यूरोपीय देशो की तुलना में क्या थी तथा यूरोप के शक्ति-सन्तुलन में उसका क्या स्थान था ? देखने से यह जान पडता है कि ब्रिटेन के इतिहास का बौद्धिक अध्ययन उसे अलग रख कर नही किया जा सकता। और यदि यह ग्रेट ब्रिटेन के लिए सत्य है ता निणयात्मक ढग से अन्य राष्ट्रीय राज्यो के लिए भी सत्य है।

इग्लड के इतिहास की सक्षेप में जो परीक्षा हमने की है उसका परिणाम तो नकारात्मक है, किन्तु उससे एक बात का पता चला। इग्लड के इतिहास में जिन अध्यायो का हमने विलोम ढग से अध्ययन किया वे किसी-न किसी कथा के सत्य रूप थे। किन्तु वे कथाएँ ऐसे समाज की थी जिसमें इग्लड का योगदान आशिक था। इन कृत्या में ग्रेट ब्रिटेन के अतिरिक्त और राष्ट्रो का योगदान भी था। इस विषय के बौद्धिक अध्ययन के लिए इग्लड के ही समान और समुदायो का अध्ययन करना ठीक होगा। अर्थात् इग्लड ही नही, फ्रास और स्पेन, नेदरलैंड तथा स्कडि नेविया के देशो का भी। लाड एक्टन की पुस्तक का जो अश उद्धृत किया गया है उससे सम्पूण इतिहास तथा उसके अशो का सम्बन्ध स्पष्ट हो जाता है।

इतिहास में जो शक्तिया काय करती है व राष्ट्रीय ही नही ह। परिणामो के कारण और भी व्यापक ह। प्रत्येक अश पर जो प्रभाव पडते ह वे एक अश के परिणाम से समझ में नही आ सकत। इसे जानन क लिए समाज क सभी अशो का व्यापक अध्ययन आवश्यक है। एक ही कारण का परिणाम विभिन्न भागो पर भिन्न भिन्न होता है। एक ही प्रकार की शक्ति की प्रति-क्रिया अलग-अलग होती ह और उसका परिणाम भी भिन्न होता है। समाज को अपने जीवन में अनेक समस्याओ का सामना करना पडता है। समाज का प्रत्येक सदस्य जो सबसे अच्छा ढग समझता ह, उस ढग से उसे सुलझाता ह। ये समस्याएं अग्नि-परीक्षा के रूप में लगातार आती रहती ह। जिस प्रकार समाज के विभिन्न समुदाय इस अग्नि-परीक्षा का सामना करते ह उसी के अनुसार क्रमश समुदाय एक दूसरे से भिन्न होते जाते ह। किसी विशेष देश का किसी विशेष परिस्थिति में कैसा आचरण होता है, हम तब तक नही समझ सकते जब तक हम यह भी न देखें कि उसके साथी देश का उसी परिस्थिति में कैसा—उसी के समान या भिन्न आचरण होता है। साथ ही समाज के समस्त जीवन में उन अग्नि-परीक्षाओ को भी देखना होगा।

ऐतिहासिक तथ्यो की व्याख्या का यह रूप समझने के लिए ठोस उदाहरण ठीक होगा। यह उदाहरण हम प्राचीन यूनान के चार सौ वर्षों के इतिहास अर्थात् ईसा के पूव ७२५ से ३२५ का इतिहास ले सकते हैं।

इस काल के आरम्भ में ही अनेक राज्यो की, जो इस समाज के सदस्य थे, आबादी बढ जाने से खाद्य की समस्या उपस्थित हुई। उस समय के हलेनी[1] लोगो ने अपने क्षेत्रो में अनेक प्रकार

१ हेलेनिक।

के अन्न उपजा कर इसे पूरा किया । जब संकट काल आया तब विभिन्न राज्यों ने विभिन्न ढंगों से प्रयोग किया ।

कुछ राज्यों ने जैसे कारिंथ और काल्सिस ने सिसिली, दक्षिण इटली, थ्रेस तथा और अतिरिक्त प्रदेशों को जीत कर उन्हें अपना उपनिवेश बना कर बढ़ी जनसंख्या को वहाँ भेज दिया । इस प्रकार जो यूनानी उपनिवेश बने उनसे केवल हेलेनी समाज का भौगोलिक विस्तार हुआ, समाज के जीवन में कोई परिवर्तन नहीं हुआ । दूसरी ओर कुछ राज्य एसे थे जिनके जीवन में तब्दीली हुई ।

उदाहरण के लिए स्पार्टा ने अपने नागरिकों की भूख को शान्त करने के लिए अपने निकटतम यूनानी पड़ोसियों पर आक्रमण करके विजय प्राप्त की । परिणामस्वरूप वह अपने ही समान जीवट के लोगों से बराबर और कठिन युद्ध करके अधिक धरती प्राप्त कर सका । इस स्थिति के कारण स्पार्टा के राजनीतिज्ञों को अपने देशवासियों का आरम्भ से अन्त तक सैनिक जीवन बनाने के लिए विवश होना पड़ा । इसके लिए उन्हें कुछ आदिम सामाजिक व्यवस्थाओं को अपनाना और पुनरुज्जीवित करना पड़ा जो स्पार्टा से तथा और दूसरे यूनानी समुदायों से लोप हो चुकी थीं ।

एथेंस ने जनसंख्या के प्रश्न को दूसरे ढंग से सुलझाया । उसने अपनी कृषि की उपज को, विशेषतः निर्यात के योग्य बनाया । निर्यात के लिए वस्तुएँ भी तैयार करनी आरम्भ कीं और फिर राजनीतिक संस्थाओं का ऐसा विकास किया कि उन वर्गों को उचित अधिकार दिया जाय जो इन नयी आर्थिक व्यवस्थाओं के कारण उत्पन्न हो गये थे । दूसरे शब्दों में एथेंस के राजनीतिज्ञों ने आर्थिक तथा राजनीतिक क्रान्ति लाकर सामाजिक क्रान्ति से देश को बचा लिया । अपनी समस्या के समाधान के लिए व्यवस्था खोजने के साथ ही साथ उन्होंने सारे हेलेनी समाज की प्रगति के लिए नयी राह निकाल दी । परिक्लीज ने जब अपने नगर की भौतिक सम्पत्ति के संकट के समय यह कहा था कि यह यूनान की पाठशाला है, उसका यही अभिप्राय था ।

इस दृष्टि से, जिसमें एथेंस या स्पार्टा या कारिंथ या काल्सिस ही नहीं सारे यूनानी समाज को देखा जाय तो हम ७२५-३२५ ई० पू० के अनेक समुदायों के इतिहास को समझ पाते हैं और इस संक्रमण काल के पश्चात आने वाले युग के इतिहास के महत्त्व को भी समझ सकते हैं । इस प्रकार हम अनेक प्रश्नों का उत्तर पा जाते हैं जो केवल काल्सिस, कारिंथ, स्पार्टा अथवा एथेंस के इतिहास के अध्ययन से नहीं पा सकते । इसी प्रकार हम देख सकते हैं कि कुल अर्थों में काल्सिस अथवा कोरिंथ का इतिहास सामान्य था किन्तु स्पार्टा तथा एथेंस का इतिहास अनेक दिशाओं में सामान्य से भिन्न हो गया था । यह कहना सम्भव नहीं है कि यह विभिन्नता किस प्रकार आ गयी । इतिहासकारों का यही संकेत था कि स्पार्टा और एथेंस के निवासियों में हेलेनी इतिहास के आरम्भिक काल से ही कुछ जन्मजात विशेष गुण थे । एथेंस और स्पार्टा के विकास का कारण इस प्रकार बताने का अर्थ यही निकला कि यह मान लिया कि इन प्रदेशों का विकास हुआ ही नहीं और ये दोनों जातियाँ जैसी इतिहास के आरम्भ काल में थीं वैसी ही बाद में भी रहीं । किन्तु यह कल्पना तथ्यों के विपरीत है । उदाहरण के लिए ब्रिटिश आरकियोलोजिकल स्कूल की ओर से स्पार्टा में जो खुदाई हुई है उसमें इस बात का आश्चर्यजनक प्रमाण मिला है कि ईसा पूर्व छठी शती के मध्य तक स्पार्टा के तथा दूसरे यूनानी समुदायों के जीवन में विशेष अन्तर नहीं था । एथेंस की भी विशेषताएँ जो उसने यूनानी काल (हलेनेस्टिक एज) में यूनानी संसार

(हेलेनिक वल्ड) को प्रदान की, अर्जित विशेषताएँ थी। उनकी उत्पत्ति साधारण दृष्टि से समझ में आ सकती है। स्पार्टा का हाल बिल्कुल उलटा था। वह मानो अँधेरी गली में चला गया था। यही अतर वेनिस, मिलन और जेनोआ में पाया तथा उत्तरी इटली के और नगरो के बीच तथाकथित मध्य युग मे था। और ऐसा ही अन्तर फ्रास, स्पेन, नेदरलैंड, ग्रेट ब्रिटेन में और पश्चिम के दूसरे राज्यो में आजकल है। अश को समझने के लिए पूर्ण पर हमें ध्यान देना होगा क्योकि पूर्ण का ही अध्ययन अपने म स्पष्ट है।

मगर यह 'पूर्ण' जिसका अध्ययन अपने में स्पष्ट है है क्या ? और उसकी स्थानिक तथा भौतिक सीमाओ का पता कैसे लगेगा। हमें फिर इग्लैंड के इतिहास के अध्यायो के सक्षेप को देखना होगा कि वह कौन बोधगम्य बडा 'पूर्ण' क्षेत्र है इग्लैंड का इतिहास जिसका एक अश है।

यदि हम अपने अतिम अध्ययन, औद्योगिक व्यवस्था के सस्थापन से अध्ययन आरम्भ करें तो हमको ज्ञात होगा कि इस क्षेत्र के अध्ययन की सीमा विश्वव्यापी है। इग्लैंड की राजनीतिक क्रान्ति को समझने के लिए पश्चिमी यूरोप की आर्थिक परिस्थिति को ही नही देखना पडेगा हम उष्ण कटिबन्ध के देश, अफ्रीका, अमेरीका, रूस भारत तथा सुदूरपूर्व पर भी दृष्टि डालनी होगी। किन्तु जब हम ससदीय व्यवस्था को देखते है और औद्योगिक व्यवस्था से राजनीतिक व्यवस्था की ओर मुडते है तब हमारी सीमा सकुचित हो जाती है। लार्ड एक्टन के शब्दो मे जिन कानूनो पर फ्रास और इग्लैंड में बूरबन और स्टुअट चलते थे वे रूस के रोमानोफा, तुर्की के उसमानलिया, भारत के तमूरियो, चीन के मचुआ और जापान के शोगूनो में नही माने जाते थे। इन देशो के राजनीतिक इतिहास की व्याख्या समान रूप में नही हो सकती। यहाँ हमारे सामने रुकावट आ जाती है। जिन 'कानूनो' के अनुसार बूरबन और स्टुअट काय करते थे वे यूरोप के अन्य पश्चिमी देशो में चलते थे और पश्चिमी यूरोप के देशो ने जो समुद्र-पार उपनिवेश स्थापित किये थे उनमें चलते थे। किन्तु रूस और तुर्की की पश्चिमी सीमा के आगे उनका प्रभाव नही था। इस सीमा के पूरब दूसरी विधि और नियम का चलन था और उनका परिणाम भी दूसरा था।

यदि हम इग्लैंड के इतिहास के अपने प्रारम्भिक अध्यायो की ओर ध्यान दें तो केवल पश्चिमी यूरोप का फैलाव विदेशो में नही हो रहा था। अतलान्तक तट के जितने राज्य थे सभी इस काय में सलग्न थे। 'धार्मिक सुधार और पुनर्जागरण का अध्ययन करते समय हम रूस और तुर्की के धार्मिक तथा सास्कृतिक विकास की उपक्षा करें तो कोई हानि नही होगी। पश्चिमी यूरोप की सामन्तवादी व्यवस्था का बैजतिया (बाइजटाइन) और इस्लामी सम्प्रदायो के सामतवाद से कोई सम्बन्ध नही था।

अत में इग्लैंड ने जब पश्चिमी ईसाई मत स्वीकार कर लिया तब उसने एक समाज में प्रवेश किया और परिणामत उसे दूसरे समाजो से अलग रहना पडा। सन ६६४ ई० के ह्विटबी की धर्म-परिषद् (साइनाड आव ह्विटबी) तक सम्भवत अग्रेज लोग केल्टिक जातियो के सुदूर पश्चिमी ईसाई मत को स्वीकार लेते और यदि आगस्टीन का मिशन अन्त में असफल होता तो वे सम्भवत रोम से अलग होकर वल्श और आयरिश लोगो के साथ भिन्न ईसाई धर्म की सस्थापना करते। जिस प्रकार ईसाई-जगत की पूर्वी सीमा पर नेस्टोरी थे। बाद में जब अरब के मुसलमान अतलान्तक के किनारे पहुँचे, ब्रिटिश द्वीप के ईसाइयो का सम्पर्क यूरोपीय महाद्वीप के ईसाइयो

से अन्न उपजा कर इस पूरा किया । जब सकट काल आया तब विभिन्न राज्यों ने विभिन्न ढगो से प्रयास किया ।

कुछ राज्यों ने जैसे कोरिन्थ और काल्सिस ने सिसिली, दक्षिण इटली, थ्रेस तथा और पतिहर प्रदेशों को जीत कर उन्हें अपना उपनिवेश बना कर वहीं जा बसे या वहाँ भेज दिया । इस प्रकार जो यूनानी उपनिवेश था उसका केवल हेलेनी समाज का भौगोलिक विस्तार हुआ, समाज के जीवन में कोई परिवर्तन नहीं हुआ । दूसरी ओर कुछ राज्य ऐसे थे जिनके जीवन में तब्दीली हुई ।

उदाहरण के लिए स्पार्टा ने अपने नागरिकों की भूख की शांति के लिए अपने निकटतम यूनानी पड़ोसियों पर आक्रमण करके विजय प्राप्त की । परिणामस्वरूप वह अपने ही समान जाति के लोगों से बराबर और कठिन युद्ध करके अधिक धरती प्राप्त कर सका । इस स्थिति के कारण स्पार्टा के राजनीतिज्ञों को अपने देशवासियों का आरम्भ से अन्त तक सैनिक जीवन बनाने के लिए विवश होना पड़ा । इसके लिए उन्हें कुछ आदिम सामाजिक व्यवस्थाओं को अपनाना और पुनरुज्जीवित करना पड़ा जो स्पार्टा से तथा और दूसरे यूनानी समुदायों से लोप हो चुकी थीं ।

एथेंस ने जनसख्या के प्रश्न को दूसरे ढग से सुलझाया । इसने अपनी कृषि की उपज को विशेषत निर्यात के योग्य बनाया । निर्माण के लिए वस्तुएँ भी तयार करनी आरम्भ की और फिर राजनीतिक सस्थाओं का ऐसा विकास किया कि उन वर्गों को उचित अधिकार दिया जाय जो इन नयी आर्थिक व्यवस्थाओं के कारण उत्पन्न हो गये थे । दूसरे शब्दों में एथेंस के राजनीतिज्ञों ने आर्थिक तथा राजनीतिक क्रान्ति लाकर सामाजिक क्रान्ति से देश को बचा लिया । अपनी समस्या के समाधान के लिए व्यवस्था योजन के साथ ही साथ उन्होंने सारे हेलेनी समाज की प्रगति के लिए नयी राह निकाल दी । परिक्लीज ने जब अपने नगर की भौतिक सम्पत्ति के सकट के समय यह कहा था कि यह यूनान की पाठशाला है उसका यही अभिप्राय था ।

इस दृष्टि से, जिससे एथेंस या स्पार्टा या कोरिन्थ या काल्सिस ही नहीं, सारे यूनानी समाज को देखा जाय तो हम ७२५ ३२५ ई० पू० के अनेक समुदायों के इतिहास को समझ पाते हैं और इस सक्रमण काल के पश्चात् आने वाले युग के इतिहास के महत्त्व को भी समझ सकते हैं । इस प्रकार हम अनेक प्रश्नों का उत्तर पा जाते हैं जो केवल काल्सिस कोरिन्थ, स्पार्टा अथवा एथेंस के इतिहास के अध्ययन से नहीं पा सकते । इसी प्रकार हम देख सकते हैं कि कुछ अर्थों में काल्सिस अथवा कोरिन्थ का इतिहास सामान्य था किन्तु स्पार्टा तथा एथेंस का इतिहास अनेक दिशाओं में सामान्य से भिन्न हो गया था । यह कहना सम्भव नहीं है कि यह विभिन्नता किस प्रकार आ गयी । इतिहासकारों का यही सकेत था कि स्पार्टा और एथेंस के निवासियों में हेलेनी इतिहास के आरम्भिक काल से ही कुछ जन्मजात विशेष गुण थे । एथेंस और स्पार्टा के विकास का कारण इस प्रकार बताने का अर्थ यही निकला कि यह मान लिया कि इन प्रदेशों का विकास हुआ ही नहीं और ये दोनों जातियाँ जैसी इतिहास के आरम्भ काल में थीं वैसी ही बाद में भी रहीं । किन्तु यह कल्पना तथ्यों के विपरीत है । उदाहरण के लिए 'ब्रिटिश आरकियोलोजिकल स्कूल' की ओर से स्पार्टा में जो खुदाई हुई है उसमें इस बात का आश्चर्यजनक प्रमाण मिला है कि ईसा पूर्व छठी शती के मध्य तक स्पार्टा के तथा दूसरे यूनानी समुदायों के जीवन में विशेष अन्तर नहीं था । एथेंस की भी विशेषताएँ जो उसने यूनानी काल (हेलेनिस्टिक एज) में यूनानी ससार

(हेलेनिक वल्ड) को प्रदान की, अर्जित विशेषताएँ थी। उनकी उत्पत्ति साधारण दृष्टि से समझ में आ सकती है। स्पार्टा का हाल बिल्कुल उलटा था। वह मानो अँधेरी गली में चला गया था। यही अन्तर वेनिस, मिलन और जेनोआ में पाया तथा उत्तरी इटली के और नगरो के बीच तथाकथित मध्य युग में था। और ऐसा ही अन्तर फ्रास, स्पेन, नेदरलड, ग्रेट ब्रिटेन में और पश्चिम के दूसरे राज्यो में आजकल है। अंश को समझने के लिए पूण पर हमें ध्यान देना होगा क्योकि पूण का ही अध्ययन अपने में स्पष्ट है।

मगर यह 'पूण' जिसका अध्ययन अपने में स्पष्ट है, है क्या ? और उसकी स्थानिक तथा भौतिक सीमाओ का पता कसे लगेगा। हमें फिर इग्लैंड के इतिहास के अध्यायो के सक्षेप को देखना होगा कि वह कौन बोधगम्य बडा 'पूण' क्षेत्र है इग्लैंड का इतिहास जिसका एक अंश है।

यदि हम अपने अन्तिम अध्ययन, औद्योगिक व्यवस्था के सस्थापन से अध्ययन आरम्भ करें तो हमको ज्ञात होगा कि इस क्षेत्र के अध्ययन की सीमा विश्वव्यापी है। इग्लड की राजनीतिक क्रान्ति को समझने के लिए पश्चिमी यूरोप की आर्थिक परिस्थिति को ही नही देखना पडगा हमें उष्ण कटिबन्ध के देश, अफ्रीका, अमरीका, रूस, भारत तथा सुदूरपूर्व पर भी दृष्टि डालनी होगी। किन्तु जब हम ससदीय व्यवस्था को देखते ह और औद्योगिक व्यवस्था से राजनीतिक व्यवस्था की ओर मुडते ह तब हमारी सीमा सकुचित हो जाती है। लाड एक्टन के शब्दो मे जिन कानूनो पर फ्रास और इग्लड में बूरबन और स्टुअट चलते थे वे रूस के रोमानोफो, तुर्की के उसमानलियो, भारत के तैमूरियो, चीन के मचुओ और जापान के तोकूगावा में नही माने जाते थे। इन देशो के राजनीतिक इतिहास की व्याख्या समान रूप मे नही हो सकती। यहाँ हमारे सामने रुकावट आ जाती है। जिन 'कानूनो' के अनुसार बूरबन और स्टुअट काय करते थे व यूरोप के अन्य पश्चिमी देशो में चलते थे और पश्चिमी यूरोप के देशो ने जो समुद्र पार उपनिवेश स्थापित किये थे उनमें चलते थे। किन्तु रूस और तुर्की की पश्चिमी सीमा के आगे उनका प्रभाव नही था। इस सीमा के पूरब दूसरी विधि और नियम का चलन था और उनका परिणाम भी दूसरा था।

यदि हम इग्लड के इतिहास के अपने प्रारम्भिक अध्यायो की ओर ध्यान दें तो केवल पश्चिमी यूरोप का फलाव विदशो मे नहा हो रहा था। अतलान्तक तट के जितने राज्य थे सभी इस काय में सलग्न थे। धार्मिक सुधार' और पुनजागरण का अध्ययन करते समय हम रूस और तुर्की के धार्मिक तथा सास्कृतिक विकास की उपेक्षा कर तो कोई हानि नही होगी। पश्चिमी यूरोप की सामन्तवादी व्यवस्था का बैजन्तिया (बाइजेंटाइन) और इस्लामी सम्प्रदायो के सामन्तवाद से कोई सम्बन्ध नही था।

अन्त म इग्लड न जब पश्चिमी ईसाई मत स्वीकार कर लिया तब उसने एक समाज में प्रवेश किया और परिणामत उसे दूसरे समाजो से अलग रहना पडा। सन ६६४ ई० के व्हिटबी की धम परिषद (साइनाड आव व्हिटबी) तक सम्भवत अग्रेज लोग केल्टिक जातियो के सुदूर पश्चिमी ईसाई मत को स्वीकार लेते और यदि आगस्टीन का मिशन अन्त में असफल होता तो वे सम्भवत रोम से अलग होकर वेल्श और आयरिश लोगो के साथ भिन्न ईसाई धम की सस्थापना करते। जिस प्रकार ईसाई जगत की पूर्वी सीमा पर नेस्टोरी थे। बाद में जब अरब के मुसलमान अतलान्तक के किनारे पहुँचे, ब्रिटिश द्वीप के ईसाइयो का सम्पक यूरोपीय महाद्वीप के ईसाइयो

से छूट गया जैसे अबीसीनिया अथवा मध्य ऐशिया के ईसाइयों का छूट गया। वे शायद मुसलमान हो जाते जैसे 'मोनोफाइसाइटों अथवा नेस्टोरियों ने अरब शासन के समय किया। ये काल्पनिक विकल्प विचित्र मालूम हो सकते हैं, किन्तु इन पर ध्यान देने से हमें यह स्मरण होता है कि सन् ५९७ ई० में धर्म-परिवर्तन के कारण इंगलैंड पश्चिमी ईसाई जगत् के साथ तो एक हो गया किन्तु विश्व के साथ एक नहीं हुआ। अपितु दूसरे धार्मिक समुदायों में और इसमें गहरा भेद भी हो गया।

इंग्लैंड के इतिहास के अध्यायों के इस निरीक्षण द्वारा हमें विभिन्न कालों में यहाँ के इतिहास के बौद्धिक अध्ययन का विभिन्न अवस्थाओं में अवसर मिलता है। यह निरीक्षण क्षेत्रीय क्षितिजों के आधार पर किया जाना चाहिए। इस क्षेत्रीय अध्ययन में सामाजिक जीवन के विभिन्न रूपों का अन्तर समझना होगा। जैसे आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक। क्योंकि क्षेत्रीय दृष्टि से प्रत्येक पहलू में बहुत अन्तर है। हम जिस पहलू पर विचार करेंगे वह दूसरे से भिन्न होगा। आर्थिक पहलू ग्रेट ब्रिटेन और सारे जगत् का समान-सा है। राजनीतिक स्वरूप भी लगभग एक-सा है। सांस्कृतिक पहलू की ओर जब हम ध्यान देते हैं तब देखते हैं कि इस क्षेत्र में ग्रेट ब्रिटेन का विस्तार बहुत कम है। इसकी सांस्कृतिक आत्मीयता पश्चिमी यूरोप के तथा अमरीका और दक्षिणी महाद्वीपों के कैथोलिक तथा प्रोटेस्टेंट प्रदेशों से है। यद्यपि इस समाज पर कुछ विदेशी प्रभाव पड़ा है जैसे रूसी साहित्य का, चीनी चित्रकारी का और भारतीय धर्म का और यद्यपि इससे भी अधिक इस पश्चिमी समाज का प्रभाव दूसरे समाजों पर पड़ा है जैसे पूर्वी और परम्परावादी ईसाइयों पर, मुसल्मानों पर, हिन्दुओं पर और सुदूर पूर्व देश की जातियों पर, फिर भी यह सत्य है कि पश्चिमी यूरोप का संसार इन सबसे अलग है।

इससे भी पहले के काल का इन्हीं तीनों दृष्टियों से हम क्षेत्रों के अनुसार अध्ययन करें तो हम देखेंगे कि भौगोलिक सीमा क्रमशः संकुचित होती जाती है। सन् १६७५ के लगभग का यदि इस क्षेत्रीय टुकड़े का अध्ययन करें तो हम देखेंगे कि आर्थिक स्तर पर यदि हम केवल व्यापार का विस्तार देखें तो यह सीमा अधिक कम नहीं हुई है। उसकी मात्रा और किन वस्तुओं का व्यापार होता था छोड़ दें। राजनीतिक क्षेत्र की सीमा संकुचित होकर उतनी ही रह जाती है जितनी इस समय सांस्कृतिक प्रभाव की सीमा है। और आगे यदि सन् १४७५ ई० का क्षेत्रीय अध्ययन करें तो तीनों दृष्टियों से विदेशी भाग लोप हो जाते हैं। आर्थिक स्तर पर भी सीमाएँ संकुचित होकर आज के सांस्कृतिक प्रभाव की सीमा तक रह जाती हैं अर्थात् पश्चिमी और मध्य यूरोप के देशों तक। हाँ मध्य सागर के पूरब के भी कुछ छोटे-मोटे स्थल थे जो अब शीघ्रता से अलग होते चले जा रहे हैं। यदि हम प्राचीन काल का सन् ७७५ ई० के लगभग का क्षेत्रीय इतिहास देखें तो सीमाएँ तीनों दृष्टियों से और भी अधिक संकुचित हो जाती हैं। उस समय इस समाज का क्षेत्र इतना ही था जितना शार्लमान का राज्य था और साथ में ब्रिटेन में जो रोमन साम्राज्य के टुकड़े थे। अधिकांश प्रायद्वीप इस क्षेत्र के बाहर अरब के मुस्लिम खलीफाओं के शासन में था। उत्तरी तथा उत्तर-पूर्वी यूरोप असभ्य बर्बरों के हाथ में था। अंग्रेजी द्वीप के उत्तर पूर्वी किनारे सुदूर पश्चिमी ईसाइयों के हाथ में थे और दक्षिण इंग्लैंड स्कैंडिनेवियों के हाथ में थी।

जिस समाज के क्षेत्र का वर्णन ऊपर किया गया है उसे हम पश्चिमी ईसाई-जगत् कहेंगे। इस नाम को ध्यान में रखते हुए यदि हम क्षेत्र की कल्पना करेंगे तो उस समय की दुनिया में उसी के

साथ-साथ उसके प्रतिरूप क्षेत्र भी दिखाई देंगे, विशेषत सास्कृतिक स्तर की समानता मे।
आज के युग में हम उस सास्कृतिक स्तर मे कम से कम चार सजीव समाज ससार में देखते है।

(१) दक्षिण-पूर्व यूरोप तथा रूस का पूर्वी परम्परावादी ईसाई मत का समाज (आरथोडाक्स क्रिश्चियानिटी)।

(२) इस्लामी समाज जिसका केन्द्र मरुभूमि में है और जो वहाँ से तिरछे उत्तरी अफ्रीका तक और मध्य पूर्व से चीन की दीवार के बाहरी किनारे तक फैला है।

(३) हिन्दू समाज जो उष्ण प्रदेश में भारत के उप महाद्वीप में है।

(४) सुदूर पूर्वी समाज जो मरुभूमि और प्रशान्त महासागर के बीच उप उष्ण कटिबन्ध तथा सम-शीतोष्ण कटिबन्ध में है।

ध्यान से देखने पर दो और समाजो को हम पाते है। जो इसी प्रकार के समाज के जीवाश्म (फसिल) चिह्न है। एक तो आरमीनिया, मेसोपोटामिया, मिस्र और अबीसीनिया के 'मोनाफाइसाइटी' ईसाई और कुर्दिस्तान के 'नेस्टोरी' ईसाई तथा मलाबार के पूर्व-नेस्टोरी ईसाई और यहूदी और पारसी दूसरे तिब्बत तथा मंगोलिया के महायान बौद्ध और श्रीलंका, बर्मा, स्याम तथा कम्बोडिया के हीनयान बौद्ध और भारत के जन।

मजेदार बात यह है कि सन ७७५ ई० के क्षत्रीय टुकडों का जब हम अध्ययन करते है तब ससार में उतने ही समाज मिलते है जितने आज। पश्चिमी समाज की उत्पत्ति के समय से आज तक ये समाज उतने ही है। जीवन सघर्ष में पश्चिम ने अपनी समसामयिक जातियो को पराजित करके विवश कर दिया है और उन्हे आर्थिक जाल तथा राजनीतिक दावपेंच में फँसा रखा है, किन्तु उन्हें उनकी सास्कृतिक विशिष्टता से अलग नही कर सके। उनकी अवस्था निरीह है, किन्तु वे अपनी आत्मा को अब भी अपनी कह सकते है।

जो विवेचना अभी तक हमने की है उसका अभिप्राय यह है कि दो प्रकार के सम्बन्धो का भेद हमें अच्छी तरह समझना चाहिए। उन समुदायो के बीच का समुदाय जो एक ही समाज के अन्तर्गत है और उनके बीच के जो भिन्न भिन्न समाजो में है।

देश (स्पेस) की दृष्टि से हमने पश्चिमी समाज पर कुछ विचार किया है अब काल की दृष्टि से थोडा विवेचन करना चाहिए। यह तो हम तुरन्त ही समझ सकते है कि हम भविष्य के बारे में कुछ नही जान सकते। इस रुकावट के कारण इस समाज या किसी समाज का अध्ययन बहुत सीमित हो जाता है। हमें पश्चिमी समाज के आरम्भ काल के विवेचन से ही सन्तोष करना होगा।

सन् ८४३ ई० में वरदून की सन्धि के अनुसार जब शालमान का राज्य उसके तीन पौत्रो म बँटा तब उनके ज्येष्ठ पौत्र लोथेयर ने अपने दादा की दो राजधानियो—आकेन और रोम—पर अपना अधिकार जमाया। उसका राज अखड रहे इसलिए उसे वह भाग मिला जो टाइबर' और पो के मुहाने से 'राइन' के मुहाने तक फैला था। लोथेयर का यह टुकडा ऐतिहासिक भूगोल में विलक्षण बात समझी जाती है। फिर भी तीनो भाई समझते थे कि पश्चिमी समाज में इनका महत्त्व है। भविष्य जो भी हो, इसका भूत महान् था।

लोथेयर और उसके दादा रोमन सम्राट् के नाम से आकेन' से 'रोम' तक राज करते थे। यह भाग, रोम से आल्प्स पर्वत होते हुए आकेन तक और बाद में आकेन से इंग्लिश चैनल के पार

रोमन दीवार (इग्लैण्ड में) तक, जो उस समय के विल्प्त रोमन साम्राज्य का एक प्रकार प्राचीर का काम दे रहा था। रोम के आल्प्स होते हुए उत्तर-पश्चिम तक प्रसार की सुविधा करके, राईन के बाँये तट पर सनिक सीमा स्थापित करके और दक्षिणी ब्रिटेन को अपने राज्य में मिलाकर, रोमनो ने यूरोप के आल्प्स के पार के देशों को अपने साम्राज्य में मिला लिया था। यद्यपि यह साम्राज्य इस विशेष भाग को छोड कर विशेषत मध्य सागर के क्षेत्र म ही थी। इस प्रकार लोथेयर के पहले ही लोथरिंजिया की सीमा रोमन साम्राज्य के सगठन में सम्मिलित हो गयी थी और उसके पश्चात् पश्चिमी समाज में। किन्तु रोमन साम्राज्य में और बाद के पश्चिमी समाज में इस क्षेत्र के काय भिन्न भिन्न थे। रोमन साम्राज्य में यह सीमा मात्र था। पश्चिमी समाज में यह दोना ओर विस्तार की रेखा थी। सन् ३७५-६७५ के सुषुप्त काल में जब रोमन साम्राज्य छिन्न भिन्न हो गया और अव्यवस्थित दशा से पश्चिमी यूरोप का क्रमश विकास हुआ, पुराने समाज का ही एक अंश निकाल कर उसी मानव का नय समाज के रूप में निर्माण हुआ।

७७५ वष के पहले के पश्चिमी समाज के जीवन का इतिहास विलोम ढग से देखने से स्पष्ट है कि वह जीवन पश्चिमी समाज का नही अपितु रोमन साम्राज्य में जिस प्रकार का समाज था, उसका था। हम यह भी प्रमाणित कर सकते ह कि पश्चिमी समाज के इतिहास का कोई तत्त्व यदि पहले के समाज में था तो उसका कृत्य दोना समाजो में अलग-अलग था।

लोथेयर वाला भाग पश्चिमी समाज का आधार था क्योकि ईसाई धम के अनुयायी रोमन सीमा की ओर बढे चले आ रह थे और उनकी इसी सीमा पर बबर जातियो से मुठभेड हुई जो अवान्तर भूमि से आ रहे थे। इस मिलन से नये समाज का जन्म हुआ। इसलिए पश्चिमी समाज का इतिहासकार यदि इस काल से पूव समय तक का इस समाज के मूल का इतिहास खोजेगा तो उसे ईसाई धम और बबरो के इतिहास का अध्ययन करना होगा। और वह इस इतिहास की शृखला २०० ई० पू० तक जो सामाजिक आर्थिक तथा राजनीतिक परिवतन होते रहे उनमें पायेगा। जिस काल में हेनिबल के युद्धो के आघात से ग्रीक रोमन समाज नष्ट हो गया, रोम ने उत्तर-पश्चिम की अपनी लम्बी भुजा क्यो फलायी और आल्प्स के आगे के यूरोप का भाग अपने साम्राज्य में क्यो मिलाया? क्योकि उसी ओर उसे कारथेज वालो से जीवन-मरण का युद्ध करना पडा। आल्प्स पार करने के पश्चात् वह राइन पर ही क्या रुक गया? क्योकि आगस्टीन के काल में दो शतियो के थका देने वाले युद्ध तथा क्रान्तियो के कारण उसकी जीवनी शक्ति समाप्त हो गयी थी। अन्त में बबर क्या विजयी हुए? क्योकि जब ऊँची और कम साधना वालो में सघष होता है और कोई एक दूसरे की सीमा पर पूण विजय नही प्राप्त कर पाता तब ऐसा नही होता कि दोनो की सभ्यता का बराबर अश समाज में आये। बल्कि समय के साथ साथ पिछडी सभ्यता की ओर समाज झुक जाता है। जब बबरो ने सीमा तोडी तो धार्मिक समुदाय से उनका सामना क्या हुआ? इसका मुख्य कारण यह था हैनिबली युद्ध के परिणामस्वरूप जो आर्थिक और सामाजिक क्रान्तियां हुइ और पश्चिम के क्षेत्र उजाड हो गये उन पर काय करने के लिए पूरब से दासो का समूह लाया गया। इस प्रकार जबरदस्ती जो मजदूर आये उसके कारण शातिपूर्ण पूर्वी धर्मों का प्रवेश ग्रीक रोमन समाज में हुआ। इन धर्मों में परलोक में मुक्ति की जो भावना थी उसके कारण उन प्रबल अल्प सख्यको की आत्मा की ऊसर भूमि में उसे बीज बोने का अच्छा अवसर मिला जो ग्रीक रोमन समाज के कल्याण की रक्षा इस लोक में नही पा सकी।

ग्रीक-रोमन इतिहास के विद्यार्थी के लिए, ईसाई तथा बर्बर दोनो विदेशी तत्त्व जान पडेगे। उन्हें वह ग्रीक रोमन अथवा और अच्छे शब्द मे 'हेलेनी' समाज की अन्तिम अवस्था का देशी तथा विदेशी सर्वहारा[1] कह सकते हैं। वह विद्यार्थी कहेगा कि हेलेनी संस्कृति के जो महान मुखिया थे, यहा तक कि मारकस आरीलियस ने भी इस पर ध्यान नही दिया। वह यही बतायेगा कि ईसाई धर्मावलम्बी और बबर योद्धा दोना ही विकृत मन स्थिति वाले थे और हेलेनी समाज में उनका प्रवेश उसी समय हुआ जब यह समाज हैनिबली युद्ध के कारण जजर हो गया था।

इस खोज से पश्चिमी समाज के पूर्व काल के सम्बन्ध में हम एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचे हैं। यद्यपि इस समाज का जीवन काल इसी समाज के अन्य राष्ट्रो से अधिक था, फिर भी उतना अधिक नही था जितना उतन ही काल में उस समाज के और उपवर्गो का था। इस समाज के उद्भव के इतिहास का अध्ययन करते समय हमें एक दूसरे समाज की अन्तिम अवस्था का पता चलता है। इस दूसरे समाज का आरम्भ स्पष्टत और भी पहले था। यह जो कहा जाता है कि इतिहास का सूत्र अविच्छिन्न होता है, वह व्यक्ति के जीवन के समान अविच्छिन्न नही होता। यह सूत्र अनेक पीढियो के जीवन से बना होता है। यह उसी प्रकार का कहा जा सकता है जैसी अविच्छिन्नता पिता और पुत्र की होती है।

इस अध्याय में जो तक उपस्थित किये गये ह यदि वे मान्य हैं तो यह मानना होगा कि ऐतिहासिक अध्ययन की सुबोध इकाई राष्ट्र राज्य अथवा मानव जाति नहा हो सकती, अपितु मानव जाति का वह समूह हो सकता है जिसे हम समाज कहते हैं। आज ऐसे पाच समाजो का पता है और कुछ समाजो का भी जो निर्जीव और समाप्त हो गये ह। इनमें से एक समाज का अर्थात अपने (पश्चिम यूरोप) समाज के मूल की खोज में हमें ऐसे महत्त्वपूर्ण समाज की मृत्यु का भी पता चला है जिसका हमारा समाज सन्तानस्वरूप है। जिससे हमारा पैतृक सम्बन्ध है। दूसरे अध्याय मे हम ऐसे कुछ समाजो की सूची उपस्थित करने की चेष्टा करेंगे जो इस धरती पर रही है और उनका परस्पर क्या सम्बन्ध है।

[1] सर्वहारा शब्द यहाँ और आगे भी उस समाज या समूह के लिए प्रयोग किया गया है जो किसी समाज के इतिहास के किसी काल में समाज के अन्दर है, किन्तु उस समाज का नहीं है। —लेखक।

२ सभ्यताओ का तुलनात्मक अध्ययन

हमने अभी देखा है कि पश्चिमी समाज (यूरोप का) अथवा सभ्यता पूर्ववर्ती सभ्यता से सम्बधित है। इसी प्रकार आगे अनुसधान करने के लिए यह देखना होगा कि एक ही जाति (स्पीसीज) जो समाज में है अर्थात् पूर्वी ईसाई समाज (आरथोडाक्स क्रिश्चियन), इस्लामी समाज, हिदू समाज और सुदूर पूर्वी समाज (फार ईस्टन), उनके भी कोई पूवज ह क्या ? किन्तु इसके पहले कि हम उनकी खोज करें हमारे मन में स्पष्ट होना चाहिए कि हम क्या खोज रहे ह। अर्थात वे कौन चिह्न ह जिन्हें हम इस पतृक सम्बध का उचित प्रमाण मान सकते हैं। इस प्रकार के सम्बध का कौन सकेत हमें अपने पश्चिमी समाज तथा हेलेनी समाज का मिला है ?

पहली बात तो यह मिलती है कि रोमन साम्राज्य का एक सावभौम राज्य था जिसमें हेलेनी इतिहास की अतिम अवस्था में सारा हेलनी समाज एक राजनीतिक समुदाय था। यह बात महत्त्व की है क्योंकि रोमन साम्राज्य के पहले हेलेनी समाज अनेक छोटे राज्यों में विभक्त था और उसके बाद आज भी पश्चिमी समाज अनेक राज्यों में विभाजित है। हमने यह भी देखा कि रोमन साम्राज्य स्थापित होने के ठीक पहले 'उपद्रव का काल' था जो हैनिबलीय युद्ध से आरम्भ हुआ। इस समय हेलेनी समाज में सजनात्मक शक्ति नहीं रह गयी थी बल्कि वह पतनो-न्मुख था। इस ह्रास को रोमन साम्राज्य ने कुछ समय तक तो रोका, किन्तु अन्त में यह असाध्य रोग निकला। इसने हेलेनी समाज और साथ ही रोमन साम्राज्य को भी नष्ट कर दिया। रोमन साम्राज्य के विनाश के बाद हेलेनी समाज के लोप हो जाने और पश्चिमी समाज के प्रकट होने के बीच एक मध्यवर्ती काल था।

इस मध्यवर्ती काल में दो सस्थाएँ बहुत क्रियाशील थी। एक तो ईसाई धम जो रोमन साम्राज्य में स्थापित हुआ था और अब तक बच गया था और दूसरे वे छोटे छोटे तथा सामयिक राज्य जो रोमन साम्राज्य में से उन बबर जातियो ने बना लिये थे जो साम्राज्य की सीमा के बाहर से जन रेला में आयी थी। इन दोनो शक्तियो को हमने हेलनी समाज के दो स्वरूप बताये ह। यह है आन्तरिक सवहारा वग और बाह्य सवहारा वग। इन दोना वर्गों म भेद तो अनेक थे, किन्तु एक बात में ये समान थे। हेलेनी समाज के प्रमुख अल्पसख्यक वग के दोनो विरोधी थे। यह अल्पसख्यक वग प्रमुख था, किन्तु इसमें नेतत्व की शक्ति नहीं रह गयी थी। साम्राज्य तो नष्ट हो गया परन्तु ईसाई समुदाय बच गया क्योंकि इस समुदाय ने नेतत्व ग्रहण किया और लोग इसके भक्त भी थे। साम्राज्य दो में से एक भी न स्थापित कर सका। ईसाई समुदाय मरते समाज का अवशेष था इसी ने नये समाज को जन्म दिया।

इस बीच के काल की जो दूसरी विशेषता थी, जनरेला उसका क्या प्रभाव हमारे समाज पर पडा ? इस जनरेला में पुराने समाज की सीमा के बाहर से सवहारा दल झुड का झुड आया। उत्तरी यूरोप के जगलो से जरमन और स्लाव आये, यूरेशियाई स्टेप से सरमाशियन और हूण

आये, अरब से मुसलमान (सारासिन) आये और एल्स तथा सहारा प्रदेश से बबर आये। इन जातियो के उत्तराधिकारियो द्वारा जो अल्पकालिक राज्य स्थापित हुए उनका ईसाइयो के साथ बीच के काल में जिसे 'वीर काल' भी कहते हैं, ऐतिहासिक रगमच पर अभिनय होता रहा। ईसाइयो की तुलना में इनकी देन नगण्य और शून्य थी। बीच के काल की समाप्ति के पहले ही बल्पूवक सब नष्ट कर दिये गये। रोमन साम्राज्य पर जो हमले हुए उन्ही के द्वारा वडाल और आस्ट्रोगथ पराजित हो गये। साम्राज्य की अन्तिम मिलमिलाती लौ इन्हें राख कर देने के लिए पर्याप्त थी। दूसरे आपसी लडाइया से नष्ट हो गये। उदाहरण के लिए, विसिगोथा पर पहले फ्राको ने आक्रमण किया और अन्त में अरबो ने उन्हें समाप्त कर दिया। इन लडाकू जातियो में से जो बचे-खुचे रह गये थे उनका पतन होना गया और वे कुछ दिनो तक अकमण्य रूप से जीवित रही और अत में नयी राजनीतिक शक्तिया द्वारा, जिनमें रचनात्मक बल था, इनका विनाश हो गया। इस प्रकार मेरोविंजियन तथा लोम्बाड वश शालमान के साम्राज्य के निमाताओ द्वारा समाप्त कर दिये गये। रोमन साम्राज्य के इन बबर उत्तराधिकारी राज्यो म दो ही ऐसे बच गये हैं जिनका वतमान यूरोप के राष्ट्रीय राज्यो से कुछ सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है। एक शाल्मान का 'फ्राकिश आस्ट्रेशिया' और दूसरा आल्फ्रेड का 'वसेक्स'।

इस प्रकार हम देखते ह कि जनरेला और उसके अल्पकालिक राज्य ईसाई सम्प्रदाय और रोमन साम्राज्य के समान पश्चिमी समाज के हेलेनी समाज के सम्बन्ध के चिह्न मात्र हैं। साम्राज्य के समान और ईसाई सम्प्रदाय से भिन्न वह केवल प्रतीक ही है और कुछ नही। लक्षणो का अध्ययन छोड कर जब हम कारणा का अध्ययन करते हैं तब हमको मालूम होता है कि ईसाई सम्प्रदाय भूतकाल में था और भविष्य में भी उसकी सम्भावना थी। परन्तु बबर उत्तराधिकारी राज्य तथा रोमन साम्राज्य भूतकाल के ही धरोहर थे। उनका उत्कप साम्राज्य के पतन का एक पहलू था और साम्राज्य का पतन उनके पतन का पूर्वाभास था।

हमारे पश्चिमी समाज को बबरो की देन इतनी महत्वहीन जानकर कुछ पश्चिमी इतिहासकारा (जसे फ्रीमैन) को ठेस लगी होगी। वह समझते थे कि उत्तरदायी ससदीय शासन उनके एक प्रकार के स्वायत्त शासन (सेल्फ गवनमेंट) का विकास था जो ट्यूटानिक कबीले अवातर प्रदेश से अपने साथ लाये थे। किन्तु ये आदिम ट्यूटानिक सस्थाएँ यदि सचमुच रही हा तो आदिम मनुष्यो के आचार के समान सब जगह और सब समय नितान्त प्रारम्भिक रही हागी और वह जनरेला के साथ ही समाप्त हो गयी हागी। बबर जत्थो के नेता साहसी योद्धा मात्र थे और इनके उत्तराधिकारी राज्य उस समय के रोमन राज्य के समान निरकुश थे जिनमें बीच-बीच में क्रान्तियाँ होती रहती थी। आज जिसे हम ससदीय सस्थाएँ कहते ह उस नयी कल्पना के शतिया पहले बबरा का अन्तिम राज्य समाप्त हो चुका था।

पश्चिमी समाज के जीवन में बबरा की देन का बखान जो आज बढा चढाकर किया जाता है उसका कारण एक और मिथ्या धारणा है कि सामाजिक उन्नति में जातिया के कुछ जन्मजात गुण सन्निहित होते ह। भौतिक विज्ञान द्वारा जो घटना घटती है उसी के मिथ्या साम्य के आधार पर पिछली पीढी के इतिहासकार जातियो को रासायनिक 'तत्त्व' समझने लगे और जाति मिश्रण को रासायनिक प्रतिक्रिया, जिससे गुप्त शक्तियाँ प्रकट हाती ह और जिसके कारण अचलता और निश्चेष्टता के स्थान पर परिवतन और स्फूर्ति उत्पन्न होती है। इतिहासकारो ने भ्रमवश यह

मान लिया है कि बवरा के मिलने से जो जातीय प्रभाव पड़ा, जिसे वे नये रक्त का संचार कहते थे, उसी के परिणामस्वरूप इतिहास में हम पश्चिमी सामाजिक जीवन और विकास पाते हैं। यह संकेत किया गया कि बबर विजेताओं का रक्त विशुद्ध था उसमें शक्ति थी और इसके कारण उनके तथाकथित वश उन्नतिशील हुए।

सच बात यह है कि बवर लोग हमारी आत्मिक उन्नति के स्रष्टा नहीं थे। असल में वे हैलेनी समाज के मरणकाल में आये। किन्तु इस समाज के नाश का श्रेय उन्हें नहीं है। जिस समय ये आये हेलेनी समाज शतियों पहले के अपने ही किये घावों से मरणासन्न था। वीरकाल हेलेनी इतिहास का उपसहार था, हमारे इतिहास की भूमिका नहीं।

पुराने समाज से नये समाज के परिवतन के तीन कारण हैं। पुराने समाज का अन्तिम रूप अर्थात सावभौम राज्य, पुराने समाज में विकसित ईसाई धार्मिक समुदाय जिसके द्वारा नये समाज का जन्म हुआ, और बबर वीरकाल की अव्यवस्था। इनमें दूसरा सबसे अधिक और तीसरा सबसे कम महत्त्व का है।

दूसरे नवजात समाजो की खोज के पहले हमें हेलेनी तथा पश्चिमी समाज द्वारा उत्पन्न समाज के एक लक्षण की ओर ध्यान देना चाहिए। वह यह है कि नये समाज का जन्मस्थान वही नहीं रह गया जो उसके पूववर्ती समाज का था। न यह समाज का केन्द्र बना जो पुराने समाज की सीमा थी।

परम्परावादी ईसाई ससाज

इस समाज की उत्पत्ति के अध्ययन से किसी नये वग का पता नहीं चलेगा क्योंकि यह और हमारा पश्चिमी समाज हेलेनी समाज के जुडवाँ बच्चे हैं। केवल उत्तर पश्चिम जाने के बजाय यह उत्तर-पूरब की ओर गये। इनका मूल स्थान बैजन्तिया में अनेतोलिया था। शतियों तक यह इस्लामी समाज के विस्तार के कारण दबा हुआ था। अन्त में इसे रूस तथा साइबीरिया में से उत्तर तथा पूरब में बढ़ने का अवसर मिला। इस्लामी जगत् को पीछे छोड़ते यह सुदूर पूव की ओर बढ़ गया। पश्चिमी और परम्परावादी ईसाई समाज दो कैसे हो गये? इसका कारण यह है कि एक ही मूल कैथालिक धमतन्त्र (चच) से दो शाखाएँ उत्पन्न हुई। रोमन कथालिक धमतन्त्र (रोमन कैथोलिक चच) और परम्परावादी धमतन्त्र (आरथोडाक्स चच) दोनों के अलग-अलग स्वरूप होने में तीन शतियाँ लगी। आठवी शती के मूर्तिपूजा विरोधी मतभेद से आरम्भ होकर सन् १०५४ में धार्मिक विवाद पर यह भेद पूर्ण रूप से स्थापित हो गया। इसी बीच दोनों सम्प्रदायों की राजनीतिक धारणाएँ भी भिन्न हो गयी। पश्चिम के कथालिक सम्प्रदाय ने माध्यमिक युग के पोप के शासन में स्वतन्त्र सत्ता प्राप्त कर ली और परम्परावादी सम्प्रदाय बजन्तिया राज्य का छोटा विभाग मात्र बन गया।

ईरानी और अरबी समाज तथा सीरियाई समाज

जिस दूसरे सजीवन समाज को हमें देखना है वह है इस्लामी समाज। जब हम इस्लामी समाज के विकास की पृष्ठभूमि की छानबीन करते हैं तब हमें पता लगता है कि वहाँ सावदेशिक धार्मिक समाज था। वहाँ भी जनरेता था यद्यपि वह पश्चिमी और परम्परावादी ईसाई समाज वाला न था किन्तु उससे मिलता-जुलता था। इस्लामी सावभौम राज्य बगदाद की अब्बासी

खिलाफत (कैलिफेट) का था।[1] सारा मुसल्मि समाज ही इस्लाम है। जो जनरेला खिलाफत के पतन के समय आया और उसन खलीफा के राज्य का तहस-नहस कर दिया। वह यूरेशिया के स्टेप के तुर्की और मगोल खानावदोशा का, उत्तरी अफ्रीका के बबर खानावदोशा का तथा अरब प्रायद्वीप के खानाबदोशो का था। इन खानावदोशा का प्रभाव लगभग तीन सौ साल तक अर्थात् सन् ९७५ ई० से १२७५ ई० रहा। आज जिम रूप में इस्लामी समाज है उमका आरम्भ इसी अतिम तिथि से समझना चाहिए।

यहाँ तक तो सब स्पष्ट है। किन्तु और खोज करने मे परिस्थिति जटिल हा जाती है। पहली बात यह है कि इस्लामी समाज के पूवज (जिमका अभी पता नही है) एक सन्तान के नहो, बल्कि दो जुड़वा सन्ताना के जनक थे और इस रूप में वे बिलकुल हेलेनी समाज के समान थे। इन जुड़वाँ सन्ताना का आचरण समान नही था। पश्चिमी समाज और परम्परावादी ईसाई समाज हजार वष से ऊपर साथ साथ रहे। जनक समाज की एक सन्तान जिसका पता लगाने की हम चेष्टा कर रहे ह दूसरी सन्तान का निगल गयी और उसने उसे अपने में मिला लिया। इन दोना मुसल्मि समाजा को हम ईरानी और अरबी के नाम से पुकारेंगे।

जिस प्रकार हेलेनी समाज की सन्ताना में धार्मिक अन्तर था उस प्रकार का अन्तर इस अनात इस्लामी समाज की दोना सन्ताना में नही था। यद्यपि इस्लाम में भी शिया और सुन्नी दो फिरके हो गये थे, जसे इसाई समाज में कथोलिक और परम्परावादी ईसाई समाज हो गया था, किन्तु यह धार्मिक अन्तर अभी इरानी इस्लामी और अरबी इस्लामी समाजों के अन्तर के रूप में नही था। यद्यपि सत्रहवी शती के पहले चतुर्थाश में जब फारस में शिया सम्प्रदाय का बाहुल्य हुआ तब ईरानी इस्लामी समाज छिन भिन होने लगा। और शिया सम्प्रदाय ईरानी इस्लामी समाज की मुख्य धुरी का (जो अफगानिस्तान से अनातोलिया तक फैली हुई है) केन्द्र बन गया और सुन्नी सम्प्रदाय ईरानी जगत की दोना सीमाओ पर तथा दक्षिण और पश्चिम में अरबी प्रदेशो में रह गया।

जब हम इस्लाम के दोनो समाजा और ईसाई धम के दोना समाजा की तुलना करते हैं तब हम देखते ह कि ईरानी प्रदेश (जिसे हम फारसी-तुर्की भी कह सकते ह) और पश्चिमी समाज में कुछ समानता है। और अरबी प्रदेश के इस्लामी और परम्परावादा ईसाई समाज में कुछ समानता है। उदाहरण के लिए, बगदाद की खिलाफत की छाया, जिसे तेरहवी शताब्दी में, जब करों के ममलूका ने बगदाद के खलीफा के भूत को फिर स सजीव करने की चेष्टा की थी, उसी प्रकार था जसा आठवी शती में कस्तुनतुनिया में सीरिया के लियो ने रोमन साम्राज्य के भूत को सजीव करने की चेष्टा की थी। ममलूकों का राजनीतिक सगठन लियो के सगठन के समान सरल था जो निकट के ही ईरानी प्रदेश की तुलना में स्थिर और प्रभावशाली था। पडोस के ईरानी प्रदेश का तमूर का साम्राज्य विस्तत और अस्पष्ट और अस्थिर था जो पश्चिम के शालमन के साम्राज्य की भाँति था जो बनता और बिगडता रहा। अरब प्रदेश में उनकी सस्कृति का क्लासिकल भाषा

१ बाद के करो के अब्बासी खलीफे बगदाद के खलीफो के छाया मात्र थे। अर्थात् 'पूर्वी रोमन साम्राज्य' और 'पावन रोमन साम्राज्य' की ही भाति थे। तीनो अवस्थाओं में ऐसा समाज बना जो पुराने समाज की छाया मात्र रह गया।

मान लिया है कि बबरा के मिलने से जो जातीय प्रभाव पडा, जिसे वे नये रक्त का सचार कहते थे, उसी के परिणामस्वरूप इतिहास में हम पश्चिमी सामाजिक जीवन और विकास पाते हैं। यह सकेत किया गया कि बबर विजेताओ का रक्त विशुद्ध था, उसमे शक्ति थी और इसके कारण उनके तथाकथित वश उन्नतिशील हुए।

सच बात यह है कि बबर लोग हमारी आत्मिक उन्नति के स्रष्टा नही थे। असल में वे हैलेनी समाज के मरणकाल में आये। किन्तु इस समाज के नाश का श्रेय उन्हें नही है। जिस समय ये आये हेलेनी समाज शतियो पहले के अपने ही किये घावो से मरणासन्न था। वीरकाल हेलेनी इतिहास का उपसहार था हमारे इतिहास की भूमिका नही।

पुराने समाज से नये समाज के परिवतन के तीन कारण हैं। पुराने समाज का अतिम रूप अर्थात् सावभौम राज्य पुराने समाज म विकसित ईसाई धार्मिक समुदाय जिसके द्वारा नये समाज का जन्म हुआ और बबर वीरकाल की अव्यवस्था। इनमे दूसरा सबसे अधिक और तीसरा सबसे कम महत्त्व का है।

दूसर नवजात समाजो की खोज के पहले हमें हेलेनी तथा पश्चिमी समाज द्वारा उत्पन्न समाज के एक लक्षण की ओर ध्यान देना चाहिए। वह यह है कि नये समाज का जन्मस्थान वही नही रह गया जो उसके पूववर्ती समाज का था। न यह समाज का केन्द्र बना जो पुराने समाज की सीमा थी।

परम्परावादी ईसाई ससाज

इस समाज की उत्पत्ति के अध्ययन स किसी नये वग का पता नही चलेगा क्योकि यह और हमारा पश्चिमी समाज हेलेनी समाज के जुडवाँ बच्चे ह। केवल उत्तर-पश्चिम जाने के बजाय यह उत्तर-पूरब की ओर गये। इनका मूल स्थान बजन्तिया में अनेतोलिया था। शतियो तक यह इस्लामी समाज के विस्तार के कारण दबा हुआ था। अन्त में इसे रूस तथा साइबीरिया में स उत्तर तथा पूरब में बढने का अवसर मिला। इस्लामी जगत् को पीछे छोडते यह सुदूर पूव की ओर बढ़ गया। पश्चिमी और परम्परावादी ईसाई समाज दो कैसे हो गये? इसका कारण यह है कि एक ही मूल कैथालिक धमतन्त्र (चच) से दो शाखाएँ उत्पन्न हुइ। रोमन कैथालिक धमतन्त्र (रामन कैथालिक चच) और परम्परावादी धमतन्त्र (आरथोडाक्स चच) दोनो के अलग-अलग स्वरूप होने में तीन शतियाँ लगा। आठवी शती के मूतिपूजा विरोधी मतभेद से आरम्भ होकर सन् १०५४ में धार्मिक विवाद पर यह भेद पूण रूप से स्थापित हो गया। इसी बीच दोनो सम्प्रदायो की राजनीतिक धारणाएँ भी भिन्न हो गयी। पश्चिम के कैथालिक सम्प्रदाय ने माध्यमिक युग के पोप के शासन में स्वतन्त्र सत्ता प्राप्त कर ली और परम्परावादी सम्प्रदाय बजन्तिया राज्य का छोटा विभाग मात्र बन गया।

ईरानी और अरबी समाज तथा सीरियाई समाज

जिस दूसरे नवीन समाज को हमें देखना है वह है इस्लामी समाज। जब हम इस्लामी समाज के विकास की पृष्ठभूमि की छानबीन करते हैं तब हमें पता लगता है कि वहाँ सावदेशिक धार्मिक समाज था। वहाँ भी जनसंघ था यद्यपि वह पश्चिमी और परम्परावादी ईसाई समाज जैसा न था किन्तु उससे मिलता जुलता था। इस्लामी सावभौम राज्य बगदाद की अब्बासी

खिलाफत (कैलिफेट) का था।[१] सारा मुसलिम समाज ही इस्लाम है। जो जनरेला खिलाफत के पतन के समय आया और उसने खलीफा के राज्य का तहस नहस कर दिया। वह यूरेशिया के स्टेप के तुर्की और मगोल खानाबदोशो का, उत्तरी अफ्रीका के बबर खानाबदोशा का तथा अरब प्रायद्वीप के खानाबदोशा का था। इन खानाबदोशो का प्रभाव लगभग तीन सौ साल तक अर्थात् सन् ९७५ ई० से १२७५ ई० रहा। आज जिस रूप में इस्लामी समाज है उसका आरम्भ इसी अतिम तिथि से समझना चाहिए।

यहा तक तो सब स्पष्ट है। किन्तु और खोज करने से परिस्थिति जटिल हो जाती है। पहली बात यह है कि इस्लामी समाज के पूवज (जिसका अभी पता नही है) एक सतान के नही, बल्कि दो जुडवाँ सतानो के जनक थे और इस रूप में वे बिलकुल हेलेनी समाज के समान थे। इन जुडवाँ सताना का आचरण समान नही था। पश्चिमी समाज और परम्परावादी ईसाई समाज हजार वष से ऊपर साथ-साथ रहे। जनक समाज की एक सन्तान जिसका पता लगाने की हम चेष्टा कर रहे है दूसरी सतान को निगल गयी और उसने उसे अपने में मिला लिया। इन दोनो मुसलिम समाजा को हम ईरानी और अरबी के नाम से पुकारेंगे।

जिस प्रकार हेलेनी समाज की सताना मे धार्मिक अन्तर था उस प्रकार का अन्तर इस अज्ञात इस्लामी समाज की दोना सन्ताना में नही था। यद्यपि इस्लाम में भी शिया और सुन्नी दो फिरके हो गये थे, जसे इसाई समाज में कैथोलिक और परम्परावादी ईसाई समाज हो गया था, किन्तु यह धार्मिक अतर अभी ईरानी इस्लामी और अरबी इस्लामी समाजो के अन्तर के रूप में नही था। यद्यपि सत्रहवी शती के पहले चतुर्थाश में जब फारस में शिया सम्प्रदाय का बाहुल्य हुआ तब ईरानी इस्लामी समाज छिन्न भिन्न होने लगा। और शिया सम्प्रदाय ईरानी इस्लामी समाज की मुख्य धुरी का (जो अफगानिस्तान से अनातोलिया तक फैली हुई है) केन्द्र बन गया और सुन्नी सम्प्रदाय ईरानी जगत् की दोना सीमाओ पर तथा दक्षिण और पश्चिम में अरबी प्रदेशो में रह गया।

जब हम इस्लाम के दोनो समाजा और ईसाई धम के दोनो समाजा की तुलना करते है तब हम देखते है कि ईरानी प्रदेश (जिसे हम फारसी-तुर्की भी कह सकते है) और पश्चिमी समाज में कुछ समानता है। और अरबी प्रदेश के इस्लामी और परम्परावादी ईसाई समाज में कुछ समानता है। उदाहरण के लिए, बगदाद की खिलाफत की छाया, जिसे तेरहवी शताब्दी में, जब काहिरो के ममलूका ने बगदाद के खलीफा के भूत को फिर से सजीव करने की चेष्टा की थी, उसी प्रकार थी जैसी आठवी शती में कुस्तुनतुनिया में सीरिया के लियो ने रोमन साम्राज्य के भूत को सजीव करने की चेष्टा की थी। ममलूको का राजनीतिक सगठन लियो के सगठन के समान सरल था जो निकट के ही ईरानी प्रदेश की तुलना में स्थिर और प्रभावशाली था। पडोस के ईरानी प्रदेश का तैमूर का साम्राज्य विस्तृत और अस्पष्ट और अस्थिर था जो पश्चिम के शालमन के साम्राज्य की भाँति था जो बनता और बिगडता रहा। अरब प्रदेश में उनकी सस्कृति की क्लासिकल भाषा

१ बाद के काहिरो के अब्बासी खलीफे बगदाद के खलीफो के छाया मात्र थे। अर्थात् 'पूर्वी रोमन साम्राज्य' और 'पावन रोमन साम्राज्य' की ही भाँति थे। तीनों अवस्थाओ में ऐसा समाज बना जो पुराने समाज की छाया मात्र रह गया।

अरबी थी जो बगदाद के अब्बासी खलीफा की संस्कृति की भाषा थी। ईरानी प्रदेश में फारसी नाम की भाषा का जन्म हुआ जो अरबी भाषा पर कलम लगाकर बनी थी, जैसे लैटिन ग्रीक पर कलम लगा कर बनी थी। सोलहवीं शताब्दी में ईरानी प्रदेश के इस्लामी समाज ने अरब प्रदेश के इस्लामी समाज पर विजय प्राप्त की और उसका समावेश कर लिया यह उसी प्रकार था, जैसे क्रूसेड[1] के समय पश्चिमी ईसाई समाज ने परम्परावादी ईसाई समाज के साथ किया था। सन् १२०४ ई० में यह संग्राम समाप्त हुआ और चौथा क्रुसेड कुस्तुनतुनिया के विरुद्ध आरम्भ हुआ। तब इस्लामी समाज ने थोड़ा देर के लिए सोचा कि परम्परावादी ईसाई समाज सदा के लिए पराजित हो जायगा और पश्चिमी ईसाई समाज में उसका लय हो जायगा। तीन सौ साल के बाद यही बात अरब समाज के साथ हुई जब ममलूक की शक्ति का विनाश हुआ और सन् १५१७ में उस्मानिया बादशाह सलीम प्रथम ने काहिरा के अब्बासी खलीफा को नष्ट कर दिया।

अब हम इस प्रश्न पर विचार करेंगे कि वह कौन अज्ञात समाज था जो बगदाद के अब्बासी खिलाफत का अन्तिम रूप हुआ, जैसे हेलनी समाज का रोम साम्राज्य। यदि हम अब्बासी खलीफों के इतिहास में पीछे की ओर चलें तो क्या हमें वैसी ही घटना मिलेगी जो हेलनी समाज के अन्तिम समय मिलती है?

इसका उत्तर नकारात्मक है। बगदाद के अब्बासी खलीफों के पीछे दमिश्क के उम्मया खलीफा मिलते हैं और उसके पहले सहस्रों वर्षों तक हेलनी लोगों का प्रवेश मिलता है जो ईसा के पहले चौदहवीं शती के अन्तिम पचास वर्षों में हुआ था जब मकदूनिया के सिकन्दर का जीवन आरम्भ होता है। और जिसके पश्चात् सीरिया में यूनानी सेल्यूकस के वंश का राज्य था। और फिर पाम्पे के आक्रमण हुए, रोमनों की विजय हुई और अन्त में ईसा की सातवीं शती में पूर्व की ओर से बदले के रूप में मुसलमानों का आक्रमण हुआ। आदिम मुसलिम अरबों की जो घनघोर विजय थी वह सिकन्दर की घनघोर विजय का मानो जवाब था। पाँच छ वर्षों में इन्होंने दुनिया की सूरत बदल दी, किन्तु सिकन्दर की विजय ने ऐसा परिवर्तन किया कि विजित देशों का स्वरूप एकदम बदल गया और उसका यूनानी रूप हो गया। किन्तु अरबों की विजय ने परिवर्तन करके उनका फिर पहले-सा स्वरूप कर दिया। जिस प्रकार मकदूनिया ने अकामीनिया के साम्राज्य (खुसरो तथा उनके उत्तराधिकारियों का फारसी साम्राज्य) का ध्वस्त करके यूनानी संस्कृति (हेलनिज्म) का बीजारोपण किया उसी प्रकार अरबी विजय ने उम्मैया के लिए दरवाजा खोल दिया और उनके बाद अब्बासियों के लिए सार्वभौम राज्य बनाने के लिए राह तैयार कर दी जो अकामीनिया के साम्राज्य के समान था। यदि हम दोनों साम्राज्यों के नक्शों को एक के ऊपर दूसरे को रख दें तो दोनों की सीमा लगभग एक ही पर पड़ती है। यह अनुरूपता केवल भौगोलिक नहीं, बल्कि शासन में और सामाजिक तथा आध्यात्मिक जीवन में भी समान मिलती है। अब्बासी खलीफों का ऐतिहासिक काम अकामीनिया के साम्राज्य को फिर से स्थापित करना और पुनरुज्जीवित करना था। इसका राजनीतिक स्वरूप तो बाहरी आक्रमणों ने छिन्न भिन्न कर दिया था सामाजिक जीवन को भी विदेशी आक्रमणों ने अवरुद्ध कर दिया था। अब्बासी खिलाफत उस

[1] ईसाइयों और मुसलमानों का धार्मिक युद्ध।

सावभौम राज्य का नया रूप था जो उस अनात ममाज का अन्तिम स्वरूप था जिसका पता अभी हम लोगा को नही मिला है। और जिसे हजारा वप पहले हमें ढूँढना होगा।

अव हम अक्कामीनियाई साम्राज्य के ठीक पहले के समाज की खोज करगे जिससे हमें उन घटनाआ का पता लगे जो हमें अब्बासी खिलाफत के पहले के समाज मे नही मिल सकी। अर्थात् वह सकट काल जो हेलेनी इतिहास में रोमन साम्राज्य की स्थापना व पहले था।

अक्कामीनियाई साम्राज्य तथा रोमन साम्राज्य की उत्पत्ति की साधारण समानता स्पष्ट है। सूक्ष्मता से देखने में मुख्य अ तर यह है कि हेलेनी सावभौम राज्य उसी राज्य से उत्पन्न हुआ जिस राज्य ने सकट के समय उसका विनाश किया था। अक्कामीनियाई साम्राज्य की उत्पत्ति अनेक राज्यो के रचनात्मक तथा विध्वसात्मक कार्यों का परिणाम थी। विध्वस का काय असीरिया ने किया, कि तु जब असीरिया उस समाज में सावभौम राज्य स्थापित करने को हुआ, जिसका उसने विनाश किया था, तब अपने ही सैनिकवाद की गुरुता से उसने अपना ही विनाश कर डाला। ज्या ही वह अपना महान् काय समाप्त करने वाला था उसके ऊपर नाटकीय ढग से गहरा प्रहार हुआ (ईसा के पूव ६००) और एक ऐसा अभिनेता मच पर आ गया जिसकी भूमिका अभी तक वहुत छोटी थी। जा वीज असीरिया ने बोया था उसकी फसल को अक्कामीनिया ने काटा। एक अभिनेता की जगह दूसरा अवश्य आ गया, कि तु कथानक नहा बदला।

इन उपद्रवा को ध्यान में रखकर हम उस समाज का पता लगा सकते हैं जिसकी हम खोज कर रहे ह। नकारात्मक ढग से हम यह कह सकते ह कि यह समाज असीरिया का समाज नही था। यूनानिया के समान असीरियाई भी इस लम्बे और जटिल इतिहास के अन्तिम काल में आक्रमणकारियो के समान आये और चले गये। इस अज्ञात समाज में, जिसकी एकता अक्कामीनियाई साम्राज्य में स्थापित हुई हम उस प्रतिक्रिया को देख सकते हैं जिसके द्वारा सस्कृति के उन तत्वो का शान्तिमय ढग से उ मूलन किया गया जिसे असीरियो ने घुसा दिया था। अर्थात् अक्कादी भाषा और कीलाक्षर लिपि (क्युनिफाम) के स्थान पर अरामी भाषा और वर्णों की स्थापना की गयी।

असीरिया ने स्वय अपने अन्तिम दिना में अपनी प्राचीन कीलाक्षर लिपि के साथ-साथ अरामी लिपि में चम पत्रा पर लिखना आरम्भ कर दिया था। मिट्टी के फलक पर अथवा पत्थर पर वह कीलाक्षरो का प्रयोग करते रहे। जब उ होनें अरामी लिपि का प्रयोग किया तब सम्भवत अरामी भाषा का भी प्रयोग वह करते रहे हागे। असीरा राज्य के विनाश के बाद और उसके पश्चात् के अल्पकालिक नये बैबिलोनी साम्राज्य (नबूकदनजर का साम्राज्य) के विनाश के बाद से अरामी भाषा का प्रयोग धीरे धीरे वढ़ता गया। ईसा के पहले अन्तिम शताब्दी में कीलाक्षर लिपि अपनी ज मभूमि मेसोपाटामिया से लोप हो गयी।

इसी प्रकार का परिवतन ईरानी भाषा के इतिहास मे भी देखा जा सकता है जो अरामी साम्राज्य के शासका का अर्थात् मीडिया और फारस वाला की भाषा थी और जिसे अ धकार से निकाला गया। जब ईरानी अर्थात् पुरानी फारसी मे लिखने की आवश्यकता पडी तब इसकी अपनी कोई लिपि नही थी। फारस वाला ने पत्थर पर अकित करने के लिए कीलाक्षर और चम-पत्रा पर लिखने के लिए अरामी लिपि अपनायी। अरामी लिपि ही फारसी भाषा की लिपि रह गयी।

वास्तव में संस्कृति के दो तत्व, एक सीरिया से एक ईरान से, साथ ही साथ एक-दूसरे के सम्पर्क में भी आ रहे थे और अपना अपना प्रभुत्व भी जमा रहे थे। अकामानी साम्राज्य के स्थापित होने के पहले तो संकट-काल था। उसके अंतिम समय में अरामी लोग अपने असीरी विजेताओं को पराजित करने लगे थे। और यह प्रतिक्रिया चलती रही। यदि हम इसके पहले की घटनाओं को जानना चाहें तो हमको धर्म के आड़ में देखना होगा। हम देखेंगे कि उसी संकट-काल ने ईरान में जरथुस्त्र को प्रेरणा प्रदान की और इसराइल तथा जूडा के पैगम्बरों को भी जन्म दिया। सचमुच देखा जाय तो ईरानी की तुलना में अरामी अथवा सीरियाई तत्त्व का गहरा प्रभाव था और यदि हम संकट काल के और पीछे देखें तो ईरानी तत्त्व लोप हो जाता है और सीरिया में हम ऐसे समाज की झलक पाते हैं जब सम्राट सुलेमान और उनके समकालीन सम्राट हिरम का शासन काल था। यह समाज अतलान्तक तथा हिन्द महासागर की खोज कर रहा था और इसने स्पेन का पता लगा लिया था। यहाँ उस समाज का हमने पता लगा लिया जिससे दो इस्लामी समाज उत्पन्न हुए थे और जो बाद में एक हो गये। इसे हम सीरियाई समाज कहेंगे।

इस आलोक की दृष्टि में यदि हम इस्लाम की ओर देखें तो वह एसा सार्वभौम धार्मिक संघ है जिसके माध्यम से सीरियाई समाज का सम्बन्ध ईरानी और अरबी समाजों से स्थापित होता है। इस्लाम और ईसाई धर्म के विकास में हम अब मनोरंजक अन्तर देख सकते हैं। हमने देखा है कि ईसाई धर्म में जो सृजनात्मक शक्ति का बीज है वह हेलनी नहीं, किन्तु विदेशी है (वास्तव में उसका मूल सीरियाई है)। इसी के साथ तुलना करने से हम यह देखते हैं कि इस्लाम की सृजनात्मक शक्ति विदेशी नहीं है सीरियाई समाज से ही निकली है। इस्लाम के प्रवर्तक मोहम्मद साहब को यहूदी धर्म से प्रेरणा मिली जो विशुद्ध सीरियाई धर्म था और फिर नेस्टोरी सम्प्रदाय से प्रेरणा मिली जो ईसाई धर्म का एक रूप था और जिनमें हेलनी से अधिक सीरियाई तत्त्व था। सच पूछा जाय तो यह है कि कोई सार्वभौम धार्मिक संघ केवल एक समाज से नहीं उत्पन्न होता। हम जानते हैं कि ईसाई धर्म में हेलनी तत्त्व है जो हेलनी रहस्यवादी धर्म से और हेलनी दर्शन से लिये गये हैं। उसी प्रकार इस्लाम पर भी हेलनी प्रभाव पड़ा है यद्यपि बहुत कम मात्रा में। साधारणतः हम कह सकते हैं कि ईसाई धर्म वह सार्वभौम धर्म है जिसकी उत्पत्ति का बीज विदेशी है और इस्लाम की उत्पत्ति का बीज उसी के अपने देश का है।

अब हम यह देखने की चेष्टा करेंगे कि ईरानी और अरबी समाजों का उनके मूल निवास स्थानों से कहाँ तक स्थानान्तरण हुआ और सीरियाई समाज के मूल निवास स्थान से इनका कहाँ तक स्थानान्तरण हुआ। ईरानी इस्लामी समाज अनातोलिया से भारत तक फैला हुआ है। अर्थात् इसका काफी स्थानान्तरण हुआ है। दूसरी ओर अरबी इस्लामी समाज केवल सीरिया और मिस्र में फैला है जिसका अर्थ है स्थानान्तरण अपेक्षाकृत कम हुआ।

भारतीय समाज

जिस दूसरे सजीव समाज का अध्ययन हम करना चाहते हैं वह हिन्दू समाज है। इसकी पृष्ठभूमि में भी हमें इससे पहले के समाज की ओर देखना पड़ेगा। इस समाज का सार्वभौम राज्य गुप्त साम्राज्य है (३७५-४७५ ई०) सार्वभौम धर्म हिन्दू धर्म है जो गुप्तकाल में चरम शक्ति को पहुँच गया। इसने इसी देश में उत्पन्न बौद्ध धर्म को निष्कासित किया जो ७०० साल तक यहाँ

जमा रहा। गुप्त साम्राज्य के पतन के समय यूरेशिया के स्टेप से हूणा का रेला आया। इसी समय हूण लोग रोमन साम्राज्य पर भी आक्रमण कर रहे थे। गुप्त साम्राज्य के उत्तराधिकारियां और हूणा का कायकलाप लगभग ३०० मात्र तक अर्थात् ४७५-७७५ ई० तक चलता रहा। इसके बाद जो हिन्दू समाज उभरा वह आजतक जीवित है। हिन्दू-दशन के प्रवतक शकर ८०० ई० के लमगभग वतमान थे।

यदि हम उस पुरातन समाज की खोज करने के लिए और पीछे जायें जिससे हिंदू समाज निकला था तो हमको छोटे पैमाने में वही सब बातें मिलेंगी जो सीरियाई समाज के खोजने में प्राप्त हुई थी अर्थात् हेलेनी प्रवेश। भारत में हेलेनी प्रवेश सिकन्दर के आक्रमण के साथ नही आरम्भ हुआ। इस समय इसका प्रभाव भारतीय सस्कृति पर नही के बराबर था। भारतवष में हेलेनी प्रवेश बकट्रिया के यूनानी बादशाह डिमिट्रियस के आक्रमण से आरम्भ होता है जो लगभग १८३-१८२ ई० के पूव हुआ था। और इसकी समाप्ति ३९० ई० के लगभग हुई जब अन्तिम हेलेनी आक्रमणकारी नष्ट कर दिये गये। इसी समय गुप्त साम्राज्य का भी आरम्भ हुआ था। जिस प्रकार दक्षिण-पश्चिम एशिया में हमने सीरियाई समाज की उत्पत्ति का अध्ययन किया था उसी प्रकार भारत में हेलेनी प्रवेश के पूव के उस सावभौम समाज की खोज करें जिसके परिणाम स्वरूप गुप्त साम्राज्य का आविर्भाव हुआ तो हमें मौर्यों का साम्राज्य मिलता है जिसकी स्थापना ईसा के ३२३ वप पहले चन्द्रगुप्त ने की थी। सम्राट् अशोक ने इस साम्राज्य को महत्ता प्रदान की और ईसा के पूव सन् १८५ में पुष्यमित्र ने इसका ध्वस किया। इस साम्राज्य के पहले सकट-काल था जब स्थानीय राज्य आपस में लडते रहे। यही समय था जब गौतम बुद्ध पदा हुए और उन्होंने अपने धम का प्रचार किया। गौतम का जीवन और जीवन की ओर उनकी भावना उनके काल की जो प्रवृत्ति थी उसका सबस अच्छा प्रमाण है। जन धम के प्रवत्तक महावीर के जो बुद्ध के समकालीन थे जीवन से भी इस प्रमाण का समथन होता है। उस युग के और लाग भी ससार के इस जीवन से मुख मोडकर तपस्या के द्वारा दूसरे ससार की राह खोज रहे थे। इन सबके पीछे, सकट-काल के भी पीछे, एक समाज का पता चलता है जिसका वणन वेदों में मिलता है। इस प्रकार हमने एस समाज का पता लगा लिया जो हिंदू समाज के पहले था। उसे हम भारतीय समाज कहेंगे। भारतीय समाज का आदिम स्थान गगा की पश्चिमी घाटी था। और यही से वह सारे देश में फैला। इस समाज का भौगोलिक स्थान वही था जो इनके उत्तराधिकारियों का हुआ।

चीनी समाज

अब एक जीवित समाज रह गया है जिसका निवास स्थान सुदूर पूव है जिसकी पृष्ठभूमि की खोज करनी है। यहाँ का सावभौम वह राज्य साम्राज्य है जिसकी स्थापना २२१ ई० पूव सिन तथा हेन वशो द्वारा हुई थी। यहाँ का सावभौम धम महायान था। बौद्ध धम की इस शाखा का प्रवेश हेन साम्राज्य के समय हुआ था। और यह आज के सुदूर उत्तर पूर्वी समाज की प्रारम्भिक अवस्था थी। इस सावभौमराज्य का पतन उस समय हुआ जब सन् ३००ई० के लगभग यूरेशिया के स्टप के खानाबदोशो का रेला आया और उसने हेन साम्राज्य को नष्ट किया। यद्यपि १०० वप पहले से ही हेन साम्राज्य तितर बितर होने लगा था। हन साम्राज्य के पहले की घटनाओं

को जब हम देखते है तब हमें स्पष्ट रूप से सकट काल मिलता है जिसे चीनी इतिहास में 'चान क्वो' कहते हैं। इसका अथ है राज्या के सघष का काल। यह समय कनफूशियस की मृत्यु (४७९ ई० पू०) से २५० साल बाद तक था। इस काल की दो बातें महत्त्वपूण हं। आत्मघातक राजनीति और व्यावहारिक जीवन के प्रति शक्तिशाली बौद्धिक दशन। यह समय हलनी इतिहास के उस समय की याद दिलाता है जब वराग्य (स्टोइसिज्म) के प्रवत्तक जीनो का समय था और जब (ऐक्टियम) का युद्ध हुआ था जिससे हलेनी काल सकट-काल का अन्त हुआ। इन दोना काला में उपद्रवा की अन्तिम शतिया में जो अव्यवस्था बहुत पहल आरम्भ हो गयी थी उसी का अन्त हुआ। कनफूशियस के बाद जो सनिक वाद अपनी ही अग्नि में जलकर भस्म हो गया यह अग्नि उसी समय प्रज्वलित हो चुकी थी जब कनफूशियस मानव समाज के जीवन के सिद्धात बना रहा था। इस दाशनिक का सासारिक दशन और इसके समकालीन दाशनिक लाओत्से का शान्तिवादी दशन परलोक सम्बन्धी था, दोनो इस बात के प्रमाण ह कि इन्होंने अनुभव किया कि हमारे समाज में विकास का काल पहल जा चुका है। उस समाज का नाम हम क्या रखें जिसके भूतकाल की ओर कनफूशियस सम्मान की दप्टि से देखता था और लाओत्से जिसकी ओर से मुख मोड रहा था। इस समाज का नाम हम सुविधा के लिए 'चीनी समाज' रखग।

महायान बौद्ध धम की वह शाखा है जिस रूप में चीनी समाज आज के उत्तर-पूव समाज के रूप में आया है। ईसाई धम से इस बात में यह मिलता-जुलता है कि यह उसी देश के समाज का नही है, बल्कि बाहर से आया। इस्लाम और हिन्दू धम उसी देश में उत्पन्न हुए जहाँ वह प्रचलित है, इसलिए चीनी समाज का धम इससे भिन्न है। महायान धम सम्भवत भारत के उन प्रदेशो में पदा हुआ जिनमें बकट्रिया के यूनानी राजाओ और उनके अध-हलेनी उत्तराधिकारी कुषाणा का शासन था। निस्सन्देह महायान न कुषाण प्रान्त तारिम के बसिन में जड जमा लिया था। जहाँ हेन वंश के पश्चात् कुषाणो का शासन था और जिन्हें हरा कर हेन वशिया ने फिर से शासन किया। इसी दरवाजे से चीनी ससार में महायान ने प्रवेश किया और चीनी जनता ने उसे अपने अनुकूल बना लिया।

चीनी समाज का मूल स्थान ह्वागहो नदी का बसिन था। यहाँ से वह यागत्सी नदी के बेसिन तक फला। सुदूर पूव समाज का मूल स्थान इन दोनो नदियो का बसिन था। यहाँ से ये लोग दक्षिण-पश्चिम की ओर फल और फिर चीनी तट तक पहुँचे और फिर उत्तर पूव की ओर कोरिया और जापान तक इनका विस्तार हुआ।

जीवाश्म चिह्न (फासिल)

अभी तक जो तथ्य हमें ज्ञात हुए ह व सजीव समाजो के सम्बन्धो में है। इन्ही के द्वारा हम उन मृत समाजो को भी ढूढ निकालेंगे और यह भी पता लगायेंगे कि किन लुप्त समाजो से उनका सम्बन्ध था। यहूदी और पारसी उस सीरियाई समाज के जीवाश्म ह जो सीरियाई समाज हलेनी आक्रमण के पहले था। मोनोफाइसाइट तथा नस्टोरी ईसाई समाज उस समाज और उस समय के चिह्न ह जब सीरियाई समाज में हलनी आक्रमण की प्रतिक्रिया हुई थी। इस समय सीरियाई समाज में जो हलेनी परिवतन हो रहे थे उनका घोर प्रतिवाद तथा विरोध उस समाज द्वारा हो रहा था। भारत के जनी और लका बर्मा स्याम और कम्बोडिया के हीनयानी बौद्ध उस समय

के अवशिष्ट चिह्न हैं, जब मौर्य साम्राज्य था और भारत पर यूनानियो का हमला नही हुआ था। तिब्बत और मगोलिया का लामा वाला महायान बौद्ध धर्म नेस्टोरिया के समान है। यह उस असफल प्रयत्न का परिणाम है जो भारतीय बौद्ध धर्म के विरुद्ध महायान रूप के परिवर्तन में हो रहा था। इनके परिवर्तन में हेलेनी तथा सीरियाई प्रभाव था और अन्त में चीनी समाज ने यह परिवर्तित रूप ग्रहण किया।

इन अवशिष्ट समाजो से दूसरे समाजो का कुछ पता नही लगता। किन्तु हमारे साधन समाप्त नही हो गये। हम और पीछे जायेंगे और उन समाजो के पूर्वजो का पता लगायेंगे जो स्वय आज के जीवित समाजो के पूर्वज हैं।

मिनोई समाज (मिनोअन सोसाइटी)

हेलेनी समाज के पूर्व एक और समाज के होने का स्पष्ट सकेत मिलता है। यह सार्वभौम राज्य समुद्री राज्य था जिसका शासन एजियन सागर के क्रीट अड्डे से होता था। यूनानी परम्परा में 'थैलोसोक्रैसी' नाम अब भी चला आता है जिसका अर्थ है समुद्री शक्ति। इसका सम्बन्ध मिनोस से ही है। हाल में 'क्नोसास' और 'फीस्टस' में जो अभी खुदाई हुई है उससे तथा उसके महलो के ऊपरी सतह से भी इसका प्रमाण मिलता है। इस सार्वभौम राज्य पर जो जनरेला हुआ था उसका कुछ आभास प्राचीन साहित्य 'इलियड' और 'ओडेसी' में मिलता है और कुछ पता उस समय के अर्थात् मिस्र के अठारहवें उन्नीसवें तथा बीसवें राज्य वश के सरकारी अभिलेखो में मिलता है। यह जनरेला यूरोपीय पृष्ठभूमि में एकियाई तथा इसी प्रकार की और बर्बर जातियो को पराजित करते हुए समुद्र तक पहुँचा और क्रीट के समुद्री राज्य को उसी के घर में परास्त किया। क्रीट के महलो के विध्वस का प्रमाण पुरातत्त्व की खोज में मिलता है। यह वही युग है जिसको पुरातत्त्व वाले द्वितीय मिनोआ का अन्तिम काल कहते हैं। यह रेला मानवी हिमस्राव के समान था जो एजीयन लोगो पर टूट पडा और विजयी तथा पराजित दोनो ने अनातोलिया के खत्ती साम्राज्य को नष्ट किया तथा मिस्र के 'नये साम्राज्य' पर आक्रमण किया, किन्तु उसे हरा न सके। विद्वान् लोग क्नोसोस के विनाश का काल १४०० ई० पू० मानते हैं। मिस्र के अभिलेखो से पता चलता है कि 'मानवी हिमस्राव' का समय १२३० से ११९० ई० पू० था। इसलिए हम यह युग १४२५-११२५ ई० पू० मान सकते हैं।

इस पुरातन समाज का इतिहास जब हम देखने लगते है तब कठिनाई यह पडती है कि क्रीटी लिपि हम नही पढ सकते, किन्तु पुरातत्त्व के प्रमाण से ऐसा जान पडता है कि क्रीट की विकसित भौतिक सभ्यता एजियन सागर के पार ई० पू० सातवी शती में आरगालिड में पहुँची थी और वहाँ से धीरे धीरे यूनान देश के प्रत्येक भाग में दो सौ साल में फैली थी। यह भी प्रमाण मिलता है कि क्रीट की सभ्यता पीछे नव पाषाण युग तक फैली थी। इस समाज को हम मिनोई समाज कह सकते है।

किन्तु क्या हम मिनोई और हेलेनी समाजो में वही सम्बन्ध स्थापित कर सकते है जो हेलेनी तथा पश्चिम के उन समाजो में हमने स्थापित किया है जिनका पता हमने लगाया है। अन्तिम दोनो समाजो की बीच की लडी वह सार्वभौम धार्मिक स्वरूप था जिसे पुराने समाज की आन्तरिक जनता ने जन्म दिया था। और जो नये समाज का उद्गम बन गया। मिनोई समाज में भी हेलेनी

ग्राम देवता की पूजा ओलिम्पी मन्दिरों में नहीं होती थी। इस प्रकार की भावना मिनोई समाज में नहीं थी। इस देव कुल को होमर के महाकाव्यों द्वारा क्लासिकी महत्ता प्राप्त हुई। मिनोई समाज में जो देवता थे वे उन बबरों की मूर्तियों के अनुरूप थे, जो बबर जनरेला में उनके ऊपर चढ़ आये थे और जिन्होने विनाश किया था। जीयुस एकियाई युद्ध देवता है यह ओलिम्पस पवत पर राज्य करता था। इसने अपने पूव के शासक क्रोनस को जबरदस्ती हटाकर अधिकार जमा लिया था और विश्व की लूट की सम्पत्ति को बाँट लिया। जल और थल को उसने अपने भाइयों पोसाइडन और हैडस को दिया और आकाश अपने पास रखा। देवताओं का यह स्वरूप एकियाई है और मिनोई समाज के बिलकुल बाद का है। हटाये गये देवताओं में मिनोई धम की छाया भी नहीं है। क्रोनस और टाइसन उसी प्रकार के ह जैसे जीयूस और उनके साथी। इस पर हमें ट्युटनी बबरो के धम की याद आती है। उनमें से अधिकाश ने रोमन साम्राज्य पर धावा बोलने से पहले अपने धम को छोड दिया था। उनके सम्बन्धियों ने इसी धम को कायम रखा और उसका परिष्कार किया और जब इन्होने छ सौ साल के बाद स्वय धावा बोला (नाथमनो का धावा) तब उस धम को छोड दिया। यदि मिनोई समाज में किसी प्रकार का सावभौम धम उस समय था जब बबरों का धावा उस पर हुआ था तो वह यूनानी धम से उतना ही भिन्न रहा होगा जितना ईसाई धम ओडिन तथा थार की पूजा से था।

क्या ऐसी बात थी? इस विषय के सबसे बड विशेषज्ञ के कथन से मालूम होता है कि ऐसा था।

"जहाँतक प्राचीन क्रीटी धमक अध्ययन से ज्ञात होता है हम उसमें आत्मिक भावना ही नहीं पाते, बल्कि पूव के ईरानी ईसाई तथा इस्लामी धर्मों में विगत दो हजार वर्षों में जो श्रद्धा थी उसी के समान श्रद्धा भी पाते हैं। इस भावना में एक प्रकार की कट्टरता थी जो हेलेनी दष्टिकोण में नहीं थी। साधारण रूप से कहा जा सकता है कि प्राचीन यूनानियों के धम की तुलना में इसमें आत्मिक तत्त्व अधिक था। दूसरी दष्टि से यह भी कहा जा सकता है कि इसमें व्यक्तिगत भाव अधिक था। 'नेस्टर के वलय' में (रिंग आव नेस्टर) देवी के सिर के ऊपर तितली तथा उसके कोष (क्राइसेलिस) के रूप में पुनरुज्जीवन का जो प्रतीक बनाया गया है उसका अभिप्राय है कि देवी द्वारा उसके उपासकों को मृत्यु के बाद भी जीवन प्राप्त होता है। वह अपने पूजकों के बहुत निकट है। मृत्यु के बाद भी वह अपन बच्चों की रक्षा करती है। यूनानी धम में भी रहस्य की बातें ह। किन्तु पुरुष और स्त्री दोनो प्रकार के यूनानी देवताओं में जिनकी शक्ति प्राय समान है इस प्रकार का निकट का व्यक्तिगत सम्बन्ध नहीं पाया जाता जसा मिनोई देवताओं में। यूनानी देवताओं में झगडे और मतभेद बहुत ह और उनके रूप तथा गुण भी अनेक हैं। इसके विपरीत मिनोई ससार में बार-बार वे ही देवियाँ आती ह। इस कारण हम इस प्रमाण पर पहुँचते ह कि इनका धम अधिकांश रूप में एकेश्वरवादी था और दवी का ही प्रमुख स्थान था।[1]

१ सर आथर इवेन्स दि अर्लियर रिलिजन आव ग्रीस इन द लाइट आव क्रीटन डिसकवरीज, पृ० ३७–४१।

हेलेनी परम्परा में भी इस विषय के कुछ प्रमाण मिलते हैं। यूनानियों ने क्रीट में जीयूस की कथा को सुरक्षित रखा, किन्तु यह वही देवता नहीं था जो ओलिम्पस का देवता था। क्रीट का जीयूस वह सेनानी नहीं था जो हथियारों से लैस होकर बलपूर्वक राज्य को छीन लेता है। वह नवजात शिशु है। सम्भवतः यह उस शिशु के समान है जिसे मिनोई कला में इस प्रकार दिखाया गया है जिसे दिव्य माता पूजा के लिए उठाये हुए है। यह शिशु जन्म लेता है और मर भी जाता है। उसका जन्म और मृत्यु ग्रेस के देवता डायनिसस के जन्म और मृत्यु में सम्भवतः पुनः स्थापित किया गया था और जो 'इल्युसीनी रहस्य' (इल्युसीनियन मिस्ट्रीज़) के ईश्वर के समान था। क्लासिकी रहस्य वर्तमान यूरोप के जादू-टोना के समान तो नहीं हैं जो एक लुप्त समाज के धर्म के अवशेष हैं?

यदि ईसाई जगत् स्कैंडिनेविया से पराजित हो जाता अर्थात् उनके शासन में हो जाता और उन्हें धर्म में परिवर्तित कर पाता तो हम ऐसी कल्पना कर सकते हैं कि शतियों तक एक नये समाज में ईसाई धर्म का पालन होता रहा हो जब कि प्रचलित धर्म 'ईसर' की पूजा रही हो। हम कल्पना कर सकते हैं कि जब यह नया समाज प्रौढ़ होने पर स्कण्डिनेविया के बर्बरों के धर्म से सन्तुष्ट न होता तब उसी देश के धर्म को अपनाता जिस देश में यह समाज स्थापित हो गया था। ऐसी धार्मिक भूख के समय इसके बजाय कि पुराना धर्म नष्ट कर दिया जाता, जिस प्रकार पश्चिमी समाज ने जादूगरी का विनाश किया, पुराने ही धर्म को फिर से स्थापित किया जाता जैसे कोई गड़े हुए धन को खोज कर उसका उपभोग करता है। और ऐसे समय कोई धार्मिक नेता निकल आता जो लुप्तप्राय ईसाई धर्म के संस्कारों को बर्बरों के धार्मिक कृत्यों से, जो 'फिन्नों और मगयरों' द्वारा ले आये गये थे, मिला कर एक नये धर्म की स्थापना करता।

इसी उदाहरण के अनुसार हेलेनी जगत् के वास्तविक धार्मिक इतिहास की हम फिर से रचना कर सकते हैं। यहाँ पुराने और परम्परागत 'इल्युसिस' के रहस्य कृत्यों का 'आरफियुज' के नये संस्कारों को मिला कर नये धर्म की उत्पत्ति की गयी। 'निल्सन' के अनुसार किसी बौद्धिक प्रतिभा ने इस चिन्तनशील धर्म की स्थापना की होगी और ग्रेस के डायोनाइसस के आमोद प्रमोद और मिनोई क्रीट के जीयूस के जन्म और मृत्यु के रहस्यवाद को मिला कर यह धर्म बना होगा। क्लासिकी युग में हेलेनी समाज की आत्मिक आवश्यकताओं को इल्युसिनी रहस्यवाद आरफियुजी धर्म ने पूरा किया क्योंकि ओलिम्पियाई देवताओं से वह पूरा नहीं पड़ता था। उसके लिए ऐसे देवता की आवश्यकता थी जो कष्ट के समय सहायक हो सके। क्योंकि किसी समाज में जब जनता का पतन होने लगता है तब ऐसे ही धर्म और देवता का आविष्कार होता है। इसी समानता के आधार पर इल्युसिनी रहस्यवाद और आरफियुजी धर्म में मिनोई सार्वदेशिक धर्म की छाया की कल्पना करना असंगत न होगा। यह कल्पना यदि सत्य भी हो (आगे चलकर जहाँ इस पुस्तक में आरफियुजी धर्म की उत्पत्ति पर विचार किया गया है इस सचाई पर शंका की गयी है) तब भी यह कहना बिल्कुल ठीक न होगा कि हेलेनी समाज अपने पूर्व के समाज से सचमुच सम्बन्धित है। हेलेनी समाज का यह धर्म यदि मरा न होता तो उसके जी उठने की बात कहाँ से आती और उसके हत्यारे उन बर्बरों के सिवा और कौन होंगे जिन्होंने मिनोई समाज को रौंद डाला। इन्हीं एकियाई हत्यारों और नगर ध्वंसकों के देवताओं को हेलेनी समाज ने अपनाया और इन्हीं हत्यारों को अपना पूर्वज चुना। जब तक हेलेनी समाज एकियाइयों की

हत्याओं को अपने सिर पर न ओढ़ता, वह मिनोई समाज से अपना सम्बन्ध नहीं स्थापित कर सकता था।

अब हम यदि सीरियाई समाज के पूव इतिहास को देखें तो वही अवस्था मिलेगी जो हेलेनी समाज के पूव के इतिहास में मिलती है। अर्थात् वसा ही सावभौम राज्य जसा मिनाई इतिहास के अतिम अध्यायों में हम पाते ह। मिनोई रेला के बाद जो अतिम उपद्रव हुआ वह उन लोगों के द्वारा हुआ जो मानवो हिमस्राव की भांति नये निवास की खोज में अव्यवस्थित ढग से आये और जिनको उत्तर के लोगों ने जिन्हें डोरियन कहा जाता है निकाल बाहर कर दिया था। मिस्र से भगाये जाने पर ये मिस्री साम्राज्य के उत्तर पूर्वी तट पर बस गये और वही पुरान बाइबिल (ओल्ड टेस्टामेण्ट) में वर्णित फिलिस्तीन है। यहाँ मिनोई जगत् के फिलिस्तीनी आगन्तुकों से और उन हिब्रू खानाबदोशो से मुठभेड हुई जो अरव के उन भागों से जहाँ किसी का शासन नहीं था, मिस्र के सीरियाई अधीन राज्यों में घूमते फिरते पहुँचे गये थे। इसके और उत्तर लेबनान के पहाड़ो के कारण अरबों का आना रुक गया था और इन्हीं पहाडो में फिनीशी बस गये जो फिलिस्तीनियों के आक्रमण से बच गये थे। जब उपद्रव शान्त हुआ तब इन्हीं तत्वों में से सीरियाई समाज का जन्म हुआ।

जितना सीरियाई समाज मिनोई समाज से सम्बन्धित था उतना ही हेलेनी समाज भी मिनोई समाज से। इसमें कमी-बेशी बिल्कुल नहीं थी। मिनोई समाज से सीरियाई समाज को वर्णमाला शायद मिली हो (किन्तु यह अनिश्चित है)। दूसरी बात शायद समुद्र यात्रा का प्रेम मिला हो।

एकाएक हमें आश्चय होता है कि सीरियाई समाज मिनोई समाज से उत्पन्न हुआ है। सम्भवत लोग यह आशा करते रहे होंगे कि सीरियाई समाज की पृष्ठभूमि में मिस्र का 'नया साम्राज्य होगा और यहूदियों का एकेश्वरवाद इखनेतन के एकेश्वरवाद का पुनरुज्जीवन है, किन्तु प्रमाण इसके विरुद्ध है। न इसका कोई प्रमाण है कि सीरियाई समाज का सम्बन्ध अनातोलिया के खत्ती समाज (हिटाइट) से है या इसका समाज उर के सुमेरी वंश से है या उसका सम्बन्ध बबिलन के ऊमरी वंश से है। इन समाजो का अब हम अध्ययन करेंगे।

सुमेरी समाज

जब हम भारतीय समाज की पष्ठभूमि का अध्ययन करते ह तब पहली बात जो हमें मिलती है वह वेदों का धम है। ओलिम्पियाई धम के समान इसकी भी उत्पत्ति बबरों के जनरेला में हुआ था। इसमें धम के कोई एसे लक्षण नहीं मिलते कि सकट काल मे किसी समाज के पतन के काल में उस समाज की जनता द्वारा इसकी उत्पत्ति हुई हो।

इस स्थिति में बबर लोग जो भारतीय इतिहास के आरम्भ में उत्तर पश्चिम भारत में उसी प्रकार आये जिस प्रकार हेलेनी इतिहास में एजीमन सागर में एकियाई लोग आये। जिस प्रकार हेलेनी समाज का सम्बन्ध मिनाई समाज स था उसी प्रकार भारतीय समाज की पष्ठभूमि की यदि हम खोज कर तो हमको इसकी सीमा के पार कोई ऐसा सावभौम राज्य और अस्तव्यस्त प्रदेश मिलना चाहिए जहाँ आर्यों के पूवज विदेशी जनता के समान रहते थे और जब सावभौम राज्य छिन्न भिन्न हो गया तब वे भारत भूमि की ओर चले आये। क्या हम उस सावभौम राज्य और अस्तव्यस्त प्रदेश का पता लगा सकते ह? इस प्रश्न का उत्तर दो और प्रश्न पूछने पर शायद

ऊ जाय। भारत में आय किस ओर से आये। एक ही केन्द्र से चलने पर इनमें से कोई किसी र जगह तो नही पहुँचा।

आय लोग इण्डो-यूरोपियन भाषा बोलते थे। इसकी एक शाखा यूरोप में बाली जाती थी र दूसरी भारत और ईरान में। इन भाषाओ के विस्तार से यह पता चलता है कि आय लोग शियाई स्टेप से भारत में उसी रास्ते से आये होगे जिस रास्ते से बाद में तुर्की आक्रमणकारी ये और जिन रास्ते से ग्यारहवी शतीमें महमूद गजनी और सोल्हवी शती में मुगल साम्राज्य सस्थापक बाबर आये। तुक लोगो में से कुछ तो दक्षिण पूव की ओर भारत में आये और कुछ क्षण पश्चिम की ओर अनातोलिया और सीरिया में गये। महमूद गजनी के ही समय में ल्जुकी तुर्कों ने जो आक्रमण किया उसी के परिणामस्वरुप पश्चिमी समाज ने धार्मिक युद्ध आरम्भ या। प्राचीन मिस्र के अभिलेखो से पता चलता है कि २०००-१५००ई० पू० में यूरेशियाई प से आय लोग उन स्थाना में फैले जिन स्थाना में तीन हजार साल बाद तुक फैले। भारतीय गाणा से पता चल्ता है कि कुछ आय भारत आये और कुछ ईरान, इराक, सीरिया और मिस्र में ले। मिस्र में इहाने ईसा के पूव सातवी शती में शासन स्थापित किया। मिस्र के इतिहास मे बर 'हाइक्सो लडाकुओ के नाम से विख्यात हैं।

आर्यों का रेला क्यो आया? इसका उत्तर इस प्रश्न से हम दे सक्ते है कि तुर्कों का जनरेला यो आया? अतिम प्रश्न का उत्तर ऐतिहासिक अभिलेखो से मिलेगा। अब्बासी खिलाफत T जब विघटन हुआ तब अपने देश में तथा सिन्धु घाटी में इन पर आक्रमण होने लगा और ये ना तरफ फैले। इससे क्या आर्यों के विस्तार का कारण मालूम होता है? हा। जब हम ,०००-१९०० ई० पू० के समय का दक्षिण-पश्चिमी एशिया का राजनीतिक नक्शा देखते हैं व हमें पता चलता है कि बगदाद के खिलाफत के समान यहाँ भी एक सावभौम राज्य था जिसकी ाजधानी ईराक में थी और इसी केन्द्र से दोना ओर के प्रदेशो में (जहाँ पहले खलीफा का राज्य ा) इनका भी शासन होता था।

यह सावभौम राज्य सुमेर और अक्काद का साम्राज्य था जिसे ऊर के सुमेरी ऊर ऐंगूर ने गभग २१४३ या २०७९ ई० पू० में स्थापित किया था। और जिसे लगभग १७५४ या १६९० ई० पू० में अमोरी हम्मूरबी ने पुन स्थापित किया था। हम्मूरबी की मृत्यु के बाद साम्राज्य छिन्न भिन्न हो गया और आर्यों के जनरेला का युग आरम्भ हुआ। ऐसा कोई प्रत्यक्ष प्रमाण ही मिलता कि सुमेर और अक्काद का साम्राज्य भारत तक फला था। किन्तु इसकी सम्भावना ा सकेत इससे मिलता है कि सिन्धु घाटी में जो खुदाई हुई है उसकी सस्कृति (पहले जो खुदाई हुई उसका काल सम्भवत २५०० से १५०० ई० पू० तक का है) का निकट सम्बन्ध ईराक की सुमेरी सभ्यता से है।

क्या हम उस समाज को निर्धारित कर सकते हैं जिसके इतिहास में सुमेर और अक्काद का सावभौम राज्य था? इस साम्राज्य का पूव इतिहास देखने से इस बात का प्रमाण मिलता है कि एक बार सकट काल में अक्कादी लडाकू अगादे का सरगोन विख्यात नेता था। उसके पहले भी विकास और सजन का युग था। पूव में जो इधर खुदाई हुई है उससे यह बात प्रकाश में आयी है। यह युग ईसा के चार हजार वष पहले था या उससे भी पहले था कहा नही जा सकता। जिस समाज का हमने निर्धारण किया है उसे सुमेरी समाज कह सकते हैं।

खत्ती (हिताइत) और बैबिलन के समाज

सुमेरी समाज को जान लेने के पश्चात हम इसके बाद के दो समाजों का निर्धारण करेंगे।

सुमेरी सभ्यता अनातोलिया प्रायद्वीप के पूर्वी भाग में फैली हुई थी। इस प्रदेश का नाम बाद में 'कैपेडोशिया' पडा। पुरातत्त्व वेत्ताओं ने कपेडोशिया में जो मिट्टी के फलक पाये हैं, जिनमें कील वाले अक्षरों में व्यापारिक लेखों के छाप हैं, इस बात के प्रमाण हैं। हम्मूरबी की मृत्यु के बाद जब सुमेरी सार्वदेशिक राज्य नष्ट हो गया तब उत्तर-पश्चिम के बर्बरों ने कपेडोशिया प्रदेश पर अधिकार कर लिया। और १५९५ अथवा १५३१ ई० पू० के लगभग खत्ती के राजा मुरसिल प्रथम ने बैबिलन पर आक्रमण किया और उसको नष्ट कर डाला। लुटेरे लूट का माल लेकर लौट गये और ईरान से दूसरे बर्बर 'कसाइतों' ने ईराक पर अपना राज्य स्थापित किया जो छ सौ साल तक था। खत्ती साम्राज्य (हिताइत) समाज का केन्द्र बन गया। इसका थोडा-बहुत ज्ञान हमें मिस्र के अभिलेखों से मिलता है क्योंकि मिस्र के तोतमीज तृतीय (१४९०–१४३६ ई० पू०) ने जब सीरिया तक अपने राज्य का विस्तार कर लिया उसके बाद के हिताइतों से बराबर युद्ध होता रहा। हिताइत साम्राज्य का विनाश उसी जनरेला द्वारा हुआ जिसने मीटी साम्राज्य का विनाश किया। भविष्यवाणी की प्रथा की सुमेरी प्रणाली को हिताइतों ने भी अपना लिया था परन्तु उनका धर्म अपना अलग था और उनकी लिपि भी चित्र लिपि थी जिसमें कम से कम पाँच हिताइती भाषाएँ लिखी मिलती हैं।

दूसरे समाज का पता जिसका सम्बन्ध सुमेरिया से है सुमेरी समाज के निवास स्थान बबिलन में मिलता है। इसका वर्णन पन्द्रहवीं शती ई० पू० के मिस्र के अभिलेखों में मिलता है। यहाँ बारहवीं शती ई० पू० तक कसाइतों का शासन चलता रहा है। इस युग में बबिलोनिया का नाम असीरिया और एलाम हो गया था। सुमेरी प्रदेश में जो पीछे वाला समाज बना उसका पूर्व-सुमेरी समाज से इतना घनिष्ठ सम्बन्ध था कि यह नहीं समझ में आता कि उसे नया समाज कहा जाय अथवा सुमेरी समाज का उपसंहार कहा जाय। संदेह लाभ निवारण करने के लिए हम उसे बैबिलनी समाज कहेंगे। उसके अन्तिम काल में, अर्थात् सातवीं शती ई० पू० में अपने ही प्रदेश में सौ वर्ष तक उसे घनघोर युद्ध करना पडा। यह युद्ध असीरिया के लडाकुओं और बबिलोनी निवासियों में होता रहा। असीरिया के विनाश के बाद सत्तर वर्षों तक बबिलोनी समाज जीवित रहा और अन्त में खुसरो (साइरस) के एकेमीनी समाज का सार्वभौम राज्य उसे निगल गया। इन सत्तर वर्षों में नबुकद्नजार का राज्य था और यहूदियों पर इस युग में बहुत सन्ताप था। जिन्होंने खुसरो को ईश्वर प्रेरित त्राता समझा था।

मिस्री समाज

इस विख्यात समाज का प्रादुर्भाव चार हजार वर्ष ई० पू० हुआ। और ईसा के बाद पाँचवीं शती में इसकी समाप्ति हुई। हमारा पश्चिमी समाज आज तक जितने बाद तक जीवित है उसके तिगुने बाद तक यह समाज रहा। इसके न तो पूर्वज थे, न उत्तराधिकारी। आज का कोई समाज भी इस भाँति पूर्वज रहित का दावा नहीं कर सकता। इसकी एक और भी विजय है कि पत्थरों में इसने अपने को अमर बनाया है। इसकी पूर्ण सम्भावना है कि पिरामिड जो पाँच हजार वर्षों तक अपने निर्माताओं के जीवन को प्रमाणित करते रहे हैं वे अभी लाखों वर्षों तक मौजूद

रहेंगे। यह असम्भव नही है कि ये उस समय भी रहें जब पृथ्वी पर उनका सदेश पढने वाला कोई मनुष्य न रह जाय और तब भी वे यह कहते रहें 'इब्राहीम' (अब्राहम) के पहले से म भी हूँ।

ये जो पिरामिड के रूप में बडी-बडी कब्रें हैं इनसे कई रूपा में मिस्री समाज के इतिहास का पता लगता है। हमने ऊपर कहा है कि यह समाज लगभग चार हजार वर्षों तक बना रहा। किन्तु इसके आधे काल तक मिस्री समाज का अस्तित्व तो था, परन्तु उसी प्रकार जैसे कोई जन्तु मर गया हो, कितु दफन न किया गया हो। मिस्री इतिहास का आधे से अधिक भाग किसी घटना के महान् उपसहार के समान है।

यदि हम इस इतिहास पर ध्यान दें तो इसका चौथाई भाग विकास का काल था। इस काल में अपने वातावरण की भौतिक कठिनाइयो पर मिस्री लोगो ने विजय प्राप्त की। नील नदी के डेल्टा और उसकी निचली घाटी के निजन स्थाना को उन्होंने साफ किया, उसका पानी निकाला और वहाँ खेती आरम्भ की। और तब तथाकथित पूव डाइनास्टिक युग के अत मे मिस्री ससार में अभूतपूव एकता स्थापित की और जिसने चौथी पीढी में महान् भौतिक कार्यों को सम्पन्न किया। इस पीढी में मिस्री समाज अपने कार्यों की कुशलता में उच्चतम शिखर पर पहुँचा। इसी समय बडे-बडे इजीनियरी के काय सम्पन्न हुए, जैसे दलदलो को कृषि योग्य बनाया गया और पिरामिडा का निर्माण हुआ। राजनीतिक शासन और कला का भी उच्चतम विकास हुआ। इसी युग में ऐसे घम का भी, जो सामान्यत कष्ट और दुख के समय प्रकट होता है प्रादुर्भाव हुआ। इसकी पहली मजिल वह थी जब दो धार्मिक आदोलनो में सघष हुआ अर्थात् सूय और 'ओसाइरिस' का सघष। और यह पूणता पर उस समय पहुँचा जब मिस्री समाज का ह्रास हुआ।

उत्कष का काल समाप्त हो गया और पाचवी पीढी तक लगभग २,५० ई० पू० में पतन आरम्भ हो गया। और इस समय हम पतन के वही चिह्न देखने लगते है जो हमें दूसरे समाजा के इतिहास में मिलते हैं। मिस्री साम्राज्य टूट कर छोटे छोटे राज्या में विभक्त हो गया और हमें सकट काल स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। सकट काल के बाद २०५२ ई० पू० के लगभग एक सावभौम राज्य स्थापित हुआ जिसकी नीव थीब्रीज के एक स्थानीय वश ने डाली और बारहवी पीढी अर्थात् १९५१–१७८८ ई० पू० के लगभग उसे मजबूत किया। बारहवी पीढी के बाद यह सावभौम राज्य विघटित होने लगा और इसी समय हाइक्सो लोगो का जनरेला आरम्भ हुआ।

इस जगह शायद हम समझें कि इस समाज का अत है। यदि हम अपनी खोज की साधारण प्रणाली को अपनायें और ईसा की पाँचवी शती से पीछे की ओर देखें तो हम इस स्थान पर कहेंगे कि हमने मिस्री इतिहास के भूतकाल का अध्ययन कर लिया और इक्कीस शतिया के बाद ईसा की पाँचवी शती मे उस इतिहास का अत देख लिया और यह भी देखा कि एक सावभौम राज्य के बाद जनरेला आरम्भ हुआ। मिस्री समाज के उदगम तक हमने देखा और हमें पता चला कि मिस्री समाज के आरम्भ के पूव एक और समाज का अन्त है जिसे हम 'नाइलोटिक समाज कहेंगे।

किन्तु हम इस ढग को नही अपनायेंगे। क्योंकि यदि हम आगे की खोज करें तो हमें नया समाज नही मिलेगा, बल्कि कुछ भिन्न परिस्थिति मिलेगी। बबर उत्तराधिकारी राज्य पराजित

हो जाता है, हाइक्सो लोग देश से निकाल दिये जाते हैं और निश्चित तथा आयोजित ढंग से सार्वभौम राज्य की फिर से स्थापना होती है जिसकी राजधानी थीबीज बनती है।

हमारी दृष्टि से ई० पू० छठी शती से पाँचवीं शती ई० तक के बीच (इखनातन की विफल क्रान्ति को छोड़ कर) थीबीज के राज्य का पुनःस्थापन ही एक महत्त्वपूर्ण घटना थी। यह सार्वभौम राज्य दो हजार वर्षों तक था। इस बीच कभी वह ध्वंस होता कभी पुनरुज्जीवित होता था। परन्तु कोई नया समाज नहीं बना। अगर हम मिस्री समाज के धार्मिक इतिहास का अध्ययन करें तो संकट काल के बाद जो धर्म प्रचलित था वह पतन काल पहले के सबल अल्पसंख्यकों से लिया गया था। किन्तु यह धर्म बिना संघर्ष के प्रचलित नहीं हुआ। इसे उस सार्वभौम धर्म से समझौता करना पड़ा जो मिस्र की देशी जनता ने ओसाइरिस वाले धर्म से उस समय स्थापित किया था जो पतन के पहले का युग था।

ओसाइरिस का धर्म नील के डेल्टा में उत्पन्न हुआ। यह दक्षिणी मिस्र से नहीं आया जहाँ मिस्री समाज का निर्माण हुआ था। मिस्र का धार्मिक इतिहास दो देवताओं के द्वन्द्व का परिणाम है। एक पृथ्वी और पृथ्वी का पाताल का देवता जिसमें यह भाव निहित है कि वनस्पति जगत् भूमि के ऊपर प्रकट होता है और फिर पृथ्वी के नीचे लय हो जाता है और दूसरा आकाश का देवता सूर्य। यह धार्मिक भावना समाज के दो अंगों के राजनीतिक और सामाजिक संघर्षों की अभिव्यक्ति है। इन्हीं दोनों समाजों में अलग-अलग एक देवता की पूजा आरम्भ हुई। सूर्य देवता री था। इसका नियंत्रण हीलियोपोलिस के पुजारी करते थे। फेरो री का प्रतिमूर्ति था। ओसाइरिस सार्वजनिक देवता था। यह संघर्ष राज्य द्वारा स्थापित धर्म में और सार्वजनिक धर्म में था, जिसमें व्यक्तिगत विचारों की स्वतन्त्रता थी।

दोनों धर्मों के मूल रूप में मुख्य अन्तर यह था कि मृत्यु के बाद किस धर्म के मानने वाले को क्या लाभ होता है। ओसाइरिस का शासन पाताल के अन्धकारमय संसार में लाखों—करोड़ों मुर्दों पर था। री कुछ पूजा के बदले मृत्यु के पश्चात् अपने भक्तों को जीवित करके ऊपर स्वर्ग में पहुँचाता था। किन्तु यह स्वर्गीकरण उन्हीं लोगों के लिए सुरक्षित था जो अच्छी भेंट चढ़ा सकते थे। इस पूजा का मूल्य बराबर बढ़ता गया यहाँ तक कि यह अमरता फेरो और उसके उन दरबारियों का एकाधिकार हो गया जो अपनी अमरता के लिए अधिक से अधिक मांस-मज्जा प्रदान कर सकते थे। महान् पिरामिड की विशालता में इसी अमरता के प्रयत्न की मुरदा की गया है।

किन्तु ओसाइरिस का धर्म बढ़ता गया। इसके द्वारा जो अमरता मिलती थी वह स्वर्ग में रा की पूजा से प्राप्त मिलता था उसकी तुलना में बहुत हेय था किन्तु जीवन में जो कठोर यातना मिलती थी उसके कारण यही सन्तोष उनके लिए पर्याप्त था। मिस्री समाज इस समय दो टुकड़ों में विभाजित हो गया था। एक अधिकार प्राप्त अल्पसंख्यक और दूसरा आन्तरिक सर्वहारा। इस खतरे का सामना करने के लिए ही हेलियोपोलिस के पुजारियों ने ओसाइरिस की शक्ति समाप्त करने के लिए ओसाइरिस को अपना लिया किन्तु इस काम से ओसाइरिस की शक्ति पहले से बढ़ गई। जब ओसाइरिस का सम्बन्ध फेरो के सूर्य वाले धर्म से हो गया तब ओसाइरिस का प्रभाव ऐसा हो गया कि सूर्य की पूजा सभी मनुष्यों के लिए हो गयी। इस

र्मिक सयोजन की स्मृति 'मानव की अमरता का पथ प्रदर्शक'[1] नाम की पुस्तक में है। मिस्री समाज के अन्तिम दो हजार वर्षों में इसी पुस्तक का प्रभाव वहा के धार्मिक जीवन में था। यह भावना प्रबल रही कि री पिरामिड के बजाय भव्य आचरण चाहता है और ओसाइरिस पाताल का न्यायाधीश बनकर बैठा जो मनुष्य के धरती पर किये गये कर्मों के अनुसार उसे पुरस्कार या दण्ड देता था।

यहाँ मिस्री सार्वभौम राज्य में हमको ऐसे सार्वभौम धर्म का आभास मिलता है जिसका आन्तरिक सर्वहारा ने निर्माण किया था। यदि मिस्री सार्वभौम राज्य का पुनरुज्जीवन न हुआ होता तब ओसाइरी धर्म का भविष्य क्या होता? क्या वह नये समाज का जन्मदाता होता? हम शायद यह आशा करते कि वह हाइक्सो लोगों को पराजित करता जिस प्रकार ईसाई धर्म ने बर्बरों को पराजित किया। किन्तु ऐसा नहीं हुआ। हाइक्सो लोगों के प्रति जो घृणा थी उसके कारण ओसाइरी धर्म और प्रबल अल्पसंख्यकों के धर्म के अस्वाभाविक मिलाप के कारण ओसाइरी धर्म विकृत और पतित हो गया। अमरता फिर बिकने लगी, किन्तु इस बार इसका मूल्य पिरामिड नहीं था, बल्कि पेपाइरस के पुलिन्दों पर कुछ लेख थे। हम कल्पना कर सकते हैं कि इस सस्ती वस्तु के बड़े पैमाने पर उत्पादन के कारण उत्पादक को मुनाफा बहुत होता होगा। इस प्रकार सोलहवीं शती ई० पू० में मिस्री सार्वभौम राज्य केवल पुनरुज्जीवित ही नहीं हुआ, पुन स्थापित भी हुआ। यह जीवित ओसाइरी धर्म और मृतप्राय मिस्री समाज का एक सकरण था। मानो एक सामाजिक कान्क्रीट था जिसे नष्ट होने में दो हजार वर्ष लगे।

मिस्री समाज के मृत होने का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि एक बार उसे जगाने की चेष्टा की गयी, किन्तु सफलता नहीं मिली। इस बार फेरो इखनातन ने नया धर्म स्थापित करने की चेष्टा की जिस प्रकार शतियों पहले आन्तरिक सर्वहारा वाले ओसाइरी धर्म ने विफल प्रयत्न किया था। इखनातन ने ईश्वर और मनुष्य, जीवन और प्रकृति के सम्बन्ध में नयी कल्पना उपस्थित की और इसे नयी कला और कविता द्वारा व्यक्त किया। किन्तु मरा समाज इस प्रकार जीवित नहीं हो सकता। उसकी असफलता इस बात का प्रमाण है कि सोलहवीं शती ई० पू० के बाद से मिस्री इतिहास की सामाजिक परिस्थितियों का जो वर्णन किया गया है वह ठीक है अर्थात् उस समय के मिस्री समाज का इतिहास किसी नये समाज के इतिहास का आरम्भ से अन्त नहीं है, बल्कि उपसंहार है।

ऐण्डी, यूकारी, मैक्सिको तथा मायासमाज

स्पेनियों के आने के पहले ये चार समाज अमरीका में थे। ऐण्डी समाज सार्वभौम राज्य की स्थिति को पहुँच चुका था और 'इनका' साम्राज्य बन चुका था जिसे १५३० ई० में पिजारो ने ध्वंस किया। मैक्सिको समाज में भी एजटेक साम्राज्य बन चुका था और उसकी भी गति वही हो रही थी जो इनका की थी। जिस समय कार्टेज का अभियान हुआ उस समय 'टल्वसकाला' ही ऐसा स्वतन्त्र राज्य था जिसका कुछ महत्त्व था। परिणामस्वरूप टल्वसकाला वालों ने कार्टेज की सहायता की। युकैटन के यूकैटी समाज को चार सौ साल पहले मैक्सिकी समाज ने अपने

[1] ऐन एवरी मैन्स गाइड टु इम्मारटलिटी।

हो जाता है, हाइक्सो लोग देश से निकाल दिये जाते हैं और निश्चित तथा आयोजित ढग से सावभौम राज्य की फिर से स्थापना होती है जिसकी राजधानी थीबीज बनती है।

हमारी दृष्टि से ई० पू० छठी शती से पाँचवा शती ई० तक के बीच (इखनातन की विफल क्रान्ति को छोड कर) थीबीज के राज्य का पुन स्थापन ही एक महत्त्वपूण घटना थी। यह सावभौम राज्य दो हजार वर्षों तक था। इस बीच कभी वह ध्वस होता, कभी पुनरुज्जीवित होता था। परन्तु कोई नया समाज नही बना। अगर हम मिस्री समाज के धार्मिक इतिहास का अध्ययन करे तो सकट काल के बाद जो धम प्रचलित था वह पतन काल पहले के सबल अल्पसख्यको से लिया गया था। किन्तु यह धम बिना सघष के प्रचलित नही हुआ। इसे उस सावभौम धम से समझौता करना पडा जो मिस्र की देशी जनता ने ओसाइरिस वाले धम से उस समय स्थापित किया था जो पतन के पहले का युग था।

ओसाइरिस का धम नील के डेल्टा म उत्पन्न हुआ। यह दक्षिणी मिस्र से नही आया जहाँ मिस्री समाज का निर्माण हुआ था। मिस्र का धार्मिक इतिहास दो देवताओ के द्वन्द्व का परिणाम है। एक पृथ्वी और पृथ्वी का पाताल का देवता जिसमें यह भाव निहित है कि वनस्पति जगत् भूमि के ऊपर प्रकट होता है और फिर पृथ्वी के नीचे लय हो जाता है और दूसरा आकाश का देवता सूय। यह धार्मिक भावना समाज के दो अगो के राजनीतिक और सामाजिक सघर्षों की अभिव्यक्ति है। इन्ही दोना समाजो में अलग-अलग एक देवता की पूजा आरम्भ हुई। सूय देवता 'री' था। इसका नियत्रण हीलियोपोलिस के पुजारी करते थे। फैरो री का प्रतिमूर्ति था। ओसाइरिस सावजनिक देवता था। यह सघष राज्य द्वारा स्थापित धम में और सावजनिक धम में था जिसमें व्यक्तिगत विचारा की स्वतन्त्रता थी।

दोना धर्मों के मूल रूप में मुख्य अन्तर यह था कि मृत्यु के बाद किस धम के मानने वाले को क्या लाभ होना है। ओसाइरिस का शासन पाताल के अधकारमय ससार में लाखो—करोडा मुर्दों पर था। री कुछ पूजा के बदले मृत्यु के पश्चात् अपने भक्तो को जीवित करके ऊपर स्वग में पहुँचाना था। किन्तु यह स्वर्गीकरण उन्हा लोगा के लिए सुरक्षित था जो अच्छी भेंट चढा सकते थे। इस पूजा का मूल्य बराबर बढता गया, यहाँ तक कि यह अमरता फैरो और उसके उन दरबारिया का एकाधिपत्य हो गयी जो अपनी अमरता के लिए अधिक से अधिक साज-सज्जा प्रदान कर सकते थे। महान् पिरामिड की विशालता में इसी अमरता के प्रयत्न की सुरक्षा की गयी है।

किन्तु ओसाइरिस का धम बढता गया। इसके द्वारा जो अमरता मिलती थी वह स्वग में या री की पूजा म स्थान मिलता था उसकी तुलना में बहुत हेय थी, किन्तु जीवन में जो कठोर यातना मिलती थी उसके कारण यही सन्ताप उनके लिए पर्याप्त था। मिस्री समाज इस समय दो टुकडा में विभाजित हो गया था। एक अधिकार प्राप्त अल्प सख्यक और दूसरा आन्तरिक जनता। इस खतरे का सामना करने के लिए ही हीलियोपोलिस के पुजारिया ने ओसाइरिस की शक्ति समाप्त करने के लिए ओसाइरिस को अपना लिया किन्तु इस काय से ओसाइरिस की शक्ति घटने के बजाय बढ गयी। जब ओसाइरिस का सम्बन्ध फैरो के सूय वाले धम से हो गया तब ओसाइरिस का प्रभाव ऐसा हो गया कि सूय की पूजा सभी मनुष्यो के लिए हो गयी। इस

धार्मिक सयोजन की स्मृति 'मानव की अमरता का पथ प्रदर्शक'[1] नाम की पुस्तक में है। मिस्री समाज के अन्तिम दो हजार वर्षों में इसी पुस्तक का प्रभाव वहाँ के धार्मिक जीवन में था। यह भावना प्रबल रही कि री पिरामिड के बजाय सत्य आचरण चाहता है और ओसाइरिस पाताल का न्यायाधीश बनकर बैठा जो मनुष्य के मरती पर किये गये कर्मों के अनुसार उसे पुरस्कार या दण्ड देता था।

यहाँ मिस्री सावभौम राज्य में हमको ऐसे सावभौम धम का आभास मिलता है जिसका आन्तरिक सर्वहारा ने निर्माण किया था। यदि मिस्री सावभौम राज्य का पुनरुज्जीवन न हुआ होता तब ओसाइरी धम का भविष्य क्या होता? क्या वह नये समाज का जन्मदाता होता? हम शायद यह आशा करते कि वह हाइक्सो लोगो को पराजित करता जिस प्रकार ईसाई धम ने बबरो को पराजित किया। किन्तु ऐसा नही हुआ। हाइक्सो लोगो के प्रति जो घृणा थी उसके कारण ओसाइरी धम और प्रबल अल्प सख्यका के धम के अस्वाभाविक मिलाप के कारण ओसाइरी धम विकृत और पतित हो गया। अमरता फिर बिकने लगी, किन्तु इस बार इसका मूल्य पिरामिड नही था, बल्कि पेपाइरस के पुलिन्दो पर कुछ लेख थे। हम कल्पना कर सकते हैं कि इस सस्ती वस्तु के बड पमाने पर उत्पादन के कारण उत्पादक को मुनाफा बहुत होता होगा। इस प्रकार सोलहवी शती ई० पू० में मिस्री सावभौम राज्य केवल पुनरुज्जीवित ही नही हुआ, पुन स्थापित भी हुआ। यह जीवित ओसाइरी धर्म और मतप्राय मिस्री समाज का एक सकरण था। मानो एक सामाजिक कान्क्रीट था जिसे नष्ट होने में दो हजार वर्ष लगे।

मिस्री समाज के मृत होने का सबसे बडा प्रमाण यह है कि एक बार उसे जगाने की चेष्टा की गयी, किन्तु सफलता नही मिली। इस बार फेरो इखनातन ने नया धम स्थापित करने की चेष्टा की जिस प्रकार शतिया पहले आन्तरिक सर्वहारा वाले ओसाइरी धम ने विफल प्रयत्न किया था। इखनातन ने ईश्वर और मनुष्य, जीवन और प्रकृति के सम्बन्ध में नयी कल्पना उपस्थित की और इसे नयी कला और कविता द्वारा व्यक्त किया। किन्तु मरा समाज इस प्रकार जीवित नहीं हो सकता। उसकी असफलता इस बात का प्रमाण है कि सोलहवी शती ई० पू० के बाद से मिस्री इतिहास की सामाजिक परिस्थितियो का जो वणन किया गया है वह ठीक है क्योंकि उस समय के मिस्री समाज का इतिहास किसी नये समाज के इतिहास का आरम्भ या अन्त नहीं है, वल्कि उपसहार है।

ऐण्डी, यूकारी, मेक्सिकी तथा मायासमाज

स्पेनियो के आने के पहले ये चार समाज अमरीका में थे। ऐण्डी समाज सावभौम राज्य की स्थिति को पहुँच चुका था और 'इनका साम्राज्य बन चुका था जिसे १५३० ई० में पिज़ारो ने ध्वस किया। मैक्सिकी समाज में भी एजटेक साम्राज्य बन चुका था और उसकी स्थापना हो रही थी जो इनका की थी। जिस समय कार्टेज का अभियान हुआ उस समय [illegible] ही ऐसा स्वतन्त्र राज्य था जिसका कुछ महत्त्व था। परिणामस्वरूप टलैक्सकाला [illegible] की सहायता की। यूकेटन के यूकेटी समाज को चार सौ साल पहले मैक्सिकी [illegible]

१ ऐन एवरी मस गाइड टु इम्मोरटलिटी।

में मिला लिया था। मैक्सिकी तथा यूकेटी समाज दोनों एक पहले के समाज के वंशज थे जिसका नाम माया समाज था। इनकी सभ्यता अपने दोनों वंशजों से बहुत ऊँची थी। सातवीं ई० में बहुत शीघ्र और रहस्यपूर्ण ढंग से इसका अंत हो गया। अब उसके चिह्न यूकेटा के जंगलों में खण्डहरों के रूप में मिलते हैं। माया समाज ज्योतिष और गणित की गणनाओं में बहुत कुशल था। कारटेज मक्सिको में जो भयंकर धार्मिक कृतियों की खोज की गयी वह माया समाज के धर्म का बर्बर रूप था।

हमारी खोज ने उन समाजों का पता लगा लिया जो किसी के पितामह थे अथवा किसी के वंशज थे। इनकी नामावली इस प्रकार है —पश्चिमी परम्परावादी ईसाई धर्म वाले, ईरानी, अरबी (यह अंतिम दोनों मिल कर अब इस्लामी समाज बन गये), हिन्दू सुदूरपूर्वी, हेलेनी, सीरियाई, भारती, चीनी, मिनोई सिन्धु घाटी वाले सुमेरी, हिताइती, बैबिलोनी, मिस्री, ऐंडी, मक्सिकी, यूकेटी तथा माया। हमने इस बात पर सन्देह प्रकट किया है कि बबिलोनी और सुमेरी समाज अलग-अलग थे। सम्भव है कि मिस्री समाज के समान और भी दो-दो समाज किसी एक समाज के उपसहार रहे हों। किन्तु हम उन्हें अलग-अलग समाज ही मानेंगे जब तक कोई अच्छा प्रमाण उनको अलग न मानने के लिए न मिल जाय। शायद यह ठीक हो कि परम्परावादी ईसाई समाज के दो भाग हों अर्थात् एक परम्परावादी बैजन्तिया समाज और दूसरा परम्परावादी रूसी समाज। और इसी प्रकार सुदूर पूर्वी को एक चीनी समाज दूसरा कोरिया—जापानी समाज। इस प्रकार इनकी संख्या बाईस हो जाती है। यह पुस्तक लिखने के बाद एक तीसरे समाज का पता चला है जो हाग हो की घाटी में चीनी सभ्यता के पहले था जिसे शाग सभ्यता कहते हैं। इस सम्बन्ध में और विवेचन अगले अध्याय में किया जायेगा।

३ समाज की तुलना

(१) सभ्यताएँ और आदिम समाज

इसके पहले कि हम इक्कीसा समाजा की विधिवत् तुलना कर, जो इस पुस्तक का अभिप्राय है, हम कुछ आपत्तिया का उत्तर देना चाहते हैं, जो उठायी जा सकती ह। जिस पद्धति का अनुसरण हम करने जा रहे ह उसके विरुद्ध पहला तक यह हो सकता है —'इन समाजो में इसके अतिरिक्त कोई सामाजिक गुण नही है कि वह 'अध्ययन के बौद्धिक क्षेत्र' ह। कि तु यह गुण इतना अस्पष्ट और साधारण है कि अध्ययन में उससे कोई व्यावहारिक सहायता नही मिल सकती।'

इसका उत्तर यह है कि जो समाज 'अध्ययन के बौद्धिक क्षेत्र' हैं वे वश (जीनस) ह, और इसके अ दर हमारे इक्कीस प्रतिनिधि विशेष जातियाँ (स्पीसीज) ह। इन जातियो के समाज को ही साधारणत सभ्य समाज कहते ह। इनसे भिन्न आदिम समाज भी है। ये भी 'अध्ययन के बौद्धिक क्षेत्र' हैं। और इसी वश के अ दर दूसरी जातियाँ हैं। हमारे इक्कीस समाजा में, इसलिए, एक विशेष गुण सबमें पाया जाता है कि वे ही सभ्यता की राह पर ह।

दोना जातिया में एक और अन्तर अपने-आप स्पष्ट हा जाता है। जिन आदिम समाजो का हमें ज्ञा है उनकी सख्या बहुत अधिक है। सन् १९१५ ई० में पश्चिम के तीन नृतत्व शास्त्रिया (एथ्रोपोलोजिस्ट) ने आदिम समाजो का तुलनात्मक अध्ययन किया। जो कुछ सूचनाएँ प्राप्त थी, केवल उन्ही को उन्हाने अपना आधार माना। और ६५० ऐसे समाज उन्हें मिले जो जीवित है। इस बात की कल्पना नही हो सकती कि जबसे मनुष्य मानव हुआ, शायद आज ३००,००० वप बीते हागे, तब से आज तक कितने आदिम समाज ज मे होगे और मर गये होगे। कि तु इतना स्पष्ट है कि *उनकी सख्या हमारे सभ्य समाजा से कही अधिक है।*

जहाँ तक व्यक्तिगत विस्तार का सम्ब ध है सभ्य समाजा का बाहुल्य आदिम समाजो से अधिक है। आदिम समाज असख्य है किन्तु तुलनात्मक दृष्टि से उनका जीवन काल थोडा है। और सभ्य समाजो की तुलना में उनके क्षेत्र की सीमा भी कम है और सभ्य समाजा की तुलना में उनमें लोगो की सख्या भी कम है। यदि आज जो पाँच सभ्य समाज जीवित हैं उनकी जन गणना की जाय ता जितनी थोडी शतियो में ये जीवित चले आ रहे ह, उनकी एक एक की सख्या उन सब आदिम समाजा की सख्या, जो मानव जाति के आरम्भ से आज तक चले आ रहे ह, सभ्य समाजो की सख्या से अधिक होगी। कि तु हम व्यक्तिया का नही, समाजा का अध्ययन कर रहे ह। हमारे लिए महत्त्व की बात यह है कि सभ्यता के क्रम में जो समाजो का विकास हुआ उनकी सख्या तुलनात्मक दृष्टि से कम है।

(२) 'सभ्यता की अ विति का भ्रम'

इक्कीस समाजा की तुलना करने के विरोध में जो दूसरा तक है वह पहले का विरोधी है।

वह यह है कि ये इक्कीस भिन्न प्रतिनिधि समाज की जातियां के नहीं हैं, बल्कि केवल एक ही सभ्यता है—वह हमारी है।

समाजों की सभ्यता एक है (यूनिटी) यह भ्रम है। पश्चिम के इतिहासकारों ने अपने वातावरण के प्रभाव के कारण यह दावा किया है। इस भ्रम का कारण यह है कि वर्तमान युग में पश्चिमी सभ्यता ने अपनी आर्थिक प्रणाली का जाल विश्व भर में फैला रखा है। यह आर्थिक एकता पश्चिम के आधार पर है। इसी के परिणामस्वरूप राजनीतिक एकता भी उतनी ही हो गयी है। क्योंकि पश्चिम की सेनाओं ने तथा सरकारों ने उतनी विस्तृत और उतनी पूर्ण विजय नहीं प्राप्त की जितनी पश्चिम के कारखाने वालों और शिल्पियों ने (टेक्नीशियन)। फिर भी यह तथ्य है कि आज के युग के संसार के सारे राज्य एक ही राज्य प्रणाली के अंग हैं जिसका आरम्भ पश्चिम में हुआ है।

ये तथ्य जोरदार हैं, किन्तु इन्हें सभ्यता की एकता का प्रमाण मान लेना केवल मक्कीपन होगा। विश्व के राज्यों का आर्थिक और राजनीतिक नक्शा पश्चिमीय हो गया है परन्तु उनका सांस्कृतिक नकशा वही है जो आर्थिक और राजनीतिक विजय के पहले था। जिन लोगों को आँखें हैं वे देख सकते हैं कि सांस्कृतिक धरातल पर चारों जीवित अ-पश्चिमीय (नान-वेस्टर्न) सभ्यताएँ स्पष्ट हैं। किन्तु बहुत लोगों के पास ऐसी आँखें नहीं हैं और उनकी दृष्टि का उदाहरण अंग्रेजी शब्द नेटिव (देसी) अथवा इसी प्रकार के पश्चिम की भाषाओं में और शब्द है।

जब हम पश्चिमी लोग नेटिव' शब्द का प्रयोग करते तब हम लोग उनकी संस्कृति का ध्यान नहीं करते। हम लोग जिस देश में जाते हैं वहां उन्हें जंगली जानवरों की भाँति समझते हैं जो उस देश में फैले हुए हैं। जिस प्रकार हम वहाँ के पशु-पक्षी और पेड़-पौधों को देखते हैं वैसे ही उन्हें भी समझते हैं। यह नहीं समझते कि हमारी ही तरह उनमें भी आवेग (पैशन्स) होते हैं। जब तक हम उन्हें नेटिव समझते हैं हम उनका विनाश कर सकते हैं या उन्हें सभ्य बना सकते हैं या शायद ईमानदारी से उनके वंश की उन्नति कर सकते हैं। (शायद इसमें सचाई भी हो)। किन्तु उन्हें समझने की चेष्टा नहीं करते।

विश्व भर में पश्चिमी सभ्यता की भौतिक विजय के भ्रम के अतिरिक्त इतिहास की एकता' की यह मिथ्या धारणा है कि सभ्यता की एक ही सरिता है जो हमारी है और शेष सब या तो उसकी सहायक है या मरुभूमि में खो गयी हैं। इस भ्रान्ति के तीन कारण हैं। एक अहंवादी (एगोसेण्ट्रिक) भ्रम, दूसरा यह भ्रम कि पूर्व के देश अ-परिवर्तनशील हैं, और तीसरा यह भ्रम कि उन्नति की गति सीधी रेखा में होती है।

अहंवादी भ्रम स्वाभाविक होता है और इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि हम पश्चिम वाले ही इसके शिकार नहीं हैं। यहूदियों को यही भ्रम नहीं रहा कि हम विशेष लोक-समुदाय, (पीपुल) हैं बल्कि हमीं विशेष लोक समुदाय हैं। जैसे हम नेटिव शब्द का प्रयोग करते हैं उसी प्रकार वह जेण्टाइल' (गैर यहूदी, नास्तिक) का प्रयोग करते थे। अहंवादी सनक का सबसे अच्छा उदाहरण वह पत्र है जो चीन के दार्शनिक सम्राट चिएन लुंग ने सन् १७९३ ई० में अंग्रेजी राजदूत को अपने मालिक सम्राट तृतीय जार्ज को देने के लिए दिया था।

ए सम्राट! आप अनेक सागरों के पार रहते हैं। फिर भी अपनी विनीत इच्छा से प्रेरित होकर कि हमारी सभ्यता से आप लाभ उठाने के लिए आपने एक शिष्ट-मण्डल भेजा है जो आपका

आदरयुक्त स्मृति-पत्र (मेमोरियल) लाया है। मने आपका स्मृति पत्र पढा। जिस उत्साहपूर्ण भापा में यह लिखा गया है उससे आपकी सम्मानपूण विनम्रता प्रकट होती है जो बहुत प्रशसा जनक है।

"आपकी यह प्रायना कि आपके राष्ट्र का एक प्रतिनिधि मेरे स्वग समान दरबार में रहे और चीन तथा आपके देश के बीच के व्यापार का नियन्त्रण करे, नहा स्वीकार हो सकती क्योंकि यह मेरे वश की परम्परा के विरुद्ध है। यदि आपका आग्रह है कि हमारे दिव्य वश के प्रति आपका सम्मान हो और आप हमारी सभ्यता को ग्रहण करना चाहते है तो हमारे रीति रिवाज और हमारे कानून और नियम आपके रीति रिवाज और कानून से इतने भिन्न हैं कि यदि आपके प्रतिनिधि उसका प्रारम्भिक ज्ञान भी प्राप्त कर लें तो हमारे आचार-व्यवहार, रस्मो रिवाज आपकी उस विदेशी धरती पर पनप नही सकते। इसलिए आपका प्रतिनिधि कितना भी पटु हो जाय कोई लाभ नही हो सकता।

"इस विशाल ससार पर शासन करते हुए मेरा एक ही लक्ष है कि मेरा शासन कुशल हो और म राज्य के कार्यों का ठीक निर्वाह कर सकूँ। विचित्र और मूल्यवान् वस्तुओ के प्रति मुझे आकपण नही है। आपने जो उपहार नजर के रूप में भेजे ह उन्हें स्वीकार करने का आना, ए राजा, मने इसलिए दे दी कि आपने जिस भावना से उन्हें इतनी दूर भेजा है उसका मने आदर किया। हमारे वश के महान् गुण आकाश के नीचे प्रत्येक देश में समाविष्ट हो गये है और सभी राष्ट्रो के राजाओ ने जल और थल के मार्गों से अपनी बहुमूल्य भेंटे मेरे पास भेजी ह। आपके प्रतिनिधि देख सकते ह कि हमारे पास सब कुछ है। विचित्र तथा विलक्षण वस्तुओ का मेरे सामने कोई मूल्य नही है। आपके देश की बनी वस्तुओ की यहाँ कोई आवश्यकता नही है।'[1]

इस पत्र के भेजने के बाद की ही शती में चिएन लग के देशवासियो की अनेक पराजय हुई। कहा भी गया है कि घमण्ड का यही परिणाम होता है।

'अपरिवतनशील पूव इतना प्रचलित भ्रम है और गम्भीर अध्ययन के लिए इतना निराधार है कि उसका कारण ढूँढने में कोई महत्त्व या रुचि नही हो सकती। सम्भवत इसका कारण यह है कि इस सन्दभ में 'पूरब से अभिप्राय कोई भी स्थान मिस्र से चीन तक हो सकता है। किसी समय यह पश्चिम से कही आगे था और अब बहुत पीछे रह गया है। अतएव जब हम लोग गतिशील थे यह निश्चल रहा होगा। विशेषत हमें याद रखना चाहिए कि साधारण पश्चिम वालो का 'पूरब' के प्राचीन इतिहास की जानकारी पुराने बाइबिल (ओल्ड टेस्टामेण्ट) की कथाओ से ही प्राप्त हुई है। पश्चिम के यात्रियो ने आज जब आश्चय और आनन्द से यह देखा कि अरब के रेगिस्तान की सीमा पर ट्रासजार्डीनिया में आज भी लोगो का जीवन वैसा ही है जसा उत्पत्ति की पुस्तक (बुक आव जनेसिस) में सरदारो (पेट्रिआक) के बारे में लिखा है तब पूरब की अप्रगतिशीलता प्रमाणित हो गयी। किन्तु इन यात्रियो ने 'अपरिवतनशील पूरब को नही देखा अपरिवतनशील अरब के स्टेप को देखा। स्टेप पर भौतिक वातावरण मनुष्यो के लिए उतना कठोर है कि उसके अनुकूल बना लेने की सीमा बहुत सकुचित है। सभी

१ ए० फ० ह्वाइट चाइना एण्ड फारेन पावस, पृ० ४१।

वह यह है कि ये इक्कीस भिन्न प्रतिनिधि समाज की जातियों में नहीं हैं, बल्कि केवल एक ही सभ्यता है—वह हमारी है।

समाजों की सभ्यता एक है (यूनिटी) यह भ्रम है। पश्चिम में इतिहासकारों ने अपने वातावरण के प्रभाव के कारण यह दावा किया है। इस भ्रम का कारण यह है कि वर्तमान युग में पश्चिमी सभ्यता ने अपनी आर्थिक प्रणाली का जाल विश्व भर में फैला रखा है। यह आर्थिक एकता पश्चिम के आधार पर है। इसी के परिणामस्वरूप राजनीतिक एकता भी उतनी ही हो गयी है। क्योंकि पश्चिम की सेनाओं ने तथा सरकारों ने उतनी विस्तृत और उतनी पूर्ण विजय नहीं प्राप्त की जितनी पश्चिम के कारखाने वालों और शिल्पियों ने (टक्नीशियन)। फिर भी यह तथ्य है कि आज के युग के संसार के सारे राज्य एक ही राज्य प्रणाली के अंग हैं जिसका आरम्भ पश्चिम में हुआ है।

ये तथ्य जोरदार हैं, किन्तु इन्हें सभ्यता की एकता का प्रमाण मान लेना केवल मक्कीपन होगा। विश्व के राज्यों का आर्थिक और राजनीतिक नक्शा पश्चिमीय हो गया है परन्तु उनका सांस्कृतिक नक्शा वही है जो आर्थिक और राजनीतिक विजय के पहले था। जिन लोगों को आँखें हैं वे देख सकते हैं कि सांस्कृतिक धरातल पर चारों जीवित अ-पश्चिमीय (नान-वेस्टर्न) सभ्यताएँ स्पष्ट हैं। किन्तु बहुत लोगों के पास ऐसी आँखें नहीं हैं और उनकी दृष्टि का उदाहरण अंग्रेजी शब्द नेटिव (देसी) अथवा इसी प्रकार के पश्चिम की भाषाओं में और शब्द है।

जब हम पश्चिमी लोग नेटिव शब्द का प्रयोग करते तब हम लोग उनकी संस्कृति का ध्यान नहीं करते। हम लोग जिस देश में जाते हैं वहाँ उन्हें जंगली जानवरों की भाँति समझते हैं जो उस देश में फैले हुए हैं। जिस प्रकार हम वहाँ के पशु-पक्षी और पेड़-पौधों को देखते हैं वैसे ही उन्हें भी समझते हैं। यह नहीं समझते कि हमारी ही तरह उनमें भी आवेग (पैशन्स) होते हैं। जब तक हम उन्हें नेटिव समझते हैं हम उनका विनाश कर सकते हैं या उन्हें सभ्य बना सकते हैं या शायद ईमानदारी से उनके वंश की उन्नति कर सकते हैं। (शायद इसमें सचाई भी हो)। किन्तु उन्हें समझने की चेष्टा नहीं करते।

विश्व भर में पश्चिमी सभ्यता की भौतिक विजय के भ्रम के अतिरिक्त 'इतिहास की एकता' की यह मिथ्या धारणा है कि सभ्यता की एक ही सरिता है जो हमारी है और शेष सब या तो उसकी सहायक है या मरुभूमि में खो गयी हैं। इस भ्रान्ति के तीन कारण हैं। एक अहंवादी (एगोसेण्ट्रिक) भ्रम, दूसरा यह भ्रम कि पूर्व के देश अ-परिवर्तनशील हैं और तीसरा यह भ्रम कि उन्नति की गति सीधी रेखा में होती है।

अहंवादी भ्रम स्वाभाविक होता है और इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि हम पश्चिम वाले ही इसके शिकार नहीं हैं। यहूदियों को यही भ्रम नहीं रहा कि हम विशेष लोक-समुदाय, (पीपुल) हैं, बल्कि हमीं विशेष लोक समुदाय हैं। जैसे हम 'नेटिव शब्द का प्रयोग करते हैं उसी प्रकार वह जेण्टाइल' (गैर यहूदी, नास्तिक) का प्रयोग करते थे। अहंवादी सनक का सबसे अच्छा उदाहरण वह पत्र है जो चीन के दार्शनिक सम्राट् चिएन लुंग ने सन् १७९३ ई० में अंग्रेजी राजदूत को अपने मालिक सम्राट् तृतीय जार्ज को देने के लिए दिया था।

ए सम्राट! आप अनेक सागरों के पार रहते हैं। फिर भी अपनी विनीत इच्छा से प्रेरित होकर कि हमारी सभ्यता से आप लाभ उठाने के लिए आपने एक शिष्ट-मण्डल भेजा है जो आपका

आदरयुक्त स्मृति पत्र (मेमोरियल) लाया है। मैंने आपका स्मृति पत्र पढा। जिस उत्साहपूर्ण भाषा में यह लिखा गया है उससे आपकी सम्मानपूर्ण विनम्रता प्रकट होती है जो बहुत प्रशसा-जनक है।

"आपकी यह प्रार्थना कि आपके राष्ट्र का एक प्रतिनिधि मेरे स्वर्ग समान दरबार में रहे और चीन तथा आपके देश के बीच के व्यापार का नियन्त्रण करे, नही स्वीकार हो सकती क्योंकि यह मेरे वश की परम्परा के विरुद्ध है। यदि आपका आग्रह है कि हमारे दिव्य वश के प्रति आपका सम्मान हो और आप हमारी सभ्यता को ग्रहण करना चाहते है तो हमारे रीति रिवाज और हमारे कानून और नियम आपके रीति रिवाज और कानून से इतने भिन्न हैं कि यदि आपके प्रतिनिधि उसका प्रारम्भिक ज्ञान भी प्राप्त कर लें तो हमारे आचार-व्यवहार, रस्मो रिवाज आपकी उस विदेशी धरती पर पनप नही सकते। इसलिए आपका प्रतिनिधि कितना भी पटु हो जाय कोई लाभ नही हो सकता।

"इस विशाल ससार पर शासन करते हुए मेरा एक ही लक्ष है कि मेरा शासन कुशल हो और मै राज्य के कार्यों का ठीक निर्वाह कर सकूँ। विचित्र और मूल्यवान् वस्तुओ के प्रति मुझे आकर्षण नही है। आपने जो उपहार नजर के रूप में भेजे हैं उन्हें स्वीकार करने की आज्ञा, ए राजा, मैने इसलिए दे दी कि आपने जिस भावना से उन्हें इतनी दूर भेजा है उसका मैंने आदर किया। हमारे वश के महान् गुण आकाश के नीचे प्रत्येक देश में समाविष्ट हो गये है और सभी राष्ट्रो के राजाओ ने जल और थल के मार्गों से अपनी बहुमूल्य भेंटे मेरे पास भेजी हैं। आपके प्रतिनिधि देख सकते हैं कि हमारे पास सब कुछ है। विचित्र तथा विलक्षण वस्तुओ का मेरे सामने कोई मूल्य नही है। आपके देश की बनी वस्तुओ की यहाँ कोई आवश्यकता नही है।"[1]

इस पत्र के भेजने के बाद की ही शती में चिएन ल्ग के देशवासियो की अनेक पराजय हुई। कहा भी गया है कि घमण्ड का यही परिणाम होता है।

'अपरिवर्तनशील पूर्व' इतना प्रचलित भ्रम है और गम्भीर अध्ययन के लिए इतना निराधार है कि उसका कारण ढूँढने में कोई महत्त्व या रुचि नही हो सकती। सम्भवत इसका कारण यह है कि इस सन्दर्भ में 'पूरब' से अभिप्राय कोई भी स्थान मिस्र से चीन तक हो सकता है। किसी समय यह पश्चिम से कही आगे था और अब बहुत पीछे रह गया है। अतएव जब हम लोग गतिशील थे यह निश्चल रहा होगा। विशेषत हमें याद रखना चाहिए कि साधारण पश्चिम वाले को 'पूरब' के प्राचीन इतिहास की जानकारी पुराने बाइबिल (ओल्ड टेस्टामेण्ट) की कथाओ से ही प्राप्त हुई है। पश्चिम के यात्रियो ने आज जब आश्चर्य और आनन्द से यह देखा कि अरब के रेगिस्तान की सीमा पर ट्रासजार्डेनिया में आज भी लोगों का जीवन वैसा ही है जैसा उत्पत्ति की पुस्तक (बुक आव जनेसिस) में सरदारो (पट्रिआर्क) के बारे में लिखा है तब पूरब की अप्रगतिशीलता प्रमाणित हो गयी। किन्तु इन यात्रियो ने अपरिवर्तनशील पूरब को नही देखा, अपरिवर्तनशील अरब के स्टेप को देखा। स्टेप पर भौतिक वातावरण मनुष्यो के लिए इतना कठोर है कि उसके अनुकूल बना लेने की सीमा बहुत सकुचित है। सभी

1 ए० फ० ह्वाइट चाइना एण्ड फारेन पावर्स, पृ० ४१।

काल में उन लोगा था, जिनका इस कठिन वातावरण में रहने का साहस था जीवन अपरिवतन शील और कठोर हो गया। 'अपरिवतनशील पूरब' के लिए ऐसा प्रमाण लचर है। उदाहरण के लिए, पश्चिमी जगत् में आल्प्स की घाटिया में जहाँ नवयुग क यात्रिया का धावा नहीं हुआ है, ऐसे निवासी हैं जो उसी प्रकार रहत ह जसे उनक पूवज अब्राहम क युग में रहते थे। यह तक उतना ही युक्ति सगत होगा कि पश्चिम अपरिवतनशील है।

उन्नति का यह भ्रम कि वह काई ऐसी चीज है जिसकी गति सीधी रेखा में होती है ऐसी प्रवृत्ति का उदाहरण है कि मनुष्य का मन (माइण्ड) सदा सब कार्यों को सरलतम बनाना चाहता है। हमारे इतिहासकार सीधे एक सिरे से दूसरे सिरे तक एक सिलसिले में समय का विभाजन कर देते ह, जसे बाँस के पोर लगातार एक गाँठ स दूसरी गाँठ तक हाते ह या जसे चिमनी साफ करने के नवीन डण्डे के टुकडे हाते ह जिसके सिरे पर ब्रश लगा हाता है और जिसे चिमनी साफ करने वाला एक के बाद एक बढ़ाता जाता है। हमारे इतिहासकारा को जो ब्रश का हैडिल उत्तराधिकार में मिला है मूल में उसकी दो ही गाँठें थी। प्राचीन और वतमान जो ठीक-ठीक तो नही, किन्तु ये प्राय नयी और पुरानी बाइबिल क समान ह और ईसा के पहले युग और ग्रीक के बाद के युग का लक्षित करता है। यह द्वि-वर्गीकरण (डाइकाटामी) हेलेनी समाज की आतरिक जनता के दृष्टिकोण की यादगार है जिसने इस प्रकार हेलेनी शक्तिशाली अल्प सख्यका से अपना अलगाव व्यक्त किया था और इस प्रकार पुराने हेलेनी विमुक्ति (डिसपेंसेशन) और ईसाई धम समाज से पूण विरोध प्रकट किया था। और इस प्रकार इस अहवादी भ्रम के वे शिकार हुए कि हमारे इक्कीस समाजा में एक दूसरे में सक्रमण हुआ और इसी से इतिहास में परिवतन हुआ। (उनके लिए यह क्षम्य है क्याकि उनका ज्ञान हमसे कम था।)

समय की गति के साथ-साथ हमार इतिहासकारा ने अपनी सुविधा के लिए एक और गाँठ जोड़ दी और उसे मध्यकाल' कहा क्याकि वह दोनो के बीच था। प्राचीन और वतमान काल का विभाजन हेलेनी और पश्चिमी इतिहास के व्यवधान के कारण था, 'मध्यकाल' और 'वतमान काल' पश्चिमी इतिहास के एक अध्याय से दूसरे अध्याय का केवल सक्रमण है। यह फारमूला—प्राचीन काल, मध्यकाल वतमान काल अनुपयुक्त है। यह या हाना चाहिए, हेलनी + पश्चिमी (मध्य + वतमान) किन्तु इससे काम नहा चलगा। क्योकि यदि हम पश्चिमी इतिहास के एक अध्याय विभाजन को अलग काल' मानते ह तो दूसरो के लिए यही मानना उचित होगा। यदि हम काई विभाजन सन् १४७५ क आस-पास करते ह तो सन् १०७५ के आस पास क्यो नही। और इस बात के पक्ष में भी समुचित तक है कि अभी हम लागा ने एक नया अध्याय आरम्भ किया है जिसका आदि काल हम सन् १८७५ के आस-पास रख सकत ह। इस प्रकार यह विभाजन होगा —

पश्चिमी १ (अधकार युग डाक एज) ६७५–१०७५
पश्चिमी २ (मध्यकाल) १०७५–१४७५
पश्चिमी ३ (वतमान) १४७५–१८७५
पश्चिमी ४ (उत्तर वतमान पोस्ट-माडन) १८७५–?

किन्तु हम अपन विषय स दूर चले गये। विषय यह है कि हेलेनी और पश्चिमी इतिहास का, उस चाहे प्राचान और वतमान कह लीजिए, समीकरण (इक्वेशन), केवल सकीणता और घृष्टता

है। यह इसी प्रकार है कि भूगोलवेत्ता 'समार के भूगोल' पर पुस्तक लिखे और देखने पर पता चले कि पुस्तक केवल भूमध्यसागर के बेसिन और यूरोप पर है।

इतिहास की अविति की एक दूसरी और भिन्न धारणा है जो उस प्रचलित और परम्परागत भ्रम से भिन्नी है जिसपर विचार किया गया है और जो इस पुस्तक की स्थापना के विरुद्ध है। हम किसी बाजारू खिलौने की बात नही कर रहे है, बल्कि नशास्त्र के सिद्धाता के परिणामस्वरूप जो बातें लिखी गयी है उनपर हम उस विसरण (डिफ्यूजन) के सिद्धात की बात कर रहे हैं जो जी० ईलियट स्मिथ के 'द ऐंसेंट इजिपशियन्स एण्ड दि ओरिजिन आव सिविलिजेशन' और डब्लू० एच० पेरी के 'द चिल्ड्रन आव द सन — ए स्टडी इन द अर्ली हिस्ट्री आव सिविलिजेशन' में लिखा गया है। ये लेखक 'सभ्यता की एकता' का विशेष रूप म जानत ह। इन लेखको का विश्वास इतिहास की एकता में विशेष ढग का है। ये इस तथ्य पर विश्वास नही करते कि निकट भविष्य में या निकट भूतकाल मे एकमात्र पश्चिमी सभ्यता के विश्व भर म विस्तार स सभ्यता की एकता स्थापित हुई है। बल्कि वह उस तथ्य मानते है जो हजारा वष पहले मिस्री सभ्यता के प्रसार से पूरा हुआ, जा उन मरी हुई सभ्यताओ में हमने माना है जिसका कोई उत्तराधिकारी नही है। उनका विश्वास है कि मिस्री सभ्यता ही एक मात्र एसी सभ्यता है जिसका जन्म बिना किसी बाहरी सहायता के, स्वतन्त्र रूप से हुआ। उनके अनुसार सब जगह सभ्यता यही स फूली अमेरिका में भी इसका प्रभाव पडा जहा यह हवाई द्वीप तथा पूर्वी द्वीप से होते हुए पहुँची होगी।

यह ठीक है कि प्रसार भी एक माध्यम है जिसके द्वारा तकनीक, कुशलता, सस्थाएँ विचार-धाराएँ एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचती हैं। वणमाला से लेकर सिंगर की सीने की मशीन तक एक समाज से दूसरे समाज को मिली है। प्रसार से ही सुदूर पूरब की चाय अरब का पय काफी, मध्य अमेरिका का पय कोको, अमेजन प्रान्त का रबड, मध्य अमेरिका का तम्बाकू, गणित की सुमेरी द्वादश द्वीप(डुओडेसियल) पद्धति जो हमारी शिलिंग से प्रकट होती है और तथाकथित अरबी अक जो सम्भवत हिंदुस्तान स आया, सवव्यापी हुए हैं। ऐसे अनेक उदाहरण ह। यह बात कि राइफिल का किसी एक स्थान में ही आविष्कार हुआ और एक ही केन्द्र से चारा ओर फली इस बात का प्रमाण नही है कि तीर कमान का भी एक ही स्थान मे आविष्कार हुआ और वही से वह विश्व भर में फली। यह भी तक ठाक नही है कि शक्ति से चलने वाले करघे मैंचेस्टर से सब समार में फले तो धातु गलान का तकनीक भी एक ही केन्द्र से प्रसारित हुआ होगा। बल्कि इस सम्बध में प्रमाण उल्टा है।

भौतिक सभ्यता के भ्रष्ट विचारा के बावजूद सभ्यता की नीव एसी ईंटो पर नही पडी है। सीने की मशीना, बदूका और तम्बाकू पर सभ्यता का निर्माण नही हाता। वणमाला और अको पर भी नही। आज के व्यावसायिक जगत् मे पश्चिमी तकनाक का दूसर देशा म पहुँचना सरल है। किन्तु पश्चिमी कवि अथवा सत का अपने उन विचारा का जिनका प्रकाश उनके अपने देश म फला है दूसरे लोगा में पहुँचाना इससे कहा अधिक कठिन है। प्रसारवादी सिद्धात का जितना औचित्य है उस मान लेने पर भी मानव के इतिहास में आरम्भिक सजन का जो योगदान हुआ है उसके महत्त्व पर जोर देना आवश्यक है। और हमें स्मरण रखना चाहिए कि आरम्भिक सजन का बीज अथवा उसकी चिनगारी जीवन की किसी अभिव्यक्ति मे फूल अथवा लो में फूट सकती है क्योकि प्रकृति की एकता का सिद्धात निश्चित है। हम यहाँ तक कह सकते है कि

मनुष्य की कोई उपलब्धि प्रसार के कारण है अथवा नही, इसके प्रमाण का भार प्रसारवादियो के ऊपर होना चाहिए ।

सन् १८७३ में फ्रीमन ने लिखा था—"इसमें सन्देह नही कि सभ्यता के विकास म ऐसा समय आया कि किसी देश अथवा जाति को किसी वस्तु की आवश्यकता पडी तो उन्ही-उन्ही वस्तुओ का आविष्कार विभिन्न देशो और विभिन्न युगो में बार बार हुआ है । जसे मुद्रण कला का आविष्कार स्वतन्त्र रूप से चीन म हुआ और मध्ययुगीन यूरोप में भी । यह भी अच्छी तरह मालूम है कि इसी प्रकार की कुछ क्रिया प्राचीन रोम में भी अनेक कार्यों के लिए की जाती था । यद्यपि इस प्रणाली का प्रयोग पुस्तक प्रकाशन के काम में नही किया जाता था, किन्तु दूसरे तुच्छ कामो में इसका प्रयोग होता था । जसे छपाई की बात है उसी प्रकार लेखन कला की भी है । दूसरी कला का भी उदाहरण हम दे सकते ह । मिस्र, यूनान, इटली तथा ब्रिटिश टापुओ के पुराने भवनो के खेंडहरो तथा मध्य अमरीका के ध्वस्त नगरो की तुलना करने से हमें पता चलता है कि तोरण (आच) और कलश (डोम) का आविष्कार मानव कला के इतिहास में अनेक बार हो चुका है । हमें इसमें भी सन्देह नही है कि सभ्य जीवन की अनक आवश्यक कलाओ का, जसे आटा पीसने की चक्की का तीर कमान का घोडे पालने का, डोगी (कना) बनाने इत्यादि का आविष्कार अनेक युगो म अनक देशो में हुआ है । यही बात राजनीतिक सस्थाओ की भी है । एक ही प्रकार की सस्था भिन्न भिन्न देशो और कालो में दिखाई देती ह । इसका कारण यही है कि समय-समय पर अलग-अलग देशो मे ऐसी परिस्थितियाँ हुइ कि उनका जन्म हुआ ।"[१]

एक वतमान नृतत्त्व शास्त्री ने यही विचार प्रकट किया है —

"मनुष्य के आचार और विचार की समानता इस कारण है कि सब जगह मनुष्य के मस्तिष्क की बनावट एक-सी है और इस प्रकार उसका स्वभाव भी वसा ही है । मानव के इतिहास की जहाँ तक जानकारी है उसकी प्रत्यक मजिल पर मनुष्य के भौतिक अवयव की बनावट में और उसकी स्नायविक क्रियाएँ एक ही प्रकार की रही ह इसलिए मन की विशेषताएँ शक्तियाँ और कायप्रणाली भी एक सी रही ह । मस्तिष्क कसे एक ही ढग से काम करता है इसका उदाहरण उन्नीसवी शती के विचारक डारविन तथा रसेल वलेस की रचनाओ में मिलता है । इन्होने समाज सामग्री (डेटा) के आधार पर काय करते हुए एक साथ ही विकास सिद्धान्त का पता लगाया और इसी युग में अनेक लोगो ने एक ही आविष्कार (इनवेंशन) और खोज (डिस्कवरी) के लिए दावा किया कि मने पहले पता लगाया है । इसी प्रकार की और भी क्रियाएँ मानव प्रजातियो (रेस) में समान रूप से पायी जाती ह जसे टोटेमवाद (टोटेमिज्म) गोत्रान्तर विवाह (एक्सोगेमी) तथा अनेक परिष्कारात्मक सस्कार जो ससार की विभिन्न जातियो और देशो में पाये जाते है जो एक दूसरे से बहुत दूर है । यद्यपि इन बातो की सामग्री अपूर्ण है, इनकी शक्ति अविकसित है और परिणाम अस्पष्ट है ।[२]

१ ई० ए० फ्रीमन कम्परेटिव पालिटिक्स, पृ० ३१-२ ।

२ जे० मरफी प्रिमिटिव मन हिज एसेंशल क्वेस्ट, पृ० ८-९ ।

(३) सभ्यताओ के सादृश्य (कम्पेरेबिलिटी) का दवा

हमने अपने तुलनात्मक अध्ययन की याजना की दो विरोधी आपत्तियो का उत्तर दिया है। एक तो यह कि हमारे इक्कीस समाजा में इसके सिवाय और कोई समानता नही है कि वे सभी 'ऐतिहासिक अध्ययन के सुबोध क्षेत्र' ह, दूसरे यह कि 'सभ्यता की एकता' के फलस्वरूप देखने में जो अनेक सभ्यताएँ है, वे असल में एक ह। फिर भी हमारे आलोचक इन आपत्तिया के हमारे उत्तर को मान भी लें तो यह तक उपस्थित कर सकते ह कि इन इक्कीस सभ्यताआ की तुलना नही हो सकती क्याकि वे समकालीन नही ह। इनमें सात अभी जीवित ह, चौदह लाप हो गयी जिनमें से कम से कम तीन—मिस्री, सुमेरी और मिनोसी—का अस्तित्व 'इतिहास के प्रभात' में था। इन तीना में और सम्भवत औरो में भी तथा जीवित सभ्यताआ में एक दूसरे से पूरे 'ऐतिहासिक युग' (हिस्टारिकल टाइम) का अन्तर है।

इसका उत्तर यह है कि काल सापेक्ष (रेलेटिव) है। और छ हजार साल से कम की जो छोटी अवधि प्राचीनतम सभ्यता के आविर्भाव और वतमान काल के बीच है उसे हमें अध्ययन की दृष्टि से उचित समय मान (टाइम-स्केल) के हिसाब से नापना होगा। अर्थात् सभ्यताआ के बीच के काल विस्तार (टाइम स्पेन) की इकाइया द्वारा नापना हागा। समय के सम्ब ध से सभ्यताआ के सर्वेक्षण में अधिक से अधिक जो क्रमागत पीढियाँ हमें मिली हैं उनकी सख्या तीन है। तीन-तीन पीढिया की प्रत्येक सभ्यता छ हजार वर्षो स अधिक अवधि की है। और प्रत्येक क्रम की अतिम अवधि (टम) वह सभ्यता है जा जीवित है।

तथ्य की बात यह है सभ्यताआ के सर्वेक्षण में हमने यह देखा कि किसी सभ्यता में क्रमागत पीढ़िया तीन से अधिक नही ह। इसका यह अथ हुआ कि यह जाति (स्पीसीज़) अपने ही काल मान के अनुसार बहुत नयी है। दूसरी बात यह है कि इसकी अद्यतन निरपेक्ष आयु प्रारम्भिक समाज की सहोदरा जातियो की तुलना में कम है क्याकि ये मानव के समवयस्क हैं और इसलिए औसत अनुमान से तीन लाख वष से हं। यह कहने की आवश्यकता नही है कि बहुत-सी सभ्यताआ का आरम्भ 'इतिहास के प्रभात से है क्याकि जिसे हम इतिहास कहते हैं वह मनुष्य का इतिहास सभ्य समाज आरम्भ होने के इतिहास से है। यदि हमारा अभिप्राय इतिहास से जब से मनुष्य पृथ्वी पर पैदा हुआ तब से है तो हमें ज्ञात होगा कि सभ्यता का इतिहास तथा मनुष्य का इतिहास समवयस्क नही है। सभ्यता का इतिहास केवल दो प्रतिशत है, मानव जीवन के इतिहास का केवल एक बटे पचासवाँ भाग। इसलिए हमारे अभिप्राय के लिए हमारी सभ्यताएँ प्राय समकालीन ही है।

हमारे आलाचक काल विस्तार का तक छोडकर यह कह सकते ह कि इन सभ्यताआ के मूल्या (वेल्यू) में अतर है, इसलिए इनकी तुलना नही हो सकती। क्या बहुत-सी कही जाने वाली सभ्यताएँ प्राय मूल्यहीन नही ह। वास्तव में वे इतनी 'असभ्य हैं कि उनकी और वास्तविक सभ्यताआ (जैसी कि हमारी मानी जाती है) के जीवन से तुलना करना मानसिक शक्ति का विनाश करना है। इस विषय पर पाठका को अपने निणय को तब तक के लिए रोक रखना चाहिए जब तक व यह न देख लें कि हम जिस प्रकार के मानसिक परिश्रम की अपेक्षा करते ह उसका परिणाम क्या हाता है। साथ ही पाठका को यह भी जानना चाहिए कि काल के समान

मूल्य भी मापक संकल्पना (कान्सेप्ट) है और यदि प्राचीन समाजों से तुलना की जाय तो हमारे इक्कीस समाजों की बहुत उपलब्धियाँ हैं और यदि किसी आदर्श मानक से इनको नापा जाय तो ये इतनी पायी जायेंगी कि इनमें कोई एक दूसरे पर उंगली न उठा सकेगा।

सच पूछिए तो हमारा निश्चित मत है कि यह अनुमान करके चलना चाहिए कि दार्शनिक दृष्टि से हमारे इक्कीस समाज समकालीन हैं और समान हैं।

और अन्त में हम यह मान भी लें कि हमारे आलोचक यहाँ तक हमसे सहमत हैं तो वे यह कहेंगे कि सभ्यताओं के इतिहास और कुछ नहीं हैं, केवल घटनाओं की लड़ी हैं और प्रत्येक ऐतिहासिक घटना वास्तव में अकेली है तथा इतिहास की पुनरावृत्ति नहीं होती।

इसका उत्तर यह है कि प्रत्येक घटना प्रत्येक व्यक्ति की भाँति अलग है और इस कारण कि उन्हीं बातों में इनकी आपस में तुलना नहीं हो सकती किन्तु और बातों में वह एक वर्ग का सदस्य हो सकती है और जहाँ तक एक ही वर्गीकरण में आते हैं उसी वर्ग के एक दूसरे सदस्य की तुलना हो सकती है। कोई दो जीवित प्राणी चाहे जन्तु हों या वनस्पति हों बिल्कुल समान नहीं होते तो इनसे क्रिया विज्ञान (फिजियालॉजी) जीव विज्ञान (बायलॉजी) वनस्पति विज्ञान (बॉटनी) जन्तु विज्ञान (जुआलॉजी) और मानवजाति विज्ञान (एथ्नालॉजी) असम्भव ही हो सकते। मनुष्य का मन तो और भी मायावी और भिन्न है किन्तु हमें मनोविज्ञान का अस्तित्व मान्य है और चाहे आज तक की उसकी उपलब्धियों के सम्बन्ध में हमारा मतैक्य न हो उसके प्रभाव को हम मानते हैं। इसी प्रकार आदिम समाजों का तुलनात्मक अध्ययन हम मानव विज्ञान के नाम से करते हैं। जो कार्य मानव विज्ञान आदिम जातियों का कर रहा है वही हम समाज की सभ्य जातियों के सम्बन्ध में करना चाहते हैं।

हमारी स्थिति इस अध्याय के अन्तिम परिच्छेद में स्पष्ट हो जायगी।

(४) इतिहास, विज्ञान और कल्पना साहित्य (फिकशन)

ज्ञान विचारों की अनुभूति और उनकी अभिव्यक्ति तथा उनमें जीवन की घटनाओं की अनुभूति और अभिव्यक्ति के तीन प्रकार हैं। पहला तो यह है कि तथ्यों की खोज की जाय और उन्हें लेखबद्ध किया जाय, दूसरा यह कि तथ्यों के तुलनात्मक अध्ययन से सामान्य नियम बना कर उनका स्पष्टीकरण किया जाय, तीसरा यह कि उन तथ्यों के आधार पर पुनः कलात्मक सृजन किया जाय जो कल्पना-साहित्य होता है। साधारणतः यह माना जाता है कि तथ्यों की खोज और उनका अभिलेखन इतिहास की तकनीक (टेकनीक) है और इस तकनीक के क्षेत्र में सभ्यताओं की सामाजिक घटनाओं का समावेश रहता है। सामान्य नियमों को बनाना और उनका स्पष्टीकरण विज्ञान की तकनीक है। मानव जीवन के इस प्रकार के अध्ययन के विज्ञान को मानव विज्ञान (एन्थ्रोपालाजी) कहा जाता है। और आदिम समाज की सामाजिक घटनाएँ इस वैज्ञानिक तकनीक के क्षेत्र में आती हैं। नाटक और उपन्यास की तकनीक कल्पना साहित्य है। इसका क्षेत्र है मनुष्य का व्यक्तिगत सम्बन्ध। अरस्तू की पुस्तकों में ये सब बातें मूलरूप में पायी जाती हैं।

[illegible] विभिन्नता के [illegible] विस्तार में जितना ऊपर समझा जाता है उतना है [illegible]। उदाहरण के लिए, इतिहास में मानव जीवन के सभी तथ्यों का संग्रह नहीं होता।

आदिम समाज के सामाजिक जीवन के तथ्य उसमें नही सम्मिलित होते । इन तथ्यो से मानव विज्ञान की विधियाँ (लाज) बनती है। व्यक्तिगत जीवन के तथ्य जीवन चरित (बायोग्राफी) में चले आते ह । यद्यपि ऐसे व्यक्तिगत जीवन जो इस योग्य होते है जिन्हे लेखबद्ध किया जाय आदिम समाज में नही पाये जाते, उन समाजो में पाये जाते है जो सभ्यता की राह पर है और ये परम्परा के अनुसार इतिहास के क्षेत्र में आ जाते हैं । इस प्रकार इतिहास मे मानव जीवन के कुछ तथ्य आते ह, सब नही । इतिहास कल्पना साहित्य से भी सहायता लेता है और विधियो से भी ।

नाटक और उपन्यास के समान इतिहास का आरम्भ भी पुराणो से हुआ है । ये मनुष्य के ज्ञान तथा अभिव्यक्ति के आदिम स्वरूप है, जसे परियो की कहानियाँ होती ह जिन्हें बच्चे सुनते ह अथवा जसे दुनियादार युवक सपने देखा करते हैं जिनमें कल्पना और तथ्य का अतर नहीं होता । उदाहरण के लिए, कहा जाता है अगर 'ईलियड' कोई इतिहास के रूप में पढना चाहे तो उसे वह कहानियो से भरा मिलेगा और यदि कोई कथा के रूप में पढना आरम्भ करे तो उसमे उसे इतिहास ही इतिहास मिलेगा । सभी इतिहास इस रूप में ईलियड के समान ह कि कल्पना के तत्त्व को वे बिल्कुल निकाल नहीं सकते । तथ्यो का चुनाव, उनका विन्यास और उपस्थापन कल्पना साहित्य के क्षेत्र के तकनीक ह और यह लोकमत ठीक है कि कोई इतिहासकार तब तक 'महान्' नहीं हो सकता जब तक वह महान् कलाकार भी न हो। उनका कहना है कि गिबन और मेकाले के समान इतिहासकार उन नीरस इतिहासकारो से अधिक महान् ह जो अपने साथी इतिहासकारो के तथ्यो की भूलो की उपेक्षा कर गये ह । जो कुछ हो, ऐसे काल्पनिक प्रतिरूपो (फिक्टिशस परसानिफिकेशस) के प्रयोग किये बिना, जसे 'इग्लड', 'फ्रास', द कजर्वेटिव पार्टी द चच, द प्रेस' (पत्र) अथवा 'जनमत । थ्युसिडाइडस ने ऐतिहासिक व्यक्तियो के द्वारा काल्पनिक भाषणो और सवादो को कहला कर नाटकीय ढग से इतिहास लिखा है । लेकिन उसकी सीधी-सादी वाणी अधिक सजीव है और उन आधुनिक लेखको से अधिक काल्पनिक नहीं है जो घुमा फिरा कर जनमत का मिला-जुला चित्रण करते ह ।

दूसरी ओर इतिहास म अनेक सहायक विज्ञानो का समावेश होता है जिनके द्वारा सामान्य विधियाँ बनती ह जो आदिम समाजो के नहीं सभ्य समाजो के होते है । जसे अर्थशास्त्र, राजनीति, विज्ञान और समाज विज्ञान (सोशियालोजी) ।

यद्यपि यह तर्क देने की आवश्यकता नही है फिर भी हम कह सकते ह कि जिस प्रकार इतिहास, विज्ञान और कल्पना-साहित्य के तकनीको से अछूता नहीं रहता उसी प्रकार विज्ञान और कल्पना साहित्य केवल अपने तकनीको में ही सीमित नहीं रहते । सभी विज्ञानो को ऐसी मजिल से गुजरना होता है जिनमे उनका काम केवल तथ्यो को खोजना और उनका लेखन रहता है । और मानव विज्ञान अभी इस अवस्था से गुजर रहा है । अत मे यह भी बता देना है कि नाटक और उपन्यास में मानव सम्बन्ध का चित्रण कोरी कल्पना ही नही होती । यदि ऐसा होता तो इन कृतियो को अरस्तू की वह प्रशसा प्राप्त न होती जो उसने कहा कि ये इतिहास और दर्शन से अधिक सच्ची होती हैं । और ये केवल ऊटपटाँग और गप नहीं होते । साहित्य की किसी कृति को जब हम कल्पना साहित्य कहते ह तब उसका यही अभिप्राय होता है कि इसके पात्रो का किसी ऐसे व्यक्ति से सम्बन्ध नहीं है जो कभी जीवित रहा हो, न घटनाओ को किसी ऐसी घटना से मिला सकते ह जो सचमुच घटी हो । सचमुच हमारा यह अभिप्राय होता है कि इन पात्रो की पृष्ठभूमि

काल्पनिक है और यदि हम इसका जिक्र नही करते कि इनका आधार वास्तविक सामाजिक तथ्यो पर है तो इसका यही कारण है कि उन्हे हम मान लेते ह कि वे स्वय सिद्ध और स्पष्ट ह । जब हम किसी कल्पना साहित्य के सम्बन्ध मे कहते ह कि यह जीवन का सच्चा चित्रण है और लेखक ने मानव स्वभाव का गम्भीर अध्ययन किया है तब हम उसकी वास्तविक प्रशसा करते हैं । उदाहरण के लिए यदि किसी उपन्यास में याकशायर के ऊनी कारीगरो के काल्पनिक परिवार का वणन है तो हम लेखक की प्रशसा यो कर सकते ह कि वेस्ट राइडिंग के कल कारखाने वाले नगरो का उसे पूरा पूरा ज्ञान है ।

फिर भी इतिहास विज्ञान और कल्पना-साहित्य के तकनीको में जो अन्तर अरस्तू ने बतलाया है वह साधारणत ठीक है और यदि हम इन तकनीको पर फिर से विचार करे तो पता चलेगा कि *ऐसा क्यो है । हमको अन्तर यह मिलेगा कि ये अपनी दी हुई सामग्री की भिन्न भिन्न मात्राओ* का भिन्न ढग से प्रयोग करते है । जहाँ सामग्री कम है उस क्षेत्र का अध्ययन केवल विशेष तथ्यो को खोजकर और उन्हें लिपिबद्ध करके हो सकता है । जहाँ सामग्री इतनी अधिक है कि उनकी *सारणी बनायी जा सके, किन्तु इतनी अधिक नही है कि उनका सर्वेक्षण किया जा सके वहा यह* सम्भव है और आवश्यक भी है कि विधि बनायी जाय और उन्हें स्पष्ट किया जाय । जहाँ सामग्री अत्यधिक है वहीं कल्पना साहित्य के तकनीक का प्रयोग किया जा सकता है जिसमें कलात्मक *सजन तथा अभिव्यक्ति काम में लायी जाती है । तीनो तकनीको में इसमे सबसे अधिक मात्रा* का अन्तर होता है । भिन्न भिन्न मात्राओ की सामग्रियो के प्रयोग में तकनीको की उपयोगिता में भी अन्तर है । क्या इसी प्रकार का अन्तर हमे उन सामग्रियो की मात्राओ में मिल सकता है *जिन्हें हमने अपने अध्ययन का क्षेत्र बनाया है ।*

पहले हम व्यक्तिगत सम्बन्धो को ले लें जिन्हे हम कल्पना साहित्य कहते ह । हमको तुरत पता लग जायेगा कि ऐसे बहुत कम लोग ह जिनका वयक्तिक सम्बन्ध इतने महत्त्व का और इतना मनोरजक है कि उनके कारनामो को लिखा जाये या उनके जीवन का ऐसा विषय है जिसे हम उस रूप में लिखें जिसे जीवन चरित कहते ह । इन अपवादो को छोडकर मानव जीवन के व्यक्तिगत सम्बन्धो के क्षेत्र के अध्ययन करने वाले विद्यार्थियो के सामने असख्य उदाहरण ऐसे आयेंग *जिनकी अनुभूतियाँ समान हैं । उन सबकी सूची बनाने का विचार ही हास्यास्पद है । इनकी* अनुभूतियो के आधार पर कोई विधि बनाना नितान्त निरथक और बिल्कुल भद्दा होगा । इस परिस्थिति में सामग्रियो का ठीक-ठीक उपयोग बिना किसी ऐसे माध्यम के नही हो सकता *जिससे हमें असीम का ससीम भाषा में ज्ञान हो । कल्पना-साहित्य ही वह माध्यम है ।*

हमें मात्रा की दृष्टि से इतना पता चला कि कम से कम आंशिक सत्य यह है कि वयक्तिक सम्बन्धो के अध्ययन के लिए कल्पना-साहित्य का प्रयोग किया जाता । अब हमें इसी भाँति यह देखना चाहिए कि क्या आदिम समाजो के अध्ययन के लिए विधि निर्माण का तकनीक का प्रयोग किया जा सकता है और सभ्यताओ के अध्ययन के लिए तथ्यो की खोज की तकनीक का प्रयोग किया जा सकता है ।

पहली बात यह देखने की है कि अन्तिम दोनो अध्ययन मनुष्य के सम्बन्ध से हो ह लेकिन यह सम्बन्ध उस प्रकार का निजी नही है जो प्रत्येक पुरुष, स्त्री और बच्चे के जीवन में प्रतिदिन प्रत्यक्ष रूप से होता है । मनुष्यो के सामाजिक जीवन के सम्बन्ध निजी सम्बन्धो से और अधिक

वस्तृत होते है, जो अवैयक्तिक होते है। इन अवैयक्तिक सम्बधो का जिन सामाजिक तत्रा द्वारा निर्वाह होता है उन्हें सस्था कहते हैं। सस्था बिना समाज का अस्तित्व नही हो सकता। सच पूछिए तो समाज सबसे ऊँची सस्था है। चाहे समाज का अध्ययन किया जाय चाहे सस्थाओ के सम्बध का, बात एक ही है।

हमें तुरत पता चल जायेगा कि सस्थाओ में मनुष्यो के जो सम्बध है उन्हें अध्ययन करने वाले विद्यार्थी को सामग्री की मात्रा कम मिलेगी और लोगो के व्यक्तिगत सम्बध के अध्ययन करने वाले विद्यार्थी को कही अधिक सामग्री मिलगी। हम यह भी देखते है कि आदिम समाजा के समुचित अध्ययन करने के लिए सस्थागत सम्बधा की जो लिखित सामग्री मिलती है वह उस सामग्री से कही अधिक है जो सभ्य समाजो के उचित अध्ययन के लिए मिलती है। क्याकि जो ज्ञात आदिम समाज हैं उनकी सख्या ६५० से भी अधिक है। और जो समाज उन्नति के पथ पर ह उनकी सख्या इक्कीस से अधिक नही है। ६५० समाजा के उदाहरण से कल्पना-साहित्य का निमाण नही हो सकता। उनके द्वारा विद्यार्थी विधिया के बनाने का काय केवल आरम्भ कर सकता है। जिस समाज में एक या दो दजन उदाहरण मिलते ह उसमें तथ्या के सारणीकरण के अतिरिक्त और कुछ नही सम्भव है। हमने देखा है कि इसी सीमा तक इतिहास अभी पहुँचा है।

पहले हमें यह विरोधाभास सा मालूम होगा कि सभ्यताओ के अध्ययन करने वाले विद्यार्थिया के पास सामग्री की मात्रा बहुत कम है जबकि आधुनिक इतिहासकार यह शिकायत करते ह कि हमारे पास इतनी सामग्री है कि हम घबडा जाते ह। किन्तु सत्य यह है कि ऊँचे प्रकार के तथ्य 'अध्ययन के सुबोध क्षेत्र' इतिहास की तुलनात्मक इकाइयाँ वज्ञानिक तकनीक द्वारा अध्ययन करने क लिए और विधिया का बनाने और स्पष्ट करने के लिए बहुत कम है। फिर भी अपने लिए खतरा उठाकर भी हम इस प्रकार के अध्ययन का साहस करत ह और हम जिस परिणाम पर पहुचे ह वह आगे इस पुस्तक में मिलेगा।

२

सभ्यताओं की उत्पत्ति

४ समस्या और उसका न सुलझाना

(१) समस्या का रूप

जब हमारे सामने यह समस्या आती है कि जो समाज सभ्यता के पथ पर हैं वे क्या और कैसे उत्पन्न हो गये तब हम देखते हैं कि जहाँ तक इन समस्याओं का सम्बन्ध है जिन इक्कीस समाजों का हमने वर्णन किया है उनके दो वर्ग हैं। इनमें से पन्द्रह के पूर्वज एक ही जाति के हैं। इनमें से कुछ का सम्बन्ध तो इतना निकट है कि उनके अलग व्यक्तित्व की बात केवल विवाद का विषय हो सकता है। कुछ का सम्बन्ध इतना ढीला-ढाला है कि उसे सम्बन्ध कहना बहुत ठीक न होगा। किन्तु इस प्रश्न को छोड़िए। ये पन्द्रह समाज कम या वेश उन छः समाजों से अलग हैं जो हमारे विचार से सीधे आदिम जीवन से निकले हैं। सम्प्रति हम इन्हीं के सम्बन्ध में विचार करेंगे। वे हैं—मिस्री सुमेरी मिनोई चीनी, माया और एंडियाई (एंडीज)।

आदिम तथा विकसित समाजों में क्या अन्तर है? यह अन्तर इस बात में नहीं है कि उनमें संस्थाएँ हैं या उनका अभाव है। क्योंकि संस्थाएँ व्यक्तियों के अवयक्तिक सम्बन्धों की माध्यम हैं। और सभी समाजों में उनका अस्तित्व है। व्यक्तियों का जो आपसी सीधा सम्बन्ध होता है उसका दायरा छोटा होता है और छोटे से छोटे आदिम समाज का विस्तार उससे बड़ा होता है। संस्थाएँ सारे समाज के वर्गों (जीनस) में पायी जाती हैं। इसलिए समाज की दोनों जातियों (स्पीसीज) में समान रूप से वे मौजूद हैं। आदिम समाजों की भी अपनी संस्थाएँ हैं—जैसे कृषि सम्बन्धी वार्षिक धार्मिक पूजा टोटमवाद[1] और विजातीय विवाह (एक्सगमी) निषेध संस्कार और अवस्था के अनुसार वर्ग विभाजन (एज क्लासेस) विशेष वय तक दोनों सवसों को अलग अलग सामुदायिक संघटनों में रखना इस प्रकार की कितनी ही संस्थाएँ हैं जिनकी कार्य प्रणाली उतनी ही विस्तृत और सूक्ष्म है जैसी सभ्य समाजों में।

सभ्य समाजों और आदिम समाजों का अन्तर श्रम विभाजन के आधार पर भी नहीं माना जा सकता क्योंकि आदिम समाजों के जीवन में भी श्रम विभाजन के अंकुर पाये जाते हैं। राजा जादूगर लोहार गायक सभी का अपना-अपना विशेष स्थान है। यद्यपि हेलनी आख्यान का लोहार हिफीस्टस लंगड़ा है और हेलनी कथा का कवि होमर अंधा है। इससे यह ध्वनि निकली है कि आदिम समाज के विशेषज्ञ असामान्य लोग होते थे जिनमें सब काम करने की क्षमता नहीं होती थी जो हरफन मौला नहीं होते थे। सभ्य तथा आदिम समाजों का अन्तर यह है कि उनकी अनुकरण की शक्ति किस दिशा में है। अनुकरण सामाजिक जीवन का विशेष गुण है। सभी सामाजिक कार्यों में आदिम समाजों में भी यह क्रिया हमें देखने को मिलती है। आज की

1 गणचिह्नवाद। उत्तर अमरीका के प्राचीन एंडियनों में प्रतीकों की पूजा।

होगा । हम प्रत्येक चढ़ने वाले की शक्ति, कौशल और साहस जान भी लें तब भी हम यह नहीं कह सकते कि ऊपर के कगार पर, जहाँ तक पहुँचने की चेष्टा वे कर रहे हैं, सब पहुँच जायेंगे । हम यह निश्चयपूर्वक कह सकते हैं कि उनमें से कुछ कभी नहीं पहुँचेंगे । हम यह कह सकते हैं कि एक-एक व्यक्ति जो परिश्रम से चढ़ रहा है उससे दूनी संख्या (हमारी नष्ट सभ्यताएं) थक कर और हार कर नीचे के कगार पर गिर पड़ी है ।

अभी हम जिस बात की खोज कर रहे थे उसमें हमें सफलता नहीं मिली कि आदिम समाजों और सभ्य समाजों में स्थायी तथा मौलिक अंतर क्या है किन्तु हमें इस बात का कुछ आभास मिला कि सभ्यताओं की उत्पत्ति तथा प्रकृति क्या है । यही हमारे अनुसंधान का मुख्य विषय है । आदिम समाज का सभ्य समाज में कैसे परिवर्तन हुआ । यहाँ से आरम्भ करते हुए हमको पता चला कि यह परिवर्तन इस बात में है कि गतिहीन अवस्था से गतिशील अवस्था में समाज पहुँचा । हम देखेंगे कि यही सिद्धांत सभ्यताओं के विकास में भी लागू होता है । अर्थात् आंतरिक सर्वहारा वर्ग उन पहले की सभ्यताओं के शक्तिशाली अल्पसंख्यकों से अलग हो गया जिनकी सर्जनात्मक शक्ति समाप्त हो गयी थी । ये शक्तिशाली अल्पसंख्यक वर्ग हमारी परिभाषा के अनुसार गतिहीन हैं । क्योंकि यह कहना कि उन्नतिशील सभ्यता की सर्जनशील अल्पसंख्या पतित या भ्रष्ट होकर छिन्न भिन्न होती हुई सभ्यता की शक्तिशाली अल्पसंख्या हो गयी का अर्थ यही है कि जिस समाज का वर्णन हो रहा है वह गतिशील से गतिहीन अवस्था में आ गयी । इस गतिहीन अवस्था से सर्वहारा वर्ग का अलग होना गतिशील प्रतिक्रिया है । इस दृष्टि से हम देखेंगे कि शक्तिशाली अल्पसंख्या से सर्वहारा का पृथक होना एक नयी सभ्यता की उत्पत्ति है जिसका परिवर्तन गतिहीनता से गतिशीलता की ओर होता है । यह उसी प्रकार है जैसे आदिम समाज से सभ्य समाज में परिवर्तन होता है । चाहे सभ्यताएँ एक दूसरे से सम्बंधित हों या न हों, सबकी उत्पत्ति समान है । और जेनरल स्मट्स के शब्दों में 'मानवता एक बार फिर गतिमान् है ।

स्थैतिकता और गतिशीलता चाल विश्राम और फिर चलना यह लयपूर्ण अदल-बदल विश्व की मौलिक प्रकृति है संसार के अनेक विद्वानों ने अनेक समय में ऐसा कहा है । चीनी समाज के विद्वानों ने अपनी सुंदर भाषा में कहा है कि यह अदल बदल 'यिन' और 'यांग' का है । यिन गतिहीन और यांग गतिशील । चीनी लिपि में यिन इस प्रकार लिखा जाता है कि अक्षर के बीच काले बादल सूर्य के चारों ओर फैल कर उसे ढक रहे हैं और यांग इस प्रकार लिखा जाता है कि निर्मल सूर्य से चारों ओर किरणें फैल रही हैं । चीनी वर्णमाला में यिन पहले आता है । हम उसमें देखते हैं कि तीन लाख वर्ष पहले आदिम मनुष्य उस कगार पर पहुँच गया है और यांग सभ्यता में प्रवेश करने के पहले मनुष्य इस काल के अट्ठानबे प्रतिशत समय तक आराम करता रहा । आगे हमें उस स्पष्ट तत्त्व को खोजना है जिससे मानव समाज में फिर गति आयी और पहले हम उन दो राहों में प्रवेश करेंगे जो बन्द गली निकलेंगी ।

(२) प्रजाति (रेस)

यह स्पष्ट और निश्चित तथ्य है कि 'यिन' के रूप में जो मनुष्य का आदिम समाज था वह गत ६००० वर्षों में यांग के सभ्य समाज के ऊपर चट्टान पर चला तो उसके कारण यही हो सकते हैं कि जिन लोगों में गति हुई उन मनुष्यों में विशेष गुण थे अथवा जिस वातावरण में उन्होंने उन्नति की उसमें कोई विशेषता थी अथवा दोनों के घात प्रतिघात में कोई विशेष बात थी । हम पहले

यह विचार करेंगे कि जिन बातो की खोज हम कर रहे है वे इनमें से किसी में मिल जायें। क्या यह सम्भव है कि सभ्यता की उत्पत्ति इस कारण हुई हो कि किसी जाति या प्रजातियो में विशेष गुण रहे हो ?

प्रजाति मानव समाज के उस विशेष वर्ग को कहते है जिसमे कोई विशेष गुण हो और वह वंशानुगत हो। प्रजाति के जिन गुणो की हम कल्पना करते है वे मानसिक अथवा आत्मिक है और वे कुछ समाजो में जन्मजात होते है। किन्तु मनोविज्ञान, और विशेषत सामाजिक मनोविज्ञान अभी बाल्यकाल में है। जब हम सभ्यता की प्रगति में प्रजाति को एक कारण मानते है तब हम यह स्वीकार करते है कि विशेष मानसिक गुणो और भौतिक विशेषताओ में परस्पर सम्बन्ध है।

प्रजाति सिद्धान्त के पश्चिमी देश के हिमायती जिस भौतिक गुण पर साधारणत जोर दिया करते है वह रंग है। ऐसा अनुमान किया जा सकता है कि आत्मिक और मानसिक श्रेष्ठता और खाल का रंगीन न होना एक दूसरे से सम्बन्धित है। यद्यपि जीवन विज्ञान की दृष्टि से ऐसा सम्भव नही मालूम होता। सभ्यता के प्रजाति वाले सिद्धान्तो में सबसे प्रसिद्ध वह है जिसमें सफेद चमडे वाले, पीले बाल वाले (जनथ्रोटिक्स) नीली भूरी आख वाले (ग्लाकोपियन) और लम्बे सिर वाले (डालिकोसिफ्रासिस) मनुष्यो को सबसे ऊँचा माना जाता है जिन्हे कुछ लोग नार्डिक मानव कहते है और जिन्हें निट्शे ने 'स्वर्णकेश वाला पशु' (द ब्लाड बीस्ट) कहा है। ट्यूटानिक बाजार में इस मूर्ति का मूल्य जाचना उचित होगा।

सबसे पहले नार्डिक मानव की उच्चता फ्रास के एक रईस काम्टे डि गोबिनो ने उन्नीसवी शती के आरम्भ में प्रकट की थी। इस 'स्वर्णकेश वाले पशु' की उच्चता फ्रास की क्रान्ति के समय के विवाद की एक घटना के कारण सामने आयी थी। जब फ्रास के रईसो की जागीर छीनी जा रही थी और उन्हें देश से निकाला जा रहा था या फाँसी दी जा रही थी तब क्रान्तिकारी दल के पण्डितो को तब तक चैन नही मिलता था जब तक वे उस समय की घटनाओ को शास्त्रीय रूप नही दे देते थे। उन्होने घोषणा की कि 'गाल लोग जो चौदह शतियो तक पराधीनता में रहे है अब अपने फ्रास विजेताओ को राइन के पीछे अधकार में खदेड रहे है जहा से वे जनरेला के समय आये थे और इन बर्बरो के जबरदस्ती अधिकार के बावजूद गाल की धरती पर अपना अधिकार जमा रहे है जो सदा से अपनी ही रही।

इस ऊलजलूल बात का गोबिनो ने और भी अधिक ऊल्जलूल उत्तर दिया। उसने कहा 'मै आप की बात स्वीकार करता हूँ। मै यह मान लेता हूँ कि फ्रास की जनता गआल की वंशज है और फ्रास के रईस फ्राको के वंशज है और दोनो के शारीरिक तथा मानसिक विशेषताओ में सम्बन्ध भी है। तो क्या आप सचमुच यह समझते है कि गआल सभ्यता के प्रतीक है और फ्राक बर्बरता के ? गआल की सभ्यता कहाँ से आयी ? रोम से। रोम कैसे महान् बना ? उसी नार्डिक रक्त के आरम्भ से जिस फ्राकी रक्त ने हमारे शरीर में प्रवेश किया। प्रारम्भिक रोमन लोग और उसी प्रकार प्रारम्भिक यूनानी—वे एकीयन जिनका वर्णन होमर ने किया है—वे पीले बाल वाले विजेता थे जो उत्तर के शक्तिशाली लोगो के वंशज थे और जिन्होने दुर्बल कर देने वाले मध्य सागर के किनारे के कमजोर निवासियो पर अपना प्रभुत्व जमाया। कुछ दिनो के बाद उनके रक्त में मिश्रण हुआ और उनकी नस्ल दुर्बल हो गयी और उनकी शक्ति और वैभव

का ह्रास हो गया। फिर वह समय आया कि उत्तर से पीले बाल वाले विजेताओ का दल उनकी रक्षा के लिए आया और उसने सभ्यता को फिर से जीवित किया। ये फ्राक लोग थे।"

यह उन तथ्यो की शृखलाओ का मजेदार वर्णन है जिसका हमने पहले हलेनी और फिर पश्चिमी सभ्यता की उत्पत्ति का दूसरे ढग से किया है। उसका चतुराई से भरा राजनीतिक मजाक इसलिए जँचा कि उस समय एक खोज हुई थी और गोबिनो ने उससे लाभ उठाया। खोज यह थी कि सारे यूरोप की सभी जीवित भाषाएँ तथा ग्रीक और लटिन और ईरान और उत्तरी भारत की सभी जीवित भाषाएँ तथा क्लासिकी ईरानी और क्लासिकी सस्कृत एक दूसरे से सम्बन्धित है और एक बडे भाषा परिवार के सब अग ह। यह ठीक ही परिणाम निकाला गया था कि आरम्भ में कोई एक मौलिक भाषा रही होगी जसे 'आय या इण्डोयूरोपियन' और उसी भाषा से सब भाषाएँ निकली हागी। इसका गलत परिणाम यह निकाला गया कि जिन लोगो में ये भाषाएँ प्रचलित थी उनका भौतिक सम्बन्ध भी उतना ही है जितना इन भाषाओ का और वे लोग किसी आदि 'आय' अथवा 'इण्डो यूरोपियन' जाति के वशज ह जो अपने आदि निवास स्थान से पूव पश्चिम, उत्तर-दक्खिन विजय करते हुए फल गये और यह जाति वह थी जिसने जरथुस्ट और बुद्ध जसी धार्मिक प्रतिभाएँ उत्पन्न की और जिसने यूनान की कलात्मक प्रतिभाओ को तथा रोम की राजनीतिक प्रतिभाओ को जन्म दिया और जिसने हम लोगो के समान महान जातियो को जन्म दिया। इतना ही नही, यह भी कहा जाता है कि मानव सभ्यता की प्राय सभी उपलब्धियाँ इसी जाति के द्वारा हुई।

इस मनमौजी फ्रासीसी ने जो घरहा दौडाया उससे जमनो की मजबूत टाँगे बाजी मार ले गया। जमन शब्द शास्त्रियो ने इण्डो-यूरोपियन शब्द के स्थान पर इण्डो-जमन शब्द बठाया और इस कल्पित जाति का निवास प्रशा का राज्य-क्षेत्र निर्धारित किया। १९१४–१८ के युद्ध के कुछ पहले एक अग्रेज हाउस्टन स्टुवट चम्बरलेन ने जिनका प्रेम जमनी से हो गया था एक पुस्तक लिखी जिसका नाम था—'द फाउण्डशस आव द नाइनटीन्थ सेंचुरी' जिसम इण्डो जमन लोगो में उसन दान्ते और ईसामसीह का भी नाम रखा।

अमरिकनो ने भी इस 'नार्डिक मानव' का उपयोग किया। १९१४ के पहले पच्चीस वर्षों में बहुत से दक्षिण यूरोप निवासी अमरिका में प्रवास कर गये। कुछ समय मडिसन ग्राट तथा लाथाप स्टाडड ऐसे लेखको ने कहा कि इस प्रकार का प्रवास रोकना चाहिए जिससे सामाजिक मान्यताओ की शुद्धता अक्षुण्ण रहे। वे यह शुद्धता अमरीकी सामाजिक मान्यताओ की नही बल्कि नार्डिक जाति की अमरीकी शाखा की चाहते थे।

ब्रिटेन का इसरायल्वाद का सिद्धान्त भी इसी प्रकार का था। केवल भाषा दूसरी थी और इसमें काल्पनिक इतिहास का एक विचित्र धम-स्थान स समर्थन किया गया था।

विचित्र बात यह है कि हमारी सभ्यता के प्रजातिवाद के प्रचारक इस बात पर जोर देते है कि गोरा चमडा आध्यात्मिक महत्ता का चिह्न है और दूसरा प्रजातियो स यूरोपीय प्रजाति महान् है तथा नार्डिक प्रजाति दूसरी यूरोपीय प्रजातियो स महान् है किन्तु जापानी दूसरा भौतिक प्रमाण उपस्थित करते ह। जापानियो के शरीर पर बाल नहा होने उनके पडोसी उत्तरी द्वीप में एक आदिम जाति रहती है जो दूसरे प्रकार की है। वह प्राय सामान्य यूरोपियनो के समान होती है जिनके बाल वाले तनु बहुत ह। इसलिए स्वभावत बाल का न होना वे आध्यात्मिक

महत्ता का चिह्न मानते है। यद्यपि उनका दावा भी उतना ही निराधार है जितना हमारा गोरे चमडे वाला दावा फिर भी, हम कह सकते है कि ऊपरी ढग से उनका दावा ठीक जान पडता है क्योकि जहाँ तक बाल का सम्बन्ध है बिना बाल वाला आदमी अपने भाई बन्दरो से बहुत दूर है।

मानव-जाति के इतिहासकारो ने (एथनोलोजिस्ट) सफेद रग के मनुष्यो को शारीरिक गुणो के अनुसार विभाजित किया है। ये है, जैसे लम्बे सिर या गोल सिर वाले, गोरे चमडे या काले चमडे वाले तथा इसी प्रकार और। उन्होने सफेद 'प्रजातियो' के तीन प्रकार बताये है नार्डिक, आल्पीय तथा मध्यसागरी। इस कथा का जो भी मूल्य हो हम इस बात पर विचार करेंगे कि इन जातियो ने सभ्यता के निर्माण में क्या योगदान किया है। नार्डिक प्रजातियो ने चार या सम्भवत पाँच सभ्यताओ का निर्माण किया है। वे है भारतीय (इडिक), हेल्लेनी, पश्चिमी, रूसी परम्परावादी ईसाई और सम्भवत हिताइत। आल्पीय जातियो ने सात सभ्यताओ का अथवा सम्भवत नौ का निर्माण किया है—सुमेरी, हिताइत, हेलनी, पश्चिमी परम्परावादी ईसाई तथा उसकी रूस की दोनो शाखाएँ, ईरानी और सम्भवत मिस्री और मिनोइ। मध्य सागरी प्रजाति ने दस सभ्यताओ का निर्माण किया है—मिस्री, सुमेरी, मिनोई, हलेनी, पश्चिमी परम्परावादी इसाई समाज का मूल रूप, ईरानी, अरबी और बबिलोनी। मानव जाति के भूरे वर्ग ने (ब्राउन)—जिसमें भारत की द्रविड और इण्डोनेसिया की मलय प्रजातियाँ शामिल है—दो सभ्यताओ का निर्माण किया है—भारतीय और हिन्दू। पीली प्रजाति ने तीन सभ्यताओ का निर्माण किया है—चीनी और सुदूर पूर्व की चीनी और जापानी सभ्यताएँ। अमरीका की रक्त वर्ण की प्रजाति ने चार अमरीकी सभ्यताओ का निर्माण किया है। केवल काली जातियो ने अभी तक किसी सभ्यता का निर्माण नही किया है। सफेद प्रजातियाँ इस विषय मे अगुआ है, किन्तु यह याद रखना चाहिए कि बहुत सी सफेद जातियाँ ऐसी है जिन्होने काली जातियो के समान ही सभ्यता के निर्माण में कोई योगदान नही किया है। यह जो विभाजन किया गया है उससे यदि कोई तथ्य की बात निकलती है तो यह कि हमारी आधी सभ्यताओ के निर्माण में एक से अधिक प्रजातियो का हाथ है। पश्चिमी और हेलनी प्रजातियो मे प्रत्येक ने तीन-तीन सभ्यताओ का निर्माण किया है। यदि सफेद प्रजाति के नार्डिक, आल्पीय और मध्यसागरी उपजातियो के समान पीली, भूरी और लाल प्रजातियो का भी उप जातियो में विभाजन किया जाय तो हमें पता लगेगा कि इन्होने भी एक से अधिक सभ्यताओ का निर्माण किया है। इन उप विभाजनो का क्या महत्त्व है अथवा ऐतिहासिक और सामाजिक दृष्टि से कभी वे विशिष्ट प्रजातियाँ थी, कहा नही जा सकता। और यह सारा विषय अन्धकार में है।

किन्तु पर्याप्त रूप से कहा जा चुका है जिससे यह सिद्ध होता है कि कोई एक विशिष्ट प्रजाति थी जिसके द्वारा यिन से याग तक अर्थात् गतिहीनता से गतिशीलता की ओर छ हजार वर्ष पहले सभ्यता का विकास ससार के एक भाग से दूसरे भाग की ओर हुआ है।

(३) वातावरण

विगत चार शतियो में हमारे पश्चिमी समाज का जैसा विस्तार हुआ है उसके कारण आधुनिक पश्चिमी विद्वान् इतिहास में प्रजातीय तथ्य को बहुत अधिक महत्त्व देने लगे है। इस विस्तार के कारण पश्चिम के लोग ससार की ऐसी प्रजातियो के सम्पर्क में आये है जो इनसे सस्कृति मे ही नही, शारीरिक गठन में भी भिन्न थे। यह सम्पर्क बहुधा अमित्रता का था।

ऐसे सम्पर्कों का परिणाम यह हुआ कि शारीरिक उत्पत्ति के आधार पर ऊँची और नीची प्रजातियों की भावना उत्पन्न हुई। उन्नीसवीं शती में जब चार्ल्स डारविन तथा और वैज्ञानिक अन्वेषकों ने खोज की तब उसके आधार पर पश्चिम के लोगों में जीव विज्ञान के अनुसार जातियों के बड़े छोटे होने की भावना जाग उठी थी।

प्राचीन यूनानी भी व्यापार के लिए और उपनिवेश बनाने के लिए संसार में फैले, किन्तु उस समय का संसार छोटा था। उसमें संस्कृतियाँ तो अधिक थीं, किन्तु शारीरिक दृष्टि से प्रजातियाँ इतनी अधिक नहीं थीं। यूनानियों की दृष्टि में (जैसे हेरोडोटस) मिस्री और सीरियाइयों में बहुत अन्तर रहा हो और उनके आचार विचार भिन्न रहे हों, किन्तु शारीरिक दृष्टि से वे यूनानियों से उतने भिन्न नहीं थे जितना पश्चिम अफ्रीका का नेग्रो और अमरीका का रक्त वर्ण का मनुष्य यूरोपियनों से है। इसलिए यह स्वाभाविक था कि यूनानियों ने जो सांस्कृतिक अन्तर इन लोगों में पाया उसका आधार शारीरिक और भौतिक उत्पत्ति अर्थात् जातिगत आधार नहीं माना। उन्होंने इस अन्तर का आधार भौगोलिक आवास, धरती और जलवायु को समझा।[1]

एक पुस्तक है 'इन्फ्लुएन्सेज आव एटमास्फियर, वाटर एण्ड सिचुएशन', जो ईसा के पूर्व पाँचवीं शती में लिखी गयी थी और जो वाकराती (हिपोक्रिटीज) परम्परा की औषधियों की पुस्तकों के संग्रह में है। इससे इस विषय पर यूनानियों का मत व्यक्त होता है। उदाहरण के लिए उसमें हम पढ़ते हैं मानव आकृति विभाग का इस प्रकार विभाजन हो सकता है—'जंगल' और जल से भरा हुआ पहाड़ी वर्ग जलहीन और क्षीण मिट्टी के प्रदेश के रहने वाले, दलदली घास वाले क्षेत्र के रहने वाले और उस प्रदेश के रहनेवाले जहाँ जंगल नहीं है और पानी का निकास अच्छा है। उस प्रदेश के रहने वाले जो शैलमय (राकी) धरती और ऊँचाई पर हैं जहाँ पानी भी खूब है, और जहाँ जलवायु के परिवर्तन का अन्तर अधिक है बड़े डील-डौल वाले होते हैं। उनका शरीर कष्टों का सहन करने वाला और साहसी कार्य के उपयुक्त होता है। उन देशों के रहने वाले जो निचले होते हैं जहाँ दलदली घास होती है, उमस होती है जहाँ ठण्डी के बजाय गर्म हवा अधिक चलती है, उष्ण पानी पीने को मिलता है उनके ऊँचे और पतले दुबले नहीं होते बल्कि मोटे, गठे ठिगने और काले बाल वाले होते हैं और उनका रंग भी काला होता है और उनके शरीर में बलगम कम और पित्त अधिक होता है। साहस और सहनशीलता उनके स्वभाव में उतनी नहीं होती, किन्तु संस्थाओं के सहयोग से उनमें यह गुण उत्पन्न हो सकते हैं। अधिक ऊँचाई के रहने वालों का, जहाँ तेज हवाएँ चलती हैं जल की अधिकता है और ऊँचाई-नीचाई है बदन भारी भरकम होता है। उनमें व्यक्तित्व (पुरुषार्थ) की कमी होती है और उनके चरित्र में कायरता और भीरुता होती है। अधिकांश अवस्थाओं में मनुष्य का शरीर और उसका चरित्र देश की भौतिक परिस्थिति के अनुसार बदलते रहते हैं।[2]

१ इस सम्बन्ध में बकर का यूनानियों से सहमत हैं। जिन्होंने 'जान बुल्स अदर आइलैंड' की भूमिका पढ़ी है उन्हें याद होगा कि 'केल्टिक जाति' की कल्पना को वे तिरस्कार से टाल देते हैं और उनका कहना है कि अंग्रेज और आइरिश में जो अन्तर है वह दोनों द्वीपों की आबोहवा के कारण है।

२ हिपोक्रेटीज इन्फ्लुएन्सेज आव एटमास्फियर वाटर एण्ड सिचुएशन—अनुवादक, ए० जे० टायनबी अध्याय १३ और २४ ग्रीक हिस्टोरिकल थाट फ्राम होमर टु दि एज आव हेराक्लिटस—पृ० ११७-८।

किन्तु 'वातावरण का सिद्धान्त' का हेलेनी उदाहरण दो प्रदेशों की तुलना से लिया गया था। एक नील की निचली घाटी के जलवायु का प्रभाव मिस्रियों के शरीर, चरित्र और संस्थाओं पर, दूसरा यूरेशियाई स्टेप के जलवायु का प्रभाव सीथियनों के शरीर, चरित्र और संस्थाओं पर। मानव समाज के विभिन्न भागों में जो मानसिक (बौद्धिक तथा आत्मिक) अन्तर पाया गया है उनके सम्बन्ध में यह बताने की चेष्टा की जाती है कि उनके कारण प्रजाति सिद्धान्त और वातावरण सिद्धान्त बना है। यह मान लिया जाता है कि यह मानसिक अन्तर प्रकृति के भौतिक अन्तर से स्थायी रूप से कारण और कार्य की भाँति सम्बन्धित है। मनुष्य के शरीर की गठन के अनुसार जाति सिद्धान्त बनाया गया और विभिन्न जलवायु तथा भौगोलिक परिस्थितियों में जो समाज रहते हैं उनके अनुसार वातावरण सिद्धान्त बनाया गया। दोनों सिद्धान्तों का सार दो परिवर्तनशील सम्बन्धों पर बनाया गया है। एक में शरीर और चरित्र और दूसरे में वातावरण और चरित्र। यदि इन सिद्धान्तों को स्थापित करना है तो यह प्रमाणित करना होगा कि यह सम्बन्ध स्थायी और अचल है। हमने ऊपर देखा है कि इस परीक्षा में प्रजाति सिद्धान्त नहीं ठहरता और अब हम देखेंगे कि वातावरण सिद्धान्त यद्यपि उतना असंगत नहीं है, फिर भी प्रमाणित न हो सकेगा। हेलेनी सिद्धान्त की परीक्षा हम दो उदाहरणों द्वारा यूरेशियाई स्टेप तथा नील घाटी से करेंगे। हम पृथ्वी पर और भी क्षेत्र ढूढ़ेंगे जो जलवायु तथा भौगोलिक दृष्टि से इनके समान हैं। यदि हम यह देखेंगे कि वहाँ की जनता का चरित्र और उनकी संस्थाएँ भी सीथियन तथा मिस्री लोगों के समान हैं तो वातावरण सिद्धान्त प्रमाणित होगा, नहीं तो वह कट जायेगा।

पहले हम यूरेशियाई स्टेप को लें। यह वह विस्तृत क्षेत्र है जिसके केवल दक्षिणी पश्चिमी भाग से यूनानी परिचित थे। इसके साथ हम अफ्रेशिया (एफ्रेशियन) स्टेप का मिलान करें जो अरब से उत्तरी अफ्रीका तक फैला हुआ है। एशियाई और अफ्रेशियाई समानता के साथ-साथ क्या वे मानव समाज भी समान हैं जो इन दोनों क्षेत्रों में पैदा हुए हैं? उत्तर मिलता है—हाँ। दोनों क्षेत्रों में खानाबदोश समाज उत्पन्न हुए। दोनों क्षेत्रों में जो समानताएँ और अन्तर है उसी के समान उनमें समाजों में भी समानताएँ और अन्तर हैं। अन्तर, जैसे पशुओं के पालने में है। अधिक परीक्षा में यह सम्बन्ध समाप्त हो जाता है। क्योंकि संसार के इस प्रकार के दूसरे प्रदेशों में जैसे उत्तरी अमरीका के 'प्रेयरी', वेनेजुअला के 'लानो', अरजेंटिना के 'पम्पा' और आस्ट्रेलिया की गोचर भूमि में खानाबदोश समाजों का वातावरण है, किन्तु वहाँ उनके निजी खानाबदोश समाज नहीं उत्पन्न हुए। इन क्षेत्रों की समता में सन्देह नहीं क्योंकि आधुनिक काल में पश्चिमी समाज ने अपने उद्यम से इससे लाभ उठाया है। पश्चिमी पशुपालकों (स्टाक मैन) के अग्रगामियों ने, जैसे उत्तरी अमरीका के ग्वाले (काउब्वायज) दक्षिणी अमरीका के 'गाचो' (अमरीका के मूलवासी और यूरोपियनों की सम्मिलित नस्ल) और आस्ट्रेलिया के पशुपालक (कैटलमैन), इन निर्जन प्रदेशों पर कई पीढ़ियों तक दखल जमाये रखा जब नये हल और नयी चक्कियाँ नहीं चली थीं। सीथियनों, अरबों और तातारों की भाँति उनकी ओर भी मानव समाज आकृष्ट हुआ था। अमरीकी और आस्टेलियाई स्टेपों में अवश्य ही शक्तिशाली क्षमता होती यदि कुछ ही पीढ़ियों के लिए समाज के इन अगुओं को जिनके पास कोई खानाबदोशी परम्परा नहीं थी और जो आरम्भ से ही खेती और निर्माण (मनुफैक्चर) के सहारे जीवन-यापन करते थे खानाबदोश बना लेते। यह भी ध्यान देने योग्य है कि पश्चिमी गवेषकों (एक्सप्लोरर)

आकाश, जीयूस जो विजली स धरती पर प्रहार करता है, युरिपिडीज के 'आयन में क्रयूसा और अपोलो, मन (माइक) और काम, ग्रेचेन और फाउस्ट। आधुनिक काल म यह अति परिवर्तनशील कथा पश्चिम में दूसरे रूप मे प्रकट हुई है। हमारे ज्योतिषियो ने ग्रह निकाय (प्लेनेटरी सिस्टम) की उत्पत्ति के सम्बन्ध में इस प्रकार लिखा है जिसमें धम का कितना विश्वास है —

"हमारा विश्वास है कि लगभग बीस अरब साल हुए एक दूसरा तारा अन्तरिक्ष में इधर उधर घूम रहा था। वह सूय के बहुत निकट आ गया। जिस प्रकार सूय और चन्द्रमा के कारण ज्वार उठता है उसी प्रकार सूय के धरातल पर भी ज्वार आ गया होगा। किन्तु जितना छोटा ज्वार छोटे से चाँद के कारण हमारे सागरो मे उठता है उससे वह भिन्न रहा होगा। इस ज्वार के कारण विशाल ज्वार की लहर सूय के चारो ओर फैली होगी। और वह अन्त में उत्तग पवत बन गया होगा। ज्यो ज्यो यह तारा सूय के निकट आता रहा होगा यह ज्वार का पवत ऊचा उठता जाता होगा। इसके पहले कि यह दूसरा तारा लौटने लगे, उसके ज्वार का खिंचाव इतना प्रबल हो गया होगा कि उस पवत के टुकडे-टुकड हो गये होगे। और जिस प्रकार तरगो के ऊपर से पानी की बूदे इधर उधर छहर जाती ह ये टुकडे अन्तरिक्ष में छितरा गये होगे। ये टुकडे अपने पिता के चारो ओर तब से चक्कर लगा रहे हैं। यही छोटे वडे ग्रह ह जिनमे हमारी पृथ्वी भी है।"[१]

इस प्रकार जटिल गणनाओ का पूरा करने के बाद गणितज्ञ ज्योतिषी के मुख स एक बार वही कथा इस रूप में निकली कि सूय की देवी और उसपर बलात्कार करने वाले में सघष हुआ। इसी कथा को अपढ़ लोग पुराने ढग से कहते आये हैं। जिन सभ्यताओ का हम अध्ययन कर रहे है उनकी उत्पत्ति में यह द्वैत शक्ति वतमान है। इसे पश्चिम के एक आधुनिक पुरातत्व वेत्ता ने स्वीकार किया है और उन्होंने वातावरण के प्रभाव से आरम्भ किया है और अन्त में जीवन के रहस्य की अन्त प्रेरणा पर बल दिया है—

"संस्कृति के निर्माण का कुल कारण वातावरण ही नही है—निश्चय ही यह एक प्रमुख तत्त्व है किन्तु एक और भी तथ्य है जो अनिश्चित है और जिसे हम 'एक्स कह सकते है जो अज्ञात राशि है जिसके स्वरूप का आभास मनोवैज्ञानिक है 'एक्स' सबसे स्पष्ट तत्त्व इस विषय में न भी हो तो भी सबसे महत्त्व का है और सबसे अधिक प्रभावशाली है।"[२]

इतिहास के इस अध्ययन मे अतिमानव का यह सघष बार-बार आता है और हमने इसका प्रभाव देखा। आरम्भ में हमने देखा कि किसी समाज के जीवन मे अनेक समस्याएँ एक के बाद एक आती रहती ह। और 'प्रत्येक समस्या किसी अग्नि परीक्षा की चुनौती होती है।

इस कथा अथवा नाटक का कथा विन्यास जो अनेक रूपो और अनेक सन्दर्भो म बार-बार आया है, हमें उसका विश्लेषण करने की चेष्टा करनी चाहिए।

हम दो साधारण लक्षणो से आरम्भ कर सकते ह सघष असाधारण और कभी-कभी विशिष्ट घटना माना जाता है। प्रकृति की स्वाभाविक गति में इसके कारण जो बडा व्यवधान पड जाता है उसी के अनुसार इस सघष का परिणाम भी बहुत बडा होता है।

१ सर जेम्स जीन्स द मिस्टीरियस युनिवर्स, पृ० १ तथा २।
२ पी० ए० मोन्स एन्शेंट सिविलिजेशन्स आव द एण्डीज, पृ० २५–६।

हल्नी पुराण के सरल ससार में दवता लाग मनुष्या की सुदर कयाआ का देखत थ और उनसे स्वतन्त्रतापूवक व्यवहार करते थे । इन विपद्ग्रस्ता की सख्या इतनी है कि काव्या म उनकी सूचिया प्रस्तुत ह । एसी घटनाएँ सनसनीपूण समझी जाती था और इनके फलस्वरूप वीरा का जन्म होता था । इन कथाआ में जहाँ दोना ओर अतिमानव का सघप हुआ है घटना की असाधारणता और उसका महत्त्व बहुत अधिक बढ गया है । जाब की पुस्तक में जिस दिन ईश्वर के पुत्र ईश्वर के सम्मुख आय शतान भी उनके साथ आया । इस घटना को असाधारण रूप में कल्पना की गयी है । इसी प्रकार गोएटे के फाउस्ट में 'स्वग म प्रस्तावना म ईश्वर और मफिस्टाफिलीस का जो सघप आया है वह इसी प्रकार का है । अवश्य ही इस कथा की कल्पना जाब की पुस्तक क आरम्भिक भाग से ली गयी है । इन दोना नाटका में स्वग में जा सघप हुआ है उसका परिणाम पथ्वी पर महत्त्वपूण है । कल्पना की भाषा में जाब और फाउस्ट की जो व्यक्तिगत कठार परीक्षाएँ हुई ह वे मानवता की कठोर परीक्षाआ की रूपक हैं । धम की भाषा में यही महान् परिणाम जा अतिमानव के सघर्षों से उत्पन्न हुए उत्पत्ति की पुस्तक (बुक आव जेनसिस) और नयी बाइबिल में चित्रित किया गया है । जेहावा और सप के सघप के फलस्वरूप आदम और हौवा का अदन क बाग से निकाला जाना मनुष्य के पतन का ही चित्र है । तभी बाइबिल में ईसा की यन्त्रणा मानवता के उद्धार का रूपक है । दो सूर्यों के सघप से हमार ग्रह निकाय की उत्पत्ति जिसकी कल्पना हमार आधुनिक ज्योतिषी ने की है उस सम्बन्ध में भी उसका कहना है कि यह अदभुत और असाधारण घटना है ।

प्रत्यक कथा का आरम्भ पूरी यिन अवस्था अर्थात् समाज के गतिहीन रूप स होता है । फाउस्ट का ज्ञान पूण है जाब आनन्द और भलाई में पूण है आदम और हौवा आनन्द और अबोधता का जीवन बिताते ह ग्रेचेन और डेवी तथा और कुमारियाँ पूण रूप से सुदर और पवित्र ह । ज्योतिषी के विश्व मे सूय भी पूण पिण्ड है और अपने वृत्त म एक ढग से बराबर चलता रहता है । जब यिन की स्थिति पूरी हो गयी तब याग' की ओर गति होती है । किन्तु इस गति का प्रेरक कौन है । जब कोई स्थिति अपने ढग से पूण है तब उसमें परिवतन किसी बाहरी प्रेरणा अथवा शक्ति से ही सम्भव है । यदि भौतिक सन्तुलन की स्थिति है तो दूसरे तारे की आवश्यकता पडती है । यदि मानसिक माक्ष अथवा निर्वाण की स्थिति है तो मच पर दूसरे अभिनेता को आना पडता है जो सशय का वातावरण उपस्थित करन मन में नये विचारा को उत्पन्न करता है और जा असन्तोष, कष्ट, भय अथवा विराध के भाव उत्पन्न करके हृदय में नये भावा को प्रेरित करता है । बाइबिल की उत्पत्ति की पुस्तक (जेनेसिस) मे सप की यही भूमिका है । जाब की पुस्तक मे शतान की फाउस्ट में मेफिस्टाफिलीस की, स्कण्डीनेवियाई भूमिकाएँ इसी प्रकार की ह । कुमारी कन्या की कथाआ में ईश्वरीय प्रेमियो की भी कथा इसी प्रकार है ।

विज्ञान की भाषा में हम यह कह सकते ह कि आक्रमणकारी तत्त्व गतिहीन तत्त्व को इस प्रकार शक्ति उत्पन्न करने का प्रेरित करता है जिसस शक्तिशाली सजनात्मक परिवतन हो सके । पुराण और धम के रूप में जो शक्ति यिन स्थिति से याग स्थिति में परिवर्तन करती है वह ईश्वर के विश्व में शतान का आक्रमण है । पुराणा में इस प्रकार की कथाएँ बहुत अच्छी तरह से बनायी जा सकती ह क्योकि तक द्वारा जो असगति उत्पन्न हाती है उसकी ऐसी कथाओ में गुजाइश नहीं है । तक के आधार पर देखा जाय ता यदि ईश्वर का विश्व पूण है तो शतान उसके हरबा

कसे रह सकता है और यदि शैतान का अस्तित्व है तो जिस पूणता को वह नष्ट करन आता है वह पूण कहा से हुई । इस प्रकार का विरोध जा तक की कसौटी पर नही ठहर सकता कवि और ईश दूता (प्रोफेट) की कल्पनाओ से इन तर्कों से मुक्त हो जाता है और वह ईश्वर को इतना सवशक्तिमान् बनाता है कि वह दो महत्वपूण सीमाओ में बँध जाता है ।

पहली सीमा यह है कि जिसका ईश्वर ने निर्माण किया वह पूण हो गया अब उसके आगे काई सजनात्मक शक्ति की गुजाइश नही रह गयी । यदि ईश्वर अति उत्कृष्ट गुणो से युक्त है ता उसकी सष्टि सवश्रेष्ठ है फिर श्रेष्ठता से श्रेष्ठना की ओर कैसे जा सकता है । दूसरी सीमा ईश्वर की उस शक्ति में है कि जब बाहर से नयी सृष्टि का अवसर आता है तो वह उसे स्वीकार करन के लिए विवश होता है । जब शतान उसे चुनौती देता है तब उसे स्वीकार करना ही पडता है । ईश्वर को यह विकट परिस्थिति स्वीकार करनी पडती है क्योकि यदि वह उसका सामना न करे तो वह ईश्वर नही रह जाता ।

यदि तक के अनुसार इस प्रकार इश्वर सवशक्तिमान् है तो क्या पौराणिक दष्टि से भी यह अजेय है ? यदि वह शैतान की चुनौती स्वीकार करता है तो क्या यह आवश्यक है कि वह सग्राम में विजयी भी होगा । युरिपिडीज के हिपोलाइट्स नाटक में जहा आरटिमिस ईश्वर की भूमिका में है और अफ्रोडाइट शैतान की भूमिका में है, आरटिमिस लडने से इनकार नही करता, किन्तु उसकी पराजय निश्चित है । ओलिम्पियन देवताओ के सम्बन्ध क्रान्तिकारी ह । उपसहार म आरटिमिस इसी बात पर सन्तोप करती है कि अफ्रोडाइट के स्थान पर एक दिन वह स्वय शतान की भूमिका में आयगी । इस स्थिति में परिणाम सजन नही, विनाश है । स्केण्डेनेवियाई सस्करण में रागनेराक में भी विनाश ही परिणाम हुआ जब देवता और दैत्या ने एक दूसरे का सहार कर दिया । यद्यपि वालसपा के लेखक की अद्वितीय प्रतिभा द्वारा यह दिखाया गया है कि सिबिल अधकार को विच्छेद कर उसके पार नया प्रकाश देखती है । यह कथा एक दूसरे रूप मे यह है कि चुनौती के बाद जा सग्राम हाता है उसमें शैतान विजयी नही होता और वह स्वय हार जाता है । जिस क्लासिकी पुस्तक स यह दाव वाला विषय लिया गया है वह जाव की पुस्तक और गोएट का फाउस्ट है ।

गोएटे के नाटक में यह बात स्पष्ट है । स्वग म जब ईश्वर ने मेफिमटोफिलीस की चुनौती स्वीकार कर ली तब पृथ्वी पर मेफिमटोफिलीस और फाउस्ट स आपस में इस प्रकार शत तय हुई—

"फाउस्ट—शान्त हो, और चुप रहो ! यह सब
मेरे लिए नहा है—म न उन्हें मागता हूँ न खाजता हूँ
यदि म कभी आलस्य की शय्या पर—
लेटू और आराम करूँ—तब मेरे लिए
वह समय आये कि सदा के लिए सो जाऊँ
तुम मुझे झूठ और चाटुकारिता से—
आत्मतुष्टि की मुसकान से धाखा नही दे सकते,
तुम मुझे शान्ति की प्रवचना से छल नही सकते
इसलिए आओ इस जीवन के आज अन्तिम दिवस पर
तुम्हारा स्वागत करता हूँ

तो आओ बाजी लग जाय ।

मफिसटोफिलीस—स्वीकार है

फाउस्ट—मैं भी स्वीकार करता हूँ सौदा पक्का हो गया

यदि म कभी शान्ति से बठू

और शान्ति की सुखद विस्मृति म सोऊ

और एसे आनन्दमय अवसर का स्वागत करूँ

और उस सुख में अपना समय बिताऊँ

तो म अपनी इच्छा से

अपना विनाश स्वीकार करता हूँ ।

सभ्यता की उत्पत्ति की समस्या का इस पौराणिक कथा से इस प्रकार सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है कि फाउस्ट जब दाँव स्वीकार करता है तब वह उस चट्टान पर सोने वालो के समान है और जो बहुत दिनो तक अकमण्य रहे ह और अब चट्टान पर से उठे ह और ऊपरी चट्टान की ओर चढ रहे ह । हमने जो उपमा दी है उसकी भाषा में फाउस्ट यह कह रहा है मने यह चट्टान छोडने का निश्चय कर लिया है और ऊपर नयी चट्टान की खोज में चढ रहा हूँ । म जानता हूँ कि इस प्रयत्न में यह स्थान छोड रहा हूँ जहाँ सुरक्षित रहा फिर भी सफलता की सम्भावना में गिर पडने और नष्ट हो जाने का खतरा उठाऊँगा ।

गोएटे वाली कथा में साहसी चढने वाला अनक खतरो और विफलताओ की कठिनाइयाँ झलता हुआ ऊपर की चट्टान पर चढने में सफल होता है । नयी बाइबिल में भी उसी प्रकार का परिणाम है जिसमें दोनो विरोधी दूसरी बार सघष करते हैं । उत्पत्ति की पुस्तक (जेनेसिस) के मूल रूप में सप और जेहोवा के सघष का वही परिणाम है जो हिपोलाइटस में आर्टिमिस और अफ्रोडाइट के सघष का परिणाम होता है ।

जाब की पुस्तक फाउस्ट और नयी बाइबिल में स्पष्ट रूप से दिखलाया गया है कि शतान विजयी नही हो सकता । जब शतान ईश्वर के काम में विघ्न डालता है तब वह ईश्वर के काय को विफल नही करता बल्कि उसके काय में सहायक होता है । ईश्वर परिस्थिति का मालिक रहता है और शतान को लम्बी रस्सी प्रदान करता है जिससे वह स्वय फाँसी लगा लेता है । तो क्या शतान को धोखा दिया जाय ? क्या ईश्वर न एसी बाजी स्वीकार की जिसे वह जानता था कि हारेगा नही ? यदि एसा है तो यह अनुचित बात होगी और सारा मामला पाखण्ड होगा । एसा सघष जो वास्तव में सघष नही है उससे सघष का फल नही निकल सकता क्योकि इसी सघष द्वारा सृष्टि में परिवतन होता है और यिन से याग की ओर प्रगति होती है । सम्भवत इसकी व्याख्या यह होगी कि शतान जो चुनौती देता है और जिसे ईश्वर स्वीकार करता है उसमें सृष्टि का कवल एक अश ही सकट में पडता है सारी सृष्टि नहीं । यद्यपि केवल एक अश की बाजी है और सारी सृष्टि की नही फिर भी जिस अश में परिवतन होगा और जिस पर विपत्ति आयगी उसका प्रभाव पूण सृष्टि पर पड बिना नही रह सकता । पौराणिक भाषा में जब ईश्वर की एक सृष्टि वस्तु शतान के पजे में आ जाती है तो ईश्वर स्वय एसा अवसर प्राप्त करता है कि ससार का फिर स निर्माण करे । शतान के विघ्न डालने के कारण जिसमें वह सफल हो या असफल—क्योकि दोनो सम्भव है—वह दिन म याग परिस्थिति उत्पन्न कर देता है जिसके लिए ईश्वर इच्छा करता है ।

जहा तक मानवी अभिनेता का प्रश्न है प्रत्येक नाटक का मूल कष्ट ही है चाहे अभिनेता ईसामसीह हो या जाब या फाउस्ट या आदम और हौवा । अदन के बाग में आदम और हौवा का जो चित्रण है वह इन अवस्था की यादगार है जब आदिम मानव फल एकत्र करने वाली सामाजिक व्यवस्था में पहुँचा था । यह अवस्था उस समय आयी जब मनुष्य ने पृथ्वी के पशु तथा वनस्पति जगत् पर विजय प्राप्त कर ली थी । ज्ञान के वृक्ष से अच्छाई और बुराई का फल खाने से जो पतन हुआ वह उस चुनौती के स्वीकार करने का प्रतीक है जिसमें इस सगठन को छोडकर विघटन की चुनौती स्वीकार की गयी जिसके फलस्वरूप नया सगठन हो या न हो । आदम का बाग से निकाला जाना और ऐसे वैरपूर्ण जगत में आना जहाँ कष्ट सहकर स्त्री सतान उत्पन्न करें और पुरुष परिश्रम द्वारा अपना भोजन उत्पन्न करें, वह अग्नि-परीक्षा है जिसे सर्प की चुनौती के कारण स्वीकार करना पडा । इसके बाद आदम और हौवा का शारीरिक सभोग सामाजिक सृष्टि के लिए था । परिणाम स्वरूप दो पुत्र उत्पन्न हुए जो दो नवजात सभ्यताओ के स्वरूप हैं एबेल भेड पालने वाला की और कन खेत जोतने वाला की ।

हमारे ही युग में एक विद्वान जिन्होने मानवीय जीवन पर भौतिक वातावरण के प्रभाव का बहुत गहरा अध्ययन किया है, यही बात अपने ढग से कहते है —

युगो पहले नगे गृह विहीन और आग का ज्ञान न रखने वाले असभ्यो का एक झुड ऊष्ण कटिबध के अपने गर्म निवास को छोडकर उत्तर की ओर वसन्त ऋतु से लेकर ग्रीष्म ऋतु तक बराबर चलता गया । इस झुड के लोगो ने यह अनुमान नही किया था कि हम निरन्तर गर्म रहने वाले प्रदेश को छोड रहे हैं । इस बात का अनुभव उन्हे तब हुआ जब सितम्बर की रात में उन्हें कष्ट दायक ठड का सामना करना पडा । यह कष्ट दिन प्रतिदिन बढ़ता गया । इस कष्ट का कारण उन्हें मालूम न था । इसलिए अपनी रक्षा के लिए वे इधर-उधर गये । कुछ दक्षिण की ओर चल गये, मगर बहुत थोडे अपने पुराने निवास स्थान पर पहुँच सके । वहाँ उन्होने वही पुराने ढग का जीवन आरम्भ किया और उनके वशज आज भी अपढ और असभ्य हैं । जो लोग दूसरी दिशाओ में गये उनमें से एक समूह को छोडकर शेष सब नष्ट हो गये । यह जानकर कि कठोर ठडी हवा से हम बच नही सकते इस समूह के लोगो ने मनुष्य के दिमाग की सबसे ऊँची शक्ति आविष्कार की शक्ति, का प्रयोग किया । कुछ धरती को खोदकर उसके नीचे रहने लगे । कुछ ने टहनियो और पत्तियो को एकत्र किया और उनसे झोपडे और गर्म बिस्तर बनाये और कुछ ने अपने को उन पशुओ की खाल से लपेटा जिन्हें उन्होने मारा था । इन असभ्य लोगो ने सभ्यता की ओर अनेक कदम उठाये । जो नगे थे उनके तन ढक गये, जो घर विहीन थे उनको आश्रय मिला, जो असावधान थे उन्होने मास को और फलो को सुखाना और उसे सुरक्षित रखना सीखा और अत में अपने को गरम रखने के लिए आग जलाने का आविष्कार उन्होने किया । इस प्रकार जहाँ वे समझते थे कि हम नष्ट हो जायेंगे वे सुरक्षित हो गये । कठोर वातावरण से सामजस्य स्थापित करते-करते उन्होने विशाल प्रगति की और ऊष्ण-कटिबध में रहने वाले मनुष्यो को बहुत पीछे छोड दिया ।[1]

[1] एलसवर्थ हटिंगटन सिविलिजेशन एण्ड क्लाइमेट पृ० ४०५-६ ।

इसी कथा को एक वस्तुनिष्ठ विद्वान् ने आज के युग की वैज्ञानिक भाषा में इस प्रकार लिखा है —

प्रगति का एक विरोधाभास यह है कि यदि आवश्यकता आविष्कार की जननी है तो कठोरता पिता है अर्थात् यह दृढ़ता कि हम प्रतिकूल वातावरण में जीवन व्यतीत करते रहेंगे बजाय इसके कि मुसीबतों को कम करेंगे और उस स्थान पर बस जायेंगे जहाँ जीवनयापन सरल होगा। यह केवल संयोग नहीं है कि जिस सभ्यता को हम जानते हैं उसका जन्म चार हिमयुगों में जलवायु, जीव तथा वनस्पति के वातावरण में हुआ। वे अगुआ जो अभी उस स्थिति में पीछे रह गये थे बन्दर हुए वे जब वृक्षवासी जीवन (आरबोरियल लाइफ) निश्चिन्त हो रहा था प्रकृति के नियमों के दास थे तो अगुआ बने रहे किन्तु प्रकृति पर विजय उन्होंने नहीं प्राप्त की। दूसरे जिन्होंने प्रकृति पर विजय प्राप्त की वे मनुष्य हुए। उन्होंने जहाँ बैठने के लिए वृक्ष नहीं थे वहाँ का स्थान बनाया, जब खाने के लिए पके फल नहीं मिलते थे मांस खाने का प्रबन्ध किया। उन्होंने धूप का भरोसा नहीं किया आग और कपड़ों का निर्माण किया उन्होंने अपनी गुफाओं को सुरक्षित किया, अपने बच्चों को प्रशिक्षित किया और उस संसार को बुद्धियुक्त बनाया जो पहले अविवेकी जान पड़ता था।[1]

मानवता की परीक्षा की पहली मंजिल मिथकों तक यह परिवर्तन है जो सत्यात्मक शक्ति द्वारा हुआ है। ईश्वर की सृष्टि मानव द्वारा अपने विरोधी के प्रलोभन से संघर्ष करता है, जिसके परिणामस्वरूप ईश्वर स्वयं अपने सृजन के काम में सफल होता है, वही है। फिर अनेक परिवर्तनों के बाद पीड़ित विजयी नेता बन जाता है। ईश्वरीय नाटक में मानवी नेता ईश्वर की इसी प्रकार सेवा नहीं करता कि वह उसे अपनी सृष्टि के पुनर्निर्माण की शक्ति प्रदान करता है वह मनुष्यों की भी सेवा इस प्रकार करता है कि वह उनके आगे बढ़ने के लिए रास्ता दिखाता है।

(२) पौराणिक कथा के आधार पर समस्या

अदृष्ट तत्त्व

पौराणिक कथा के प्रकाश में संघर्ष और उसकी प्रतिक्रिया के सम्बन्ध में कुछ ज्ञान प्राप्त हुआ है। हमने देखा कि सृजन (क्रिएशन), संघर्ष (एन्काउण्टर) का परिणाम है, और उत्पत्ति (जेनेसिस) अन्योन्यक्रिया (इण्टर एक्शन) की। अब हम उस बात की ओर ध्यान दें जिसकी खोज हमें इस समय करनी है। उस निश्चयात्मक तथ्य की खोज करनी है जिसने विगत छः हजार वर्षों में मानव को प्रथाओं के एकीकरण (इण्टेग्रेशन आव कस्टम्स) को छिन्न भिन्न करके सभ्यता की भिन्नता की ओर मोड़ा है। हम अपनी इक्कीस सभ्यताओं के आरम्भ को क्रमबद्ध रूप में देखें और आनुभविक (एंपिरिकल) परीक्षा से समझें कि संघर्ष और प्रतिक्रिया की संकल्पना से जो हम खोज रहे हैं उसका कुछ अधिक सन्तोषजनक उत्तर मिलता है, कि कुल और वातावरण की प्राक्कल्पना (हाइपोथेसिस) से, जिसकी परीक्षा हमने की और जो ठीक नहीं उतरी।

इस नये सर्वेक्षण में हम कुल और वातावरण का विवेचन करेंगे किन्तु नयी दृष्टि से। हम सभ्यता की उत्पत्ति के किसी ऐसे सरल कारण की खोज नहीं करेंगे जिसके फलस्वरूप सब समय और सब स्थानों में एक ही परिणाम निकलता है। हमें इस बात पर आश्चर्य नहीं होना चाहिए

१ जे० एल० मायर्स : हू वेयर द ग्रीक्स, पृ० २७७–७८।

यदि सभ्यताओ की उत्पत्ति में समान प्रजाति या समान वातावरण से एक जगह नयी सभ्यता की उत्पत्ति होती है और दूसरी जगह नही होती । हम अब प्रकृति की समानता की वैज्ञानिक अभिधारणा (पोस्चुलेट) को आधार नही मानगे । अभी तक हमने इस सिद्धान्त को माना है क्योंकि हम वैज्ञानिक दृष्टि से इस समस्या पर विचार करते रहे कि सभ्यताओ की उत्पत्ति निर्जीव शक्तियो की गति की क्रिया है । हम इस बात को स्वीकार करने के लिए अब तैयार हैं कि यदि प्रजातीय तथा वातावरण सम्बन्धी तथा और सभी वैज्ञानिक सामग्री का ज्ञान भी हमें हो तब भी हम यह भविष्यवाणी नही कर सकते कि इन सामग्रियो के घात प्रतिघात का परिणाम क्या होगा । जिस प्रकार कोई सैनिक विशेषज्ञ किसी युद्ध का परिणाम नही बता सकता चाहे उसे दोनो सेनाओ के सेनापतियो की प्रवृत्ति तथा साधना के बारे में 'आन्तरिक ज्ञान' भी हो । अथवा जिस प्रकार ब्रिज का विशेषज्ञ नही बता सकता कि परिणाम क्या होगा चाहे उसे सबके हाथो के ताशो का पता हो ।

इन दोनो उदाहरणो में जानकार 'आन्तरिक ज्ञान' ठीक-ठीक परिणाम निकालने के लिए पर्याप्त नही है क्योकि 'आन्तरिक ज्ञान' और सम्पूर्ण ज्ञान एक ही बात नही है । उत्तम से उत्तम जानकार के लिए यह अज्ञात है क्योकि सैनिक अथवा खेलाडी स्वय उस बात को नही जानता । और यह अज्ञात तथ्य इस समस्या को सुलझाने के लिए बहुत आवश्यक है । यह अज्ञात राशि (क्वांटिटी) यह है कि जब अभिनेताओ के सामने कठिनाइयाँ आयेगी तब उनपर क्या प्रतिक्रिया होगी । ये मनोवैज्ञानिक क्षण स्वभावत नापे-तौले नही जा सकते और इसलिए पहले से इनके सम्बन्ध में कुछ कहना असम्भव होता है । और इन्ही पर सघर्ष का परिणाम निर्भर रहता है । इसी कारण बडे से बडे सेनापतियो ने अपनी सफलता के कारणो में इस अज्ञात तत्त्व को स्वीकार किया है । यदि वे क्रामवेल की भाँति धार्मिक हु तो उन्होने ईश्वर को सफलता का कारण बताया है, और नेपोलियन की तरह अधविश्वासी है तो 'ग्रहो' को ।

मिस्री सभ्यता का जन्म

इसके पहले के अध्याय में हमने यह कल्पना की थी कि वातावरण गतिहीन तथ्य है वातावरण सिद्धान्त के मानने वाले हेलेनी प्रणेताओ का भी यही विचार था । विशेषत 'ऐतिहासिक' काल में अफ्रेशियन स्टेप तथा नील की घाटी की भौतिक स्थिति सदा एक समान रही है । अर्थात आज भी वह वैसी है जैसी चौबीस शती पहले जब यूनानियोने इस सिद्धान्त को बनाया, किन्तु वास्तविक बात यह है कि ऐसा नही है । जब उत्तरी यूरोप हाज पवत तक बर्फ से ढका था और आल्प्स तथा पिरेनीज ग्लेशियर से ढका था, आर्कटिक प्रदेश के भारी दबाव के कारण अतलान्तिक का वर्षा-तूफान दक्षिण की ओर मुड गया । जो चक्रवात (साइक्लोन) मध्य यूरोप में बहता था और लेबानन होते हुए जहा उसके जल का निपात नही होता था मोसोपोटामिया होते हुए अरब पार करते हुए फारस और भारत में पहुँचता था । शुष्क सहारा में उन दिनो बराबर वृष्टि होती थी । उससे और पूरब यही नही कि आज से अधिक पानी बरसता था बल्कि और जाडे में ही नही वर्ष भर वर्षा होती थी ।

उन दिनो उत्तरी अफ्रीका अरब फारस और सिन्ध की घाटी में हरे भरे घास के मैदान थे जसा कि आज भूमध्यसागर के उत्तर में है । उस समय फ्रास और दक्षिणी इग्लैड में मैमथ,

बाल वाले गडे और बारह सिंहे विचरते थे। उत्तरी अफ्रीका में वस जतु पाय जाते थ जस इस समय रोडेसिया में जबेसी के किनारे पाये जाते ह।

उत्तरी अफ्रीका और दक्षिणी एशिया के घास क मदाना म मनुष्यो की उतनी ही घनी आबादी थी जितनी यूरोप के बर्फीले स्टेप पर। यह आशा करना उचित होगा कि ऐसे अनुकूल तथा स्फूर्तिप्रद वातावरण में मनुष्य अधिक उन्नति करेगा बजाय बर्फीले उत्तर के प्रदेश के।[१]

किन्तु हिमकाल के बाद अफ्रशियन क्षेत्र में महान् भौतिक परिवतन होन लगा और वह सूखने लगा। और दो या अधिक सभ्यताओ न इस क्षेत्र में साथ-साथ जन्म लिया, जिस क्षेत्र में, पहले ससार क अय बसे हुए क्षेत्रो क समान पुरापापाणिक (पलियलिथिक) काल का आदिम समाज था। हमारे पुरातत्त्ववेत्ता कहते हैं कि अफ्रेशिया का यह सूखना एक प्रकार की चुनौती थी जिसका परिणाम इन सभ्यताआ का जन्म था। अब हम क्रान्ति के द्वार पर ह और शीघ्र ही हमको ऐसे मनुष्य मिलेंग जो पशुआ को पालकर और अनाज बोकर अपना भोजन स्वय उत्पन्न करेंगे। इस क्रान्ति का और उस भौतिक परिवतन का सम्बध निश्चित है जब उत्तरी ग्लशियर गल गये और उसके फलस्वरूप यूरोप पर आर्कटिक का उच्च दबाव कम होने लगा और अतलान्तिक का बफ-तूफान दक्षिणी भूमध्यसागरी प्रदेश से मध्य यूरोप की ओर मुड गया, जसा इस समय है।

इस प्रकार की घटना से पहले क घास के मदान के रहने वालो की बुद्धि को बहुत परिश्रम करना पडता

जसे-जसे यूरोपीय हिम-नदी छोटी होती गयी और अतलान्तिक चक्रवात की पेटी उत्तर की ओर मुडती गयी और इसके फलस्वरूप यह प्रदेश धीरे धीरे सूखता गया, यहाँ की शिकारी जनता के सामने तीन विकल्प थे। जिस जलवायु के वे अभ्यस्त थे उसके अनुसार अपने शिकार के साथ-साथ वे भी उत्तर या दक्षिण चले जाते अपने पुराने निवास में ही रहते और जो कुछ शिकार सूख को बरदाश्त करके रह जाता उसी पर सन्तोष करके दयनीय जीवन बिताते या इसी पुराने निवास स्थान में ही रह कर वातावरण पर विजय प्राप्त करते और पशुआ को पालते तथा खती करते।[२]

जिन लोगा ने न तो निवास स्थान छोडा न रहन सहन का ढग बदला वे सूखी परिस्थिति का सामना नही कर सके और नष्ट हो गये। जिन लोगो न निवास नही छोडा और रहन-सहन का ढग बदल लिया और शिकारी से गडरिय हो गये वही अफ्रेशियाई स्टेप के खानाबदोश हो गये। उनक काय और उपलब्धिया के सम्बध म इस पुस्तक क अय भाग में विचार किया जायगा। जिन लोगो ने रहन-सहन नही बदला और निवास बदल लिया और सूखे का सामना न करके चक्रवात की पटी क साथ-साथ उत्तर की ओर चले गये उन्हें अनजाने नयी परिस्थिति का सामना करना पडा। अर्थात् उन्हें उत्तर की मौसमी ठण्ड का और जो लोग इस ठण्ड को बरदाश्त कर गय उन्हान नय ढग से जीवन आरम्भ किया। जिन लोगा ने यह सूखा प्रदेश

१ वी० जी० चाइल्ड द मोस्ट एंशेन्ट ईस्ट—अध्याय २।
२ वी० जी० चाइल्ड द मोस्ट एंशेन्ट ईस्ट—अध्याय ३।

छोडा और दक्षिण के मानसूनी प्रदेश की ओर आये वे ऊष्ण-कटिबंध के प्रभाव में आ गये और वहाँ की सदा एक समान रहने वाले जलवायु में जीवन बिताने लगे। पाँचवें ढग के कुछ और लोग थे जिन्होंने सूखी परिस्थिति का सामना किया, इस प्रकार सामना किया कि निवास भी बदला और रहन सहन का ढग भी बदला। यह दोहरा काय बहुत शक्तिशाली था और इसी के कारण उन आदिम समाजो से, जो लोप होने वाले अफ्रेशियाई घास के मैदानों में रहने वाले थे, मिस्री तथा सुमेरी सभ्यताओं का जन्म हुआ।

इन सजनशील समाजों के रहन-सहन में पूरा परिवतन हो गया। खाद्य-सामग्री एकत्र करने और शिकार करने के स्थान पर वे खेतिहर हो गये। यद्यपि उनके निवास की दूरी में बहुत परिवतन नही हुए तथापि जो घास का मैदान वे छोड आये थे और जिस नये भौतिक वातावरण में उन्होंने नया निवास स्थान बनाया था अन्तर बहुत था। जब नील नदी की निचली घाटी के निकट का मैदान लीबियन मरुस्थल में परिवर्तित हो गया और दजला और फरात की निचली घाटी के निकट का घास का मैदान रब्बुल खाली और दश्तेलूत में परिवर्तित हुआ ये साहसी अगुआ लोग—साहस से अथवा विवशता के कारण—घाटी के भीतर उन जगली दलदलों में घुस गये जहाँ कभी मनुष्य ने पाँव नही रखा था और अपनी शक्ति द्वारा इन्हें उन्होंने मिस्र की और शिनार की उपजाऊ भूमि में बदल दिया। उनके पडोसी को, जिन्होंने दूसरा रास्ता पकडा जैसा ऊपर बतलाया गया है निराशा का सामना करना पडा क्योंकि उस पुरातन काल में जब अफ्रेशियाई स्टेप धरती पर स्वर्ग बन रहा था, नील नदी की तराई तथा मेसोपोटामिया ऐसे दलदली जगल थे और उजाड थे जिनमें मनुष्य घुस नहीं सकता था। परिणाम यह निकला कि यह साहसपूर्ण काय ऐसा हुआ कि बहुत कम अग्रगामियों को ऐसी सफलता मिली होगी। प्रकृति के मनमानेपन पर मनुष्य के कार्यों ने विजय प्राप्त की। जहाँ जगल और दलदल थे वे ताल, बाँध और खेत बने। जगलो को हटाकर मिस्र और शिनार की धरती का निर्माण हुआ और मिस्री तथा सुमेरी समाजो का महान् साहसिक जीवन यहाँ से आरम्भ हुआ।

नील की निचली घाटी जहाँ हमारे अगुआ पहुँचे आज जैसा हम उसे पाते हैं उससे बहुत भिन्न थी क्योंकि वहाँ छ हजार वर्षों के मनुष्य के कौशलपूर्ण परिश्रम का प्रभाव अंकित है। किन्तु यदि मनुष्य का कौशल न भी लगा होता और प्रकृति पर ही वह स्थान छोड दिया गया होता तब भी आज से बहुत भिन्न होता। अग्रगामियों के पहुँचने के हजारो वर्ष बाद तक अर्थात प्राचीन और मध्य राज्यकाल में भी हिपोपोटमस, घडियाल तथा अनेक जगली पक्षी निचली घाटी में पाये जाते थे जो आज पहले जलप्रपात के उत्तर में नही पाये जाते, जैसा कि उस युग के चित्रों और मूर्तियों से पता चलता है। जो बात पशु-पक्षियों के सम्बन्ध में है वही वनस्पति के सम्बन्ध में भी है। यद्यपि सूखा पडना आरम्भ हो गया था मिस्र में खूब पानी बरसता था और नील का डेल्टा पानी से भरा हुआ दलदल था। यह सम्भव है कि डेल्टा के ऊपर निचली नील उन दिनो वैसी ही थी जैसा सुडान के भूमध्य प्रदेश में ऊपरी नील का बहरुल जबल प्रदेश है और डेल्टा नो झील के प्रदेश के समान था जहाँ बहरुल जबल और बहरुल गजाल नदियाँ मिलती हैं। आज जिस रूप में वह अभागा प्रदेश है उसका वणन इस प्रकार है—

बहरुल जबल के सारे भाग का दृश्य सड (बहते हुए पेड-पौधे) से भरा हुआ है और एक समान है। दो एक जगह को छोडकर न कहीं तट है न पानी के किनारे कहीं टीला है। दोनों

किनारे किलोमीटरों तक दलदल है जिसमें नरकुल उगे हुए हैं। फैलाव में कहीं-कहीं थोड़ी-थोड़ी दूर पर लागून है। जब नदी में पानी की ऊँचाई कम से कम होती है लागून में पानी की सतह कुछ सेण्टी मीटर ऊँची होती है और जब नदी के पानी में आधा मीटर ऊँची बाढ़ आती है लागून का पानी बहुत दूर तक फैल जाता है। इन दलदलों में नरकुल और घास बहुत घने रूप में जमी रहती है और चारों ओर फैली रहती है।

सारे प्रदेश में मुख्यतः बोर और नो झील की बीच मानव जीवन का कोई चिह्न नहीं दिखाई पड़ता। सारा प्रदेश इतना उजाड़ है कि भाषा में उनके वर्णन करने की शक्ति नहीं है। बिना देखे वहाँ की स्थिति नहीं समझ में आ सकती।[1]

यह इसलिए निर्जन है कि आज जो लोग उसकी सीमा पर रहते हैं उनके सामने वह परिस्थिति नहीं है जो मिस्री सभ्यता के जनकों के सामने थी जब वे छः हजार वर्ष पहले निचली नील नदी की घाटी के किनारे बैठे हुए थे। उनके सामने यह समस्या थी कि वे अस्तित्व के संघर्ष का सामना करें अथवा अपने प्राचीन स्थान में रहना स्वीकार करें जो स्वर्ग समान भूमि से निष्ठुर मरुभूमि में परिवर्तित हो रही थी। यदि विद्वानों का निष्कर्ष ठीक है तो आज जो लोग सूडान के संड वाले प्रदेश के किनारे रहते हैं वे उस समय वहाँ रहते थे जिसे आज लीबिया का रेगिस्तान कहते हैं। ये लोग मिस्री सभ्यता के संस्थापकों के पास पास उस समय रहते थे जब इन्होंने सूखेपन का सामना करने का महत्त्वपूर्ण रूप से निश्चय किया। ऐसा जान पड़ता है कि उस समय आधुनिक डिनका और शिल्लुक लोगों के पूर्वज अपने साहसी पड़ोसियों से अलग हो गये और सरल परिस्थिति का सामना करते हुए दक्षिण की ओर ऐसे प्रदेश में चले गये जहाँ अपने रहन-सहन को बिना बदले हुए ऐसे भौतिक वातावरण में रहने लगे जैसा उनका पहले का अभ्यास था। वे सूडान के ऊष्ण-कटिबन्ध में बस गये जहाँ विषुवत रेखा वाली बरसात होती रही। आज तक उनके वंशज रहते हैं जो अपने पूर्वजों के समान ही जीवन व्यतीत करते हैं। इस नये निवास में वे आलसी और सन्तोषी लोग रहते हैं और ऐसी ही जगह रहने की उनकी इच्छा थी।

ऊपरी नील के किनारे आज वे लोग रहते हैं जो पुराने मिस्रियों से चेहरे-मोहरे में डील डौल में, खोपड़ी की बनावट में, भाषा और भेष में मिलते-जुलते हैं। इन पर या तो पानी बरसाने वाले जादूगर या ईश्वरीय राजे शासन करते हैं। कुछ दिनों पहले इन राजाओं की धार्मिक बलि होती थी। इन उप-कुलों (ट्राइब) का संगठन टोटम कुलों के आधार पर होता है। ऐसा जान पड़ता है कि ऊपरी नील के पास रहने वाले इन उप-कुलों का सामाजिक विकास उस समय रुक गया जब मिस्री लोग वहाँ से चले गये और उनका इतिहास वहाँ आरम्भ हुआ था। वहाँ हमें एक सजीव अजायब घर मिलता है जिसमें हमें प्रागैतिहासिक जातियों के उदाहरण मिलते हैं।[2]

नील बेसिन के एक भाग की प्राचीन परिस्थिति और दूसरे भाग की आज की परिस्थिति के समानान्तर होने के कारण कुछ विचार करना आवश्यक है। मान लीजिए नील बेसिन के उन भागों के निवासियों के सम्मुख जहाँ आज विषुवत् रेखा की वर्षा नहीं होती सूखा पड़ने की

१ सर विलियम गारस्टिन रिपोर्ट अपान द बेसिन आव द अपर नाइल, १९०४, पृ० ९८–९।

२ सी० जी० साइमन द मार्न एण्ड ईस्ट, पृ० १०–११।

समस्या न उत्पन्न होती । तो क्या उस अवस्था में डेलटा और नील की निचली घाटी अपनी स्वाभाविक स्थिति में रह जाती ? क्या मिस्री सभ्यता का उदय न हुआ होता ? क्या य लोग निचली नदी की घाटी के किनारे उसी प्रकार बठ रहते जैसे शिल्लुक और डिनका बहरल जबल के किनारे आज भी बैठे हुए ह ? दूसरे ढग से भी विचार किया जा सकता है जिसका सम्बन्ध भविष्य से है भूत से नही । हमें याद रखना चाहिए कि विश्व के, या इस धरती के या जीवोत्पत्ति के या मनुष्य की उत्पत्ति के भी समय मान (टाइम-स्केल) में छ हजार वष का समय नगण्य है । मान लीजिए कि जिस प्रकार के सघष का सामना निचली नील की घाटी के निवासियो का अभी कल ही हिमकाल की समाप्ति पर करना पडा उसी प्रकार के सघष का सामना ऊपरी नील के बेसिन के निवासियो को आगामी किसी दिन करना पड ता क्या उनमें गतिमान् काय करने की क्षमता न होगी जिसका परिणाम वैसा ही सजनशील न होगा ?

हमें यह जानने की आवश्यकता नही है कि शिल्लुक और डिनका के सम्मुख यह काल्पनिक सघष वसा ही होगा जैसा मिस्री सभ्यता के जनका पर हुआ था । मान लीजिए कि यह सघष अथवा चुनौती भौतिक न होकर मनुष्य की ओर होती । जल्वायु के परिवतन से न होकर विदेशी सभ्यता के आक्रमण से होती । क्या हमारी आखा के सामने इस प्रकार का सघष नही हो रहा है ? जब अफ्रीका के ऊष्ण-कटिबन्ध के निवासियो पर पश्चिमी सभ्यता का आक्रमण हो रहा है । यह मानवीय सस्था है जो हमारी पीढी में इस पथ्वी पर की सभी वतमान सभ्यताओ के प्रति और सभी वतमान आदिम समाज के प्रति मेफिस्टोफिलीस की पौराणिक भूमिका अदा कर रहा है । यह चुनौती इतना नयी है कि हम यह भविष्यवाणी नही कर सकते कि जिन समाजा पर आक्रमण हुआ है उनकी प्रतिक्रिया क्या होगी । हम यही कह सकते ह कि यदि आज की पीढी इस सघष का सामना करने में असफल रही तो यह आवश्यक नही है कि उनकी सन्तति भी आगे किसी सघष का सामना करने मे असफल हो ।

सुमेरी सभ्यता का जन्म

इम प्रश्न पर हम सक्षेप में विचार करगे क्योकि यहाँ भी उसी प्रकार का सघष हुआ था जिस प्रकार का सघष मिस्री सभ्यता के जनको के सम्मुख उपस्थित हुआ था और उसका सामना भी उसी प्रकार किया गया था । उसी प्रकार अफ्रशिया मे सूखा पडने के कारण सुमेरी सभ्यता के जनका को दजला और फरात की निचली घाटी के जगली दल्दल से जूझना पडा और उसे शिनार की भूमि में बदलना पडा । दोनो की उत्पत्ति का भौतिक स्वरूप प्राय समान है । दोनो से जो सभ्यताएँ उत्पन्न हुइ उनकी आध्यात्मिक विशेषताओ में तथा उनके धम, उनकी कला और उनके सामाजिक जीवन मे कसी समानता नही है । हमारे अध्ययन के लिए इससे यह सकेत मिलता है कि हम पहले से ही यह नही मान सकते कि यदि कारण एक प्रकार के ह तो काय भी एक प्रकार के होंग ।

सुमेरी सभ्यता के जनका को जिस विपत्ति का सामना करना पडा वह उनके आख्याना में वर्णित है । मारडूक देवता का टायमट नाग का मार डालना और उसके मृत शरीर से ससार की रचना करना इस बात का प्रतीक है कि प्राचीन उजाड खण्ड पर विजय प्राप्त की गयी और नहरो द्वारा पानी की निकासी करके धरती को सुखाकर शिनार की भूमि का सजन किया गया । बाढ की कथा का यह अभिप्राय है कि मनुष्य के साहस ने प्रकृति पर जो नियन्त्रण किया था उसका

प्रकृति न विरोध किया। बाइबिल क विवरण म, जा यहूदियो से साहित्यिक उत्तराधिकार में मिला है जिसमें वे बबिलोन की बाढ के कारण वहाँ स निकल भागे थे बाढ (द फ्लड) का अथ ही घर घर में पश्चिमी समाज हो गया है। आज के पुरातत्त्ववेत्ताओ का यह काम है कि इस आख्यान के मूल रूप की खोज करे और बाढ द्वारा लायी हुई मिट्टी की मोटी तह में, जो प्राचीन तम स्तर और उस नये स्तर के बीच जो मनुष्य के सुमेरी सभ्यता के कुछ प्रमुख एतिहासिक स्थानो पर निवास करने के कारण पड गयी है किसी असाधारण उग्र और विशेष बाढ की खोज कर।

नील के बेसिन के समान दजला और फरात का बसिन भी हमारे अध्ययन के लिए एक प्रकार का अजायब घर है जहाँ हम दोनो बातो का अध्ययन कर सकते ह। जगली अवस्था में निर्जीव प्रकृति का वह साधारण और स्वाभाविक रूप जिसे मनुष्य ने परिवर्तित किया है और वह जीवन भी जिस रूप में पहले सुमेरी अग्रगामी जगल में व्यतीत करते थ। किन्तु मेसोपोटामिया में इस प्रकार का अजायब घर हमें नहा मिलगा जिस प्रकार नील नदी के बेसिन की उस ओर जाने पर मिलता है जिधर स नदी निकलती है। यह फारस की खाडी क नये डेल्टा पर स्थित है जो दोना नदियो के सगम स सुमेरी सभ्यता के जन्म से पहले ही नहा बना था, बल्कि उसके विनाश के बाद और उनके उत्तराधिकारी बबिलोनी सभ्यता के विनाश के बाद भी बना। यह दलदल जो विगत दो-तीन हजार वर्षों में धीरे धीरे बना है वह आज तक अपनी प्रारम्भिक अवस्था में है क्योंकि किसी मानव समाज में यह शक्ति नहा थी कि उनपर विजय प्राप्त कर सके। यहाँ जो लोग इस दलदल में रहते है वह इस वातावरण के वश में ही होकर रहने लगे है जैसा उनके पुकारे जाने वाले नाम (मिज मन) द वब फीट स मालूम होता है। यह नाम अग्रेज सिपाहियो न १९१४–१८ के युद्ध में रखा था जब उनसे सामना हुआ था। किन्तु आज तक वे उस काय के करने में सफल नहा हुए जिसे ऐसे ही प्रदेश में पाँच छ हजार वष पहले सुमेरी सभ्यता के जनको ने किया था अर्थात् दलदलो को नहरो और खेतो क जाल में परिवर्तित कर दिया था।

चीनी सभ्यता की उत्पत्ति

यदि हम पीली नदी (ह्वागहो) की निचली घाटी में चीनी सभ्यता की उत्पत्ति पर विचार करे तो यहाँ हम देखेंगे कि दजला और फरात और नील नदियो ने जो कठिन भौतिक परिस्थिति उपस्थित की थी उससे कहा अधिक कठोर परिस्थिति का सामना मनुष्य को यहाँ करना पडा। इस उजाड प्रदेश में जिसे मनुष्य ने किसी समय सभ्यता का केन्द्र बनाया दलदल, झाड-झखाड और बाढ की कठिनाई तो थी ही उसके ऊपर ताप की कठिनाई थी जो गर्मी में बहुत अधिक और जाडे में बहुत कम हो जाता था। चीनी सभ्यता क जनक उन लोगो की प्रजातियो से भिन्न नहीं थे जो दक्षिण और दक्षिण-पश्चिम के उस महान् क्षेत्र म रहते थी जो पीली नदी स ब्रह्मपुत्र तक और तिब्बती पठार स चीनी सागर तक फैला हुआ है। यदि इस विस्तृत प्रजाति के कुछ लोगो न एक सभ्यता का निर्माण किया और शेष सब सास्कृतिक दृष्टि से निष्फल रह तो इसका कारण यह हो सकता है कि जो सजनात्मक शक्ति सबमें छिपी रहती है वह केवल कुछ ही लोगो में जाग्रत हुई क्योंकि उन लोगो के सामने चुनौती आयी और शेष लोगो के सामने वह समय नहा उपस्थित हुआ। उस समय का ठीक-ठीक स्वरूप इस समय जानना सम्भव नहा है क्योंकि इस समय हमारे पास उतना ज्ञान नहीं है। निश्चित रूप स हम इतना ही कह सकते है कि चीनी सभ्यता के जनको को पीली नदी के पास के उनके निवास स्थान में वह काल्पनिक,

किन्तु भ्रान्तिपूर्ण सरल वातावरण नहीं था जो उनके पडोसियों के सामन था। इन्हीं से सम्बन्धित सुदूर-दक्षिण के लोगो को, अर्थात् यागत्सी घाटी में, जहाँ यह सभ्यता उत्पन्न नहीं हुई जीवन के लिए कठिन सघर्ष नही करना पडा।

माया तथा एन्डियाई सभ्यताओं की उत्पत्ति

माया सभ्यता के सामने जो चुनौती थी वह उष्ण-कटिबन्ध के जगलो की प्रचुरता थी। 'माया सस्कृति इसी कारण सम्भव हो सकी कि उर्वर निचली जमीनो पर विजय प्राप्त कर इन लोगो ने खेती आरम्भ की। प्रकृति की बहुलता यहाँ मनुष्य के आयोजित चेष्टा से ही नियन्त्रित हो सकती है। उच्च भूमि पर धरती की तैयारी साधारणतया सरल है क्योकि वहाँ प्राकृतिक वनस्पति कम होती हैं और सिंचाई से नियन्त्रण होता है। निचली जमीन पर बडे बडे पेडो को गिराना पडता है, झाडियो को जो जल्दी-जल्दी उग आती हैं काटते रहना पडता है, किन्तु जब प्रकृति पर विजय प्राप्त हो जाती है तब उसका बदला किसानो को कई गुना अधिक मिलता है। एक बात यह भी है कि जगलो के कट जाने से जीवन की परिस्थितियाँ अधिक अनुकूल हो जाती हैं जो घने जगलो में सम्भव नही है।'[1]

इस सघर्ष के परिणामस्वरूप पनामा डमरूमध्य के उत्तर माया सभ्यता का जन्म हुआ, किन्तु इस डमरूमध्य के दक्षिण की ओर इस प्रकार की कोई बात नही हुई। दक्षिण अमेरिका में जिन सभ्यताओं का जन्म हुआ उनके सामने दो भिन्न चुनौतियाँ थी। एक एन्डियाई पठार से और दूसरी पडोस के पसिफिक तट से। पठार पर एन्डियाई सभ्यता के जनको के सामने कठोर जलवायु और अनुपजाऊ धरती थी। किनारे पर गर्म और सूखा था, विषुवत् प्रदेश का वर्षा विहीन समुद्र स्तर (सी-लेवल) का रेगिस्तान था, जहाँ मनुष्य के प्रयत्न से ही कुछ उग सकता था। समुद्र तट की सभ्यता के अगुआ ने, मरुभूमि में पश्चिमी पठार से जो नदियाँ आती थी उनका जल एकत्र किया और सिंचाई द्वारा वहा खेती आरम्भ की। पठार के अगुओ ने पहाडी ढालो पर मिट्टी डाल-डाल सीढीनुमा खेत बनाये और हर जगह बडे परिश्रम से दीवार बनाकर उनकी रक्षा में लगे रहे।

मिनोई सभ्यता की उत्पत्ति

हमने छ असम्बन्धित सभ्यताओं से पाँच के सम्बन्ध मे विवरण उपस्थित किया है कि किस प्रकार भौतिक वातावरण की चुनौती का सामना करके उनका जन्म हुआ। इस सर्वेक्षण में *हमने उस सभ्य का विवरण नहीं दिया जो दूसरे प्रकार की भौतिक चुनौती थी। यह सागर* की चुनौती थी।

'मिनोस के सागर राज्य के अगुआ कहाँ से आये ? यूरोप से एशिया से या अफ्रीका से ? नकशा देखने से जान पडेगा कि यह यूरोप या एशिया से आये होगे क्योकि यह टापू उत्तरी अफ्रीका की तुलना में दोनो महाद्वीपो की मूल भूमि से अधिक निकट है। क्योकि यह टापू डूबे हुए पहाडो की चोटियाँ हैं जो यदि प्रागैतिहासिक काल में धँस न गया होती और जल की बाढ न आ गयी होती तो अनातोलिया से यूनान तक लगातार फैली होती। पुरातत्त्व वेत्ताओ को उल्टा, किन्तु

[1] एच० जे० स्पिन्डेन एशेन्ट सिविलिजेशन्स आव मेक्सिको एण्ड सेन्ट्रल अमेरिका, पृ० ६५।

सम्बद्ध थे। यह चुनौती, सम्बन्ध में ही विद्यमान रहती है, जो विभेद से उत्पन्न होती है और अलगाव से अन्त होती है। यह विभेद पूववर्ती सभ्यता के समाज के अन्दर ही उस समय उत्पन्न होता है, जब उस सभ्यता की सजनात्मक शक्ति कम होने लगती है—जो शक्ति में अपने विकास के समय समाज के अन्दर अथवा उसके बाहर लोगों के हृदय में अपने आप समाज के प्रति निष्ठा जाग्रत करती है। जब ऐसा होता है ह्रासोन्मुख सभ्यता के पतन का दण्ड यह होता है कि वह बिखर कर शक्तिशाली अल्पसंख्यक हो जाती है। उसके शासन में नृशंसता बढ़ती जाती है किन्तु उसमें नेतृत्व की शक्ति नही रह जाती और एक सवहारा वग (बाहर और भीतर) बन जाता है जो अनुभव करने लगता है कि हममें भी आत्मा है और वह इस आत्मा को सजीव रखने का निश्चय करता है। इसी प्रकार की चुनौती इस रोगी समाज को मिलती है। शक्तिशाली अल्पसंख्यक दबाना चाहते ह जिसके कारण सवहारा में अलग होने की भावना उत्पन्न होती है। दोनों भावनाओं के कारण सघष चलता रहता है। पतनोन्मुख सभ्यता विनाश की ओर चलती है और जब वह मृतप्राय हो जाती है, तब सवहारा वग स्वतन्त्र हो जाता है और उसके लिए जो पहले कभी जीवनी शक्ति देने वाला घर था अब कारागार बन जाता है और अन्त में विनाश का नगर हो जाता है। सवहारा तथा शक्तिशाली अल्पसंख्यक का यह सघष जिस प्रकार आरम्भ से अन्त तक चलता है उसमें हमें उन नाटकीय आत्मिक सघर्षों का उदाहरण मिलता है जिसमें विश्व के जीवन के सजन का चक्र चला करता है—पतझड की निष्क्रियता से शिशिर की पीडा और उसके पश्चात् वसंत का उत्साह। सवहारा का अलगाव गतिशील क्रिया है। यह चुनौती का सामना है जिसके द्वारा यिन का याग में परिवतन होता है और इस गतिमान् अलगाव से सम्बन्धित सभ्यता का जन्म होता है।

इस सम्बन्धित सभ्यता के आरम्भ में क्या कोई भौतिक सघष भी हमें मिल सकता है? दूसरे अध्याय मे हमने देखा कि सम्बद्ध सभ्यताओं का सम्बन्ध अपने पूवजों से भौगोलिक स्थिति के विचार से भिन्न भिन्न अंशों में रहा है। एक ओर बबिलोनी सभ्यता अपने पूवज सुमेरी समाज के स्थान पर ही विकसित हुई। यहा नयी सभ्यता की उत्पत्ति में भौतिक सघष का सामना नही करना पडा होगा। हा, यह सम्भव है कि दोनों सभ्यताओं के बीच के काल में उनका जन्मस्थान प्राचीन प्राकृतिक अवस्था में परिवर्तित हो गया हो और उनका सामना करने के लिए बाद की सभ्यता के जनकों का वही काय करना पड रहा हो जो उनके पूव की सभ्यता के जनकों का करना पडा था।

जब सम्बद्ध सभ्यता ने नवजीवन आरम्भ किया होगा और पहले की सभ्यता के क्षेत्र के पूणत या अंशत बाहर काय आरम्भ किया होगा तब अपने नये वातावरण का सामना उन्हें करना पडा होगा और उस पर विजय उन लोगों ने प्राप्त की होगी। हमारी पश्चिमी सभ्यता को अपनी उत्पत्ति के समय आल्प्स के पार (ट्रांस-आल्पाइन) जगलों और वर्षा का सामना करना पडा होगा यद्यपि उसके पूवज हेलेनी सभ्यता को ऐसा नही करना पडा होगा। भारतीय (इण्डिक) सभ्यता की उत्पत्ति के समय इन लोगों को गंगा की घाटी के उष्ण प्रदेशीय जगलों तथा वर्षा का सामना करना पडा था, किन्तु उनके पहले की सुमेरी सभ्यता के पूवजों को सिन्धु की घाटी में तथा

उस प्रदेश म ऐसा नही करना पडा ।[1] हिताइत सभ्यता की उत्पत्ति के समय अनातोलिया के पठार से सघष करना पडा, किन्तु उसके पूवज सुमेरी सभ्यता को ऐसा नही करना पडा । हेलेनी सभ्यता को अपनी उत्पत्ति के समय समुद्र से सघष करना पडा, जो ठीक वैसा ही था जो उसके पूवज मिनोई सभ्यता को करना पडा । यह सघष बाहरी सवहारा के लिए बिल्कुल नया था क्योंकि मिनोई सागर राज्य की यूरोपीय स्थल सीमा के बाहर उन्हें सामना करना पडा । य महाद्वीपी बबर, जो एकियाई तथा उसी के समान और जातियां के समान थे जब मिनोई जनरला के युग के बाद सागर पर विजय प्राप्त करन क लिए आय, तब उनके सामने वही कठिनाइयाँ उपस्थित हुइ जो मिनोई सभ्यता के नताओ के सामने उनके काल में हुई थी ।

अमेरिका में यूकटी सभ्यता को अपना उत्पत्ति के समय जल विहीन, वक्षहीन, अनुपजाऊ, चूने से मिली धरती का यूकेटी प्रायद्वीप से सघष करना पडा और मेक्सिकी सभ्यता को आरम्भ में मेक्सिकी पठार स सघष करना पडा, किन्तु इनके पूवज माया सभ्यता को इन दोनो में स किसी स सघष नही करना पडा ।

अब रह जाती है बात हिन्दू सुदूर पूव परम्परावादी ईसाई अरबी और ईरानी सभ्यताओ की । ऐसा जान पडता है कि इनको किसी भौतिक सघष का सामना नही करना पडा । क्योंकि इनके निवास स्थान यद्यपि बबिलोनी सभ्यता की भाँति अपनी पूव सभ्यताओ के निवास स्थानो के समान नही थे, फिर भी उन पर इन सभ्यताओ ने अथवा दूसरी सभ्यताओ ने विजय प्राप्त कर ली थी । हमने सकारण परम्परावादी ईसाई सभ्यता तथा सुदूर-पूर्वी सभ्यता को विभाजित किया था । रूस वाली परम्परावादी ईसाई सभ्यता की उपशाखा को जितने कठोर जगला वर्षा और ठड स सामना करना पडा उतना पश्चिमी सभ्यता को नही और कोरिया और जापान में सुदूर पूर्वी उपशाखा को समुद्र से जो सघष करना पडा वह उस सघष स भिन्न था जो चीनी सभ्यता के नेताओ को करना पडा ।

इस प्रकार हमने स्पष्ट किया है कि सम्बद्ध सभ्यताओ को निश्चय ही उस मानवी सघष का सामना करना पडा जो उनकी पूव सभ्यता के विघटन में निहित था जिस सभ्यता से उनकी उत्पत्ति हुई है किन्तु सबमें नही । कुछ अवस्थाओ में उन्हें उसी प्रकार क भौतिक वातावरण स भी सघष करना पडा जिस प्रकार असबद्ध सस्थाओ को करना पडा । इस समीक्षा को पूरा करने क लिए हमें यह भी जानना चाहिए कि क्या असम्बद्ध सभ्यताओ को भौतिक सघष के अतिरिक्त मानवी सघष का भी सामना करना पडा जब वे आदिम समाजो से अलग हुए । इस पर हम इतना ही कह सकते ह कि एतिहासिक प्रमाण हमें नहा मिलते । यह सम्भव है कि हमारी छ असम्बद्ध सभ्यताओ को प्रागतिहासिक काल में जहाँ उनकी उत्पत्ति छिपा हुई है उसी प्रकार मानवी सघर्षो का सामना करना पडा हो जिस प्रकार सम्बद्ध समाजो के पूवजो को अपने शक्तिशाली अल्पसख्यको की नृशसता स । किन्तु इस विषय पर अधिक कहना शून्य म कल्पना करना होगा ।

१ हमने श्री टवायनबी क उस विवाद का वणन यहा नहीं दिया जो पुस्तक के पहले अश में उन्होने किया है कि सिंधु घाटी की सस्कृति अलग थी अथवा सुमेरी सभ्यता का ही एक अश । उन्होने इसका निश्चय नहीं किया, किन्तु पुस्तक के दूसरे अध्याय में उन्होने कहा है कि सिंधु *घाटी की सस्कृति सुमेरी समाज का अश थी ।* —सम्पादक ।

६ विपत्ति के गुण[1]

एक कठोर परीक्षा

हमने इस प्रचलित धारणा को अस्वीकार कर दिया है कि सभ्यताओ का उदय उस समय होता है जब ऐसा वातावरण होता है जहाँ जीवन के साधन सरल होते ह और इसके उल्टे तर्को को स्वीकार किया है । प्रचलित धारणा इस कारण पैदा हो गयी कि इस युग का दर्शक जो मिस्री सभ्यता का निरीक्षण करेगा—और इस दृष्टि से प्राचीन यूनानी भी हमारी ही भाति 'आधुनिक' थे—वह वहा की धरती का उस रूप में देखेगा जैसा मनुष्य ने उसे बना सँवार रखा है । वह समझता है जब सभ्यता के जनको ने काय आरम्भ किया तब यह धरती ऐसी ही थी । हमने यह बताने की चेष्टा की है कि निचली नील की घाटी किस रूप म थी जब नेताओ ने वहा विकास का काय आरम्भ किया । इसके उदाहरण के लिए वह चित्र भी उपस्थित किया जिस रूप में आज भी ऊपरी नील की घाटी है । भौगोलिक परिस्थिति के अन्तर का यह चित्र शायद विश्वासप्रद न लगा हो । इसलिए इस अध्याय में हम उदाहरण देकर निश्चित रूप में प्रमाणित करगे कि कुछ सभ्यताएँ विकसित होकर उसी क्षेत्र में फिर नष्ट हो गयी और मिस्र के विपरीत वे आदिम अवस्था को लौट गयी ।

मध्य अमेरिका

एक उदाहरण माया सभ्यता के जन्म की धरती है । यहा हमें विशाल और शानदार तथा अलकृत सावजनिक भवना के खण्डहर मिलते ह जो इस समय ऊष्ण प्रदेशीय जगलो म मानव बस्तियो से बहुत दूर ह । मानो अजगर की भाति जगल इन्हे निगल गया है और अब धीरे धीरे उन्हें चबा रहा है और इसकी तन्तुएँ (टण्ड्रिल) सुन्दर गढे हुए और जुडे हुए पत्थरो के बीच पैठ कर उन्हें उधाड रही है । आज जो रूप इस प्रदेश का है और माया सभ्यता के समय जो रूप रहा होगा—दोनो में महान् अन्तर है । इतना महान् कि उसकी कल्पना भी नही की जा सकती । एक समय रहा होगा जब ये विशाल सावजनिक भवन बडे और बसे हुए नगरो के बीच रहे होगे और ये नगर बडे-बडे उपजाऊ क्षेत्रो के बीच रहे होगे । इन जगलो न पुन फल कर पहले खेतो का उदरस्थ किया और अन्त में प्रासादो और नगरो को वे खा गये । यह मानव उपलब्धियो की नश्वरता का कितना करुणापूर्ण उदाहरण है ! फिर भी कोपन, या टिकल या पलक की वतमान स्थिति से सबसे महत्वपूर्ण शिक्षा यही नहीं मिलती । ये ध्वसावशेष जोरदार शब्दो में कह रहे ह कि माया सभ्यता के जनको को अपनी भौतिक परिस्थिति से अपने समय में कितना सघर्ष करना पडा होगा । उष्ण कटिबन्ध की प्राकृतिक शक्ति ने जिस प्रकार बदला लिया और जिसमें उसका भयावह रूप स्पष्ट दिखाई पडता है वही यह भी बताती है कि वे लोग कितने साहसी और शक्ति

१ टवायनबी ने इस अध्याय का नाम यूनानी भाषा में रखा जिसका अर्थ होता है—'जो सुन्दर है उसकी प्राप्ति कठिन है' या 'उत्तम गुणो की प्राप्ति के लिए कठिन परिश्रम चाहिए'—सम्पादक ।

पाली रहे हुए जिन्होंने, इस धरती से संघर्ष किया और चाहे थोड़े ही समय के लिए हो, उस पर विजय प्राप्त की।

लंका (सीलोन)

इसी प्रकार का अद्भुत और महान् काम वह था जो लंका के शुष्क मैदानों को धर्नी के अनुरूप बनाने के लिए किया गया था। उसकी स्मृति आज भी टूटे हुए बांधों और घासों से भर गये तालाबों के खण्डों में सजीव है। इन्हें पहाड़ी प्रदेश के जंगलों में किसी समय उन सिंहालियों ने बनाया था जिन्होंने भारतीय हीनयान धर्म को स्वीकार कर लिया था।

'ऐसे बड़े-बड़े ताल किस प्रकार बने इसे जानने के लिए लंका के इतिहास की जानकारी आवश्यक है। इस प्रणाली के निर्माण के अन्दर जो योजना है वह सरल, किन्तु महान् है। इन ताल बनाने वाले राजाओं ने सोचा कि पहाड़ से इस ओर जो विपुल पानी बरसे वह मनुष्य को अपनी भेंट दिये बिना समुद्र में न जाय।

"लंका के दक्षिणी भाग के बीच विस्तृत पहाड़ी क्षेत्र है किन्तु पूरब और उत्तर में हजारों वर्गमील सूखा मैदान है जिसमें आजकल बहुत कम आबादी है। मानसून के वेग के समय जब दिन प्रतिदिन बादलों की प्रबल सेना पहाड़ों पर आक्रमण करती है, प्रकृति ने एक रेखा बना दी है जिसे वर्षा पार नहीं कर पाती। कुछ स्थान तो ऐसे हैं जहाँ सूखे और नम प्रदेशों के बीच इतना कम अन्तर है कि एक ही मील के पार जान पड़ता है कि किसी दूसरे देश में आ गये हैं। यह रेखा सागर के एक तट से दूसरे तट तक चली गयी है। यह रेखा अचल है और मनुष्य के कार्यों का जैसे जंगल काटना—इस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।"[1]

किन्तु लंका में भारतीय सभ्यता के प्रचारकों ने एक समय ऐसी असाधारण शक्ति अर्जित की कि मानसून से प्रताड़ित पहाड़ियों को विवश किया कि जो मैदान सूखे और उजाड़ थे वे उनके द्वारा जीवन और संपत्ति के स्रोत बनें।

'पहाड़ी नदियों के पानी की निकासी की गयी और उनका जल नीचे बड़े-बड़े तालों में लाया गया। कुछ ताल चार हजार एकड़ के थे, उनमें से फिर नालियों द्वारा पहाड़ियों से दूर दूसरे बड़े तालों में पानी लाया गया और उनमें से और दूर तालों में। प्रत्येक बड़े ताल के नीचे धरातल पर और बड़ी-बड़ी नालियों में सैकड़ों छोटी नालियाँ और छोटे ताल थे। प्रत्येक छोटा ताल एक गाँव का केन्द्र था। और इस प्रकार सभी जगह पहाड़ों से पानी आता था। धीरे धीरे प्राचीन सिंहालियों ने सारे मैदान पर विजय प्राप्त कर ली और आज वही मैदान निर्जन है।[2]

इन प्राकृतिक ऊसरों को मानव सभ्यता का स्थल बनाने में कितना कठोर परिश्रम करना पड़ा होगा, लंका में दो प्रमुख भू दृश्यों से आज भी जान पड़ता है। जो ऊजाड़ धरती एक समय सींच कर उपजाऊ बस्ती बनायी गयी थी वह फिर उजाड़ हो गयी और आधे द्वीप में जहाँ वर्षा होती है आज चाय काफी तथा रबड़ उत्पन्न किया जाता है।

१ जान स्टिल द जंगल टाइड, पृ० ७४–७५।
२ वही पृ० ७६–७७।

उत्तरी अरब की मरुभूमि

हमारे विषय का बहुत विख्यात और बहुत प्रचलित उदाहरण पेट्रा और पालमिरा की वतमान स्थिति है। इस दृश्य से इतिहास के दशन को बहुत प्रेरणा मिली है, 'वालने' के 'ला सइने' (१७९१) से आज तक। आज सीरियाई सभ्यता के ये पुराने निवास स्थान उसी स्थिति में ह जिसमें माया सभ्यता के पुराने निवास स्थान। यद्यपि जिस प्रतिकूल परिस्थिति ने अरबी क्षेत्र पर प्रहार किया वह अफेशियाई स्टेप था और उष्ण प्रदेशीय जगल नही। खण्डहरा द्वारा यह ज्ञात होता है कि ये कलापूण मदिर, ये मण्डप, ये चत्य जब अपने अविच्छिन्न रूप में रह होगे तब वे बडे-बडे नगरा की शोभा रहे हागे। और यहाँ पुरातत्व से जो प्रमाण मिलते ह और जो माया सभ्यता का चित्र उपस्थित करने के लिए मात्र आधार ह लिखित ऐतिहासिक अभिलेखा द्वारा भी पुष्ट होत हैं। हम जानते ह कि सीरियाई सभ्यता के नेता जिन्हाने मरुभूमि में इन विशाल नगरा की कल्पना की वे उस 'जादू' के पण्डित रहे होगे जिसके जानकार सीरियाई कथा में मूसा का बताया जाता है।

ये जादूगर जानते थे कि सूखी चट्टाना में से कसे पानी निकाला जा सकता है और किस प्रकार उजाड मरुभूमि में से उन्हें ले जा सकते ह। अपने प्रौढ काल मे पेट्रा और पालमिरा ऐस बागा के बीच रहे हागे जहाँ सिचाई की अच्छी व्यवस्था रही होगी। जैसे बाग आज भी दमिश्क के चारा ओर हैं। किन्तु पेट्रा और पालमिरा उस युग म भी केवल सकीण मरु उद्यान (आएसिस) के बल पर ही नही जीवित थे, जसे आज दमिश्क भी नहीं है। उनके सेठ शाक सब्जी उत्पन्न करने वाले माली नही थे, व्यापारी थे जिन्हाने एक मरु उद्यान से दूसरे मरु उद्यान तक, तथा महाद्वीप से महाद्वीप तक सम्बन्ध स्थापित कर रखा था और उनके कारवा इन मरु उद्याना के बीच के स्टेप तथा मरुभूमि के आरपार करने में सदा व्यस्त रहते थे। उनकी वतमान स्थिति यही नही बताती कि अन्त में मरुस्थल ने मनुष्य पर विजय पायी, बल्कि यह भी कि इसके पहले मनुष्य की विजय मरुस्थल पर कितनी विशाल थी।

ईस्टर द्वीप

ईस्टर द्वीप की वतमान स्थिति से पालिनीशियाई सभ्यता की उत्पत्ति के सम्बन्ध में हम उसी परिणाम पर पहुँचते हैं। इस युग में जब दक्षिण-पूरब प्रशान्त महासागर के एक दूरस्थ स्थान में इस द्वीप का अन्वेषण हुआ वहा दो जातिया रहती थीं। एक जाति सजीव रक्त और मास की, और दूसरी जाति पत्थर की। पालिनीशियाई शरीर वाली आदिम जाति तथा सिद्ध कौशल की मूर्तियाँ। उस पीढी के जीवित निवासियों मे जैसी मूर्तियाँ ये ह वसी मूर्तिया गढन की क्षमता नही थी, न उन्हें समुद्र-यात्रा का इतना विज्ञान मालूम था कि खुले सागर में हजारा मील की यात्रा करते क्योंकि ईस्टर द्वीप और पोलिनीशियाई द्वीप-समूह के निकटतम द्वीप म इतना अन्तर है। यूरोपियन नाविका ने जब इसका पता लगाया उस समय यह अज्ञात काल से ससार से अलग रहा था। वहाँ के दोना प्रकार के निवासिया, मनुष्यो और मूर्तियों से पता चलता है जैसा पालमिरा और कोपन के खण्डहरा से कि उनका भूतकाल कुछ भिन्न रहा होगा। ये मनुष्य उन लोगो की सन्तान हागे और ये मूर्तियाँ उन लोगा ने गढी होगी जिन्हाने भद्दी खुली डोंगिया में नक्शे और दिक्सूचकों (कम्पास) के बिना प्रशान्त सागर की यात्रा की हागी।

और ऐसा नहीं हो सकता कि केवल एक बार इन्होंने यात्रा की हो और संयोगवश ईस्टर द्वीप में अग्रगामियों को लाये हों। मूर्तियों की संख्या इतनी अधिक है कि उन्हें बनाने में पीढ़ियाँ लगी होंगी। इन बातों से सिद्ध होता है कि हजारों मील की खुले समुद्र की यात्रा बहुत दिनों तक बराबर जारी रही होगी। और अन्त में कुछ ऐसे कारण हुए होंगे, जो हमें ज्ञात नहीं हैं कि जिस सागर को विजय कर मनुष्य वीरता से यात्रा करता रहा, उसने इस द्वीप को घेर लिया जैसे मरुभूमि ने पालमिरा को घेर लिया या कोपन को जंगल ने।

ईस्टर द्वीप का यह प्रमाण पश्चिमी प्रचलित विचारों से भिन्न है जिसके अनुसार दक्षिण सागर के द्वीप धरती पर स्वर्ग हैं और उनके निवासी पतन के पूर्व के समान आदम और हौवा की भाँति प्रकृति की सन्तानों की तरह रहते हैं। यह भ्रम इस कारण उत्पन्न हुआ कि यह मान लिया गया कि पोलिनीशियाई वातावरण का एक भाग ही संपूर्ण द्वीप समूह है। यहाँ का भौतिक वातावरण जल और थल का है। पोलिनीशियाइयों के पास समुद्र यात्रा के जो साधन थे उनके बिना किसी मनुष्य का यात्रा करना भीषण संघर्ष करना था। ऐसे नमकीन अपरिचित सागर का वीरता और सफलतापूर्वक सामना करके ही विजय प्राप्त हुई। अदम्य साहस से एक द्वीप से दूसरे द्वीप में बराबर यात्रा हुई होगी और तब इन अगुआओं ने किसी सूखे द्वीप पर पाँव रखा होगा क्योंकि ये द्वीप आकाश के तारों की भाँति प्रशान्त सागर में बिखरे हुए हैं।

न्यू इंग्लंड

आदिम प्राकृतिक अवस्था में लौट जाने पर विचार समाप्त करने के पहले लेखक दो उदाहरण प्रस्तुत करना चाहता है। एक कुछ दूर का है और एक स्पष्ट है। लेखक ने अपनी आँखों से दोनों स्थान देखे हैं।

मैं[1] न्यू इंग्लंड के कनेक्टिकट प्रदेश के एक गाँव में जा रहा था। राह में एक उजड़ा गाँव मिला। मुझसे बताया गया कि ऐसे अनेक गाँव हैं। किन्तु किसी यूरोपीय के लिए यह दृश्य अजीब और विलक्षण जान पड़े। टाउन हिल इस गाँव का नाम था। दो शतियों तक यह ऐसा ही रहा है। गाँव के मैदान में लकड़ी का बना हुआ जाजी (ज्यारजियन) गिरजाघर था। गाँव, बाग बगीचे और खेत थे। गिरजाघर प्राचीन स्मृति के रूप में अभी था, किन्तु घर सब लोप हो गये थे। फलों के पेड़ जंगली हो गये थे और खेत नष्ट हो गये थे।

विगत एक सौ साल में न्यू इंग्लैंड के निवासियों ने अपनी संख्या से कहीं अधिक अनुपात में परिश्रम करके अमरीका महाद्वीप में अतलान्तक से प्रशान्त सागर तक जंगली प्रकृति से लड़कर विजय प्राप्त की है। किन्तु इन्हीं दिनों इस गाँव में जो उनके प्रदेश के केन्द्र में बसा था प्रकृति को पुनः विजय प्राप्त करने का अवसर मिला जिस प्रकृति को उनके पितामहों ने पराजित किया था और जहाँ वे शायद दो सौ वर्षों तक रहे थे। ज्यों ही मनुष्य ने अपना शासन इस पर से हटा लिया त्यों ही जिस तीव्रता, पूर्णता तथा स्वतन्त्रता से टाउन हिल पर प्रकृति ने अपना राज्य फिर से स्थापित किया था इस बात को स्पष्ट करता है कि उस ऊसर धरती पर विजय प्राप्त करने के

१ जहाँ जहाँ यह सर्वनाम पुस्तक में आया है लेखक श्री टवायनबी से सम्बन्धित है।

लिए मनुष्य को कितना परिश्रम करना पड़ा होगा। जितनी प्रबल शक्ति टाउन हिल का पराजित करने में लगी होगी उतनी अमरीका के पश्चिमी भाग पर विजय प्राप्त करने के लिए पर्याप्त थी। इस परित्यक्त भूमि से यह बात समझ में आती है कि ओहियो, इलिनायस, कोलोरेडो, तथा कैलिफोरनिया आदि नये-नये नगर किस प्रकार जल्दी बन गये।

द रोमन कैम्पेग्ना

जो प्रभाव मुझपर टाउन हिल का हुआ वही रोमन कैम्पेग्ना का लिवी पर हुआ। उसे आश्चर्य हुआ कि असभ्य योद्धाओं ने ऐसे प्रदेश में निवास किया जो उसके समय में जसा हमारे समय में भी है,[१] दलदल और नितात ऊसर था। आज जो जगली उजडा प्रदेश है वह उसे लैटिन तथा वोलशियन अगुओ ने उवर और बसने योग्य ग्राम बनाया था जो आज पुन अपनी पूर्वावस्था में बदल गये। जिस शक्ति ने किसी समय इस कठोर छोटे इटालियाई प्रदेश को उवर और बसने योग्य बनाया था उसी शक्ति ने बाद मे मिस्र से ब्रिटेन तक विजय प्राप्त की।

विश्वासघाती कैंपुआ

ऐसी परिस्थितिया के अध्ययन के पश्चात् जहाँ सचमुच सभ्यताओ का जन्म हुआ था, जहा मनुष्य को और विशेष सफलताएँ प्राप्त हुइ और यह भी ज्ञान प्राप्त कर कि वे परिस्थितिया मनुष्य के लिए सरल नही थी, बल्कि इसके विपरीत था, हम उस परिस्थिति का अब अध्ययन कर जो इनके पूरक है। हम उस वातावरण की परीक्षा कर जहा परिस्थितिया सरल थी और मानव जीवन पर उनका क्या प्रभाव पडा। इस अध्ययन में हमें दो विभिन्न परिस्थितिया का अन्तर समझ लेना आवश्यक है। एक तो वह जहा कठिन परिस्थिति का सामना करने के बाद सरल वातावरण में मनुष्य आया। दूसरी वह सरल परिस्थिति जिसे छोडकर आदिम काल से जब से उसका विकास हुआ दूसरे और वातावरण में मनुष्य गया ही नही। दूसरे शब्दा में हमें यह अतर देखना है कि सरल वातावरण का प्रभाव सभ्यता की प्रगति में मनुष्य पर क्या पडा और आदिम मानव पर सरल वातावरण का क्या प्रभाव पडा।

इटली के क्लासिकी युग में कपुआ में रोम को विपरीत परिस्थिति मिली। कपुआ का कम्पेग्ना मनुष्य के लिए उतना ही सहज था जितनी रोमन कैंपग्ना कठोर। रोमन लोग अपने अनाकषक देश से निकल कर एक के बाद एक अपने पडोसी देशा को जीतने चले गये, किन्तु कैंपुआई अपने देश में पडे रहे और एक के बाद दूसरा पडोसी उनको जीतता रहा। इनके अतिम विजेता समनाइट रहे और अपनी इच्छा से रोमनो को बुलाकर कैंपुआइयो ने अपनी मुक्ति करायी। और रोम के इतिहास में सबसे सकटपूण युद्ध के सबसे सकटपूण समय, कनी के युद्ध के बाद ही कम्पेग्नाइयो ने रोम से यहाँ बदला लिया कि हैनिबल का स्वागत किया। कपुआइयो के रख बदलने के सम्बन्ध में रोमना और हैनिबल के मत एक ही थे। क्याकि यह युद्ध का सबसे महत्त्वपूण शायद निश्चयात्मक परिणाम था। हैनियल कैंपुआ चला गया और जाडे में वह वहीं रहा।

१ अब यह बात नहीं है। मुसोलिनी ने सफल परिश्रम द्वारा इसे सदा के लिए सुदर रहने योग्य बस्ती बना दिया है।

जिसका परिणाम ऐसा हुआ जो सबकी आशाओं के विपरीत था। जाड़े भर में हैनिबल की सेना का इतना पतन हो गया कि फिर उसमें विजय की वह क्षमता नही रह गयी।

आर्टेम्बेयस की सलाह

हेरोडोटस ने एक कथा लिखी है जिससे यह बात बहुत कुछ स्पष्ट हो जाती है। कोई आर्टेम्बेयस और उसके मित्र खुसरो (साइरस) के पास आये और यह परामर्श दिया—

अब जब भगवान् जीयुस ने ऐसटाइजस को पराजित कर दिया है और फारस के राष्ट्र को और श्रीमन् आपको व्यक्तिगत रूप से इस राज्य का आधिपत्य सौंपा है तब क्यों न हम इस पहाडी तथा संकीर्ण प्रदेश को जिसमें हम इस समय रहते हैं छोडकर किसी अच्छे देश में चलकर बसें। ऐसे अनेक देश हमारे निकट और दूर हैं। हमें केवल चुन लेना है और हम संसार में भी अब से अधिक प्रभाव जमा सकेंगे। साम्राज्यवादियों के लिए यह स्वाभाविक नीति है। इस नीति को काम में लाने के लिए अब से उपयुक्त और दूसरा समय न होगा जब कि हमारा साम्राज्य विस्तृत लोगों पर और सारे ऐशिया महाद्वीप पर फैला है।'

खुसरो ने सुना, किन्तु उस पर कुछ प्रभाव न पडा। इन अभ्यर्थियों से उसने कहा कि जैसी उनकी इच्छा हो वैसा करें, किन्तु इसके लिए भी वे तैयार रहें कि उन्हें अपनी वर्तमान प्रजा का स्थान ग्रहण करना होगा। सुकुमार देशों में सुकुमार मनुष्य पैदा होते हैं।[१]

ओडेसी और प्रस्थान

यदि हम हेरोडोटस के इतिहास से भी विख्यात पुरातन साहित्य की ओर दृष्टि डालें तो हम देखते हैं कि ओडीसियस को साइक्लोप्स अथवा ऐसे दूसरे भयानक बैरियों से उतना भय नहीं था जितना उन लोगों से जो उसे आराम का जीवन बिताने के लिए आमन्त्रित करते थे। जैसे सरसी और उसके आतिथ्य का अन्त सुअरबाड़े में हुआ, लोटस भक्षियों के देश में जहाँ कुछ बाद के कुछ विद्वानों के अनुसार सदा मध्याह्न काल ही रहता था सायरेनों के देश में जहाँ उसने अपने नाविकों को आज्ञा दी कि अपने कानों को मोम से बन्द कर लें जिससे उनका मधुर गान न सुन सकें और फिर कहा कि मुझे मस्तूल में बाँध दो और कैलिप्सो के यहाँ जिसकी सुन्दरता पेनिलोप से भी बढ़कर ईश्वरीय थी किन्तु जो मनुष्य की संगिनी बनने के लिए नितान्त अयोग्य थी।

इसरायलियों के प्रस्थान का जहाँ तक सम्बन्ध है पेन्टाटुएक के क्षुब्ध लेखकों ने उन्हें गुमराह करने के लिए सायरेन या सरसी का वर्णन तो नहीं किया, किन्तु हम यह अवश्य पढ़ते हैं कि वह मिस्र की ऊँची रहन-सहन के लिए अवश्य लालायित रहते थे। यदि उनका वश चलता तो हमें विश्वास है कि पुरानी बाइबिल न बनी होती। भाग्यवश मूसा के विचार भी वैसे ही थे जैसे खुसरो के।

मनमाना करने वाले

कुछ आलोचक कह सकते हैं कि जो उदाहरण हमने दिये हैं वे विश्वसनीय नहीं हैं। वे कहेंगे कि यह तो माना जा सकता है कि जो कठोर जीवन से सरल जीवन की ओर गये उनका पतन हो जायगा जिस प्रकार भूखे मनुष्य को पूरा भोजन मिल जाय तो वह ठूँसकर भर लेगा

१ हेरोडोटस पुस्तक ९, अध्याय १२२।

किन्तु जिन्होने सदा कोमल परिस्थिति मे जीवन बिताया है वे तो उसका ठीक उपयोग करेगे। पहले जिन दो परिस्थितियो का भेद बताया गया था उसमें दूसरी पर हम विचार करेगे। अर्थात उन लोगो के बारे में जो कोमल परिस्थिति में सदा से रहते आये और दूसरी परिस्थिति का उन्हें अनुभव नही था। सक्रमण काल में जो अव्यवस्था होती है उसे छोड दिया जाय तो हम बिलकुल कोमल परिस्थिति का ठीक अध्ययन कर सकेगे। पचास वष हुए एक पश्चिमी प्रेक्षक ने न्यासालड को जिस रूप में देखा था उसकी सच्ची तस्वीर यो है—

"इन अपार जगलो में पेडो पर पक्षी के घोसलो के समान छोटे छोटे वहाँ के निवासियो के गाँव है जहाँ के लोग सदा एक दूसरे मे तथा सामान्य बरियो से भयभीत रहते है। यहाँ स्वाभाविक सरलता का जीवन आदिम मनुष्य व्यतीत करते ह। न उनके पास कपडे है, न सभ्यता है, न शिक्षा है, न धम है। प्रकृति की ये सच्ची और सहज सन्तान ह। ये विचार रहित चिन्ता से मुक्त और सन्तुष्ट है। ये मनुष्य प्राय आनन्द मे जीवन बिताते ह उन्हें किसी वस्तु की आवश्यकता नही है। बहुधा लोग अफ्रीकियो को काहिल कहते हैं, किन्तु यह इस शब्द का अशुद्ध प्रयोग है। उसे परिश्रम करने की आवश्यकता नही है। इतनी उदार प्रकृति के होते हुए परिश्रम करना निरथक होगा। जिसे उसकी काहिली कही जाती है वह उसके जीवन का वैसा ही स्वाभाविक अश है जसे उसकी चिपटी नाक। उसे सुस्ती के लिए दोष देना वैसा ही होगा जैसा कछुए को।"[१]

विक्टोरियन युग के कठोर परिश्रमी जीवन के समथक चार्ल्स किंगसले दक्षिण पश्चिमी पवन के बजाय उत्तर पूर्वी पवन को अधिक पसन्द करते थे। उन्होने एक कहानी लिखी थी 'द हिस्टरी आव द ग्रेट एण्ड फेमस नेशन आव डू एज-यू-लाइक्स, जो कठिन परिश्रम के देश से भाग आये क्योकि वह दिन भर सारगी (ज्यूज हाप) बजाना चाहते थे।' परिणाम यह हुआ कि पतित होकर गोरिला हो गये।

आधुनिक नैतिकवादियो और हेलेनी कवियो के अफीमचियो (लाटस ईटरो) के प्रति विभिन्न मत मनोरजक है। हेलेनी कवियो के हिसाब से अफीमची तथा उनका प्रदेश सभ्यता के प्रचारक यूनानियो के माग में पिशाचो की ओर से फन्दा है। इसके विपरीत किंगसले आधुनिक अग्रेजी मनोवृत्ति प्रदर्शित करता है। वह डू एज-यू-लाइक्स को इतनी घणा से देखता है कि उसके लिए उनका कुछ भी आकषण नही है और वह यह कतव्य समझता है कि उन्हे अग्रेजी साम्राज्य में, अपनी नही, उनकी भलाई के लिए ले लिया जाय और पहनने के लिए पतलून दी जाय और पढ़ने के लिए बाइबिल।

हमारा अभिप्राय इसे स्वीकार या अस्वीकार करना नही है। हमें तो समझना है। इस दृष्टान्त का परिणाम बाइबिल की उत्पत्ति की पुस्तक (बुक आव जेनेसिस) के आरम्भिक अध्यायो में स्पष्ट है। जब आदम और हौवा अदन के लोटस प्रदेश से निकाल दिये गये उसके बाद ही उनके वशज खेती, धातुविज्ञान और वाद्य-यन्त्रो के आविष्कार करने के योग्य हुए।

१ एच० ड्रमड—ट्रापिकल अफ्रीका, पृ० ५५-६।

७ वातावरण की चुनौती

(१) कठोर देशों की प्रेरणा (स्टिमुलस)

खोज की पद्धति

सम्भवत हमने इस सत्य को प्रमाणित कर दिया है कि सुख का जीवन सम्यता का बरी है। क्या हम इसके एक कदम आगे जा सकते है? क्या हम यह कह सकते है कि जितनी ही परिस्थिति कठोर होती जाती है उतनी ही सम्यता की प्रगति को स्फूर्ति प्राप्त होती है? इसके पक्ष में तथा इसके विरोध में प्रमाणो की हम परीक्षा कर और देखे कि क्या परिणाम निकलता है? इस बात का प्रमाण कि परिस्थिति की कठिनाइयाँ और सम्यता की स्फूर्ति साथ-साथ चलती है खोजना कठिन नही है। बल्कि इस पक्ष में इतने अधिक प्रमाण मिलते है कि उलझन हो जाती है। इस प्रकार के बहुत-से तुलनात्मक उदाहरण मिलते है। हम अपने उदाहरणो के दो वर्ग बनायें। भौतिक वातावरण का वर्ग और मानवीय परिस्थिति का वर्ग और पहले भौतिक वर्ग पर विचार करें। इसके दो उपविभाजन होते है। उन प्रभावो की तुलना जो विभिन्न अशो की भौतिक कठिनाइयो के कारण उत्पन्न हुई है और नये तथा पुराने प्रदेशो के प्रभावो की तुलना इस बात का विचार छोडकर, कि स्वाभाविक रूप में वह भू प्रदेश कैसा है।

हागहो और यागत्सी नदिया

आरम्भिक उदाहरण के लिए हम इन दो नदियो की निचली घाटियो को देखें कि उनसे कितनी कठिनाई उत्पन्न हुई होगी। ऐसा जान पडता है कि जब पहल-पहल मनुष्य ने हागहो की निचली घाटी में रहना आरम्भ किया यह नदी वर्ष में किसी समय भी नौका चलान योग्य नही थी। जाडे में या तो वह जमी रहती थी या उसमें बर्फ के बडे-बडे टुकडे तैरा करते थे और बसन्त में यह बर्फ गल जाती थी जिससे नदी में बाढ आ जाती थी जिससे नदी अपना रास्ता बदल देती थी और पुराने रास्ते में जगल से भरे दलदल बन जाते थे। आज भी, तीन चार हजार साल के बाद, जब मनुष्य के श्रम से दलदल सुखा दिये गये जगल साफ कर दिये गये है और बाँध बन गये है, बाढ से कभी-कभी पहले जैसा ही विनाश होता है। अभी सन् १८५२ में निचली हागहो ने अपना रास्ता बदल दिया और जो धारा पहले शातुग प्रायद्वीप के दक्षिण गिरती थी प्रायद्वीप के उत्तर दो सौ मील की दूरी पर गिरने लगी। याग्त्सी सदा स नौका चलाने योग्य थी और यद्यपि उसमें भीषण बाढ आती रही है, किन्तु वह इतने बहुतायत से नही आती थी जितनी हागहो में। याग्त्सी की घाटी में जाडा इतना कठोर नही पडता। फिर भी हागहो नदी के किनारे चीनी सम्यता का जन्म हुआ याग्त्सी के नही।

अटिका और बेओशिया

कोई यात्री जो समुद्र से नही धरती की राह से, उत्तर के पृष्ठ प्रदेश की ओर से यूनान में आये या ऊपर स जाय तो वह यह अनुभव किये बिना नही रह सकता कि हेलेनी सम्यता का

मूल स्थान कठोर, पहाडी और सूखा है, उस धरती की तुलना मे जो उसके उत्तर है जहा किसी सभ्यता का जन्म नही हुआ। ऐसा ही अन्तर एजियाई क्षेत्र मे मिलता है।

उदाहरण के लिए, यदि कोई रेल से एथेन्स से सैलोनिका होते हुए मध्य यूरोप की ओर चले तो यात्रा के पहले भाग में पश्चिमी या मध्य यूरोपीय यात्री को ऐसा दृश्य देखने को मिलेगा जिससे वह परिचित है। कुछ घटा के वाद जब गाडी पारनेस पहाड की पूरबी ढाल से घूमती चलती है जहाँ नीबू के छोटे पेड और चूना-पत्थर के शृग मिलते है तो यात्री को आश्चय होता है कि मैं धीरे धीरे लहरियादार, गहरी मिट्टी वाले उपजाऊ क्षेत्र में चला जा रहा हूँ। किन्तु यह भू-दृश्य थोडी देर के लिए ही मिलता है। एसा दृश्य उसे फिर तभी मिलेगा जब वह नीश के आगे मोरावा से उतरकर मध्य डन्यूब तक पहुँचेगा। हेलेनी सभ्यता के समय इस विशेष क्षेत्र का क्या नाम था ? इसे बेओशिया कहते थे और हलेनी लोगो के मन में इसका विशेप अथ था। वे इस शब्द से उस विशिष्ट प्रकृति का मनुष्य समझते थे जो गँवार, निष्क्रिय, कल्पनाविहीन और कठोर होता था और एसी प्रकृति हलेनी सस्कृति के बिलकुल प्रतिकूल थी। यह अन्तर और भी तीव्र इस कारण हो गया था कि सिथीरान पहाड के पीछे और पारनेस पहाड के कोने पर जिधर से आज रेल घूम कर जाती है अटिका था जो हेलेनी सभ्यता का महान् क्षेत्र समझा जाता था। इस प्रदेश की प्रकृति हेलेनी सभ्यता का विशुद्धतम रूप थी। और यह प्रदेश ऐसे क्षत्र के सन्निकट था जिसकी प्रकृति हलेनी प्रकृति से नितान्त भिन्न थी। दोना का अन्तर ऐसे वाक्यो से स्पष्ट होता है—'बेओशियाई सुअर' और 'ऐटिक नमक'।

इस सम्बन्ध में मनोरजक बात यह है कि जिस सास्कृतिक भेद का प्रभाव हेलेनी बुद्धि पर इतना प्रबल पडा वह भौगोलिक दष्टि से उसी के अनुरूप था अथात् सस्कृति के भेद के साथ भौतिक भेद भी था। क्योकि अटिका 'यूनान का यूनान' था, केवल आत्मिक दृष्टि से नही, शारीरिक दष्टि से भी। उसका एजियाई देशो से वही सम्बन्ध है जो उनका दूर के देशो से है। यदि आप यूनान में पश्चिम की ओर कोरिथिया की खाडी की ओर से जायँ तो गहरी कोरिथ नहर के चट्टाना के समान किनारा तक आपको सब जगह यूनानी भू-दृश्य मिलेंगे जो सुन्दर किन्तु अनाकषक है, किन्तु जब आपका जहाज सरोनिक खाडी में पहुँचता है आप ऐसा रूखा दश्य देख कर चकित होगे जिसे देखने की स्थल डमरूमध्य के उस पार के दश्य के कारण, आपको आशा न होगी। यह कठोरता उस समय सबसे अधिक मिलती है जब सलामिस के कोने से घूमकर आप अपने सामने अटिका फला हुआ देखते ह। अटिका की मिट्टी पथरीली और हल्की है क्योकि अनाच्छादन (डिनुडेशन) की क्रिया वर्षा के जल से पहाडा की मिट्टी को समुद्र में बहा ले जाना, बहुत पहले आरम्भ हो गयी थी और अफलातून के समय म पूरी हो चुकी थी जैसा कि 'क्रीटियास में विस्तार से दिया हुआ है। बेओशिया में आज तक ऐसा नही हुआ है।

एथेन्स के निवासियो ने अपने गरीब देश में क्या किया ? हम जानते ह कि उन्होने वह किया कि एथेन्स यूनान का शिक्षक बना। अटिका के चरागाह जब सूख गये और उवर धरती जब नष्ट हो गयी तब यूनानियो ने अपना पुराना व्यवसाय, पशुपालन और खेती छोड दी। यही उस युग में यूनान का विशेष उद्यम था। उन्होने जतून के बाग लगाना आरम्भ किया और नीचे की मिट्टी (सब स्वायल) से काम लेना आरम्भ किया। एथेन्स का यह सुखमय पेड पहाडो की रक्षा करता है और पहाडा पर जीता भी है। किन्तु मनुष्य केवल जैतून का तेल पीकर जीवित

नहीं रह सकता । अपने जैतून के पूजा के सहारे जीवित रहने के लिए उसने जतून के तेल का का परिवतन सीथिया के अनाज से किया । सीथिया के बाजार में जतून का तेल भजने के लिए उसने बेडे बनाये और जहाजा द्वारा भेजा जिसके कारण आटिका के मिट्टी के वतना का निर्माण हुआ और व्यापारिक जहाजी बेडा भी तयार हुआ । व्यापार के लिए मुद्रा की आवश्यकता पडती है इसलिए आटिक की चाँदी की खाना की खोज हुई ।

किन्तु यह सम्पत्ति एथेंस की राजनीतिक, कलात्मक तथा बौद्धिक सस्कृति की नीव मात्र थी । इन सस्कृतिया ने एथेंस को 'हेलास का शिक्षक' और बओशियाई पशुता के जवाब में 'आटिक नमक' की सज्ञा दी । राजनीतिक स्तर पर परिणाम था एथेंस का साम्राज्य । कलात्मक स्तर पर मिट्टी के वतना पर आटिक के कल्ना की चित्रकारी का अवसर मिला जिसक द्वारा नवीन सौदय की सृष्टि हुई जिसने दो हजार वष बाद भी अग्रेजी कवि कीट्स को मुग्ध कर लिया ।

बाइजान्टियम और काल्चिडान

हेल्नी ससार का जो विस्तार हुआ उसका कारण हम पहल अध्याय में वणन कर चुके हैं । (पृ० ४ देखिए) इससे हमारे विषय के सम्बन्ध में एक और हेलनी उदाहरण मिलता है । वह है दो यूनानी उपनिवेशा का अतर । एक काल्चिडान जो ममर सागर से बासफरस में प्रवेश करते हुए एशिया की ओर था और दूसरा बाइजान्टियम जो यूराप की ओर था ।

हेरोडोटस कहता है कि इन दानो नगरा के निर्माण के लगभग एक सौ साल बाद मगाबाजस के फारसी राज्यपाल न 'एक लतीफा बनाया जिसने उसे हेलासपाटी यूनानियो में अमर कर दिया । बाइजान्टियम में उसने सुना कि काल्चिडानियनो ने बाइजान्टिनिया से सत्रह साल पहल अपना नगर बनाया । सुनते ही उसने कहा—कि काल्चिडोनी सब अधे रहे होगे । उसका अभिप्राय यह था जब उपयुक्त स्थान उन्हें उपलब्ध था तब उन्होने अनुपयुक्त स्थान क्या चुना ।[1]

किसी घटना के बाद बुद्धि अजन करना सरल है । मेगाबाजस के समय (जब फारसिया ने यूनान पर आक्रमण किया) दोना नगरा के भाग्या का फसला हो चुका था । काल्चिडान साधारण कृषि उपनिवश अब भी था जसा उसे बनाने का अभिप्राय था । और कृषि की दृष्टि से वह बाइजान्टियम से बहुत उत्तम था । बाइजान्टीनी बाद में आये और जो बच रहा था उसे ग्रहण किया । कृषि में वे असफल रहे क्योकि थ्रेस के बबर सदा उनपर धावा बोलते रहे । किन्तु सयोग से उन्हें गोल्डन हान बन्दरगाह मिल गया । वह उनके लिए मानो सोने की खान था । क्योकि जो धारा बासफारस से आती है वह जहाज को गोल्डन हान की ओर दोनो ओर से ले जाने में सहायक होती है । यूनानी उपनिवेश की स्थापना क पाच सौ साल बाद और साव भौम राजधानी कुसतुनतुनिया के रूप में परिवर्तित होने के पांच सौ साल पहले दूसरी शती ई०पू० में पोलीबियस ने लिखा था —

बाइजान्टिनी ने एसे स्थान पर अधिकार जमा लिया है जो सुरक्षा तथा समानता दोना दृष्टिया से हेल्नी ससार में सागर की ओर सबसे अनुकूल है और स्थल की ओर सबसे अनुपयुक्त । सागर की ओर काले सागर के मुहाने पर बाइजान्टियम का इतना प्रभुत्व है कि किसी व्यापारिक

१ हेरोडोटस चौथी पुस्तक, अध्याय १४४ ।

जहाज का सागर के भीतर अथवा बाहर जाना बाइजान्टीनिया की इच्छा बिना असम्भव है।"[1]

किन्तु मेगावाजस को उसके स्नीफे के कारण दूरदर्शिता की जो ख्याति मिली वह उसके योग्य न थी। इसमें बिल्कुल सन्देह नही कि जिन उपनिवेशिया ने बाइजान्टियम चुना वे यदि बीस साल पहले आये होते तो उन्होंने रिक्त काल्चिडान को ही चुना होता। और यह भी सम्भव है कि यदि ऐसी आक्रमणकारिया मे उनकी खेती बची होती तो वे अपने स्थान का व्यापारिक विकास की ओर उपयोग न करते।

इसरायली, फोनीशी तथा फिलस्तीनी

यदि हम हलेनी इतिहास स सीरियाई इतिहास की ओर ध्यान दें तो हम देखेंगे कि मिनोई काल के बाद जो जनरेला हुआ और सीरिया में अनेक लोग जा आये वे उसी अनुपात में विभिन्न जनपदा में बसे जिस अनुपात मे भौतिक वातावरण की कठिनाइयाँ थी। दमिश्क की अबाना और फारपर नदिया के आरमियना ने सीरियाई सभ्यता के विकास का नेतृत्व नही ग्रहण किया, न व दूसरे आरमियन जो ओरान्टेज़ क किनारे बसे जहाँ बहुत दिना बाद सेल्युकी वश ने एटियाक राजधानी बनायी, न इसरायल के उपकुल के वे लोग थे जो जाडन नदी के पूरब ठहरे कि गिलीड के बढ़िया चरागाहा में 'बाशान के बैला' को मोटा कर। सबस अद्भुत बात यह है कि सीरियाई ससार के विकास की प्रधानता उन लागो के हाथ मे नही थी जा एजियाई द्वीपा से भाग कर सीरिया म आये थ और जा बबर नही थे, बल्कि मिनोई सभ्यता के वे उत्तराधिकारी थे जिन्होंने कारमेल के दक्षिण तराई तथा बन्दरगाहा पर अधिकार कर लिया। हमारा अभिप्राय फिलस्तीनिया से है। यूनानिया में बेओशिया के समान इनका नाम भी घृणा से लिया जाता है। फिलस्तीनी और बेओशी उतने मलिन न भी रहे हा जितने यूनानिया ने उन्हें चित्रित किया है, और हमारा ज्ञान उनके विराधियो (यूनानियो) द्वारा ही हमें प्राप्त हाता है, तब भी इसका क्या उत्तर है कि उनके इन यूनानी विरोधिया का नाम आने वाली सन्तति श्रद्धा और सम्मान से स्मरण करती है।

सीरियाई सभ्यता की प्रतिष्ठा तीन विशेषताआ के लिए है। उसने वर्णमाला का आविष्कार किया, उसने अतलान्तक महासागर का ढूढ निकाला और उसन ईश्वर के सम्बन्ध म एक विशेष धारणा स्थापित की जो यहूदी, पारसी, इसाई और इस्लामी धर्मों में समान रूप से वर्तमान है और जो मिस्री, सुमेरी भारतीय तथा हलेनी विचार धाराआ से असम्बद्ध है। वह कौन सीरियाई समाज था जिसके द्वारा ये उपलब्धिया प्राप्त हुइ ?

वर्णमाला के सम्बन्ध में हम लोगा को ठीक ठीक ज्ञान नहा है। यद्यपि परम्परा से इसके आविष्कारक फोनिशियाई कहे जाते ह सम्भव है आरम्भिक रूप में मिनोइ लोगो से लेकर फिलिस्तीनिया द्वारा यह हुआ हो। इसलिए सम्प्रति जो ज्ञान हमारा है उसके आधार पर इसके आविष्कार का यश किसी को निश्चय रूप से नही दिया जा सकता। अब दूसरी दोनो बातो पर विचार करना चाहिए।

१ पोलीबियस चौथी पुस्तक, अध्याय ३८।

नही रह सकता । अपने जैतून के मुजा के सहारे जीवित रहने के लिए उसने जतून के तल का परिवतन सीथिया के अनाज से किया । सीथिया के बाजार में जतून का तेल भेजने के लिए उसने बेडे बनाये और जहाजा द्वारा भेजा जिसके कारण आटिका के मिट्टी के बरतना का निर्माण हुआ और व्यापारिक जहाजी बेडा भी तयार हुआ । व्यापार के लिए मुद्रा की आवश्यकता पडती है इसलिए आटिक की चाँदी की खाना की खोज हुई ।

किन्तु यह सम्पत्ति एथेंस की राजनीतिक, कलात्मक तथा बौद्धिक सस्कृति की नीव मात्र थी । इन सस्कृतिया ने एथेंस को हेलास का शिक्षक' और बआनियाई पशुता के जवाब में 'आटिक नमक' की सज्ञा दी । राजनीतिक स्तर पर परिणाम था एथेंस का साम्राज्य । कलात्मक स्तर पर मिट्टी के बरतना पर आटिक के कलाका की चित्रकारी का अवसर मिला जिसके द्वारा नवीन सौदय की सृष्टि हुई जिसने दो हजार वष बाद भी अंग्रेजी कवि कीटस को मुग्ध कर दिया ।

बाइजान्टियम और कालचिडान

हेलेनी ससार का जो विस्तार हुआ उसका कारण हम पहले अध्याय में वणन कर चुके हैं । (पृ० ४ देखिए) इससे हमारे विषय के सम्बन्ध में एक और हेलेनी उदाहरण मिलता है । वह है दो यूनानी उपनिवेशा का अन्तर । एक कालचिडान जो ममर सागर से बासफरस में प्रवेश करते हुए एशिया की ओर था और दूसरा बाइजान्टियम जो यूरोप की ओर था ।

हेरोडोटस कहता है कि इन दोनो नगरा के निर्माण के लगभग एक सौ साल बाद मेगाबाजस के फारसी राज्यपाल ने एक लतीफा बनाया जिसने उसे हेलासपाटी यूनानिया में अमर कर दिया । बाइजान्टियम में उसने सुना कि कालचिडोनियना ने बाइजान्टिनिया से सत्रह साल पहले अपना नगर बनाया । सुनते ही उसने कहा—कि कालचिडोनी सब अन्धे रहे होग । उसका अभिप्राय यह था जब उपयुक्त स्थान उन्हें उपलब्ध था तब उन्हाने अनुपयुक्त स्थान क्या चुना ।[1]

किसी घटना के बाद बुद्धि अजन करना सरल है । मगाबाजस के समय (जब फारसिया ने यूनान पर आक्रमण किया) दोना नगरो के भाग्या का फसला हो चुका था । कालचिडान साधारण कृषि उपनिवेश अब भी था जसा उसे बनान का अभिप्राय था । और कृषि की दृष्टि से वह बाइजाण्टियम से बहुत उत्तम था । बाइजान्टीनी बाद में आये और जो बच रहा था उसे ग्रहण किया । कृषि में वे असफल रहे क्योकि थ्रेस के बबर सदा उनपर धावा बोलते रहे । किन्तु सयोग से उन्हें गोल्डन हान बन्दरगाह मिल गया । वह उनके लिए मानो सोन की खान था । क्योकि जो धारा बासफारस से आती है वह जहाज को गोल्डन हान की आर दोनो ओर से ले जाने में सहायक होती है । यूनानी उपनिवेश की स्थापना के पाच सौ साल बाद और सार्वभौम राजधानी कुस्तुनतुनिया के रूप में परिवर्तित होने के पाँच सौ साल पहले दूसरी शती ई०पू० में पोलीबियस ने लिखा था —

'बाइजान्टिनी ने एसे स्थान पर अधिकार जमा लिया है जो सुरक्षा तथा समानता दोनो दृष्टिया से हेलेनी ससार में सागर की ओर सबसे अनुकूल है और स्थल की ओर सबसे अनुपयुक्त । सागर की ओर काले सागर के मुहाने पर बाइजान्टियम का इतना प्रमुत्व है कि किसी व्यापारिक

१ हेरोडोटस चौथी पुस्तक, अध्याय १४४ ।

जहाज का सागर के भीतर अथवा बाहर जाना बाइजान्टीनिया की इच्छा बिना असम्भव है।'[१]

किन्तु मगावाज़म को उसके लतीफ़े के कारण दूरदर्शिता की जो ख्याति मिली वह उसके योग्य न था। इसमें बिल्कुल सन्देह नहीं कि जिन उपनिवेशियों ने बाइजान्टियम चुना वे यदि बीस साल पहले आये होते तो उन्होंने रिक्त कालचिडान को ही चुना होता। और यह भी सम्भव है कि यदि थ्रेसी आक्रमणकारियों से उनकी खेती बची होती तो वे अपने स्थान का व्यापारिक विकास की ओर उपयोग न करते।

इसरायली, फोनीशी तथा फिलस्तीनी

यदि हम हेलेनी इतिहास से सीरियाई इतिहास की ओर ध्यान दें तो हम देखेंगे कि मिनोई काल के बाद जो जनरेला हुआ और सीरिया में अनेक लोग जो आये वे उसी अनुपात में विभिन्न जनपदों में बसे जिस अनुपात में भौतिक वातावरण की कठिनाइयाँ थीं। दमिश्क की अबाना और फारपर नदियों के आरमियनों ने सीरियाई सभ्यता के विकास का नतत्व नहीं ग्रहण किया, न वे दूसरे आरमियन जो ओरान्टज़ के किनारे बसे जहाँ बहुत दिनों बाद सल्युकी वंश ने एंटियोक राजधानी बनाया, न इसरायल के उपकुल के वे लोग थे जो जार्डन नदी के पूरब ठहरे कि गिलीड के बढ़िया चरागाहों में 'बाशन के बैलों' को मोटा करें। सबसे अद्भुत बात यह है कि सीरियाई समाज के विकास की प्रधानता उन लोगों के हाथ में नहीं थी जो एजियाई द्वीपों से भाग कर सीरिया में आये थे और जो बर्बर नहीं थे, बल्कि मिनोई सभ्यता के वे उत्तराधिकारी थे जिन्होंने कारमल के दक्षिण तराई तथा बन्दरगाहों पर अधिकार कर लिया। हमारा अभिप्राय फिलस्तीनियों से है। यूनानियों में बओशिया के समान इनका नाम भी घृणा से लिया जाता है। फिलस्तीनी और बेओशी उतने मलिन न भी रहे हों जितने यूनानियों ने उन्हें चित्रित किया है और हमारा ज्ञान उनके विरोधियों (यूनानियों) द्वारा ही हमें प्राप्त होता है, तब भी इसका क्या उत्तर है कि उनके इन यूनानी विरोधियों का नाम आने वाली सन्तति श्रद्धा और सम्मान से स्मरण करती है।

सीरियाई सभ्यता की प्रतिष्ठा तीन विशेषताओं के लिए है। उसने वर्णमाला का आविष्कार किया, उसने अतलान्तक महासागर को ढूंढ निकाला और उसने ईश्वर के सम्बन्ध में एक विशेष धारणा स्थापित की जो यहूदी, पारसी, ईसाई और इस्लामी धर्मों में समान रूप से वर्तमान है और जो मिस्री, सुमेरी भारतीय तथा हेलेनी विचार धाराओं से असम्बद्ध है। वह कौन सीरियाई समाज था जिसके द्वारा ये उपलब्धियाँ प्राप्त हुईं?

वर्णमाला के सम्बन्ध में हम लोगों को ठीक ठीक ज्ञान नहीं है। यद्यपि परम्परा से इसके आविष्कारक फ़ोनिशियाई कहे जाते हैं सम्भव है आरम्भिक रूप में मिनोई लोगों से लेकर फिलिस्तीनियों द्वारा यह हुआ हो। इसलिए सम्प्रति जो ज्ञान हमारा है उसके आधार पर इसके आविष्कार का यश किसी को निश्चय रूप से नहीं दिया जा सकता। अब दूसरी दोनों बातों पर विचार करना चाहिए।

१ पोलीबियस चौथी पुस्तक, अध्याय ३८।

वे कौन सीरियाई साहसी नाविक थे जो सारा भूमध्यसागर पार कर, जिबराल्टर डमरूमध्य पार कर आगे गये ? निश्चय ही फिलिस्तीनी नहीं । यद्यपि ये मिनोई वंश के थे फिर भी एसड्रेलन[1] और शेफेला[2] के उर्वर क्षेत्र के लिए युद्ध करते हुए इफ्राइम[3] और जूदा[4] के पहाड़ी क्षेत्रों के रहने वाले इसराइलियों से हारे जो उनसे अधिक वीर थे । अतलान्तक की खोज करने वाले टायर[5] और सिडन[6] के फिनिशियाई थे ।

ये फिनिशियाई की जातियों के अवशेष थे जो फिलिस्तीनियों और हिब्रुओं के आने के पहले वहाँ के स्वामी थे । यह बात बाइबिल के प्रारम्भिक अध्याय में वंश परम्परा में दी गयी है जहाँ हम पढ़ते हैं कनआँ (नोआ के पुत्र, हेम के पुत्र) ने सिडन को उत्पन्न किया जो उसका प्रथम पुत्र था । वे इस कारण बच गये कि उनका निवास जो सीरियाई तट के मध्य भाग में था जो आक्रमणकारियों के लिए पर्याप्त आकर्षक नहीं था । फिनीशिया में, जिसे फिलिस्तीनी छोड़कर चले आये थे और शेफेला में बहुत अन्तर है । तट के इस भाग में कोई उपजाऊ मैदान नहीं है । लेबनान पर्वत सागर से सीधे आरम्भ होता है । यह इतना खड़ा है कि सड़क अथवा रेल बनाने की गुंजाइश नहीं । फिनीशियाई नगरों में बिना समुद्र से गये आपस में भी सरलता से सम्पर्क नहीं स्थापित हो सकता था । इनका सबसे विख्यात नगर टायर करण्ट के खोने की भाँति पहाड़ी टापू पर बसा है । इस प्रकार जब फिलिस्तीनी भेड़ों की भाँति घास चरने में मग्न थे फिनीशियाइयों ने जिनका सामुद्रिक आवागमन अभी तक केवल बाइब्लस और मिस्र के बीच तक सीमित था, मिनोइयों की भाँति खुले समुद्र में प्रवेश किया और अफ्रीकी तथा पश्चिमी भूमध्यसागर के स्पेनी तट पर नया निवास बनाकर अपने ढंग से सीरियाई सभ्यता स्थापित की । फिनीशियाइयों के इस सागर पार के प्रतापशाली नगर कारथेज ने फिलिस्तीनियों को स्थल युद्ध में भी परास्त किया, जिसमें ये कुशल समझे जाते थे । फिलिस्तीनियों का सबसे विख्यात समर्थक सनिक गाथ का गोलियथ है । फिनीशियाई हैनिबल की तुलना में यह तुच्छ है ।

अतलान्तक सागर की खोज भौतिक दृष्टि से मनुष्य की शक्ति का चमत्कार अवश्य है किन्तु आत्मिक दृष्टि से इन लोगों ने एकेश्वरवाद की जो खोज की उसके सामने यह कुछ नहीं है । और यह चमत्कार उस सीरियाई समाज की देन है जिसे इसराइलियों ने एक स्थान पर छोड़ दिया था जिसकी भौतिक स्थिति फिनीशियाई तट अर्थात् एफ्राइम तथा जूदा के पहाड़ी प्रदेश से भी असन्तोषजनक था । ऐसा जान पड़ता है कि पतली मिट्टी की तह वाला पथरीला जंगल से भरा यह भाग प्रायः निर्जन था । यह ईसा के पूर्व चौदहवीं शताब्दी में मिस्र के नये साम्राज्य[1] के पतन के बाद उस अन्तःकाल में बसा जब उत्तरी अरब के रेगिस्तान से हिब्रू खानाबदोशों का अप्रत्यक्ष सीरिया

१ एसड्रेलन—उत्तरी फिलिस्तीन में कारमेल और गिलबोआ पहाड़ों के बीच का मैदान ।
२ [illegible] ।
३ फिलिस्तीन के दो राज्य ।
४ वही ।
५ [illegible] ।
६ [illegible] ।

के किनारा पर पहुँचा। यहाँ उन्होने अपना जीवन खानाबदोशी पशुपालको से बदलकर खेतिहर बना दिया और स्थावर बनकर पथरीली धरती जोतने-बोने लगे। और उस समय तक अनात थे जब तक सीरियाई सभ्यता चरम सीमा को नही पार कर गयी। यहाँ तक कि पाचवी शती ई० पू० तक जब सभी पगम्बर अपनी वाणी सुना चुके थे हेरोडोटस को इसरायल का नाम भी नही मालूम था। और हेरोडोटस ने जो सीरियाई ससार का चित्र खीचा है उसमे भी फिलिस्तीनी देश के सामने इसरायली देश छिपा हुआ है। उसने लिखा है 'फिलस्तीनियो का प्रदेश'[1] और आज भी वह फिलस्तीन (या पैलेस्टाइन) कहा जाता है।

एक सीरियाई कथा म बताया गया है कि किस प्रकार इसराइलियो के ईश्वर ने इसरायल के राजा की परीक्षा ली। ऐसी कठोर परीक्षा जैसी किसी मनुष्य की ईश्वर ले सकता है।

"सुलेमान के सामने ईश्वर एक रात सपने में प्रकट हुआ। उसने कहा, 'जो चाहो मुझसे मागो, मै तुम्हें दूगा।' और सुलेमान ने कहा—'इस सेवक को ऐसा हृदय दीजिए जिसम सूझ-बूझ हो। ईश्वर इस बात से प्रसन्न हुआ और उससे कहा—'तूने मुझस यह माँगा है अपने लिए अधिक जीवन नहीं माँगा, अपने लिए धन-दौलत नही माँगी, अपने वैरियो की पराजय नही मागी, किन्तु अपने लिए बुद्धि माँगी जिससे विवेक आ सके, तो म तेरे वचन के अनुसार ही वरदान देता हूँ। तुझे ऐसा हृदय देता हूँ जिसमे सूझ-बूझ हो, विवेक हो, जसा किसी के पास न पहले था न कभी आगे होगा। म तुझे वह भी देता हूँ जो तूने नही माँगा है—धन और प्रतिष्ठा भी और तेरे समान राजा आगे कभी नही होगा।'[2]

सुलेमान की इच्छा का आख्यान विशेष जाति के इतिहास का दृष्टान्त है। इसरायलियो के आत्मिक ज्ञान की शक्ति फिलस्तीनियो की सनिक शक्ति से तथा फिनीशियो की सामुद्रिक शक्ति से बढकर थी। वे उन वस्तुओ के पीछे नही दौडे जिनके लिए अ-यहूदी (जेण्टाइल) दौडते थे। वे ईश्वर के राज्य की कामना करते थे और सब वस्तुएँ साथ में मिल जाती थी। जहाँ तक वैरियो के जीवन का प्रश्न था, फिलस्तीनी उनके हाथो में सौप दिये गये। जहा तक सम्पत्ति का प्रश्न है टायर और कारथेज के उत्तराधिकारी यहूदी हुए जिनका व्यवसाय ऐसा था कि फिनीशियो ने कभी कल्पना भी नही की होगी और ऐसे देशो से उनका व्यवहार चलता था जिनका ज्ञान भी फिनीशियो को नहीं था। जहा तक दीर्घ जीवन का प्रश्न है, यहूदी आज भी जीवित ह जब फिनीशियाई और फिलस्तीनी का शेष भी नही रहा। इनके पुराने सीरियाई पडोसी गल गये और नये सिक्को में ढल गये जिन पर नये चित्र और नये मूल्य अंकित हो गये, इसराइलियो पर उस रासायनिक क्रिया का प्रभाव नही पडा जिसे इतिहास न सार्वजनिक राज्य तथा सार्वजनिक धर्मतन्त्रो (चर्चों) और राष्ट्रो के सचरण की घरिया (क्रूसिबल) म पिघला कर नवीन रूप दिया और जिसके शिकार हम सभी अ-यहूदी (जेण्टाइल) बारी-बारी से हुए।

ब्रैण्डेनबुग तथा राइन प्रदेश

अटिका और इसरायल से ब्रैण्डेनबुग का बहुत दूर का फासला और बहुत अधिक उतार है।

१ हेरोडोटस दूसरी पुस्तक, अध्याय १०४। सातवीं पुस्तक, अध्याय ८६।
२ किग्ज, ३।५-१३।

किन्तु जिस नियम पर विचार हो रहा है उसका एक और उदाहरण है। यदि आप उस अनाकर्षक प्रान्त की यात्रा कर जो फ्रेडरिक महान् का प्रारम्भिक निवास था—अर्थात् ब्रण्डेनबुर्ग, पोमेरनिया तथा पूर्वी प्रशा की, जहाँ चीड के वन ह और रेतीले मदान है तो आप समझेंगे कि यूरेशियाई स्टेप के किसी बाहरी क्षेत्र में यात्रा कर रहे ह। यहाँ स बाहर जिस ओर जाइए चाहे डनमाक के चराई के मदान और सफेद (बीच) के जगलो की ओर, या लिथुएनिया के काली मिट्टी के प्रदेश की ओर या राईन प्रान्त के अगूर के प्रदेश की ओर, सभी ओर सुखमय तथा सुदर प्रदेश में आप प्रवेश करते ह। किन्तु मध्ययुगीन उपनिवेशको के जिन वशजो न इन 'असुदर' प्रदेशो में प्रवेश किया उन्होने हमारे पश्चिमी समाज के इतिहास के निर्माण में अभूतपूव योगदान किया। इतना ही नही कि उन्नीसवी शती में उन्होने जरमनी पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया और बीसवी शती में जरमनी को प्रेरित किया कि हमारे समाज में व सावभौम राज्य की स्थापना करें? प्रशियनो ने अपने पडोसियो को यह भी सिखाया कि बलुई धरती में कृत्रिम खाद डालकर अनाज कसे उत्पन्न किया जाता है, किस प्रकार अनिवाय शिक्षा प्रणाली द्वारा सारी जनता में अभूतपूव सामाजिक दक्षता इन्होन उत्पन्न की और अनिवाय स्वास्थ तथा बेकारी के बीम की प्रणाली द्वारा अभूतपूर्व सामाजिक सुरक्षा स्थापित की।

स्काटलड और इग्लड

यह तक उपस्थित करन की आवश्यकता नही है कि स्काटलड इग्लड से 'कठोर' देश है। दोनो जातियो के स्वभावो में जो कुख्यात अतर है उस पर भी विस्तार से विचार करने की आवश्यकता नही है। जसे स्काट गम्भीर, मितव्ययी, सुनिश्चित, दृढ, सावधान, जागरूक तथा सुशिक्षित होता है इसके विपरीत अग्रज छिछला, खर्चीला, अस्पष्ट, उग्र (स्पासमोडिक), असावधान, स्वच्छन्द, सरल तथा पुस्तकी ज्ञान के अनुकूल होता है। इस परम्परागत तुलना को अग्रेज शायद विनोद समझें। अधिकाश बातो को वह विनोद ही समझता है। स्काट एसा नही समझता। जानसन बासवेल स सदा खीझ कर कहा करता था कि स्काट को यदि कोई सुदर दृश्य दिखाई देता है तो वह इग्लड की ओर की सडक है। जानसन के जन्म क पहल एन रानी के एक विनोदी दरबारी ने कहा था कि यदि केन स्काट होता तो उस जो दण्ड दिया गया वह उल्टा होता। उसे दण्ड दिया गया था कि वह जीवन भर ससार में भ्रमण करता रहे इसके बजाय उसे दण्ड दिया जाता कि वह घर पर ही रहे। साधारणत यह धारणा कि अग्रजी साम्राज्य क निर्माण में और धार्मिक तथा राज्य के ऊँचे स्थानो को ग्रहण करने में स्काट लोगो की सख्या उनकी आबादी के अनुपात से कहा अधिक है, बिल्कुल ठीक है। विक्टोरिया के काल के इग्लड में पार्लिमण्ट में जो ऐतिहासिक सघष चला था वह एक विशुद्ध स्काट और एक विशुद्ध यहूदी के बीच था। ग्लडस्टन के बाद जो इग्लड में आज तक प्रधान मन्त्री हुए उनमें लगभग आधे स्काट थे।[1]

१ रोजबरी, बालफोर, कम्बेल-बनरमन और मकडोनल्ड, इनमें बोनरलॉ का नाम भी जोडा जा सकता है, जो कनडा में स्काट-आइरिश परिवार में पदा हुए थे। किन्तु उनकी माता शुद्ध स्काट थी और वह ग्लासगो में रहने लगे। इस प्रकार पाँच हुए। सात एसे थे जो स्काट नहीं थे—सम्पादक। (इसी सूची में मकमिलन का नाम भी जोड देना चाहिए—अनुवादक।)

उत्तरी अमरीका के लिए सघप

इस विषय का क्लासिकी उदाहरण हमारे पश्चिमी यूरोप का इतिहास है। लगभग आधे दजन उपनिवेशको ने उत्तरी अमरीका पर आधिपत्य स्थापित करने का हाड लगाया। इसमे न्यू इगलड वाले विजयी हुए। इसके पहले के अध्याय में हमने बताया है कि जो लोग अत में उस प्रायद्वीप के मालिक हुए उन्हें किन स्थानीय कठोर परिस्थितियो का सामना करना पडा। इस न्यू इग्लड के वातावरण (एनवायरनमेण्ट) की जिसकी बानगी टाउन हिल का स्थल है, तुलना उन अमरीकी वातावरण से हम कर जिनमें न्यू इगलड के प्रतियोगी असफल रहे। इनमें डच, फ्रेंच, स्पेनी, तथा वे अग्रेजी उपनिवेशी थे जो अतलातक समुद्र के दक्षिणी क्षेत्र में और वरजिनिया के इधर उधर बसे थे।

सत्रहवी शती के मध्य जब ये सब दल अमरीकी महाद्वीप के किनारे पहले-पहल बस तब सरलता से यह भविष्यवाणी की जा सकती थी कि अदर के प्रदेश के आधिपत्य के लिए इनम सघप होगा। किन्तु १६५० में सबसे दूरदर्शी भी नही बता सकता था कि विजयी कौन होगा। शायद वह इतना बुद्धिमान होता कि कह देता कि स्पेनी विजयी नही होगे यद्यपि स्पष्टत उनके पास दो सम्पदाएँ (असेट) थी। एक तो यह कि वे मक्सिको के स्वामी थे। अमरीकी क्षेत्र का यही प्रदेश था जिसका परिष्कार एक पूववर्ती सभ्यता से किया जा सकता था, दूसरी उनकी अमरीकी शक्तियो में ख्याति थी जिसके योग्य अब वे नही रह गये थे। भविष्य-वक्ता मक्सिको के स्वामित्व की इसलिए गणना न करता कि वह दूर था। स्पेनी दबदबा की गणना इसलिए न करता क्योकि जो यूरोपीय युद्ध (तीस वर्षीय) अभी समाप्त हुआ था उसमें स्पेन की प्रतिष्ठा गिर चुकी थी। उसने कहा होता कि यूरोप में फ्रास स्पेन की सनिक शक्ति पर विजय प्राप्त कर लेगा और सामुद्रिक शक्ति में हालड और इग्लड उससे बढ जायगा। और उत्तरी अमरीका की प्राप्ति का होड हालड, फ्रास और इगलड में रह जायगा। निकट की दृष्टि से हालड की विजय सबसे आशापूर्ण है। उसकी सामुद्रिक शक्ति इगलड तथा फ्रास दोनो से बढकर है। और हडसन नदी की घाटी द्वारा अन्दर के प्रदेश में प्रवेश करने के लिए उसके पास सुगम जलमार्ग है। किन्तु दूर की दृष्टि से देखा जाय तो फ्रास की विजय ठीक जान पडती है। सेंट लारेंस नदी के मुहाने से उसका जलमार्ग अधिक उत्तम है और अपनी प्रबल सनिक शक्ति द्वारा वह यूरोप म हालड की सयशक्ति को क्षीण करके पस्त कर सकता है। सम्भवत वह प्रेक्षक यह भी कहता है कि मै विश्वासपूर्वक कह सकता हूँ कि दोनो अग्रेजी दल कही न ठहरते। शायद दक्षिण के अग्रेज उपनिवेशक बच जाते और एक घेरे म रह जाते और फ्रेंच चाहे डच जो भी मिसिसिपी की घाटी का विजेता होता उन्हें अदर के प्रदेश से अलग कर देता। एक बात निश्चित है कि न्यू इग्लड की बजर और उजाड धरती पर के रहने वाले लोप हो जायगे क्योकि हडसन के किनारे रहने वाले डचो ने उन्हें उनके सम्बन्धियो से अलग कर दिया है और उधर सेंट लारेस स फ्रेंच उन्हें दबा रहे ह।

मान लीजिए हमारे प्रेक्षण सोलहवी शती की समाप्ति के बाद भी जीवित है। १७०१ में वह प्रसन्न होगा कि मने डचो की तुलना में फ्रेंच के सम्बन्ध में जो भविष्यवाणी की थी वह सच निकली क्योकि इन लोगो ने हडसन का क्षेत्र १६६४ में फ्रेंच को सौंप दिया। इसी बीच फ्रेंच सेंट लारस होते हुए ग्रेट झीलो तक बढ गये और बढ़ते हुए मिसिसिपी की बेसिन तक पहुँचे।

व पूर्ण रूप से पराजित हो गये (१८५४-६०) और प्रशान्त तक कभी नहीं पहुँच सके। न्यू इंग्लैंड वाले आज सिएटिल से लेकर लास ऐंजेलेस तक सारे प्रशान्त तट के स्वामी हैं। दक्षिण वालों ने अपने भाप के जहाजों के बल पर सोचा था सारे पश्चिम को हम एक आर्थिक तथा राजनीतिक सूत्र में बाँध लेंगे। किन्तु 'यांत्रिक विचार' समाप्त नहीं हो गये। भाप के जहाजों को रेल के इंजन ने मात कर दिया और वह सब दक्षिण वालों से ले लिया जो भाप के जहाजों की सहायता से उन्हें मिला था क्योंकि हडसन की घाटी और न्यूयार्क से जो अतलान्तिक का महाद्वार है, पश्चिम जाने की राह रेल के युग से साकार हुई। शिकागो से न्यूयार्क तक रेल द्वारा यातायात उससे अधिक हो रहा है जो नदी द्वारा सेंट लुई से न्यू आरलियन्स तक होता है। महाद्वीप के भीतर यातायात की प्रगति उत्तर-दक्षिण की अपेक्षा पूरब-पश्चिम अधिक है। उत्तर-पश्चिमी भाग दक्षिण से अलग हो गया है और लाभ तथा भावनात्मक दृष्टि से उत्तर-पूरब से मिल गया है।

इस प्रकार पूरब वालों ने जो पहले दक्षिण वालों को जहाज और बिनौला निकालने की मशीन देते थे, उत्तर पश्चिम वालों को दो वरदान दिये कि एक ओर तो उसने रेलवे इंजन दिया, दूसरी ओर अनाज काटने और बाँधने की मशीन दी। और उनकी दो समस्याओं को हल किया। यातायात का और श्रमिकों का। इन दो 'यांत्रिक कल्पनाओं' द्वारा उत्तर-पश्चिम की मुक्ति निश्चित हो गयी। और दक्षिण घरेलू युद्ध (सिविल वार) आरम्भ होने के पहले हार गया। आर्थिक पराजय का प्रतिकार करने के लिए दक्षिण ने सैनिक युद्ध ठाना जिसमें वह विनाश जो अवश्यम्भावी था पूरा हो गया।

यह कहा जा सकता है कि उत्तरी अमरीका में जितने उपनिवेशक थे सभी को अपनी परिस्थितियों का कठोर सामना करना पड़ा। कैनेडा में फ्रांसीसियों को आर्कटिक की कटार शीत का सामना करना पड़ा और लुइसियाना में नदियाँ वैसी ही विध्वंसकारी और अविश्वसनीय थीं जितनी चीन की ह्वांगहो जिसके सम्बन्ध में इस प्रकार की तुलनाओं में पहले कहा जा चुका है। फिर भी जब मिट्टी, जलवायु, यातायात के साधन इत्यादि का विचार किया जाता है तब इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि न्यू इंग्लैंड वालों का उपनिवेश सब प्रदेशों से कठोर था। इस प्रकार उत्तरी अमरीका के इतिहास से भी हमारे मन्तव्य का समर्थन होता है कि जितनी ही अधिक कठिनाई का सामना करना होगा उतनी ही अधिक स्फूर्ति मिलेगी।

(२) नयी भूमि द्वारा प्रेरणा

इतना तो भौतिक परिस्थितियों के प्रभाव की तुलना के सम्बन्ध में कहा गया कि विभिन्न अंगों में कठिनाइयाँ उपस्थित हुई हैं। इसी प्रश्न पर अब दूसरी दृष्टि से विचार किया जाय। भू प्रदेश (टर्न) के वास्तविक स्वरूप के अतिरिक्त यह देखा जाय कि पुरानी भूमि तथा नयी भूमि की तुलना में कौन अधिक स्फूर्तिदायक होती है। क्या नयी भूमि में किसी काम का प्रभाव स्वयं स्फूर्तिदायक होता है? इसका उत्तर अदन से निष्कासन की ओर मिस्र से प्रस्थान की कथाओं में 'हाँ' मिलता है। अदन के तिलिस्मी बाग से आदम का क्रियाशील संसार में प्रवेश करना आदिम मानव का फल एकत्र करने वाली आर्थिक व्यवस्था को त्यागकर कृषि तथा पशु-पालन वाली सभ्यता की ओर जाने का द्योतक है। मिस्र से इसरायल के वंशजों ने जो प्रस्थान किया तो उन्होंने ऐसी पीढ़ी को जन्म दिया जिसने सीरियाई सभ्यता की नींव रखी। इन पौराणिक कथाओं से हटकर जब हम धार्मिक इतिहासों को देखते हैं तब इस अन्तर्ज्ञान की भावनाओं की

पुष्टि होती है। हम इस प्रकार के उदाहरण मिलते हैं। जो लोग पूछते थे कि नजारथ[1] से क्या कोई अच्छी वस्तु निकल सकती है। उन्हें यह जानकर भय उत्पन्न हुआ कि अ-यहूदियों के अज्ञात गाँव गलिली में यहूदियों का मसीहा उत्पन्न हुआ। यह गाँव वही नयी भूमि थी जिसे ईसा के जन्म से सौ से कुछ कम वर्ष पहले मक्काबियों[2] ने यहूदियों के लिए जीता था। और जब यह गलीलिया का सरसों का बीज असंख्य दानों में उगा तब यहूदियों का आतंक सक्रिय विद्वेष में परिवर्तित हो गया। यह विद्वेष केवल जूडिया[3] में ही नहीं, इधर उधर जो यहूदी बिखरे थे उनमें भी प्रविष्ट हुआ। और नये धर्म के प्रचारक जानबूझ कर अ-यहूदियों की ओर मुड़े और ईसाइयों के लिए उन्होंने नया-नया संसार विजय किया जो मक्काबी राज्य की अन्तिम सीमा से भी परे थे। बौद्ध इतिहास भी यही बताता है। इस भारतीय धर्म की निश्चित विजय भारतीय जगत् की पुरानी भूमि पर नहीं हुई। हीनयान सीलोन में गया जो भारतीय सभ्यता का उपनिवेश था। महायानी अपने भावी राज्य सुदूर पूर्व की ओर, लम्बी तथा चक्करदार राह से तब गये जब भारतीय प्रांत पंजाब पर, जो सीरियाई तथा हेलनी सभ्यता ग्रहण कर चुके थे उन्होंने विजय प्राप्त की। विदेशी संसार का इन नयी भूमियों पर सीरियाई और भारतीय धर्मों की प्रतिभा की सर्वोच्च अभिव्यक्ति हुई जिसने इस सत्य को प्रमाणित किया कि अपने घर और अपने देश को छोड़ कर पैगम्बर का हर जगह आदर होता है।

इस सामाजिक नियम की एक अनुभवसिद्ध सरल परीक्षा उन सभ्यताओं द्वारा होती है जो ऐसे 'सम्बंधित' समाज में विकसित हुई जो कुछ तो ऐसी भूमि पर बसे जहाँ उनके पहले एक सभ्यता विकसित हो चुकी थी और कुछ ऐसी भूमि पर जहाँ नये समाज ने अपनी नयी सम्बंधित सभ्यता का विकास किया। इस नयी तथा पुरानी भूमियों के प्रेरणात्मक प्रभाव की परीक्षा इन सम्बंधित सभ्यताओं में से किसी एक के जीवन वृत्त का अध्ययन करके कर सकते हैं। हम उनमें उन बातों को देखें कि किस क्षेत्र में उन्होंने विशेषता अर्जित की है और तब हम यह देखें कि जिस भूमि पर यह विशेषता प्राप्त की गयी है वह नयी थी या पुरानी।

पहले हम हिन्दू-सभ्यता पर विचार करें। हम यह देखें कि हिन्दू-समाज के जीवन में जो नया सृजनात्मक तत्त्व था विशेषतः धर्म में, जो सदा से हिन्दू-समाज के जीवन का मुख्य तथा सर्वश्रेष्ठ तत्त्व है, वह कहाँ से आया। हम देखते हैं कि इसका स्रोत दक्षिण था। हिन्दू धर्म के विशेष रूपों का विकास यहीं हुआ। जैसे देवताओं का पार्थिव रूप में तथा मूर्तियों के रूप में निर्माण करना और मंदिरों में स्थापित करना भावात्मक व्यक्तिगत सम्बन्ध जो उपासक और उसके उपास्य देवता में है पार्थिव पूजन का तात्त्विक (मेटाफिजिकल) उदात्तीकरण (सबलियेशन) और बौद्धिक कुतर्क पर आधारित दर्शन (हिन्दू धर्म दर्शन के प्रतिष्ठापक शंकराचार्य ७८८ ई० के लगभग मलाबार में पैदा हुए)। दक्षिण भारत नयी भूमि थी या पुरानी? यह नयी भूमि थी।

१ पलेस्टाइन का नगर, जहाँ ईसा का आरम्भिक जीवन बीता था।—अनुवादक।

२ यहूदी परिवार जो सीरियाइयों के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए इतिहास में विख्यात है।—अनुवादक।

३ पलेस्टाइन के दक्षिण में जारडन के पश्चिमी किनारे एक जिला।—अनु०।

इसके पहले के भारतीय समाज मे यह सम्मिलित नही हुई थी। यह अपने जीवन के अन्तिम काल में, मौर्य साम्राज्य के काल में जो भारतीय समाज का सार्वभौम राज्य था सम्मिलिति हुई। (लगभग ३२३ से १८५ ई० पू०)।

सीरियाई समाज से दो सम्बद्ध समाजो की उत्पत्ति हुई—अरब और ईरानी। दूसरी अधिक सफल हुई और अपनी 'बहन' को हजम कर गयी। ईरानी सभ्यता किस क्षेत्र मे बहुत स्पष्ट रूप में विकसित हुई? युद्ध, राजनीति, वास्तुकला, साहित्य आदि मे इसकी सभी उपलब्धियाँ ईरानी ससार के एक अथवा दूसरी छोर पर पूर्ण हुई। या तो हिन्दुस्तान में या अनातोलिया में। पहली में मुगल साम्राज्य के रूप में और दूसरी में उसमानिया (आटोमन) साम्राज्य के। दोनों उपलब्धियो की भूमि पहले की सीरियाई सभ्यता से सुदूर नयी भूमि थी। एक भूमि हिन्दू मे छीनी गयी थी और दूसरी परम्परावादी ईसाई समाज से। इन दोनो उपलब्धियो की तुलना यदि मध्य की ईरानी सभ्यता से की जाय, जो सीरियाई सभ्यता से ग्रहण की गयी पुरानी भूमि पर थी, तो वह सभ्यता महत्त्वहीन है।

परम्परावादी ईसाई सभ्यता ने सबसे अधिक शक्ति किस प्रदेश में दिखायी? इतिहास पर दृष्टि डालने से यह पता चलता है विभिन्न कालो में इसके गुरुत्व का केन्द्र भिन्न क्षेत्रो में था। हेलेनी अन्त काल से निकलने पर पहले युग में परम्परावादी ईसाइयत का जीवन सबसे सशक्त अनातोलिया के पठार के मध्य तथा उत्तरपूर्वी भागो में था। उसके पश्चात् नवी शती के मध्य से तथा उसके बाद यह गुरुत्व केन्द्र अन्तर्डमरूमध्यो के एशियाई भाग से हटकर यूरोपीय भाग की ओर चला गया। और जहाँ तक परम्परावादी ईसाई समाज के आरम्भिक तने (स्टेम) का प्रश्न है वह तबसे बालकन प्रायद्वीप में ही है। किन्तु वर्तमान युग में परम्परावादी ईसाई धर्म का मुख्य तना अपनी शक्तिशाली सभी शाखाओ से ऐतिहासिक महत्त्व में दब गया है।

ये तीनो क्षेत्र नये माने जायें या पुराने? जहाँ तक रूस का प्रश्न है उत्तर स्पष्ट है। मध्य तथा उत्तर-पूर्वी अनातोलिया परम्परावादी ईसाई समाज की दृष्टि से नयी भूमि है यद्यपि दो दो हजार वर्ष पहले यह हित्ताइती सभ्यता का आवास था। इस क्षेत्र का हलना करण रुक गया और सदा अरूण रहा। हेलनी संस्कृति को इसकी पहली तथा अन्तिम देन हेलनी समाज के जीवन काल की अन्तिम अवस्था में ईसा की चौथी शती में चर्च के कपाडोशियाई[1] पिताओ द्वारा हुई।

परम्परावादी ईसाई समाज का शेष गुरुत्व-केन्द्र बालकन प्रायद्वीप का भीतरी भूभाग था। वह भी नयी भूमि थी। क्योंकि रोमन साम्राज्य के काल में यह प्रदेश लटिन माध्यम से हेलेनी सभ्यता का हल्का परदा मात्र था और साम्राज्य के विघटन के पश्चात् अन्तकाल मे इस पर्दे का पूर्ण रूप से विनाश हो गया था। उसका कोई चिह्न भी शेष नही रह गया था। साम्राज्य के पश्चिमी प्रान्तो में ब्रिटेन को छोड़कर कहीं इतना पूर्ण विनाश नही हुआ था। ईसाई रोमन प्रान्तो पर गैर ईसाई (पेगन) बर्बर आक्रमणकारियो ने विजय ही नही प्राप्त की, इन बर्बरो ने स्थानीय संस्कृति की सारी बात इस पूर्णता से मिटा दी कि इनके वंशजो को अपने पूर्वजो के इस

१ प्राचीन भूगोल में यह एशिया माइनर का एक जनपद था। ईसा के पहले यह स्वतन्त्र राज्य था। बाद में १७ ई० में यह रोमन प्रदेश हो गया। —अनु०

इसके पहले के भारतीय समाज में यह सम्मिलित नही हुई थी । यह अपने जीवन के अन्तिम काल में, मौर्य साम्राज्य के काल में जो भारतीय समाज का सार्वभौम राज्य था सम्मिलिति हुई । (लगभग ३२३ से १८५ ई० पू०) ।

सीरियाई समाज से दो सम्बद्ध समाजो की उत्पत्ति हुई—अरब और ईरानी । दूसरी अधिक सफल हुई और अपनी 'बहन' को हजम कर गयी । ईरानी सभ्यता किस क्षेत्र मे बहुत स्पष्ट रूप में विकसित हुई ? युद्ध, राजनीति, वास्तुकला, साहित्य आदि में इसकी सभी उपलब्धिया ईरानी ससार के एक अथवा दूसरी छोर पर पूर्ण हुई । या तो हिन्दुस्तान में या अनातोलिया में । पहली में मुगल साम्राज्य के रूप में और दूसरी में उसमानिया (आटोमन) साम्राज्य के । दोनो उपलब्धियो की भूमि पहले की सीरियाई सभ्यता मे सुदूर नयी भूमि थी । एक भूमि हिन्दू से छीनी गयी थी और दूसरी परम्परावादी ईसाई समाज से । इन दोनो उपलब्धियो की तुलना यदि मध्य की ईरानी सभ्यता से की जाय, जो सीरियाई सभ्यता से ग्रहण की गयी पुरानी भूमि पर थी, तो वह सभ्यता महत्त्वहीन है ।

परम्परावादी ईसाई सभ्यता ने सबसे अधिक शक्ति किस प्रदेश में दिखायी ? इतिहास पर दृष्टि डालने से यह पता चलता है विभिन्न कालो में इसके गुरुत्व का केन्द्र भिन्न क्षेत्रो में था । हेलेनी अन्त काल से निकलने पर पहले युग में परम्परावादी ईसाइयत का जीवन सबसे सशक्त अनातोलिया के पठार के मध्य तथा उत्तरपूर्वी भागो में था । उसके पश्चात् नवी शती के मध्य से तथा उसके बाद यह गुरुत्व केन्द्र जलडमरूमध्यो के एशियाई भाग से हटकर यूरोपीय भाग की ओर चला गया । और जहा तक परम्परावादी ईसाई समाज के आरम्भिक तने (स्टेप) का प्रश्न है वह तबसे बालकन प्रायद्वीप में ही है । किन्तु वर्तमान युग में परम्परावादी ईसाई धर्म का मुख्य तना अपनी शक्तिशाली सभी शाखाओ से ऐतिहासिक महत्त्व मे दब गया है ।

ये तीनो क्षेत्र नये माने जायें या पुराने ? जहा तक रूस का प्रश्न है उत्तर स्पष्ट है । मध्य तथा उत्तर पूर्वी अनातोलिया परम्परावादी ईसाई समाज की दृष्टि से नयी भूमि है यद्यपि दो दो हजार वर्ष पहले यह हिताइती सभ्यता का आवास था । इस क्षेत्र का हेलेनी करण रुक गया और सदा अपूर्ण रहा । हेलेनी संस्कृति को इसकी पहली तथा अन्तिम देन हेलेनी समाज के जीवन काल की अन्तिम अवस्था में ईसा की चौथी शती में चर्च के कैपाडोशियाई[1] पिताओ द्वारा हुई ।

परम्परावादी ईसाई समाज का शेष गुरुत्व-केन्द्र बालकन प्रायद्वीप का भीतरी भूभाग था । वह भी नयी भूमि थी । क्योकि रोमन साम्राज्य के काल में यह प्रदेश लैटिन माध्यम में हेलेनी सभ्यता का हल्का परदा मात्र था और साम्राज्य के विघटन के पश्चात् अन्तकाल में इस परदे का पूर्ण रूप से विनाश हो गया था । उसका कोई चिह्न भी शेष नही रह गया था । साम्राज्य के पश्चिमी प्रान्तो में ब्रिटेन को छोडकर कही इतना पूर्ण विनाश नही हुआ था । ईसाई रोमन प्रान्तो पर गैर ईसाई (पेगन) बर्बर आक्रमणकारियो ने विजय ही नही प्राप्त की, इन बर्बरो ने स्थानीय संस्कृति की सारी बात इस पूर्णता से मिटा दी कि इनके वंशजो का अपने पूर्वजो के इस

१ प्राचीन भूगोल में यह एशिया माइनर का एक जनपद था । ईसा के पहले यह स्वतन्त्र राज्य था । बाद में १७ ई० में यह रोमन प्रदेश हो गया । —अनु०

दुष्कम पर बहुत पश्चात्ताप हुआ। यहाँ तक कि तीन सौ साल के बाद नये सिरे से खती करने के लिए बाहर से बीज लाने पडे। आगस्टीन[1] के शिष्ट मण्डल भेजने के समय ब्रिटेन की धरती जितने दिना तक बजर थी उसके दूने समय तक यहा की धरती ऊमर पडी रही। इस प्रकार परम्परावादी ईसाई सभ्यता ने जो दूसरा गुरुत्व केन्द्र स्थापित किया उस भूमि को इन लोगो ने नये सिरे से ऊमर से आबाद किया।

हम देखते ह कि जिन तीन क्षेत्रा में परम्परावादी ईसाई समाज ने विशेषता प्राप्त की वे सब नयी भूमिया थी। यह और भी महत्त्व की बात है कि यूनान ने स्वय जो इसके पहल की सभ्यता का प्रकाशयुक्त केन्द्र था, परम्परावादी ईसाई समाज के इतिहास में कोई महत्त्वपूर्ण योगदान नही किया। हाँ, ईसा की अठारहवी शती में वह जल्माग बना जिसके द्वारा परम्परावादी ईसाई दुनिया में पश्चिमी प्रभाव जबरदस्ती घुसा।

हेलेनी इतिहास के सम्बन्ध में वही प्रश्न हमें उन दो क्षत्रो के लिए पूछना चाहिए जो एक के बाद दूसरे हेलेनी समाज में प्रमुख रहे अर्थात एजियन का एशियाई तट तथा यूरोप में यूनान का प्रायद्वीप। मिनाई सभ्यता की दृष्टि से ये कल्म नयी भूमि पर लग थे कि पुरानी? यहाँ भी भूमि नयी थी। जिस समय मिनोई सभ्यता का सबसे अधिक विस्तार था उस समय भी यूरोप म यूनानी प्रायद्वीप की केवल दक्षिणी तथा पूर्वी तटरेखा पर मिनोल्या की कुछ दुर्गों की शृखला थी। अनातोलिया के तट पर हमारे पुरातत्त्व वेताओ ने मिनोई सभ्यता का कोई चिह्न या प्रभाव भी नहीं पाया है। यह बात इतनी असाधारण है कि केवल सयोग की बात नही कही जा सकती। वल्कि इससे यह होता है कि ये क्षत्र मिनोई सभ्यता के प्रभाव के बाहर थे। इसके विपरीत साइक्लेड द्वीपो ने जो मिनोई सभ्यता के केन्द्र थे हेलेनी इतिहसा में निम्न कोटि का प्रभाव दिखाया। ये द्वीप सागर के अधिपतियो के विनम्र चाकर मात्र थे। हेलेनी इतिहास में क्रीट का जो मिनोई सभ्यता का महत्त्वपूर्ण केन्द्र था कायकलाप और भी आश्चयजनक है।

यह आशा की जा सकती थी कि क्रीट का महत्त्व रहता। केवल एतिहासिक कारणो स नही क्योकि यहाँ मिनाई सभ्यता अपन शिखर पर पहुँची, किन्तु भौगोलिक कारणो से भी। एजियाई द्वीप समूह में क्रीट सबस बडा टापू है और हेलनी ससार के दो महत्त्वपूर्ण सामुद्रिक राह के बीच पडता है। पेरिस से सिसिली का जो जहाज जाते थे उनमें प्रत्यक को क्रीट के पश्चिमी छोर और लेकोनिया से होकर जाना पडता था। पेरिस स मिस्र को जा जहाज जाते थे उनमें प्रत्येक को क्रीट के पूरबा छोर स और रोडस स होकर जाना पडता था। किन्तु जहाँ लेकोनिया और रोडस का हेलनी इतिहास म प्रमुख योगदान था क्रीट अन्त तक अलग अज्ञात और अन्धकारमय था। जिस समय हेलास में राजनीतिज्ञ कलाकार और दाशनिक उत्पन्न हो रहे थे क्रीट में केवल जादूगर डाकू और लोभी पैदा हो रहे थे और बाद में तो बोएशियाई की भाँति हेलेनी लोग भी क्रीटियाई का अपमानजनक अर्थ में प्रयाग करते थ। क्रीटिया न कविता की एक पक्ति में जो ईसाई धम शास्त्र में लिखित है अपन ही लिए इस प्रकार फतवा दिया है—उनके एक पगम्बर न कहा है—क्रीटियाई झूठ पशुवत् और काहिल हात ह।[2]

---

[1] ईसाई सन्त (सन ३५३-४३० ई०)।—अनु०

[2] टाइटस को पत्र—(१) इस पक्ति का लेखक एमिमेनिलीज कहा जाता है।

अन्त में इसी कसौटी से सुदूर पूर्वी समाज को जो चीनी समाज से सम्बन्धित है परखना चाहिए, अपने क्षेत्र के किस भाग में उसने सबसे अधिक शक्ति दिखायी है ? इस समय जापानी तथा दक्षिण चीन वाले[1] इनके सबसे शक्तिशाली प्रतिनिधि ह । और सुदूर पूर्वी इतिहास की दृष्टि से इनकी उत्पत्ति नयी भूमि में हुई है । चीन का उत्तरी पूर्बी समुद्र तट इस प्रजनित (ऐप-परेण्टेड) चीनी समाज के क्षेत्र में पहले नही सम्मिलित था । चीनी इतिहास मे बहुत बाद में इसका समावेश हुआ है । वह भी राजनीति की दष्टि से हैन साम्राज्य के सीमा प्रदश के रूप में और साधारण ढग से । इसके निवासी बबर रहे । सुदूर पूर्वी सम्यता की जो शाखा जापानी द्वीप समूह म पल्लवित हुई वह ईसा की छठी तथा सातवी शती में कोरिया की राह से गयी । यहा की भूमि पर किसी पहले की सस्कृति का चिह्न नही था । सुदूर पूर्वी सभ्यता की इस शाखा का जापान की नयी भूमि पर जो बलवान् पेड हुआ उसकी तुलना परम्परावादी ईसाई सभ्यता की उस शाखा से की जा सकती है जो अनातोलिया के पठार से जाकर रूस की अछूती भूमि पर उगी ।

जैसा हमारे प्रमाणा से सकेत मिलता है, यदि यह ठीक है कि पुरानी भूमि की अपेक्षा नयी भमि से क्रियाशीलता को अधिक प्रेरणा मिलती है तो ऐसी प्रेरणा उन नयी भूमिया में अधिक स्पष्ट है जहा पुरानी भूमिया से सागर की यात्रा करके लोग आये ह । सागर पार स्थापित उप निवेशो में जो यह विशिष्ट प्रेरणा की बात कही गयी है वह मध्यसागर के ई० पू० अतिम पाच सौ वर्षों (१०००–५००) के इतिहास मे बहुत स्पष्ट है । जब उसके पश्चिमी बेसिन में लेवाण्ट की तीन सभ्यताओ से तीन सागरी अग्रगामी दल (पायोनियर) उपनिवेश बसा रहे थे । उदाहरण के लिए इनमें से दो महान् उपनिवेश सीरियाई, कारथेज तथा हेलेनी साइराक्यूज़ अपने मूल नगर टायर और कोरिंथ से कही अधिक बढ गये । मैगना ग्रोशिया (दक्षिणी इटली और सिसिली) में एकियाई उपनिवेश वाणिज्य और उच्च विचारा के केन्द्र बन गय किन्तु पेलोपेनीज के उत्तर तट पर मूल एकियाई समुदाय हेलेनी सभ्यता की उच्चतम अवस्था तक अवरुद्ध अवस्था मे पडे रहे । इसी प्रकार जो लोक्रियन यूनान म रह गये उनसे कही अधिक उन्नति इटली के एपि जेफ्रियाई लोक्रियन कर गये ।

सबसे आकर्षक उदाहरण एट्रसकनो का है । यह तीसरा दल था जो पश्चिमी मध्यसागर के उपनिवेशीकरण में फोइनीशियना तथा यूनानिया से होड में था । जो एट्रसकन पश्चिम गये वे यूनानियो और फोइनीशियना के विपरीत जिस सागर का पार करके आये थे उसके निकट रहने में सन्तुष्ट नही थे । वे इटली के पश्चिमी तट से आगे अदर की ओर चले गये और अपेनाइन पहाड तथा पो नदी को पार करते हुए आल्प्स की तराई तक पहुँच गये । जो एट्रसकन घर पर रह गये उनका चिह्न तक नही रह गया क्याकि इतिहास उनसे अनभिज्ञ है और उनके निवास का भी ठीक-ठीक पता नही है । यद्यपि मिस्री अभिलेखा में यह सकेत मिलता है कि मूल एट्रसकन उस जनरेला में सम्मिलित थे जो मिनोइया के बाद हुआ था और उनका क्रिया-कलाप लेवाण्ट के पूर्वी तट पर कही हो रहा था ।

जनरेला मे समुद्र पार करके जाने का बहुत स्फूर्तिदायक प्रभाव पडता है । ऐसा घटना

१ मूल पुस्तक में 'कटनीज' शब्द का प्रयोग किया गया है । —अनुव

असाधारण है । इस विषय में लेखक को एक ही ऐसा उदाहरण मिलता है और वे हैं एजियन सागर पार कर के अनातोलिया के पश्चिमी तट की ओर ट्युन्नियनो, आयालियना, आयानियना तथा डोरियनो का मिनोइयो के बाद वाला जनरेला, ट्युन्नियना और फिलस्तीनिया का सीरिया के तट की ओर का जनरेला, और एथिलो तथा जूटो का ब्रिटेन की ओर हेलेनी सभ्यता के बाद का जनरेला । ब्रिटना का सागर पार कर उस जगह आना जिसे ब्रिटानी कहते हैं उसी समय आइरिश स्काटो का आरजिल को जाना, और स्काडिनेवियाई वाइकिंग का जनरेला जो उस समय हुआ था जब करिलिजियनो ने मृत रोमन साम्राज्य को पुनरुज्जीवित करने का असफल प्रयास किया था । कुछ उदाहरण हैं । इनमें से फिलस्तीनिया का प्रव्रजन प्राय निष्फल रहा । जैसा कि पहले (पृ० ७७) बताया गया है । ब्रिटना के बाद के इतिहास में भी कोई विशेषता नहीं है । शेष चार सागर के पार के प्रव्रजनो में कुछ ऐसी महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ पायी जाती हैं जो थल पर के प्रव्रजनो में नही मिलती ।

सागर को पार करके जो प्रव्रजन हुए हैं उनमें एक बात सबमें पायी जाती है । सागर पार करने वाले प्रवासियो को अपने सामाजिक उपकरणो को अपने पुराने देश से अपने साथ ले जाना पडा और नये देश में उसका प्रयोग करना पडा । सभी उपकरण—व्यक्ति और समाज, तक्नीक और संस्थाएँ तथा विचार इसी नियम के अधीन हैं । उन सभी वस्तुओ को जो समुद्र यात्रा सहन नही कर सकती पीछे छोड देना पडता है । केवल भौतिक पदार्थ ही नही जिन्हें यात्रा में प्रवासी ले जाते हैं और उन्हें अलग-अलग करके ले जाना पडता है और नये विकास में पहुँचने पर उन्हें अपने मूल रूप में सम्भवत फिर जोडा नही जाता । नये देश में पहुँचकर उपकरणो का यह बंडल जब वह खोलता है तब उसे पता चलता है समुद्र की यात्रा में इन उपकरणो में विचित्र और सूक्ष्म परिवर्तन हो गया है । इस प्रकार का सामुद्रिक प्रवास जब जनरेला द्वारा होता है तब चुनौती अधिक भीषण होती है और प्रेरणा और भी तीव्र होती है । क्योंकि जिस समाज पर यह प्रतिक्रिया हो रही है वह कोई प्रगतिशील समाज नही होता (जैसे यूनानी या फोएनीशियाई उपनिवेशक जिनके सम्बन्ध में पहले विचार किया जा चुका है) वह ऐसा समाज होता है जो गतिहीन है और जो आदिम मानव की अंतिम अवस्था में होता है । जनरेला में यह अकर्मण्यता एकाएक वेग और गति में परिवर्तित हो जाती है । इससे समुदाय के जीवन को शक्ति प्राप्त होती है । और जब यह प्रवास भूमि पर से न होकर जहाज द्वारा होता है तब यह गति अधिक तीव्र हो जाती है । क्योंकि जहाज से जाने पर बहुत-सा सामाजिक उपकरण छोड देना पडता है जिन्हें भूमि पर की यात्रा में प्रवास करने वाले अपने साथ ले जाते हैं ।

(समुद्र यात्रा के बाद) दृष्टि में अन्तर हो गया जिसके कारण देवताओ तथा मनुष्यो के सम्बन्ध में नयी धारणाएँ बन गयी । स्थानीय देवताओ के स्थान पर जिनकी शक्ति उपासको के निवास के क्षेत्र में इतनी व्यापक थी अब ऐसे समवेत (कारपोरेट) देवता हो गये जो विश्व भर पर शासन करते थे । जो मंदिर कलंकित गृह के साथ मिडिल्गार्थ का केन्द्र था वह ईश्वरीय प्रसाद बनाकर सम्मानित किया गया । काल-सम्मानित कथाएँ जिनमें अलग-अलग देवताओ के गुण-गान थे ईश्वरीय गाथाओ में बदल गयी । उसी प्रकार जैसे पहले की वाइकिंग जाति

होमरी यूनानिया में बदल गयी । इस धम ने एक नये दवता ओडिन को जन्म दिया जो मनुष्या का नेता और युद्ध का देवता था ।"[1]

कुछ-कुछ इसी प्रकार जो स्काट आयरलैंड से उत्तरी ब्रिटेन में आये उन्होने नये धम की नीव डाली । यह केवल सयोग की बात नही है कि सागर पार डालरियाडा सन्त कोलम्बा[2] के धार्मिक कार्यों का मुख्य स्थान बना और आयोना उसका केन्द्र ।

समुद्र पार के प्रवास की विशेष घटना यह होती है कि विभिन्न जातीय प्रवत्तिया एक दूसरे में मिल जाती हैं । इसमें पहला उपकरण जो त्याग दिया जाता है वह है आदिम कुटुम्ब दल । क्योंकि किसी एक जहाज में एक ही श्रेणी का दल रह सकता है । अनेक जहाज सुरक्षा के लिए एक साथ चलते हैं और अपने नये निवास में एक साथ रहने लगते ह । वे विभिन्न स्थाना के होते हैं । थल की राह से जा प्रवास होता है उसमें बाल-बच्चा समेत अपने घर का सरो सामान लेकर सारा कुटुम्ब एक साथ धीरे धीरे घाघे की गति से चलता है ।

समुद्र पार के प्रव्रजन की दूसरी विशेषता यह है कि आदिम सस्थाआ का, जिनमें एक ही प्रकार के सामाजिक जीवन की मुख्यत अभिव्यक्ति होती है, विनाश हो जाता है । इस प्रवास के पहले ऐसा नही होता । प्रवास में विभिन्न आर्थिक, राजनीतिक प्रवत्तियाँ, विभिन्न धम तथा कलाएँ मिलती है और नयी सामाजिक चेतना जाग्रत हो जाती है । यदि इस सस्कार की महिमा हम दखना चाहें तो स्काडिनेवी ससार में देख सकते ह । जा स्काडिनेवी घर पर ही रह गये उनकी तुलना करके देखिए—

'आइसलैंड में मई दिवस के खेल-कूद, ववाहिक सस्कार तथा प्रेम के दृश्य उपनिवेशका के बस जाने के बाद नही रह गये । एक तो इस कारण कि बसने वाले यात्रा करके आये थे और प्रबुद्ध श्रेणी के थे, दूसरे यह कि ये ग्रामीण समारोह कृषि से सम्बन्धित थे जो आइसलण्ड के महत्त्व का काय नही हो सकता था ।'[3]

चूकि आयरलण्ड में भी किसी न किसी प्रकार की खेती होती ही थी । इसलिए जो दो कारण बताये गये है उनमें पहला अधिक महत्त्व का है ।

जिस पुस्तक का अवतरण उद्धत किया गया है उसका प्रतिपाद्य विषय यह है कि जो स्काडिनेवियाई कविताएँ 'दि एडल्र एड्डा' के नाम से लिपिवद्ध की गयी उनमें आदिम स्काडिनेवियाई कृषि-नाटय (फरटिलिटी ड्रामा) की बोली के शब्दों का व्यवहार किया गया है । यही भाग था जो स्थानीय सस्कारो में जड पकडे हुए था और जिन्हें प्रवासी अपने साथ जहाज पर लेकर आये । इस सिद्धान्त के अनुसार आदिम सस्कार जो नाटका में विकसित होने थे उन्हे प्रवासिया ने रोक दिया । इस सिद्धान्त का समथन हेलेनी इतिहास में भी होता है । क्याकि यह निश्चित

१ बी० फ्रावबेख द कलचर आव द टयूटन्स, भाग २, पृ० ३०६–७ ।

२ आयरलड के एक सन्त जिन्होंने स्काटलड और उत्तरी इग्लड में ईसाई धम के प्रचार के लिए मिशनरी भेजे ।—अनु०

३ बी० एस० फिल्पाटम दि एल्डर एड्डा एँड एन्शेन्ट स्काडिनेवियन ड्रामा, पृ० २०४ ।

तथ्य है कि यद्यपि हेलेनी सभ्यता का विकास सागर पार आयोनिया में हुआ, आन्मि सम्कारा के आधार पर जो हेलेनी नाटको का विकास हुआ वह यूनान के प्रायद्वीप की भूमि पर हुआ। अपसाला के मन्दिर का प्रतिरूप हेलास में एथेन्स का डायोनाइसस की नाटयशाला थी। दूसरी ओर आयोनिया, आइसलैण्ड तथा ब्रिटेन में सागर पार आने वाल प्रवासियो ने हेलनी, स्काडिनेवियाई तथा एग्लो सक्सन महाकाव्यो की रचना की अर्थात् होमर, दि एड्डा और बेओवल्फ।

गाथा तथा महाकाव्यो का निर्माण उन मानसिक आवश्यकताओ के परिणामस्वरूप होता है जो शक्तिशाली व्यक्तियो के नवीन जागरण तथा महत्त्वपूर्ण सार्वजनिक घटनाओ क कारण उत्पन्न होते ह। होमर कहता है—'उस काव्य की लोग अधिक प्रशंसा करते ह जिनमें कानो में कुछ नवीनता सुनाई देती है।' किन्तु महाकाव्य में नवीनता से अधिक एक बात का मूल्य होता है। वह है कथानक में वास्तविक मानव की अभिरुचि। वर्तमान में तभी तक रुचि रहती है जबतक वीरकाल का वेग और सघर्ष रहता है। किन्तु सामाजिक सवेग अस्थायी होता है और जब वेग समाप्त हो जाता है महाकाव्य तथा गाथा के प्रेमी अनुभव करने लगते ह कि हमारे युग का जीवन निस्तेज हो गया है। तब वे पुरानी की अपेक्षा नयी कविता पसन्द करने लगते ह। तब नये युग के कवि सुनने वालो के मनोभाव के अनुसार पुरानी पीढी की कथाओ को अलकृत करते और दोहराते ह। इसी बाद के युग में महाकाव्य तथा गाथाएँ साहित्यिक पराकाष्ठा को पहुँची। फिर भी यह समझना चाहिए कि ये महान् रचनाएँ कभी न विद्यमान होती यदि सागर पार करने के कष्टो से प्रेरणा न प्राप्त होती। हम इस सिद्धान्त पर पहुँचते हैं कि नाटक का विकास पुराने निवास में होता है—और महाकाव्य का प्रवासियो में।'[1]

सागर पार प्रवास की अग्नि-परीक्षा के फलस्वरूप दूसरी निश्चयात्मक रचना जो जनरेला के पश्चात् होती है वह साहित्यिक नही, राजनीतिक होती है। यह नये ढग का राज्यतन्त्र कौटुम्बिक नही होता, सविदा (कन्ट्रेक्ट) पर आधारित होता है।

सबसे प्रमुख उदाहरण वे नागरिक राज्य ह जिन्हें समुद्रगामी यूनानी प्रवासियो न अनातोलिया के तट पर उन जनपदो में स्थापित किया जो बाद में आयोलिस आयोनिया और डारिस के नाम स विख्यात हुए। हेलेनी वैधानिक इतिहास के अल्प अभिलेखो से पता चलता है इन सागर पार की बस्तियो में जो सगठन हुए उनके आधार विधि और वे प्रदेश थे, कुटुम्ब और रीति रिवाज नही। बाद में यूरोपीय यूनान ने इनका अनुकरण किया। इस प्रकार सागर पार जो नगर राज्य स्थापित हुए जो नये राजनीतिक सगठन के शक्ति केन्द्र कुटुम्ब नही थे जहाज की कम्पनियाँ थी। जिन लोगो ने जहाज पर आपस में सहयोग किया, जसे एक जहाज के सब साथी सागर की विपत्तियो को झेलते हुए करते ह उसी प्रकार वे किनारे आकर तट की धरती की उस पतली पट्टी पर भी करते ह जिसे उन्होने परिश्रम से जीता है और जहाँ उन्हें पृष्ठप्रदेश के वरियो से भय बना रहता है। जिस प्रकार सागर में उसी प्रकार किनारे पर भी, कुटुम्ब से अधिक सगत का महत्त्व होता है और चुने हुए तथा विश्वसनीय नता की आज्ञा रीति रिवाज की भावनाओ से अपर काय करती है। वास्तविकता यह है कि जो जहाजो का गिरोह मिलकर समुद्र पार किसी स्थान पर

१ बी० एस० स्लिपाटस दि एल्डर एड्डा, पृ० २०७।

विजय प्राप्त करता है वह स्वभावत नगर राज्य मे परिवर्तित हो जाता है और स्थानीय दल वन जाना है जिसपर एक चुना हुआ मजिस्टेट शासन करता है ।

जब हम स्काडिनेवियाई जनरेला पर दृष्टि डालते है तब वहाँ भी हमें इसी प्रकार के राजनीतिक विकास का अकुर दिखाई देता है । यदि अकाल प्रसून स्काडिनेवियाई सभ्यता को पश्चिमी यूरोप खा न गया होता और वह विकसित होती तो जो काय आयालिस और आयानिया के नगर राज्यो ने किया था वही आयरिश तट पर ओस्टमन के पाँच नगर राज्य करते या वे पाच नगर (लिंकन, स्टम्फोड, लाइमेस्टर, डरवी और नाटिघम) जिन्हें डैनिया ने मरशिया म अपनी भूमि की सीमा की रक्षा के लिए सगठित किया था । सागर पार स्काडिनेवियाई राजतन्त्र का सबसे सुदर उदाहरण आइसलड का लोकतन्त्र था जो देश अपनी जन्मभूमि (स्काडिनेविया) से पाँच सौ मील दूर आर्टिक सागर के फेरो द्वीप समूह मे एक टापू था जहाँ की धरती ऊसर थी ।

जहा तक एगल्यो और जूटा का समुद्र पार करके ब्रिटेन में आने की घटना है केवल सयाग की ही बात नही है कुछ अधिक भी है कि जिस द्वीप पर पश्चिमी इतिहास के प्रभात में उन प्रवासियो ने अधिकार किया जिन्होने सागर पार कर आदिम कौटुम्बिक बन्धनो को तोड डाला था, उसी द्वीप में हमारे पश्चिमी समाज के महत्त्वपूर्ण राजनीतिक विकास हुए । जिन डेनियो तथा नारमन आक्रमणकारियो ने एगिल्यो के बाद प्रवेश किया और जिन्हे भी बाद मे राजनीतिक उन्नति का श्रेय मिलता है उन्हें भी ऐसे ही बन्धनो के तोडने का अनुभव हुआ था । इन जातियो ने मिलकर राजनीतिक उन्नति की जिसके लिए यहाँ बहुत उपयुक्त वातावरण मिला। इसम आश्चय की बात नही है कि हमारे पश्चिमी समाज ने इग्लड में पहले राजा का निर्माण किया और उसक बाद ससदीय शासन स्थापित करने में सफलता प्राप्त की । इसके विपरीत यूरोप के महाद्वीप में पश्चिमी राजनीतिक विकास रुक गया क्योकि फ्राको और लम्बार्डो में कौटुम्बिक भावना का अस्तित्व बना रहा इस कारण से कि यह सामाजिक दोष आरम्भ में सागर यात्रा से मिट न सका ।

(३) आघात से प्रेरणा

भौतिक वातावरण द्वारा जो प्रेरणा प्राप्त होती है उसकी परीक्षा हमने की । इस अध्ययन को हम यह देखकर पूरा करेंगे कि इसी प्रकार मनुष्य द्वारा उत्पन्न की हुई परिस्थिति का क्या परिणाम होता है । दो परिस्थितियो का अन्तर इसम देखना होगा । एक तो वह मानवी परिस्थिति जो भौगोलिक दृष्टि से उस समाज क बाहर की है जिसपर उनकी प्रतिक्रिया होती है और दूसरी वह जो भौगोलिक दृष्टि से उस समाज स मिली हुई है । पहले वग म वे प्रतिक्रियाएँ सम्मिलित ह जो उन समाजो अथवा राज्यो द्वारा अपने पडोसियो पर होती ह जब दोनो दल किसी विशेष क्षेत्र मे अलग-अलग अधिकारी होते ह । सगठन ऐसे सामाजिक सम्पक में शिथिल होता है और सगठन की दृष्टि से मानवी परिस्थिति जिसका सामना उन्हें करना पडता है वह 'बाहरी' अथवा 'विदेशी' है । दूसरा रूप वह है जिसमें दोनो वग एक ही क्षेत्र में मिले हुए अधिकारी ह और एक वग की प्रतिक्रिया दूसरे वग पर होती है । इस प्रकार के सम्बन्ध को हम 'आन्तरिक' अथवा 'घरेलू' कहेंगे । इस आन्तरिक मानवी परिस्थिति की जाँच हम बाद में करगे । बाहरी आघात के हम और विभेद करेंगे । आकस्मिक आघात और उसके परिणामस्वरूप जो बराबर

तथ्य है कि यद्यपि हेलेनी सभ्यता का विकास सागर पार आयानिया में हुआ, आदिम सस्कारो के आधार पर जो हेलेनी नाटको का विकास हुआ वह यूनान के प्रायद्वीप की भूमि पर हुआ। अपसाला के मदिर का प्रतिरूप हेलास में एथेन्स का डायानाइसस की नाटयशाला थी। दूसरी ओर आयोनिया, आइसलैंड तथा ब्रिटेन में सागर पार आने वाले प्रवासियो ने हेलेनी, स्काडिनेवियाई तथा एग्लो सक्सन महाकाव्यो की रचना की अर्थात् होमर, दि एड्डा और बओवल्फ।

गाथा तथा महाकाव्यो का निर्माण उन मानसिक आवश्यकताओ के परिणामस्वरूप होता है जो शक्तिशाली व्यक्तियो के नवीन जागरण तथा महत्त्वपूर्ण सार्वजनिक घटनाओ के कारण उत्पन्न होते हैं। होमर कहता है—'उस काव्य की लोग अधिक प्रशसा करते हैं जिनमें कानो में कुछ नवीनता सुनाई देती है।' किन्तु महाकाव्य में नवीनता से अधिक एक बात का मूल्य होता है। वह है कथानक में वास्तविक मानव की अभिरुचि। वतमान में तभी तक रुचि रहती है जबतक वीरकाल का वेग और सघर्ष रहता है। किन्तु सामाजिक सवेग अस्थायी होता है और जब वेग समाप्त हो जाता है महाकाव्य तथा गाथा के प्रेमी अनुभव करने लगते हैं कि हमारे युग का जीवन निस्तेज हो गया है। तब वे पुरानी की अपेक्षा नयी कविता पसन्द करने लगते हैं। तब नये युग के कवि सुनने वालो के मनोभाव के अनुसार पुरानी पीढी की कथाओ को अलकृत करते और दोहराते हैं। इसी बाद के युग में महाकाव्य तथा गाथाएँ साहित्यिक पराकाष्ठा को पहुँची। फिर भी यह समझना चाहिए कि ये महान् रचनाएँ कभी न विद्यमान होती यदि सागर पार करने के कष्टो से प्रेरणा न प्राप्त होती। हम इस सिद्धान्त पर पहुँचते हैं कि नाटक का विकास पुराने निवास में होता है—और महाकाव्य का प्रवासियो में।[१]

सागर पार प्रवास की अग्नि परीक्षा के फलस्वरूप दूसरी निश्चयात्मक रचना जो जनरेला के पश्चात् होती है वह साहित्यिक नही राजनीतिक होती है। यह नये ढग का राज्यतन्त्र कौटुम्बिक नही होता सविदा (कन्ट्रेक्ट) पर आधारित होता है।

सबसे प्रमुख उदाहरण वे नागरिक राज्य हैं जिन्हें समुद्रगामी यूनानी प्रवासियो ने अनातोलिया के तट पर उन जनपदो में स्थापित किया जो बाद में आयालिस आयानिया और डारिस के नाम से विख्यात हुए। हेलनी वैधानिक इतिहास के अल्प अभिलेखो से पता चलता है इन सागर पार की बस्तियो में जो सगठन हुए उनके आधार विधि और वे प्रदेश थे, कुटुम्ब और रीति रिवाज नही। बाद में यूरोपीय यूनान ने इनका अनुकरण किया। इस प्रकार सागर पार जो नगर राज्य स्थापित हुए जो नये राजनीतिक सगठन के शक्ति केन्द्र कुटुम्ब नही थे जहाज की कम्पनियाँ थी। जिन लोगो ने जहाज पर आपस में सहयोग किया जैसे एक जहाज के सब साथी सागर की विपत्तियो को झेलते हुए करते हैं उसी प्रकार वे किनारे आकर तट की धरती की उस पतली पट्टी पर भी करते हैं जिसे उन्होंने परिश्रम से जीता है और जहाँ उन्हें पृष्ठप्रदेश के वरियो से भय बना रहता है। जिस प्रकार सागर में उसी प्रकार किनार पर भी कुटुम्ब से अधिक सगत का महत्त्व होना है और चुने हुए तथा विश्वसनीय नेता की आज्ञा रीति रिवाज की भावनाओ से ऊपर काय करती है। वास्तविकता यह है कि जो जहाजो का गिरोह मिलकर समुद्र पार किसी स्थान पर

१ बी० एस० फिल्पाटस　दि एलडर एड्डा, पृ० २०७।

विजय प्राप्त करता है, वह स्वभावत नगर-राज्य में परिवर्तित हो जाता है और स्थानीय दल बन जाता है जिसपर एक चुना हुआ मजिस्टेट शासन करता है ।

जब हम स्काडिनेवियाई जनरेला पर दष्टि डालते ह तब वहाँ भी हमें इसी प्रकार के राजनीतिक विकास का अकुर दिखाई देता है । यदि अकाल प्रसूत स्काडिनेवियाई सभ्यता को पश्चिमी यूरोप खा न गया होता और वह विकसित होती तो जो काय आयोलिम और आयोनिया के नगर राज्यो ने किया था वही आयरिश तट पर ओस्टमन के पाँच नगर राज्य करते या वे पाँच नगर (लिंकन, स्टम्फोड, लाइसेस्टर, डरबी और नाटिंघम) जिन्हें डैनिया ने मरशिया में अपनी भूमि की सीमा की रक्षा के लिए सगठित किया था । सागर पार स्काडिनेवियाई राजतत्र का सबसे सुदर उदाहरण आइसलण्ड का लोकतत्र था जो देश अपनी जन्मभूमि (स्काडिनेविया) से पाँच सौ मील दूर आर्टिक सागर के फेरो द्वीप समूह में एक टापू था जहाँ की धरती ऊसर थी ।

जहाँ तक एगलियो और जूटा का समुद्र पार करके ब्रिटेन में आने की घटना है केवल सयोग की ही बात नही है, कुछ अधिक भी है कि जिस द्वीप पर पश्चिमी इतिहास के प्रभात में उन प्रवासिया ने अधिकार किया जिन्होने सागर पार कर आदिम कौटुम्बिक बधना को तोड डाला था, उसी द्वीप में हमारे पश्चिमी समाज के महत्त्वपूण राजनीतिक विकास हुए । जिन डेनिया तथा नारमन आक्रमणकारियो ने एगिलिया के बाद प्रवेश किया और जिन्हें भी बाद के राजनीतिक उन्नति का श्रेय मिलता है उन्हे भी ऐसे ही बधना के तोडने का अनुभव हुआ था । इन जातियो ने मिलकर राजनीतिक उन्नति की जिसके लिए यहाँ बहुत उपयुक्त वातावरण मिला । इसमें आश्चय की बात नही है कि हमारे पश्चिमी समाज ने इगलड में पहले राजा का निर्माण किया और उसके बाद ससदीय शासन स्थापित करने में सफलता प्राप्त की । इसके विपरीत यूराप के महाद्वीप में पश्चिमी राजनीतिक विकास रुक गया क्योकि फ्राका और लम्बार्डो में कौटुम्बिक भावना का अस्तित्व बना रहा इस कारण से कि यह सामाजिक दाप आरम्भ में सागर यात्रा से मिट न सका ।

(३) आघात से प्रेरणा

भौतिक वातावरण द्वारा जो प्रेरणा प्राप्त होती है उसकी परीक्षा हमने की । इस अध्ययन को हम यह देखकर पूरा करगे कि इसी प्रकार मनुष्य द्वारा उत्पन्न की हुई परिस्थिति का क्या परिणाम होता है । दो परिस्थितिया का अन्तर इसम देखना होगा । एक तो वह मानवी परिस्थिति जो भौगोलिक दष्टि से उस समाज के बाहर की है जिसपर उनकी प्रतिक्रिया होती है और दूसरी वह जो भौगोलिक दष्टि से उस समाज से मिली हुई है । पहले वग में वे प्रतिक्रियाए सम्मिलित ह जो उन समाजा अथवा राज्यो द्वारा अपने पडोसिया पर होती ह जब दोना दल किसी विशेष क्षेत्र में अलग-अलग अधिकारी होते ह । सगठन ऐसे सामाजिक सम्पक में नियमित होता है और सगठन की दष्टि स मानवी परिस्थिति, जिसका सामना उन्हें करना पडता है वह 'बाहरी' अथवा 'विदेशी' ह । दूसरा रूप वह है जिसमें दोना वग एक ही क्षेत्र में मिले हुए अधिकारी ह और एक वग की प्रतिक्रिया दूसरे वग पर होती है । इस प्रकार के सम्बध को हम 'आन्तरिक' अथवा 'घरेलू' कहेंगे । इस आन्तरिक मानवी परिस्थिति की जाँच हम बाद में करेंगे । बाहरी आघात के हम और विभेद करेंगे । आकस्मिक आघात और उसके परिणामस्वरूप जो बराबर

दबाव पडता है। इस प्रकार हमारी परीक्षा के लिए तीन विषय ह। बाहरी आघात, बाहरी दबाव और आन्तरिक दण्ड।

आकस्मिक आघात का क्या प्रभाव पडता है ? हमारी जा प्रस्तावना है कि जितनी ही बडी चुनौती होगी उतनी ही अधिक प्रेरणा मिलेगी, क्या यहाँ भी सत्य उतरती है ? स्वभावत पहले वे स्थितियाँ सामने आती ह जहाँ किसी सैनिक शक्ति को अपने पडोसिया स बराबर सघष करते रहने से प्रेरणा प्राप्त हुई है और फिर असनिक शक्तिया का किसी ऐसे बरी से पराजय मिली है जिनके बल की उन्होने पहले कल्पना नही की थी। जब आरम्भिक साम्राज्य निर्माताओ का अपने काय-काल के बीच ही नाटकीय ढग से पतन होता है तब साधारणत क्या होता है ? क्या वे घराशायी होने पर सिसेरा की भाँति धरती पर पड रहते ह कि हेलेनी कथा के दत्य (जायण्ट) ऐण्टीयस की भाति दुगनी शक्ति लेकर फिर उठते ह ? ऐतिहासिक उदाहरण ऐसे ही मिलते ह कि दूसरी ही बात साधारणतया होती है।

उदाहरण के लिए विदेशी आक्रमण द्वारा पराजय का प्रभाव रोम की गति विधि पर क्या पडा ? एट्रस्का के वेइआई से लगातार पाँच वर्षों के युद्ध के पश्चात् रोम ने विजय प्राप्त की और उसी के पश्चात् यह पराजय हुई। और उसी के पश्चात् रोम की एसी स्थिति हुई कि उसने लैटियम पर अपना प्रभुत्व स्थापित किया। रोमन सेना का एल्लिया में पराजय और पीछे से बबरो द्वारा रोम पर आक्रमण करना और उस पर अधिकार जमा लेना इतना पर्याप्त था कि रोम ने अभी जो शक्ति और कीर्ति अर्जित की थी वह एक क्षण में मिट जाय। किन्तु ऐसा नही हुआ। बल्कि पराजय से रोम इतनी शीघ्रता से पुनरुज्जीवित हो गया कि पचास साल से कम ही अवधि में बाद में अपने इटालियाई पडोसिया से और अधिक दिना तक लडता रहा और अन्त में ऐसी विजय पायी कि सारे इटली पर उसका प्रभुत्व हो गया।

और भी देखिए। उसमानलिया की शक्ति का क्या हुआ जब तमूर खाँ ने वजा जत के सुल्तान बेयजीद यिलदरीस को अगौरा के रण-क्षेत्र में बन्दी बनाया ? यह दुघटना उस समय हुई जब उसमानली परिवार बालकन प्रायद्वीप में परम्परावादी ईसाई समाज को पूण रूप से पराजित करने वाला ही था। इसी सकटकाल में जल्डमरूमध्य के एशियाई तट पर ट्रास आक्जनिया की ओर से वज्र प्रहार हुआ और वे धराशायी हो गये। यह सम्भावना थी कि साम्राज्य का अपूण प्रासाद ढह जाता। किन्तु वास्तव में ऐसा नही हुआ। पचास साल के बाद विजयी मुहम्मद साहब ने कुसतुनतुनिया पर विजय प्राप्त करके बयजीद प्रासाद के मुडर का पत्थर रखा।

रोम के असफल प्रतिद्वन्द्विया के इतिहास से प्रकट होता है कि जिस समय समाज की घोर पराजय होती है उसे उस पराजय के परिणामस्वरूप क्रियात्मक शक्ति प्राप्त होती है यद्यपि और अधिक पराजय के कारण वह शक्ति नष्ट हो जाती है और जिस काय के लिए वह शक्ति उत्पन होती है वह काय नही हो पाता। पहले प्युनिक युद्ध में हमिल्कार बारका की पराजय हुई। उमस उसे उत्तेजना मिली और उसन अपन देश के लिए विजय प्राप्त करके स्पेन में साम्राज्य स्थापित किया। सिसिली जो साम्राज्य यह हार चुका था उससे बडा यह नया साम्राज्य था। दूसरे प्युनिक युद्ध में हैनिबल की पराजय के पश्चात कारयजिनियनो ने पचास वर्षों में अपने सम्पूर्ण विनाश के पहले दो कार्यों से ससार को चकित कर दिया। पहला तो यह कि उन्होन अपने ऊपर लगा युद्ध की क्षतिपूर्ति बडी शीघ्रता से कर दी और अपना वाणिज्य

वभव फिर से प्राप्त कर लिया। दूसरे अपने अन्तिम विनाशकारी युद्ध मे वीरता से उनकी सारी जनता पुरुष, स्त्री और बच्चो ने लडकर अपने प्राणो की आहुति दे दी। और देखिए। मैसेडन का पाँचवाँ फिलिप जो पहले निष्क्रिय राजा था, साइनोसिफिली की लडाई के बाद इतना वीर हो गया और इसने अपने देश को इतना शक्तिशाली बना दिया कि उसके पुत्र परसियुस ने अकेले रोम से मोर्चा लिया और पिडना म अपने सम्पूर्ण पराजय के पहले उसे लगभग हरा चुका था।

इसी प्रकार का एक और उदाहरण है यद्यपि उसका परिणाम भिन्न है। जब आस्ट्रिया ने क्रान्तिकारी और नेपोलियन के युद्धा में पाच बार हस्तक्षेप किया, पहले तीन बार जब उसने हस्तक्षेप किया उसम उसे पराजय ही नही, अप्रतिष्ठा भी प्राप्त हुई। आस्टरलिट्स के युद्ध के बाद इसने अपनी कमर कसनी आरम्भ कर दी। यदि आस्टरलिट्स उसके लिए साइनोसेफेली था तो वगरम उसका पिडना था। किन्तु मैसेडन से वह अधिक भाग्यशाली था। उसने फिर हस्तक्षप किया और १८१३ मे विजय पायी।

इन्ही युद्धा के चक्र में प्रशिया का कारनामा और भी आश्चयजनक है। उन चौदह वर्षो में जिसका अन्तिम स्वरूप जेना का युद्ध था, जिसमें उसे अच्छी तरह मुह की खानी पडी, प्रशिया की नीति निरथक और अपमानजनक थी। आइलाऊ में शीतकाल का भयकर युद्ध हुआ और टिलसिट में जो कठोर शर्तें उसपर लगायी गयी उनसे प्रेरणा मिली जो जेना के पहले धक्के से आरम्भ हुई था। इस स्फूर्ति से प्रशिया ने जो शक्ति अर्जित की वह आश्चयजनक थी। उसके कारण केवल प्रशिया की सेना ने ही नही नया जीवन प्राप्त किया, उसकी शासन तथा शिक्षा व्यवस्था ने भी नया रूप धारण किया। असल में इसके कारण प्रशिया वह पात्र बना जिसमें जरमन राष्ट्रीयता की नयी शराब रखी जा सके। इसी के कारण स्टाइन, हारडनबुग, हुमबोल्ट और बिसमाक तक का क्रमश विकास हुआ।

यही क्रिया हमारे युग में दोहरायी गयी। यह घटना इतनी दुखद है कि कहने की आवश्यकता नही। सन् १९१४ १८ में जरमनी की जो पराजय हुई और इस पराजय को और तीव्र कर दिया। १९२३ २४ में फ्रासीसियो द्वारा रूर की घाटी पर कब्जा, उसी का परिणाम हुआ नाजियो का असफल, किन्तु अमानुषिक बदला।[1]

किन्तु प्रहार से स्फूर्ति प्राप्त होने का क्लासिकी उदाहरण साधारण हैलास का तथा विशेषत एथेंस का है। जब ४८० ४७९ ई० पू० में फारस का आक्रमण हुआ जो सीरियाई सावभौम राज्य था। जितनी ही एथेन्स को पीडा पहुँची उसी के अनुपात में उसका उत्कष हुआ। यद्यपि बेओएशिया के उपजाऊ खेतो की रक्षा उनके मालिको के विश्वासघात के कारण स्वय हो गयी

१ पुस्तक के इस भाग को टवायनबी ने १९३१ की गर्मियो में लिखा था। उस समय तक डा० बुइनिग चासलर थे। मगर जब सितम्बर १९३० में राइखस्ताग के चुनाव में नाजियो की अभूतपूव विजय हुई और इन लोगो को ४६१ स्थानो में १२ के बजाय ५७७ में १०७ स्थान मिले। उन्होने लिखा—'यह स्पष्ट हो गया कि जो प्रहार १९१८ के युद्धविराम के पश्चात जरमनो पर हुए ह उनसे उसे वही स्फूर्ति मिली है जो एक सौ साल पहले १८०६–७ में प्रशिया को उसकी पराजय के पश्चात् प्राप्त हुई थी। —सम्पादक।

और लेसिडेमान के उपजाऊ पृथ्वी की रक्षा एथनी जहाजी बेड़ा ने की, एटिका की साधारण धरती दो आक्रमणों में उजड़ गयी। एथेन्स को दखल कर लिया गया और उसके मन्दिर ध्वस्त कर दिये गये। एटिका की सारी जनता को अपना देश खाली कर देना पड़ा और सागर पार कर के पलोपानीस में शरणार्थी के रूप में जाना पड़ा। इस परिस्थिति में एथनी जहाजी बेड़े को लड़ना पड़ा और सलामिस का युद्ध उसने जीता। इसमें आश्चर्य नहीं। जिस प्रहार ने एथनी जनता की अजय आत्मा को उत्तेजित किया वह उस अद्वितीय उपलब्धि की भूमिका थी जिसने अपनी चमक तथा विविधता से मानव के इतिहास को प्रकाशित किया है। उनके मंदिर उनके देश के पुनरुत्थान के प्रतीक थे। उनके पुनर्निर्माण में जो क्षमता परिक्लीजयुगीन एथेन्स ने दिखायी वह १९१८ के बाद वाले फ्रांस से कहीं अधिक सजीव थी। जब रीम्स के ध्वस्त गिरजा घर को फ्रांस ने फिर से प्राप्त किया तब उसने हरएक पत्थर के टुकड़े को और मूर्ति के टूटे टुकड़ों को यथास्थान स्थापित किया। एथीनियनों ने जब हैकाटाम्पेडन को ऊपर से नीव तक भस्म पाया तब उन्होंने उस नाव को वहीं रहने दिया और नये स्थान पर पारथियन का निर्माण किया।[1]

प्रहारों के कारण जो स्फूर्ति मिलती है उसका सबसे अच्छा उदाहरण सैनिक पराजयों में मिलता है। खोजने पर इसके बहुत-से उदाहरण मिल सकते हैं। हम केवल एक धार्मिक उदाहरण तक अपने को सीमित रखेंगे शिष्यों के विधान (एक्टस आव द अपासिल्स) में जोरदार विधान इसलिए बनाये गये थे कि हेलनी संसार पर ईसाई विजय प्राप्त करें। इनका विचार ऐसे समय आया जब उनका गुरु आश्चर्यजनक रीति से पुनरुज्जीवित होकर फिर लोप हो गया। सूली पर चढ़ाने वाली घटना से यह दूसरी घटना अधिक निराशाजनक होती। किन्तु इस प्रकार के ही अनुपात में उनकी आत्माओं में मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रिया उत्पन्न हुई जिसकी कथा के रूप में दो अभिव्यक्तियाँ इस प्रकार हैं। दो मनुष्य धवल वस्त्र में दृष्टिगोचर हुए और पेंटिकास्ट[2] के समय आग की लपटों का अवतरण हुआ। पवित्र आत्मा (होली गोस्ट) की शक्ति के रूप में उन्होंने सूली पर चढ़े हुए तथा लोप हुए ईसू के ईश्वरत्व का प्रचार यहूदी जनता में ही नहीं उनके सबसे ऊंचे न्यायालय[3] में भी किया। और तीन सौ साल के भीतर ही रोमन सरकार उस धर्म से पराजित हो गयी जो ऐसे समय स्थापित हुआ था जब उनका मन बहुत गिरा हुआ था।

(४) दबाव द्वारा प्रेरणा

अब ऐसी स्थितियों की परीक्षा की जायगी जहाँ आघात का स्वरूप दूसरे ढंग का है अर्थात् लगातार बाहरी दबाव। राजनीतिक भूगोल की शब्दावली में ऐसी जातियाँ, राज्य अथवा नगर जिन्हें ऐसे दबाव का सामना करना पड़ता है मार्च अर्थात सीमा प्रदेश कहे जाते हैं। और इसका

१ लन्दन में १०६६ के विशाल अग्निकाण्ड के बाद प्राचीन गोथिक वास्तुकला को पुनरुज्जीवित न करके रेन ने सेंतपाल का गिरजा घर बनाया। यदि युद्ध में वेस्टमिनिस्टर ऐबे या सेंतपाल का गिरजा घर ध्वस्त हो जाता तो आज के लन्दन वाले क्या करते?—सम्पादक।

२ यहूदियों का फसल काटने का त्योहार।—अनु०

३ सनहैडराइन—यहूदियों का सबसे ऊँचा न्यायालय—जिसमें ७१ सदस्य होते थे।—अनु०

अनुभव जनित अध्ययन हम इस प्रकार कर सकते है कि समाजों में ऐसे सीमा प्रदेशों ने उस समय क्या किया है जब उनपर बाहरी दबाव पड़ा है और इसकी तुलना हम उन प्रदेशों के कार्यों से करें जो देशों के बीच सुरक्षित रूप से स्थित है।

मिस्री ससार में—मिस्री सभ्यता के इतिहास में तीन ऐसे महत्त्वपूर्ण अवसर आये है जब घटनाओं का सचालन ऊपरी मिस्र के दक्षिण की शक्तियों द्वारा हुआ। सयुक्त राज्य (यूनाइटेड किंगडम) की स्थापना लगभग ३१०० ई० पू० हुई, सार्वभौम राज्य की स्थापना लगभग २०५८ ई० पू० और इसका पुन स्थापन लगभग १५८० ई० पू०। ये सब घटनाएँ उस छोटे सँकरे प्रदेश द्वारा सम्पादित हुइ। मिस्री साम्राज्य की यह जननी सच पूछिए तो मिस्री ससार की दक्षिणी सीमा थी जिसपर न्यूबिया के कबीलों का दबाव पडता रहा। किन्तु मिस्री इतिहास के पिछले काल में—अर्थात् नये साम्राज्य के पतन और ईसा की पाचवी शती में जब मिस्री समाज का पूर्ण लोप हो गया, इन सोलह धुधली शक्तियों में—राजनीतिक सत्ता डेलटा में चली गयी जो उत्तरी अफ्रीका तथा दक्षिण-पश्चिम एशिया की सीमा थी। यह सत्ता उसी प्रकार इधर आती गयी जिस प्रकार पहले दो हजार वर्षों में दक्षिणी सीमा की ओर आती रही। इस प्रकार मिस्री ससार का राजनीतिक इतिहास अथ से इति तक उत्तरी और दक्षिणी सीमा की राजनीतिक सत्ताओ के बीच के खिंचाव के अनुसार ही थी। ऐसा कोई उदाहरण नही मिलता जिसमें महान राजनीतिक घटनाएँ सीमा पर न होकर अन्तरदेशवर्ती हों।

क्या हम इसका कोई कारण दे सकते है कि मिस्री इतिहास के पहले आधे युग में उत्तरी सीमा का प्रभुत्व क्यो रहा और अन्तिम आधे काल में दक्षिणी सीमा का ? कारण यह जान पडता है कि न्यूबियनो की सैनिक पराजय और तोतमीज़ प्रथम (लगभग १५८५–१४९५ ई० पू०) के काल में उनकी सास्कृतिक विलीनता के पश्चात दक्षिणी सीमा पर दबाव कम हो गया अथवा समाप्त हो गया। और उसी समय अथवा थोडे ही समय के बाद लीबिया के बबरो तथा दक्षिण पश्चिम एशिया के राज्यो का दबाव जोरो से बढने लगा। इस प्रकार मिस्र के राजनीतिक इतिहास पर सीमा प्रान्तो का प्रभाव केन्द्रीय प्रान्तो की अपेक्षा अधिक पडता है। इतना ही नही, जिस सीमा पर सबसे अधिक आक्रमण का भय रहता है उसी का प्रभाव सबसे अधिक होता है।

ईरानी ससार में—यही परिणाम दूसरी परिस्थिति मे दो तुर्की जातियो, उसमानलियो तथा करमानलियो के विरोधी इतिहासो से मिलता है। ये दोनो जातिया चौदहवी शती में अनातोलिया के एक एक भाग पर राज्य करती था। ये भाग ईरानी ससार के पश्चिमी प्राचीर थे।

ये दोनो तुर्की जातिया अनातोलिया के मुस्लिम सल्जुक सुल्तानो की उत्तराधिकारिणी थी। ग्यारहवी शती म धार्मिक युद्ध[1] के पहले सल्जुक तुर्की योद्धाओ ने परम्परावादी ईसाई समाज को हराकर दारुल्इस्लाम का विस्तार किया और इस लोक तथा परलोक म अपने लिए जगह बनायी। ईसा की तेरहवी शती में जब यह सुल्तानी शासन नष्ट हो गया तब सलजुको के राज्य का करमानलियो को सबसे श्रेष्ठ तथा उसमानलियो को सबसे निकृष्ट भाग मिला।

१ ईसाइयों तथा मुसलमानो का वह युद्ध जो ईसाइयों ने अपने धार्मिक स्थानो की प्राप्ति के लिए किया था।—अनुवादक

साम्राज्यवादियों ने अपने आर्मिनियन बैरियों को आर्थिक उद्योगों के उन्नत साधनों द्वारा पराजित किया है उसी प्रकार कज्जाकों ने कृषि के उत्तम साधनों द्वारा यायावरों पर विजय प्राप्त की। और जिस प्रकार आज की पश्चिमी सत्ता की स्थापना ने यायावरों की गति पर रेल, मोटर तथा हवाई जहाज के द्वारा विजय प्राप्त कर उन्हें बन्दी बना लिया है उसी प्रकार कज्जाकों ने नदियों पर जो स्टेप के निवासस्थान हैं और जो यायावरों के नियन्त्रण के परे थीं, काबू करके उन्हें पराजित कर लिया। यायावरों की घुड़सवारी के लिए यातायात में नदियों से रुकावट होती थी, किन्तु रूसी किसान और व्यापारी (एम्बरमैन) नावों द्वारा आने जाने में अभ्यस्त थे। कज्जाक लोग यायावरों से घुड़सवारी में बाजी मारने की चेष्टा तो करते ही थे, किन्तु नदियों द्वारा आवागमन उन्होंने नहीं छोड़ा और इसी के द्वारा उन्होंने यूरेशिया पर विजय प्राप्त की। नीपर से वह डान गये और डान से वोल्गा पहुँचे। वहाँ से उन्होंने १८५६ ई० में वोल्गा और आब के बीच के जल विभाजक को पार किया और सन् १६३८ तक उन्होंने साइबीरिया की नदियों की खोज कर ली और उन्हें पार करते हुए प्रशान्त सागर के तट पर आखोटस्क के सागर तक पहुँचे।

उसी सदी में जब कज्जाकों ने दक्षिण पूरब में यायावरों के दबाव को असफल करके शानदार विजय प्राप्त की एक दूसरी सीमा पर बाहरी दबाव पड़ रहा था और यह रूसी सजीवता का क्षेत्र बन रहा था। इसी की सत्रहवीं सदी में पहली बार रशिया ने अपने इतिहास में पश्चिमी संसार के दबाव का अनुभव किया। दो वर्षों तक (१६१०–१२) पोल सेना मास्को को दबाये हुए थी। और थोड़े ही दिनों बाद गस्टवस अडल्फस के शासन में स्वीडन फिनलैंड से लैवर पोलैंड की उत्तरी सीमा तक जो उस समय रीगा से कुछ ही मील दूर था अधिकार करके सारे बाल्टिक का मालिक बन बैठा और रूस की राह इधर से बन्द कर दी। किन्तु सौ साल भी नहीं बीतने पाये थे जब रूस पश्चिमी दबाव का उत्तर पीटर महान् ने १७०३ ई० में पीटर्सबुर्ग की स्थापना करके दिया। जिस धरती पर यह बन्दरगाह बना उसे उसने स्वीडन से जीता था। उसने रूसी नौ सेना का झण्डा बाल्टिक सागर में पश्चिमी ढंग पर फहराया।

पश्चिमी संसार महाद्वीपी बबरों के विरोध में—जब हम अपनी पश्चिमी सभ्यता की ओर देखते हैं तब सबसे पहले सबसे भारी दबाव पूरब की ओर अर्थात् थल की ओर पड़ा। यह दबाव मध्य यूरोप के बबरों पर था। उतना ही नहीं कि सीमा की रक्षा विजयपूर्ण हुई बल्कि सीमा को पीछे की ओर ढकेलते गये यहाँ तक कि बबर वहाँ रह न पाये। परिणामस्वरूप पश्चिमी सभ्यता का आमना सामना बबरों से नहीं रह गया उसकी पूर्वी सीमा पर उसका सामना दूसरी सभ्यता से हुआ। यहाँ पर इतिहास के केवल प्रथम चरण से उदाहरण लिया जायगा कि दबाव की प्रेरण शक्ति कितनी होती है।

पश्चिमी इतिहास के प्रथम चरण में महाद्वीपी बबरों के दबाव के परिणामस्वरूप फ्रांस के प्रदेश में एक नये सामाजिक संगठन का उदय हुआ जो अध बबर था। मेरोविंजियाई पहले फ्रांस का प्रदेश था। यहाँ की सरकार पुराने रोम की ओर देखती थी किन्तु बाद के केरोलिंजियाई शासकों ने भविष्य की ओर दृष्टि डाली। यद्यपि इसने पुराने रोमन साम्राज्य के प्रेत का आह्वान किया। किन्तु यह आवाहन मात्र था जिससे उसकी आत्मा से इन्हें अपने कार्यों में बल प्राप्त हो। और क्या आप जानते हैं फ्रांस के प्रदेश किस भाग में मेरोविंजियाई पतन के स्थान

पर केरोलिंजियाइयों ने यह काय सम्पन्न किया ? देश के भीतरी भाग मे नही, सीमा पर। यह काय युस्ट्रिया में (जो उत्तरी फ्रास मे बराबर है) जिस धरती को प्राचीन रोमन सभ्यता ने उपजाऊ बनाया था, जो बबरो के आक्रमणो से सुरक्षित थी बल्कि आस्ट्रेशिया (राइनलैड) में जो रोमन सीमा के सामने थी। यहा उत्तरी-यूरोपीय जगलो के सेक्सनो के लगातार आक्रमण होते रहे और यूरेशियाई स्टेप के 'अवार' धावा बोलते रहे। इस बाहरी दबाव से कितनी स्फूर्ति मिली उसका उदाहरण है शालमान की विजय, उसके अठारह सक्सन हमले, उसके द्वारा अवारो का विनाश, और केरोलिंजियाई पुनर्जागरण जो पश्चिमी समाज की पहली सास्कृतिक अभिव्यक्ति है और बौद्धिक शक्ति का पहला प्रदशन है।

आस्ट्रेशिया पर इस दबाव से जो प्रेरणा प्राप्त हुई उसके बाद वह फिर पुरानी गति को पहुच गया। हम देखते हैं कि दो सौ वर्षों से कम ही समय में ओटो प्रथम के नेतृत्व में प्रतिक्रिया हुई। शालमान की, स्थायी उपलब्धि यह थी कि उसने सक्सन बबरो के राज्य को पश्चिमी ईसाई जाति मे मिला लिया था। किन्तु इस सफलता का परिणाम यह भी हुआ कि सीमा में परिवतन हो गया और उसी के साथ प्रेरणा की भी। विजयी आस्ट्रेशिया से विजित सक्सनी मे सीमा चली गयी। ओटो के काल में सैक्सनी में वही स्फूर्ति उत्पन्न हुई जो शालमान के समय आस्ट्रेशिया मे हुई। जिस प्रकार शालमान ने सक्सो को पराजित किया था उसी प्रकार ओटो ने वैडो को पराजित किया और पश्चिमी ईसाई-जगत् की सीमा और पूरब की ओर बढ गयी।

तरहवी और चौदहवी शती में अवशिष्ट महाद्वीपी (यूरोपीय) बबरो को सभ्य बनाने का काम शालमान तथा ओटो ऐसे वशानुगत राजाओ ने जिन्होंने रोमन साम्राज्य वाली पदवी ग्रहण कर ली थी, नही किया। यह काय दो नयी सस्थाओ ने किया। नगर राज्य ने तथा सनिक मठ सम्प्रदाय ने। हसा नगरो तथा ट्यूटानिक वीरो ने पश्चिमी ईसाई जगत् की सीमा ओडर से बढ़ाकर डवीना तक पहुँचा दी। धम निरपेक्ष युद्ध की यह अतिम घटना थी। क्योंकि चौदहवी शती बीतते बीतते ये महाद्वीपी बबर जो मिनोई, हलेनी तथा पश्चिमी सभ्यताओ की सीमाओ को तीन हजार वर्षों तक दबाये चले आ रहे थे ससार से लोप हो गये। १४०० ई० के बाद, पश्चिमी ईसाई समाज और परम्परावादी ईसाइ समाज जो महाद्वीप में बबरो के कारण अलग हो गये थे, वे अब महाद्वीप म एड्रियाटिक सागर से आरटिक सागर तक साथ साथ अभियान करने लगे।

यह मनोरजक बात है कि बढती हुई सभ्यता और भागती हुई बबरता के बीच जो सीमा का विस्तार होता चला जा रहा था उससे दबाव उस समय से बराबर पडा रहा जब से ओटो प्रथम ने शालमान का काय अपने हाथो में लिया। और जस-जसे पश्चिम का प्रत्याक्रमण बढता गया प्रेरक शक्ति भी स्थानान्तर होती रही। उदाहरण के लिए ओटो की वैडो पर विजय के बाद सक्सनी की डची भी निस्तेज हो गयी जिस प्रकार दो सौ साल पहले सक्सनो पर शालमान की विजय के बाद आस्ट्रेशिया पराभूत हो गया था। १०२४ ई० म सक्सनी का नेतृत्व समाप्त हो गया था और साठ साल के पश्चात वह छिन भिन हो गयी। सक्सन वश के बाद जो साम्राज्य वाला वश आया वह पूरब की ओर बढती हुई सीमा पर नही उत्पन्न हुआ जिस प्रकार सक्सन वश केरोलिंजियाई के पूरब स्थापित हुआ। बल्कि फ्रैंकोनियाई वश तथा उसके पीछे के सब वश जिन्होंने साम्राज्यिक पदवी धारण की जसे होहेन स्टाउफेन सक्सेम बुग तथा हैप्स बुग राइन

साम्राज्यवादियों ने अपने आन्तिम बैरियों को आधुनिक उद्योगवाद से उत्पन्न साधनों द्वारा पराजित किया है उसी प्रकार कज्जाकों ने कृषि के उत्तम साधनों द्वारा यायावरों पर विजय प्राप्त की। और जिस प्रकार आज की पश्चिमी सत्ता की दुनिया ने यायावरों की नरभूमियों पर रेल, मोटर तथा हवाई जहाज के द्वारा विजय प्राप्त कर उन्हें बन्दी बना लिया है उसी प्रकार कज्जाकों ने नदियों पर जो स्टेप के निवासियों के और जो यायावरों के नियन्त्रण के परे था, काबू करके उन्हें पराजित कर लिया। यायावरों के घुड़सवारों के लिए यातायात में नदियों से रुकावट होती थी, किन्तु रूसी किसान और एलडरमैन (एल्डरमन) नदी द्वारा आने-जाने में अभ्यस्त थे। कज्जाक लोग यायावरों से घुड़सवारी में बाजी मारने की चेष्टा तो करते ही थे, किन्तु नदियों द्वारा आवागमन उन्होंने नहीं छोड़ा और नदी के द्वारा उन्होंने यूरेशिया पर विजय प्राप्त की। नीपर से यह डान गये और डान से वोल्गा पहुँचे। यहाँ से उन्होंने १८५६ ई० में वोल्गा और आब के बीच के जल विभाजक को पार किया और सन् १६३८ तक उन्होंने साइबीरिया की नदियों की खोज डाली और उन्हें पार करते हुए प्रशान्त सागर के तट पर ओखोट्स्क के सागर तक पहुँचे।

उसी शती में जब कज्जाकों ने दक्षिण पूरब में यायावरों के दबाव को असफल करके शानदार विजय प्राप्त की एक दूसरी सीमा पर बाहरी दबाव पड़ रहा था और यह रूसी सजीवता का क्षेत्र बन रहा था। इसी की सत्रहवीं शती में पहली बार रूसियों ने अपने इतिहास में पश्चिमी संसार के दबाव का अनुभव किया। दो वर्षों तक (१६१०–१२) पोल सेना मास्को पर दबाव डाले रही। और थोड़े ही दिनों बाद गस्टवस अडल्फस के शासन में स्वीडन फिनलैन्ड से लेकर पोलैंड की उत्तरी सीमा तक जो उस समय रीगा से कुछ ही मील दूर थी अधिकार करके सारे बाल्टिक का मालिक बन बैठा और रूस की राह इधर से बन्द कर दी। किन्तु सौ साल भी नहीं बीतने पाये थे जब इस पश्चिमी दबाव का उत्तर पीटर महान् ने १७०३ ई० में पीटसबुर्ग की स्थापना करके दिया। जिस धरती पर यह बन्दरगाह बना उसे उसने स्वीडों से जीता था। उसने रूसी नौ सेना का झण्डा बाल्टिक सागर में पश्चिमी ढंग पर फहराया।

पश्चिमी संसार महाद्वीपी बबरों के विरोध में—जब हम अपनी पश्चिमी सभ्यता की ओर देखते हैं तब सबसे पहले सबसे भारी दबाव पूरब की ओर अर्थात थल की ओर पड़ा। यह दबाव मध्य यूरोप के बबरों पर था। उतना ही नहीं कि सीमा की रक्षा विजयपूर्ण हुई बल्कि सीमा को पीछे की ओर ढकेलते गये यहाँ तक कि बबर वहाँ रह न पाये। परिणामस्वरूप पश्चिमी सभ्यता का आमना सामना बबरों से नहीं रह गया, उसकी पूर्वी सीमा पर उसका सामना दूसरी सभ्यता से हुआ। यहाँ पर इतिहास के केवल प्रथम चरण से उदाहरण लिया जायगा कि दबाव की प्रेरणा शक्ति कितनी होती है।

पश्चिमी इतिहास के प्रथम चरण में महाद्वीपी बबरों के दबाव के परिणामस्वरूप फ्रैंकों के प्रदेश में एक नये सामाजिक संगठन का उदय हुआ जो अर्ध बबर था। मेरोविंजियाई पहले फ्रैंकों का प्रदेश था। यहाँ की सरकार पुराने रोम की ओर देखती थी किन्तु बाद के कैरोलिंजियाई शासकों ने भविष्य की ओर दृष्टि डाली। यद्यपि इसने पुराने रोमन साम्राज्य के प्रेत का आह्वान किया। किन्तु यह आवाहन मात्र था जिससे उसकी आत्मा से इन्हें अपने कार्यों में बल प्राप्त हो। और क्या आप जानते हैं फ्रैंकों के प्रदेश किस भाग में मेरोविंजियाई पतन के स्थान

पर केरोलिजियाइयों ने यह काय सम्पन्न किया ? देश के भीतरी भाग में नहीं, सीमा पर। यह काय न्युस्ट्रिया में (जो उत्तरी फ्रास के बराबर है) जिस धरती को प्राचीन रोमन सभ्यता ने उपजाऊ बनाया था, जो ववरो के आक्रमणा से सुरक्षित थी बल्कि आस्ट्रेशिया (राइनलैड) में जो रोमन सीमा के सामने थी। यहा उत्तरी-यूरोपीय जगलो के सेक्सनो के लगातार आक्रमण होते रहे और यूरेशियाई स्टेप के 'अवार' धावा बोलते रहे। इस बाहरी दवाव से कितनी स्फूर्ति मिली उसका उदाहरण है शालमान की विजय, उसके अठारह सैक्सन हमले, उसके द्वारा अवारो का विनाश, और केरोलिजियाई पुनर्जागरण जो पश्चिमी ससार की पहली सास्कृतिक अभिव्यक्ति है और बौद्धिक शक्ति का पहला प्रदर्शन है।

आस्ट्रेशिया पर इस दबाव से जो प्रेरणा प्राप्त हुई उसके बाद वह फिर पुरानी गति को पहुँच गया। हम दखते है कि दो सौ वर्षों से कम ही समय में ओटो प्रथम के नेतृत्व में प्रतिक्रिया हुई। शालमान की, स्थायी उपलब्धि यह थी कि उसने सक्सन ववरो के राज्य को पश्चिमी ईसाई जाति म मिला लिया था। किन्तु इस सफलता का परिणाम यह भी हुआ कि सीमा में परिवतन हो गया और उसी के साथ प्रेरणा की भी। विजयी आस्ट्रेशिया से विजित सक्सनी में सीमा चली गयी। ओटो के काल में सक्सनी में वही स्फूर्ति उत्पन्न हुई जो शालमान के समय आस्ट्रेशिया में हुई। जिस प्रकार शालमान ने सक्सो को पराजित किया था उसी प्रकार ओटो ने स्लावो को पराजित किया और पश्चिमी ईसाई-जगत की सीमा और पूरब की ओर बढ गया।

तेरहवी और चौदहवी शती में अवशिष्ट महाद्वीपी (यूरोपीय) बवरो को सभ्य बनाने का काम शालमान तथा ओटो एसे वशानुगत राजाओ ने जिन्होंने रोमन साम्राज्य वाली पदवी ग्रहण कर ली थी, नही किया। यह काय दो नयी सस्थाओ न किया। मगर राज्य ने तथा सनिक मठ सम्प्रदाय ने। हसा नगरो तथा टयूटानिक वीरो ने पश्चिमी ईसाई जगत् की सीमा ओडर से बढाकर डवाना तक पहुँचा दी। धम निरपेक्ष युद्ध की यह अतिम घटना थी। क्योकि चौदहवी शती बीतते बीतते ये महाद्वीपी बबर जो मिनाइ, हेलेनी तथा पश्चिमी सभ्यताओं की सीमाओ को तीन हजार वर्षों तक दबाये चले आ रहे थे समार से लोप हो गये। १६०० ई० के बाद, पश्चिमी ईसाई समाज और परम्परावादी ईसाई समाज जो महाद्वीप में बबरों के कारण अलग हो गये थे, वे अब महाद्वीप में एड्रियाटिक सागर से आरटिक सागर तक साथ-साथ [illegible] करने लगे।

यह मनोरजक बात है कि बढती हुई सभ्यता और भागती हुई बबरता के बीच [illegible] विस्तार होता चला जा रहा था उससे दबाव उस समय से बराबर पडा रहा जब से [illegible] शालमान का काय अपने हाथो म लिया। और जैसे जसे पश्चिम का [illegible] प्रेरक शक्ति भी स्थानान्तर होती रही। उदाहरण के लिए ओटो का [illegible] सक्सनी की डची भी निस्तेज हो गयी जिस प्रकार दो सौ साल पहले [illegible] विजय के बाद आस्ट्रेशिया पराभूत हो गया था। १०२४ ई० में सक्सनी [illegible] गया था और साठ साल के पश्चात वह छिन भिन्न हो गयी। सक्सन [illegible] वाला वश आया वह पूरब की ओर बढती हुई सीमा पर नहीं उत्पन्न हुआ [illegible] केरोलिजियाई के पूरव स्थापित हुआ। बल्कि फ्रेंकोनियाई का [illegible] जिन्होंने साम्राज्यिक पदवी धारण की जसे हाहेन स्टाउफन, [illegible]

नदी के किसी न किसी संगम पर उत्पन्न हुए। साम्राज्यिक वंश को दूर की सीमा से कोई प्रेरणा नही मिली और हमें यह जानकर आश्चर्य न होना चाहिए कि यद्यपि कुछ सम्राट अवश्य महान् हुए जैसे फ्रेडरिक बारबरोसा फिर भी साम्राज्यिक शक्ति का ग्यारहवी शती से अन्त तक क्रमश ह्रास होता गया।

फिर भी जिस साम्राज्य का शालमान ने पुन सजीव किया था और जो यद्यपि छाया का छाया था, जीवित रहा। यद्यपि न तो पावन था, न रोमन था और न साम्राज्य था फिर भी पश्चिमी समाज के राजनीतिक जीवन में उसका महत्त्वपूर्ण योगदान था। उसके पुनर्जीवित होने का यह कारण था कि मध्ययुग के अन्तिम समय कुछ तो वंशीय व्यवस्था और कुछ घटनाओं के फलस्वरूप आस्ट्रिया में हैप्सबुर्ग का रीनी (रीगिन) घराना गद्दी पर बैठ गया। सीमा प्रदेश के भी उत्तर दायित्व को इसने सँभाला और उसके साथ जो नयी प्रेरणा मिली उसके अनुरूप कार्य किया। इस विषय को हम नहीं छोडते है।

पश्चिमी ससार म दवाव उसमानिया साम्राज्य के विरोध म

उसमानलिया और हगरी में जो शत वर्षीय युद्ध चला उसी समय पश्चिमी ससार तथा उसमानिया तुर्कों में भिडन्त आरम्भ हुई। और इसके परिणामस्वरूप सन् १५२६ ई० में मोहावज के युद्ध में मध्ययुगीन हगरी का समाप्ति हो गयी। हगरी जान हुन्यादी तथा उसके पुत्र मत्तिवास कोरनिवस के नेतृत्व में जब उसमानलिया से लडा तब उसमानलिया को बहुत शक्तिशाली वैरी का सामना करना पडा। किन्तु दोनो सेना का अन्तर इतना अधिक था कि विजय पाना हगरी की शक्ति के बाहर था यद्यपि इसे सन् १४९० ई० के बाद से बोहीमिया से सहायता मिलती रही क्योंकि इसी साल दोनो का एकीकरण हो गया था। परिणाम मोहावज का युद्ध हुआ। इतनी बडी विपत्ति का ऐसा मानसिक प्रभाव हुआ कि बचा-खुचा हगरी बोहीमिया और आस्ट्रिया हैप्सबुर्ग वंश के नेतृत्व में एक हुए और एकता स्थायी हुई और यह वंश सन् १४४० ई० से आस्ट्रिया पर राज्य करता आ रहा है। चार सौ साल जब वही उसमानिया सल्तनत अंतिम रूप से छिन्न भिन्न हो गयी जिसने चार सौ साल पहले मोहावज के युद्ध में आस्ट्रिया को धराशायी किया था।

सच बात तो यह है कि जिस समय डनूवियाई हैप्सबुर्ग वंश का जन्म हुआ उसका भाग्य भी उसके वैरी के भाग्य के अनुसार चलता रहा जिसके दवाव के फलस्वरूप उसकी (हैप्सबुर्ग वंश) उत्पत्ति हुई थी और डयूवियाई राज्य की वीरता का काल वही था जब पश्चिमी ससार ने उसमानिया दवाव का सबसे अधिक अनुभव किया। यह वीरता का काल सन् १५२९ से आरम्भ होता है जब उसमानिया सेना ने वियना पर असफल आक्रमण किया और १६८२–८३ में समाप्त होता है जब दूसरा आक्रमण हुआ। इन दोनो आक्रमणो में पश्चिमी ससार द्वारा उसमानिया आक्रमणो का सामना करने म आस्ट्रिया की राजधानी ने वही काय किया जो १९१४–१८ के युद्ध में जरमन आक्रमण रोकने के लिए वरदून ने जी ताडवर फ्रांस की ओर से सामना किया था। पहले आक्रमण की असफलता के परिणामस्वरूप उसमानिया विजय का ज्वार रुक गया जो सौ साल से डयूब की घाटी में चल रहा था। और शायद बहुत से लोग बिना जाँचे-परखे विश्वास न करें कि नक्शे से स्पष्ट है कि वियना और कुसतुनतुनिया का अन्तर, डोवर (जल डमरूमध्य) और वियना से जितना अन्तर है उससे आधे से अधिक है। दूसरे आक्रमण की

विफलता का परिणाम यह हुआ कि अनेक परिवर्तनो और विराम के होने पर भी तुर्की सीमा जो १५२९ से १६८३ तक वियना के दक्षिण-पूर्वी किनारे थी, खिसकती गयी और एड्रियानोप्ल के उत्तर-पश्चिमी किनारे तक पहुँच गयी ।

किन्तु उसमानिया साम्राज्य के पतन से डैन्यूबियाई हैप्सबुर्ग के राज्य को कोई लाभ नहीं आ, क्योंकि उसमानिया साम्राज्य के पतन के बाद डैन्यूबियाई राज्य की वीरता का युग भी रह नही सका । उसमानिया शक्ति के ह्रास के कारण दक्षिण-पूर्वी यूरोप में ऐसा क्षेत्र मिल गया जिस पर और शक्तियो ने अधिकार कर लिया । साथ ही डैन्यूबियाई राज्य पर से दबाव भी हट गया, जिसके कारण उसे प्रेरणा मिलती रही । डैन्यूबियाई शक्ति का ह्रास भी उसी प्रकार हुआ जिस प्रकार उस शक्ति का जिसके थपेडो से इसमें जागृति आयी थी । और अन्त में इसका भी वही अन्त हुआ जो उसमानिया साम्राज्य का ।

यदि हम उन्नीसवी शती में आस्ट्रियाई साम्राज्य की ओर देखें, जब किसी समय का वीर उसमानली 'यूरोप का रोगी' हो गया था तो हमको पता चलेगा कि आस्ट्रिया के साम्राज्य मे दो दुर्बलताएँ आ गयी थीं । एक तो यह कि यह राज्य अब सीमा राज्य नही रह गया था, दूसरे यह कि उसका अन्तरराष्ट्रीय सगठन जिसके द्वारा सोलहवी तथा सत्रहवी शती में उसने उसमानी चुनौती स्वीकार की, अब उसके लिए रुकावट हो गयी क्योंकि उन्नीसवी शती में राष्ट्रीय भावना के नये विचार उत्पन्न हो गये थे । हैप्सबुर्ग ने अपने जीवन की अन्तिम शती इस प्रयत्न में बितायी कि राष्ट्रीय सिद्धान्तो के अनुसार यूरोप का मानचित्र बन पाये, किन्तु ऐसे सब प्रयत्नो में वह विफल रहा । उसने जरमनी पर से अपना नेतृत्व छोड दिया और इटली पर से अपना अधिकार हटा लिया । इतना मूल्य चुकाकर उसने जरमन साम्राज्य और इटली के राज्य के बगल-बगल अपना अस्तित्व बनाये रखा । उसने सन् १८६७ की आस्ट्रो हगरी की सन्धि स्वीकार की (आउसग्लाइच[1]) और उसी के परिणामस्वरूप गैलीशिया में आस्ट्रोपोली सन्धि की । उसे इसमें सफलता मिली कि उसने अपना स्वार्थ तथा मगयार और पोलो का स्वार्थ बताया एक और जरमनो ने यह भी बताया कि उसके राज्य में जो जरमन हैं उनका तथा उसका स्वार्थ भी एक ही है । किन्तु रोमानियनो, चेकोस्लोवाको, यूगोस्लावो से उसका समझौता न हो सका और सराजिवो में जो हत्या हुई वह आस्ट्रिया को नक्शे से मिटा देने का सकेत था ।

अन्त में हम युद्धरत आस्ट्रिया तथा युद्धरत तुर्की की तुलना करें । १९१४-१८ के युद्ध के अन्त में दोनो लोकतन्त्र राज्य हो गये और उनका वह साम्राज्य निकल गया जो कभी उनके पडोसी थे और दुश्मन भी । किन्तु इतने ही पर समानता समाप्त हो जाती है । जो पाच पराजित देश थे उनमें आस्ट्रिया की सबसे अधिक हानि हुई थी और उसने सबसे अधिक दीनता दिखायी थी । नयी व्यवस्था को उन्होने बहुत दुख के साथ पूर्णरूप से आत्मसमर्पण किया । इसके विपरीत सन्धि के एक साल बाद ही विजेताओ से तुर्क युद्ध के लिए फिर कटिबद्ध हुए और विजेताओ ने जो शर्तें सन्धि के समय उन पर लादी थी उन्हे सफलतापूर्वक बदलवाया । ऐसा करके तुर्कों ने

१ आस्ट्रिया और हगरी में राजनीतिक समझौता, जो हर दसवें साल बदला जा सकता था ।—अनुवादक

फिर शक्ति प्राप्त की और अपने भाग्य म परिवर्तन किया । इस बार व पानोमुख उसमानिया वश के झण्डे के नीचे अगहाय साम्राज्य का इस या उस प्रदेश की रक्षा के लिए नहीं लड रहे थे । उसमानिया राजघराने ने उन्हें त्याग दिया था, अब वे फिर सीमा का युद्ध कर रहे थे और एक नता के नतृत्व में लड रहे थे जिसमें वग ही गुण थ जो पहले सुल्तान उसमान में । यह युद्ध व अपने राज का विस्तार करने के लिए नहीं कर रहे थ, बल्कि अपने देश की रक्षा करने के लिए । १९१९–२२ के ग्रीक-तुर्की युद्ध में इनआनू के रणक्षेत्र में यही पतृक धरोहर उन्हें मिली जो अन्तिम सलजुक न छ सौ साल पहले उसमानलिया को समर्पित की थी । चक्र पूरा घूम गया ।

पश्चिमी ससार म उसकी पश्चिमी सीमा पर

पश्चिमी समाज के आरम्भिक दिनों में उसे पूर्वी सीमा पर ही दबाव का अनुभव नहीं हुआ, बल्कि पश्चिम की ओर भी तीन दिशाओं से दबाव का सामना करना पडा । अंग्रेजी द्वीपों तथा ब्रिटानी में केल्टिक लोगों का स्कैंडिनेवियाई जहाजी डाकुओं का अंग्रेजी द्वीप समूह तथा पश्चिमी यूरोप के अतलान्तक तट पर और सीरियाई सभ्यता का जिसके प्रतिनिधि मुसलमान विजेता थे आइबीरियाई प्रायद्वीप पर । पहले हम केल्टिक प्रभाव पर विचार करेंगे ।

यह कैसे सम्भव हुआ कि आदिम तथा स्वल्पायु बर्बर तथा कथित स्वल्पायु सप्तशासन (हेप्टर्की) के बीच के जीवन संघर्ष के परिणामस्वरूप पश्चिमी राजनीतिक जगत् में दो प्रगतिशील तथा शाश्वत राज्यों का उदय हो गया ? यदि इस बात पर ध्यान दें कि इंग्लैंड तथा स्काटलैंड के राज्यों ने किस प्रकार सप्तशासन को हटाया जो हम देखेंगे कि मुख्य कारण यही था कि बाहरी दबाव का प्रत्यक्ष पग पर सामना करना पडा । स्काटलैंड राज्य की उत्पत्ति का पिछला इतिहास देखा जाय तो उसके जन्म का कारण है पिक्टों तथा स्काटों का एंग्लो-सेक्सनों पर आक्रमण । स्काटलैंड की वर्तमान राजधानी की नींव नार्थब्रिया के एडविन ने डाली थी । (आज भी उसका नाम उसमें सम्मिलित है) यह नगर नार्थब्रिया की सीमा पर किले के रूप म बना था जिससे फर्थ आव फोर्थ के पास के पिक्ट और स्ट्रैथक्लाइड के ब्रिटन के आक्रमणों स रक्षा की जा सके । चुनौती दी गयी सन् ९५४ ई० में जब पिक्टों तथा स्काटों न एडिनबरा पर विजय प्राप्त की और नार्थब्रिया को विवश करके सारा लोथियन ले लिया । इस समर्पण से यह समस्या उठ खडी हुई— पराजित होने पर भी पश्चिमी ईसाई समाज को अपनी पश्चिमी ईसाई संस्कृति सुरक्षित रखनी होगी अथवा 'सुदूर पश्चिमी केल्टिक' संस्कृति से पराभूत होना पडेगा । अपराजित लोथियन ने इस चुनौती को इस प्रकार स्वीकार किया कि जसे एक बार पराजित यूनान ने रोम को अपने वश में कर लिया था उसी प्रकार लोथियन न अपने विजेताओं को पराजित कर लिया ।

पराजित देश की संस्कृति स्काटी राजाओं को इतनी भायी और इतनी आकर्षक लगी कि उन्होंने एडिनबरा को अपनी राजधानी बनाया और इस प्रकार का व्यवहार करने लगे कि लोथियन ही उनका निवास है और उच्च भूमि (हाइलैंड) उनके लिए विदेश है । परिणामस्वरूप स्काटलैंड का पूर्वी समुद्रतट मोरे फर्थ तथा उपनिवेश बना लिया गया और उच्चभूमि क्षेत्र को पीछे खिसकाया गया । यह कार्य लोथियन के अंग्रेजी निवासियों ने उन केल्टिक शासकों के संरक्षण में किया जो स्काटी राजाओं के प्राचीन सम्बन्धी थे । एक और परिणाम हुआ जो नामों के परिवर्तन में भी विरोधाभास प्रकट करता है । 'स्काटी भाषा' का अर्थ वह अंग्रेजी हो गया जो लोथियन में बोली जाती थी न कि गेलिक जो मूल स्काट बोलते थे । पिक्टों और स्काटों

द्वारा लोथियन के विजय का अन्तिम परिणाम यह नही था कि पश्चिमी ईसाई ससार की सीमा फोथ से ट्वीड की ओर खिसकाते बल्कि उस सीमा को आगे बढाते गये और अन्त में ग्रेट ब्रिटेन का सारा द्वीप उसमें आ गया।

इस प्रकार अग्रेजी 'सप्तशासन' का एक छोटा-सा राज्य वतमान स्काटलड के राज्य का केन्द्र बन गया और यह स्मरण रखने की बात है कि यह छोटा सा राज्य नाथब्रिया जिसने यह कौशल दिखलाया ट्वीड और फोथ के बीच की सीमा थी, ट्वीड तथा हबर के बीच का आन्तरिक प्रदेश नही था। यदि कोई बुद्धिमान् यात्री दसवी शती में नाथब्रिया गया होता जिस समय स्काटो और पिक्टो को लोथियन समर्पित हुआ, उसने यही कहा होता कि एडिनबरा का कोई भविष्य नही है और यदि एक सभ्य राज्य का कोई नाथब्रिया का नगर राजधानी हो सकता है तो वह याक है। उत्तरी ब्रिटेन के सबसे बडे उपजाऊ क्षेत्र में वह बसा हुआ था, रोमन प्रदश का सनिक केन्द्र था, धार्मिक केन्द्र था और अस्थायी स्कैंडिनेवियाई राज्य 'डेनला'[१] की राजधानी था। किन्तु ९२० ई० में डेनला को वेसेक्स के राजा ने जीत लिया और उसके बाद से याक साधारण प्रान्तीय नगर था और जो इगलड के जनपदो में याकशायर का क्षेत्रफल इतना बडा है वह इस बात का स्मरण करता है कि किसी समय इसका भविष्य उज्ज्वल रहा होगा।

हबर के दक्षिण सप्तशासन के प्रान्ता में कौन इस प्रकार का नतत्व ग्रहण करता कि वह इग्लड के भावी राज्य का केन्द्रबिन्दु बन सकता। हम देखते ह कि ईसा की आठवी शती में प्रमुख प्रतिद्वन्द्वी महाद्वीप के निकट वाले राज्य नही थे, बल्कि मरशिया और वेसेक्स थे। ये दोनो, सीमा पर, वेल्स तथा कानवाल के अविजित केल्ट की सीमा पर रहने के कारण शक्तिशाली हुए। यह भी हम देखते ह कि युद्ध के पहले चक्र में मरशिया विजयी हुआ। अपने समय मे मरशिया का राजा वेसेक्स क सभी राजाओ स शक्तिशाली था क्योकि मरशिया पर वेल्स का दबाव अधिक था और कानवाल का वेसेक्स पर उतना नही। यद्यपि कानवाल में 'पश्चिमी वेल्सो' ने डटकर सामना किया जिसका वणन आथर की कहानियो में अमर है, परन्तु इस विरोध पर पश्चिमी सक्सनो ने बडी सरलता से विजय प्राप्त कर ली। मरशिया पर दबाव कितना कठोर था वह उस शब्द की व्युत्पत्ति ही बताती है (यह शब्द माच से निकला है जिसका अथ है सीमा। मरशिया का अथ है बहुत बडी सीमा)। पुरातत्त्व की दृष्टि से भी यह साथक है। डी के मुहाने से सेवन के मुहाने तक बहुत बडे-बडे मिट्टी के बाध का अवशेष है जिसे 'ओफ का बाँध' कहते ह। उस समय ऐसा जान पडता था कि भविष्य मरशिया का है, वेसेक्स का नही। किन्तु नवी शती में जब केल्टिक सीमा का सघष धीमा जान पडा और नया तथा उससे शक्तिशाली सघष स्कैंडिनेविया स हुआ तब भविष्य का रूप बदल गया। ३४ बार मरशिया सामना नही कर सका और आलफ्रेड के नतत्व म वेसेक्स ने खूब सामना किया विजय प्राप्त की और ऐतिहासिक इग्लड के राज्य का केन्द्रबिन्दु बना।

पश्चिमी ईसाई जगत के सामुद्रिक तट पर जो स्कैंडिनेवियाई दबाव पडा उसका परिणाम यही नही हुआ कि सप्तशासन राज्य स करडिक के घराने ने इग्लड के राज्य की स्थापना की

१ दसवीं शती में इग्लड का प्रदेश।—अनुवादक

बल्कि शालमान के बचे-खुचे टुकड़ों को जोड़कर कपेट के घरान ने फ्रांस के राज्य का भी निर्माण किया। इस दबाव के कारण इंग्लैंड ने अपनी राजधानी वेसक्स की पहली वाली राजधानी विंचेस्टर को, जो पश्चिमी वेल्स के निकट था, नहीं बनाया, बनाया लदन को जिसने कठिनाइयों का सामना किया था और जिसके कारण सन् ८९५ के युद्ध में विजय मिली थी और जिसने डेन की नाविक सेना को टेम्ज में आने से रोका था। इसी प्रकार फ्रांस ने अपनी राजधानी लाओन में नहीं बनायी जो अंतिम कैरोलिंजियनों की राजधानी थी बल्कि पेरिस को राजधानी बनाया जिसने प्रथम कैपेट राजा के नेतृत्व में आक्रमण का सामना किया था और वाइकिंगों को सेना द्वारा आगे बढ़ने से रोका था।

इस प्रकार स्कैंडिनेवियाई सामुद्रिक आक्रमणों के कारण पश्चिमी ईसाई जगत ने दो नवीन राज्यों को जन्म दिया—इंग्लैंड और फ्रांस। इस युद्ध में अपने विरोधियों पर विजय पाने के क्रम में फ्रांस तथा इंग्लैंड ने सामंती सैनिक तथा सामाजिक प्रथा को भी जन्म दिया और इंग्लैंड ने तो अपनी भावनात्मक अनुभूति की अभिव्यक्ति महाकाव्य में की जिसका अंश 'द ले आव द बैटल आव माल्डन' में सुरक्षित है।

यह भी देख लेना चाहिए कि जो उपलब्धि अंग्रेजों को लोथियन में हुई, वही फ्रांस को नारमण्डी में हुई और उसने नारमण्डी के स्कैंडिनेवियाई विजेताओं को विजितों की सभ्यता का रंगरूट बना दिया। रोलो और उसके साथियों ने कैरोलिंजियाई चार्ल्स द सिम्पल से जो सन्धि की थी जिसके फलस्वरूप फ्रांस के अतलांतक तट पर उसे स्थायी स्थान मिल गया था (९१२ ई०) उसके सौ वर्ष के कुछ ही दिनों के बाद उसके वंशजों ने पश्चिमी ईसाई जगत की सीमा का विस्तार परम्परावादी ईसाई जगत तथा इस्लामी जगत को जीत जीतकर बढ़ाना आरम्भ कर दिया। और पश्चिमी सभ्यता का प्रकाश जिस रूप में फ्रांस में फैला था उस रूप में इंग्लैंड और स्काटलैंड में भी फैलने लगे जो अभी तक छाया में ही थे। नारमनों ने इंग्लैंड पर जो विजय प्राप्त की वह क्रिया विज्ञान (फिजिआलाजिकल) दृष्टि से असन्तुष्ट वाइकिंगों की मनोकामना की अन्तिम पूर्ति हो सकती है किन्तु सांस्कृतिक दृष्टि से इस विजय को विजय कहना मूर्खता है। नारमनों ने अपने प्राचीन धार्मिक विचारों को इसलिए नहीं अस्वीकार किया कि इंग्लैंड में जो पश्चिमी ईसाइयत के विचार थे उन्हें नष्ट कर दें बल्कि उनकी पुष्टि करें। हेस्टिंग्ज के युद्ध में जब नारमन योद्धा टाएलफर नारमन वीरों के आगे-आगे गाता हुआ घोड़े पर चल रहा था तब वह नार्स भाषा में नहीं गा रहा था फ्रेंच में गा रहा था और उस गीत का विषय साइगर्ड की गाथा नहीं थी, चान्सन डी रोलैंड की कथा थी। पश्चिमी ईसाई सभ्यता ने इस प्रकार स्कैंडिनेवियाई सभ्यता को हटाकर अपनी सभ्यता की जड़ जमायी। इस विषय पर हम आगे फिर कहेंगे जब अविकसित सभ्यताओं का वर्णन करेंगे।

उस सीमा प्रान्त के दबाव को हमने अन्त के लिए छोड़ रखा जो समय की दृष्टि से पहले आया और जो सबसे प्रबल था। उस शक्ति को नापा जाय तो हमारी शिशु सभ्यता उसके सामने नगण्य था। और गिबन की दृष्टि में तो वह अविकसित सभ्यता की श्रेणी में आती है।[1]

१ जिब्राल्टर के चट्टानों से ल्वायर तक लगभग एक हजार मील तक विजित सीमा बन गयी थी। उसी प्रकार यदि विजय की सीमा बढ़ती तो सरसन लोग पोलैण्ड और स्काटलैंड की

पश्चिमी शिशु सभ्यता पर जो अरबो का आक्रमण हुआ वह उस आक्रमण की अन्तिम सीरियाई प्रतिक्रिया थी, जो हेलेनी आक्रमण, सीरियाई राज्य में हुआ था। क्योकि जब अरब इस्लाम के जोर पर आगे बढे तब उन्हाने तब तक चैन नही लिया जब तक उन्हाने उन सब प्रदेशो पर विजय नही प्राप्त कर ली। जो किसी समय सीरियाई राज्य था। उन्ह सीरियाई सावभौम राज्य को जो किसी समय अकेमेनीडी का फारस का साम्राज्य था, अरब साम्राज्य बना देने मे ही सन्तोष नहा हुआ उन्हाने पुराने फीनिशियाई राज्य, अफ्रीका में कारथेज तथा स्पेन पर भी विजय प्राप्त की। ७१३ ई० में हैमिलकर और हैनिबल का अनुसरण करते हुए उन्हाने जिब्राल्टर जलडमरू मध्य को ही नही पार किया पिरिनीज को भी पार किया। उसके बाद यद्यपि उन्हाने हैनिबल की भाति रोम और आल्प्स का रास्ता नही पकडा वे ल्वायर की ओर गये जिधर हैनिबल कभी नही गया।

७३२ ई० में टूस का युद्ध, जिसमें शालमान के पितामह के नेतत्व म फ्रका ने अरबा का पराजित किया, इतिहास की महत्त्वपूण घटना है। सीरियाई दबाव की पश्चिम पर जो प्रतिक्रिया हुई उससे पश्चिम की शक्ति बढती गयी और इस ओर गति तीव्र होती गयी। यहाँ तक कि सात आठ शतिया के बाद पश्चिमी ईसाई समाज के अग्रगामी पुतगाली आइबीरी प्रायद्वीप से चलकर अफ्रीका के तट का चक्कर लगाते हुए जो आ पहुँचे, मलक्का और मकाओ तक गये और कास्टिली अनुगामी दल अतला तक पार करते हुए मैक्सिको पहुँचा और प्रशा त सागर को पारकर मनीला तक पहुँचा। इन आइबीरी अग्रगामिया ने पश्चिमी ईसाई समाज की अद्वितीय सेवा की। उन्होन उस समा के क्षितिज का विस्तार किया जिसके वे प्रतिनिधि थे और इस प्रकार ससार भर की धरती तथा सागर पर अपना प्रभुत्व स्थापित किया। आरम्भ में यह इसी आइबीरी शक्ति का परिणाम है कि पश्चिमी ईसाई समाज का विकास हुआ और बाइबिल को सरसो के बीज की कथा के समान उग कर 'महान् समाज' बना। और एसा वक्ष बना जिसकी शाखाओ में ससार के सभी लोग आ गये और बसे।

मूरा के दबाव के कारण ही आइबीरी शक्ति का प्रवाह हुआ। यह इसी बात से जाना जा सकता है कि ज्याही मूरा का दबाव समाप्त हो गया आइबीरी शक्ति भी समाप्त हो गयी। सत्रहवी शती में पुतगाली और कास्टीला उसी नयी दुनिया में से हटाये गये जिसे उन्होने बनाया था। उन्हें हटाने वाले पश्चिमी इसाई समाज के पिरिनीज के उस पार वाले बीच में कूद पडने वाले लोग—डच, अंग्रेज तथा फ्रासीसी थे। समुद्र पार के प्रदेश की यह असफलता उसी समय की है जब मूरो को निष्कासन से, हत्या से जबरदस्ती धमपरिवतन से आइबीरी प्रायद्वीप से समाप्त किया गया और इस प्रकार ऐतिहासिक उत्प्रेरणा की समाप्ति हो गयी।

ऐसा जान पडता है कि मूरा पर आइबीरी आक्रमण वैसा ही था जसा हैप्सबुग राजाओ का उसमानलिया पर था। जब तक दबाव कठोर रहा दोनो शक्तिशाली रहे जब दबाव में कमी

पहाडियों तक पहुँच जाते। तब शायद आक्सफोर्ड में कुरान की व्याख्या होती और वहाँ के गिरिजाघरों में मुहम्मद साहब की शिक्षा की पढ़ाई होती।'

'द हिस्टरी आव दि डिक्लाइन एण्ड फाल आव द रोमन एम्पायर', अध्याय ५२।

हुई प्रत्येक—स्पेन, पुर्तगाल, आस्ट्रिया—शिथिल होते गये और पश्चिमी संसार में उनका नेतृत्व समाप्त हो गया।

(५) दण्डात्मक दबाव की प्रेरणा

लँगड़े स्मिथ और अंधे कवि

किसी जन्तु का यदि एक अंग, उसी प्रकार के जन्तुओं की तुलना में, इस कारण खण्डित या बेकार हो जाता है कि उसका उपयोग नहीं हो सकता तो इस कमी को वह जन्तु इस प्रकार पूर्ण करता है कि उसका दूसरा अंग अधिक शक्तिशाली तथा उपयोगी बन जाता है। इस प्रकार वह अपनी एक कमी को दूसरे प्रकार पूरी करके अपने साथियों से दूसरे अंगों की उपयोगिता में बढ़ जाता है। उदाहरण के लिए अंधे की स्पर्श शक्ति उन लोगों की अपेक्षा तीव्र हो जाती है जिनके पास आँखें हैं। यही बात हम समाज के किसी दल अथवा समुदाय में भी देखते हैं जिसे किसी घटनावश अथवा अपने कारण या जिस समाज में वे रहते हैं उनके और सदस्यों के कारण किसी प्रकार का दण्ड मिलता है। यदि किसी क्षेत्र में उनका कार्य बन्द कर दिया जाता है तो दूसरे क्षेत्रों में उनकी कार्य-कुशलता बढ़ जाती है। क्योंकि शक्ति उधर केन्द्रित हो जाती है।

साधारण उदाहरण से आरम्भ करना उचित होगा जिसमें समाज के कुछ व्यक्तियों को शारीरिक अवरोध हो गया हो जिससे समाज के साधारण कार्य करने में उन्हें बाधा उपस्थित होती है। मान लीजिए कि किसी बर्बर समाज में एक अंधा और एक लँगड़ा आदमी है। उस समाज का कार्य युद्ध है जिसके लिए ये दोनों बेकार हैं। लँगड़े बर्बर पर क्या प्रतिक्रिया होती है? उसके पाँव उसे रणक्षेत्र में नहीं ले जा सकते किन्तु हाथों से वह अस्त्र बना सकता है। और उसमें वह इतनी दक्षता प्राप्त कर लेता है कि दूसरे उस पर उसी प्रकार आश्रित हो जाते हैं जिस प्रकार वह दूसरों पर। वह पुराणों के लँगड़े हेफेस्टस (वल्कन) की अथवा वल्ड (वेलैण्ड स्मिथ) की प्रतिमूर्ति बन जाता है। अंधे बर्बर की क्या अवस्था होती है? वह लोहारी में हाथ का भी प्रयोग नहीं कर सकता। किन्तु वह वीणा के तार झनझना सकता है अपने गले का उपयोग कर सकता है। जो कार्य वह रणक्षेत्र में जाकर नहीं कर सकता उसके सम्बन्ध में कविता रच सकता है। यद्यपि उन घटनाओं को वह दूसरों के मुँह से उन सिपाहियों के मुख से जो बिना अलंकार के सीधी-सादी भाषा में कहते हैं—सुनता है। वह उस असफलता स्थान का साधन बन जाता है जिसकी बर्बर को इच्छा होती है।

एक पन्नाग तथा वीरों की जाति ने अंधकार का सामना किया और वे मर मिटे। उस समय कोई होमर न था कि पावन गीतों द्वारा उनके महान् कार्यों की पवित्रता प्रदान करता। अपरिचित असंख्य अनन्त में पड़े हुए हैं अगाध अंधकार में उनकी आत्मा कष्ट पा रही है कोई कवि न था जो उनके नाम को प्रकाश में लाकर उज्ज्वल करता।[१]

दासता

वह दण्ड जो प्रकृति ने नहीं दिया मनुष्य द्वारा दिया गया दासता है। जो सार्वजनिक

१ होरेस ओड ४, ९—हर्षविहार के अपने अनुवाद से।

तथा सबसे कठोर है । उदाहरण के लिए उन प्रवासिया को लीजिए जो हैनिबली युद्ध और आगस्टी शान्ति के बीच दो शतियों में मध्य-सागर के चारो ओर के देशो से दास होकर इटली में आये । जिस कठिनाई में इन दासो ने अपना यहाँ का जीवन आरम्भ किया उसकी कल्पना नही की जा सकती । उनमें कुछ हेलेनी सभ्यता के सास्कृतिक उत्तराधिकारी थे और उन्होने अपनी आँखो से अपने भौतिक तथा आत्मिक ससार को टूटते देखा । जब उन्होने अपने नगरो का लूट-पाट देखा और देखा कि हमारे नागरिक साथी दासो के बाजार में बिक रहे है । दूसरो ने जो पूरब से हेलेनी समाज के 'आन्तरिक सर्वहारा' थे यद्यपि अपना सास्कृतिक उत्तराधिकार खो दिया था, फिर भी उनमे दासता की कठोर यातना सहने की शक्ति थी । जो उन्होने नही खोयी थी । एक पुरानी यूनानी कहावत है कि 'दासता से आधा मनुष्यत्व चला जाता है' और यह मसल रोम के दासो के नागरिक वशजो पर पूर्ण रूप से चरितार्थ होना था जिनका पतन चरम सीमा को पहुँच गया था । ईसा के पूर्व दूसरी शती से लेकर छठी ई० तक वे केवल रोटी पर जीवित नही रहते थे, शारीरिक व्यवसाय भी करते थे और परिणामस्वरूप धरती पर से उनकी समाप्ति हो गयी । यह दीर्घकालिक परिस्थिति, जब कि जीवन मृत्यु के ही समान था, वह दण्ड था जो दासता की चुनौती का सामना न करने के कारण उपस्थित हुआ । और अधिकाश मानव जो विभिन्न परम्पराओ के तथा विभिन्न वशो के थे और जिन्हें सामूहिक रूप से हेलेनी युग के दुष्काल में दास बना दिया गया था विनष्ट हो गये । किन्तु कुछ ऐसे भी थे जिन्होने चुनौती का सामना किया और किसी-न किसी रूप में परिस्थिति को सुधारा ।

कुछ तो अपने मालिक के कार्य में कुशलता के कारण ऊँचे उठे और बडी-बडी जागीरो के उत्तरदायी शासक बन गये । सीजर की जागीर स्वय जो बढते-बढते हेलेनी जगत की सार्वभौम राज्य बन गयी उन दासो द्वारा शासित होती थी जिन्हें सीजर ने मुक्त किया था । दूसरे दासो ने जिन्हें उनके मालिको ने छोटे-मोटे धधो में लगा दिया था, अपनी मजदूरी की बचत के रुपयो से अपनी स्वाधीनता खरीद ली और रोम के व्यापारिक ससार मे उन्होने सम्पत्ति तथा महत्ता प्राप्त की । दूसरे इस ससार में तो दास ही रहे किन्तु वे दार्शनिक राजा हो गये अथवा दूसरे ससार के लिए धार्मिक नेता हो गये । और असली रोमन जो नारसिसस के अवैध अधिकार को घृणा से देखते थे और ट्रिमाल्शियो जसे नये धनिको पर हँसते थे, लँगडे दास एपिक्टिटस के ज्ञान का सम्मान करते थे और उन असख्य दासो तथा मुक्त हुए दासो के उत्साह पर आनन्दमय आश्चर्य प्रकट करते थे जिनका विश्वास पहाडो को हिला रहा था । हैनिबली युद्ध तथा कान्सेटाइन के धर्म-परिवर्तन के बीच पाँच शतियो म रोमन शासको ने अपनी आखो से दासो के बौद्धिक तथा आर्थिक विकास के चमत्कार को देखा यद्यपि बलपूर्वक इसे रोकना चाहते थे । किन्तु वे नही रोक सके और अन्त में स्वय पराभूत हो गये । क्योकि जो दास बनकर आये थे वे अपना परिवार घरबार और सम्पत्ति तो छोड आये थे किन्तु अपना धर्म उन्होने नही छोडा था । यूनानी दास अपने साथ बकेनेलिया का त्योहार अपने साथ लाये थे अनातोलियाई साइबिल (हितायती देवी जिसका अस्तित्व उस समाज के लोप हो जाने पर भी बना रहा जिस समाज में उसका प्रादुर्भाव हुआ था) की पूजा अपने साथ लाये मिस्री दास, आइसिस' की पूजा लाये बबिलोनियाई नक्षत्रो को पूजा लाये, ईरानी मित्र की पूजा लाये और सीरियाई दास ईसाई धर्म लाये । जुवेनल ने ईसा की दूसरी शती में लिखा था—सीरियाई सरिता आरोन्तीज का जल टाइबर नदी में

कि पश्चिमी दबाव के परिणामस्वरूप शतिया के धार्मिक और जातिगत उत्पीडित लोगा म से एक नवीन शासक वग उत्पन होगा।

अत म फनारिओट अपनी आकाक्षा की पूर्ति मे असफल रहे क्योकि अठारहवी शती क अन्त में उसमानिया सामाजिक समूह पर पश्चिमी दबाव इतना तीव्र हो गया कि इस समाज म एकाएक परिवतन हा गया। उन यूनानिया में, जा उसमानिया प्रजा में पश्चिम से सम्बन्ध स्थापित करने म अगुआ थे, नवीन पश्चिमी राष्ट्रीयता के विषाणु (वाइरस) भी प्रवेश कर गये। यह फ्रास की राज्यक्रान्ति का परिणाम था। फ्रास की क्रान्ति और यूनानी स्वतन्त्रता के युद्ध के बीच यूनानी लाग दो विरोधी आकाक्षाआ के वशीभूत थे। एक ओर तो उनकी आकाक्षा थी कि उसमानलिया क उसमानी साम्राज्य को यूनानी प्रबन्ध में बनाये रखें क्योकि अभी तक उसका वे प्रबन्ध करते रहे साथ ही साथ उनकी महत्त्वाकाक्षा थी कि स्वतन्त्र यूनानी राज्य स्थापित करें। ऐसा यूनान यूनानिया के लिए जैसा फ्रास फ्रासीसिया के लिए था। १८२१ में स्पष्ट हो गया कि ये दोना आकाक्षाएँ कितनी विरोधी है जब यूनानियो ने इस बात की चेष्टा की कि दोना की पूर्ति हो जाय।

जब फनारिओट के राजकुमार हाइपसिलाटी ने रूस के अपने अड्डे से प्रूत को पार किया कि म उसमानिया साम्राज्य का मालिक बन जाऊँ और मैनिओट के सरदार पट्रो-बे मावरोमिखालिस मोरिया के अपने किले से उतरा, कि स्वतन्त्र यूनान की स्थापना की जाय, तब परिणाम पहले से समझा जा चुका था। इस युद्ध ने फनारिओटा के सपने को भग कर दिया। जिस सरकण्डे के सहारे सौ वष से अधिक तक उसमानली वश खडा रहा उसने उनका हाथ छेद दिया इससे उनका क्रोध इतना भडका कि उस सरकण्डे को ताड डाला और अपने पाव पर खडे हुए। राजकुमार हाइपसिलाटी के आक्रमण का उत्तर उन्होने इस प्रकार दिया कि जिस शक्ति का ढाचा १६८३ से शान्तिपूवक फनारिओट खडा कर रहे थे उसे एक प्रहार म नष्ट कर दिया। यह उस प्रक्रिया का पहला चरण था जिसके द्वारा उसमानिया जगत् से सारे अतुर्की तत्त्वा को निकाल बाहर करा था और जिसकी पराकाष्ठा उस समय हुई जब उन्होने १९२२ में अनातोलिया से परम्परावादी ईसाई धम वाला का निकाल दिया। यूनानी राष्ट्रीयता की प्रथम चिनगारी न तुर्की राष्ट्रीयता की आग भी भडका दी।

इस प्रकार फनारिओट उसमानिया साम्राज्य में वह प्रमुख अधिकार नही प्राप्त कर सके जिस समझा जाता था कि वे पायेंगे। किन्तु यह भी सत्य है कि वे सफलता के बहुत निकट पहुँच गय थ। जिस बल से उन्होने उत्पीडन का सामना किया था वह इसका प्रमाण है। उसमानलिया से उनका सम्बन्ध चुनौती और उसका सामना करने के नियम का सुन्दर उदाहरण है। यूनानिया और तुर्कों का विरोध जिसमें लागा को इतनी अभिरुचि उत्पन्न हुई है और जिस घटना में इतनी सजीवता प्राप्त हा गयी है इसी परिस्थिति में समझा जा सकता है। इसका कारण धम अथवा प्रजातिगत (रेशल) नही है जिस पर दोना दल साधारणत जोरा में विवाद करते है। तुर्क प्रेमी तथा यूनानी प्रेमी दोना सहमत है कि यूनानी ईसाइयो और तुर्की मुसलमाना में कुछ ऐतिहासिक प्रजातिगत स्वाभाविक अन्तर है और यह अन्तर धर्म अथवा जाति की कुछ ऐसी विशेषताआ के कारण है जो अमिट है और हटायी नही जा सकती। केवल उस समय व असहमत होते है जब इन अस्पष्ट विशेषताआ के मूल्यो को इधर से उधर कर देते है। यूनानी भक्त यूनानी रक्त तथा परम्परावादी ईसाई धम में जन्मजात गुण मानते है और तुर्की रक्त तथा इसलाम मे जन्मजात

दोष । तुर्की भक्त इन गुण तथा दोष उलट कर यूनानियों पर आरोपित करते हैं । किन्तु तथ्य जानने से दोनों के विचार गलत प्रमाणित होते हैं ।

उदाहरण के लिए यह विदित है कि जहाँ तक प्रजाति का प्रश्न है वर्तमान तुर्कों में अल्ताई गरल के मध्य एशिया के तुर्की गोष्ठियों का रक्त अत्यल्प मात्रा में है । उसमानिया तुर्की राष्ट्र में परम्परावादी ईसाई समाज भी घुलमिल गया है जिसके साथ गत छः शतियों से उसमानलों की पीढ़ी रहती चली आयी है । जहाँ तक प्रजाति का प्रश्न है दोनों में कोई अन्तर नहीं रह गया है ।

यदि इस तर्क से यूनानी-तुर्की विरोध के विवाद का समाधान हो सकता है तो इसी प्रकार का तर्क धार्मिक विरोध के सम्बन्ध में हम दूसरा उदाहरण देकर उपस्थित कर सकते हैं । कुछ तुर्की मुसलमान बहुत दिनों से ऐसी अवस्था में रहते चले आये हैं जिनका रहन-सहन उसमानियाँ तुर्कों के समान नहीं है, उसमानलियों की पुरानी परम्परावादी यूनानी प्रजाओं के समान है । वोल्गा के किनारे एक तुर्की मुस्लिम समुदाय रहता है जिसे काजानली समुदाय कहते हैं । शतियों से ये रूस के परम्परावादी ईसाई शासन में रहते आये हैं और इन्हें भी उतनी प्रजातीय तथा धार्मिक यातना सहनी पड़ी जितनी उसमानलियों के शासन में परम्परावादी ईसाइयों को । ये काजानली किस प्रकार के लोग हैं । हम पढ़ते हैं कि वे 'अपनी ईमानदारी, संयम, मितव्ययिता तथा परिश्रम के लिए प्रसिद्ध हैं । उनका मुख्य व्यवसाय व्यापार है । उनका मुख्य उद्यम साबुन बनाना, कातना और बुनना है । वे जूते बहुत अच्छा बनाते हैं और साईसी का काम भी अच्छा करते हैं । सोलहवीं शती के अन्त तक काजान में कोई मसजिद नहीं बन सकती थी और तातारों को अलग मुहल्ला में रहने का विवश किया जाता था, किन्तु धीरे धीरे मुसलमानों की अधिकता हो गयी ।'[१]

मुख्य रूप में यह विवरण जो तुर्कों का जार के काल में उत्पीडन का है वैसा ही जैसा उसमानिया साम्राज्य के उन्नत काल में तुर्कों द्वारा कट्टर मुसलमानों की यातना का था । धर्म के नाम पर जो यातना दोनों समुदायों की हुई वह दोनों की समान थी और दोनों के विकास का मुख्य कारण थी । शतियों तक जो इस समान यातना की प्रतिक्रिया दोनों समुदायों पर हुई उससे दोनों में एक प्रकार की 'पारिवारिक' समानता उत्पन्न हो गयी जिसके परिणामस्वरूप परम्परावादी ईसाई धर्म तथा इस्लाम में जो आरम्भिक भेद थे वे मिट गये । यह 'पारिवारिक' समानता दूसरे धार्मिक समुदायों में भी दिखाई पड़ती है जिन्हें धार्मिक विचारों के कारण दण्ड दिया गया और जिन्होंने उसी प्रकार उसका सामना किया । उदाहरण के लिए पुराने उसमानिया साम्राज्य में लवाटीनी रोमन कैथोलिक । फनारिओटों के समान लवाटीनी अपना धर्म छोड़कर और शासकों का धर्म अंगीकार करके यातना से बच सकते थे । किन्तु बहुत कम ने ऐसा किया । जो कुछ बन्धन जबर्दस्ती उन पर लगाये गये थे उन्हीं के बीच जो अवसर उन्हें मिला उसी का लाभ उन्होंने उठाया । इस प्रकार के आचरण में उन्होंने चरित्र की शक्ति तथा आशावादिता की मनोवृत्ति का विचित्र तथा सुन्दर मिश्रण दिखाया जैसा इस प्रकार की सीमाओं से बँधे और ऐसी परिस्थिति में पड़े सामाजिक समुदायों में बहुधा मिलती है । इस बात की चिन्ता उन्होंने

१ द ब्रिटिश एडमिरल्टी मनुअल आन द तूरानियन्स एण्ड पान तूरानियनिज्म ।

नहा की कि हम पश्चिमी ईसाई जगत में वीर और गौरवशाली वश के ह, अर्थात् मध्ययुगीन वनिशियाई, जेनोई या आधुनिक फ्रेंच, डच या अग्रेजा के वशज ह । उसमानिया साम्राज्य की जिस सकीण परिस्थिति में रहने को वे विवश थे उसमें या तो वे धार्मिक यातना का उसी प्रकार सामना करते जिस प्रकार उन्ही के समान विभिन्न धार्मिक उत्पीडित समुदायो ने किया था या समाप्त हो जाते ।

उसमानलिया के उत्कर्ष के युग के आरम्भिक शतियो में व पश्चिमी ईसाई ससार के केवल लेवाटीनियो को ही जानते थे जिन्हें वे फ्राक फिरगी कहते थे । उनकी कल्पना थी कि पश्चिमी यूरोप में ऐसे ही निम्न कोटि के धमभ्रष्ट लोग रहते ह । जब उन्हें और अनुभव हुआ तब उन्हें अपनी सम्मति बदलनी पडी । और उन्होंने दो प्रकार के फिरगियो में विशिष्ट अन्तर माना—एक तो 'खारे पानी वाले फिरगी' और दूसरे 'मीठे पानी वाले फिरगी' । मीठे पानी वाले फिरगी' वे थे जो तुर्की में लेवाटी वातावरण में जन्मे और पनपे और लेवाटी आचार-व्यवहार का विकास किया । 'खारे पानी वाले' व फिरगी थे जो फ्रका के देश में पैदा हुए और बढ़े और प्रौढ होकर दृढ चरित्र लेकर तुर्की में आये । तुर्कों को यह देख कर आश्चर्य हुआ कि उनमें और 'मीठे पानी वाले फिरगियो में' जो उन्ही के बीच रहते आये थे, जो मनोवैज्ञानिक अन्तर था उसके कारण उस समय कोई व्यवधान नही पडता था जब वे खारे पानी वाले फिरगियो का सामना करते थे । जो फिरगी भौगोलिक दृष्टि से तुर्कों के पडोसी थे और देशवासी थे व मनोवैज्ञानिक दृष्टि से विदेशी थे और जो फिरगी दूर देश से आये थे उनकी भावनाएँ तुर्कों जसी ही थी । इसका कारण स्पष्ट था । तुर्क और खारे पानी वाले फिरगी एक दूसरे को समझते थे । क्योंकि दोनो की सामाजिक पृष्ठभूमि साधारणत समान थी । प्रत्येक का विकास ऐसे वातावरण मे हुआ था जिसमें अपने घर का वह स्वय मालिक था । इसके विपरीत दोनो ही मीठे पानी वाले फिरगियो को समझने अथवा उनका समादर करने म कठिनाई का अनुभव करते थे क्योंकि मीठे पानी वाले फिरगियो की सामाजिक पृष्ठभूमि दोनो के लिए विदेशी थी । वह घर का लडका नही था वह 'गेट्टो'[१] की सतान था। इस यातना के जीवन के कारण उनमें (मीठे पानी वाले फिरगियो में) एक विशिष्ट जातिगत मनोवृत्ति उत्पन्न हो गयी जो तुर्कों के तुर्कों अथवा फ्रकलैण्ड के फिरगियो म नही थी ।

यहूदी

बिना विस्तार में गये हुए हमने देखा कि धार्मिक भेद भाव का परिणाम क्या होता है । वह स्थिति भी देखी जहाँ उत्पीडित तथा यातना पहुँचाने वाले एक ही समाज के थे जिसका अच्छा उदाहरण अग्रेज प्युरिटन ह और उसमानिया साम्राज्य के इतिहास से वह उदाहरण देखा जहाँ उत्पीडित समुदाय दूसरी सभ्यता का था और धार्मिक यातना पहुचाने वाले दूसरी सभ्यता के । अब ऐसी स्थिति को देखना है जहाँ धार्मिक उत्पीडन का शिकार एक विनष्ट जाति है जो जीवाश्म (फासिल) के रूप में अवशेष है । ऐसे फासिलो की सूची आरम्भ में दी गयी है । जिसमें प्रत्येक

१ गेट्टो उस बस्ती को कहते थे जो साधारण जन से अलग यहूदियों के रहने के लिए बना दी गयी थी । यहाँ अभिप्राय है तिरस्कृत समुदाय ।—अनुवादक

ही ऐसी यातना का उदाहरण है। किन्तु उनमें सबसे महत्त्वपूर्ण फासिल अवशेष सीरियाई समाज में यहूदी लोग ह। लम्बी दुखमय कहानी कहने के पहले जिसका अन्त अभी नही हुआ है,[1] हम देखगें कि एक और सीरियाई अवशेष पारसियो ने हिन्दू समाज म वही काय किया है जो यहूदिया ने और स्थानो मे—जसे व्यापार और आर्थिक बातो में दोनो ने विशेषता प्राप्त की है। इसी प्रकार एक और सीरियाई अवशेष आरमीनियन ग्रगोरियन, मनोफाइसाइटो ने मुसलिम जगत में वही काय किया है।

उत्पीडित यहूदिया की विशेषताए अच्छी तरह विदित ह। हमें यहाँ यह देखना है कि यहूदिया के ये गुण उनकी जाति या धम के कारण अथात उनके यहूदीपन के कारण है, जसा कि साधारणत समझा जाता है अथवा यातना के परिणामस्वरूप उत्पन्न हो गय ह। दूसरे उदाहरणा से जो परिणाम निकलता है वह तो ऐसा ही है, किन्तु हम निष्पक्ष ढग से इस समस्या पर विचार करगे। प्रमाणा की परीक्षा दो प्रकार हो सकती है। जब धार्मिक कारणा स यहूदिया का उत्पीडन हाता था उस समय के उनके आचार की तथा जब यह उत्पीडन कम कर दिया गया अथवा बिलकुल ही समाप्त कर दिया गया उस समय के उनके आचार की तुलना हम कर सकत ह। हम उन यहूदियो क आचार की तुलना, जो उत्पीडित किये जा रहे ह या किय गय ह उन यहूदिया के आचार से कर सकते ह जो कभी उत्पीडित हुए नही।

आजकल जिन यहूदिया म वे विशेष आचरण बहुत स्पष्ट ह जिन्हें हम यहूदी आचरण कहते ह और अ-यहूदी जिन्हे यहूदिया की हर जगह और हर काल में विशेषता मानते आय ह व पूरबी यूरोप के आशकनाजी यहूदी ह। वे रूमानिया तथा निकटवर्ती प्रदेशा म जो रूसी साम्राज्य में तथाकथित यहूदी घर में सम्मिलित थ वधानिक न सही नतिक दृष्टि से दबाये हुए ह। और दबाने वाली पिछडी हुई ईसाई जातियाँ ह। यहूदिया का विशष आचरण हालड, ग्रट ब्रिटन, फ्रास तथा सयुक्त राज्य द्वारा विमुक्त किये हुए यहूदिया में नही पाया जाता। और जब हम इस बात पर विचार करते ह कि इन देशा में यहूदिया की विमुक्ति को कितना कम समय हुआ है और पश्चिम के प्रबुद्ध देशा में भी उनकी नतिक विमुक्ति अभी पूण रूप स नही हुई है तब इस यहूदिया के आचरण के परिवतन को कम महत्त्व न देंग।[2]

यह भी हम कहेंगे कि पश्चिम के विमुक्त यहूदिया में जो आशकेनाजी वग क ह और यहूदी घेर स आये ह अधिक यहूदी आचरण दिखाई पडता है और हमारे बीच जो सफारडिम वग के ह

१ जब श्री टवायनबी न यह भाग लिखा था नाजिया द्वारा यहूदिया की यातना आरम्भ नहीं हुई थी, इसलिए उसका विवरण इसमें नहीं आया है।—सम्पादक

२ पब्लिक स्कूल के अध्यापक के नाते म (सम्पादक) कह सकता हूँ कि मन देखा है कि पब्लिक स्कूल में जो यहूदी लडके अच्छे खिलाडी होते ह और इस कारण अपन साथिया क प्रमपात्र हो जाते ह, उतना 'यहूदी-आचरण' नहीं प्रदर्शित करत जितना और यहूदी बालक जो खिलाडी नहीं ह। साधारण अ-यहूदी बालक उन्हें यहूदी समझते ही नहीं चाहे उनक नाम और चेहरे की बनावट जसी भी हो।—सम्पादक

जो मूलत दारस्सलाम से आये हैं उनमे यह बात नही है । और इस कारण दोना वशा के इतिहास की भिन्नता है ।

आशकेनाजिम उन यहूदिया के वशज ह जिन्हाने उस परिस्थिति का लाभ उठाया जब रामना ने यूरोप का द्वार खोला । उन यहूदिया ने आरप्स के पार के अध बबर प्रदेशा से खुदरा व्यापार से लाभ उठाना आरम्भ किया । रोमन साम्राज्य के समाप्त हो जाने पर इन आशकेनाजिया का दोहरा कष्ट उठाना पडा । ईसाइया की कट्टरता स और बबरा के क्रोध स । कोई बबर यह नही देख सकता कि एक विदेशी आकर और उनके बीच दूसरे प्रकार का जीवन बिताकर इस प्रकार व्यापार करके लाभ उठाये जो बबर की क्षमता के बाहर है । इन्ही प्रकार की भावनाआ से प्रेरित होकर पश्चिमी ईसाइया ने तब तक उन्हें यातना दी जब तक वे अनिवाय समझे गये और जब ईसाइया ने समझा कि उनकी आवश्यकता नही है उन्हें निष्कासित कर दिया । इस प्रकार पश्चिमी ईसाई समाज के उत्कप और प्रसार के साथ साथ आशकेनाजिम पूरब की आर चलते गये । राइन प्रदेश के पुराने रोमन साम्राज्य की सीमा से वतमान ईसाई समाज की सीमा तक, उसी यहूदिया के घेरे म वे गये । पश्चिमी ईसाई समाज का ज्या ज्यो विस्तार होता गया और पश्चिम के लोगो में ज्या-ज्या आर्थिक दक्षता आती गयी यहूदी लाग एक देश स दूसर दश में निकाले जाते रह, जस इग्लैंड से एडवड प्रथम ने (१२७२–१३०७) निकाला । महाद्वीपा क तटीय उन्नतिशील देशा ने इन यहूदी निष्कासिता का स्वागत किया और पश्चिमीकरण की आरम्भिक अवस्था में उन्हें व्यावसायिक नेताआ के रूप मे स्वागत भी किया और ज्याही ईसाई समाज ने देखा कि अब आर्थिक जीवन के विकास में इनकी आवश्यकता नही है इन्हें अस्थायी शरणालय से निकाल बाहर किया । इस घेरे के अन्दर आशकेनाजी यहूदिया को पश्चिम से पूरब की आर की निकासी बन्द कर दी गयी और उनका बलिदान सीमा तक पहुँच गया । क्याकि यहा पश्चिमी तथा रूसी परम्परावादी ईसाई सम्प्रदाय का मिलन केन्द्र था । यहाँ यहूदी चक्की के दोनो पाटो के बीच पड गये । जब वे पूरब की ओर प्रस्थान करना चाहत थे पवित्र रूस' ने उनकी राह रोकी । आशकेनाजिया के भाग्य से पश्चिम क मुख्य राष्ट्र, जा मध्य युग में यहूदिया को निकालने मे सबसे आगे थे अब ऐसे आर्थिक स्तर पर पहुँच गये कि स्वावलम्बी थे और यहूदियो की प्रतियागिता स आशका नही रह गयी । उदाहरण के लिए कामनवेल्थ शासन के समय क्रामवेल न (१६५३–५८ ई०) यहूदियो को पुन इग्लड में रहने की आज्ञा दे दी । पश्चिम मे यहूदिया का विस्तार उसी समय हुआ और आशकेनाजिया का पश्चिम की ओर जाने का नया द्वार खुला जब पूरब की ओर 'पवित्र रूस की पश्चिमी सीमा उनके लिए बन्द कर दी गयी । विगत शती में आशकेनाजिया का प्रवास पूरब से पश्चिम की ओर ही रहा है । 'घेरे' में से वे इग्लड तथा सयुक्त राज्य में गये ह । इन अतीत की परिस्थितिया क कारण इसमें आश्चय नही कि जा आशकेनाजिम हम लागो के यहाँ आ गये ह उनमें यहूदिया के आचारो की विशेषताएँ अधिक स्पष्ट ह बजाय उनके सहधर्मी सेफार्डिया के जा अधिक सुखी स्थानो मे रहे ह ।

स्पेन तथा पुतगाल स आये हुए सेफार्डिया में जो यहूदीपन दिखाइ देता है उसका कारण उनका दारस्सलाम में अतीत का निवास है । जा यहूदी फारस में तथा रोमन साम्राज्य के प्रान्ता में फल गये, जो प्रदेश बाद में अरबो के हाथ में आये, वे अपेक्षाकृत अधिक सुखी परिस्थिति में थे । अब्बासी खलीफा के शासन में उनकी स्थिति उन यहूदिया स खराब नही थी जा पश्चिमी

देशों में जाय और जिनका विस्तार आज हुआ है। सफार्डियों पर जो ऐतिहासिक विपत्ति आयी उसका कारण था मूरों से धीरे धीरे आइबीरी प्रायद्वीप का पश्चिमी ईसाइयों के हाथ में जाना जो पन्द्रहवीं शती के अन्त में समाप्त हुआ। ईसाई विजेताओं ने उनके सम्मुख तीन विकल्प रखे, विनाश, देश छोड़ देना अथवा धर्म परिवर्तन। हम उन सफार्डियों के बाद के इतिहास का पीछे विचार करेंगे जिन्होंने देश छोड़कर अपनी जान बचायी और जिनके वंशज आज जीवित हैं। जो देश से निकल गये वे क्याथलिक स्पेन तथा पुर्तगाल के वैरियों की शरण में गये अर्थात् तुर्की, हालैंड अथवा इंग्लैंड में।[1] जो तुर्की पहुँचे उन्हें उसमानलियों ने कुस्तुनतुनिया में सैलोनिका तथा स्मिर्ना के नागरिक क्षेत्रों में रहने के लिए प्रोत्साहित किया। इससे उन्होंने उस कमी की पूर्ति की जो उच्च मध्य वर्गीय नागरिक यूनानियों के विनाश अथवा निष्कासन से हो गयी थी। ऐसी उपयुक्त परिस्थिति में उसमानी साम्राज्य में सेफार्डी प्रवासी शरणार्थियों ने व्यापार में विशेषता प्राप्त की तथा उन्नति की। उनमें आशकनाजी यहूदियों के आचार नहीं पनप सके।

वे आइबीरी यहूदी जिन्हें मरानो कहते हैं और जिन्होंने चार पाँच शती पूर्व ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया, उनमें यहूदियों के लक्षण प्रायः लोप हो गये। इस बात के विश्वास करने के कारण हैं कि उच्च तथा मध्य आइबीरी लोगों की नसों में धर्म परिवर्तित यहूदियों का रक्त है। किन्तु चतुर से चतुर मनोविश्लेषण वाले के सामने यदि उच्च तथा मध्य वर्ग के स्पेनी और पुर्तगाली लोगों को परीक्षा के लिए रखा जाय तो वे कठिनाई से बता सकेंगे कि इनके पूर्वज यहूदी थे।

आधुनिक काल में मुक्त यहूदियों का एक दल यहूदियों के लिए पश्चिम के ढंग का आधुनिकतम राष्ट्र बना कर अपने समाज को पूर्ण रूप से मुक्त करना चाहता है।[2] जायनिस्टों का अन्तिम लक्ष्य यह है कि शतियों के उत्पीड़न से जो एक विचित्र मनोवैज्ञानिक ग्रन्थि उत्पन्न हो गयी है उससे यहूदियों को मुक्त किया जाय। इस अन्तिम लक्ष्य के सम्बन्ध से मुक्त यहूदियों का दूसरा दल है वह भी सहमत है। 'मिल जाने वाले' यहूदी और जायनिस्ट दोनों चाहते हैं कि यहूदी को विशेष जाति रूपी बीमारी से मुक्त किया जाय। किन्तु जायनिस्ट मिल जाने वालों के उपचार से सहमत नहीं हैं और यही उनमें भेद है।

मिलने वालों का आदर्श यह है कि हालैंड के यहूदी इंग्लैंड अथवा अमरिका के यहूदी को डच अंग्रेज अथवा अमरिकन होना चाहिए जिनका धर्म यहूदी हो। उनका तर्क है कि किसी प्रबुद्ध देश में किसी यहूदी नागरिक को वह नागरिक बनने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए चाहे वह रविवार को गिरजाघर जाने के बजाय शनिवार को अपने उपासना-गृह में जाता हो। जायनिस्ट इसका दो उत्तर देते हैं। एक तो यह कि मान भी लिया जाय कि 'मिलने वालों' की उपचार विधि से वांछित परिणाम प्राप्त भी हो तो वह कुछ प्रबुद्ध देशों में ही हो सकता है जहाँ संसार भर के यहूदियों की बहुत कम संख्या है। दूसरा उत्तर यह है कि बहुत ही उपयुक्त वातावरण में भी इस प्रकार यहूदियों की समस्या का हल नहीं हो सकता क्योंकि यहूदी होना केवल

१ डिसरायली अपने को इन्हीं का वंशज कहता था। यह सम्भवतः ठीक है किन्तु उसका अपने पूर्वजों का इतिहास अति रंजित जान पड़ता है।

२ जब यह पुस्तक लिखी गयी उसके बाद यहूदियों का राष्ट्र बन गया है। —अनुवादक

यहूदी धम का हानें से बहुत कुछ अधिक है। जायनिस्टा की दृष्टि में जो यहूदी डच या अंग्रेज या अमरीकी बनना चाहता है वह अपने व्यक्तित्व को नष्ट करता है, किन्तु डच या अंग्रेज अथवा जिस भी अ-यहूदी राष्ट्रीयता को ग्रहण करता है उसका व्यक्तित्व उसे प्राप्त नही होता। जायनिस्टा का कहना है कि यदि और राष्ट्रों के समान यहूदियो को भी होना है तो मिलने की प्रक्रिया व्यक्तिगत रूप से न होकर राष्ट्रीय ढग से होनी चाहिए। इसके बजाय कि छिट-पुट यहूदी एक-दो डच अथवा अंग्रेज बनने का व्यथ प्रयास करे, यहूदियो को अंग्रेज या डच में इस प्रकार मिलना चाहिए कि उन्हें अपने लिए एक राष्ट्रीय भूमि बनानी चाहिए जहा यहूदी उसी प्रकार रह सकें जसे इग्लड में अंग्रेज या हालड में डच रहते ह--जहा वे अपने देश के स्वत्वाधिकारी हा।

यद्यपि जायनिस्टा के आदोलन का व्यावहारिक रूप केवल पचास साल पुराना है, उसके सामाजिक दशन का परिणाम ठीक निकला है। पैलेस्टीन के कृषि उपनिवेश में यहूदिया की सन्तान पहचानी नही जाती। वे अब ऐसे अच्छे खेतिहर हो गये ह। बस ही उपनिवेश के खेतिहर जसे और अ-यहूदी देश वाले। दुर्भाग्य यह है कि वहा पहले की रहने वाली अरब जनता से उनका समझौता नही हो सका है।

केवल अब उन थोडे से यहूदिया के अस्तित्व के सम्बन्ध मे बता देना है जा सुदूर ऐसे स्थला में भाग गये और इस प्रकार जिन्हाने उत्पीडन से अपनी रक्षा कर ली। वहा उनके लक्षण कठोर किसानो के समान है अथवा पहाडी देश के रहने वाला के समान वे असभ्य ह जैसे अरब के दक्षिण पश्चिम में यमन के यहूदी अबीसीनिया के फालाशा, काकेशिया के पहाडी यहूदी और क्रीमिया के तुर्की बोलने वाले क्रिमचक यहूदी।

८ सुनहला मध्यम मार्ग

(१) पर्याप्त और आवश्यकता से अधिक

हम ऐसी जगह पहुँच गये हैं कि अन्तिम रूप से उल्लिखित कर सकते हैं। हम इस निर्णय पर पहुँचे हैं कि सभ्यता ऐसे वातावरण में जन्म लेती है जो कठोर होते हैं अथवा जहाँ जीवन सरल नहीं होता। इससे हमें यह जानने की प्रेरणा मिली कि यह किसी सामाजिक नियम का उदाहरण तो नहीं है जिसे हम इस वाक्यांश द्वारा व्यक्त कर सकते हैं—कि जितनी ही जबरदस्त चुनौती होगी उतनी ही अधिक प्रेरणा होगी। हमने पाँच प्रकार की प्रेरणाओं द्वारा उत्पन्न परिस्थितियों का अध्ययन किया है—कठोर देश, नयी धरती, आघात, दबाव तथा उत्पीड़न। और इन पाँचों सर्वेक्षणों में हमारे नियम का औचित्य सिद्ध हुआ है। किन्तु हमें यह देखना है कि यह नियम निरपेक्ष है कि नहीं। यदि हम चुनौती की तीव्रता अनन्त (एड इनफिनिटम) बढ़ाते जायँ तो क्या यह निश्चित है कि प्रेरणा भी उसी अनुपात में बढ़ती जायगी और बराबर उसी अनुपात में चुनौती का सामना सफलतापूर्वक होता जायगा? या हम बढ़ते-बढ़ते किसी ऐसे स्थान पर पहुँचेंगे जहाँ चुनौती के अनुपात में प्रेरणा कम होने लगती है। और यदि इस स्थिति के भी हम आगे पहुँचते हैं तो क्या ऐसी स्थिति पर पहुँच जाते हैं जब चुनौती इतनी तीव्र हो जाती है कि सफलता के साथ उसका सामना करना असम्भव हो जाता है? यदि यह है तो नियम यह होगा—'कठोर और सबसे सरल चुनौती के औसत वाली चुनौती में सबसे अधिक प्रेरणा मिलेगी।

क्या बहुत अधिक चुनौती के ढंग की कोई वस्तु हो सकती है? हमें ऐसा कोई उदाहरण नहीं मिला है। चुनौती की चरम सीमा और उसके सामना करने के क्रियाकलाप के कुछ उदाहरण हैं जिनका वर्णन हमने अभी नहीं किया है। हमने वेनिस की बात नहीं कही जो झील के किनारे मिट्टी में लकड़ी की बल्लियाँ धँसा कर बना है और जिसने सम्पत्ति और गौरव में पो के किनारे ठोस धरती पर बने सब नगरों से बाजी मार ली, हालैण्ड की भी बात हमने नहीं कही जो देश सागर में से पानी हटाकर और धरती निकाल कर बना है और अपने ही क्षेत्रफल के बराबर उत्तर यूरोप के मैदान के किसी टुकड़े से अधिक गौरवशाली इतिहास का निर्माण जिसने किया है। स्विटजरलैंड जो पहाड़ों का ढेर है उसके सम्बन्ध में भी नहीं कहा है। ऐसा जान पड़ता है कि पश्चिमी यूरोप के इन तीन कठोर प्रदेशों ने विभिन्न ढंगों से सामाजिक उन्नति के उच्चतम स्तर को प्राप्त किया जहाँ पश्चिम का कोई प्रदेश अबतक नहीं पहुँच सका।

किन्तु और बातें विचारणीय हैं। इन तीनों प्रदेशों की चुनौती बहुत कठोर अवश्य रही है किन्तु वे समाज की दो या एक ही परिस्थिति तक सीमित रही हैं। भौतिक कठोरता अवश्य रही है किन्तु जहाँ तक मानवी कठोरता का सम्बन्ध है जैसे आघात, दबाव, दमन—इनसे भौतिक कठोरता ने रक्षा की है और इस प्रकार भौतिक कठोरता चुनौती नहीं सुख ही रही है। इसके कारण मानवी कष्टों से उनकी रक्षा हुई जिनसे उनके पड़ोसी पीड़ित हुए। मिट्टी के किनारों

विचार तक सीमित रखेंगे । जैसे-जैसे यह सभ्यता प्रायद्वीप के अन्दर गहरी घुसती गयी बबरा के जीवन मरण का प्रश्न एक के बाद दूसरी पक्ति के सामने उपस्थित होता गया । उसके सामने प्रश्न था कि हम इस विदेशी वन्यती शक्ति द्वारा अपने सामाजिक ढाँचे को छिन्न भिन्न कर दें और हेल्नी समाज में घुल मिल जायें ? या हम इसका सामना करें और बाहरी विरोधी हेल्नी सवहारा के साथ हो जायें और समय पाकर बबर समाज के दाव पर बढकर उसका भक्षण कर । अर्थात् हम गिद्ध हो कि शव हो ? बार-बार इस प्रकार की चुनौती केल्टा और ट्यूटना के बीच आती रही । बहुत सघष के पश्चात केल्ट धराशायी हो गय और ट्यूटन विजयी हुए ।

केल्टा की पराजय प्रभावोत्पादक थी क्योंकि उनका आरम्भ अच्छा था और उन्होंने आरम्भ में परिस्थितियों से अच्छा लाभ उठाया । एट्रस्कनो की भूल से उन्हें अच्छा अवसर भी मिला । पश्चिमी भूमध्यसागर के आरम्भिक प्रवेश के समय अपने प्रतिद्वन्द्वी हेल्नी सस्कृति के ग्रहण करने वाले य हितायती इटली के तट पर अधिकार जमाने से ही सन्तुष्ट नही हुए । उनके अगुआ अपेनीन पहाड को पार कर के अन्दर घुसे और पो के बसिन में दूर तक इधर-उधर फल गये । इस काय में उन्होंने अपनी शक्ति का ह्रास किया और इन्हें नष्ट करने की शक्ति केल्टा को प्राप्त हो गयी । उसका परिणाम 'केल्टो का आवेग (फ्युरोर केलटिक्स) उत्पन्न हुआ जो दो शताब्दियों तक स्थिर रहा और केल्टा की बाढ अपनाइन पार करते हुए रोम ही नही पहुँचा, (३९० बी० सी० के विदेशी आक्रमण के) बल्कि मैसिडोनियाँ (२७९-६ बी० सी०) में, यूनान में, पूरब में अनातोलिया तक ये पहुँचे जहाँ वे गलेशिया' नाम और अपना प्रभाव छोड गये । हैनिबल न पो बेसिन के विजेताओ को अपना मित्र बनाया, किन्तु ये सफल नही हुए और केल्टो क आवग ने रोमन साम्राज्यवाद की चुनौती को बल प्रदान किया । पश्चिमी प्रदेश में रिमिनी से राइन तथा टाइन तक और पूरब में डेन्यूब तथा हैलिस की चौकियों तक केल्ट छिन्न भिन्न हो गये और अन्त में रोमन साम्राज्य इन्हें निगल गया ।

यूरोपियन बबरा के केल्टिक भाग के नष्ट हो जाने से उनके बाद वाला ट्यूटनी भाग सामने आ गया और उसे भी उसी चुनौती का सामना करना पडा । आगस्टी युग के इतिहासकार को ट्यूटना के भविष्य का क्या स्वरूप समझ में आया होगा जिन्होंने यह देखा कि ट्यूटनो के वेग को मरियस ने पूर्णत नष्ट कर दिया और सीजर ने ट्यूटना को गआल से पूणत निष्कासित कर दिया । उस इतिहासकार ने कहा होता कि ट्यूटना का भी वही हाल होगा जो केल्टा का हुआ और सम्भवत और सरलता से । किन्तु उसकी भविष्यवाणी गलत होती । रोमन सीमा एल्ब तक पहुँची, किन्तु कुछ ही समय क लिए । रोमनो को राइन डन्यूब रेखा तक लौटना पडा और वहा तक रहना पडा । जब सभ्य और बबरा के बीच की सीमा स्थिर हो जाती है तब समय सदा बबरा के पक्ष में रहता है । केल्टो के विपरीत ट्यटना पर हलनी सस्कृति का कुछ भी प्रभाव नही पडा । न तो सेना, न व्यापारी न प्रचारक (मिशनरी) उनका कुछ कर सके । ईसा की पाँचवी शती आते-आते जब गोथ और वण्डल पलोपोनीशियना का लूट रहे थ और तबाह कर रहे थे और रोम की स्वतन्त्रता का खतरे में डाल दिया था, तथा गआल, स्पेन और अफ्रीका पर अधिकार जमा लिया था, यह स्पष्ट हो गया कि जहाँ केल्ट असफल रहे वहाँ ट्यूटन विजयी हुए । यह इस बात का प्रमाण है कि हेल्नी दबाव इतना तीव्र नही था कि उस पर विजय प्राप्त करना असम्भव हो ।

एक बात और । सिक्न्दर की सेना द्वारा हेलेनी सस्कृति का जा आक्रमण सीरियाई ससार पर हुआ वह सीरियाई समाज के प्रति बलपूर्वक चुनौती थी । सीरियाई समाज के सामने यह प्रश्न था कि वह हेल्नी आक्रमण का विरोध करे कि नही । इस चुनौती का सामना करने के लिए सीरियाइयो ने अनेक प्रयत्न किये । इन सब प्रयत्नो में एक बात सब में थी । प्रत्येक में हेलेनी आक्रमण के विरोध का आधार धार्मिक आन्दोलन था, किन्तु पहले चार विरोधो तथा अतिम विरोध में एक विशेष अतर था । जोरोआस्टी, यहूदी, नेस्टोरी, तथा मोनोफाइसाइटा के विरोध विफल हुए इस्लामी विरोध सफल हुआ । जोरोआस्ट्री तथा यहूदी विरोध उन धर्मो के द्वारा हेलेनी चुनौती का विरोध करना चाहता था जो हेलेनी आक्रमण के पहले सीरियाई जगत में वतमान थे । जोरोआस्ट्री धम के बल पर सीरियाई ससार के पूर्वी भाग में ईरानी हेलेनियो के विरुद्ध खडे हुए और सिकन्दर की मत्यु के दो सौ वप के भीतर ही फरात (यूफ्रेटीज) के पूरब के सब प्रदेशो से उन्हें निकाल बाहर कर दिया । किन्तु जहाँ जारोआस्ट्री चरम सीमा तक पहुँच गये और सिकन्दर की शेप विजित भूमि का उद्धार रोम ने हेलेनीवाद के लिए किया । मकाबीज के नेतृत्व म यहूदियो की जो प्रतिक्रिया हुई थी कि अपने पश्चिमी मातभूमि को सीरियाई सभ्यता से मुक्त करने के लिए भीतरी क्रान्ति की जाय, वह भी असफल रही, यद्यपि यह चेष्टा साहस के साथ की गयी थी । सिल्युसिडो पर जो क्षणिक विजय प्राप्त हुई थी उसका बदला रोम ने ले लिया । सन ६६–७० ई० में जो रोम-यहूदी युद्ध हुआ था उसके परिणाम में फिलस्तीन में यहूदियो की शक्ति चकनाचूर हो गयी और अपने पवित्र नगर से मकाबीज ने जिन 'विनाशकारी रोमनो' को निकाल दिया था वे उस समय वापस आ गये और टिक गये जब हैड्रियन ने उस स्थान पर एलिया कैपिटोलिना नाम का उपनिवेश बसाया । जहाँ आजकल जरुसलेम है ।

जहा तक नैस्टोरी और मोनोफाइसीटी प्रतिक्रिया की बात है एक-दूसरे का प्रयत्न हेलेनी सभ्यता का विरोध, उस यन्त्र से करना था, जो आक्रमणकारी सभ्यता ने हेलनी तथा सीरियाई तत्त्वो को मिलाकर तयार किया था । आदिम ईसाइ धम में जिसमें अनेक ईसाई विचारो का समन्वय था सीरियाई धार्मिक भावनाओ का कुछ सीमा तक हेलेनीकरण किया गया था । यह धम हेलेनियो के अनुकूल था किन्तु सीरियाई इनके विरोधी थे । नेस्टोरी तथा मोनोफाइसाइटी दोनो अधार्मिक विचार ईसाई धम पर से हेलेनी प्रभाव हटाना चाहते थे किन्तु हेल्नी प्रभाव को ये नही रोक सके । नेस्टोरीवाद फरात के पार भगा दिया गया । मोनोफाइसाइटीवाद सीरिया मिस्र और आरमीनिया में जमा रहा क्योकि वहा के किसानो के हृदय पर हेलेनीवाद का प्रभाव नही पडा, किन्तु नगर की चहारदीवारी के भीतर जहा शक्तिशाली अल्पसख्यक थे कट्टरपन तथा हेलेनीवाद का वह नही हटा सका ।

सम्राट हेराक्लियस के समय का कोई व्यक्ति जिसने पूर्वी रोमन साम्राज्य की ससानिदो पर अन्तिम युद्ध में विजय देखी होगी, और जिसने परम्परावादी ईसाई सम्प्रदाय की विजय नस्टोरियो तथा मोनोफाइसाइटो के अतिम युद्ध म देखी होगी, वह ६३० ई० में ईश्वर को धन्यवाद देता कि उसने रोम क्थालिकवाद तथा हेलेनीवाद को एक कर दिया और यह अपराजेय है । किन्तु इसी समय हेलेनीवाद के विरुद्ध पाचवी सीरियाई प्रतिक्रिया आने ही वाली थी । सम्राट हेराक्लि-यस का दुर्भाग्य था कि वह उस समय तक जीवित रहा जब उसके सामने पैगम्बर मुहम्मद साहब के उत्तराधिकारी उमर उसके राज्य में आये और जिन्होने सदा के लिए सिकन्दर के बाद से जो

कुछ सीरियाई राज्य में हेलेनीकरण किया गया था नष्ट कर दिया । क्योंकि इस्लाम वहाँ सफ
हुआ जहाँ उसके पहले आने वाले असफल हो चुके थे । सीरियाई संसार से उसने हेलेनीवाद क
निष्कासित कर दिया । उसने फिर से अरब में खलीफा के राज्य का संयोजन किया और सार्वभौ
सीरियाई राज्य बनाया जिसे सिकन्दर ने फारसी राजा अखेमिनीडी को हरा कर छोटा कर दिय
था । अन्त में इस्लाम ने सीरियाई समाज में देशी सार्वभौम धर्म की स्थापना की और शतिय
से मूर्छित समाज को ऐसा रूप प्रदान किया कि वह बिना अपना उत्तराधिकारी बनाये समाप्त न
होगा । क्योंकि इस्लामी धर्म वह कोष (क्राइसेलिस) हुआ जिसमें से समय पाकर अरबी तथ
ईरानी सभ्यताओं का जन्म हुआ ।

उपर्युक्त उदाहरणों से हमें पता चलता है कि जो समस्या हमारे सामने है उसके निराकरण
की कोई समुचित प्रणाली हमें नहीं मिली, जहाँ हमें कोई स्पष्ट उदाहरण मिलता कि यहाँ चुनौती
की कठोरता बहुत अधिक प्रमाणित हुई हो । दूसरे ढंग से हमें इस समस्या पर विचार करना
चाहिए ।

(२) तीन स्थितियों की तुलना

समस्या पर नयी दृष्टि

क्या हम कोई दूसरी ऐसी प्रणाली ढूंढ सकते हैं जिससे और अच्छा परिणाम निकल सकता
है । अभी तक हमने इस प्रकार आरम्भ किया जब चुनौती द्वारा विरोधी पक्ष की हार हो जाती
है । जब हम उन उदाहरणों को देखें जहाँ चुनौती के कारण प्रेरणा और स्फूर्ति मिली है और
विरोधी सफल हुआ है । ऊपर के अध्याय के कई भागों में इस प्रकार के अनेक उदाहरण देखे
गये हैं और ऐसे समाजों की तुलना जिन्होंने सफलतापूर्वक चुनौती स्वीकार की, ऐसे ही समान
समाजों से की गयी है जिन्होंने जब चुनौती कम कठोर थी तब उसी प्रकार की चुनौती का सामना
कम सफलता से किया । अब कुछ इस प्रकार की तुलना को दो स्थितियों में देखना चाहिए और
यह देखना चाहिए कि तीन स्थितियों तक क्या उसे बढ़ा सकते हैं ?

प्रत्येक स्थिति में हमें किसी तीसरी एतिहासिक परिस्थिति को खोजना चाहिए जहाँ चुनौती
कम कठोर नहीं बल्कि जिस चुनौती से हमने आरम्भ किया उससे अधिक कठोर रही । यदि हम
इस प्रकार की किसी तीसरी स्थिति को खोज सकें तब वह परिस्थिति जो मिस्र से हमने आरम्भ
की थी—अर्थात् चुनौती का सफल सामना—दो चरम स्थितियों के बीच, मध्यम स्थिति हो जाती
है । इन दोनों चरम स्थितियों में चुनौती की कठोरता मध्य वाली स्थिति से कम अथवा अधिक
होती है । चुनौती का सामना करने से सफलता मिलती है कि नहीं ? हमने देखा है कि जिस
परिस्थिति में चुनौती कम कठोर थी वहाँ सामना करने में भी कम तीव्रता थी । परन्तु तीसरी
परिस्थिति में क्या होता था जिसपर पहली बार हम विचार कर रहे हैं । जहाँ चुनौती सबसे
कठोर है वहाँ सामना करने से सफलता भी अधिकतम हुई है । मान लीजिए कि हमें ऐसा निष्कर्ष
मिले कि चुनौती मध्यम स्थिति से अधिक कठोर रही हो और सफलता की वृद्धि सापेक्ष अधिक न
हुई बल्कि सामना करने की शक्ति में कमी आ गयी हो । यदि ऐसा प्रमाणित हो जाय तब हम इस
निष्कर्ष पर पहुँचेंगे कि चुनौती तथा सामना का नियम 'क्रमागत ह्रास' के नियम के अनुसार होगा ।
हम इस परिणाम पर पहुँचेंगे कि कठोरता की एक मध्यम स्थिति होती है जब प्रेरणा अधिकतम

होती है इसे हम अधिकतम (आप्टिमम) कहेगे। सबसे अधिक जब होती है उसे महत्तम (मक्सिमम)।

नारवे-आइसलेंड ग्रीनलेंड

हमने यह देखा है कि नारवे, स्वीडन तथा डेनमाक में नही, बल्कि आइसलड में अकाल प्रसूत (अवार्टिव) स्कैंडिनेवियाई सभ्यता ने साहित्य तथा राजनीति में उच्च सफलता प्राप्त की। यह उपलब्धि दो प्रेरणाओ के फलस्वरूप हुई। एक तो समुद्र पार से लोग आये और दूसरे यह कि जिस देश से स्कडिनेवियाई आये उससे आइसलैंड अधिक उजाड और कठोर जलवायु का था। मान लीजिए कि जिस चुनौती का इन्हें सामना करना पडा उससे दूनी कठोर चुनौती होती। मान लीजिए कि नास लोग पाच सौ मील चलकर ऐसे देश में पहुँचते और बसते जो आइसलड से उतना ही कठोर होता जितना नारवे से आइसलैंड है। क्या 'थूल'[1] के आगे 'थूल' का प्रदेश एसा स्कडिने-वियाई समाज पदा करता जो साहित्य और राजनीति में ऐसी ही प्रतिभा प्राप्त करता जो आइसलड में हुई। यह प्रश्न काल्पनिक नही है क्योकि जिस अवस्था का हमने वणन किया है वही वास्तव में हुई जब ये सामुद्रिक यात्री आगे ग्रीनलड गये। और हमारे प्रश्न के उत्तर में किसी प्रकार का सन्देह नही हो सकता। पाच सौ वर्ष से भी कम समय में ग्रीनलड वाले ऐसी भौतिक परिस्थिति से युद्ध करते-करते पराजित हो गये जो उनके लिए अति कठोर थी।

डिक्सी-मसाचसेट्स मेन

हमने पहले ही इस बात की तुलना की है कि किस प्रकार इग्लैंड के कठोर जलवायु और पथरीली धरती के द्वारा कठोर भौतिक चुनौती ब्रिटिश-अमरीकी उपनिवेशको के सम्मुख उपस्थित हुई और वरजीनिया तथा कैरोलिना की कम कठोर भौतिक चुनौती सामने आयी। प्रायद्वीप पर अधिकार करने की होड में न्यू इग्लड वालो ने सब प्रतिद्वन्द्वियो को पराजित किया। मैसन[2] और डिक्सन[3] रेखा स्पष्टत श्रेष्ठतम चुनौती के क्षेत्र की दक्षिणी सीमा है। हमें यह देखना है कि इस जलवायु की कठोर चुनौती के क्षेत्र की कोई उत्तरी सीमा भी है। यह प्रश्न उठाते ही हमें पता चल जाता है कि हाँ ऐसा है।

श्रेष्ठतम भौतिक क्षेत्र की उत्तर सीमा न्यू इग्लड को विभाजित करती है। क्योकि जब हम न्यू इग्लड का नाम लेते है और अमरीकी इतिहास म जो योगदान इसने दिया है उसे देखते ह तब हम छ राज्यो में केवल तीन की बात कहते ह अर्थात् मसाचसेटस, कनेक्टिकट तथा रहाड द्वीप की। न्यूहेम्पशर, वरमाट और मेन की नही। उत्तर अमेरिका के अग्रजी बोलने वाले समाज में मसाचसेट्स सदा आगे रहा है। अठारहवी शती में अग्रजी औपनिवेशिक शासन के विरोध में वह आगे रहा और तब से बौद्धिक तथा कुछ सीमा तक औद्योगिक तथा व्यापारिक क्षेत्र में उसने अपने नेतत्व का स्थान सुरक्षित रखा यद्यपि सयुक्त राज्य का तब से महान् विकास हुआ है। इसके विपरात मेन का, जो १८२० तक मसाचसेट्स का ही भाग रहा—उसी मन में वह अलग राज्य बना—कोई महत्त्व नही रहा और आज सत्रहवा शती की केवल यादगार है जब वहाँ लकडहारे मल्लाह और शिकारी

१ ब्रिटेन के उत्तर में किसी टापू का नाम।—अनुवादक

२-३ दक्षिण पूरबी सयुक्त राज्य के दो नगर।—अनुवादक

रहते थे । अब वह अजायबघर की वस्तु रह गयी है । इस कठोर प्रदेश के निवासी आज अपना निर्वाह उत्तरी अमरीका से जो पर्यटन करने आते हैं, जो ग्रामीण वातावरण में छुट्टियाँ बिताने आते हैं, उनके पथ प्रदर्शक बनकर रहते हैं । क्योंकि मेन आज भी उसी दशा में है जिस दशा में पहले था । आज मेन अमरीकी यूनियन का सबसे प्राचीन प्रदेश है उसका सबसे कम संस्कार हुआ है और उसमें सबसे कम कृत्रिमता है ।

मेन और मसाचुसेट्स में जो यह अंतर है उसका कारण क्या है ? यह पता चलेगा कि न्यू इंग्लैंड की जो कठोर भौतिक परिस्थिति है वह मसाचुसेट्स में अधिकतम है और मेन में वह परिस्थिति इतनी अधिक हो जाती है कि मनुष्य के सामना करने में उसका ह्रास आरम्भ होने लगता है । हम अपना सर्वेक्षण और दूर तक ले जायँ तो हमारी बात ठीक निकलेगी । कनाडा के न्यू ब्रंजविक, नोवा-स्कोशिया तथा प्रिंस एडवर्ड द्वीप सबसे कम समृद्ध तथा प्रगतिशील हैं । और उत्तर चलिए तो न्यूफाउण्डलैंड ने भौतिक युद्ध में सामना न कर सकने के कारण अपने पाँव पर खड़ा होने का विचार छोड़ दिया और सहायता के बदले ग्रेट ब्रिटेन का एक प्रकार क्राउन कोलोनी होना स्वीकार कर लिया है । उससे भी उत्तर चलिए तो लैब्रेडर में वही अवस्था देखते हैं जो नार्स उपनिवेशकों को ग्रीनलैंड में मिली थी । यह महत्तम चुनौती थी, अधिकतम नहीं थी । बल्कि उसे 'निकृष्टतम' कह सकते हैं ।

ब्राजील ला प्लाटा पेटेगोनिया

दक्षिण अमरीका के अतलांतक तट का भी स्पष्टत यही रूप है । उदाहरण के लिए ब्राजील राष्ट्रीय सम्पत्ति साधन आबादी तथा शक्तिशाली देश के एक छोटे भाग में सीमित है जो बीसवीं डिगरी दक्षिणी अक्षांश के दक्षिण है । यह भी देखने की बात है कि दक्षिणी ब्राजील दक्षिण के दूसरे क्षेत्रों से जैसे ला प्लाटा के मुहाने के दोनों ओर के राज्यों से अर्थात् उरुग्वे तथा ब्यूनसएस का आरजेंटाइन राज्य से निम्न कोटि का है । यह स्पष्ट है कि दक्षिण अमरीका का अतलान्तक तट के विषुवत् रेखा का क्षेत्र स्फूर्तिदायक नहीं है बल्कि शिथिल करने वाला है । किन्तु यह भी स्पष्ट है कि ला प्लाटा नदी के मुहाने का ताप तथा जलवायु अधिक नम है । यदि हम इस तट पर और दक्षिण चलें तो चुनौती का दबाव तो अधिक है किन्तु उसका सामना करने की शक्ति नहीं है जैसे पेटगोनिया के उजाड़ पठार में ।

गोलोवे-अलस्टर-अपेलेशिया

अब हम ऐसे उदाहरण पर विचार करेंगे जिसमें चुनौती केवल भौतिक नहीं है । कुछ भौतिक है कुछ मानवी । आज अलस्टर और शेष आयरलैंड में भयंकर अंतर है । दक्षिणी आयरलैंड पुराने ढर्रे का खेतिहर प्रदेश है और अलस्टर आधुनिक पश्चिमी यूरोप का बहुत बड़ा औद्योगिक केन्द्र है । बेलफास्ट उसी श्रेणी में है जिसमें ग्लासगो न्यूकासिल, हैमबुर्ग या डेट्रायट । और वहाँ के आदमी अपनी दक्षता के लिए उतने ही विख्यात हैं जितने रूक्षता के लिए ।

अलस्टर वाले किस चुनौती के कारण इस योग्य हुए ? उन्हें दो चुनौतियों का सामना करना पड़ा । एक तो वे स्काटलैंड से सागर पार करके आये, दूसरे उन्हें आयरिश निवासियों का सामना करना पड़ा जिनको उन्हें वहाँ से हटाना था । इन दोनों कठिनाइयों के कारण उनको प्रेरणा प्राप्त हुई जिसे हम यों नाप सकते हैं कि अलस्टर की सम्पत्ति और शक्ति कितनी अधिक है और

रहते थे । अब यह आनाथवधर भी वस्तु रह गयी है । इस कठोर प्रदेश के निवासी आज अपना निर्वाह उत्तरी अमरीका से जो पयटन करने आते हैं, जो ग्रामीण वातावरण में छुट्टियाँ बिताने आते हैं, उनके पथ प्रदर्शक बनकर रहते ह । क्योंकि मेन आज भी उसी दशा में है जिस दशा में पहले था । आज मेन अमरीकी यूनियन का सबसे प्राचीन प्रदेश है, उसका सबसे कम सस्कार हुआ है और उसमें सबसे कम कृत्रिमता है ।

मेन और मसाचसेटस में जो यह अन्तर है उसका कारण क्या है ? यह पता चलेगा कि न्यू इग्लड की जो कठोर भौतिक परिस्थिति है वह मसाचसेटस में अधिकतम है और मेन में वह परिस्थिति इतनी अधिक हो जाती है कि मनुष्य के सामना करने में उसका ह्रास आरम्भ होने लगता है । हम अपना सर्वेक्षण और दूर तक ले जायें तो हमारी बात ठीक निकलेगी । कनाडा के न्यू ब्रजविक, नोवास्कोशिया तथा प्रिंस एडवड द्वीप सबसे कम समृद्ध तथा प्रगतिशील है । और उत्तर चलिए तो न्यूफाउण्डलड ने भौतिक युद्ध में सामना न कर सकने के कारण अपने पाँव पर खडा होने का विचार छोड दिया और सहायता के बदले ग्रेट ब्रिटेन का एक प्रकार 'क्राउन कोलानी होना स्वीकार कर लिया है । उससे भी उत्तर चलिए तो लैब्रडर में वही अवस्था देखते ह जो नास उपनिवेशकों को ग्रीनलड में मिली थी । यह महत्तम चुनौती थी अधिकतम नही थी । बल्कि उसे निकृष्टतम' कह सकते ह ।

ब्राजील ला प्लाटा-पेटेगोनिया

दक्षिण अमरीका के अतलान्तक तट का भी स्पष्टत यही रूप है । उदाहरण के लिए ब्राजील राष्ट्रीय सम्पत्ति, साधन, आबादी तथा शक्तिशाली देश के एक छोटे भाग में सीमित है जो बीसवी डिगरी दक्षिणी अक्षाश के दक्षिण है । यह भी देखने की बात है कि दक्षिणी ब्राजील दक्षिण के दूसरे क्षेत्रों से जसे ला प्लाटा के मुहाने के दोनो ओर के राज्यों से अर्थात् उरुग तथा ब्यूनसएस का आरजेंटाइन राज्य स निम्न कोटि का है । यह स्पष्ट है कि दक्षिण अमरीका का अतलान्तक तट के विषुवत् रेखा का क्षेत्र स्फूर्तिदायक नही है बल्कि शिथिल करने वाला है । किन्तु यह भी स्पष्ट है कि ला प्लाटा नदी के मुहाने का ताप तथा जलवायु अधिक नम है । यदि हम इस तट पर और दक्षिण चलें तो चुनौती का दबाव तो अधिक है किन्तु उसका सामना करने की शक्ति नही है जैसे पटेगोनिया के उजाड पठार में ।

गोलोवे-अल्सटर अपेलेशिया

अब हम ऐसे उदाहरण पर विचार करेंगे जिसमें चुनौती केवल भौतिक नही है । कुछ भौतिक है कुछ मानवी । आज अल्सटर और शेष आयरलड में भयकर अन्तर है । दक्षिणी आयरलड पुराने ढर्रे का ग्रतिहर प्रदेश है और अल्सटर आधुनिक पश्चिमी यूरोप का बहुत बडा औद्योगिक केन्द्र है । बलफास्ट उसी श्रेणी में है जिसमें ग्लासगो न्यूकासिल, हैमबुग या डट्रायट । और वहाँ के आदमी अपनी दक्षता के लिए उतने ही विख्यात ह जितने रूक्षता के लिए ।

अल्सटर वाले किस चुनौती के कारण इस योग्य हुए ? उन्हें दो चुनौतियो का सामना करना पडा । एक तो वे स्काटलड से सागर पार करके आये, दूसरे उन्हें आयरिश निवासियो का सामना करना पडा जिनको उन्हें वहाँ से हटाना था । इन दोनो कठिनाइयो के कारण उनको प्रेरणा प्राप्त हुई जिसे हम या नाप सकते ह कि अल्सटर की सम्पत्ति और शक्ति कितनी अधिक है और

अपेक्षाकृत उन जनपदा की साधारण स्थिति से जो इग्लैड और स्काटलड के बीच की सीमा के स्काटलड की ओर पडते ह । और जो हाइल्ड रखा की तराई के किनार बसे ह जहा से सत्रहवा शती के स्काटलैंड के उपनिवेशी अल्सटर में आये ।[1]

आधुनिक अल्सटर वाले ही इस समुद्र पार से आने वाले उपनिवेशिया के प्रतिनिधि नही हैं । क्योकि जो अग्रगामी स्काटलैंड से अल्सटर में आये उनकी आयरल्ड से मिली-जुली सताने हुइ । ये लोग अठारहवी शती में फिर अल्सटर से उत्तरी अमरीका में गये और आज भी वे अपेलशियन पवत के दुग रूपी प्रदेश में मौजूद ह । यह प्रदेश ऊँचा है और अमरीकी यूनियन में पेनसिलवानिया से ज्याजिया तक फला हुआ है । इस दूसरे स्थानान्तरण का क्या प्रभाव पडा ? सत्रहवी शती में राजा जेम्स की प्रजा ने (अर्थात स्काटा ने) सेंट जाज चैनल पार किया और जगली पठार निवासिया से न लडकर जगली आयरिशा स लड । अठारहवी शती में उनके वशजो ने अतलान्तक पार किया और अमरीकी जगला में इडियन योद्धा बने । स्पष्टत यह अमरीकी चुनौती भौतिक तथा मानवी दोना रूपो में आयरिश चुनौती से प्रबल थी । क्या इस तीव्रतर चुनौती का सामना भी तीव्रतर हुआ ? यदि आज हम अल्सटर वाला तथा अपेलेशिया निवासिया की तुलना, उनके अलग हो जाने के दो सौ साल बाद कर तो इसका उत्तर नकारात्मक है । आज के अपेलेशियन निवासी ने यही नही कि प्रगति नही की, वह और पीछे चला गया है और बहुत बुरी तरह । सच पूछिए तो आज अपेलेशियन के पहाडी लाग बबरा से ऊपर नही ह । आज व मूढ तथा जादू-टोना वाले हो गये ह । उनमें दरिद्रता है, गन्दगी है और अस्वस्थता है । वे पुरानी दुनिया के पिछडे गोर बबरो के अमरीकी प्रतिरूप ह—जसे रिफी, अल्बेनियन, कुद पठान तथा रोएँ वाले एनू । अन्तर केवल इतना है—ये पुराने बबरो में से आज बचे-खुचे लाग ह । अपेलेशियन लोग ऐसी जाति के खेदजनक स्वरूप हैं जिन्होने सभ्यता ग्रहण की और फिर उसे खोकर बबर हो गये ।

युद्ध की प्रतिक्रिया

अल्सटर-अपेलेशिया के उदाहरण में चुनौती भौतिक भी थी और मानवी भी । किन्तु 'क्रमागत ह्रास' का नियम और उदाहरणो म भी लागू होता है जहा चुनौती का कारण केवल मानव ही है । जसे युद्ध के द्वारा विनाश के कारण जो चुनौती मिलती है । हमने दो उदाहरण दिये ह जिनमें इस प्रकार की चुनौती का विजयपूण सामना किया गया है । फारस के आक्रमण के बाद एथस 'यूनान का शिक्षा गह' बन गया, नैपोलियन के आक्रमण के बाद प्रशा विसमार्क वाला जरमनी बना । क्या इस रूप की ऐसी चुनौती का उदाहरण मिल सकता है जहाँ युद्ध की बरबादी का घाव इतना तीव्र हुआ कि अन्त मे उसने जाति का मुर्दा कर दिया । ऐसे उदाहरण मिल सकते ह ।

हैनिबल ने इटली का ध्वस किया, उस चुनौती से इटली को कोई स्फूर्ति नही मिली जसी और कम कठोर आक्रमणो से मिली थी । दक्षिणी इटली की उपजाऊ जमीन का कुछ भाग चराई का मदान बन गया और कुछ में अगूर तथा जतून के बाग लग गये । इस नयी ग्रामीण अथ-व्यवस्था,

१ ऊपर के पराग्राफ में, शीर्षक में, 'गलीव' नाम जो दिया गया है उससे ठीक-ठीक उस प्रदेश का बोध नहीं होता जहाँ के उपनिवेशी अल्सटर में आये ।—सम्पादक

पशुपालन तथा बागवानी का कार्य दास लोग करने लगे। जहाँ स्वतन्त्र किसान उसके पहले खेती करते थे—जब हैनिबल के सैनिकों ने किसानों के घरों को जला दिया और फलस्वरूप उजाड़ खेतों में घास फूस और कँटीली झाड़ियाँ उगने लगीं। इस प्रकार के क्रान्तिकारी परिवर्तन ने, जिसमें धान के अनाज के बदले तुरत पैसा देने वाली वस्तुओं की खेती आरम्भ हुई, कुछ दिनों तक धरती का आर्थिक मूल्य बढ़ा दिया, किन्तु इससे कहीं अधिक सामाजिक बुराइयाँ उत्पन्न हो गयीं। गाँव निर्जन हो गये और निर्धन जनता तथा पुराने किसान नगरों में जा बसे। हैनिबल के इटली से जाने के बाद तीसरी पीढ़ी में ग्रेकची ने कानून द्वारा इस प्रवृत्ति को रोकने की चेष्टा की किन्तु इससे रोमन राष्ट्रमण्डल और भी अधिक उत्तेजित हुआ जिसका परिणाम राजनीतिक झगड़ों से फिर घरेलू युद्ध आरम्भ हो गया और टाइबीरियस ग्रेकस के शासन के सौ साल बाद रोमनों ने इन बुराइयों के निराकरण के लिए विवश होकर आगस्टस को स्थायी अधिनायक बनाया। इस प्रकार हैनिबल ने जो इटली का विध्वंस किया उससे रोमन जाति ने वैसी स्फूर्ति नहीं प्राप्त की जैसी जरक्सीज के ऐटिका के विध्वंस होने पर एथेंस वालों ने प्राप्त की। सच पूछिए तो इटली को ऐसा धक्का पहुँचा जिससे वह कभी सँभल नहीं सका। फारसी शक्ति द्वारा की गयी बरबादी से जो स्फूर्ति प्रदान हुई उसी प्रकार की बरबादी जब प्यूनिक तीव्रता से हुई तब इटली में वह भयंकर हो गयी।

प्रवास की चुनौती पर चीनियों की प्रतिक्रिया

हमने अनेक श्रेणियों की भौतिक चुनौतियों का प्रभाव ब्रिटिश प्रवासियों के अनेक दलों पर देखा। अब हम यह देखें कि मानवी चुनौती की प्रतिक्रिया प्रवासी चीनियों पर क्या होती है। जब चीनी कुली ब्रिटिश मलयद्वीप अथवा डच ईस्ट इंडीज में जाता है तब उसके साहस तथा परिश्रम का पर्याप्त पुरस्कार मिलता है। वह जब घर छोड़ता है सामाजिक कठिनाइयों का सामना करता है। वह विदेशी सामाजिक वातावरण में प्रवेश करता है। ऐसे वातावरण से, जहाँ प्राचीन परम्पराओं के परवश होकर वह दुर्बल और निर्धन हो गया है, वह ऐसे वातावरण में आता है जहाँ उसे अपनी उन्नति करने का अवसर मिलता है। और बहुधा वह धनी हो जाता है। मान लीजिए कि हम उन सामाजिक कठिनाइयों को बढ़ा दें जिसका सामना उसे अपनी आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए करना पड़ता है। मान लीजिए कि मलय या इंडोनेशिया भेजने के बजाय उसे आस्ट्रेलिया या कैलिफोर्निया में भेज दें। हम गोरे आदमियों के देश में, हमारा साहसी कुली यदि प्रवेश पा भी जाय तो उसे बहुत कठोरता का सामना करना पड़ेगा। यहाँ नये देश में वह केवल अजनबी ही नहीं रहेगा, उसे विदेशी होने का दण्ड भी भोगना पड़ेगा। कानून का भेदभाव भी उसके विरोध में होगा और उसकी वैसी सहायता नहीं कर सकेगा जैसी मलय में उसे मिलता है जहाँ दयालु उपनिवेशिक सरकार ने चीनी संरक्षक नाम के अफसर की नियुक्ति कर रखी है। इन सामाजिक कठिनाइयों की चुनौती के कारण क्या उसी अनुपात में शक्तिशाली स्फूर्ति भी उत्पन्न होती है। ऐसा नहीं होता। हम यदि उन चीनियों की सम्पन्नता की, जो मलय तथा इंडोनेशिया में गये हैं, उन चीनियों की सम्पन्नता से तुलना करें जो कैलिफोर्निया और आस्ट्रेलिया में गये हैं।

स्लाव एकियन ट्यूटन-केल्ट

अब उस चुनौती पर दृष्टि डालनी चाहिए जिसमें बर्बरों को सभ्यता का सामना करना पड़ता

है । यह चुनौती यूरोप के विभिन्न स्तरो के बबरो को क्रमबद्ध रूप म पुरातन काल में उन अनेक मभ्यताआ से मिली जो एक समय असभ्य यूरोप के भीतर घुसते चले आये ।

जब हम इस नाटक का अध्ययन करते ह तब हमारा ध्यान एक ऐसी घटना की आर जाता है जब एक चुनौती के सामना के कारण अद्वितीय प्रतिभा को स्फूर्ति मिली । हेलनी सभ्यता ऐसा सुदर सुमन कभी नही खिला । और वह तब खिला जब मिनोई सभ्यता की चुनौती का सामना यूरोपीय ववरो का करना पडा । जब सागरवर्तीय मिनोइ सभ्यता का चरण यूनानी प्रायद्वीप पर पडा तब पष्ठभूमि के एकियाई बबर न तो नष्ट किये गये, न उन्हें परतन्त्र किया गया और न उह उन्हाने अपने में मिलाया । इसके विपरीत उन्हाने मिनोइ सागर-तन्त्र (थेलेसोक्रसी) के बाहरी सवहारा के रूप में अपना अस्तित्व बनाये रखा और जिस सभ्यता ने उन्हें चुनौती दी उसकी सभ्यता से सीखते भी रहे। समय पाकर उन्होंने सामुद्रिक कला सीखी। मिनोई लोगा के सागरतन्त्र को उन्ही के तत्त्व पर अथात् समुद्र पर ही पराजित किया और हेलेनी सभ्यता को जन्म दिया । हेलेनीवाद के पितामह एकियाई हैं । इससे प्रमाणित होता है कि ओलिमपियाई दवकुल दवताआ की रूपरेखा स्पष्टत एकियाई बबरा के देवताआ से उत्पन्न हुई है । यदि हेलेनी देवाल्या मे कहा भी मिनोई जगत् के देवताओ का आभास मिलता है तो कदाचित गाँवा में अथवा हेलेनी मन्दिरा के इधर उधर तहखाना में और गुप्त धार्मिक मन्दिरा में ।

इस घटना में जो स्फूर्ति प्राप्त हुई वह हलेनीवाद की प्रतिभा के कारण हुई । इसे हम दूसरे उदाहरण से नाप सकते ह । इन एकियाई बबरा के भाग्य की तुलना हम दूसरे स्तर के बबरा के भाग्य से कर जो इतनी दूर और सुरक्षित स्थान में थे जहाँ सभ्यता की काई किरण उस चुनौती के दा हजार वप तक भी नही पहुँच पायी थी, जो मिनोइया ने एकियाइयो को दी थी और जिसका शानदार सामना एकियाइया ने किया था । ये लाग स्लाव थे जा शान्तिपूवक उस काल में 'प्रिपेट' के दल्दला म छिपे पडे थे जिस काल मे वफ पिघल कर यूरोप महाद्वीप से हट गयी थी । ये यहाँ शतिया तक यूरोपीय बबरा के रूप में आदिम जीवन बिता रहे थे और जब टयूटना के जनरला न उस लम्बे हेलेनी नाटक को समाप्त किया जो एकियाई जनरेला ने आरम्भ किया था, तब भी स्लाव लोग वही थे ।

यूरोपीय बबर सभ्यता के इस अन्तिम समय खानाबदाश 'आवारा'[1] ने स्लावो का वहा से निष्कासित किया । ये आवार अपन निवास स्थान यूरोपीय स्टेप से इस लालच से आगे बढे कि टयूटना की भाँति हम भी रोमन साम्राज्य को लूटे और उसका विनाश करे । इस नये वातावरण में, जहा खेती हाती थी, स्टेप की ये गुमराह सन्तान (आवारे) जीवन की अपनी पुरानी गति विधि अपनाना चाहते थे । आवारा लोग स्टेप पर ढार चराकर जीवन-यापन करते थ । जब खनी की धरती पर वे आये तब उन्हाने देखा कि यहाँ के पशु तो खेती करन वाले किसान ह । इसलिए बुद्धिमानी पूवक वह मनुष्या के चरवाहे बने । जिस प्रकार वे अपने किसी पडासी खानाबदोश पर छापा मार के उसके पशु को लाते थे कि हम उन्हें नयी जोती हुई चराई की भूमि पर रख उसी प्रकार उन्हान मानव रूपी पशु की खोज की जिससे उन रोमन प्रदेशा को बसायें जिन्हें उन्हाने

१ एक खानाबदोश जाति ।—अनुवादक

किया उसके विपरीत केल्टा ने विदेशी धम को उसी रूप में स्वीकार नहीं किया जिस रूप में वह उनके सामने आया। इसके बजाय कि यह नया धम उनकी परम्पराओ पर आघात करे, इन्होने उस धम को अपने बबर सामाजिक परम्परा के अनुसार बनाया। रेनन का कहना है— किसी दूसरी जाति ने ईसाई धम स्वीकार करने में इतनी मौलिकता न दिखायी।' रोमन शासन में ब्रिटन में जो ईसाई केल्ट थे उनमें भी हम यह बात देख सकते ह। उनके बारे में हम बहुत कम जानत ह किन्तु इतना मालूम है कि उनमें पेलाजियस ऐसा अधर्मी पदा हुआ जिसने अपने समय के ईसाई ससार में हलचल पदा कर दी। पेलाजियसवाद से भी अधिक महत्त्व की बात यह हुई कि पलाजियस के देशवासियो तथा पेट्रिक ने रोमन ससार की सीमा के बाहर आयरलैण्ड में ईसाई धम फलाया।

अग्रेजो के समुद्र पार के जनरेलो ने (ब्रिटेन पर एग्लो सक्सन आक्रमण) जिमन ब्रिटिश केल्टो को पराजित किया आयरिश केल्टो का भाग्योदय कर दिया। उसने उस समय आयरलड को, ठीक उस काल के जब ईसाई धम का बीजारोपण वहाँ हुआ था, पश्चिमी यूरोप के उन प्रान्तो से अलग कर दिया जहाँ नयी ईसाई सभ्यता का विकास हो रहा था जिसका झुकाव रोम की ओर था। अपने विकास की प्रारम्भिक अवस्था में अलग होने के कारण 'सुदूर पश्चिमी ईसाई समाज का अलग से प्रारम्भिक स्वरूप बनाने म वह समय हुआ। उसका केन्द्र आयरलैण्ड था और उसका आगमन उसी समय हुआ जब महाद्वीपी पश्चिमी ईसाइ समाज का जन्म हुआ। इस सुदूर ईसाई समाज की मौलिकता उसके धार्मिक सगठन उसकी पूजा पद्धति तथा उसके सन्तो के जीवन चरित से स्पष्ट है।

सन्त पेट्रिक के मिशन के सौ साल के भीतर ही (जिसका समय ४३२–६१ ई० कहा जा सकता है) आयरिश धम ने अपनी विशेषताओ का ही विकास नहीं किया बल्कि महाद्वीपी कथोलिकवाद से कई बातो म आगे बढ़ गया था। यह बात उससे प्रमाणित होती है कि जब अलगाव का काल बीत गया आयरिश मिशनरियो और विद्वानो का ब्रिटेन तथा यूरोपीय महाद्वीप में बड़े उत्साह से स्वागत हुआ और बडे उत्साह स ब्रिटेन तथा यूरोप के विद्यार्थी आयरिश विद्यालयो में जाते थ। यह आयरिश सास्कृतिक प्राधान्य आयरलड में सन ५४८ में क्लानमकनाय के मठ की स्थापना तक रहा। आयरलैण्ड तथा यूरोप के बीच यह सास्कृतिक सचरण ही इस नवीन सपर्क का परिणाम नहीं था। दूसरा परिणाम शक्ति की प्रतिद्वन्द्विता भी थी। निणय इसका होना था कि पश्चिमी यूरोप की भावी सभ्यता आयरिश स्रोत से निकले कि रोमन। और इस निणय म शीघ्र ही आयरिश सास्कृतिक प्राधान्य समाप्त हो गया।

यह झगडा सातवी शती में सीमा पर पहुँच गया जब कैंटरबरी क सत आगस्टीन क शिष्यो तथा आयोना क सन्त कोलम्बा के शिष्यो में प्रतिद्वन्द्विता आरम्भ हुई कि नार्थम्ब्रिया के एंग्लो का धम परिवतन कौन करे। इनके प्रतिनिधियो का नाटकीय भिडन्त ह्विटबी की परिषद् (साइनाड) (६६४ ई०) में हुई और नार्थम्ब्रिया के राजा ने रोम क समथक सन्त विल्फ्रिड क पक्ष में निणय दिया। रोमन विजय उसी समय एक गया जब रोमन धार्मिक प्रथा पर इग्लण्ड के धार्मिक समाज का सगठन करने क लिए महाद्वीप स टारसस क थियोडोर आये और कैंटरबरी और यार्क के मुख्य क्षेत्रो में काय आरम्भ किया। अगले पचास वर्षों में सभी करटी किनार क लोग, पिक्ट, आयरिश, वेल्श तथा ब्रिटन और अंत में आयोना ने भी रोमन प्रणाली स्वीकार कर ली और साथ

ही रोमन इस्टर की तिथि निकालने की विधि भी जो व्हिटबी के झगडो का एक विषय था स्वीकार की । और भी मतभेद थे जो बारहवी शती तक समाप्त नही हुए ।

व्हिटबी की परिषद् के बाद से सुदूर पश्चिमी सभ्यता अलग पड गयी और विनाश की ओर उन्मुख हो गयी । ईसा की नवी शती मे वाइकिंगो के आक्रमण आयरलैंड में होते रहे और ऐसा एक भी मठ नही बचा जहा लूट-पाट न हुई हो । जहा तक पता है नवी शती में आयरलैंड में एक भी पुस्तक लैटिन में नही लिखी गयी यद्यपि इसी समय जो आयरिश भाग कर यूरोप चले गये थे उनकी विद्वत्ता चरम सीमा पर पहुँच गयी थी । स्कैण्डिनवियाई चुनौती के कारण ही इग्लैंड और फ्रास का निर्माण हुआ क्योकि इसमे इन देशो का अधिकतम स्फूर्ति प्राप्त हुई । किन्तु आयरलैंड मे इसके फलस्वरूप इतना अधिक अलगाव (आइसोलेशन) हो गया कि वह केवल एक अल्पकालिक विजय आक्रमणकारियो पर प्राप्त कर सका—क्लोनटाफ पर ब्रायनबोरू द्वारा । अन्तिम आघात उस समय हुआ जब एग्लोनारमन एजेविन राजा हेनरी द्वितीय ने बारहवी शती के मध्य पोप का आशीर्वाद लेकर आयरलैंड पर विजय प्राप्त की । केल्टिक किनारे के लोग अपनी निजी सभ्यता की नीव न डाल सके । उनके आत्मिक नेता के भाग्य मे यह बदा था कि उन्ही प्रतिद्वद्वियो के ऋणी हो जो उनकी स्वतन्त्र सभ्यता के जन्मसिद्ध अधिकार को छीन रहे थे । आयरिश विद्वत्ता पश्चिमी महाद्वीपी सभ्यता के विकास मे सहायता दे रही थी । क्योकि आयरिश विद्वान् स्कैण्डिनेवियाई आक्रमण के कारण आयरलैंड से भाग कर विस्थापितो के रूप मे वहाँ गये । केरोलिजियाई पुनर्जागरण में उनकी सेवाओ से काम लिया गया । इनमे आयरिश हेलेनीवादी दार्शनिक तथा धर्मशास्त्री जोहानस स्काटस एरिजेना निम्न देह सबसे योग्य व्यक्ति था ।

अकाल प्रसूत स्कैण्डिनेवियाई सभ्यता

हमने देखा कि पश्चिमी सभ्यता के निर्माण करने के एकाधिकार प्राप्त करने के लिए जो सघर्ष रोम तथा आयरलैंड के बीच चला उसमें रोम सम्मिलित हुआ । और जब पश्चिमी ईसाई समाज अभी नवजात ही था । उसे थोडे ही अवकाश के पश्चात् इसी कार्य के लिए सघर्ष करना पडा । इस बार उत्तरी यूरोपीय बर्बरो से जो ट्यूटनो के सबसे पीछे की पक्ति मे थे और स्कैण्डिनेविया में तैयार बैठे थे । इस समय परिस्थिति अधिक कठिन थी । सैनिक तथा सास्कृतिक दोनो स्तरो पर सघर्ष हुआ । दोनो विरोधी पक्ष एक दूसरे से अधिक शक्तिशाली और भिन्न थे । दो शती पहले आयरिश और रोमन दल जो पश्चिमी ईसाई समाज की नीव रख रहे थे एक दूसरे से शक्तिशाली तथा भिन्न नही थे ।

स्कैण्डिनेवियाइयो और आयरिशो का पश्चिमी ईसाई समाज से जो सघर्ष चला उसके पहले का इन देशो का इतिहास यहा तक समान है कि दोनो अपने भावी विरोधी से एक काल तक अलग रहे । ऐंग्लो सैक्सन अधर्मियो (पेगन) ने इग्लैंड में जो अभियान किया उसके कारण आयरिश लोग अलग रहे । ईसा की छठी शती की समाप्ति के पहले अधर्मी स्लावो के बीच में आ जाने के कारण स्कैण्डिनेवियाई लोग रोमन ईसाई समाज से अलग हो गये । ये स्लाव बाल्टिक के दक्षिणी तट के नीमर से एल्ब नदी की रेखा के सीधे स्थल मार्ग पर चले और उस स्थान में आये जो ट्यूटनी बर्बरो के हट जाने से खाली पड गया था । ये हेलेनियो के बाद के जनरेला में हटे । स्कैण्डिनेवियाई लोग अपने निवास स्थान में ही रह गये । इस प्रकार आयरिश अपने ईसाई साथियो से बिछुड

गये और स्कण्डिनेवियाई साथियो से भी क्योकि इनके बीच बबर लाग आ गय । किन्तु दोनो में महत्त्वपूर्ण अन्तर था । एंग्लो सक्सन प्रवेश के पहले रोमनो ने आयरिश में ईसाई धर्म की चिनगारी सुलगा दी थी जो अलगाव (आइसोलेशन) के समय आग के रूप में भडक उठी मगर स्कैण्डिनेवियाई अधर्मी बने ही रहे ।

दूसरे जनरेलो के समान स्कण्डिनेवियाई जनरेला उस सघर्ष का परिणाम था जो एक बबर समाज का एक सभ्य समाज से हुआ । यह शार्लमान के साम्राज्य में हुआ । यह साम्राज्य नितान्त असफल रहा क्योकि यह केवल आडम्बर था और असमय था । यह महत्त्वाकाक्षापूर्ण राजनीतिक ढाँचा मात्र था जो अविकसित सामाजिक तथा आर्थिक नीव पर बिना उचित ध्यान दिये बना था । इसी निस्सारता का सबसे बडा उदाहरण है शार्लमान का सक्सनी की विजय में असाधारण शक्ति का प्रयोग । जब ७७२ ई० में शार्लमान सनिक बल पर सक्सनी को रोमन ईसाई जगत् में लाने चला वह उस शातिमय प्रवेश की नीति का बहुत बुरी तरह उल्लघन कर रहा था जिसका पालन पिछले एक शती में आयरिश और अग्रजी मिशनरियो ने किया था । इस शातिमय नीति से इन लोगो ने बवरियना, थ्युरिजियना, हेसियना तथा फ्रीसियना का धर्म परिवतन करके ईसाई जगत् की सीमा बढा दी थी । फ्रको-सक्सन के तीस वर्षीय युद्ध की अग्नि परीक्षा ने नवजात पश्चिमी समाज के दुबल तन्तुओ को जजर कर दिया और स्कण्डिनवियाइयो के हृदय में वही बबरी उत्साह उत्पन्न कर दिया जो कभी केल्टो के हृदय में उभडा था जब आल्प्स के नीचे एट्रस्कनो का उत्साहपूर्ण बढाव उन्होंने रोका था ।

ईसा की आठवी तथा नवी शती में स्कैण्डिनेवियाइयो का बढाव ईसा के पूर्व पाचवी से तीसरी शती के केल्टो के बढाव से विस्तार में और प्रखरता में कही आगे था । केल्टो ने जो हेलनी जगत को घेरने की विफल चेष्टा की वे अपना दाहिना पक्ष स्पेन के मध्य तक ले गये और बायाँ पक्ष एशिया माइनर के मध्य तक ले गये । किन्तु यह प्रयास, वाइकिंगो की सनिक कार्यवाहियो के कारण, जिन्होंने परम्परावादी ईसाई सम्प्रदाय पर अपने वामपक्ष द्वारा रूस में घुसकर और दाहिने पक्ष द्वारा उत्तरी अमरीका में घुसकर आक्रमण किया, विफल हो गया । एक बार पुन दोनो ईसाई सभ्यताएँ उस समय खतरे में पड गयी जब वाइकिंग दल टेम्स पार करके लन्दन में घुस रहे थे, सन पार कर के पेरिस में और बासफरस पार करके कुस्तुनतुनिया में । यह खतरा उस समय से अधिक था जब केल्ट कुछ काल के लिए रोम और मसेडोनिया के अधिकारी बन गये थे । अकाल प्रसूत स्कण्डिनवियाई सभ्यता, जिसका विकास आइसलण्ड में ईसाइयत के उष्ण श्वास से वहाँ के हिमखण्डो को गलाकर फल रही थी, केल्टी संस्कृति से उपलब्धि और भविष्य की आशा में कही आगे बढ गयी थी । इसका अवशेष आधुनिक पुरातत्वविदो ने ढूँढ निकाला है ।[1]

जिस प्रणाली से हम अध्ययन कर रहे है उसमें स्वाभाविक है कि यही ऐतिहासिक घटनाएँ भिन्न भिन्न सन्दर्भ में बार-बार आयें । हमने ऊपर उस सघर्ष का वर्णन किया है जो इग्लैण्ड और फ्रास के लोगो को स्कण्डिनवियाई आक्रमण के समय करना पडा और यह भी दिखाया है कि इस

१ इसे 'लाटेने कल्चर' कहते है । इस कारण कि इसका पहले-पहल पता, समुचित प्रमाण न्यूचेटल झील की बाढ के बाद लगा ।

चुनौती में दोना जातिया ने अपनी एकता स्थापित करके और स्कण्डिनेवियाई अधिवासिया (सटल्स) को अपनी सभ्यता में मिला करके विजय प्राप्त की। (देखिये पृष्ठ १०४) जिस प्रकार केल्टी ईसाई संस्कृति की समाप्ति पर, उसके वशजा ने रोमन ईसाई जगत् को समृद्ध किया उसी प्रकार दो शतिया के बाद नारमन लोग लटिन लोगों पर आक्रमणकारी मता बने। एक इतिहासकार ने तो प्रथम धार्मिक युद्ध (क्रूसेड) को, विरोधाभास में यह कहा है कि वह ईसाई वाइकिंग चढाई थी। हमने स्कण्डिनेवियाई सभ्यता क अविकसित जीवन में आइसलैंड के महत्व को भी बताया है और यह भी कल्पना की कि यदि स्कण्डिनेवियाई अधर्मी एकियाइया के बराबर सिद्धि प्राप्त करते और ईसाइया को भगा कर सारे पश्चिमी यूरोप में अपनी अधर्मी सभ्यता का श्री दृष्टि से प्रसार करते, कि हेलेनी सभ्यता के हमी एक मात्र उत्तराधिकारी है ता क्या परिणाम होता ? हमें अभी यह देखना है कि स्कण्डिनेवियाई सभ्यता पर उसकी ही भूमि पर किस प्रकार विजय हुई और किस प्रकार उसका विनाश हुआ। विजय उसी समरतन्त्र (टेक्टिक्स) से हुई जिसे शालमान ने त्याग दिया था। पश्चिमी ईसाई जगत को विवश होकर अपनी रक्षा सनिक ढग से करनी पडी। परन्तु ज्यो ही पश्चिमी रक्षात्मक सनिक शक्ति ने स्कैण्डिनेवियाई सैनिक आक्रमण को रोक दिया पश्चिम वाला ने शान्तिमय अभियान का ढग पकडा। पश्चिम मे जो स्कण्डिनेवियाई बस गये उनका धम परिवतन करके उनको पुराने धम से हटाया और यही नीति उन्होंने स्कैण्डिनेविया में जो रह गये उनके प्रति अपनायी। उनमें स्कैण्डिनेवियाइया के एक गुण ने बडी सहायता की। वह थी उनकी ग्रहण करने वाला प्रबल शक्ति। इसे एक समकालीन पश्चिमी ईसाई विद्वान् ने कविता में वर्णन किया है—'जो लोग उनके झडे के साथ आते हैं उनकी भाषा, रीति रिवाज वे ले लेते है, परिणाम यह होता है कि वे एक जाति बन जाते है।

यह विचित्र बात है कि ईसाई धम स्वीकार करने के पहले ही स्कैण्डिनेवियाई शासक शालमान की वीर पूजा करने लग गये थे, यहाँ तक कि अपने पुत्रों का नाम कार्ल्स या मैगनस रखने लग गये थे। उसी काल में यदि पश्चिमी ईसाई जगत् के शासको मे मुहम्मद और उमर ईसाइया के प्रिय नाम होने लगते तो निश्चय ही हम इस परिणाम पर पहुँचते कि इस्लाम से सघर्ष में पश्चिमी ईसाई जगत का भला नही होने वाला है।

रूस, डेनमार्क तथा नारवे के स्कैण्डिनेवियाई राज्यो म तीनो स्कण्डिनेवियाई राजाओ ने, जो समकालीन थे, दसवी शती के अन्त के लगभग मनमानी आदेश जारी कर दिया था जिससे सब लोग बलपूर्वक ईसाई धम में दीक्षित कर दिये गये। नारवे में पहले इसका जोरदार विरोध हुआ किन्तु डेनमार्क और रूस में परिवतन चुपचाप स्वीकार कर लिया गया। इस प्रकार स्कण्डिनेवियाई समाज पराजित ही नही हुआ, विभाजित भी हो गया क्योंकि हर ईसाई जगत ने जिसने वाइकिंगा के आक्रमण का भार सहन किया था उसके बाद के धार्मिक और सांस्कृतिक प्रत्याक्रमण (काउंटर-अफसिव) का भी बोझ उठाया।

रूस के (स्कैण्डिनेवियाई प्रदेश के) व्यापारी अथवा राजदूत जगली की मूर्ति पूजा को कुसतुनतुनिया के रमणीय अन्ध विश्वास से तुलना करते थे। उन्होंने सन्त सोफिया के गुम्बद की सराहना की दृष्टि से देखा था उन्होंने सन्तो तथा शहीदो के सजीव चित्रो को, पूजा के स्थान (आल्टर) की सम्पत्ति को देखा था पादरियो की वेशभूषा और उनकी सख्या को, उनकी पूजा तथा सस्कारो के आडबर को देखा था मौन तथा उसके बाद सगीतमय भजन सुनकर उनकी आत्मा का उत्कर्ष

हुआ था, और इसमें कठिनाई नहीं हुई कि उन्हें विश्वास हो जाय कि प्रतिदिन ईसाइयों की प्रार्थना में सम्मिलित होने के लिए स्वर्ग से देवदूत आते हैं।[1]

इसके बाद शीघ्र ही १००० ई० में आइसलैण्ड में धर्म परिवर्तन हुआ और आइसलैंडी संस्कृति समाप्त हो गयी। यह सही है कि बाद के आइसलैण्डी विद्वानों ने जिन्होंने सागाओं को लिपिबद्ध किया और जिन्होंने एड्डाई (एड्डिक) कविताओं का संग्रह किया और स्कैण्डिनेवियाई पुराण, (माइथालोजी) वंशावली, विधियों का संक्षेप बनाया उन सबमें ईसाई तथा उत्तरी सम्मिश्रण था उन्होंने यह कार्य धर्म परिवर्तन के पश्चात् पचास से ढाई सौ साल के भीतर किया था। किन्तु विद्वत्ता का विहगावलोकन आइसलैंडी प्रतिभा का अंतिम चमत्कार था। इससे हम हेलनी इतिहास में होमरी कविताओं के योगदान की तुलना कर सकते हैं। ये कविताएँ विहगावलोकन की विद्वता का प्रमाण थी। क्योंकि होमर ने इनको साहित्यिक स्वरूप उस समय के बाद दिया जब वीरकाल, जिनसे वे उत्प्राणित हुई बीत चुका था। परन्तु हेलनी प्रतिभा इन महाकाव्यों को पूरा करके उसी परिमाण के दूसरे क्षेत्रों में कार्य करने लगी और आइसलैण्डी प्रतिभा अपनी 'होमरी उपलब्धि के बाद ११५०–१२५० ई० में समाप्त हो गयी।

(४) ईसाई जगत पर इस्लाम का आघात

इस अवधारण को समाप्त करते हुए हम यह भी देख लें कि क्या ईसाई जगत् पर इस्लाम के आघात से 'तीन स्थितियों की तुलना' का उदाहरण मिलता है, जिससे हमारे पाठक अब परिचित हो गये हैं। एक दूसरे सम्बन्ध में हमने देखा है कि इस्लाम की चुनौती से अधिकतम स्फूर्ति मिली है। ईसा की आठवी शती में इस्लाम ने फ्रैंकों को चुनौती दी जिसके परिणाम में अनेक शतियों तक ईसाइयों की ओर से प्रत्याक्रमण होता रहा जिसने मुसलमानों को आइबीरी प्रायद्वीप से निकाल बाहर ही नहीं किया किन्तु अपने मूल अभिप्राय से अधिक स्पेनी और पुर्तगाली लोग सागर पार करके संसार के सभी देशों में पहुँच गये। इस सम्बन्ध में एक घटना पर हमें ध्यान देना चाहिए जिसे हम सुदूर पश्चिमी तथा स्कैण्डिनेवियाई सभ्यता के पराजय पर विचार करते हुए देख चुके हैं। आइबीरी प्रायद्वीप से इस्लाम के पूर्णतः निष्कासित होने के पहले मुस्लिम संस्कृति से उसके विजयी विरोधियों ने वहाँ बहुत लाभ उठाया। मध्ययुगीन पश्चिमी ईसाई दार्शनिकों ने जो दार्शनिक महल खड़ा किया था उसके निर्माण में अज्ञात रूप से स्पेन के मुस्लिम विद्वानों ने योग दान किया और हेलेनी दार्शनिक अरस्तू की कुछ पुस्तकें पश्चिमी ईसाई जगत में अरबी अनुवाद द्वारा पहुँची। यह भी सत्य है कि पश्चिमी संस्कृति पर जो 'पूर्वी (ओरिएंटल) प्रभाव पड़ा है इसका कारण यह बताया जाता है कि वह धार्मिक युद्ध करने वालों के राज्य, सीरिया के प्रदेशों से आया किन्तु सत्य यह है कि वह मुस्लिम आइबीरिया से आया।

आइबीरिया से और पिरिनीज के ऊपर से पश्चिमी ईसाई जगत पर मुसलमानों का जो आक्रमण हुआ वह इतना प्रबल नहीं था जितना वह प्रतीत होता है क्योंकि इस्लामी शक्ति के स्रोत दक्षिण पश्चिमी एशिया तथा आइबीरी सीमाप्रान्त (फ्रंट) के बीच की गमनागमन की रेखा बहुत लम्बी थी। ऐसे स्थल मिलते हैं जहाँ संचरण की रेखा छोटी थी और वहाँ मुस्लिम आक्रमण

१ ई० गिबन द हिस्ट्री आव द डिक्लाइन एण्ड फाल आव द रोमन एम्पायर, अध्याय ५५।

बहुत तीव्र हुआ । ऐसा प्रदेश है अनातोलिया जो उस समय परम्परावादी ईसाई सभ्यता का दुर्ग था । अरब आक्रमण का पहला रूप यह देना चाहते थे कि 'रूम' को (वे रोम को रूम कहते थे) निष्क्रान्त कर दें और अनातोलिया पर आक्रमण करते हुए साम्राज्य की राजधानी पर विजय प्राप्त कर पश्चिमी ईसाई जगत् को धराशायी कर दें। मुसलमानों ने ६७३–७७ ई० में और फिर ७१७–१८ में कुसतुनतुनिया को घेरा किन्तु असफल रहे । दूसरे घेरे की असफलता के बाद भी जब दोनों शक्तियों की सीमा टारस पहाड़ की रेखा मान ली गयी, मुसलमान शक्ति अनातोलिया के बचे-खुचे परम्परावादी ईसाई जगत् पर साल में दो बार आक्रमण करते रहे ।

परम्परावादी ईसाई जगत् ने इस दबाव का सामना राजनीतिक युक्ति से किया । और यह प्रतिरोध देखने में तो सफल रहा क्योंकि इसके कारण अरब दूर रखे जा सके, किन्तु वास्तव में यह ठीक नहीं था क्योंकि परम्परावादी ईसाई समाज के आन्तरिक जीवन और विकास पर इसका प्रभाव घातक था । यह युक्ति थी सीरियाई लिओ का परम्परावादी ईसाई जगत में रोमन साम्राज्य की 'छाया' का आह्वान । यही काम दो पीढ़ी बाद पश्चिम में शाल्मान ने किया था और वह असफल रहा और इस कारण उससे कोई क्षति भी नहीं हुई । सीरियाई लिओ की उपलब्धि का सबसे घातक परिणाम यह हुआ कि परम्परावादी ईसाई धर्म की हानि करके बाइज़ेन्टायन राज्य का उत्कर्ष हुआ । उसका फल यह हुआ कि सौ साल तक पूर्वी रोमन साम्राज्य तथा ईसाई धार्मिक सत्ता और बुल्गेरियाई साम्राज्य तथा ईसाई धार्मिक सत्ता में आपसी विनाशकारी युद्ध होते रहे । इस प्रकार परम्परावादी ईसाई समाज का विनाश अपने आप ही घातक प्रहार करने से अपने ही घर में, अपने ही ढंग से हुआ । इन तथ्यों से स्पष्ट रूप से ज्ञात होता है कि परम्परावादी ईसाई समाज पर जो इस्लामी प्रहार हुआ उससे अत्यधिक था जो प्रहार इस्लाम का पश्चिमी ईसाई जगत् पर हुआ था ।

क्या हमें ऐसा कोई उदाहरण मिल सकता है जहाँ इस्लामी आघात न पर्याप्त रूप से कठोर न होने के कारण कोई प्रेरणा न दी हो ? हाँ, आज भी इस प्रकार के आघात का परिणाम अबिसीनिया में मिलता है । इस अफ्रीकी गढ़ में जो मोनोफाइसाइट[1] ईसाई समाज मिलता है वह संसार का एक सामाजिक आश्चर्य है । इसलिए कि वह अभी तक जीवित है, और जब अरबों ने मिस्र पर विजय प्राप्त की उससे आज तेरह शतियों के बीतने पर भी सारे ईसाई समाज से वह अलग है । दूसरे यह कि उसका सांस्कृतिक स्तर बहुत नीचा है । यद्यपि ईसाई अबिसीनिया कुछ हिचकिचाहट के साथ लीग आव नेशन्स में सम्मिलित कर लिया गया, यह अपनी अव्यवस्था और बर्बरता के लिए कुख्यात था । वहाँ सामन्ती और कबीलों के झगड़े होते रहते थे और दासों का व्यापार होता था ।

लाइबीरिया को छोड़कर जिसने अपनी स्वतन्त्रता स्थिर रखी, इस एक अफ्रीकी राज्य की

१ वे लोग जो ईसा को केवल एक प्रवृत्ति मानते हैं ।—अनुवादक

अवस्था ऐसी थी कि शेष अफ्रीका का यूरोपीय शक्तियों द्वारा विभाजन उचित समझा जा सकता है।[१]

विचार करने पर ज्ञात होता है कि अबिसीनिया की विशेषताएँ उसकी स्वतन्त्रता का अस्तित्व तथा उसकी संस्कृति का गतिरोध—दोनों का कारण एक ही है। ऐसी गढ़ी में उसकी स्थिति है जो दुर्भेद्य और अश्मीभूत (फासिल) होकर स्थिर हो गयी। इस्लाम की ज्वार और पश्चिमी सभ्यता की और भी प्रखर लहरें उसके पहाड़ों के चरणों तक ही पहुँच सकीं, केवल कभी-कभी उसके शिखर तक पहुँच पायीं जिसे वे कभी अपने में डुबा नहीं सकीं।

जिन अवसरों पर विरोधी तरंगों ने इस पठार की चोटी का स्पर्श किया वे बहुत क्षणिक थे और ऐसे अवसर भी कम थे। सोलहवीं शती के पहले पचासे में अबिसीनिया को लालसागर के तट निवासी मुसलिमों से पराजित होने का भय था जब अबिसीनिया से पहले इन्होंने आग्नेयास्त्र प्राप्त कर लिया था। किन्तु ये अस्त्र, जो सोमालियों ने उसमानलियों से प्राप्त किया, अबिसीनियनों के पास पुर्तगालियों से ठीक ऐसे समय पहुँच गये कि ये नष्ट होने से अपने को बचा लें। जब पुर्तगाली यह सहायता कर चुके और अबीसीनियनों को मोनोफाइसाइटवाद से कैथोलिक ईसाई बनाने का घृणित काय करने लगे वहाँ ईसाई धर्म का पश्चिमी रूप एकदम दबा दिया गया और पश्चिमी आगन्तुक सन् १६३० ई० के आस-पास वहाँ से निष्कासित कर दिये। उस समय यही नीति जापान ने भी बरती थी।

सन् १८६८ का ब्रिटिश अभियान सफल हुआ किन्तु उसका कुछ परोक्ष परिणाम नहीं निकला, यद्यपि इसके विपरीत पन्द्रह वर्ष पहले अमरीकी जलसेना जापान का आवरण हटाने में सफल हो गयी थी। उन्नीसवीं शती के अन्त में जब 'अफ्रीका की छीना-झपटी' चल रही थी, कोई-न कोई अफ्रीकी शक्ति अबिसीनिया को हड़पती रही और इटालियनों ने भी चेष्टा की। जो काय ढाई सौ साल पहले पुर्तगालियों ने किया था वही इस समय फ्रांसीसियों ने किया। इन्होंने सम्राट मेनेलिक को ब्रीच-लोडिंग[२] बन्दूकें दीं जिनकी सहायता से १८९६ में अडोवा में इटालियनों को उसने बेतरह हराया। जब इटालियनों ने जो जान-बूझकर एक नयी बर्बरता का विकास करके अपने को उसमें दुष्टतापूर्वक दृढ़ कर चुके थे—१९३५ में अधिक दुष्टतापूर्वक आक्रमण किया तब क्षण भर के लिए जान पड़ा कि अबिसीनिया की अभद्रता समाप्त हो जायगी और साथ ही पीड़ित पश्चिमी जगत् की नव-जनित सामूहिक सुरक्षा की आशा भी। किन्तु इथियोपिया में इटालियन साम्राज्य की घोषणा करने के चार ही साल के अन्दर मुसोलिनी को १९३९-४५ के विश्वयुद्ध में सम्मिलित होना पड़ा। इसके कारण ब्रिटिश जो १९३५-३६ में लीग आव नेशन्स की रक्षा करने की भावना से अभी तक अबिसीनिया की रक्षा करने नहीं आये थे, १९४१-४२

१ जब यह पुस्तक लिखी गयी तबसे अफ्रीका में काफी जागरण हो गया और बहुत-से राज्य विदेशी सत्ता को हटाकर स्वतन्त्र हो गये। अबिसीनिया की भी अब यह अवस्था नहीं रही। —अनुवादक

२ अपराजेयता तथा अभेद्यता के दार्शनिक आदर्शों के सम्बन्ध में आगे देखिए।

में उन्होंने अपनी रक्षा करने के अभिप्राय से अबिसीनिया के लिए वही किया जो पुर्तगालियों और फ्रांसीसियों ने इससे पहले ऐसे ही संकट के समय किया था।

ये ही चार विदेशी आक्रमण हैं जिनका ईसाई धर्म स्वीकार करने के बाद साढ़े सोलह सौ वर्षों में अबिसीनिया को सामना करना पड़ा। इनमें पहले तीन पर इतनी जल्दी विजय मिल गयी कि उनसे किसी प्रकार की स्फूर्ति नहीं मिल सकती थी। नहीं तो इसकी अनुभूति नितान्त कोरी रही है। यह बात इस कथन को पुष्ट प्रमाणित कर सकती है कि वह राष्ट्र सुखी है जिसका कोई इतिहास नहीं है। इसका इतिहास जड़ता (अपथी) के प्रति निरर्थक तथा नीरस विरोध के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। 'अपेथी' का अर्थ मूल यूनानी भाषा में है कष्ट अथवा अनुभूति के प्रति जड़ रहना अर्थात् स्फूर्ति की भावना न होना। १९४६ में सम्राट हेल सेलासी तथा उसके उदार सहकर्मियों ने सुधार करने की प्रबल चेष्टा की फिर भी देखना है कि क्या चौथे विदेशी आक्रमण से, इसके पहले के आक्रमणों की अपेक्षा अधिक प्रेरणा मिलेगी।

३

सभ्यताओं का विकास

१ अविकसित सभ्यताएँ

(१) पोलिनेशियाई, एसकिमो और खानाबदोश

अपने अध्ययन के पिछले भागों में हम इस कठिन प्रश्न का उत्तर ढूंढने का प्रयास कर रहे थे कि सभ्यताओं की उत्पत्ति कैसे हुई। किन्तु अब हमारे सामने ऐसी समस्या है जिसे लोग बहुत सरल समझ सकते हैं और सोच सकते हैं कि इस पर विचार करने की आवश्यकता ही नहीं है। एक बार एक सभ्यता जन्मी और यदि आरम्भ में ही वह नष्ट नहीं हो गयी, जैसा कि उन सभ्यताओं का अन्त हुआ, जिन्हें हमने अकाल प्रसूत सभ्यताएँ कहा है, तो उनका विकास एक प्रकार स्वाभाविक घटना मानी जा सकती है। इस प्रश्न का उत्तर एक दूसरे प्रश्न द्वारा बहुत अच्छा मिल सकता है। क्या यह ऐतिहासिक तथ्य है कि जिन सभ्यताओं ने अपनी उत्पत्ति के समय और बचपन के समय कठिनाइयाँ झेली हैं, उन्होंने क्या पूरे यौवन को प्राप्त किया है। दूसरे शब्दों में क्या समय पाकर अपने वातावरण तथा जीवन की गतिविधि को वश में कर सकीं, कि हम उन्हें उस सूची में सम्मिलित कर सकें जो इस पुस्तक के दूसरे अध्याय में हमने दी है। इसका उत्तर है कि कुछ सभ्यताएँ ऐसी नहीं हैं। जिन दो सभ्यताओं का उल्लेख हमने किया है अर्थात् विकसित सभ्यताएँ और अकाल प्रसूत सभ्यताएँ उनके अतिरिक्त एक तीसरी सभ्यता है—अविकसित सभ्यताएँ। ऐसी सभ्यताएँ हैं जिनका अस्तित्व तो है किन्तु जिनका विकास रुक गया है। इसलिए विकास की समस्या का अध्ययन हमारे लिए आवश्यक है। हमारा पहला काम यह होगा कि हम ऐसी सभ्यताओं के सम्बन्ध में प्राप्य सामग्री एकत्र करें और उनका अध्ययन करें।

ऐसे आधे दर्जन उदाहरण हमें आसानी से मिल सकते हैं। भौतिक चुनौतियों के फलस्वरूप जिन सभ्यताओं का जन्म हुआ है उनमें पोलिनेशियाई, एसकिमो तथा खानाबदोश हैं। मानवी चुनौतियों के परिणामस्वरूप जिन सभ्यताओं का जन्म हुआ है वे हैं परम्परावादी ईसाई जगत् में ओटोमन परिवार और हेलेनी जगत् में स्पार्टन। ये (पीछे वाली) सभ्यताएँ उस समय जब प्रचण्ड मानवी चुनौतियों में शक्ति स्फुरित हुई, और जब असाधारण कठोरता उनमें उत्पन्न हुई तब स्थानीय ताड़ना के कारण उत्पन्न हुईं। ये अविकसित सभ्यताओं के उदाहरण हैं और तुरन्त हमें पता चल जाता है कि सब एक समान हैं।

ये सभी अविकसित सभ्यताएँ असाधारण शक्ति प्राप्त करने के फलस्वरूप स्थिर हो गयीं। इन्हें ऐसी चुनौतियों का सामना करना पड़ा जो उस सीमा पर हैं जिसके एक ओर विकास करने की स्फूर्ति मिलती है दूसरी ओर पराजय होती है। पहले हमने (देखिए पृष्ठ ८१, ८२) जो पहाड़ पर चढ़ने वालों का उल्लेख किया उनमें ये ऐसे चढ़ने वाले हैं जो कुछ ऊपर गये हैं और [illegible]

गये ह। वे न तो आगे बढ सक्ते है न पीछे लौट सक्ते ह। वे शक्ति से पूण किन्तु अचल ह। और हम यहा पर बता दें कि जिन पाच का हमने नाम लिया है उनमें चार को अन्त में पराजित होना पडा। उनमें केवल एक अर्थात् एसकिमो अभी जीवित है।

उदाहरण के लिए पोलिनशियना ने समुद्र-यात्रा करने मे अपनी माहसपूण शक्ति का प्रयाग किया। ये बडी-बडी यात्राएँ उन्हाने खुली हुई क्षीण डोगिया (कना) में कुशलतापूवक की। उसका दण्ड उ हें यह मिला कि अज्ञात किन्तु दीघकाल तक प्रशा त सागर के विस्तिन क्षेत्र को पार तो करते रहे कि तु कभी सरलता अथवा आत्मविश्वास के साथ उ होने इस सागर को पार नहा किया। परिणाम यह हुआ कि इस असह्य तनाव के कारण उनमें शिथिलता आ गयी। और मिनोई तथा वाईकिंगो के समान अफीमचिया तथा अकमण्या की जाति में पतित हो गयी। सागर पर से उनका अधिकार जाता रहा और अपने-अपने द्वीप के स्वग में ये भटक्ते रहे और अ त में पश्चिमी नाविको ने उनपर आक्रमण किया। हम यहा इस पर विचार नही करगे कि पालिनेशियना का अ त क्या हुआ क्यांकि ईस्टर द्वीप के प्रसग में इस सम्ब ध मे लिख दिया है (देखिए पष्ठ ६९)।

जहाँतक एसकिमो की बात है उनकी सस्कृति उत्तरी अमरीकी इडियनो के जीवन-यापन का विकास था और इसे उ होने आक्टिक सागर के तट के जीवन के अनुकूल बना लिया। एसकिमा की शक्ति का कौशल यही था कि जाडे में बफ में रहे और सीला का शिकार कर। ऐतिहासिक प्रेरणा जो भी मिली हो, यह स्पष्ट है कि एसकिमो के पूवजा ने अपने इतिहास म किसी समय आक्टिक वातावरण का साहस के साथ सामना किया होगा और पूण कौशल से सकटकाल में अपने जीवन का परिस्थिति के अनुकूल बनाया होगा। इस कथन को पुष्ट करने के लिए उन उपकरणो की सूची मात्र गिना दनी है जिनका उन्हाने आविष्कार किया है कायक (लकडी की हल्की डागी जिसपर सील का चमडा लपेटा रहता है), यूमिअक (स्त्रिया की नाव), हारपून (वह भाला जिससे बडी-बडी मछलिया का शिकार होता है) पक्षिया के शिकार करने वाला तीर और निशाने वाला तख्ता, सामन मछली के शिकार करने वाला त्रिशूल, कम्पाउण्ड धनुप जिसके ऊपर नसा को बाँधकर मजबूत बनाते ह, कुत्ते वाला स्लेज (बफ पर चलने वाली बिना पहिए की गाडी), बफ पर चलने वाला जूता, जाडे म रहने के लिए घर और बफ (स्नो) का घर जिसमें चरबी का तेल जलाने का लम्प होता है चबूतरे गर्मी के मौसम के खेमे और खाल के वस्त्र[1]।'

उनकी बुद्धि तथा इच्छा शक्ति का यह बाहरी दिखायी देने वाला चमत्कार है, फिर भी— कुछ दिशाओ में, उदाहरण क लिए सामाजिक सगठन में एसकिमा का विकास निम्न कोटि का है। प्रश्न यह है कि यह निम्न कोटि का सामाजिक अन्तर उनके पुरानेपन के कारण है अथवा उस प्राकृतिक वातावरण के कारण तो नहा है जिसम एसकिमा अनत काल स रहते चले आये ह। यह जानने के लिए कि इनकी सस्कृति एसी है कि इनकी शक्ति का बहुत बडा भाग उस

१ एच० पी० स्टीनसबी ऐन एथ्रोपोलाजिकल स्टडी आव दि ओरिजिन आव दि एसकिमो कलचर, पृ० ४३।

यदि हम उन खानाबदोशो की सभ्यता की तुलना, जिन्होने खेती का धन्धा छोड दिया और स्टेप पर बस गये, उनके उन बन्धुओ की सभ्यता से करे जिन्होने अपना स्थान छोड दिया और खेती का काय करते रहे तो हम देखग कि खानाबदोशी में अनेक विशिष्टताएँ ह । पहली बात तो यह है कि पशु पालन पौधा के लगाने से ऊँची कला है क्याकि पशु पालन में मानव इच्छाशक्ति तथा बुद्धि की विजय कम मर्यादा वाले जीव पर होती है । किसान स गडेरिया बडा कलाकार है । इसकी सच्चाई सीरियाई पुराण की एक कथा में इस प्रकार है —

हौवा आदम की पत्नी थी, वह गभवती हुई और केन का जन्म हुआ उसका फिर एक भाई पदा हुआ एबेल । एबेल भडें पालता था और केन खेत जोतता था । कुछ दिना के बाद खेत से उत्पन्न हुए अनाज का वह ईश्वर को भेंट चढाने के लिए लाया । एबेल भी भडा के पहल उत्पन्न बच्चो को भेट चढाने के लिए लाया । ईश्वर न एबल की भट स्वाकार की केन की भेंट की ओर ध्यान नही दिया ।

खानाबदोश का जीवन मानव कौशल की सफलता है । जो कठोर घास वह स्वय नहा खा सकता उसे उसके पालतू पशु खाते ह और वह दूध और मास में परिवर्तित हो जाता है । और इस विचार से कि उसके पशुआ को अनुपजाऊ और कठोर स्टेप से सब ऋतुआ में चारा मिलता है उसे ऋतुओ के चक्र के अनुरूप अपने जीवन तथा गति को सावधानी स बनाना पडता है । वास्तविक यह है कि खानाबदोशी क लिए बहुत ऊँचे चरित्र और आचार की आवश्यकता है और जिस कठिनाई का सामना खानाबदोश को करना पडता है वह वसी है जसी एसकिमो की । जिस कठोर परिस्थिति पर उसन विजय प्राप्त की उसी न धोखे से उसे दास बना लिया । एसकिमा की भाँति खानाबदोश भी वार्षिक ऋतु तथा वानस्पतिक चक्र के दास हो गये ह । स्टेप म नेतृत्व ग्रहण किया उन्होने, किन्तु ससार में नतत्व ग्रहण करन योग्य नही रह गये । सभ्यता के इतिहास के पन्नो में उनका चिह्न अवश्य मिलता है । समय समय पर अपने क्षेत्र को छोडकर पडोस की शिथिल सभ्यताओ पर उनका धावा हुआ और कभी कभी क्षणिक सफलता भी उन्हें मिली किन्तु य धावे अपनी इच्छा से नहा हुए । जब खानाबदोश लोग स्टेप छाडकर किसाना की भूमि पर आये उन्होन जान-बूझकर अपन अभ्यास के ऋतु चक्र को नही छोडा । व मशीनवत् किसी एसी शक्ति से प्ररित होकर आय जिस पर उनका वश न था ।

ऐसी दो बाहरी शक्तियाँ ह जिनक वे दास ह—एक शक्ति जो उस दाबती है दूसरी जा उसे खीचती है । कभी कभी बहुत सूखा पडन से उस दबकर स्टप स बाहर निकलना पडता है जब उसके पुरान निवास में उसका रहना उसकी सहन शक्ति के बाहर हो जाता है और कभी-कभी उसे स्टप स बाहर इसलिए जाना पडता कि उसके निकट सामाजिक "शून्य" (वकुअम) म जो किसी एतिहासिक प्रक्रिया क कारण शिथिल समाज में बन जाता है वह खिंच जाता है । जब जब शिथिल सभ्यता के विघटन के कारण जनरला होता है । य कारण खानाबदोशो क अपन अनुभवो के बाहर की बातें ह । यदि यह सर्वेक्षण किया जाय कि कब-कब खानाबदोशो न शिथिल समाज के इतिहास में हस्तक्षेप किया है तो सभी हस्तक्षपो का कारण इन्ही में मिलगा ।[1]

१ टवायनबी ने इसी आधार पर विस्तत खोज की है और इस अध्याय के बाद एक लम्बी सूची दी है, जो यहाँ नहीं दी जा सकती ।—सम्पादक

यद्यपि ऐतिहासिक घटनाओ में खानाबदोशो ने हस्तक्षेप किया है फिर भी इनके समाज का कोई इतिहास नही है। एक बार जब वह अपने वार्षिक कक्ष में आ गया खानाबदोशो का गिरोह अनन्तकाल तक उसमें घूमता रह जाय, यदि कोई ऐसी बाहरी शक्ति उसपर अपना प्रभाव न डाल जिसके विरोध में खानाबदोशो का वश नही चलता, और जो इस गिरोह की गति को समाप्त करके उसके जीवन को समाप्त न कर दे। यह शक्ति उस निखिल सभ्यता का दबाव है जो खाना बदोशो के गिरोह को चारो ओर से घेरे है। क्या ईश्वर एबेल तथा उसकी भेंट का सम्मान कर और केन का न करे कोई शक्ति ऐसी नही है जो केन को एबेल की हत्या करने से रोक सके।

आधुनिक मौसम विज्ञान सम्बन्धी खोजो से पता चला है कि अपेक्षाकृत सूखे और नम ऋतुओ में विश्व भर में लय (रिद्म) के समान परिवर्तन होता रहता है। जिसके कारण किसान कभी एक क्षेत्र में, कभी दूसरे क्षेत्र में प्रवेश किया करते है। जब सूखा इस दर्जे पर पहुच जाता है कि खानाबदोशो के पास जितना ढोर है उसे उसके लिए चारा नही मिलता तो ये पशुपालक अपने वार्षिक अभ्यस्त पथ को छोडकर अपने निकट के उन देशो म घुस पडते हैं जहाँ उनके तथा उनके पशुओ के लिए पर्याप्त खाद्य सामग्री मिल जाती है। इसके विपरीत जब इतनी तरी हो जाती है जब स्टेप में बोये हुए धान्य और मूल (रूट) वाली खाद्य सामग्री उपजने लगती है तब किसान खानाबदोशो पर जवाबी हमला कर देते ह। उनके आक्रमण के ढग एक समान नही होते। खानाबदोशो का आक्रमण रिसाले (केवेल्री) की भाँति आकस्मिक आवेग से होता है। किसानो का आक्रमण पदल सेना की भाँति धीरे धीरे बढ़ता है। हरएक कदम पर यह फावडे से अथवा भाप वाले हल से खोदता जाता है और सडक तथा रेल का निर्माण करके अपने सचारण व्यवस्था को दृढ़ करता जाता है। खानाबदोशो के हमले का सबसे महत्त्वपूर्ण उदाहरण तुर्कों और मगोलो का आक्रमण है जो एक को छोड सबसे अन्तिम सूखा के युग म हुआ था। किसानो के आक्रमण का महत्त्वपूर्ण उदाहरण है जब रूस पूरब की ओर बढा। दोनो प्रकार के आक्रमण असाधारण ह और जिस पर आक्रमण होता है उसके लिए दुखदायी है। किन्तु एक बात में दोनो समान ह कि वे ऐसी भौगोलिक परिस्थिति के कारण होते है जिन पर नियन्त्रण नही हो सकता।

खानाबदोशो के बबर तथा आकस्मिक आक्रमण की अपेक्षा किसान का आक्रमण समय पाकर आक्रान्त देश को अधिक कष्टकर होता है। मगोलो के आक्रमण दो-तीन पीढियो में समाप्त हो गये किन्तु उनके बदले में रूसियो ने जो उपनिवेशन (कोलोनाइजेशन) आरम्भ किया वह चार सौ साल तक चलता रहा—पहले कजाक पक्ति के पीछे जो उत्तर के चराई के मैदान के चारो ओर थी, फिर ट्रासकसपियन रेल्वे के किनारे जिसकी शाखाएँ दक्षिणी सीमा पर चारो ओर फली हुई ह। खानाबदोश की दृष्टि म रूस के समान किसानो की शक्ति उस दबाने वाले बेलन की मशीन की भाति है जिसके द्वारा पश्चिमी उद्योगवाद अपनी रुचि के अनुसार गम स्टील को ढालता है। उस दबाव में खानाबदोश या तो दबकर नष्ट हो जाता है या उस ढाँचे म निर्जीव वस्तु ढलकर निकलता है। प्रवेश की विधि भी सदा शान्तिपूर्ण नही होती। ट्रासकसपियन रेल्वे की सडक गोकटेप के तुर्कमेनो की हत्या करके बनी थी। परन्तु खानाबदोशो की मृत्यु की चीख शायद ही कभी सुनी जाती हो। यूरोपीय युद्ध में जब इग्लैड इस खोज में सलग्न था कि उसमानिया तुर्की के खानाबदोशो के पूवज कौन थे जिससे पता चले कि छ लाख आरमीनियाइयो के हत्यारे कौन थे किरगिज-कजाक सघ के तुर्की बोलने वाले पाँच लाख मध्य एशिया के खानाबदोशो

यदि हम उन खानाबदोशों की समता की तुलना, जिन्होंने पशुओं का धंधा छोड़ दिया और स्टेप पर बस गये उनसे उन पशुओं की समता से करें जिन्होंने अपना स्थान छोड़ दिया और यात्रा का काम करते रहे तो हम देखेंगे कि खानाबदोशों में अधिक विशिष्टताएँ हैं। पहली बात तो यह है कि पशु पालना पौधों के उगाने से ऊँची कला है क्योंकि पशु पालने में मानव इच्छाशक्ति तथा बुद्धि की विजय अधिक सफलता और ऊँचे स्तर पर होती है। किसान से गड़रिया बड़ा कलाकार है। इसकी सच्चाई सीरियाई पुराण की एक कथा में इस प्रकार है —

हौवा आदम की पत्नी थी। वह गर्भवती हुई और केन का जन्म हुआ। उसके फिर एक भाई पैदा हुआ एबेल। एबेल भेड़ पालता था और केन खेत जोतता था। कुछ दिनों के बाद खेत से उत्पन्न हुए अनाज को वह ईश्वर को भेंट चढ़ाने के लिए लाया। एबेल भी भेड़ के पहले उत्पन्न बच्चों की भेंट चढ़ाने के लिए लाया। ईश्वर ने एबेल की भेंट स्वीकार की। केन की भेंट की ओर ध्यान नहीं दिया।

खानाबदोशों का जीवन मानव कौशल की सफलता है। जो कठोर घास वह स्वयं नहीं खा सकता उसे उन पालतू पशुओं द्वारा खिलाता है और वह दूध और मांस में परिवर्तित हो जाता है। और इस विचार से कि उनके पशुओं को अनुपजाऊ और कठोर स्टेप से सब ऋतुओं में चारा मिलता है उसे ऋतुओं के चक्र के अनुरूप अपना जीवन तथा गति को सावधानी से बनाना पड़ता है। वास्तविक यह है कि खानाबदोशों के लिए बहुत ऊँचे चरित्र और आचार की आवश्यकता है और जिस कठिनाई का सामना खानाबदोशों को करना पड़ता है वह वैसी है जैसी एसकिमो की। जिस कठोर परिस्थिति पर उसने विजय प्राप्त की उसी ने धीरे से उसे दास बना लिया। एसकिमो की भाँति खानाबदोश भी वार्षिक ऋतु तथा वानस्पतिक चक्र के दास हो गये हैं। स्टेप में नेतृत्व ग्रहण किया उन्होंने, किन्तु संसार में नेतृत्व ग्रहण करने योग्य नहीं रह गये। सभ्यता के इतिहास के पन्नों में उनका चिह्न अवश्य मिलता है। समय-समय पर अपने क्षेत्र को छोड़कर पड़ोस की शिथिल सभ्यताओं पर उनका धावा हुआ और कभी-कभी क्षणिक सफलता भी उन्हें मिली किन्तु ये धावे अपनी इच्छा से नहीं हुए। जब खानाबदोश लोग स्टेप छोड़कर किसानों की भूमि पर आये, उन्होंने जान-बूझकर अपने अभ्यास के ऋतु चक्र को नहीं छोड़ा। वे महानवर्गी किसी ऐसी शक्ति से प्रेरित होकर आये जिस पर उनका वश न था।

ऐसी दो बाहरी शक्तियाँ हैं जिनके वे दास हैं—एक शक्ति जो उसे दाबती है, दूसरी जो उसे खींचती है। कभी कभी बहुत सूखा पड़ने से उसे दबकर स्टेप से बाहर निकलना पड़ता है जब उसके पुराने निवास में उसका रहना उसकी सहन शक्ति के बाहर हो जाता है, और कभी-कभी उसे स्टेप से बाहर इसलिए जाना पड़ता है कि उसके निकट सामाजिक शून्य (वकुअम) में जो किसी ऐतिहासिक प्रक्रिया के कारण शिथिल समाज में बन जाता है वह खिंच जाता है। जैसे जब शिथिल सभ्यता के विघटन के कारण जनरेला होता है। ये कारण खानाबदोशों के अपने अनुभवों के बाहर की बात हैं। यदि यह सर्वेक्षण किया जाय कि कब-कब खानाबदोशों ने शिथिल समाज के इतिहास में हस्तक्षेप किया है तो सभी हस्तक्षेपों का कारण इन्हीं में मिलेगा।[1]

१ टवायनबी ने इसी आधार पर विस्तृत खोज की है और इस अध्याय के बाद एक लम्बी सूची दी है, जो यहाँ नहीं दी जा सकती।—सम्पादक

यद्यपि ऐतिहासिक घटनाओं में खानाबदोशों ने हस्तक्षेप किया है फिर भी इनके समाज का कोई इतिहास नही है। एक बार जब वह अपने वार्षिक कक्ष में आ गया खानाबदोशों का गिरोह अनन्तकाल तक उसमें घूमता रह जाय, यदि कोई ऐसी बाहरी शक्ति उसपर अपना प्रभाव न डाले जिसके विरोध में खानाबदोशों का वश नही चलता, और जो इस गिरोह की गति को समाप्त करके उसके जीवन को समाप्त न कर दे। यह शक्ति उस शिथिल सभ्यता का दबाव है जो खानाबदोशों के गिरोह को चारो ओर से घेरे है। क्या ईश्वर एबेल तथा उसकी भेंट का सम्मान करे और केन का न करे कोई शक्ति ऐसी नही है जो केन को एबेल की हत्या करने से रोक सके।

आधुनिक मौसम विज्ञान सम्बन्धी खोजो से पता चला है कि अपेक्षाकृत सूखे और नम ऋतुओं में विश्व भर में लय (रिद्म) के समान परिवर्तन होता रहता है। जिसके कारण किसान कभी एक क्षेत्र में, कभी दूसरे क्षेत्र में प्रवेश किया करते है। जब सूखा इस दर्जे पर पहुँच जाता है कि खानाबदोशों के पास जितना ढोर है उसे उसके लिए चारा नही मिलता तो ये पशुपालक अपने वार्षिक अभ्यस्त पथ को छोड़कर अपने निकट के उन देशों में घुस पड़ते है जहा उनके तथा उनके पशुओं के लिए पर्याप्त खाद्य सामग्री मिल जाती है। इसके विपरीत जब इतनी तरी हो जाती है कि स्टेप में बोये हुए धान्य और मूल (रूट) वाली खाद्य सामग्री उपजने लगती है तब किसान खानाबदोशों पर जवाबी हमला कर देते है। उनके आक्रमण के ढंग एक समान नही होते। खानाबदोशों का आक्रमण रिसाले (कवलरी) की भाति आकस्मिक आवेग से होता है। किसानों का आक्रमण पैदल सेना की भाँति धीरे धीरे बढ़ता है। हरएक कदम पर यह फावड़े से अथवा [illegible] हल से खोदता जाता है और [illegible] का निर्माण करके अपने संचारण व्यवस्था को दृढ़ करता जाता है। खानाबदोशों के हमले का सबसे महत्वपूर्ण उदाहरण तुर्कों और मंगोलों का आक्रमण है जो एक को छोड़ सबसे अन्तिम [illegible] युग में हुआ था। किसानों के आक्रमण का महत्वपूर्ण उदाहरण है जब रूस पूरब की ओर बढ़ा। दोनो प्रकार के आक्रमण असाधारण है और जिस पर आक्रमण होता है उसके लिए दुखदायी है। किन्तु एक बात में दोनो समान है कि वे ऐसी भौगोलिक परिस्थिति के कारण होते है जिन पर नियन्त्रण नही हो सकता।

खानाबदोशों के बर्बर तथा आकस्मिक आक्रमण का [illegible] किसान का आक्रमण समय पाकर आक्रान्त देश को अधिक कष्टकर होता है। मंगोलों के आक्रमण [illegible] पीढ़ियों में समाप्त हो गये किन्तु उनके बदले में रूसियों ने जो उपनिवेशन (कोलोनाइजेशन) आरम्भ किया वह चार सौ साल तक चलता रहा—पहले कज़ाक [illegible] के पार [illegible] चारो ओर थी, फिर ट्रांसकस्पियन रेलवे के किनारे [illegible] के मैदान के [illegible] हुई है। खानाबदोशों की दृष्टि में रूस के समान [illegible] की [illegible] सीमा पर चारो ओर को मशीन की भाँति है जिसके द्वारा पश्चिमी उद्योगवाद [illegible] दबाने वाले बेलन डालता है। उस दबाव में खानाबदोश या तो दबकर नष्ट हो जाता [illegible] गर्म स्टील का वस्तु बनकर निकलता है। प्रवेश की विधि को [illegible] में निर्जीव [illegible] की सड़क गोरटेप के तुर्कमेनों की हत्या करके बनी थी। [illegible] ट्रांसकस्पियन [illegible] शायद ही कभी सुनी जाती हो। यूरोपीय युद्ध में जब [illegible] की मृत्यु की [illegible] तुर्कों के खानाबदोशों के पूर्वज कौन थे जिसने [illegible] था कि [illegible] के हत्यारे कौन थे किरगिज़-कज़ाक [illegible] तुर्की बोलने वाले [illegible] [illegible]आनियाइया [illegible] खानाबदोशों

यद्यपि एतिहासिक घटनाओ में खानाबदोशा ने हस्तक्षेप किया है, फिर भी इनके समाज का कोई इतिहास नहा है । एक बार जब वह अपने वार्षिक वक्ष में आ गया खानाबदोशो का गिरोह अनन्तकाल तक उसमें घूमता रह जाय, यदि कोई ऐसी बाहरी शक्ति उसपर अपना प्रभाव न डाले जिसके विरोध में खानाबदोशा का वश नही चलता, और जो इस गिरोह की गति को समाप्त करके उसके जीवन को समाप्त न कर दे । यह शक्ति उस शिथिल सभ्यता का दबाव है जो खानाबदोशा के गिरोह का चारा ओर से घेरे है । क्या ईश्वर एबेल तथा उसकी भेट का सम्मान करे और केन का न कर कोई शक्ति ऐसी नही है जो केन को एबेल की हत्या करने मे रोक सके ।

आधुनिक मौसम विज्ञान सम्बन्धी खोजा से पता चला है कि अपेक्षाकृत सूखे और नम ऋतुआ म विश्व भर में लय (रिद्म) के समान परिवर्तन होता रहता है । जिसके कारण किसान कभी एक क्षेत्र में, कभी दूसरे क्षेत्र म प्रवेश किया करते है । जब सूखा इस दर्जे पर पहुँच जाता है कि खानाबदोशा के पास जितना ढोर है उसे उसके लिए चारा नही मिलता तो ये पशुपालक अपने वार्षिक अभ्यस्त पथ को छोडकर अपने निकट के उन देशो म घुस पडते ह जहा उनके तथा उनके पशुआ के लिए पर्याप्त खाद्य सामग्री मिल जाती है । इसके विपरीत जब इतनी तरी हो जाती है जब स्टप में बोये हुए धान्य और मूल (रूट) वाली खाद्य सामग्री उपजने लगती है तब किसान खानाबदोशा पर जवाबी हमला कर देत है । उनके आक्रमण के ढग एक समान नही होते । खानाबदोशा का आक्रमण रिसाले (कैवल्री) की भाँति आकस्मिक आवेग से होता है । किसाना का आक्रमण पदल सेना की भाति धीरे धीरे बढता है । हरएक कदम पर यह फावडे से अथवा भाप वाले हल स खोदता जाता है और सडक तथा रेल का निर्माण करके अपने सचारण व्यवस्था को दृढ करता जाता है । खानाबदोशा के हमले का सबसे महत्त्वपूर्ण उदाहरण तुर्को और मगोला का आक्रमण है जो एक का छोड सबसे अतिम सूखा के युग म हुआ था । किसानो के आक्रमण का महत्त्वपूर्ण उदाहरण है जब रूस पूर्व की ओर बढा । दोनो प्रकार के आक्रमण असाधारण ह और जिस पर आक्रमण होता है उसके लिए दुखदायी है । किन्तु एक बात में दोना समान ह कि वे ऐसी भौगोलिक परिस्थिति के कारण होते ह जिन पर नियन्त्रण नहा हो सकता ।

खानाबदोशो के बर्बर तथा आकस्मिक आक्रमण की अपेक्षा किसान का आक्रमण समय पाकर आक्रान्त देश को अधिक कष्टकर होता है । मगोलो के आक्रमण दो-तीन पीढियो में समाप्त हो गये किंतु उनके बदले में रूसियों ने जो उपनिवेशन (कोलोनाइजेशन) आरम्भ किया वह चार सौ साल तक चलता रहा—पहले कजाक पक्ति के पीछे जो उत्तर के चराई के मैदान के चारा ओर थी, फिर ट्रासकैसपियन रेलवे के किनारे जिसकी शाखाएँ दक्षिणी सीमा पर चारा ओर फैली हुई है । खानाबदोशा की दृष्टि में रूस के समान किसाना की शक्ति उस दबाने वाले बेलन की मशीन की भाति है जिसके द्वारा पश्चिमी उद्योगवाद अपनी रुचि के अनुसार गर्म स्टील को ढालता है । उस दबाव में खानाबदोश या तो दबकर नष्ट हो जाता है या उस ढाँचे में निर्जीव वस्तु ढलकर निकलता है । प्रवेश की विधि भी सदा शान्तिपूर्ण नहा होती । ट्रासकैसपियन रेलवे की सडक गाकटेप के तुर्कमेना की हत्या करके बनी थी । परन्तु खानाबदोशा की मृत्यु की चीख शायद ही कभी सुनी जाती हो । यूरोपीय युद्ध में जब इग्लैड इस खोज म सलग्न था कि उसमानिया तुर्कों के खानाबदोशो के पूर्वज कौन थे जिससे पता चले कि छ लाख आरमानियाइयो के हत्यारे कौन थ, किरगिज-कजाक सघ के तुर्की बोलने वाले पाँच लाख मध्य एशिया के खानाबदोशा

का विनाश किया जा रहा था, और यह भी ऊपर की रूसी मुजाहक की आज्ञा से जो 'सबसे न्याय प्रिय मानव' कहा जाता था।[1]

यूरेशिया में खानाबदोशों का विनाश सत्रहवीं शती में उसी समय से निश्चित था जब दो स्थावर (सिडेंटरी) साम्राज्य मसकोवी और मंचू ने अपनी-अपनी बाँहें यूरेशियाई स्टेप की दो विपरीत दिशाओं से फैलायीं। आज जब हमारी पश्चिमी सभ्यता ने अपनी बाँहें विश्व के चारों ओर फैला रखी हैं, उन खानाबदोशों को उनके अपने प्राचीन निवासों से निकालने का काम पूरा कर रही है। केनया में मसाई चरागाहों को साफ करके यूरोपीय किसानों के लिए स्थान बनाया गया है। सहारा में इमोशाग जो अपने रेगिस्तानी भूमि को अगम्य समझते थे, आज देखते हैं कि हवाई जहाज और आठ पहिए वाली लारियाँ उनमें घुस रही हैं। अरब में भी, जो अफ्रेसियाई खानाबदोशों का पुराना निवास स्थान था आज बद्दुओं को फलाहीन (किसान) बनाया जा रहा है। और यह भी किसी विदेशी द्वारा नहीं बल्कि अरबों के अरब नज्द और हजाज के बादशाह मुसलमान विशुद्धवादी (प्युरिटन) वहाबियों के सरदार अब्दुल अजीज अल साऊद की निश्चित नीति के अनुसार। जब वहाबी अधिपति अरब के केन्द्र में ही अपनी शक्ति को बख्तरबन्द गाड़ियों (आरमर्ड कार) की सहायता से दृढ़ कर रहे हैं और अपनी आर्थिक समस्याओं को पेट्रोल पम्पों, पताल तोड़ कूओं से तथा अमरीकी तेल की कम्पनियों को सुविधा प्रदान करके सुलझा रहे हैं तब यह स्पष्ट है कि खानाबदोशी का अंतिम समय आ गया।

इस प्रकार एबेल को केन ने मार डाला और हम यह देखने की चेष्टा करेंगे कि केन का अभिशाप हत्यारे पर पड़ा। समुचित रूप से पड़ रहा है। 'अब मुझे पृथ्वी का अभिशाप मिला है जिसने तेरे हाथों से तेरे भाई का रक्तपान करने के लिए अपना मुँह खोला है। जब तू खेत को जोतेगा, आज से तुझे उसकी शक्ति नहीं प्राप्त होगी, पृथ्वी पर तू आवारा घूमा करेगा।'[2]

केन के शाप का पहला भाग तो बिना प्रभाव के रहा। क्योंकि यद्यपि नखलिस्तान में खेती करने वाला सूखी स्टेप से उपज नहीं प्राप्त कर सका, वह ऐसे प्रदेशों में चला गया जहाँ का जलवायु अनुकूल था। वहाँ से उद्योग की प्ररणात्मक शक्ति लेकर वह लौटा और अपनी तथा एबेल के चरागाह का दावेदार हुआ। अभी देखना है कि केन इस उद्योगीकरण का जिसको उसने निर्माण किया है मालिक होगा कि दास। सन् १९३३ में जब विश्व की नयी आर्थिक व्यवस्था के ह्रास होने और नष्ट हो जाने की आशंका थी यह असम्भव नहीं था कि एबेल की हत्या का बदला पूरा हो जाता और जो खानाबदोश मृतप्राय था वह जीवित रहता और देखता कि हमारा हत्यारा विक्षुब्ध होकर शिआल के पास जाता।[3]

(२) उसमानली वंश

इतना उन सभ्यताओं के सम्बन्ध में कहा गया है जिनकी सभ्यता भौतिक चुनौती के प्रति

१ ए० जे० टवायनबी : द वेस्टर्न क्वेस्चन इन ग्रीस एण्ड टर्की, पृ० ३३९-४२।

२ जनेसिस ४, ११-१२।

३ यदि टवायनबी सन १९४५ में लिखते होते, जब कि यह सम्पादक लिख रहा तो इस विवरण में केवल सन् के ही परिवर्तन की आवश्यकता पड़ती।—सम्पादक

असाधारण शक्ति का प्रयोग करने के फलस्वरूप अविकसित रह गयी। अब हम उन पर विचार करेंगे जिन्हें भौतिक नही, मानवी चुनौती का सामना करना पडा।

जिस महान् चुनौती का परिणाम उसमानिया प्रणाली से उत्पन्न हुई, वह थी खानाबदोशा का अपने स्टेप के निवास स्थान से नये स्थान पर जाना। उनके सामने ही यह समस्या भी थी कि नये मानव समाज पर शासन करना। हमने पहले देखा है कि किस प्रकार आवार खानाबदोश जब अपने स्टेप के चरागाह से निर्वासित हुए और साधनहीन प्रदेश म फँस गये। तब उन्होंने जिन आलमी लोगा पर विजय पायी थी उनके साथ ऐसा व्यवहार करने की चेष्टा की जसा या ता वे मनुष्या के ढोर थे या भेडा क गडेरिये के बजाय उन्होंने अपने को मनुष्यो का गडेरिया बनाने का प्रयत्न किया। पशुआ का पाल कर उनके माध्यम से स्टेप की घास को अपन भाजन में परिवतन करन के स्थान पर आवारा ने (दूसरे खानाबदोशा ने भी ऐसा ही किया है।) उपजाऊ धरती से भोजन उत्पन्न किया। स्टेप पर वे पशुआ के मास को खाते थ जा घास पचकर बनता था अब वह पाचन के माध्यम स नही विजित मनुष्यो से परिश्रम कराकर उनक उपजाय अन्न का खाते थे। यह तुलना किसी सीमा तक ही ठीक बठती है, परीक्षा करने पर इसमें एक बडा दोष मिलता है।

स्टेप पर खानाबदाशा तथा पशुआ का जो समाज है वह वसी भौतिक परिस्थिति म रहने क बहुत हा उपयुक्त है। और खानाबदोश वास्तव में अपन अमानव साथियो अर्थात पशुआ के प्रति परजोवी (परेसाइट) नही ह। वहा एक दूसरे से लाभ उठाते ह। पशु दूध ही नहा अपने मास स खानाबदोशा की सहायता करत ह, खानाबदोश भी अपने पशुआ के चारे का प्रबन्ध करते रहत ह। एक दूसरे की सहायता बिना दा में स एक भी अधिक दिना तक जीवित नहा रह सकता था। किन्तु खता तथा नगरा के वातावरण मे स्टेप स निर्वासित खानाबदोशा और स्थानीय मानव ढोरो का समाज आर्थिक दृष्टि से अनुपयुक्त है। क्योकि इन मानवो के गडरिये आर्थिक दृष्टि से भले ही नही, राजनीतिक दृष्टि से बकार है इसलिए परजीवी ह। आर्थिक दृष्टि स ये गडरिये नहा रह जाते जो अपने ढार की देख रख कर। ये नर-मधुमक्खी (ड्रोन) की भाति अकर्मण्य हो जाते ह और परिश्रमी मक्खिया का शाषण करते ह। य अन्न-उत्पादक शासक वग बन जात ह जो उत्पादक जनता के परिश्रम पर जीते है। और यदि वे न होते जो जनता की आर्थिक स्थिति अच्छी होती।

इस कारण खानाबदोश विजेताआ ने जितने साम्राज्य स्थापित किये वे सब जल्दी ही नष्ट होने लगे और उनकी असामयिक मृत्यु हो गयी। महान् मगरिबी इतिहासकार इब्नखल्दून (१३३२-१४०६ ई०) खानाबदाशी साम्राज्या को ध्यान में रखे हुए था जब उसने हिसाब लगाया कि साम्राज्या की आयु तीन पीढी अर्थात् एक सौ बीस वर्ष से अधिक नही होनी। एक बार जब विजय प्राप्त कर ली तब खानाबदोश विजेता का क्षय होने लगता है। वह अपन तत्त्व से बाहर हो जाता है और आर्थिक दृष्टि से बेकार हो जाता है। इसके विपरीत उसके मानवी ढोर शक्ति अर्जित करते हैं क्याकि वे अपनी ही धरती पर रहत ह और आर्थिक दृष्टि से उत्पादक बने रहते ह। ये मानवी पशु अपने गडेरिया अधिकारिया का निष्कासित करके

अथवा उन्हें अपने में मिलाकर अपने मनुष्यत्व को स्थापित करते हैं। स्लावों पर आवारों का राज्य पचास वर्षों से कम रहा और इसने प्रमाणित कर दिया कि स्लावों का निर्माण हुआ और आवारों का विनाश। पश्चिमी हूणों का साम्राज्य केवल एक व्यक्ति अटिला के जीवन काल तक रहा। ईरान तथा इराक में मंगोल के खानों का साम्राज्य अस्सी साल से कम रहा और दक्षिणी चीन में भी खानों का साम्राज्य इससे अधिक नहीं रहा। मिस्र में हाइक्सो (गडरिया राजे) का साम्राज्य कठिनाई से सौ साल रहा होगा। ये अपवाद अवश्य थे कि उत्तरी चीन पर मंगोल तथा उनके पूर्वज किन दो सौ साल (११४२–१३६८ ई०) से अधिक शासन करते रहे और ईरान तथा इराक पर पार्थियन साढ़े तीन सौ साल से अधिक (१४० बी०सी०—२२६।२३२ ई०) तक राज्य करते रहे।

इस तुलना के मानक (स्टैंडर्ड) से परम्परावादी ईसाई जगत् पर उसमानिया साम्राज्य अद्वितीय था। यदि हम इस साम्राज्य की स्थापना सन् १३७२ ई० में मसेडोनिया की पराजय से मानें और उसके विनाश का आरम्भ सन १७७४ ई० में कुचुक—किनार्जी की रूसी-तुर्की संधि से मानें और उसके उत्कर्ष और अपकर्ष के समय को छोड़ दें तो लगभग चार सौ साल होते हैं इसके इतने दिन तक रहने का क्या कारण है। इसका कुछ कारण तो यह है कि उसमानली वंश यद्यपि आर्थिक दृष्टि से अनुपयुक्त था, उसने एक राजनीतिक उद्देश्य की पूर्ति की कि परम्परावादी ईसाई जगत् को सार्वभौम राज्य में परिवर्तित किया, जो यह स्वयं बनने में असमर्थ था। किन्तु दूसरे कारण मिल सकते हैं।

हमने देखा है कि आवार तथा उनके समान और खानाबदोश जातियाँ जब रेगिस्तान से उपजाऊ जमीन पर आती हैं तब वे मनुष्यों के गडरिया बनने की चेष्टा करती हैं किन्तु असफल रहती हैं। उनकी असफलता से हमें आश्चर्य नहीं होता क्योंकि ये असफल खानाबदोश जिन्होंने उपजाऊ धरती पर अपना साम्राज्य स्थापित किया मानवों के रूप में कोई ऐसा साथी बनाने की चेष्टा नहीं की जैसा साथी उन्हें स्टेप में मिला था। स्टेप में केवल मनुष्य गडरिये और उनका ढोर ही नहीं रहता। उन पशुओं के अतिरिक्त जिन पर वह अपना जीवनयापन करता है और पशु भी वह रखता है जैसे कुत्ता, ऊँट और घोड़ा जो उसे उसके काम में सहायता देते हैं। ये सहायक पशु खानाबदोशी सभ्यता की मुख्य शक्ति हैं और उनकी सफलता की कुंजी। भेड़ और गाय को मनुष्य के लाभ हेतु बनाने के लिए पालना पड़ता है यद्यपि इसमें कठिनाई होता है। कुत्ते, ऊँट और घोड़े को काम के लायक बनाने के लिए उन्हें पालना ही नहीं पड़ता प्रशिक्षित करना पड़ता है। मनुष्य के अतिरिक्त दूसरे जीवधारियों को प्रशिक्षित करना खानाबदोशों की बहुत बड़ी सफलता है। इसी खानाबदोशी कला को स्थावर परिस्थितियों के अनुरूप बनाने में उसमानिया साम्राज्य और आवार साम्राज्य में अंतर है। और इसी के कारण उसमानिया साम्राज्य अधिक टिका। उसमानिया बादशाहों ने दासों को मानवी सहायकों के रूप में प्रशिक्षित किया जिससे अपने साम्राज्य की रक्षा की और उन्हीं की सहायता से मानव पशुओं में सुव्यवस्था रखी।

दासों में सैनिक और शासक बनाने की अद्भुत प्रथा जो खानाबदोशों की प्रतिभा के अनुकूल है और इन लोगों के प्रतिकूल उसमानिया की खोज नहीं थी। यह बात हम दूसरे खानाबदोशों

साम्राज्या में भी पाते ह जो उन्हाने स्थावर जातिया पर स्थापित किया था । और यह प्रथा उन्ही में पायी जाती है जो अधिक दिना तक टिके ।

पार्थियन साम्राज्य में भी दास सैनिको का आभास मिलता है क्योंकि एक सेना ने जिसने माक एन्तनी की सिकन्दर महान् के नकल करने की महत्त्वाकांक्षा का पूरा होने नही दिया उसमें ५०,००० कुशल सनिका में ४०० स्वतन्त्र नागरिक थे । इसी प्रकार और इसी ढग पर अब्बासी खलीफो ने स्टेप से तुर्की दासा को खरीद कर और उन्हें अच्छे सैनिका तथा शासका में प्रशिक्षित कर अपने अधिकार को सुरक्षित रखा । कारडोवा के उम्मयी खलीफा ने अपने पडोसी फ्राका से दासा का लाकर शरीर रक्षक नियुक्त किया । फ्राक लाग अपने सामने के फ्राकी राज्या स लोगा का पकड कर लाते थे और कारडोवा के दासा को बाजार में बेचा करते थे । जो ववर इस प्रकार पकड कर लाये जाते थे व स्लाव होते थे, इसी से अंग्रेजी भाषा में 'स्लेव (दास) की उत्पत्ति हुई ।

इसी प्रकार का एक और विख्यात उदाहरण मिस्र में ममलूका का शासन है, अरबी मे ममलूक का अथ है 'अधिकृत', जिसपर अधिकार हो । ममलूक पहले पहल उस वश के दास थे जिस अयूबी सलादीन ने चलाया था । सन् १२५० ई० मे ये दास अपने मालिको स स्वतन्त्र हो गय और अयूबी दास प्रथा को स्वय व्यवहार में लाने लगे । ये भी बाहर स दास खरीदा करत थे । कठपुतली खलीफा के पीछे यही दासा का घराना मिस्र और सीरिया पर शासन करता रहा आर सन् १२५० से १५१७ तक पराक्रमी मगोला को फरात की रेखा तक रोके रखा, जब उन्ह उनस भी बली उसमानिया के दास परिवार ने पराजित किया । परन्तु इस समय भी उनका अन्त नही हुआ क्योंकि मिस्र में उसमानिया शासन क समय भी उन्हें इसी प्रकार दासा क खरीदने और उन्हें प्रशिक्षित करने की छूट थी । जब उसमानिया शक्ति का ह्रास होने लगा, ममलूका ने अपने को फिर शक्तिशाली बना लिया और अठारहवी शती में मिस्र के उसमानिया पाशा ममलूका के उसी प्रकार राजबन्दी हो गये जसे तुर्की विजय के पहले करीब अब्बासी खलीफे थे । इसी की अठारहवी और उन्नीसवी शती में यह प्रश्न विचारणीय हो गया कि मिस्र का उसमानिया वराज ममलूका के हाथ में जायगा कि किसी यूरोपीय शक्ति के—नपोलियन वाले फ्रास के अथवा इग्लड के । अलबानिया के एक मुसलिम मुहम्मद अली ने अपनी प्रतिभा के बल पर दोना सम्भावनाओ को समाप्त कर दिया । किन्तु उसे ममलूका के नियन्त्रण करने में उससे अधिक कठिनाई हुई जितनी अंग्रेजो अथवा फ्रासीसियो को दूर रखने में हुई । उसने अपनी योग्यता और नृशसता से और यूरेशियाई तथा कावेशियाई जनबल को लेकर इन दासा की सेना का नष्ट किया जिन्होंने पाँच सौ साल से अधिक तक मिस्र की विदेशी भूमि पर अपने को जीवित रखा ।

अनुशासन में तथा सगठन म ममलूक दास घराने स कही अधिक श्रेष्ठ वह बाद का दास घराना था जिसे उसमानिया वश ने परम्परावादी ईसाई जगत पर शासन करने के लिए स्थापित किया था । खानाबदोशी विजेता के लिए यह बहुत कठिन काय था कि किसी विदेशी सभ्यता के सारे समाज पर शासन स्थापित कर । किन्तु इस साहसी काय के कारण उसमान और उनक वश में सुलेमान महान् तक (१२५०–६६ ई०) इन खानाबदोश शासका का अपने सामाजिक गुणो को पूर्ण रूप से व्यवहार में लाना पडा ।

एक अमरीकी विद्वान् ने उसमानिया दास घराना की इन विशेषताओं के अध्ययन को इन शब्दों में व्यक्त किया है।[1]

उसमानिया राज्य व्यवस्था में ये तो सम्मिलित थे। सुल्तान और उनका परिवार उनके घर के कर्मचारी, शासन से कार्यकारी (एकजिक्यूटिव) अफसर पदल तथा रिसाला सेना, अनेक युवक जिन्हें सेना में कार्य करने के लिए शिक्षा दी जाती थी, दरबार और शासन। ये लोग तलवार, लेखनी और दण्ड के आधार पर शासन करते थे। न्याय को छोडकर जो शरीयत के नियमों द्वारा होता था और थोड़े उन कार्यों को छोडकर जो विदेशी गैर मुसलिम प्रजा के हाथों में था शासन का सारा कार्य ये चलाते थे। गैर मुसलिम शासन व्यवस्था की विशेषता यह थी कि इसमें कुछ अपवादों को छोडकर वही लोग थे जो ईसाइयों के वंशज थे दूसरी बात यह थी कि इस संस्था का प्रत्येक सदस्य सुल्तान का दास होकर आता था और चाहे वह धन, प्रतिष्ठा और शक्ति में कितना भी महान् हो जाय जीवन भर वह सुलतान का दास ही रहता था। 'राज परिवार भी दास परिवार में ही था (क्योंकि) सुलतान की सन्तानों की माता दासी होती थी—सुल्तान स्वयं दास का पुत्र होता था। सुलेमान के समय से, बहुत पहले से, सुलतानों ने राजघराना में विवाह करना बन्द कर दिया था अपनी सन्तानों की माता को पत्नी का नाम नहीं दिया करते थे। उसमानिया व्यवस्था में जान-बूझकर दासों को राज का मन्त्री बनाया जाता था। चरवाहों और हलवाहों को वे लाते थे और उन्हें दरबारी बनाते थे और अपनी राजकुमारियों का पति। वे ऐसे युवकों को लाते थे जिनके पितामह सैकड़ो वर्षों से ईसाई थे और बड़े बड़े इस्लामी प्रान्तों का उन्हें शासक बनाते थे और अजय सेना में उन्हें सैनिक तथा सेनापति बनाते थे जो ईसाइयों को हराकर इस्लाम का झण्डा ऊँचा करने में अपना गौरव समझते थे। उन मौलिक आधारों की जिन्हें हम मानवी प्रकृति कहते हैं बिल्कुल परवाह न करके, तथा उन धार्मिक तथा सामाजिक आग्रहों की भी (प्रिजुडिसज) जिनकी गहराई उतनी होती है जितनी जीवन की, उपेक्षा करके उसमानिया व्यवस्था में बच्चों को माता पिता से सदा के लिए अलग कर दिया जाता था। उन्हें जीवन के क्रियाशील काल में परिवार की चिन्ता से निवृत्त कर दिया जाता था। वे अपने पास किसी प्रकार की सम्पत्ति नहीं रख सकते थे। यह भी उन्हें वचन नहीं दिया जाता था कि उनकी सन्तानों को इन दासों की सफलता तथा त्याग का फल मिलेगा। इस बात की परवाह न करके कि इनके पूर्वज कितने बड़े थे अथवा इनमें क्या पहले की विशेषता है ये उन्नत या अवनत कर दिये जाते थे। उनको विचित्र विधियाँ नीतियाँ तथा धर्म की शिक्षा दी जाती थी। और इस बात का उन्हें सदा ध्यान दिलाया जाता था कि उनके सिर पर तलवार लटक रही है जो किसी समय किसी अद्वितीय व्यक्ति अथवा विशिष्ट जीवन को भी समाप्त कर सकती है।

शासन में से स्वतन्त्र उसमानिया रईसों को अलग रखना इस तन्त्र की विचित्र व्यवस्था थी किन्तु परिणाम से इसका औचित्य सिद्ध हुआ। क्योंकि जब सुलेमान के राज्य के अंतिम दिनों

१ ए० एच० लाइबायर द गवर्नमेन्ट आव दि आटोमन एम्पायर इन द टाइम आव सुलेमान द मैग्निफिसेंट,—पृ० ३६, ४५–४६, ५७–५८।

में स्वतन्त्र मुसलिम लोग शासन में जबरदस्ती घुसे, राज व्यवस्था तहस नहस होने लगी और उसमानिया साम्राज्य का विनाश आरम्भ हो गया।

जब तक पहले वाली व्यवस्था अक्षुण्ण थी और मुसलिम स्रोतो से रँगरूट आते रहे। विदेशो से युद्ध में बन्दी बनाकर, या दासो को बाजार से खरीदकर अथवा अपनी इच्छा से दासो की भर्ती होती रही। कभी-कभी अपने राज्य में ही जबरदस्ती भर्ती की जाती थी। रँगरूटो को बहुत विस्तार से शिक्षा दी जाती थी और प्रत्येक स्तर पर विशेषज्ञता का प्रशिक्षण होता था। अनुशासन कठोर होता और दण्ड भी क्रूर। किन्तु सदा प्रोत्साहित किया जाता था कि वे अपनी महत्त्वाकाक्षा को पूरा कर सकते ह और ऐसा कर। हर एक युवक जो उसमानिया बादशाह के दास परिवार में सम्मिलित होता था जानता था कि मै किसी समय प्रधान मन्त्री हो सकता हूँ और मेरा भविष्य मेरी शक्ति और योग्यता पर निभर है।

इस शिक्षा प्रणाली का विस्तृत तथा सजीव वणन बेलजियम के विद्वान् तथा राजनीतिज्ञ ओजियर गिसेल्नि डिबल्सबेने किया है। यह सुलेमान महान् के दरबार में राजदूत थे। इनका वणन उसमानलिया की जितनी प्रशसा करता है उतना ही पश्चिमी ईसाई जगत् की निन्दा।

वह लिखते ह—म तुर्कों की इस प्रथा से ईर्ष्या करता हूँ। तुर्कों का सदा यह स्वभाव रहा है कि जब कभी उन्हें ऐसा व्यक्ति मिल जाता है जिसकी योग्यता असाधारण होती तब वे उतने ही प्रसन्न होते ह माना उन्हें बहुमूल्य मोती मिल गया है। और उसकी जो कुछ योग्यता होती है और जो रुचि होती है उसके परिष्कार के लिए कुछ भी उठा नही रखते, विशषत यदि उसमें सैनिक गुण हो। हम पश्चिम वालो का सचमुच भिन्न ढग है। पश्चिम में यदि अच्छा कुत्ता, या बाज (पक्षी) या घोडा हमें मिल सकता है तो हम बहुत प्रसन्न होते ह और उस अधिक स अधिक पटु बनाने के लिए जो कुछ भी बन पडता है करते ह। जहाँतक मनुष्य का प्रश्न है, मान लीजिए कि हमें विशेष योग्यता का व्यक्ति मिल गया, तो हम समझते ह कि उसे शिक्षित करना हमारा काम नही है। हम पश्चिम वाले घोड, कुत्ते या बाज को प्रशिक्षित करके अनक प्रकार के आनन्द उठाते ह और तुक मनुष्य के गुणो से, जिसका आचार और चरित्र शिक्षा स परिष्कृत किया गया है, और जिसके कारण वह पशु से बहुत ऊचा तथा श्रेष्ठ बनता है लाभ उठात हैं।"[1]

आगे चलकर यह प्रथा नष्ट हो गयी क्योकि सभी चाहते थे कि अधिक से अधिक सुविधा हमें मिले। ईसा की सोलहवी शती के अन्त में जानिसारी[2] सेना में हर्बशियो को छोडकर सब स्वतन्त्र मुसलमानो की भर्ती होने लगी। सख्या बढ गयी। साथ ही अनुशासन और दक्षता घटने लगी। सत्रहवी शती के बीच ये मानवी रक्षक-कुत्ते 'प्रकृति की ओर लौट गये' और भेडिये हो गये जो बादशाह के मानवी ढोरो की रक्षा करने के बजाय उन्हें तग करने लगे। परम्परावादी ईसाई प्रजा को, जिसने उसमानिया शासन को स्वीकार कर लिया था जब धोखा हुआ कि हमने इनसे सुलह कर ली थी। सन १६८२-९९ में जब उसमानिया साम्राज्य और पश्चिमी ईसाइयो में

१ ओ० जी० बसबेक लटिन की पुस्तक जिसमें तुर्कों की सनिक सस्था का वणन है।
२ तुर्कों के सुलतान की पदल सेना। —अनुवादक

महायुद्ध हुआ, उसमानिया प्रदेश का एक टुकड़ा ईसाइयों ने जीत लिया और यह जीत का सिलसिला १९२२ ई० तक जारी रहा। उसमानिया अनुशासन तथा शासन पश्चिम की ओर निश्चयरूप से चली गयी।

उसमानिया दास घराने की व्यवस्था नष्ट हो जाने से एक बात प्रकट हो गयी कि उसका मूल दोष उसकी दृढ़ता (रिजिडिटी) थी। एक बार यन्त्र में गड़बड़ी हो गयी फिर न तो उसकी मरम्मत हो सकती थी न उसका प्रतिरूप बन सकता था। सारी व्यवस्था भयावह स्वप्न के समान हो गयी थी। और बाद के तुर्की शासक अपने पश्चिमी वैरियों की नकल मात्र करते थे। यह नीति आधे मन से और अयोग्यता से काम में लायी जाती थी किन्तु अन्त में पूर्णरूप से इसका पालन हमारे युग में मुस्तफा कमाल ने किया। पर परिवर्तन उतना ही आश्चर्यजनक तथा शक्तिशाली था जितना पुराने उसमानिया राजनीतिज्ञों के काल में दास-व्यवस्था। किन्तु इन दोनों प्रथाओं की तुलना से दास-व्यवस्था के दोष प्रकट हो जाते हैं। उसमानिया दास घराने के निर्माताओं ने ऐसा साधन तैयार किया था जिसके द्वारा वे मोड़े खानाबदोश जो अपने निवास स्टेप से निकल आये थे अजनबी संसार में अपनी स्थिति दृढ़ ही नहीं रख सके बल्कि एक ऐसे बड़े ईसाई समाज में शान्ति और व्यवस्था कायम रख सके, जो छिन्न भिन्न हो गयी थी और उससे भी महान् ईसाई समाज के जीवन को भयावह परिस्थिति में डाल दिया था, जिसकी छाया आज समस्त संसार पर है। बाद के तुर्की राजनीतिज्ञों ने केवल उस रिक्तता की पूर्ति की है जो पुराने अद्वितीय उसमानिया साम्राज्य के लोप हो जाने से निकट पूर्व में हो गयी थी। उन्होंने उस शून्य स्थान पर पश्चिमी ढाँचे पर तुर्की राष्ट्रीय राज के रूप में बना-बनाया गोदाम खड़ा कर दिया है। इस साधारण ग्राम भवन में निवास करने में अविकसित उसमानिया सभ्यता के तुर्की उत्तराधिकारी उसी प्रकार सन्तुष्ट हैं जैसे उन्हीं की बगल में पथराये (फॉसिलाइज्ड) सीरियाई सभ्यता के उत्तराधिकारी यहूदी अथवा सड़क पार वाले अकाल प्रसूत सुदूर पश्चिमी सभ्यता के उत्तराधिकारी आयरिश। ये अब 'विचित्र जाति' की परिस्थिति से बचकर साधारणतः सुख का जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

जहाँ तक दास घराने का प्रश्न है, उसका वही हाल हुआ जो उस पहरुवे कुत्ते का होता है जो बिगड़ जाता है और भेड़ों को तंग करने लगता है। १८२६ में ग्रीक-तुर्की के युद्ध के बीच महमूद द्वितीय ने निष्ठुरता से उसका अन्त कर दिया, ठीक पन्द्रह साल बाद जब उसी प्रकार की संस्था ममलूकों का विनाश महमूद की नाम मात्र की प्रजा ने मिस्र के मुहम्मद अली ने किया जो कभी उसके मित्र कभी प्रतिद्वन्द्वी बनते थे।

(३) स्पार्टन

उसमानिया संस्था जहाँ तक जीवन में सम्भव हो सकता है प्लेटो के रिपब्लिक के आदर्शों के समीप थे। किन्तु यह निश्चित है कि प्लेटो ने जब अपने यूटोपिया की कल्पना की, उसके मन में स्पार्टा की संस्थाएँ रही होंगी और यद्यपि उसमानिया के तथा स्पार्टन सैनिक कार्यों के विस्तार के कारण अन्तर था उनकी 'विचित्र संस्थाओं' में निकट की समानता भी थी जिसके आधार पर उन्होंने अपने असाधारण शौर्य के कार्य सम्पन्न किये।

जैसा हमने अपने अध्ययन के पहले उदाहरण में (पृ० ४) में बताया था कि जब ईसा के पहले आठवीं शती के सभी हेल्नी राज्यों को समान चुनौती का सामना करना पड़ा और वहाँ की जनसंख्या

भोजन के परिमाण के अनुपात में बहुत बढ गयी तब स्पार्टा वालो ने इस समस्या का हल अपने ढग से किया। सामान्य (नारमल) हल तो उपनिवेशन था। उन्होंने समुद्र पार नयी जगह खाजी और बबरा पर विजय प्राप्त कर अपने देश की सीमा बढायी और वहाँ लोगो को बसाया। बबरो का विरोध दुबल था इसलिए वह काय सरल था। स्पार्टा वाले ही यूनानी महत्त्वपूण समुदाय में ऐसे थे जो सागर के समीप नही थे। उन्होने अपने यूनानी पडोसी मेसेनिया पर विजय प्राप्त की। इसमें उन्हें अत्यधिक कठिनाई का सामना करना पडा। पहली स्पार्टा मेसेनियाइ लडाई (७३६–७२० ई० पू० के लगभग) लडको का खेल थी। दूसरी (६५०–६२० ई० पू० के लगभग) बहुत कठोर थी। मेसेनियाई अपनी विपत्ति के फलस्वरूप स्पाटनो के विरुद्ध उठ खडे हुए। यद्यपि उन्होने स्वतन्त्रता नही प्राप्त की स्पाटना के विकास की सारी दिशा बदल दी। मेसेनियाई क्रान्ति इतनी प्रबल थी कि इसके परिणामस्वरूप स्पाटनो की अवस्था दरिद्रो की सी हो गयी। इसके पश्चात न तो उन्हें कभी शान्ति मिली, न युद्धेतर विपत्तिया मे वे अलग हो सके। उनके विजय ने विजेताओ को ही बन्दी बना लिया जिस प्रकार एसकिमो ने आर्कटिक सागर प्रदश को जीता किन्तु स्वय उसके बन्दी बन गये। जिस प्रकार एसकिमो ऋतु के वार्षिक चक्र की कठोरता में बँधे हुए ह उसी प्रकार स्पाटन मेसेनियाइ दासा को दबाने में बँध गये थे।

स्पाटना ने अपनी शक्ति के प्रयोग करने में उसी प्रणाली का सहारा लिया जो उसमानलियो ने लिया था। केवल उन्हें नयी परिस्थिति के अनुकूल बना लिया था। अन्तर इतना था कि उसमानली शासको ने खानाबदोशा की समृद्ध परम्परा' का सहारा लिया था स्पाटनो की सस्थाएँ उन डोरिबी (डारियन) बबरा के आदिम सामाजिक व्यवस्था से ली गयी थी जिन्होने मिनोई जनरेला के पश्चात यूनान पर आक्रमण किया था। हलेनी किंवदन्ती के अनुसार यह लाइकरगस की देन है। किन्तु लाइकरगस मनुष्य नही देवता था, और इसक वास्तविक प्रणेता ईसा के पूव ६ सौ वप तक अनेक राजनीतिज्ञ थे।

उसमानिया व्यवस्था के अनुसार स्पाटन व्यवस्था में भी मानव प्रकृति की नितान्त अवहेलना थी जिसके कारण उसमें दक्षता भी थी और कठोरता थी और उसी के कारण उसका अन्त भी हुआ। स्पार्टा के 'अगागे उसमानिया दास घराने की भाति नही थे। यह बात नही थी कि जन्म तथा वश के गुणा पर बिलकुल ध्यान नही दिया जाता था। स्पार्टा के स्वतन्त्र नागरिक जमीदार उसमानिया साम्राज्य के स्वतन्त्र मुसलिम जमीदारो स बिलकुल भिन्न थे। मेसेनिया पर स्पाटन शासन कायम रखने का सारा उत्तरदायित्व इन्ही पर था और साथ ही साथ स्पाटनी नागरिको में समता क सिद्धान्त का पालन कठोरता से किया जाता था। प्रत्येक स्पाटन का बराबर धरती, जिसकी प्रत्येक की उपज भी समान हो दी जाती थी। यह धरती मेसेनियाई दास जोतते-बोन थे और इसकी उपज इतनी होती थी कि स्पाटन और उसके परिवार का भरण-पोषण कर सके जिससे वे अपनी सारी शक्ति युद्ध मे लगा सक। प्रत्येक स्पाटन बालक यदि दुबल हुआ तो मरने के लिए निराश्रय छोड दिया जाता था, नही तो उसे सातवें साल से अपनी सारी शक्ति कठोर सनिक शिक्षा ग्रहण करने में लगानी पडती थी। इसका अपवाद बिलकुल नहा होता था। लडके-लडकिया दोनो को व्यायाम की शिक्षा दी जाती थी। बालको की भाँति बालिकाएँ भी नगे बदन पुरुष जनता के सामने प्रतिद्वन्द्विताओ में सम्मिलित होती थी। इन बातो में स्पाटनो ने सेक्सी भावो पर इतना नियन्त्रण अथवा उदासीनता अर्जित करली थी जितनी वतमान जापानियो

महायुद्ध हुआ, उसमानिया प्रदेश का एक टुकड़ा ईसाइयों ने जीत लिया और यह जीत का सिलसिला १९२२ ई० तक जारी रहा। उसमानिया अनुशासन तथा स्थापना पश्चिम की ओर निश्चयरूप से चली गयी।

उसमानिया दास घराने की व्यवस्था नष्ट हो जाने से एक बात प्रकट हो गयी कि उसका मूल दोष उसकी दृढ़ता (रिजिडिटी) थी। एक बार यन्त्र में गड़बड़ी हो गयी फिर न तो उसकी मरम्मत हो सकती थी, न उसका प्रतिरूप बन सकता था। सारी व्यवस्था भयावह स्वप्न के समान हो गयी थी। और बाद के तुर्की शासक अपने पश्चिमी वैरियों की नकल मात्र करते थे। यह नीति आधे मन से और अयोग्यता से काम में लायी जाती थी किन्तु अन्त में पूर्णरूप से इसका पालन हमारे युग में मुस्तफा कमाल ने किया। पर परिवर्तन उतना ही आश्चर्यजनक तथा शक्तिशाली था जितना पुराने उसमानिया राजनीतिज्ञों के काल में दास-व्यवस्था। किन्तु इन दोनों प्रथाओं की तुलना से दास-व्यवस्था में दोष प्रकट हो जाते हैं। उसमानिया दास घराने के निर्माताओं ने ऐसा साधन तैयार किया था जिसके द्वारा वे थोड़े खानाबदोश जो अपने निवास स्टेप से निकल आये थे, अजनबी संसार में अपनी स्थिति दृढ़ ही नहीं रख सके बल्कि एक ऐसे बड़े ईसाई समाज में शान्ति और व्यवस्था कायम रख सके, जो छिन्न भिन्न हो गयी थी और उससे भी महान् ईसाई समाज के जीवन का भयावह परिस्थिति में डाल दिया था जिसकी छाया आज समस्त संसार पर है। बाद के तुर्की राजनीतिज्ञों ने केवल उस रिक्तता की पूर्ति की है जो पुराने अद्वितीय उसमानिया साम्राज्य के लोप हो जाने से निकट पूर्व में हो गयी थी। उन्होंने उस शून्य स्थान पर पश्चिमी ढाँचे पर तुर्की राष्ट्रीय राज के रूप में बना-बनाया गोदाम खड़ा कर दिया है। इस साधारण ग्राम भवन में निवास करने में अविकसित उसमानिया सभ्यता के तुर्की उत्तराधिकारी उसी प्रकार सन्तुष्ट हैं जैसे उन्हीं की बगल में पथराय (फसिलाइज्ड) सीरियाई सभ्यता के उत्तराधिकारी यहूदी अथवा सड़क पार वाले अकाल प्रसूत सुदूर पश्चिमी सभ्यता के उत्तराधिकारी आयरिश। ये अब 'विचित्र जाति' की परिस्थिति से बचकर साधारणतः सुख का जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

जहाँ तक दास घराने का प्रश्न है, उसका वही हाल हुआ जो उस पहरुवे कुत्ते का होता है जो बिगड़ जाता है और भेड़ों को तंग करने लगता है। १८२६ में ग्रीक-तुर्की के युद्ध के बीच महमूद द्वितीय ने निष्ठुरता से उसका अन्त कर दिया, ठीक पन्द्रह साल बाद जब उसी प्रकार की संस्था ममलूकों का विनाश महमूद की नाम मात्र की प्रजा ने मिस्र के मुहम्मद अली ने किया जो कभी उनके मित्र कभी प्रतिद्वंदी बनते थे।

(३) स्पार्टन

उसमानिया संस्था, जहाँतक जीवन में सम्भव हो सकता है प्लेटो के रिपब्लिक के आदर्शों के समीप थे। किन्तु यह निश्चित है कि प्लेटो ने जब अपने यूटोपिया की कल्पना की, उसके मन में स्पार्टा की संस्थाएँ रही होंगी और यद्यपि उसमानिया के तथा स्पार्टन सैनिक कार्यों के विस्तार के कारण अंतर था उनकी विचित्र संस्थाओं में निकट की समानता भी थी जिसके आधार पर इन्होंने अपने असाधारण शौर्य के काय सम्पन्न किये।

जैसा हमने अपने अध्ययन के पहले उदाहरण में (पृ० ४) में बताया था कि जब ईसा के पहले आठवीं शती के सभी हेलेनी राज्यों का समान चुनौती का सामना करना पड़ा और वहाँ की जनसंख्या

भोजन के परिमाण के अनुपात में बहुत बढ गयी तब स्पार्टा वालो ने इस समस्या का हल अपने ढग से किया। सामान्य (नारमल) हल तो उपनिवेशन था। उन्होने समुद्र पार नयी जगहें खाजी और बबरो पर विजय प्राप्त कर अपने देश की सीमा बढायी और वहा लोगो को बसाया। बबरो का विरोध दुवल था इसलिए वह काय सरल था। स्पार्टा वाले ही यूनानी महत्त्वपूण समुदाय में ऐसे थे जो सागर के समीप नही थे। उन्होने अपने यूनानी पडोसी मेसनियो पर विजय प्राप्त की। इसमें उन्हें अत्यधिक कठिनाई का सामना करना पडा। पहली स्पार्टा मेसेनियाई लडाई (७३६–७२० ई० पू० के लगभग) लडको का खेल थी। दूसरी (६५०–६२० ई० पू० के लगभग) बहुत कठोर थी। मेसेनियाई अपनी विपत्ति के फलस्वरूप स्पाटना के विरुद्ध उठ खडे हुए। यद्यपि उन्होने स्वतन्त्रता नही प्राप्त की स्पाटना के विकास की सारी दिशा बदल दी। मेसेनियाई क्रान्ति इतनी प्रवल थी कि इसके परिणामस्वरूप स्पाटनो की अवस्था दरिद्रा की सी हो गयी। इसके पश्चात न तो उन्हे कभी शान्ति मिली, न युद्धेतर विपत्तिया से वे अलग हो सके। उनके विजय ने विजेताओ को ही बन्दी बना लिया जिस प्रकार एसकिमो ने आकटिक सागर प्रदेश का जीता किन्तु स्वय उसके बन्दी बन गये। जिस प्रकार एसकिमो ऋतु के वार्षिक चक्र की कठोरता में बँधे हुए ह उसी प्रकार स्पाटन मेसेनियाई दासा को दबाने मे बँध गये थे।

स्पाटना ने अपनी शक्ति के प्रयोग करने में उसी प्रणाली का सहारा लिया जो उसमानलिया न लिया था। केवल उन्हें नयी परिस्थिति के अनुकूल बना लिया था। अन्तर इतना था कि उसमानली शासका ने 'खानाबदोशा की समृद्ध परम्परा' का सहारा लिया था, स्पाटनो की सस्थाएँ उन डारिबी (डोरियन) बबरा के आदिम सामाजिक व्यवस्था से ली गयी थी जिन्होने मिनाई जनरेल्न के पश्चात यूनान पर आक्रमण किया था। हेलेनी किंवदन्ती के अनुसार यह लाइकरगस की देन है। किन्तु लाइकरगस मनुष्य नही देवता था, और इसके वास्तविक प्रणेता ईसा के पूव ६ सौ वप तक अनेक राजनीतिज्ञ थे।

उसमानिया व्यवस्था के अनुसार स्पाटन व्यवस्था में भी मानव प्रकृति की नितान्त अवहेलना थी जिसके कारण उसमें दक्षता भी थी और कठोरता थी और उसी के कारण उसका अन्त भी हुआ। स्पार्टा के 'अगागे' उसमानिया दास घराने की भाँति नही थे। यह बात नहा थी कि जन्म तथा वश के गुणा पर बिल्कुल ध्यान नही दिया जाता था। स्पार्टा के स्वतन्त्र नागरिक जमीदार उसमानिया साम्राज्य के स्वतन्त्र मुसलिम जमीदारा से बिलकुल भिन्न थे। मेसेनिया पर स्पाटन शासन कायम रखने का सारा उत्तरदायित्व इन्ही पर था और साथ ही साथ स्पाटनी नागरिका में समता के सिद्धान्त का पालन कठोरता से किया जाता था। प्रत्येक स्पाटन को बराबर धरती, जिसकी प्रत्येक की उपज भी समान हा दी जाती थी। यह धरती मेसेनियाई दास जोनते-बाते थे और इनकी उपज इतनी होती थी कि स्पाटन और उसके परिवार का भरण-पोषण कर सके जिससे वे अपनी सारी शक्ति युद्ध म लगा सकें। प्रत्येक स्पाटन बालक यदि दुवल हुआ तो मरने के लिए निराश्रय छोड दिया जाता था, नही तो उसे सातवें साल स अपनी सारी शक्ति कठोर सनिक शिक्षा ग्रहण करने में लगानी पडती थी। इसका अपवाद बिल्कुल नही होता था। लडके-लडकिया दोना का व्यायाम की शिक्षा दी जाती थी। बालका की भाँति बालिकाएँ भी नगे बदन पुरुष जनता के सामने प्रतिद्वद्विताआ में सम्मिलित हाती थी। इन बाता में स्पाटना न सेक्सी भावा पर इतना नियन्त्रण अथवा उदासीनता अर्जित कर ली थी जितनी वतमान जापानिया

ने । सन्तानोत्पत्ति कडे सुजनन (यूजनिक) नियमो के अनुसार नियन्त्रित था । यदि कोई पुरुष दुबल होता था तो उसे प्रोत्साहन दिया जाता था कि बलशाली व्यक्ति से अपने परिवार में बच्चे पैदा करा ले । प्लूटाक के अनुसार—'दूसरे मानव समाज में केवल अश्लीलता और झूठा अभिमान है जो इस बात का तो ध्यान रखते है कि उनकी कुतियो और घोडियो के लिए तो बच्चे उत्पन्न करने के लिए अच्छे जोडे मोल या मँगनी लाते है किन्तु अपनी स्त्रियो को ताला में बन्द रखते हैं कि केवल अपने पति से ही सन्तान उत्पन्न करें । मानो यह पति का कोई अधिकार है चाहे वह रोगी हो, पागल हो अथवा बूढा हो ।'[१]

पाठको ने प्लूटार्क के विचार और उसमानलियो के दास घरानो पर बसबक के विचारो की जिसका विवरण पहले दिया गया है समानता देखनी होगी ।

स्पार्टा की व्यवस्था तथा उसमानिया व्यवस्था की मुख्य बातें समान थी जसे निरीक्षण, चुनाव विशेषज्ञता और प्रतिद्वन्द्विता के भाव और दोनो में ये बातें केवल शिक्षण काल तक नही थी । स्पार्टन तिरपन साल तक सेना में काम करता था । कुछ बातो में जानिसारियो से अधिक उसे काम करना पडता था । जानिसारियो को विवाह करने स जहाँ तक सम्भव हो रोका जाता था किन्तु यदि उन्होने विवाह किया तो विवाहितो के टोले में रहना पडता था, स्पार्टनो को विवाह के लिए विवश किया जाता था किन्तु वे गाहस्थ्य जीवन नही व्यतीत कर सकते थे । विवाह के बाद भी उन्हें बरको में खाना और सोना पडता था । इसका परिणाम ऐसा होता था जो अविश्वसनीय जान पडता है और वह साधारण जन के भावो को कुचल डालने वाला होता था । ये भावनाएँ ऐसी थी जो युद्ध काल में भी अग्रेजी विचारधारा के प्रतिकूल और घणित ह और दूसरे समय तो वे असह्य हैं और इसी कारण 'स्पार्टन शब्द बदनाम हो गया है । इस भावना का एक रूप 'थर्मापिली के दर्रे और तीन सौ' की घटना में या लोमडी और बालक की कहानी के उदाहरण में है । दूसरी ओर हमें यह भी स्मरण रखना है कि स्पार्टी लडके की शिक्षा के अतिम दो वष गुप्त विभाग में काम करन में लगाय जाते थे । ये केवल हत्यारे थे । रात का गावो में घूमा करते थे और यदि कोई दास अ विनय का दोषी होता था उसमें चरित्र दोष पाया जाता था या कोई अपनी इच्छा के अनुकूल काय करता था, तो वह मौत के घाट उतार दिया जाता था ।

स्पार्टा की प्रणाली की एक मार्गी प्रतिभा आज वहाँ अजायब घर में भी दशक को मिल सकती है । क्योकि यह अजायबघर और अजायबघरो से भिन्न है, जहा हेलेनी कला की वस्तुएँ रखी है । और अजायबघरो की सामग्रियो में दशक की आखें क्लासिकी युग की कुशल कारीगरी का नमूना ढढती ह और देखती है । यह युग ईसा के पूव पाँचवी और चौथी शताब्दी में माना जाता है । स्पार्टा के अजायबघर में क्लासिकी कला देखने को नही मिलती । क्लासिकी युग के पहले की वस्तुएँ मिलती ह और उनकी कला आशाप्रद है किन्तु उनके बाद की वस्तुएँ नही मिलती । एक शून्य मिलता है और फिर बाद की हेलेनी तथा रोमन काल की प्रतिभाहीन तथा बँधी-तुली वस्तुएँ मिलती हैं । जिस समय पुरानी स्पार्टन कला परम्परा से टूटती है वह लगभग वही काल है जब ईसा के पूव छठी शती के मध्य चिलन शासक था इसलिए इसको इस प्रणाली का

१ प्लूटार्क लाइकरगस, अध्याय १५ ।

निर्माता कहा जाता है। पतन काल में जो एकाएक कला की वस्तुओ की उत्पत्ति आरम्भ हुई, वह ई० पू० १८९-१८२ के बाद की है, जिसे विदेशी विजेता ने जबरदस्ती बन्द कर दिया। यह उस कठोर प्रणाली का विचित्र उदाहरण है कि उसके मुख्य अभिप्राय के लोप होने के बाद भी दो शतिया तक चलती रही—उस समय तक जब मसीना पूरा पराजित हो गया। इसके पहले साधारण कथन के रूप में अरस्तू ने स्पार्टा का समाधि लेख (एपिटाफ) इस रूप में लिख दिया था—

"राष्ट्रो को युद्ध की शिक्षा अपने को इसलिए नही देनी चाहिए कि अपन ऐसे पडोसियो पर विजय प्राप्त करे जो इस योग्य नही है कि उनपर विजय प्राप्त की जाय। (अर्थात सहयोगी यूनानियो पर अथवा ऐसे नियम विधि विहीन जातियो पर जिन्हे यूनानी बबर कहते ह) किसी सामाजिक प्रणाली का मुख्य लक्ष्य, दूसरी सस्थाओ की भाँति, सनिक व्यवस्था में भी एसा होना चाहिए कि शान्ति के समय भी जब युद्ध नही होता हो, उसकी उपयोगिता हो।[1]

(४) साधारण विशेषताएँ

इन अविकसित समाजो की दो विशेषताएँ ह जो प्रमुख ह। श्रेणियाँ और विशेषज्ञता (स्पेशलाइजेशन), ये दोनो बाते एक सूत्र मे सम्मिलित हो सकती ह। इन समाजो म जो व्यक्ति हैं वे एक प्रकार के नही है, वे दो या तीन विभिन्न श्रेणियो में स्पष्ट रूप से विभाजित हो जाते ह। एसकिमो समाज में दो श्रेणिया हैं—शिकारी मानव तथा उनके सहायक कुत्ते। खानाबदोशी समाज में तीन श्रेणिया ह—मानव गडेरिये सहायक पशु और ढोर (कॅटल), उसमानिया समाज में खानाबदोशी तीन श्रेणियो के स्थान पर पाँच श्रेणिया हमें मिलती ह—और पशुओ की जगह वहाँ मनुष्य होते हैं। खानाबदोशो का बहुरूपी (पोलिमारफिक) समाज मानव तथा पशुओ के गिरोह का एक समाज बना हुआ है, जिनमें से कोई अपने साथी के बिना स्टेप पर जीवित नही रह सकता जबकि उसमानिया समाज में विरोधी व्यवस्था है जहा एक ही मानव जाति विभिन्न जातियो में बँटी है माना वे विभिन्न जाति के पशु हैं। किन्तु सम्प्रति हम इस भेद का छोड दे सकते हैं। एसकिमो के कुत्ते और खानाबदोश के घोड और ऊँट मनुष्य के साथी होन के कारण आधे मनुष्य बन गये ह उसमानिया समाज मे प्रजा को 'रिआया' (जिसका अथ 'ढोर है) कहते हैं और स्पार्टानियाई दासो के साथ पशुओ का सा व्यवहार होने के कारण वे अध पशु हो जाते ह। शेष जो मानव इनके साथी ह वे राक्षस बन जाते हैं। पूण स्पाटन लडाकू, पूण जानिसारी साधु, पूण खानाबदोश किन्नर (सेंटार) और पूण एसकिमो समुद्र कुमार (मरमैन) बन जाता है। पेरिक्लीज ने अन्त्येष्टि भाषण में ऐथेन्स और उसके वरियो में जो अन्तर बताया है वह यह है कि ऐथेनियन ईश्वर के बिम्ब में मानव ह और स्पाटन युद्धक यन्त्र मानव हैं। जहा तक एसकिमो और खानाबदोशो की बात है जिन लोगो ने वहा का वणन किया है सभी एकमत ह कि इन्होने अपने कौशल को इतना ऊँचा उठाया है कि मनुष्य और नाव पहले के यहाँ तथा मनुष्य और घोडे दूसरे के यहा, एक अग से हो गये ह।

१ अरस्तू पोलिटिक्स—१३३३ बी—१३३४ ए।

इस प्रकार एसक्रिमो, पानाबनोरा, उरामानली वग और स्पार्टन ने ऐसी सफलता प्राप्त की, मानवता के विभिन्न गुणों का तिरस्कार किया और अपरिवर्तनशील पशु प्रकृति को ग्रहण किया। इस प्रकार उन्होंने प्रतिगामिता की ओर पाँव रखा। जीव विज्ञानियों का कहना है जिस जिस पशु जाति ने विशेष वातावरण के अनुसार अपने को विशेष रूप से अनुकूल बना लिया वह मृत प्राय हो जाती है और उसका विकास रुक जाता है। यही हाल अविकसित सभ्यताओं का है।

इसी प्रकार के उदाहरण हमें काल्पनिक मानव समाज यूटोपिया में तथा सामाजिक कीडों में भी मिलते हैं। यदि हम तुलना करें तो चीटियों के झुण्ड, मधुमक्खियों के समूह तथा अफलातून के 'रिपब्लिक' और अल्डस हक्सले के 'ब्रेव न्यू वल्ड' में वही बातें पायेंगे जो हमने विकसित सभ्यताओं में देखी है—अर्थात् जाति और विशिष्टता।

सामाजिक कीडे आज जिस ऊँचाई पर है वहाँ स्थिर हो गये और वे वहाँ लाखों वर्ष उसके पहले पहुँच गये थे जब मनुष्य कशेरुकी (वर्टिबट) प्राणियों के औसत स्तर पर पहुँचा था। जहाँ काल्पनिक आदर्श जातियों का—यूटोपियनों का सम्बन्ध है वे अचल है। ये पुस्तकें काल्पनिक समाजवाद (सोशलाजी) के वर्णन के बहाने क्रियाशीलता के कार्यक्रम का वर्णन करती है। और जिस कार्यशीलता को जाग्रत करने के लिए उनकी चेष्टा होती है वह किसी एक स्तर पर ऐसे पतनोन्मुख समाज का उद्घाटन होता है जिसका पतन किसी कृत्रिम ढंग से न रोका जाय। यूटोपिया में अधिक से अधिक यही दिखाया जा सकता है कि पतन किस प्रकार रोका जा सकता है क्योंकि किसी समाज में ऐसी पुस्तकें तभी लिखी जाती है जब उसके सदस्यों को आगे प्रगति की आशा नहीं रह जाती। इसलिए—अंग्रेजी प्रतिभा को छोडकर जिसने यह नाम 'यूटोपिया' साहित्य को दिया है—सभी यूटोपियाओं का अभिप्राय यह होता है कि अपराजेय स्थिरता समाज को दी जाय और समाज की और बातें उससे गौण कर दी जायें और आवश्यकता हो तो उसके लिए उनकी बलि दे दी जाय।

हेलेनी यूटोपिया के सम्बन्ध में यह सत्य है। इन यूटोपियों की कल्पना उस समय हुई जब पेलोपेनेशियाई युद्ध के पश्चात् एथेन्स में तबाही आ गयी और वहाँ नये दार्शनिकों का उत्थान हुआ। इन विचारों की नकारात्मक स्फूर्ति एथेनी लोकतन्त्र के पूर्ण विरोध में थी। क्योंकि पेरिक्लीज की मृत्यु के पश्चात् वहाँ का लोकतन्त्र एथनी संस्कृति से अलग हो गया। इस लोकतन्त्र के कारण एक उन्मत्त सैनिकवाद का विकास हुआ था जिसने उस संसार का विनाश किया जहाँ एथेनी संस्कृति फल-फूल रही थी, और सुकरात की वैधानिक किन्तु न्याय विरुद्ध हत्या करके अपनी असफलता को सीमा तक पहुँचा दिया और युद्ध में विजयी न हो पाया।

युद्ध के पश्चात् एथेनी दार्शनिकों का पहला कार्य यह था कि जिन बातों ने पिछले दो सौ सालों के एथेन्स को महान् बनाया था उन सबको अग्राह्य कर दिया। उनका मत था कि यूनान (हेलास) की रक्षा तभी हो सकती है जब एथिनी दर्शन और स्पार्टा की सामाजिक व्यवस्था मिलायी जाय। स्पार्टा व्यवस्था को अपने विचारों के अनुकूल बनाने में वे दो रूप में उसे सुधारना चाहते थे। पहले तो वे उस व्यवस्था को उसकी पूर्ण सीमा तक ले जाना चाहते थे और दूसरे एथेनी दार्शनिकों के ही समान एक प्रमुख बौद्धिक वर्ग (अफलातून के 'गारजियन') की स्थापना करना चाहते थे जिसका कार्य इस आदर्श व्यवस्था में गौण होता।

वर्गवाद को स्वीकार करके, विशेषज्ञता की ओर झुकाव के कारण और किसी भी मूल्य पर सन्तुलन स्थापित करने के जोश के कारण ईसा के पूर्व चौथी शती के एथेनी दार्शनिक ई० पू० छठी शती के स्पार्टा के राजनीतिज्ञ के विनम्र शिष्य मात्र हैं। जहाँ तक जातिवाद का या वर्गवाद की बात है अफलातून और अरस्तू के विचार जातिवाद से रँगे हुए हैं जो हमारे पश्चिमी समाज में आज भी एक दोष बना हुआ है। अफलातून ने 'कुलीन झूठ' (नोबल लाई) की जो दर्पभरी कल्पना की है वह मानव मानव में उसी प्रकार के भेद उत्पन्न करने की सूक्ष्म चाल है जो विभिन्न जाति के पशुओं में होती है। अरस्तू ने दास प्रथा का जो समर्थन किया है वह भी इसी प्रकार का है। उसका कहना है कि कुछ लोगों को प्रकृति ने ही दास बनने योग्य बनाया है, यद्यपि वह यह स्वीकार करता है कि बहुत से जो दास हैं उन्हें स्वतन्त्र होना चाहिए और बहुत से जो स्वतन्त्र हैं उन्हें दास होना चाहिए।

अफलातून और अरस्तू के काल्पनिक राज्य में (अफलातून के रिपब्लिक और 'लाज़' और अरस्तू के पालिटिक्स' के अन्तिम दो खण्डों में) मानव के सुख का लक्ष्य नहीं है, समाज की दृढ़ता ही लक्ष्य है। प्लेटो कवियों पर बन्धन लगाता है जो जान पड़ता है स्पार्टा के ओवरसियर की आज्ञा है। वह 'भयंकर विचारों' पर भी नियन्त्रण लगाना चाहता है जो आजकल के कम्युनिस्ट रूस, नेशनल सोशलिस्ट जरमनी, फासिस्ट इटली और शिंताई जापान के ढंग का नियन्त्रण है।

यूटोपियाई कार्यक्रम से यूनान का त्राण नहीं हो सका। यूनान के इतिहास की समाप्ति के पूर्व ही उसकी अनुपयोगिता प्रकट हो चुकी थी जब यूटोपियाई सिद्धान्तों के अनुसार कृत्रिम ढंग से अनेक प्रजातन्त्र स्थापित किये गये थे। जिस लोकतन्त्र की कल्पना अफलातून ने अपने 'लाज़' में क्रीट के उजाड़ द्वीप पर की थी वैसे ही सैकड़ों नगर राज्य (सिटी स्टेटस) बाद के चार सौ सालों में सिकन्दर ने स्थापित किये और पूर्वीय देशों में सेल्यूकस के उत्तराधिकारियों ने और रोमनों ने बर्बर प्रदेशों में स्थापित किया। इन वास्तविक यूटोपियों में यूनानी अथवा इटालियों को उपनिवेशकों के रूप में यह स्वतन्त्रता दी गयी कि हेलेनीवाद के प्रकाश को विदेशों के अन्धकार में प्रज्वलित करें और वहाँ के निवासियों को गंदे और नीच कार्यों के लिए विवश करें। गआल के रोमन उपनिवेश के सारे क्षेत्र में सब बर्बर ही निवासी हो सकते थे।

ईसा की दूसरी शती में जब हेलेनी जगत् भारतीय ग्रीष्म का आनन्द ले रहा था समकालीन और बाद के लोगों को भी भ्रम हुआ कि यह स्वर्णयुग है और अफलातून की सभी आशाएँ पूर्ण हो गयीं। सन ९६ से १८० ई० तक अनेक दार्शनिक राजा हेलेनी जगत की गद्दी पर बैठे और इस दार्शनिक साम्राज्य में सहस्रों नगर राज्य साथ-साथ शान्ति और एकता में जीवन-यापन कर रहे थे। किन्तु दोषों की यह निवृत्ति केवल ऊपरी थी, भीतर भीतर कुशल नहीं था। सामाजिक परिस्थिति के परिणामस्वरूप एक सूक्ष्म नियन्त्रण का वातावरण हो गया था, जैसा सम्भवतः साम्राज्य के आदेश से भी न होता। इस नियन्त्रण के कारण ऐसी कष्टपूर्ण बौद्धिकता अग्रसर हो रही थी जिसे यदि अफलातून जीवित होता और देखता तो चक्करा जाता कि भरसक मिद्धान्तों का क्या परिणाम हो रहा है। दूसरी शती के शान्त प्रतिष्ठित लोगों के पश्चात् तीसरी शती में कष्ट और पीड़ा का समय आया जब किसान दासों ने अपने मालिकों का विनाश किया। चौथी शती आते-आते सारी व्यवस्था उलट गयी और जो किसी समय रोमन नगर-पालिकाओं के स्वतन्त्र

इस प्रकार एसकिमो, खानाबदोश, उसमानली वग और स्पाटन ने ऐसी सफलता प्राप्त की, मानवता के विभिन गुणा का तिरस्कार किया और अपरिवतनशील पशु प्रकृति को ग्रहण किया। इस प्रकार उन्हाने प्रतिगामिता की ओर पाँव रखा। जीव विज्ञानिया का कहना है जिस जिस पशु जाति ने विशेष वातावरण के अनुसार अपन को विशेष रूप से अनुकूल बना लिया वह मत प्राय हो जाती है और उसका विकास रुक जाता है। यही हाल अविकसित सभ्यताआ का है।

इसी प्रकार के उदाहरण हमें काल्पनिक मानव समाज यूटोपिया में तथा सामाजिक कीडा में भी मिलते हैं। यदि हम तुलना करे तो चीटिया के झुण्ड, मधुमक्खिया के समूह तथा अफलातून के रिपब्लिक और अल्डस हक्सल के ब्रेव न्यू वल्ड में वही बातें पायेंगे जो हमने विकसित सभ्यताआ में देखी हैं—अथात् जाति और विशिष्टता।

सामाजिक कीडे आज जिस ऊँचाई पर है वहाँ स्थिर हो गये और वे वहाँ लाखा वष उसके पहले पहुँच गये थे जब मनुष्य कशेरुकी (वर्टिबट) प्राणिया के औसत स्तर पर पहुँचा था। जहाँ काल्पनिक आदश जातिया का—यूटोपियना का सम्बध है वे अचल ह। ये पुस्तकें काल्पनिक समाजवाद (सोशलाजी) के वणन के बहाने क्रियाशीलता के कायक्रम का वणन करती ह। और जिस कायशीलता को जाग्रत करने के लिए उनकी चेष्टा होती है वह किसी एक स्तर पर ऐसे पतनोन्मुख समाज का उद्घाटन होता है जिसका पतन किसी कृत्रिम ढग से न रोका जाय। यूटोपिया में अधिक से अधिक यही दिखाया जा सकता है कि पतन किस प्रकार रोका जा सकता है क्योंकि किसी समाज में ऐसी पुस्तकें तभी लिखी जाती हैं जब उसके सदस्या को आग प्रगति की आशा नही रह जाती। इसलिए—अग्रजो प्रतिभा को छोडकर जिसन यह नाम 'यूटोपिया' साहित्य को दिया है—सभी यूटोपियाआ का अभिप्राय यह होता है कि अपराजय स्थिरता समाज को दी जाय और समाज की और बातें उससे गौण कर दी जायें और आवश्यकता हो तो उसके लिए उनकी बलि दे दी जाय।

हेलनी यूटोपिया के सम्बध में यह सत्य है। इन यूटोपिया की कल्पना उस समय हुई जब पेलोपेनेशियाई युद्ध के पश्चात् एथन्स में तबाही आ गयी और वहाँ नय दाशनिका का उत्थान हुआ। इन विचारा की नकारात्मक स्फूर्ति एथनी लोकतत्र के पूण विरोध में थी। क्योंकि पेरिक्लीज की मत्यु के पश्चात वहाँ का लोकतत्र एथनी सस्कृति से अलग हो गया। इस लोकतत्र के कारण एक उन्मत्त सनिकवाद का विकास हुआ था जिसने उस ससार का विनाश किया जहाँ एथेना सस्कृति फलफूल रही थी और सुकरात की वैधानिक किन्तु न्याय विरुद्ध हत्या करके अपना असफलता को सीमा तक पहुँचा दिया और युद्ध में विजयी न हो पाया।

युद्ध के पश्चात् एथनी दाशनिका का पहला काय यह था कि जिन बाना ने पिछले दो सौ साला से एथेन्स को महान् बनाया था उन सबको अग्राह्य कर दिया। उनका मत था कि यूनान (हेलास) की रक्षा तभी हो सकती है जब एथिनी दशन और स्पार्टा की सामाजिक व्यवस्था मिलायी जाय। स्पार्टा व्यवस्था को अपने विचारा के अनुकूल बनाने में व दो रूप में उसे सुधारना चाहते थे। पहले तो व उस व्यवस्था को उसकी पूण सीमा तक ले जाना चाहते थे और दूसरे एथनी दाशनिको के ही समान एक प्रमुख बौद्धिक वग (अफलातून के 'गारजियन') की स्थापना करना चाहते थ जिसका काय इस आदश व्यवस्था में गौण होना।

वगवाद का स्वीकार करके, विशेषज्ञता की ओर झुकाव के कारण और किसी भी मूल्य पर सन्तुलन स्थापित करने के जोश के कारण ईसा के पूव चौथी शती के एथेनी दार्शनिक ई० पू० छठी शती के स्पार्टा के राजनीतिज्ञों के विनम्र शिष्य मात्र है। जहाँ तक जातिवाद का या वगवाद की बात है अफलातून और अरस्तू के विचार जातिवाद से रँगे हुए ह जो हमारे पश्चिमी समाज में आज भी एक दोष बना हुआ है। अफलातून ने 'कुलीन झूठ' (नोब्ल लाई) का जो दपभरी कल्पना की है वह मानव-मानव में उसी प्रकार के भेद उत्पन्न करने की सूक्ष्म चाल है जो विभिन्न जाति के पशुओ में होती है। अरस्तू ने दास प्रथा का जो समथन किया है वह भी इसी प्रकार का है। उसका कहना है कि कुछ लोगो को प्रकृति ने ही दास बनने योग्य बनाया है, यद्यपि वह यह स्वीकार करता है कि बहुत-से जो दास ह उन्हें स्वतन्त्र होना चाहिए और बहुत से जो स्वतन्त्र ह उन्हें दास होना चाहिए।

अफलातून और अरस्तू के काल्पनिक राज्य में (अफलातून के रिपब्लिक और लाज और अरस्तू के 'पालिटिक्स' के अन्तिम दो खण्डो में) मानव के सुख का लक्ष्य नहीं है समाज की दृढता ही लक्ष्य है। प्लेटो कवियो पर बन्धन लगाता है जो जान पडता है स्पार्टा के ओवरसियर की आज्ञा है। वह 'भयकर विचारो' पर भी नियन्त्रण लगाना चाहता है जो आजकल के कम्युनिस्ट रूस नशनल सोशलिस्ट जरमनी, फासिस्ट इटली और शितोई जापान के ढग का नियन्त्रण है।

यूटोपियाइ कायक्रम से यूनान का त्राण नही हो सका। यूनान के इतिहास की समाप्ति के पूव ही उसकी अनुपयोगिता प्रकट हो चुकी थी जब यूटोपियाई सिद्धान्तो के अनुसार कृत्रिम ढग से अनेक प्रजातन्त्र स्थापित किये गये थे। जिस लोकतन्त्र की कल्पना अफलातून ने अपने 'लाज में क्रीट के उजाड द्वीप पर की थी वसे ही सकडो नगर राज्य (सिटी स्टेटस) बाद के चार सौ सालो में सिकन्दर ने स्थापित किये और पूर्वीय देशो में सेल्यूकस के उत्तराधिकारियो ने और रोमनो ने बबर प्रदेशो में स्थापित किया। इन वास्तविक यूटोपियो में यूनानी अथवा इटालियो को उपनिवेशको के रूप में यह स्वतन्त्रता दी गयी कि हेलेनीवाद के प्रकाश का विदेशो के अन्धकार मे प्रज्वलित कर और वहा के निवासियो को गदे और नीच कार्यो के लिए विवश कर। गआल के रोमन उपनिवेश के मारे क्षेत्र में सब बबर ही निवासी हो सकते थे।

ईसा की दूसरी शती मे जब हेलेनी जगत भारतीय ग्रीष्म का आनन्द ले रहा था, समकालीन और बाद के लोगो को भी भ्रम हुआ कि यह स्वणयुग है और अफलातून की सभी आशाएँ पूर्ण हो गया। सन ९६ से १८० ई० तक अनेक दार्शनिक राजा हेलेनी जगत की गद्दी पर बठे और इस दार्शनिक साम्राज्य में सहस्रो नगर राज्य साथ-साथ शान्ति और एकता म जीवन-यापन कर रहे थे। किन्तु दोषो की यह निवृत्ति केवल ऊपरी थी, भीतर भीतर कुशल नहा था। सामाजिक परिस्थिति के परिणामस्वरूप एक सूक्ष्म नियन्त्रण का वातावरण हो गया था जमा सम्भवत साम्राज्य के आदश से भी न होता। इस नियन्त्रण के कारण ऐसी कल्पपूण बौद्धिकता अग्रसर हो रही थी जिसे यदि अफलातून जीवित होता और देखता तो चक्करा जाता कि मेरे सनकी सिद्धान्तो का क्या परिणाम हो रहा है। दूसरी शती के शान्त प्रतिष्ठित लोगो के पश्चात तीसरी शती में कष्ट और पीडा का समय आया जब किसान दासो ने अपने मालिको का विनाश किया। चौथी शती आते-आते सारी व्यवस्था उलट गयी और जो किसी समय रोमन नगर-पालिकाओ के स्वतन्त्र

शासक थे, और बच रहे थे, जजीरो में बँधे थे । आज जो जजीरा में 'दासा' के समान बँधे थे उन्हें देखकर कोई यह नही कह सकता था कि ये अफलातून के प्रतिष्ठित शासको के वशज हैं ।

आज हम यदि इस प्रकार के यूटोपिया को देखें तो यही विशेषताएँ मिलेंगी । आल्डस हक्सल ने 'ब्रेव न्यू वल्र्ड' को व्यग्यात्मक शैली में लिखा है । उनके लिखने का अभिप्राय यह था कि इस व्यवस्था से लोगो को घृणा हो, आकर्षण नही । उन्होने यह बात मानकर पुस्तक आरम्भ की कि वतमान उद्योग वाद (इडस्ट्रियलिज्म) तभी चल सकता है जब लोग प्राकृतिक (नेचुरल) वर्गों में विभक्त कर दिये जायें । जीव विज्ञान तथा मनोवैज्ञानिक कौशल से यह क्रिया पूरी की जाती है । परिणामस्वरूप अल्फा बीटा गामा डेल्टा एपसाइलन नाम की जातियों में समाज बँट जाता है । ये जातियाँ भी उसी भाँति की है जसी अफलातून के अनुसार अथवा उसमानलिया के अनुसार बनी थी । अन्तर केवल इतना था कि हक्सल की वणमाला के अनुसार जातियाँ कुत्ते, घोडे, मनुष्य के रूप में विभिन्न जन्तु बनाये जाते है जो खानाबदोशी समाज में मनुष्य के सहायक होतें है । एपसाइलन जिनके सुपुर्द गन्दे काम करना है उससे प्रसन्न है और दूसरा काम नही करना चाहते । प्रजनन की प्रयोगशाला में उन्हें वसा ही पदा किया और बनाया गया है । श्री वेल्स की पुस्तक 'द फस्ट मैन इन द मून' में एसा समाज चित्रित किया गया है । प्रत्येक नागरिक को अपनी परिस्थिति ज्ञात है । वह उसी स्थिति में उत्पन्न होता है और पूण प्रशिक्षण और अनुशासन, शिक्षा तथा शल्य चिकित्सा द्वारा उसे ऐसा बना दिया जाता है कि उस स्थिति के अतिरिक्त वह न दूसरी बात जानता है, न सोच सकता है ।

एक दूसरी दृष्टि से सेमुएल बटलर का 'अरहोन' मनोरजक और विलक्षतापूण है । उनका वणन करने वाले आगमन के चार सौ साल पहले अरहोनियनो ने समझ लिया था कि नये यान्त्रिक उपकरणो द्वारा हम दास बनाये जा रहे है । मनुष्य तथा यन्त्रो के मेल से एक अव मानव (सब ह्यूमन) प्राणी का निर्माण हो रहा है जिस प्रकार एसकिमो का मानव-नौका अथवा खानाबदोशो का मानव-अश्व है । इसलिए उन्होने मशीनो को नष्ट कर डाला और अपने समाज को उसी जगह स्थिर कर दिया जहा वह औद्योगिक क्रान्ति के आरम्भ के पहले था ।

नोट भाषा के वाहक सागर तथा स्टेप

खानाबदोशो के वणन के पहले हमने कहा था कि जसे सागर बिना जोत के खेत के समान है उसी प्रकार स्टेप में किसी स्थिर मनुष्य के लिए स्थान नही है । खेती की भूमि की तुलना में इसमें यात्रा तथा यातायात की अधिक सुविधा होती है । दोनो की समानता भाषा वाहक के रूप में स्पष्ट हो जाती है । यह सभी जानते हैं कि समुद्री जातिया जिस तट पर अथवा जिस सागर में जाती है और जहा वे निवास बना लेती है वहाँ अपनी भाषा भी ले जाती है । पुराने यूनानी नाविको ने भूमध्य सागर के चारो ओर तट पर यूनानी भाषा प्रसारित कर दी थी । मलय के नाविको ने मलय परिवार की भाषाओ को एक ओर मडेगास्कर और दूसरी ओर फिलिपीन द्वीप समूह तक फला दिया था । प्रशान्त सागर में पालिनेशियाई भाषाएँ फिजी से ईस्टर द्वीप और न्यूज़ीलड से हवाई तक आज भी समान रूप से बोली जाती हैं यद्यपि बहुत काल बीता जब पालिनेशियाई नौकाओ में बठकर इस महान सागर के आरपार आया जाया करते थे । यह भी देखने की बात है कि इगलैंड का सागरो पर शासन है इसी कारण ससार भर में अंग्रेजी भाषा का प्रचार है ।

इसी प्रकार स्टेप के चारों ओर उपजाऊ देशों में खानाबदोशों के आवागमन के कारण चार भाषाओं का प्रसार हुआ है। भौगोलिक दृष्टि से यह प्रमाणित हो जाता है। वे चार भाषाएँ हैं—बबर, अरबी, तुर्की तथा इंडोयूरोपियन।

बबर भाषाएँ आज सहारा के खानाबदोश और सहारा के उत्तरी तथा दक्षिणी तट की स्थावर जातियाँ बोलती हैं। स्पष्ट है कि प्राचीन काल में मरुभूमि के खानाबदोश इन प्रदेशों में घुसे थे जहाँ बबर भाषा के उत्तरी और दक्षिणी रूपों का व्यवहार होता है।

इसी प्रकार अरबी आज अरब स्टेप के उत्तरी तट और सीरिया और इराक में ही नहीं बोली जाती, उसके दक्षिणी तट हद्रामाट और यमन तथा पश्चिमी किनारे नील की घाटी में भी बोली जाती है। नील की घाटी से और भी पश्चिम बबर प्रदेश में वह चली गयी है और आज वह अतलान्तक के उत्तरी अफ्रीकी तट पर और चड झील के उत्तरी तट पर बोली जाती है।

तुर्की यूरेशियाई स्टेप के विभिन्न तटों पर फैली है और मध्य एशिया में कैसपियन सागर के पूर्वी तट से साव नार तक और ईरानी पठार के उत्तरी कगार से अल्ताई पवत के पश्चिमी ओर तक किसी न किसी रूप में बोली जाती है।

तुर्की परिवार की भाषाओं के इस विभाजन से इंडोयूरोपियन भाषाओं के वर्तमान विभाजन का कारण मिलता है। यह भाषा दो भिन्न भौगोलिक वर्गों में बँट गयी है। एक यूरोप में रह गयी और दूसरी ईरान तथा भारत में। इस इंडो यूरोपियन भाषा का मानचित्र हमें तब समझ में आ जायेगा यदि हम इस बात को मान लें कि इसके पहले कि तुर्की भाषाओं के प्रसारकों ने वहाँ अपना निवास बनाया, इंडोयूरोपियन परिवार की भाषाओं का प्रसार स्टेप के उन खानाबदोशों ने किया जो यूरेशियाई स्टेप पर बस गये थे। यूरोप और ईरान दोनों के किनारे यूरेशियाई स्टेप हैं और इसी जल विहीन मार्गों द्वारा ये भाषाएँ फैली हैं। पहले के उदाहरणों और इनमें अंतर इतना ही है कि इन भाषाओं का अब वहाँ निशान नहीं है जहाँ किसी समय इनका अस्तित्व था।

१० सभ्यताओ के विकास की प्रकृति

(१) दो भ्रामक सकेत

जो पयवेक्षण हमने किया, उससे पता चला है कि सबसे अधिक प्रेरणा देन वाली चुनौती कठोरतम और सुगमतम क बीच की चुनौती होती है । चुनौती में यदि तीव्रता न रही तो प्रेरणा नही मिलेगी, यदि चुनौती बहुत कठोर रही तो मन को ध्वस्त कर देगी । किन्तु वह चुनौती कैसी होगी जिसकी तीव्रता केवल इतनी हो कि मनुष्य सामना कर सके । पहली दृष्टि में तो एसा जान पडता है इसी प्रकार की चुनौती स सबसे अधिक स्फूर्ति मिलती है और उसके उदाहरण पोलिनेशियाइयो, एसकिमो खानाबदोशो उसमानलियो तथा स्पार्टना में मिलत ह । हमने देखा है कि इस प्रकार की चुनौती से इनमें महान् शक्ति का प्रादुर्भाव हुआ है । दूसरे अध्याय म हमने यह भी देखा कि इन लोगो को इसमे दण्ड भी मिला कि इनकी सभ्यता अविकसित रह गयी । इस कारण जब हम और ध्यान स दखत ह तब हमें यह पता चलता है कि चुनौती की अधिकतम तीव्रता हम उस नही मान सकत जिसमें केवल उसका सामना ही कर लिया जाय अपितु चुनौती में ऐसा भी बल होना चाहिए कि प्रेरणा स्थगित न हो जाय आग भी बढती रह । एक सघष के बाद एक कदम और आगे बढे । एक समस्या का हल करने क बाद दूसरी समस्या उपस्थित हो और उसका हल हो । यिन से याग की ओर प्रगति होती रहे । कवल ऐसी गति जो एक आन्दोलन के समाप्त करके सन्तुलन उपस्थित कर दे पर्याप्त नही है, उत्पत्ति के साथ विकास भी होना चाहिए । यह गति सदा लय के रूप में होनी चाहिए । जिस समाज को चुनौती मिल वह सामना करे, सन्तुलन स्थापित करे सन्तुलन बिगड फिर नयी चुनौती आय, फिर उसका सामना हो, सन्तुलन हो, सन्तुलन बिगड और चुनौती आये, अनन्त काल तक एसा ही होता रहे ।

इस प्रकार के अ सन्तुलना की श्रेणी हमें हलनी सभ्यता में उसकी उत्पत्ति से ई० पू० पाँचवी शती तक में, जब उसकी चरम सीमा थी, मिलती है ।

नवीन हलनी सभ्यता को पहली चुनौती अव्यवस्था और अधकार की थी । मिनोई समाज के विघटन का परिणाम केवल सामाजिक मलबा था जिनमें बच-खुचे मिनोई और बषरवार क एकियाई और डोरियन थे । क्या पुरानी सभ्यता नय बबरो क तूफानी आक्रमणो में बह जायगी ? क्या एकियाई मदानो पर उनक चारो ओर के पहाडो का शासन हो जायगा ? क्या मदान के शान्ति प्रिय किसानो को पहाडो के लुटेरो, और डाकुओ की दया पर जाना होगा ?

पहली चुनौती के सामना में विजय हुई । यह निश्चित हुआ कि यूनान नगरो का ससार होगा, ग्रामो का नहीं । यहाँ खेती की व्यवस्था होगी चराई की नहो, व्यवस्था का दौर होगा दुर्व्यवस्था का नहा । किन्तु पहली चुनौती का सफलता स हो उन्हें दूसरी चुनौती का सामना करना पडा । विजय के बाद शान्तिपूर्ण खेती आरम्भ हुई मदानो में खेती स जनसख्या बढी,

जनसख्या का यह वेग (मोमेंटम) कम नही हुआ और जनसख्या इतनी बढ गयी कि हेलेनी प्रदेश सँभालने में समय नही हो सका। पहली चुनौती की सफलता ने दूसरी जनसख्या वाली चुनौती का भी उसी सफलता से सामना किया जसे पहली का।

अनि जनसख्या की समस्या के सुलझाने के कई उपाय निकाले गये। सबसे सरल और स्पष्ट उपाय का पहले प्रयोग किया गया। उससे क्रमागत ह्रास होने लगा। उसके पश्चात् एक कठिन और असाधारण प्रयोग किया गया और इस बार समस्या सुलझ गयी।

पहली बार जो ढग अपनाया गया वे वही सस्थाएँ तथा तकनीक थी जिसका प्रयोग यूनान के मदान में रहने वालो ने अपने पडोसी पवतीय लोगा पर किया था जिससे उनका शासन पवतीय लोगा पर स्थापित हो और सागर पार नये प्रदेशा पर विजय प्राप्त हो। सशस्त्र यूनानी सनिका के व्यूह और नगर राज्य के यन्त्र की सहायता से हलेनी नेताआ के गिरोह ने इटली तथा कानेस क बबरो को हराकर इटली के दक्षिण में महान् यूनान की स्थापना की। सिसिली में बबर सिकेला को हराकर नवीन पेलोपोनेस का निर्माण किया। सीवियना का पराजित करके साइरनेका में नये हेलेनी पन्टापोलिस (पाच नगरा का एक समूह) बनाया, और बवर थ्रेसियना का पराजित करके एजियन सागर के उत्तर तट पर कालसिडिस का स्थापना की। परन्तु इस विजय के परिणाम स्वरूप ही विजेता को नयी चुनौती का सामना करना पडा। क्याकि इन्हाने जो कुछ किया था वह भूमध्यसागरीय देशा के लिए स्वय एक चुनौती थी और अन्त में अ-यूनानी लोगा ने इस यूनानी विस्तार को रोक दिया। उन्हाने कुछ ता हेलेनी अस्त्र शस्त्र तथा उन्हा की कला लेकर उनका आक्रमण रोका और कुछ ने अपनी शक्ति को सचय किया जिसका सामना हेलेनी नहा कर सके। इस प्रकार हेलेनी विस्तार जो ई० पू० आठवी शती में आरम्भ हुआ था छठी शती में स्थगित हा गया। फिर भी अति जनसख्या की चुनौती हलेनी समाज में रह गयी।

इतिहास की इस विपत्ति में एथेन्स ने नयी खोज का। एथेन्स ने जो यूनान का शिक्षक बना था, विस्तार की प्रणाली छोडकर ज्ञान तथा शिक्षण से हेलेनी समाज को, गहनता की ओर ले चला। इस महत्वपूर्ण परिवतन के सम्बन्ध में इस अध्याय में आगे बताया जायगा। इस एथनी सघष के बारे में पहले (पृष्ठ ४) में कहा जा चुका है उसे दोहराने की आवश्यकता नही है।

वद्धि की इस लय का वाल्ट ह्विटमन ने समझा था। उसने लिखा था वस्तुओ के मूल में यह निहित है कि किसी सफलता में, चाहे वह कसी भी हा, आगे और भी सघष की आवश्यकता होती है। यह भाव निराशापूण भाषा में विक्टोरियन काल के कवि विलियम मोरिस ने प्रकट किया जब उसने लिखा, म विचार करता हूँ कि किस प्रकार लोग लडत ह और पराजित होते ह। और जिस बात के लिए लोग लडत ह वह उनके पराजय के बावजूद प्राप्त होती है। जब वह प्राप्त होती है तब पता चलता है कि जिस बात के लिए लोग लड रह थे वह यह नही है। दूसरे लोग दूसरे नाम स उसी बात के लिए फिर लडते ह।'

सम्यताआ का ऐसी सजीवता द्वारा विकास होता है जा चुनौती से सघष और सघष से फिर चुनौती की आर ले जाता है। इसके बाहरी और आन्तरिक दोना रूप होते हैं। ब्रह्माण्ड में

(मैक्रोकाज्म) में जो विकास होता है वह प्रधानतः बाहरी विजय या प्राप्ति द्वारा होता है, पृथ्वी (माइक्रोकाज्म) पर का विकास प्रधानतः आत्मनिर्णय अथवा आत्माभिव्यक्ति द्वारा होता है। इन दोनों अभिव्यक्तियों में सजीवता की प्रगति का सिद्धान्त सम्भवतः मिलता है। हम इस दृष्टि से दोनों प्रकार की अभिव्यक्तियों की परीक्षा करेंगे।

पहले बाहरी परिस्थिति का क्रमागत विजय के विचार के लिए, सरलता के लिए, हम इस परिस्थिति को दो भागों में विभाजित करेंगे। एक तो मानवी परिस्थिति। प्रत्येक मानव समाज को दूसरे मानव समाज के सम्पर्क में आना पड़ता है और ऐसे भौतिक वातावरण का सामना करना पड़ता है जो मानव परिस्थिति से भिन्न है। मानवी परिस्थिति के क्रमागत विजय का अर्थ होगा कि समाज अपनी भौगोलिक सीमा को बढ़ाता जाय, भौगोलिक परिस्थिति पर विजय का अर्थ होगा कि समाज तकनीक में उन्नति करता रहे। हम पहले प्रथम बात पर अर्थात् भौगोलिक विस्तार पर विचार करेंगे और देखेंगे कि सभ्यता के विकास की परीक्षा के लिए कहाँ तक यह उचित कसौटी है।

हमारे पाठक हमसे इस बात पर झगड़ा नहीं करेंगे यदि बिना बहुत प्रमाणों के और तर्क के हम यह कहें कि भौगोलिक विस्तार सभ्यता के वास्तविक विकास का माप नहीं है कभी-कभी हम देखते हैं कि भौगोलिक विस्तार और सभ्यता के विकास का समय एक ही होता है जैसा दूसरे सन्दर्भ में हेलनी विस्तार के सम्बन्ध में बताया गया है। कभी-कभी भौगोलिक विस्तार और वास्तविक पतन साथ-साथ होते हैं और विघटन भी साथ-साथ होता है। सार्वभौम राज्य के पतन और विघटन के लिए भौगोलिक विस्तार और संकट काल दो कदम हैं। इसका कारण ढूँढ़ने के लिए दूर नहीं जाना होगा। संकट-काल से सैन्यवाद का जन्म होता है जो मनुष्य की आत्मा को पारस्परिक विनाश की ओर ले जाता है और सबसे सफल सैन्यवादी साधारणतः सार्वभौम राज्य का संस्थापक होता है। भौगोलिक विस्तार इस सैन्यवाद का परिणाम होता है। यह उस समय होता है जब वीर लोग अपने ही समाज के बीच के प्रतिद्वन्द्वियों पर आक्रमण करना छोड़कर पड़ोस के समाज पर आक्रमण करते हैं।

इस अध्याय में हम आगे देखेंगे कि सैन्यवाद विगत चार पाँच हजार वर्षों में सभ्यता के विनाश का सबसे साधारण कारण रहा है। आज तक के इतिहास में ऐसा ही मिलता है कि दस-बारह सभ्यताओं का पतन इसी प्रकार हुआ है। सैन्यवाद के कारण समाज के स्थानीय राज्य (लोकल स्टेट्स) एक दूसरे से टकरा कर आपसी युद्ध में लड़कर नष्ट हो जाते हैं। आत्म विनाश की इस प्रक्रिया में सारा सामाजिक ढाँचा इन देवताओं (मोलाक[1]) के लिए ईंधन का काम करता है। युद्ध की एक कला की प्रगति शान्ति की विभिन्न कलाओं का विनाश करके होता है। इसके पहले कि सैन्यवाद के सब समर्थक नष्ट हो जायें इस हत्या की कला में वे इतने निपुण हो जाते हैं कि यदि वे पारस्परिक विनाश से क्षण भर के लिए रुक जायें और दूसरे समाज पर आक्रमण करें तो उन सबका विनाश कर डालते हैं।

१ कनअरनिया का यह देवता जिसके आगे बच्चों की बलि दी जाती थी।—अनुवादक

हेलेनी इतिहास के अध्ययन से ऐसा सकेत मिल सकता है कि जिस परिणाम को हमने अस्वीकार कर दिया है उसी का विपरीत ठीक है। हम यह देख चुके हैं कि जब हेलेनी समाज को अति-जनसख्या की चुनौती मिली तब उसने भौगोलिक विस्तार द्वारा उसका सामना किया और दा सौ साल बाद। सम्भवत (७५०–५५० ई०पू०) उसके चारा ओर की अ-हलेनी शक्तिया ने इस विस्तार को रोक दिया। इसके पश्चात हेलेनी समाज रक्षात्मक (डिफेंसिव) हो गया। पूरब की ओर इसके घर में ही परशियना ने और पश्चिम से नये विजित प्रदेश में कार्येजिनियना ने आक्रमण कर दिया। इस काल में जैसा कि थ्यूसिडाइडस ने देखा था, 'यूनान चारा ओर से बहुत दिना तक दबाया जा रहा था।' और हेराडाटस ने देखा था कि, यूनान पर इतनी अधिक विपत्ति आयी जितनी इसके पहले बीस पीढियो में नही आयी थी।' आज का पाठक यह नही अनुभव कर सकता कि इन दो यूनानी इतिहासकारो ने जिन विपादपूर्ण वाक्यो में इस काल का वणन किया है वही बाद की पीढी के लिए हेलेनी सभ्यता का मुख्य काल था। यह वही युग था जब हेलेनी प्रतिभा ने सामाजिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नयी बातो का निर्माण किया जिनके ही कारण हलेनीवाद अमर है। हेरोडोटस और थ्यूसिडाइडस ने हलेनी सजन के इस युग को इस दृष्टि स इसलिए देखा कि यूनान का भौगोलिक विस्तार रुक गया था। किन्तु इस बात पर काई विवाद नही हो सकता कि हेलेनी सभ्यता मे इतनी सजीवता न कभी पहले थी, न बाद में हुई। और यदि ये इतिहासकार किसी प्रकार ऐसी असाधारण जीवनी पा जात, इस सजीवता का परिणाम देख पाते तो वह देखते एथेनो-पालिपनेशियाई युद्ध के अवराध के पश्चात् ही नवीन रूप से भौगोलिक विस्तार आरम्भ हुआ। यह विस्तार सिकन्दर द्वारा स्थल पर आरम्भ हुआ जा यूनान के सागरी विस्तार से कही बडा था। सिकन्दर ने जब हेलेस पार किया उसके बाद दो शतिया में हेलेनीवाद एशिया और नील नदी की घाटी में फल गया और सीरियाई, मिस्री, बैबिलोनी, भारतीय सभी सभ्यताआ पर, जा सामने आयी, विजय प्राप्त की। उसके दो सौ साल बाद रोमना की छन छाया में ये यूरोप तथा उत्तर पश्चिम अफ्रीका की बबर पष्ठभूमि में फलते जा रह थे। और ये ही वे शक्तिया थी जब हलेनी सभ्यता का विघटन हो रहा था।

सभी सभ्यताओ के इतिहास से यह उदाहरण मिलता है कि भौगोलिक विस्तार के साथ साथ गुणो का ह्रास होता है। हम केवल दो उदाहरण लेंगे।

मिनोई सस्कृति का सबसे अधिक विस्तार उस समय हुआ जिसे हमारे पुरातत्त्ववेत्ता 'अन्तिम (तीसरी मिनाई) कहते ह। ऐसा युग उसम पहले नही आया जब १४२५ ई० पू० के लगभग कनासस का घेरा हुआ था। अथात् उस सकट काल के बाद ही जब मिनोस के सागर तन्त्र का सावभौम राज्य नष्ट हा गया और अन्तर्काल था, जब मिनोई समाज का अन्त हा रहा था। जितनी वस्तुएँ इस अन्तिम मिनाई काल की, तीसरी अवस्था की, मिलती हैं उन सब पर पतन का प्रमाण अकित है और उन्ही से यह भी पता लगता है कि मिनोई वस्तुएँ विस्तार से फली हुई थी। एसा जान पडता है कि विस्तार का मूल्य गुणा के ह्रास में चुकाना पडा।

सुदूर पूव समाज के पूवज चीनी (सिनिक) समाज का भी वही हाल है। चीनी सभ्यता के विकास के समय इसका विस्तार हागहा नदी के आगे नही था। चीनी सकट काल में जब विभिन्न राज्य एक दूसरे स लड रह थे जैसा कि चीनी कहते हैं चीनी जगत् दक्षिण में याग्त्सी बेसिन तक और दूसरी ओर पीहो के मैदान तक फल गया था। चीनी सावभौम राज्य के प्रतिष्ठापक सिन

ची ह्वागटी ने अपनी राजनीतिक सीमा महान् दीवार (ग्रेट वाल) तक बनायी थी। इसके पश्चात् हैन परिवार ने आकर सिन शी की सीमा का और दक्षिण तक बढाया। इस प्रकार चीनी इतिहास में भौगोलिक विस्तार तथा सामाजिक विघटन समकालीन है।

अन्त में हम अपनी पश्चिमी सभ्यता के अपूर्ण इतिहास की ओर दृष्टि डालें और उसके उस प्राचीन विस्तार की ओर ध्यान दें जो अविकसित सुदूर पश्चिमी और स्कण्डिनवियाई सभ्यताओं को पराजित करके हुआ था, तथा जो उत्तरी यूरोपीय बर्बरों पर विजय प्राप्त करके राइन से विसचूला तक विस्तृत था, जो यूरेशियाई खानाबदोशों के हंगेरियन अग्रिम गारद (एडवांस गार्ड) को हराकर आल्प्स से कारपेथियन तक फैला और जो भूमध्यसागर के बेसिन के कोने कोने में जिब्राल्टर के जलडमरूमध्य से नील के तथा डान के मुहाने तक विस्तृत था और अल्पकालीन विजय तथा व्यापारिक विस्तार की पताका फहराता रहा जिसका उन्होंने 'द क्रूसेड' का सरल नाम रखा था। इन सबके सम्बन्ध में हम सहमत होंगे कि प्राचीन यूनानी सागरी विस्तार के समान इन भौगोलिक विस्तारों के साथ अथवा उसके बाद सभ्यता की वास्तविक उन्नति नहीं रुकी। किन्तु जब हम इस युग में इस विश्वव्यापी विस्तार की ओर ध्यान देते हैं तब हमें रुकना पड़ता है और हम आश्चर्य में पड़ जाते हैं। इस प्रश्न का उत्तर, हमारी पीढ़ी में कोई बुद्धिमान् मनुष्य सन्तोषजनक नहीं दे सकता।

अब हम अपने विषय के दूसरे विभाजन को देखेंगे कि यदि भौतिक परिस्थिति पर उन्नत तकनीकी द्वारा क्रमशः विजय प्राप्त की जाय तो क्या सभ्यता के विकास का वास्तविक मापदण्ड मिलता है? क्या तकनीक की उन्नति में तथा सामाजिक उन्नति और विकास में कोई सम्बन्ध है?

अद्यतन पुरातत्त्वविदों ने जो वर्गीकरण किया है उससे इस प्रकार का सम्बन्ध सिद्ध मान लिया जाता है। यह मान लिया जाता है कि क्रमशः प्रत्येक व्यवस्था में तकनीकी उन्नति सभ्यता के विकास की सूचक है। इस विचारधारा में मानवी उन्नति का युगों का क्रम बताया गया है और उनका तकनीकी नाम भी रखा गया है। पुरापाषाणिक युग (पेलिआलिथिक एज) नव पाषाण युग (नियोलिथिक एज), ताम्र पाषाण युग (काल्कालिथिक एज), ताम्र युग कांस्य युग लौह युग और इसमें हम यन्त्र-युग जोड़ सकते हैं जिसमें रहने का हमें सौभाग्य प्राप्त है। यद्यपि इस वर्गीकरण का बहुत प्रचलन है, हमें ध्यान से इस बात की परीक्षा करनी होगी कि क्या यह सत्य है कि प्रत्येक युग सभ्यता के विकास की अवस्था का द्योतक है। आनुभविक परीक्षा के बिना ही अनेक कारणों से प्रागनुभव (आ प्रायोरी) से हम कह सकते हैं कि इसमें सन्देह है।

सन्देह का पहला कारण उसकी लोकप्रियता है क्योंकि वह ऐसे समाज की ओर हमारे विचारों को ले जाता जिसके सम्बन्ध में आधुनिक तकनीकी सफलताओं के कारण हमें मोह हो गया है और इस कारण एक धारणा बन गयी है। यह लोकप्रियता उस तथ्य का उदाहरण है जिसका जिक्र हमने अपने अध्ययन के पहले अध्याय में किया था कि प्रत्येक पीढ़ी प्राचीन इतिहास के सम्बन्ध में जो धारणा बनाती है वह उसके अपने अल्पकालिक विचारों की व्यवस्था के अनुसार होता है।

इस तकनीकी वर्गीकरण को मन्द दृष्टि से देखने का एक दूसरा कारण यह है कि यह उस प्रवृत्ति का भी स्पष्ट उदाहरण है कि विद्यार्थी उस सामग्री पर ही निर्भर हो जाता है जो संयोग से उसके हाथों पड़ जाती है। वैज्ञानिक दृष्टि से यह संयोग मात्र है कि 'प्रागैतिहासिक' मानव जिन यन्त्रों

का प्रयोग करता था वे आज प्राप्य हा और उसकी मनोवज्ञानिक कलाएँ उसके विचार और उसकी सस्थाएँ नष्ट हो गयी हा। वास्तविक बात तो यह है कि जब मानसिक क्रियाएँ काम करती रहती हैं तब मनुष्य के जीवन में भौतिक साधना से अधिक उनका योगदान होता है। प्रयोग में लायी हुई भौतिक वस्तुआ का अवशिष्ट रह जाता है और मानसिक धारणाआ के प्रयोग का चिह्न नही रह जाता और पुरातत्त्ववेत्ता मनुष्य उन अवशिष्ट चिह्ना का प्रयाग करता है और उससे मानव इतिहास का ज्ञान प्राप्त करना चाहता है ता पुरातत्त्ववेत्ता मनुष्य (होमो सेपियन्स) को केवल निर्माता के रूप में ही देखता है। हम प्रमाणा का अध्ययन करेंगे तो उस समय के तकनीकी विकास के उदाहरण पायेंगे जब सभ्यता स्थिर थी या अवनति की ओर जा रही थी और हमें इसके विपरीत भी उदाहरण मिलेंगे जब तकनीकी विकास स्थिर रहता है और सभ्यता की उन्नति हाती है या अवनति।

उदाहरण के लिए सभी अविकसित सभ्यताआ ने उच्च तकनीकी उन्नति की है। पालिने-शियाइया ने नौ चालन मे विशिष्टता प्राप्त की, एसकिमो ने मछुआ बनने में, स्पाटना ने सनिकता में, खानाबदोशा ने घोडा को वश करने में, और उसमानलियो ने मनुष्या को साधने में। ये सभी उदाहरण ऐसे ह जहा सभ्यता तो अविकसित रह गयी और तकनीक उन्नत हुई।

एक उदाहरण उस सभ्यता का जिसका विकास अवरुद्ध हो गया और तकनीक विकसित हुई यूरोप के अपर पुरा पाषाणिक युग और निचले नव पाषाण-युग की तुलना करने स प्राप्त होता है। क्योंकि वह पहले का उत्तराधिकारी है। अपर पुरापाषाणिक युग वाला का अनगढ यन्त्रा से ही सन्तोष हो गया था। किन्तु उनमें कलात्मक आत्मबोध था और उन्हाने उसकी अभिव्यक्ति चित्रा में की थी। पुरा पाषाणिक युग वाला ने, जो गुफाओ की दीवारा पर कोयले से पशुओ के चित्र बनाये ह, उन्हें देखकर आश्चर्य हाता है। निचले नव पाषाण-युग के समाज ने अपने अस्त्र शस्त्रा को माज और घिसकर बहुत तीव्र बनाया और पुरा पाषाणिक युग के मानव के विरुद्ध उसका प्रयाग किया जिसम वह चित्रकार मानव पराजित हा गया और वह निमाता मानव (हामो फेबर) विजयी हुआ। इस परिवतन से स्पष्ट है कि तकनीकी विकास ता हुआ किन्तु सभ्यता अवनत ही रही, क्योंकि अपर पुरापाषाणिक मानव की कला लुप्त हो गयी।

और भी। माया सभ्यता तकनीकी दृष्टि से प्रस्तर युग स आगे नही बढी जब मेक्सिको और यूकेटी सभ्यताआ ने स्पेनी विजय के पाच सौ साल पहले विभिन्न धातुआ के प्रयोग की जानकारी प्राप्त कर ली थी। किन्तु इसमें किसी प्रकार का सन्देह नही है कि माया समाज की सम्पन्नता इन दोना समाजा की सभ्यताआ से जो केवल दूसरी श्रेणी की थी, कही अधिक विकसित थी।

अन्तिम हेलेनी इतिहासकार सिसेरिया का प्रोकोपियस सम्राट जसटीनियन के उन युद्धा के इतिहास की भूमिका में, जिन युद्धो के कारण हलेनी समाज का विनाश आरम्भ हुआ, लिखता है कि मेरे नायक का जीवन उसके पूर्वजो से अधिक मनोरजक है क्योंकि उसके युग की सनिक तकनीक इसके पहले क युग के किसी भी सनिक तकनीक से अच्छी थी। वास्तव में यदि हेलेनी इतिहास की और बाता से उनके सनिक तकनीक को अलग कर दें तो आरम्भ स अन्त तक, सभ्यता के विकास से अवनति तक भी, हम तकनीक की उन्नति हा पायेंगे और हम यह भी देखेंगे कि तकनीक की उन्नति का हर कदम सभ्यता के लिए भयावह सिद्ध हुआ है।

पहले स्पार्टी व्यूह को लीजिए। पहली महत्त्वपूर्ण हेलेनी उन्नति, जिसका वर्णन मिलता है, वह है दूसरा स्पार्टी मेसेनियाई युद्ध जिसके परिणामस्वरूप स्पार्टा की सभ्यता असमय ही रुक गयी, दूसरा विशेष सुधार था हेलेनी पदल सेना को दो उग्र भागों में विभाजित करना, एक मसेडोनियाई जत्था और दूसरी एथेनी हल्की पैदल सेना। मसेडोनियाई जत्था एकहरे भाला के बजाय दोनो हाथो में दो भाला से लैस था। यह अपने पहले के स्पार्टी सेना से आक्रमण में अधिक भीषण था किन्तु साथ ही साथ बोझिल भी था और यदि एक बार पक्ति बिगड गयी तो पराजित होने की अधिक सम्भावना थी। यह युद्ध क्षेत्र में तभी जा सकता था जब इसके पार्श्व में रक्षा के लिए पल्टास्ट रहती थी जो विशेष प्रकार की हल्की पदल सेना (लाइट इफैंट्री) थी जिसे साधारण सेना से अलग निकाल कर विशेष ढग से छुट-पुट मुठभेड के लिए प्रशिक्षित किया जाता था। यह दूसरा सुधार सौ वर्षों के घमासान युद्ध का परिणाम था जो एथेनो पेलोपोनेसियाइ सग्रामो से आरम्भ हुआ और किरोनिया में (४३१–३३८ ई० पू०) थीबनो तथा एथीनियनो पर विजय प्राप्त करके समाप्त हुआ। हेलेनी सभ्यता का पहला पतन यह था। दूसरा महत्त्व का सुधार रोमनो ने किया था जब उन्होने अपनी सेना में हल्की पदल सेना तथा व्यूह के गुणो को ग्रहण कर लिया और उनके दोषो से सावधान हो गये। इस सेना के सनिक के पास दो फेंकने वाले भाले और एक तलवार रहती थी। रणक्षेत्र में ये दो तरगो के रूप में आक्रमण करते थे और तीसरी तरग पुराने व्यूह के ढग पर सज्जित रिजव में रहती थी। यह तीसरा सुधार उस नवीन भयकर युद्ध का परिणाम था जो २२० ई० पू० में हेनिबली लडाइयो से आरम्भ हुआ और १६८ ई० पू० मे तीसरे रोमानो मसेडोनियाई सग्राम स समाप्त हुआ। चौथा तथा अन्तिम सुधार रोमन सन्य दल में मरियस ने आरम्भ किया और सीज़र ने पूर्ण किया। यह एक शती के रोमन विप्लवो और घरेलू युद्धो का परिणाम था और जिसका अन्त रोमन साम्राज्य के रूप में हेलेनी सार्वभौम राज्य था। जसटीनियन का कवच सनिक, जो अस्त्र सज्जित घोडे पर अस्त्रो स सज्जित सवार के रूप में था और जिसे प्रोकापियस पाठको के सम्मुख हेलेनी सैनिक तकनीक के विशष सनिक के रूप में बताता है हेलेनी सनिक विकास की श्रेणी में कोई नयी वस्तु नही है। यह कवच सनिक हेलेनी समाज के पतनोन्मुख पीढी द्वारा ईरानी समकालीन विरोधियो का रूपान्तर था। इन ईरानी सैनिको की शक्ति की जानकारी रोम को तब हुई जब उन्होने ५५ ई० पू० में कहीं में क्रसस

पहले स्पार्टी व्यूह को लीजिए। पहली महत्त्वपूर्ण हेलेनी उन्नति, जिसका वर्णन मिलता है, यह है दूसरा स्पार्टी मसीनियाई युद्ध जिसके परिणामस्वरूप स्पार्टा की सभ्यता असमय ही रुक गयी, दूसरा विशेष सुधार था हेलेनी पैदल सेना का दो उप भागों में विभाजित करना, एक मसीडोनियाई जत्था और दूसरी एथेनी हल्की पैदल सेना। मसीडोनियाई जत्था एकहरे भाले के बजाय दोनों हाथों में दो भाले रखता था। यह अपने पहले के स्पार्टी सेना से आक्रमण में अधिक भीषण था किन्तु साथ ही साथ शामिल भी था और यदि एक बार पंक्ति बिगड़ गयी तो पराजित होने की अधिक सम्भावना थी। यह युद्ध क्षेत्र में तभी जा सकता था जब इसके पार्श्व में रक्षा के लिए पल्टास्ट रहती थी जो विशेष प्रकार की हल्की पैदल सेना (लाइट इन्फैन्ट्री) थी जिसे साधारण सेना से अलग निकाल कर विशेष ढंग से छिटपुट मुठभेड़ के लिए प्रशिक्षित किया जाता था। यह दूसरा सुधार सौ वर्षों के पमासान युद्ध का परिणाम था जो एथेन्स-पेलोपोनेसियाई संग्राम से आरम्भ हुआ और किरोनिया में (४३१–३३८ ई० पू०) थीब्स तथा एथेन्स पर विजय प्राप्त करके समाप्त हुआ। हेलेनी सभ्यता का पहला पतन यह था। दूसरा महत्त्व का सुधार रोमनों ने किया था जब उन्होंने अपनी सेना में हल्की पैदल सेना तथा व्यूह के गुणों को ग्रहण कर लिया और उनके दोषों से सावधान हो गये। इस सेना के सैनिक के पास दो फेंकने वाले भाले और एक तलवार रहती थी। रणक्षेत्र में वे दो तरंगों के रूप में आक्रमण करते थे और तीसरी तरंग पुराने व्यूह के ढंग पर सज्जित रिजर्व में रहती थी। यह तीसरा सुधार उस नवीन भयंकर युद्ध का परिणाम था जो २२० ई० पू० में हेनिबल्ली लड़ाइयों से आरम्भ हुआ और १६८ ई० पू० में तीसरे रोमानो-मसीडोनियाई संग्राम से समाप्त हुआ। चौथा तथा अन्तिम सुधार रोमन सैन्य दल में मेरियस ने आरम्भ किया और सीज़र ने पूर्ण किया। यह एक शती के रोमन विप्लवों और घरेलू युद्धों का परिणाम था और जिसका अन्त रोमन साम्राज्य के रूप में हेलेनी सार्वभौम राज्य था। जस्टीनियन का कवच सैनिक, जो अस्त्र सज्जित घोड़े पर अस्त्रों से सज्जित सवार के रूप में था और जिसे प्रोकोपियस पाठकों के सम्मुख हेलेनी सैनिक तकनीक के विशेष सैनिक के रूप में बताता है हेलेनी सैनिक विकास की श्रेणी में कोई नयी वस्तु नहीं है। यह कवच सैनिक हेलेनी समाज के पतनोन्मुख पीढ़ी द्वारा ईरानी समकालीन विरोधियों का रूपान्तर था। इन ईरानी सैनिकों की शक्ति की जानकारी रोम को तब हुई जब उन्होंने ५५ ई० पू० में कर्‍ही में क्रैसस को हराया था।

युद्ध की कला ही केवल वह तकनीक नहीं है जो समाज की सभ्यता से विपरीत चलती है। आइए, हम ऐसी कला को लें जो युद्ध की कला से बहुत दूर है। खेती की तकनीक शान्ति के समय की सर्वोच्च कला कही जाती है। यदि हम हेलेनी इतिहास को देखें तो पता चलेगा कि इस कला की उन्नति के साथ-साथ सभ्यता का ह्रास होता रहा है।

आरम्भ में ही हमें दूसरी कथा मिलती है। हेलेनी युद्ध कला का पहला सुधार उस समुदाय के विकास को अवरुद्ध करके हुआ जिस समाज ने उसका आविष्कार किया था। उसके साथ हलेनी कृषि में जो उन्नति हुई वह सुखदायी थी। जब सोलन की सलाह पर अटिका ने मिश्रित कृषि की व्यवस्था बन्द कर निर्यात के लिए विशिष्ट खेती आरम्भ की तकनीकी उन्नति हुई और साथ साथ एटिकी जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सजीवता और शक्ति का आरम्भ हो गया। किन्तु इस कहानी का दूसरा अध्याय दुखदायी है। इस तकनीक का दूसरा कदम यह हुआ कि दासों के

श्रम के बलपर अधिक मात्रा में उत्पादन होने लगा। यह काय पहले सिसिली के उपनिवेशिक समुदायो में आरम्भ हुआ और सम्भवत पहले पहल एग्रिजेटम में। क्योकि सिसिली वाले यूनानियो को निकट के बबर प्रदेशो में शराब और तेल का बढता हुआ बाजार मिला। यहाँ तकनीकी प्रगति के साथ भयकर सामाजिक बुराई उपस्थित हो गयी। क्योकि नयी खेती वाली दासता प्रथा घरवाली दासता प्रथा से अधिक दोषपूण थी। नतिक दृष्टि से तथा सख्या की भी दष्टि से यह दोष बडा था। व्यक्तित्वहीन और अमानुषिक तो था ही, बहुत बडी मात्रा में भी था। फैलते फैलते यह सिसिली के यूनानी समुदाय से दक्षिणी इटली के बहुत बडे क्षेत्र तक में फल गया। यह क्षेत्र हेनिबली युद्ध के कारण उजाड और परित्यक्त हो गया था। जहाँ-जहाँ यह प्रथा फैली धरती की उपज जो इसने बढायी जिससे पूजी वाला को लाभ हुआ, किन्तु धरती सामाजिक दष्टि से बजर हो गयी। क्योकि जहाँ-जहा दास खेती करने लगे किसाना को उन्होंने निकाल बाहर किया और उन्हें कगाल बना दिया जिस प्रकार खोटा सिक्का खरे सिक्के को बाजार से बाहर कर देता है। इसका सामाजिक परिणाम यह हुआ कि गाव निजन हो गये और नगरो में परापजीवी जनता का जम हुआ विशेषत रोम में। ग्राची से लेकर उसके बाद तक के कितने ही सुधारको ने रोमन ससार को इस दोष से मुक्त करना चाहा जो कृषि की तकनीकी प्रगति के कारण आ गया था किन्तु असफल रहे। कृषि दासता की प्रथा तब तक रही जब मुद्रा की आर्थिक व्यवस्था के बैठ जाने से वह अपने से नष्ट हो गयी। क्योकि इसी मुद्रा पर उसका लाभ निभर था। यह आर्थिक *विनाश उस साधारण सामाजिक विध्वस का एक अग था* जो ईसा की तीसरी शती के बाद आरम्भ हुआ। और विध्वस एक अश में उसी कृषि सम्बधी रोग का परिणाम था जो उसके पूव चार सौ सालो से रोमन समाज के शरीर को खाये चला जा रहा था। इस प्रकार इस सामाजिक कसर का अन्त उस समय हुआ जब वह शरीर समाप्त हो गया जिसमें कसर उत्पन्न हुआ था।

इगलड में सूती कपडा के बनाने की तकनीक में जो उन्नति हुई उसके कारण अमरीकी सघ में रुई वाले प्रदेशो में दासो की प्रथा का भी विकास हुआ। यह भी पहले ही समान उदाहरण है। अमरीकी गृह-युद्ध ने जहा तक दासो की बात थी उस कसर को तो समाप्त किया किन्तु उससे वह दोष दूर नही हो सका जो स्वतत्र हुए नेग्रो के उस अमरीकी समाज के बीच आ जाने के कारण उत्पन्न हो गया था जो यूरोपीय वशज थे।

तकनीकी उन्नति और सभ्यता की प्रगति का सह-सम्बध (को रिलेशन) नही रहा है। यह बात उन सब उदाहरणा से स्पष्ट है जहा तकनीक की तो उन्नति हो गयी किन्तु सभ्यता स्थिर रही या पुरोगामी हो गयी। यही बात उन अवस्थाओ में भी हुई जहा तकनीक तो स्थिर रही और सभ्यता या तो विकसित होती रही या पीछे जाती रही।

उदाहरण के लिए यूरोप में अतिम तथा अपर पुरापाषाणिक युग में मानव ने अच्छी प्रगति की।

"अपर पुरापाषाणिक युग की सस्कृति चौथे हिमनदीय (ग्लेशियल) काल के अन्त में सम्बधित है। नानडरताल (नियानडरताल) मानव के अवशेष के स्थान पर हमें विभिन्न प्रकार के अवशेष मिलते ह जिनसे नानडरताल मानव से कोई सम्बध नही है। इसके विपरीत वे लगभग आधुनिक मानव के निकट दिखाइ पडते ह। जब हम यूरोप के इस युग के जीवाश्मा (फासिल) को देखते

पहले स्पार्टी व्यूह को लीजिए। पहली महत्त्वपूर्ण हल्की उन्नति, जिसका वर्णन मिलता है, वह है दूसरा स्पार्टी मसेनियाई युद्ध जिसके परिणामस्वरूप स्पार्टा की सभ्यता असमय ही रुक गयी, दूसरा विशेष सुधार था हेलेनी पदल सेना का दो उग्र भागों में विभाजित करना, एक मसडोनियाई जत्था और दूसरी एथेनी हल्की पदल सेना। मसडोनियाई जत्था एकहरे भाले के बजाय दोनों हाथों में दो भालों से लैस था। यह अपने पहले के स्पार्टी सेना से आक्रमण में अधिक भीषण था किन्तु साथ ही साथ नाजुक भी था और यदि एक बार पंक्ति बिगड़ गया तो पराजित होने की अधिक सम्भावना थी। यह युद्ध क्षेत्र में तभी जा सकता था जब इसके पार्श्व में रक्षा के लिए पल्टाफ्ट रहती थी, जो विशेष प्रकार की हल्की पदल सेना (लाइट इन्फैन्ट्री) थी जिसे साधारण सेना से अलग निकाल कर विशेष ढंग से छुटपुट मुठभेड़ के लिए प्रशिक्षित किया जाता था। यह दूसरा सुधार सौ वर्षों के घमासान युद्ध का परिणाम था जो एथेन्स-पलोपोननियाई संग्राम से आरम्भ हुआ और किरोनिया में (४३१–३३८ ई० पू०) थीबना तथा एथीनियना पर विजय प्राप्त करके समाप्त हुआ। हेलनी सभ्यता का पहला पतन यह था। दूसरा महत्त्व का सुधार रोमनों ने किया था जब उन्होंने अपनी सेना में हल्की पदल सेना तथा व्यूह के गुणों को ग्रहण कर लिया और उनके दोषों से सावधान हो गये। इस सेना के सैनिक के पास दो फेंकने वाले भाले और एक तलवार रहती थी। रणक्षेत्र में ये दो तरंगों के रूप में आक्रमण करते थे और तीसरी तरंग पुराने व्यूह के ढंग पर सज्जित रिजर्व में रहती थी। यह तीसरा सुधार उस नवीन भयंकर युद्ध का परिणाम था जो २२० ई० पू० में हेनिबली लड़ाइयों से आरम्भ हुआ और १६८ ई० पू० में तीसरे रोमानो-मसडोनियाई संग्राम से समाप्त हुआ। चौथा तथा अन्तिम सुधार रोमन सैन्य दल में मरियस ने आरम्भ किया और सीजर ने पूर्ण किया। यह एक शती के रोमन विप्लवों और घरेलू युद्धों का परिणाम था और जिसका अन्त रोमन साम्राज्य के रूप में हेलेनी सार्वभौम राज्य था। जस्टीनियन का कवच सैनिक, जो अस्त्र सज्जित घोड़े पर अस्त्रों से सज्जित सवार के रूप में था और जिसे प्रोकोपियस पाठकों के सम्मुख हेलेनी सैनिक तकनीक के विशेष सैनिक के रूप में बताता है, हेलनी सैनिक विकास की श्रेणी में कोई नयी वस्तु नहीं है। यह कवच सैनिक *हेलनी समाज के पतनोन्मुख पीढ़ी द्वारा ईरानी समकालीन विरोधियों का रूपान्तर था।* इन ईरानी सैनिकों की शक्ति की जानकारी रोम को तब हुई जब उन्होंने ५५ ई० पू० में कार्ही में क्रसस को हराया था।

युद्ध की कला ही केवल वह तकनीक नहीं है जो समाज की सभ्यता से विपरीत चलती है। आइए हम ऐसी कला को लें जो युद्ध की कला से बहुत दूर है। खेती की तकनीक शान्ति के समय की सर्वोच्च कला कही जाती है। यदि हम हेलेनी इतिहास को देखें तो पता चलेगा कि इस कला की उन्नति के साथ-साथ सभ्यता का ह्रास होता रहा है।

आरम्भ में ही हमें दूसरी कथा मिलती है। हेलेनी युद्ध कला का पहला सुधार उस समुदाय के विकास को अवरुद्ध करके हुआ जिस समाज ने उसका आविष्कार किया था। उसके साथ हेलेनी कृषि में जो उन्नति हुई वह सुखदायी थी। जब सोलन की सलाह पर अटिका ने मिश्रित कृषि की व्यवस्था बन्द कर निर्यात के लिए विशिष्ट खेती आरम्भ की तकनीकी उन्नति हुई और साथ साथ एटिकी जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सजीवता और शक्ति का आरम्भ हो गया। किन्तु इस कहानी का दूसरा अध्याय दुखदायी है। इस तकनीक का दूसरा कदम यह हुआ कि दासों के

पहले स्पार्टी व्यूह को लीजिए । पहली महत्वपूर्ण हेल्नी उन्नति, जिसका वर्णन मिलता है, यह है दूसरा स्पार्टी मसीनियाई युद्ध जिसके परिणामस्वरूप स्पार्टा की सभ्यता असमय ही रुक गयी, दूसरा विशेष सुधार था हेल्नी पैदल सेना को दो उप भागों में विभाजित करना, एक मसीडानियाई जत्था और दूसरी अपनी हल्की पैदल सेना । मसीडानियाई जत्था एकहरे भाले के बजाय दोनों हाथों में दो भालों से लैस था । यह अपने पहले के स्पार्टी सेना से आक्रमण में अधिक भीषण था किन्तु साथ ही साथ काहिल भी था और यदि एक बार पंक्ति बिगड़ गयी तो पराजित होने की अधिक सम्भावना थी । यह युद्ध क्षेत्र में तभी जा सकता था जब इसके पार्श्व में रक्षा के लिए पल्टास्ट रहती थी, जो विशेष प्रकार की हल्की पैदल सेना (लाइट इन्फैंट्री) थी जिसे साधारण सेना से अलग निकाल कर विशेष ढंग से छुट-पुट मुठभेड़ के लिए प्रशिक्षित किया जाता था। यह दूसरा सुधार सौ वर्षों के घमासान युद्ध का परिणाम था जो एथेन्स-पेलोपोनेशियाई संग्राम से आरम्भ हुआ और किरोनिया में (४३१–३३८ ई० पू०) थीब्स तथा एथेन्स पर विजय प्राप्त करके समाप्त हुआ । हेल्नी सभ्यता का पहला पतन यह था । दूसरा महत्त्व का सुधार रोमनों ने किया था जब उन्होंने अपनी सेना में हल्की पैदल सेना तथा व्यूह के गुणों को ग्रहण कर लिया और उनके दोषों से सावधान हो गये । इस सेना के सैनिक के पास दो फेंकने वाले भाले और एक तलवार रहती थी । रणक्षेत्र में ये दो तरंगों के रूप में आक्रमण करते थे और तीसरी तरंग पुराने व्यूह के ढंग पर सज्जित रिजर्व में रहती थी । यह तीसरा सुधार उस नवीन भयंकर युद्ध का परिणाम था जो २२० ई० पू० में हनिबली लड़ाइयों से आरम्भ हुआ और १६८ ई० पू० में तीसरे रोमानो मसीडोनियाई संग्राम से समाप्त हुआ। चौथा तथा अन्तिम सुधार रोमन सेना दल में मरियस ने आरम्भ किया और सीज़र ने पूर्ण किया । यह एक शती के रोमन विप्लवों और घरेलू युद्धों का परिणाम था और जिसका अन्त रोमन साम्राज्य के रूप में हेलेनी सार्वभौम राज्य था । जस्टीनियन का कवच सैनिक, जो अस्त्र सज्जित घोड़े पर अस्त्रों से सज्जित सवार के रूप में था और जिसे प्रोकोपियस पाठकों के सम्मुख हेलेनी सैनिक तकनीक के विशेष सैनिक के रूप में बताता है, हेलेनी सैनिक विकास की श्रेणी में कोई नयी वस्तु नहीं है । यह कवच सैनिक हेलेनी समाज के पतनोन्मुख पीढ़ी द्वारा ईरानी समकालीन विरोधियों का रूपान्तर था । इन ईरानी सैनिकों की शक्ति की जानकारी रोम को तब हुई जब उन्होंने ५५ ई० पू० में कर्ही में क्रसस को हराया था ।

युद्ध की कला ही केवल वह तकनीक नहीं है जो समाज की सभ्यता से विपरीत चलता है । आइए, हम ऐसी कला को लें जो युद्ध की कला से बहुत दूर है । खेती की तकनीक शान्ति के समय की सर्वोच्च कला कही जाती है । यदि हम हेलेनी इतिहास को देखें तो पता चलेगा कि इस कला की उन्नति के साथ-साथ सभ्यता का ह्रास होता रहा है ।

आरम्भ में ही हमें दूसरी कथा मिलती है । हेल्नी युद्ध कला का पहला सुधार उस समुदाय के विकास को अवरुद्ध करके हुआ जिस समाज ने उसका आविष्कार किया था । उसके साथ हेलेनी कृषि में जो उन्नति हुई वह सुखदायी थी । जब सोलन की सलाह पर अटिका ने मिश्रित कृषि की व्यवस्था बन्द कर निर्यात के लिए विशिष्ट खेती आरम्भ की तकनीकी उन्नति हुई और साथ साथ एटिकी जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सजीवता और शक्ति का आरम्भ हो गया । किन्तु इस कहानी का दूसरा अध्याय दुखदायी है । इस तकनीक का दूसरा कदम यह हुआ कि दासों के

पहले स्पार्टी व्यूह को लीजिए । पहली महत्त्वपूर्ण इसकी उन्नति, जिसका वर्णन मिलता है, वह है दूसरा स्पार्टी मसीनियाई युद्ध जिसके परिणामस्वरूप स्पार्टी की सभ्यता असमय ही रुक गयी, दूसरा विशेष सुधार था हेलेनी पदल सेना को दो उग्र भागों में विभाजित करना, एक मसडानियाई जत्था और दूसरी एथेनी हल्की पदल सेना । मसडानियाई जत्था एक हूर भाले के बजाय दोनों हाथों में दो भाले से लस था । यह अपने पहले के स्पार्टी सेना से आक्रमण में अधिक भीषण था किन्तु साथ ही साथ अकिल भी था और यदि एक बार पक्ति बिगड़ गयी तो पराजित होने की अधिक सम्भावना थी । यह युद्ध क्षेत्र में तभी जा सकता था जब इसके पार्श्व में रक्षा के लिए पल्टारट रहती थी, जो विशेष प्रकार की हल्की पदल सेना (लाइट इफन्ट्री) थी जिसे साधारण सेना से अलग निकाल कर विशेष ढंग से छुटपुट मुठभेड़ के लिए प्रशिक्षित किया जाता था । यह दूसरा सुधार सौ वर्षों के घमासान युद्ध का परिणाम था जो एथेना-पलोपोनेसियाई संग्राम से आरम्भ हुआ और किरोनिया में (४३१–३३८ ई० पू०) थीबनों तथा एथीनियनों पर विजय प्राप्त करके समाप्त हुआ । हेलनी सभ्यता का पहला पतन यह था । दूसरा महत्त्व का सुधार रोमनों ने किया था जब उन्होंने अपनी सेना में हल्की पदल सेना तथा व्यूह के गुणों को ग्रहण कर लिया और उनके दोषों से सावधान हो गये । इस सेना के सैनिक के पास दो फेंकने वाले भाले और एक तलवार रहती थी । रणक्षेत्र में ये दो तरंगों के रूप में आक्रमण करते थे और तीसरी तरंग पुराने व्यूह के ढंग पर सज्जित रिजर्व में रहती थी । यह तीसरा सुधार उस नवीन भयंकर युद्ध का परिणाम था जो २२० ई० पू० में हेनिबली लड़ाइयों से आरम्भ हुआ और १६८ ई० पू० में तीसरे रोमानो-मसडानियाई संग्राम में समाप्त हुआ । चौथा तथा अन्तिम सुधार रोमन सेना दल में मरियस ने आरम्भ किया और सीज़र ने पूर्ण किया । यह एक शती के रोमन विप्लवों और घरेलू युद्धों का परिणाम था और जिसका अन्त रोमन साम्राज्य के रूप में हेलनी सार्वभौम राज्य था । जसटीनियन का कवच सैनिक, जो अस्त्र सज्जित घोड़े पर अस्त्रों से सज्जित सवार के रूप में था और जिसे प्रोकोपियस पाठकों के सम्मुख हेलेनी सैनिक तकनीक के विशेष सैनिक के रूप में बताता है, हेलनी सैनिक विकास की श्रेणी में कोई नयी वस्तु नहीं है । यह कवच सैनिक हेलेनी समाज के पतनोन्मुख पीढ़ी द्वारा ईरानी समकालीन विरोधियों का रूपान्तर था । इन ईरानी सैनिकों की शक्ति की जानकारी रोम को तब हुई जब उन्होंने ५५ ई० पू० में कर्ही में क्रसस को हराया था ।

युद्ध की कला ही केवल वह तकनीक नहीं है जो समाज की सभ्यता से विपरीत चलती है । आइए, हम ऐसी कला को लें जो युद्ध की कला से बहुत दूर है । खेती की तकनीक शान्ति के समय की सर्वोच्च कला कही जाती है । यदि हम हेलेनी इतिहास को देखें तो पता चलेगा कि इस कला की उन्नति के साथ-साथ सभ्यता का ह्रास होता रहा है ।

आरम्भ में ही हमें दूसरी कथा मिलती है । हेलेनी युद्ध कला का पहला सुधार उस समुदाय के विकास को अवरुद्ध करके हुआ जिस समाज ने उसका आविष्कार किया था । उसके साथ हेलेनी कृषि में जो उन्नति हुई वह सुखदायी थी । जब सोलन की सलाह पर अटिका ने मिश्रित कृषि की व्यवस्था बन्द कर निर्यात के लिए विशिष्ट खेती आरम्भ की, तकनीकी उन्नति हुई और साथ साथ एटिकी जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सजीवता और शक्ति का आरम्भ हो गया । किन्तु इस कहानी का दूसरा अध्याय दुखदायी है । इस तकनीक का दूसरा कदम यह हुआ कि दासों के

श्रम के बलपर अधिक मात्रा में उत्पादन हाने लगा। यह काय पहले सिसिली के उपनिवेशिक समुदायो में आरम्भ हुआ और सम्भवत पहले पहल एग्रिजेन्टम में। क्योकि सिसिली वाले यूनानिया को निकट के बबर प्रदेशा में शराब और तेल का बढता हुआ बाजार मिला। यहाँ तक्नीकी प्रगति के साथ भयकर सामाजिक बुराई उपस्थित हो गयी। क्योकि नयी खेती वाली दासता प्रथा घरवाली दासता प्रथा से अधिक दोषपूण थी। नैतिक दष्टि से तथा सख्या की भी दृष्टि से यह दोष बडा था। व्यक्तित्वहीन और अमानुषिक तो था ही, बहुत बडी मात्रा में भी था। फैलते फलते यह सिसिली के यूनानी समुदाय से दक्षिणी इटली के बहुत बडे क्षेत्र तक में फल गया। यह क्षेत्र हेनिबली युद्ध के कारण उजाड और परित्यक्त हो गया था। जहा-जहा यह प्रथा फली धरती की उपज जो इसने बढायी जिससे पूजी वालो को लाभ हुआ, किन्तु धरती सामाजिक दष्टि से बजर हो गयी। क्योकि जहा-जहा दास खेती करने लगे किसानो का उन्होने निकाल बाहर किया और उन्हें कगाल बना दिया जिस प्रकार खाटा सिक्का खरे सिक्के को बाजार से बाहर कर देता है। इसका सामाजिक परिणाम यह हुआ कि गाँव निजन हो गये और नगरा में परोपजीवी जनता का ज म हुआ विशेषत रोम में। ग्राची से लेकर उसके बाद तक के कितने ही सुधारका ने रोमन ससार को इस दोष से मुक्त करना चाहा जो कृषि की तक्नीकी प्रगति के कारण आ गया था किन्तु असफल रहे। कृषि दासता की प्रथा तब तक रही जब मुद्रा की आर्थिक व्यवस्था के बैठ जाने से वह अपने से नष्ट हो गयी। क्योकि इसी मुद्रा पर उसका लाभ निभर था। यह आर्थिक विनाश उस साधारण सामाजिक विध्वस का एक अग था जा ईसा की तीसरी शती के बाद आरम्भ हुआ। और विध्वस एक अश में उसी कृषि सम्बधी रोग का परिणाम था जो उसके पूव चार सौ साला से रोमन समाज के शरीर का खाये चला जा रहा था। इस प्रकार इस सामाजिक कसर का अन्त उस समय हुआ जब वह शरीर समाप्त हो गया जिसमें कैंसर उत्पन्न हुआ था।

इग्लड में सूती कपडो के बनाने की तकनीक में जा उन्नति हुई उसके कारण अमरीकी सघ में रुई वाले प्रदेशो में दासा की प्रथा का भी विकास हुआ। यह भी पहले ही समान उदाहरण है। अमरीकी गह-युद्ध ने जहा तक दासा की बात थी उस कसर को तो समाप्त किया किन्तु उससे वह दोष दूर नही हो सका जो स्वतन्त्र हुए नेग्रा के उस अमरीकी समाज के बीच आ जाने के कारण उत्पन्न हो गया था, जो यूरोपीय वशज थे।

तकनीकी उन्नति और सभ्यता की प्रगति का सह-सम्बन्ध (को रिलेशन) नही रहा है। यह बात उन सब उदाहरणा से स्पष्ट है जहा तक्नीक की तो उन्नति हो गयी किन्तु सभ्यता स्थिर रही या पुरोगामी हो गयी। यही बात उन अवस्थाआ में भी हुई जहाँ तकनीक ता स्थिर रही और सभ्यता या तो विकसित होती रही या पीछे जाती रही।

उदाहरण क लिए यूरोप में अन्तिम तथा अपर पुरापापाणिक युग में मानव ने अच्छी प्रगति की।

"अपर-पुरापापाणिक युग की सस्कृति चौथे हिमनदीय (ग्लेशियल) काल के अन्त में सम्बधित है। नानडरताल (नियानडरताल) मानव के अवशेष के स्थान पर हमें विभिन्न प्रकार के अवशेष मिलत ह जिनसे नानडरताल मानव से कोई सम्बध नही है। इसके विपरीत वे लगभग आधुनिक मानव के निकट दिखाई पडते ह। जब हम यूराप क इस युग के जीवाश्मा (फासिल) को देखत

हैं तब एकाएक हमें ऐसा जान पडता है कि जहाँ तक शारीरिक रचना का सम्बन्ध है हम आधुनिक मानव को देख रहे हैं।'[१]

पुरापाषाणिक युग के मध्य मानव के प्रकार का इस ढग से परिवर्तन ऐसी घटना है जो मानवता के इतिहास में महत्त्वपूर्ण है। क्योंकि उस काल में उप मानव मानव के रूप म बदल रहा था और उप मानव के मानव के रूप में बदलने से आज तक इतना समय बीत गया फिर भी मानव अतिमानव (सुपरमैन) नही बन सका। इस तुलना से हमें उस मानसिक प्रगति के परिणाम का पता चलता है जब मानडरताल मानव उन्नत करके आधुनिक मानव बन गया। परन्तु इस मानसिक क्रान्ति के साथ कोई तक्नीकी क्रान्ति नही हुई। इस प्रकार तक्नीकी वर्गीकरण के अनुसार अपर-पुरापाषाणिक युग की गुफाओ के जिन चित्रो की हम प्रशसा करते ह उन्हें हम भ्रमवश लुप्त कडी (मिसिंग लिंक) की बनायी समझते है जबकि वास्तव में बुद्धि आकार तथा मानवता के सभी विशेष लक्षणो से हम यह कह सकते ह कि श्रेष्ठ पुरापाषाणयुगीन मानव में और निचले पुरा-पाषाणयुगीन मानव में उतना ही अन्तर है जितना उसमें और हमारे यान्त्रिक मानव में।

इन उदाहरणो के जिनमें तक्नीक स्थिर रही है और समाज प्रगतिशील रहा है विपरीत भी उदाहरण मिलते ह जहाँ तक्नीक स्थिर रही है और समाज का पतन हुआ है। उदाहरण के लिए लोहे के प्रयोग की तक्नीक जिसे एजियाई ससार ने पहल पहल उस समय आरम्भ किया था जब महान् सामाजिक पतन हो रहा था और मिनाई समाज का विघटन हो रहा था, स्थिर रही न उन्नति हो रही थी न अवनति और हेलेनी समाज अपने पूर्ववर्ती मिनाई समाज की भाति विघटित हो रहा था। हमारे पश्चिमी समाज ने लोहे के प्रयोग की तक्नीक रोमन ससार से बिना किसी त्रुटि के पाया था। लैटिन वर्णमाला और यूनानी गणित भी इसी प्रकार वहा से मिला था। किन्तु सामाजिक विप्लव हो गया था। हेलेनी समाज छिन्न भिन्न हो गया और एक अत काल उपस्थित हुआ जिसमे अन्त में पश्चिमी सभ्यता का जन्म हुआ। किन्तु इन तीनो तक्नीको में किसी प्रकार का व्यवधान नहीं उपस्थित हुआ।

(२) आत्म निर्णय की ओर प्रगति

भौगोलिक विस्तार की भाँति ही तक्नीकी प्रगति से हमको ऐसा सिद्धान्त नहीं मिला जिससे हम सभ्यताओ के विकास का मापदण्ड बना सकें किन्तु उससे एक सिद्धान्त मिलता है जिसके अनुसार तक्नीकी उन्नति होती है उसे हम उत्तरोत्तर सरलता का नियम कह सकते ह। भारी भरकम भाप के इजन और विस्तृत रेल पथ के स्थान पर सुविधाजनक अन्तर्दहन इजन (इटरनल कम्बस्चन इजन) आ गये जो सडको पर रफ्तार की गति स चलते ह और उसी स्वतन्त्रता से चलते जसे कोई पैदल चलता है। तार की जगह बेतार से समाचार जाने लगे। चीनी और मिस्री जटिल लिपि के स्थान पर स्पष्ट और सरल लैटिन लिपि आ गयी। भाषा में भी इसी प्रकार सरलता की ओर झुकाव है। विभक्तिमय रूप को छोडकर सहायक शब्दो का प्रयोग होने लगा है जैसा इण्डो यूरोपीय परिवार की भाषाओ के इतिहास से ज्ञात होता है। इस परिवार का प्राचीन

१ ए० एम० कार—साँडर्स द पापुलेशन प्राब्लम पृ० ११६–१७।

तम भाषा सस्कृत में विभक्तिया की भरमार है। और उपसर्गों की कमी है। इसके विपरीत आधुनिक अग्रेजी में विभक्तिया सब हटा दी गयी है उनका स्थान प्रिपोजिशना ने और महायक क्रियाओ ने ले लिया है। इन दोना छोरो के बीच क्लासिकी यूनानी भाषा है। आधुनिक पश्चिमी ससार में वेशभूषा भी सरल हो गयी है। एलिजाबेथी काल के बबर उल्झावपूण कपडा के स्थान पर आज सीधी-सादी वेशभूषा हो गयी है। ज्योतिष आज टोलमी के सिद्धान्ता के स्थान पर कोपरनिकस का सिद्धा त मानता है जिसके अनुसार आकाश के नक्षत्रा की गणना उचित, वज्ञानिक और समन्न में आने वाले ढग पर होती है।

इन परिवतनो के लिए सरलता शब्द का प्रयोग कदाचित् यथाथ न होगा कम से कम उचित नही है। सरलता में नकारात्मक ध्वनि है और यह भाव है कि किसी वस्तु में कोई कमी कर दी गयी है या कोई चीज हटा दी गयी है। किन्तु जिन बाता का वणन ऊपर किया गया है उनमें कुछ कमी नहीं हुई है बल्कि व्यावहारिक कुशलता बढी है अथवा कलात्मक सन्तोष की वद्धि हुई है या बौद्धिक क्षमता बढी है, जिसका परिणाम हानि नही लाभ है। यह लाभ सरलता की एक प्रक्रिया का परिणाम है। इस प्रक्रिया द्वारा ऐसी शक्तिया निकल पडता जो भौतिक माध्यम में बँधी रहती हैं और स्वतन्त्र होकर अधिक शक्ति स मानसिक रूप में प्रकट हाती हैं और प्रयोग में आती ह। इससे उपकरण में मरलता हा नही आती, शक्ति स्थानान्तरित होती है और काय की प्रणाली निम्न स्तर से उच्च स्तर की ओर गतिशील होती है। इस प्रक्रिया को यदि हम सरलता न कहकर 'अलौकिकीकरण (एथीरियलाइजेशन) कहें तो अधिक उपयुक्त होगा।

भौतिक प्रकृति पर मनुष्य ने जो नियन्त्रण प्राप्त किया है उस विकास का एक आधुनिक मानव विज्ञान वेत्ता ने बडे काल्पनिक रूप में या वणन किया है

हम लोग धरती छोड रहे ह, हमारा सम्पक छूट रहा है हमारे रास्ते अस्पष्ट हो रहे ह। चकमक पत्थर (फ्लिट) शाश्वत है, ताँबा एक सभ्यता तक रहता है लोहा कई पीढियो तक और इस्पात एक मनुष्य के जावन तक। जब गति का युग समाप्त हो जायगा तब कौन लदन पीकिंग हवाई रास्ते का नक्शा बना पायेगा या आज भी ईथर के माध्यम से जो समाचार भेजे जाते ह या सुने जाते है उसका पथ क्या है काई बता सकता है? किन्तु समाप्त आइसेनी राज्य की सीमा आज भी ईस्ट एगलिया की दक्षिणी सीमा पर वतमान है जो सुखाये दलदल और काट गये जगल में बनी थी।[१]

हमारे उदाहरण से यह सकेत मिलता है कि उन्नति की जिस कसौटी की खाज में हम है और जिसे हम बाह्य वातावरण पर विजय में नही पा सके चाहे वह मानवी हो अथवा भौतिक वह हमें वहाँ मिलती है जहा तीव्रता (एम्फेसिस) में क्रमश परिवतन होता है और काय एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में बदलता रहता है। इसमें एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में चुनौती और उसका सामना होता रहता ह। इस प्रकार के क्षेत्र में चुनौती बाहर से नही आती, अन्दर से ही प्रकट होती है और जो चुनौती पर विजय होती है वह किसी बाहरी शक्ति अथवा बैरी पर

१ जेराल्ड हर्ड दि असेंट आव ह्युमनिटी, पृ० २७७–८

नही । यह विजय आत्म निणय, आत्माभिव्यक्ति के रूप में प्रकट होती है । जब हम किसी व्यक्ति अथवा किसी एक समाज को चुनौतियों का सामना करते हुए देखते ह और हम यह जानना चाहते ह कि जिस क्रम से चुनौती और सामना हो रहा है उसमें उन्नति हो रही है कि नही तो हमें ठीक उत्तर तब मिल जायगा जब हम देखेंगे कि प्रतिभा पहले ढग की है कि दूसरे ।

यह सचाई इतिहास के उन वणना से स्पष्ट हो जाती है जो अथ से इति तक इसी प्रकार बताये जाते ह कि उन्नति बाहरी परिस्थितियो पर विजय के कारण होती है । इसी प्रकार के दो महान् इतिहासकारो के वणना म उदाहरण हम प्रस्तुत करते है । दोना के लेखक प्रतिभाशाली व्यक्ति ह । एक पुस्तक ह एम० एडमड डिमोलिन्स की कमेंट ला रूट क्री ल टाइप साशल' और दूसरी है एच० जी० वेल्स की 'आउट लाइन आव हिस्ट्री' ।

एम० डिमोलिन्स ने अपनी पुस्तक की भूमिका में वातावरण के सिद्धान्त को बहुत स्पष्ट शब्दो में अकित किया है 'पथ्वी पर अगणित प्रकार के लोग रहते हैं क्या कारण है कि इतने प्रकार के लोग हो गये ? पहला और प्रमुख कारण प्रजातियो के इतने भेदो का यह है कि ये विभिन्न रास्तो से आये गये । विभिन्न मार्गों के कारण ही विभिन्न प्रजातियाँ तथा सामाजिक प्रकार के लोग हो गये ।

लेखक के इस विचार से प्रभावित होकर जब हम यह पुस्तक पढते ह तब यह जान पडता है कि उसके विचार वहाँ तक बहुत ठीक मिलते ह जहाँ तक उसके उदाहरण आदिम समाज से लिये गये ह । इन उदाहरणो से यह समझ में आता है कि बाहरी चुनौती का सामना करने स इन समाजो ने पूर्णता प्राप्त की, किन्तु उनके विकास का इनसे पता नही चलता क्योंकि अब ये समाज गतिहीन ह । डिमोलिन्स महोदय अविकसित समाजो की स्थिति भी समझाने में सफल हैं । किन्तु जब लेखक अपने सूत्र को पितृ सत्तात्मक ग्राम्य समाज पर लगाता है तब पाठक को घबराहट होती है । कारथेज और वेनिस पर जो अध्याय लिखे ह उन्हें पढने से ऐसा जान पडता है कि लेखक ने कुछ छोड दिया, यद्यपि वह यह नही कह सकता कि क्या छूट गया है । जब वह पाइथोगोरस के दशन को इटली के दक्षिण के व्यापार परिवहन पर स्थापित करना चाहता है तब हँसी रोकनी पडती है किन्तु 'प्लेटो के मार्ग और अलबेनी और हेलेनी जाति के अध्याय पर तो ठहर जाना पडता है । अलबेनी बबरता और हेलेनी सभ्यता को एक साथ रखना, क्योंकि किसी समय दोनो के नेता अपने अपने भौगोलिक लक्ष्य पर एक ही भू प्रदेश की राह से पहुँचे आश्चर्यजनक है । यह कहना कि वह महान् मानव घटना जिसे हम हेलनीवाद कहते ह बाल्कन पठार का केवल गौण उत्पादन था हास्यास्पद है । इस दुर्भाग्यपूण अध्याय में अपने ही विषय को लेखक गलत सिद्ध करके अपनी बात को असगत बना देता है । जब कोई सभ्यता हेलेनी सभ्यता के स्तर तक उन्नति कर लेता है तब यह कहना कि उसका विकास केवल बाहरी परिस्थिति का चुनौती के कारण हुआ हास्यास्पद है ।

जब वे आदिम सभ्यता के बजाय किसी परिपक्व सभ्यता पर विचार करते ह वेल्स भी अपने विचारो को पुष्ट नही कर पाते । जब वह अपनी कल्पना से किसी अत्यत प्राचीन भू वैज्ञानिक कल्प के किसी नाटकीय घटना का गढने लगते ह तब वह पूणरूप स सफल होते ह । उनकी कहानी कि किस प्रकार ये छोटे जन्तु (थेरियामारफिस) अत्यत प्राचीन स्तनपायी जीव बच

नही । यह विजय आत्म निर्णय, आत्माभिव्यक्ति के रूप में प्रकट होती है । जब हम किसी व्यक्ति अथवा किसी एक समाज को चुनौतियो का सामना करते हुए देखते है और हम यह जानना चाहते है कि जिस क्रम से चुनौती और सामना हो रहा है उसमें उन्नति हो रही है कि नही तो हमें ठीक उत्तर तब मिल जायगा जब हम देखेंगे कि प्रतिभा पहले ढग की है कि दूसरे ।

यह सचाई इतिहास के उन वर्णनो से स्पष्ट हो जाती है जो अथ से इति तक इसी प्रकार बताये जाते है कि उन्नति बाहरी परिस्थितियो पर विजय के कारण होती है । इसी प्रकार के दो महान् इतिहासकारो के वर्णनो के उदाहरण हम प्रस्तुत करते है । दोनो के लेखक प्रतिभाशाली व्यक्ति है । एक पुस्तक है एम० एडमड डिमोलिस की 'कमेंट ला रूटे क्री ले टाइप सोशल' और दूसरी है एच० जी० वेल्स की 'आउट लाइन आव हिस्ट्री' ।

एम० डिमोलिस ने अपनी पुस्तक की भूमिका में वातावरण के सिद्धात को बहुत स्पष्ट शब्दो में अकित किया है 'पृथ्वी पर अगणित प्रकार के लोग रहते है क्या कारण है कि इतने प्रकार के लोग हो गये ? पहला और प्रमुख कारण प्रजातियो के इतने भेदो का यह है कि ये विभिन्न रास्तो से आये गये । विभिन्न मार्गों के कारण ही विभिन्न प्रजातियाँ तथा सामाजिक प्रकार के लोग हो गये ।'

लेखक के इस विचार से प्रभावित होकर जब हम यह पुस्तक पढते है तब यह जान पडता है कि उसके विचार वहाँ तक बहुत ठीक मिलते है जहाँ तक उसके उदाहरण आदिम समाज से लिये गये है । इन उदाहरणो से यह समझ में आता है कि बाहरी चुनौती का सामना करने से इन समाजो ने पूर्णता प्राप्त की किन्तु उनके विकास का इनसे पता नही चलता क्योकि अब ये समाज गतिहीन है । डिमोलिस महोदय अविकसित समाजो की स्थिति भी समझाने में सफल है । किन्तु जब लेखक अपने सूत्र को पितृ सत्तात्मक ग्राम्य समाज पर लगाता है तब पाठक को घबराहट होती है । कारथेज और वेनिस पर जो अध्याय लिखे है उन्हें पढने से ऐसा जान पडता है कि लेखक ने कुछ छोड दिया, यद्यपि वह यह नही कह सकता कि क्या छूट गया है । जब वह पाइथोगोरस के दर्शन को इटली के दक्षिण के व्यापार-परिवहन पर स्थापित करना चाहता है तब हँसी रोकनी पडती है किन्तु प्लेटो के मार्ग और 'अलबेनी और हेलेनी जाति' के अध्याय पर तो ठहर जाना पडता है । अलबेनी बबरता और हेलेनी सभ्यता को एक साथ रखना, क्योकि किसी समय दोनो के नेता अपने अपने भौगोलिक लक्ष्य पर एक ही भू प्रदेश की राह से पहुचे, आश्चर्यजनक है । यह कहना कि वह महान् मानव घटना जिसे हम हेलनीवाद कहते है बाल्कन पठार का केवल गौण उत्पादन था हास्यास्पद है । इस दुर्भाग्यपूर्ण अध्याय में अपने ही विषय को लेखक गलत सिद्ध करके अपनी बात को असगत बना देता है । जब कोई सभ्यता हेलेनी सभ्यता के स्तर तक उन्नति कर लेती है, तब यह कहना कि उसका विकास केवल बाहरी परिस्थिति की चुनौती के कारण हुआ हास्यास्पद है ।

जब वे आदिम सभ्यता के बजाय किसी परिपक्व सभ्यता पर विचार करते है वेल्स भी अपने विचारो की पुष्टि नही कर पाते । जब वह अपनी कल्पना से किसी अत्यन्त प्राचीन भू-वैज्ञानिक कल्प के किसी नाटकीय घटना को कहने लगते है तब वह पूर्णरूप से सफल होते है । उनकी कहानी कि किस प्रकार ये छोटे जन्तु (थरियोमारफिस) अत्यन्त प्राचीन स्तनपायी जीव बच

पर विजय पायी, उसका एक कारण यह था कि उन्होंने सामन्ती परिस्थिति पर शक्तिशाली सैनिक तथा सामाजिक सामन्ती प्रथा निर्माण करके विजय प्राप्त की। किन्तु पश्चिमी इतिहास में आगे चलकर जब सामन्ती प्रथा के कारण सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक वर्ग उत्पन्न हो गये तब उनके कारण और प्रकार के तनाव और आघात होने लगे और समाज को उनका सामना करना पड़ा। पश्चिमी ईसाई जगत् को अभी वाइकिंगों को पराजित करके पर्याप्त अवकाश भी नहीं मिला था कि उन्हें सामन्ती प्रथा के विभिन्न वर्गों को इटालियन स्थानिक राज्य और नागरिकता का नये रूप से सम्बन्ध स्थापित करना पड़ा। इन दोनों चुनौतियों के परिवर्तन से स्पष्ट है कि बाहरी परिस्थिति से हटकर कार्यक्षेत्र आन्तरिक हो गया।

यही बात हम इतिहास की दूसरी घटनाओं में देख सकते हैं जिन्हें हमने दूसरे सन्दर्भों में वर्णन किया है। उदाहरण के लिए, हमने देखा कि हेलेनी इतिहास में सारी प्रारम्भिक चुनौतियाँ बाहरी थीं। यूनान में पठारों के बर्बरों की चुनौती, तथा जनसंख्या की चुनौती का सामना उन्होंने समुद्र पार साम्राज्य का विस्तार करके किया। जिसके परिणामस्वरूप उन्हें वहाँ के बर्बरों तथा प्रतिद्वन्द्वी सभ्यता की चुनौती का सामना करना पड़ा और अन्त में पाँचवीं शती ई० पू० के पहले चतुर्थांश में एक साथ कारथेज और परशिया के आक्रमण का सामना करना पड़ा। इसके पश्चात् इस मानवी भीषण चुनौती पर विजय होने लगी जो चार शतियों तक चलती रही। जो सिकन्दर के विजय से आरम्भ हुई और रोम पर विजय करके समाप्त हुई। इन विजयों के कारण हेलेनी समाज को पाँच छ सौ वर्षों की शान्ति मिली जिनके बीच कोई बाहरी महत्त्व की चुनौती का सामना नहीं करना पड़ा। किन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि हेलेनी समाज बिल्कुल चुनौतियों से विमुक्त रहा। इसके विपरीत जैसा हमने देखा है यह पतन का युग था अर्थात् इस काल में उसे ऐसी चुनौतियों का सामना करना पड़ा जिसपर वह विजय नहीं पा सका। हमने देखा कि ये चुनौतियाँ किस प्रकार की थीं, और यदि हम फिर उनपर विचार करें, तो देखेंगे कि ये चुनौतियाँ आन्तरिक थीं। ये पहली बाहरी चुनौतियों के विजय की परिणाम थीं। जिस प्रकार हमारे पश्चिमी समाज में वाइकिंगों के आक्रमण के परिणाम में सामन्तवाद की प्रथा हो जाने के कारण चुनौती उपस्थित हुई।

उदाहरण के लिए परशियना तथा कारथजीनियना के दबाव ने हेलेनी समाज को आत्मरक्षा के लिए दो शक्तिशाली सामाजिक तथा सैनिक साधनों को तैयार करने की स्फूर्ति प्रदान की। एक तो एथेनी नौ-सेना, और दूसरी साइराक्यूजी नगर सैनिक। इनके कारण दूसरी पीढ़ी में हेलेनी समाज में तनाव और दबाव आरम्भ हुआ और उसके फलस्वरूप एथनी पेलोपोनेशियाई युद्ध हुआ। साथ ही साइराक्यूज तथा उसकी बर्बर प्रजा और उसके यूनानी सहायकों के प्रति प्रतिक्रिया भी आरम्भ हुई। इन हलचलों के कारण हेलेनी समाज का प्रथम पतन हुआ।

इसके बाद के हेलेनी इतिहास के अध्यायों में जिन सेनाओं ने सिकन्दर तथा और सेनापतियों के सचालन में विदेशियों की सेना को पराजित किया था वे मैसेडोनियाई सेनापति तथा रोमन अधिनायक देश के भीतर ही घरेलू युद्ध करने लगे। इसी प्रकार पश्चिमी भूमध्यसागर के आधिपत्य के लिए हेलेनी तथा सीरियाई समाज में जो आर्थिक द्वन्द्व चल रहा था वह सीरियाई प्रतिद्वन्द्वी की पराजय के बाद अधिक उग्र संघर्ष में फिर उपस्थित हुआ। इस बार पूर्वी कृषि

दासा और उनके सिसिली तथा रोम के मालिका में । इसी प्रकार हेलेनी तथा पूर्वी सभ्यताआ का सास्कृतिक सघप—सीरियाई और मिस्री और वैबिलानी और भारतीय—हेलेनी समाज के भीतर ही आन्तरिक सक्ट के रूप में प्रकट हुआ । इस सक्ट से आइसिस की पूजा, ज्यातिप, सूय की पूजा, ईसाई धम तथा अनेक सम्मिलित धर्मों का आविभाव हुआ ।

पूरब और पश्चिम काई युद्ध व द नही करता
मरी छाती पर ये लोग नाच कर रहे ह ।[1]

आज तक के अपने पश्चिमी इतिहास में भी यही प्रवत्ति हम पाते ह । प्रारम्भिक काल में मानवी परिस्थिति से चुनौती मिली । वह स्पेन में अरबा से आरम्भ हुइ और फिर स्कण्डिनेवियाइया स और अ त हुआ उसमानलिया की चुनौती से । उसके पश्चात पश्चिमी विस्तार ससार भर में व्यापक हुआ । और कम-से-कम कुछ काल के लिए इस विस्तार के कारण विदेशी मानवी समाजा की चुनौतिया से हम बच गये ह ।[२-३]

उसमानली का जब दूसरी बार वियना लेने में असफल रहा उसके बाद पश्चिमी समाज पर जो वाहरी चुनौती मिली वह बोल्शेविज्म की थी । पश्चिमी जगत को यह चुनौती उस समय से है जबसे लेनिन तथा उसके साथिया ने सन् १९१७ में रूस पर अपना आधिपत्य कर लिया । किन्तु यू० एस० एस० आर० की सीमा से बाहर पश्चिमी सभ्यता पर इसका बहुत अधिक प्रभाव नही पडा है । और यदि एक दिन ऐसा भी हो कि रूसी कम्युनिस्टो की यह आशा पूरी हो जाय कि विश्व भर में साम्यवाद फैल जाय और पूजीवाद पर वह विजय प्राप्त कर ले तो भी यह विदेशी सस्कृति की विजय नही हागी क्याकि इस्लाम के विपरीत साम्यवाद का स्थान पश्चिम ही है । वह पूजीवाद की प्रतिक्रिया मात्र है । बीसवी शती के रूस ने जो इस विदेशी पश्चिमी क्रान्तिकारी सिद्धान्त का अपनाया है उससे पश्चिमी सस्कृति का किसी प्रकार की आशका नहीं है । वास्तव म इससे पता चलता है कि यह सस्कृति कितनी बलवती है ।

लेनिन के जीवन वृत्त से जो बोल्शेविज्म प्रकट हाता है उसमें गम्भीर अस्पष्टता है । पीटर महान् के कार्यो का वह पूरा करने आया कि नष्ट करने ? पीटर की सनकी राजधानी को फिर से केन्द्रीय स्थान में ले जाकर लेनिन ने अपने का महान् पुजारी अवाकुम तथा पुराने धम के विश्वास करने वाला और स्लाव प्रेमिया का वशधर ही घाषित किया । हम यह सम्भवत अनुभव कर कि पवित्र रूस के एक पगम्बर पश्चिमी सभ्यता के विराध में रूस की आत्मा की अभिव्यक्ति कर रहा है । किन्तु जब लेनिन सिद्धा त बनाता है तब उसे पश्चिमी विचारा वाले जरमन यहूदी कार्ल-मार्क्स के पास जाना पडता है । यह सच है कि पश्चिमी समाज का प्रतिक्रिया का अस्वीकार करने

१ ए० ई० हाउसमन ए शापशायर लड, २८ ।

२ यदि मिस्टर टवायनबी ने कुछ बाद में यह इतिहास लिखा होता तो एक अपवाद बनाते जापान की चुनौती के लिए ।—सम्पादक

३ और बाद में लिखा होता तो उन्हें उन बाहरी चुनौतियाँ का भी जिक्र करना पडता जो इंग्लड को बाहर से मिलीं ।—अनुवादक

पर विजय पायी, उसका एक कारण यह था कि उन्होंने मानवी परिस्थिति पर शक्तिशाली सैनिक तथा सामाजिक सामंती प्रथा निर्माण करके विजय प्राप्त की। किन्तु पश्चिमी इतिहास में आगे चलकर जब सामंती प्रथा के कारण सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक वर्ग उत्पन्न हो गये तब उनके कारण अनेक प्रकार के तनाव और आघात होने लगे और समाज को उनका सामना करना पडा। पश्चिमी ईसाई जगत् को अभी वाइकिंगो को पराजित करके पर्याप्त अवकाश भी नही मिला था कि उन्हें सामंती प्रथा के विभिन्न वर्गों को हटाकर स्वतन्त्र राज्य और नागरिकों का नये रूप से सम्बन्ध स्थापित करना पडा। इन दोनो चुनौतियो के परिवर्तन से स्पष्ट है कि बाहरी परिस्थिति से हटकर कार्यक्षेत्र आन्तरिक हो गया।

यही बात हम इतिहास की दूसरी घटनाओं में देख सकते है जिन्हें हमने दूसरे सदर्भों में वर्णन किया है। उदाहरण के लिए हमने देखा कि हेलेनी इतिहास में सारी प्रारम्भिक चुनौतियाँ बाहरी थी। यूनान में पठारा के बबरो की चुनौती तथा जनसख्या की चुनौती का सामना उन्होने समुद्र पार साम्राज्य का विस्तार करके किया। जिसके परिणामस्वरूप उन्हें वहाँ के बबरो तथा प्रतिद्वद्वी सभ्यता की चुनौती का सामना करना पडा और अन्त में पाचवी शती ई० पू० के पहले चतुर्थांश में एक साथ कार्थेज और परशिया के आक्रमण का सामना करना पडा। इसके पश्चात इस मानवी भीषण चुनौती पर विजय होने लगी जो चार शतियो तक चलती रही। जो सिकन्दर के विजय से आरम्भ हुई और रोम पर विजय करके समाप्त हुई। इन विजयो के कारण हेलेनी समाज को पाँच छ सौ वर्षों की शान्ति मिली जिनके बीच कोई बाहरी महत्त्व की चुनौती का सामना नही करना पडा। किन्तु इसका यह अर्थ नही है कि हेलेनी समाज बिल्कुल चुनौतियो से विमुक्त रहा। इसके विपरीत जैसा हमने देखा है यह पतन का युग था अर्थात इस काल में उसे एसी चुनौतियो का सामना करना पडा जिसपर वह विजय नही पा सका। हमने देखा कि ये चुनौतियाँ किस प्रकार की थी और यदि हम फिर उनपर विचार करे, तो देखेंगे कि ये चुनौतियाँ आन्तरिक थी। ये पहली बहारी चुनौतियो के विजय की परिणाम थी। जिस प्रकार हमारे पश्चिमी समाज में वाइकिंगो के आक्रमण के परिणाम म सामन्तवाद की प्रथा हो जाने के कारण चुनौती उपस्थित हुई।

उदाहरण के लिए परशियनो तथा कार्थेजीनियनो के दबाव ने हेलेनी समाज को आत्मरक्षा के लिए दो शक्तिशाली सामाजिक तथा सैनिक साधनो को तयार करने की स्फूर्ति प्रदान की। एक तो एथेनी नौ-सेना और दूसरी साइराक्यूजी न्गास सैनिक। इनके कारण दूसरी पीढी में हेलेनी समाज में तनाव और दबाव आरम्भ हुआ और उसके फलस्वरूप एथेनी पेलोपानशियाई युद्ध हुआ। साथ ही साइराक्यूज तथा उसकी बबर प्रजा और उसके यूनानी सहायको के प्रति प्रतिक्रिया भी आरम्भ हुई। इन हलचलो के कारण हेलेनी समाज का प्रथम पतन हुआ।

इसके बाद के हेलेनी इतिहास के अध्यायो में जिन सेनाओ ने सिकन्दर तथा और सेनापतियो के सचालन में विश्व की सेना को पराजित किया था वे मसडोनियाई सेनापति तथा रोमन अधिनायक दल के भीतर ही घरेलू युद्ध करने लगे। इसी प्रकार पश्चिमी भूमध्यसागर के आधिपत्य के लिए हेलेनी तथा सीरियाई समाज में जो आर्थिक द्वद्व चल रहा था वह सीरियाई प्रतिद्वद्वी की पराजय के बाद अधिक उग्र सघर्ष में फिर उपस्थित हुआ। इस बार पूर्वी कृषि

दासा और उनके सिसिली तथा रोम के मालिका में । इसी प्रकार हेलेनी तथा पूर्वी सभ्यताओ का सास्कृतिक सघर्ष—सीरियाई, और मिस्री और बैबिलानी और भारतीय—हेलेनी समाज के भीतर ही आतरिक सकट के रूप में प्रकट हुआ । इस सकट से आइसिस की पूजा ज्योतिष सूर्य की पूजा, ईसाई धर्म तथा अनेक सम्मिलित धर्मो का आविर्भाव हुआ ।

पूरब और पश्चिम कोई युद्ध बन्द नही करता
मेरी छाती पर ये लोग नाच कर रहे है ।[१]

आज तक के अपने पश्चिमी इतिहास में भी यही प्रवृत्ति हम पाते है । प्रारम्भिक काल में मानवी परिस्थिति से चुनौती मिली । वह स्पेन में अरबा से आरम्भ हुई और फिर स्कण्डिनेवियाइया मे और अन्त हुआ उसमानलिया की चुनौती से । उसके पश्चात पश्चिमी विस्तार ससार भर में व्याप्त हुआ । और कम से कम कुछ काल के लिए इस विस्तार के कारण विदेशी मानवी समाजा की चुनौतिया से हम बच गये है ।[२-३]

उसमानली कौम जब दूसरी बार वियना लेने मे असफल रहा उसके बाद पश्चिमी समाज पर जो बाहरी चुनौती मिली वह बोलशेविज्म की थी । पश्चिमी जगत को यह चुनौती उस समय से है जबसे लेनिन तथा उसके साथिया ने सन १९१७ मे रूस पर अपना आधिपत्य कर लिया । किन्तु य० एस० एम० आर० की सीमा से बाहर पश्चिमी सभ्यता पर इसका बहुत अधिक प्रभाव नही पडा है । और यदि एक दिन ऐसा भी हो कि रूसी कम्युनिस्टो की यह आशा पूरी हो जाय कि विश्व भर में साम्यवाद फैल जाय और पूजीवाद पर वह विजय प्राप्त कर ले ता भी यह विदेशी सस्कृति की विजय नही होगी क्याकि इस्लाम के विपरीत साम्यवाद का स्रोत पश्चिम ही है । वह पूजीवाद की प्रतिक्रिया मात्र है । बीसवी शती के रूस ने जो इस विदेशी पश्चिमी क्रान्तिकारी सिद्धान्त का अपनाया है उससे पश्चिमी सस्कृति को किसी प्रकार की आशका नही है । वास्तव में इससे पता चलता है कि यह सस्कृति कितनी बलवती है ।

लेनिन के जीवन वृत्त से जो बोलशेविज्म प्रकट होता है उसमें गम्भीर अस्पष्टता है । पीटर महान् के कार्यो का वह पूरा करने आया कि नष्ट करने ? पीटर की सनकी राजधानी का फिर से केन्द्रीय स्थान में ले जाकर लेनिन ने अपने को महान् पुजारी अवाकुम तथा पुराने धर्म के विश्वास करने वाला और स्लाव प्रेमिया का वशधर ही घोषित किया । हम यह सम्भवत अनुभव कर कि पवित्र रूस के एक पगम्बर पश्चिमी सभ्यता के विरोध में रूस की आत्मा की अभिव्यक्ति कर रहा है । किन्तु जब लेनिन सिद्धान्त बनाता है तब उसे पश्चिमी विचारा वाले जरमन यहूदी कार्ल मार्क्स के पास जाना पडता है । यह सच है कि पश्चिमी समाज की प्रक्रिया को अस्वीकार करने

१ ए० ई० हाउसमन ए शापशायर लड, २८ ।

२ यदि मिस्टर टवायनबी ने कुछ बाद में यह इतिहास लिखा होता तो एक अपवाद बनाते जापान की चुनौती के लिए ।—सम्पादक

३ और बाद में लिखा होता तो उन्हें उन बाहरी चुनौतियों का भी जिक्र करना पडता जो इग्लड को बाहर से मिलीं ।—अनुवादक

के लिए मार्क्सी सिद्धान्त सबसे निकट आता है। बीसवीं सदी में पश्चिमी कोई दूसरा सिद्धान्त रूस पूरा नहीं करता था। मार्क्सी सिद्धान्त का नकारात्मक तत्त्व ही रूसी क्रान्तिकार मन को रुचा, स्वीकारात्मक नहीं। और यही कारण है कि सन् १९१७ में रूस में पश्चिमी पूंजीवाद के विरोधी तत्त्व को उसी प्रकार के पश्चिमी पूंजीवाद विरोधी तत्त्व ने उलट दिया। जब हम उस परिवर्तन पर ध्यान देते हैं जो मार्क्सी दर्शन का रूस में हो रहा है तब यह व्यवस्था स्पष्ट हो जाती है। यहाँ मार्क्सवाद को परम्परावादी ईसाई धर्म के स्थान पर भावात्मक तथा बौद्धिक विचार के रूप में स्थापित किया जा रहा है। मूसा के स्थान पर मार्क्स और मसीह के स्थान पर लेनिन स्थापित किये जा रहे हैं। उनके धर्मग्रन्थों के स्थान पर इन लोगों की रचनाएँ नवीन-नास्तिक युद्ध प्रिय धर्म में समाविष्ट हो रही हैं। किन्तु जब हम सैद्धान्तिक भावना से अलग होकर यह देखते हैं कि लेनिन तथा उसके उत्तराधिकारी रूसी जनता के लिए वास्तव में क्या कर रहे हैं तब दूसरा रूप दिखाई पड़ता है।

जब हम यह प्रश्न करते हैं कि स्टालिन की पंचवर्षीय योजना का क्या अभिप्राय था तब हम यही उत्तर दे सकते हैं कि इसका एक ही अर्थ था कृषि, व्यवसाय तथा परिवहन का यान्त्रिक बना देना। किसानों की जाति को मिस्त्री (मैकानिक) बनाना। पुराने रूस को नया अमरीका बनाना। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि इस आधुनिक ढंग से तथा कठोरता से और बड़ी आकांक्षा के साथ रूस के पश्चिमीकरण की चेष्टा की जा रही है कि महान पीटर का कार्य भी पीछे पड़ गया। रूस के वर्तमान शासक रूस में इस यान्त्रिक शक्ति से उसी सभ्यता की भाँति सफलता प्राप्त करने की चेष्टा कर रहे हैं जिसकी वे निन्दा करते हैं। निस्सन्देह व एक ऐसे समाज के निर्माण की कल्पना कर रहे हैं जिसकी आत्मा रूसी हो और साज सज्जा अमरीकी हो। यह उस राजनीतिक का विचित्र सपना है जिसका विश्वास इतिहास की भौतिक व्याख्या में है। मार्क्सी सिद्धान्त पर हमें यही आशा करनी चाहिए कि यदि रूसी किसान अमरीकी मिस्त्री की भाँति रहता है तो मिस्त्री की ही भाँति वह विचार करने लगेगा, वैसी ही उसकी भावना होगी और वैसी ही उसकी इच्छाएं होंगी। रूस की इस खींचा-खींची में जो लेनिन के आदर्शों और फोर्ड की प्रणाली में हो रहा है हम यह देखेंगे कि सभ्यता पर पश्चिम विजय पा जायगा चाहे यह बात विचित्र सी क्यों न लगे।

इसी प्रकार की असंगति गांधी के जीवन में भी है। जो अनजाने इसी प्रकार पूर्ण रूप से पश्चिमीकरण कर रहे हैं। इनका यह कार्य उनके सिद्धान्तों का व्यंग्य है। यह हिन्दू पैगम्बर उन तागों को तोड़ना चाहते हैं जिसके पश्चिमी जाल में भारत फंसा हुआ है। वह प्रचार करते हैं अपने हाथों से भारतीय रूई को कातो और बुनो। पश्चिम की मिलों के कपड़े मत पहनो। और भारत की धरती पर पश्चिमी ढंग की मिलें खड़ी करके इन विदेशी वस्त्रों को यहाँ से हटाने की चेष्टा मत करो। गांधी के इस वास्तविक सन्देश को इनके देशवासी नहीं मानते। वे सन्त की भांति उन्हें मानते हैं और उतना उनके निर्देश पर कार्य करते हैं जितना वह उन्हें पश्चिमीकरण में सहायक होता है और आज हम देखते हैं कि गांधी भारत की उन्नति पश्चिमी ढंग पर कर रहे हैं। वह संसदीय ढंग से स्वतन्त्र शासन स्थापित करना चाहते हैं जिसमें कानफरेंसों, वोटों, और प्लेट फार्मों, समाचार पत्रों तथा प्रचार के पश्चिमी तन्त्र अपनाये जा रहे हैं। इस आन्दोलन में वही उनकी बहुत सहायता कर रहे हैं जिन्होंने उनके वास्तविक सिद्धान्त की असफलता की भरपूर

चेष्टा की। वे लोग जिन्होंने उद्योगवाद की तकनीक को भारत की धरती पर अच्छी तरह जमाया है।[१]

इसी प्रकार जब बाहरी चुनौतियों का परिवर्तन भीतरी चुनौतियों में हुआ है, पश्चिमी सभ्यता ने भौतिक वातावरण पर विजय पायी है। तकनीकी क्षेत्र में औद्योगिक क्रांति की जो तथाकथित विजय हुई उसने आर्थिक तथा सामाजिक क्षेत्रों में ऐसी असंख्य कुख्यात समस्याएँ खडी कर दी और वे ऐसी उलझी हुई हैं कि उनपर यहाँ विचार करना सम्भव नहीं। जरा पूर्व-यांत्रिक सडकों का ध्यान कीजिए। इन पुरानी सडकों पर अनन्त प्रकार की प्राचीन ढंग की गाडियों की भीड रहती है। ठेलागाडी, रिक्शा, बैलगाडी, ताँगा बग्घी सब शारीरिक शक्ति से चलने वाली गाडियाँ उनपर चलती हैं, और कभी-कभी बाइसिकिल भी जो आने वाले युग का संकेत है। सडकों पर भीड बहुत होती है इसलिए भिडन्त भी होती है किन्तु उसकी चिन्ता कोई नहीं करता, क्योंकि चोट चपेट कम लगती है और रास्ता बन्द नहीं होता। क्योंकि यदि धक्का लग भी जाय तो भयावह नहीं होता। उनकी गति धीमी होती है और जोर भी कम होता है। इन सडकों पर जो यातायात की समस्या है वह दुर्घटनाओं को रोकने की नहीं है। ये सडकें वैसी ही हैं जो पुराने काल में थीं इसलिए समस्या है कि यात्रा पूरी होगी कि नहीं। इसलिए न तो यातायात के कोई नियम हैं, न पुलिस वहाँ खडी रहती है, न रोशनियों का संकेत रहता है।

अब जरा आज की सडकों को देखिए जिनपर यांत्रिक यातायात का गर्जन होता रहता है। इन सडकों पर गति और ढुलाई की समस्या नहीं रह गयी है। मोटर, ट्रकें और लारियाँ लदी हुई दौडती चलती हैं। हाथी के प्रहार से भी अधिक उनमें जोर होता है। या स्पोर्ट की गाडियाँ जो गोली अथवा मधुमक्खी से तेज चलती हैं। किन्तु साथ ही साथ मुठभेड की समस्या अधिक बढ गयी है। इसलिए आज सडकों की समस्या तकनीकी नहीं, मनोवैज्ञानिक है। पुरानी चुनौती भौतिक थी, दूरी की। वह बदल कर आज नयी चुनौती मानव मानव के सम्बन्ध की है। चालक जो दूरी को मिटाते हैं उन्हें बराबर एक दूसरे का नाश करने का भय बना रहता है।

यातायात की इस समस्या का प्रतीकात्मक तथा स्पष्ट तात्पर्य है। एक तो यह उस परिवर्तन का स्वरूप बताता है जो आधुनिक पश्चिमी सामाजिक जीवन की विशेषता हो गयी है जब से युग की दो प्रबल शक्तियाँ इस जीवन में आ गयी हैं—औद्योगिकता और लोकतन्त्र शासन। हमारे आधुनिक आविष्कर्ताओं ने भौतिक शक्ति को अनुशासित करने में जो अद्वितीय उन्नति की है उससे करोडों मनुष्य सामूहिक कार्य करने लग गये हैं और हमारे समाज में भला या बुरा जो कुछ कार्य होता है बडे धडल्ले से होता है। इसका भौतिक परिणाम और भौतिक उत्तरदायित्व पहले की अपेक्षा बहुत बढ गया है। हो सकता है कि प्रत्येक युग में हरएक समाज में ऐसे नैतिक विषय उत्पन्न हुए हों जिनसे समाज के भविष्य पर निर्णयात्मक प्रभाव पडा हो। चाहे जो भी हो, इसमें सन्देह नहीं कि हमारे समाज के सामने जो चुनौती उपस्थित है वह नैतिक है भौतिक नहीं।

१ चरचिल ने कामन्स सभा में १० सितम्बर, १९४२ के भाषण में इस बात की ओर ध्यान दिलाया था। भारत में इसका जोरों से विरोध हुआ था।—सम्पादक। आज वही हो रहा है और गांधी के सिद्धान्तों के विपरीत औद्योगीकरण भारत का मूलमन्त्र है।—अनुवादक

"आज यान्त्रिक उन्नति के सम्बन्ध में हम विचारकों की भावनाएँ बदली हुई पाते हैं। प्रशंसा के साथ आलोचना होने लगी है, सन्ताप का स्थान सन्देह ने लिया है और सन्देह का स्थान धीरे धीरे भय ले रहा है। उलझन और कुण्ठा के भाव उत्पन्न हो गये हैं, जैसे किसी को बहुत दूर जाने पर पता चले कि मैं गलत राह की ओर मुड़ गया हूँ। लौटना असम्भव है, किधर वह आगे चले? यदि एक या दूसरा रास्ता पकड़ तो वह कहाँ पहुँच जायगा? प्रयुक्त यान्त्रिकी (अप्लाइड मकेनिक्स) के एक पुराने समर्थक होने के नाते मुझे क्षमा किया जाय कि आज जब मैं तटस्थ होकर आविष्कारों तथा अनुसन्धानों की बारात देख रहा हूँ तब मेरी भ्रान्ति दूर हो रही है। यह प्रश्न बिना पूछे रहा नहीं जा सकता कि यह सब जलूस हमें कहाँ ले जायगा? आखिर इसका लक्ष्य क्या है? मनुष्य की भावी पीढ़ी पर इसका प्रभाव क्या पड़ेगा?

इन शब्दों से ऐसे प्रश्न उठते हैं जो हम सबके हृदय के भीतर मुखर होने के लिए व्याकुल रहते हैं। क्योंकि ये बातें साधिकार कही गयी हैं। ब्रिटिश असोसिएशन फार दि एडवांसमेंट आव सायंस के अध्यक्ष ने उस ऐतिहासिक संस्था के एक सौ एकवें वार्षिक अधिवेशन के अवसर पर इन्हें कहा था।[1] उद्योगवाद और जनतन्त्र की नयी सामाजिक प्ररणात्मक शक्ति पश्चिमी जगत के सार्वजनिक (धार्मिक) समाज के संगठन में व्यय होगा कि इस शक्ति से हमारा विनाश होगा?

यही समस्या कुछ सरल ढंग से पुराने मिस्र के शासकों के सामने भी आयी थी। जब मिस्री नेताओं ने भौतिक चुनौती पर विजय पायी जब उन्होंने निचली नील की घाटी के जल मिट्टी और वनस्पति को मानव की आज्ञा के अधीन कर लिया तब यह प्रश्न उठा कि मिस्र और मिस्रियों के शासक अपने इस महान मानवी संगठन को किस प्रकार अपने अनुशासन में कर सकेंगे। यह नैतिक चुनौती थी। जिस भौतिक तथा मानवी शक्ति को उन्होंने अपने वश में कर लिया था उससे अपनी प्रजा की अवस्था का सुधार कर सकेंगे? क्या यह शक्ति प्रजा को क्या और आगे उस कल्याण की ओर ले जा सकेगी जिस ओर सम्राट और उसके कुछ साथी ले जा चुके थे। क्या ये वही उदार कार्य करेंगे जो ऐसकाइलस नाटक में प्रामीथ्यूज ने किया अथवा जीयुस का नृशंस कार्य करेंगे। हमें उत्तर मालूम है। इन्होंने पिरामिड बनाये और पिरामिडों ने इन नृशंस शासकों को अमर कर दिया, अमर देवताओं के रूप में नहीं बल्कि गरीबों को पीसने वालों के रूप में। उनकी कुख्याति मिस्री लोककथाओं में प्रसारित हुई और अन्त में हेराडोटस ने उन्हें अमर कर दिया। उन्होंने अनुचित ढंग चुना जिसके बदले में उस सभ्यता को मृत्यु ने आ दबोचा जब वह चुनौती जिससे उन्हें प्रेरणा मिल रही थी बाहर से आन्तरिक क्षेत्र में आ गयी थी। आज के संसार में हमारी भी परिस्थिति कुछ वैसी ही है। आज हमारी भी स्थिति कुछ वैसी ही है। आज उद्योगवाद की चुनौती तकनीकी क्षेत्र से नहीं नैतिक क्षेत्र से आ रही है। इसका परिणाम अज्ञात है क्योंकि नयी परिस्थिति के प्रति हमारी प्रतिक्रिया क्या होगी अभी निश्चित नहीं है।

जो भी हो हमने इस अध्याय में जो तर्क उपस्थित किया है वह समाप्त है। हम इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि जब चुनौतियों की श्रृंखला उपस्थित होगी और एक चुनौती के परिणामस्वरूप दूसरी चुनौती आती जो उन्नति की ओर प्रेरित करती है तब ज्यों ज्यों श्रृंखला आगे बढ़ती है,

१ सर आल्फ्रेड इविंग १ सितम्बर, १९३२ के 'द टाइम्स' से उद्धृत।

बाहरी चुनौती के स्थान पर चाहे वह भौतिक हो अथवा मानवी, आन्तरिक चुनौती उपस्थित होती है जो उन्नतिशील सभ्यता की आत्मा होती है। इस प्रकार सभ्यता की ज्या ज्या उन्नति होती है बाहरी चुनौती से कम लडना पडता है और आतरिक चुनौती से अधिक सग्राम करना पडता है। विकास का अथ यह है कि सभ्यता की उन्नति स्वय अपनी परिस्थिति बन जाती है, स्वय ही आक्रामक बनती है और स्वय ही अपना युद्धक्षेत्र बन जाती है। दूसरे शब्दा मे विकास का मापदण्ड आत्मनिणय की आर प्रगति है। आत्मनिणय की आर प्रगति उस चमत्कार को व्यक्त करने का नीरस-सा ढग है कि किस प्रकार जीवन का प्रवेश उस समाज में होता है।

११ विकास का विश्लेषण

(१) समाज और व्यक्ति

यदि हमारी विचारधारा यह रही है कि विकास का मापदण्ड आत्म निणय है और यदि हम समझते ह कि आत्म निणय का अभिप्राय है आत्माभियक्ति, तो हम उस प्रक्रिया का विश्लेषण कर कि किस प्रकार क्रमश सभ्यताओ द्वारा आत्माभिव्यक्ति हुई है तो सभ्यताओ के विकास को ठीक ठीक समझ सकेंगे। साधारणत यह स्पष्ट है कि सभ्यताएँ विकास की प्रक्रिया में अपनी आत्माभिव्यक्ति उन व्यक्तियो के माध्यम से करती ह जो 'उस समाज के ह अथवा जिनका वह समाज है।' *समाज तथा व्यक्ति के सम्बन्ध को निरपेक्ष दृष्टि से दोनो में से किसी सूत्र के* अनुसार हम समझ सकते ह यद्यपि वे एक दूसरे के विरोधी ह। इस भ्रम से यह जान पडता है कि दोना सिद्धात पर्याप्त नही है, इसलिए इस जाच के पहले हम इस पर विचार कर लें कि समाज और व्यक्ति में क्या सम्बन्ध है।

समाज विज्ञान का यह पुराना प्रश्न है और दो बधे-बँधाये इसके उत्तर ह। एक तो यह कि व्यक्ति ही मूल है जिसका अस्तित्व है वही समझा जा सकता है और इन्ही व्यक्तियो की इकाई का समूह समाज है। दूसरा उत्तर यह है कि वास्तविक तो समाज है। समाज अपने में पूण है। व्यक्ति तो इस पूण का केवल एक अग है। समाज के बिना इस अश का कोई अस्तित्व नहा हो सकता, न इसके सम्बन्ध में कोई कल्पना हो सकती है।

व्यक्ति की इकाई का क्लासिक चित्र होमर ने साइक्लोप्स के वणन में खीचा है। अफलातून ने उसी भावना स इसे उद्धत किया है जिस भावना से हम अब करना चाहते ह

> न तो उनकी कोई सभा है, न उनका कोई विधि विधान है। पहाडो की चोटियो पर और माँदो में वे रहते ह।
> *जहाँ अपना पत्नी तथा बाल-बच्चो क प्रति प्रत्येक अपने नियम के अनुसार व्यवहार करता है।*
> और अपने साथियो की बातो की तनिक भी परवाह नही करत।[1]

स्पष्ट है कि इस प्रकार का, परमाणुओ से समाज जीवन साधारण मानव का जावन नही हो सकता। और कभी कोई मनुष्य साइक्लोप्स के समान जीवन नही व्यतीत करता था। क्योंकि मनुष्य सामाजिक प्राणी है। अत मानव और मानवता के विकास के लिए सामाजिक जीवन आवश्यक है। इसके बिना विकास का कोई रूप स्थिर ही नहा हो सकता था। तब दूसरे उत्तर का कि व्यक्ति केवल समाज का एक अग है क्या होगा?

१ आडसी नवीं पुस्तक, ११, ११२–१५। अफलातून द्वारा लाज पुस्तक ३, ६८० पष्ठ में उद्धत।

"ऐसे सामाजिक प्राणी ह जसे मधुमक्खिया और चीटियाँ जिनमें व्यक्तिया में किसी प्रकार का शृंखलाबद्ध सम्बध नही है परतु सभी अपने लिए नही, सारे समाज के लिए काय करते ह और यदि समाज से अलग हो जाते ह ता उनकी मृत्यु हो जाती है।

"मूगे अथवा जल के और पोलिप ऐसी घनी बस्ती बना लेते ह । उनमें प्रत्येक को अलग से निस्सकोच जीव कहा जा सकता है किन्तु एक दूसरे से व इस प्रकार लगे रहते ह कि सबके साथ मिलकर एक हो जाते ह । इसमें व्यक्ति कौन रहा ? औतिकी विज्ञान (हिस्टोलाजी) की कहानी सुनिए। उसके अनुसार सभी जन्तु, जिनमें मनुष्य भी सम्मिलित है, असख्य इकाइया से मिलकर बने ह जिन्हें कोषाणु कहते ह । इनमें से कुछ कोषाणु बहुत स्वतन्त्र होते ह और हम यह समझने पर विवश होते हैं कि शरीर का उनसे उसी प्रकार का सम्बध है जैसे मूगे के पालिपा की बस्ती में किसी इकाई का होता है, अथवा जिस प्रकार पूरी वस्ती में साइफोनोफोरा हाता है। यह निष्कष और भी पुष्ट हो जाता है जब हम यह देखते ह कि असख्य स्वतन्त्र जीव, प्रोटोजोआ, ऐसे ह जो उन कोषाणुओं के समान ह जिनसे मनुष्य का शरीर बना है । अन्तर केवल यह है कि मनुष्य के शरीर में ये एक दूसरे से सयुक्त ह और वे प्रोटोजोआ अलग स्वतन्त्र ह ।

"एक प्रकार सारा जव जगत् (आरगेनिक वल्ड) एक महान व्यक्ति है। यह ठीक है कि वह अस्पष्ट और उचित ढग से सम्बद्ध नही है फिर भी परस्पर निभर रहने वाला एक पूण है । यदि कोई ऐसी दुघटना हो कि सारी हरी वनस्पति या सब जीवाणु (बक्टीरिया) नष्ट हो जायें तो ससार में काई जीवधारी रह नहीं सकता ।[१]

जबकि प्रकृति के सम्बध में जो बात कही गयी ह वे मनुष्य के लिए भी ठीक उतरती ह ? क्या मनुष्य भी साइक्लोप्स की भाति स्वतन्त्र होकर समाज के शरीर में केवल एक कोषाणु है ? या यह महान् जविक जगत् कवल एक कोषाणु है ? हाब्स की पुस्तक 'लेवियाथान' के आरम्भ म सामाजिक मनुष्य का शरीर अनेक अनेक्सोगोरियन तत्त्वा स बना है जिन्हें मनुष्य कहते ह । मानो सामाजिक सविदा (सोशल कटेक्ट) ने जादू से साइक्लाप्स को कोषाणु बना दिया । उन्नीसवी शती में हरबट स्पेंसर और बीसवी में आस्वल्ड स्पग्लर ने मानव समाज का गम्भीरता पूवक शरीर माना है। दूसरे लेखक का कथन है—'किसी सभ्यता (कुल्टूर) का जन्म उस समय होता है जब स्थायी शशवमानवता का आदिम मानसिक परिस्थिति में काई महान् आत्मा जाग्रत हाती है और अपने को अलग कर लती है । आकारहीन तत्त्वा से एक रूप गढ़ती है । सीमाहीन और स्थायी अवस्था स सीमित और प्रगतिशील जीवन को जन्म देती है। यह आत्मा उस देश की सीमित धरती पर प्रस्फुटित होती है और पौधे के समान उससे लगी रहती है । इसी के विपरीत सभ्यता का विनाश तब होता है जब इस आत्मा ने, जातिया भाषा धम, कला, विज्ञान तथा राज्य की सारी सम्भावनाओं की अनुभूति प्राप्त कर ली है और तब वह जिस आदिम मानव स्थिति से उत्पन्न हुई उसी में मिल जाती है ।"[२]

इस विचार की आलोचना एक अग्रेजी लेखक ने अपनी पुस्तक में की है जो उसी माल

१ जे० एस० हक्सले दि इंडिविजुअल इन दि एनिमल किंगडम, प० ३६–८ तथा १२५ ।
२ ओ० स्पेंग्लर डर उनटरगेंग डेस एवडलडेस, खण्ड १, १५–२२ सस्करण, प० १५३ ।

प्रकाशित हुई थी। 'समाज शास्त्र के सिद्धान्तवादियों ने अपने विषय की प्रणाली और शब्दावली के प्रयोग करने के बजाय बार-बार समाज के तथ्यों और मूल्यों का किसी-न किसी विज्ञान या सिद्धान्त के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। भौतिक विज्ञान की समानता (एनालोजी) के आधार पर समाज को उन्होंने यन्त्र बताया, जीव विज्ञान से तुलना करके उन्होंने उस प्राणी प्रमाणित करने की चेष्टा की। दर्शन अथवा मनो विज्ञान का समता निर्धारित कर उन्होंने समाज का व्यक्ति बताने पर जोर दिया और कभी-कभी धार्मिक समानता से उन्होंने इसे ईश्वर बनाने का भ्रम उत्पन्न किया।'

अधिक तथा मानवशास्त्रीय समानता उतनी हानिकर नहीं है जब यह आदिम समाज अथवा अविकसित सभ्यताओं के साथ लागू की जाती है। किन्तु जहाँ सभ्यताएँ विकसित हो रही हैं उनके समाज तथा व्यक्ति के सम्बन्ध की तुलना इनसे ठीक नहीं होती। ऐसी समानताओं को लाना ऐतिहासिक बुद्धि की दुर्बलता है अथवा गप्पबाजी है। इसका संकेत ऊपर किया जा चुका है। यह प्रवृत्ति कि 'ब्रिटेन' 'फ्रांस', 'प्रजातन्त्र', 'द प्रेस', 'द टर्फ' को सजीव बनाना और संस्था के नाम से पुकारना और इन अमूर्त संस्थाओं को मानव मानना ठीक नहीं है। यह अच्छी तरह स्पष्ट है कि समाज को जीवित या व्यक्ति का रूप देकर हम समाज और उसके व्यक्तिगत सदस्यों के सम्बन्ध को समझ नहीं सकते।

तब मानव समाज और उसके व्यक्तियों के सम्बन्ध के बताने का कौन ढंग उचित हो सकता है। सच्ची बात तो यह है कि मानव समाज मनुष्य के आपसी सम्बन्धों की संस्था है। मनुष्य केवल व्यक्ति नहीं है सामाजिक प्राणी है। एक दूसरे से सम्बन्ध बिना वह जी नहीं सकता। हम कह सकते हैं कि समाज व्यक्तियों के सम्बन्ध का परिणाम है। इसकी उत्पत्ति इस कारण होता है कि एक व्यक्ति का कार्यक्षेत्र दूसरे व्यक्ति के कार्यक्षेत्र से सम्बन्धित होता है। इस सम्बन्ध के कारण व्यक्तियों का कार्य समान हो जाता है और इसी समान क्षेत्र को हम समाज कहते हैं।

यदि यह परिभाषा मान ली जाय तो इससे महत्त्वपूर्ण किन्तु स्पष्ट परिणाम निकलता है। समाज 'कार्यक्षेत्र' है किन्तु कार्य का स्रोत व्यक्ति है। इसी बात को बर्गसा ने जोरदार शब्दों में कहा है हम इतिहास में अचेतन तत्त्व पर विश्वास नहीं करते। बहुत-सी अज्ञात विचार धाराएं, जिसके सम्बन्ध में बड़ी चर्चा हुई है इसलिए प्रवाहित होता है कि एक या अधिक मनुष्य ही अपने समुदाय को किसी एक ओर बहा ले गये हैं। यह कहना कि सामाजिक प्रगति अपने आप समाज के इतिहास के किसी काल में किसी आत्मिक परिस्थिति के कारण होता है बेकार है। जब समाज एक प्रयोग का निश्चय कर लेता है और इस कारण आगे कूदता है तब प्रगति होती है। इसका अर्थ यह है कि समाज को विश्वास हुआ होगा अथवा कम से-कम वह आन्दोलन के लिए तैयार हुआ होगा। और यह आन्दोलन किसी व्यक्ति द्वारा किया गया होगा।[२]

ये व्यक्ति, जो समाजों में जिनमें वे रहते हैं गतिशीलता उत्पन्न करते हैं उनमें साधारण मनुष्यों से कुछ अधिक क्षमता होती है। उनके कार्य ऐसे होते हैं जो साधारण मनुष्यों को चमत्कार लगते

१ जी० डी० एच० कोल सोशल थियरी, पृ० १३।
२ एच० बर्गसा लाइ सोर्स डि ला मोराल एट डि ला रिलिजन, पृ० ३३३ तथा ३७३।

हू क्योकि वे सचमुच महामानव होते हैं, केवल आलकारिक भाषा में नहीं । "मनुष्य को सामाजिक प्राणी बनने के लिए जो कुछ भी आवश्यक था प्रकृति ने किया । जिस प्रकार प्रतिभाशाली मनुष्य साधारण मनुष्यो की बुद्धि के आगे चला जाता है, उसी प्रकार ऐसी विशिष्ट आत्मा समय-समय पर आती है जो समझती है कि हमारा सम्बन्ध विश्व भर की आत्माओ से है और अपने को अपने समुदाय के भीतर ही सीमित रखने के बजाय प्रेम की शक्ति से प्रेरित होकर सारे विश्व से अपनी बातें कहती है । इस प्रकार की प्रत्येक आत्मा ऐसी है मानो एक व्यक्ति में सारी जाति का समावेश है ।"[१]

इन अतिमानव आत्माओ के चरित्र का जो आदिम समाज के सामाजिक जीवन की शृखला को छोडकर नया सजन करते हू व्यक्तित्व कहा जा सकता है । व्यक्तित्व के आतरिक विकास के परिणामस्वरूप ही नये निर्माण का काय होता है और इन्ही के द्वारा मानव समाज का विकास होता है । बगसा के अनुसार योगी (मिस्टिक) लोग ही अतिमानव व्यक्ति होते हू, यही श्रेष्ठ सजन करते हू और योग की रहस्यवादी अनुभूति के क्षणो में सजनात्मक कार्यों का अकुर फूटता है । उन्ही के शब्दो में इसका विश्लेषण सुनिए —

"महान् योगियो (मिस्टिक) की आत्मा रहस्यवादी अनुभूति के सुखद क्षणो में विराम नही कर लेती कि यात्रा की मजिल पूरी हो गयी । अनुभूति के क्षण का विश्राम का समय समझना चाहिए । वैसा ही विश्राम जसा स्टेशन पर रेल्वे इजन का होता है । जिसमें भाप का दबाव भरा रहता है और इसलिए रुकता है कि *आगे तीव्र गति से चले । महान् योगियो के हृदय में इसी प्रकार सत्य* की शक्ति गतिशील होने के लिए निकलती है । उसकी इच्छा होती है कि ईश्वर की कृपा से मानव *के सजन की क्रिया को पूण करे योगी की शक्ति जिस ओर गतिशील होती है उसी ओर* जीवन की शक्ति भी प्रवाहित होती है । यही शक्ति है जो पूण रूप से विशिष्ट मनुष्यो को प्रेरित करती है और उनमें यह इच्छा उत्पन्न होती है कि सारे मानव समाज पर अपनी छाप अकित कर दें । साथ ही एक ऐसी विरोधात्मक बात होती है जिसे व जानते हू । वह यह कि जो वस्तु स्वय निर्मित हो वह निर्माण करने का प्रयत्न करे । जिसकी गति रुक गयी हो वह चलना आरम्भ कर ।"[२]

यह विरोध उस गतिशील सामाजिक जीवन की पहेली है जो रहस्यमय व्यक्तियो के प्रादुर्भाव के समय उपस्थित होती है । यह सजनकर्ता इस प्रकार प्रेरित होता है कि अपने साथियो को भी सजनशील बना देता है । वह अपने साथियो को भी *अपनी ही भावना मे ढाल देता है । योगी* पुरुष के सूक्ष्म जगत् म (उसकी आत्मा में) जो सजनात्मक परिवतन होता है उसे पूण तथा दृढ होने के लिए जगत् में भी परिवतन होना आवश्यक है किन्तु जिस जगत् में उसका परिवतन हुआ है उसी जगत् में उसके ऐसे साथी हैं जिनमें परिवतन नही हुआ है । उस अपरिवर्तित जगत् को परिवर्तित करने में अपरिवर्तित लोगो की ओर से रुकावट उपस्थित होती हू क्योकि इनमें गतिहीनता है । यह गतिहीनता उन्हे अपरिवर्तित रूप में ही रखेगी ।

१ वही, पृ० ६६ ।

२ वही, पृ० २४६–६१ । पाठकों ने यह अनुभव किया होगा कि बगसों के इतिहास का दशन कारलाइस के दशन से कितना मिलता है ।—सम्पादक

इस सामाजिक परिस्थिति से उन्माद उत्पन्न हो जाती है। यदि सृजनकारी प्रतिभा अपने समाज में परिवर्तन करने में विफल होती है तो उसकी सृजनात्मक प्रतिभा उसके लिए विनाशकारी सिद्ध होगी। वह अपने वातावरण से अलग हो जायगा। कार्य शक्ति समाप्त हो जाने पर उसकी आत्मा शक्ति भी समाप्त हो जायगी। चाहे उसके साथी उस मुकाम पर पहुँचा दें जैसे अन्य सामाजिक जन्तुओं अथवा कीड़ों के जीवन में होता है। और यदि वह प्रतिभाशाली व्यक्ति जनसाधारण की संकीर्णता अथवा विरोध पर विजय पा जाता है तो अपनी परिस्थिति अपनी आत्मा के अनुरूप समाज को भी बना देता है और साधारण पुरुष अथवा स्त्री के जीवन को तबतक असह्य बनाए रखता है जबतक कि वे उसी के अनुरूप अपने जीवन को न बना लें।

बाइबिल में जो निम्नलिखित यीशू का कथन बताया गया है उसका यही अभिप्राय है —

'यह न समझो कि मैं संसार में शान्ति के लिए आया हूँ—मैं शान्ति का सन्देश नहीं, तलवार का सन्देश देने आया हूँ क्योंकि मैं इसलिए आया हूँ कि पुत्र को पिता के विरोध में खड़ा करूँ, पुत्री को माता के विरोध में और बहू को सास के विरोध में। और लोगों के बैरी उनके घर वाले ही होंगे।'

सामाजिक सम्बन्ध के ... सम्भव है जब एक बार प्रतिभाशाली व्यक्ति के प्रभाव का आरम्भ

भी है। हमारा पश्चिमी वैज्ञानिक ज्ञान और हमारी तकनीक जो उस ज्ञान को कार्यान्वित करती है भयकर रूप से कुछ चुने हुए सीमित लोगो के हाथो में है। लोकतन्त्र तथा उद्योगवाद की नयी सामाजिक शक्तियाँ बहुत थोडे मौलिक लोगो द्वारा निर्मित हुई है और अधिकाश मानव उसी बौद्धिक तथा नैतिक स्तर पर है जिसपर वह इन शक्तियो के आविर्भाव के पहले था। सच पूछिए तो इस 'पश्चिम के ससार के नमक' के स्वाद के समाप्त होने का भय है क्योकि पश्चिमी समाज के अधिकाश लोगो को उसका स्वाद मिला ही नहीं।

यह तथ्य कि सभ्यताओ का विकास कुछ मौलिक विचार के व्यक्तियो अथवा अल्प सख्यको द्वारा होता है यह भी साथ साथ बताता है कि बहुसख्यक लोग पीछे छूट जाते है जब तक नेता लोग कोई ऐसी व्यवस्था न करे कि इस अकर्मण्य पिछडी बहुसख्या को अपने साथ साथ न ले चलें। इस विचार के कारण हमें सभ्य तथा पिछडे समाजो के—जिन पर हम अभी तक विचार करते आये है—अन्तर की परिभाषा में कुछ परिवर्तन करना होगा। इस अध्ययन में पहले हमने कहा है कि आदिम समाजो का हमें जो ज्ञान है उसके अनुसार वे स्थैतिक (स्टेटिक) है और अविकसित सभ्यताओ को छोडकर सब गत्यात्मक है। अब हम इस सम्बन्ध में यह कहना चाहेंगे कि प्रगतिशील सभ्यताओ तथा स्थतिक सभ्यताओ में गत्यात्मक दृष्टि का सामाजिक सस्थाओ का तथा मौलिक व्यक्तियो का अन्तर है। और इसके साथ हम यह भी कहेंगे कि ये मौलिक व्यक्ति अधिक से अधिक भी जब उनकी सख्या होगी तब भी समाज मे उनकी अल्प सख्या होगी। प्रत्येक विकासशील सभ्यता में भी उस समाज की बहुत बडी सख्या उसी गतिहीन तथा निष्क्रिय स्थिति में रहती है जिस स्थतिक परिस्थिति में आदिम समाज के लोग रहते है। और भी। प्रगतिशील सभ्यता के अधिकाश लोगो में शिक्षा की ऊपरी वारनिश केवल होती है नही तो उनमे भी आदिम समाज के मनुष्यो की भाँति ही भावनाएँ होती है। यहा उस कथन की सच्चाई हम पाते है कि मानव समाज कभी बदलता नहीं। विशिष्ट व्यक्ति—प्रतिभा सम्पन्न रहस्यवादी महामानव—जो कुछ भी उन्हे कहिए, साधारण मानवता की ढेरी मे केवल अश में ही है।

अब हमें इस पर विचार करना है कि ये थोडे गतिशील व्यक्ति समाज के रूढिवाद को तोडने में किस प्रकार सफल होते है और अपनी विजय को स्थायी बनाते है। अपनी प्रगति को सामाजिक पराजय से सुरक्षित रखते है और अपनी सामाजिक परिस्थिति में प्रगति करते रहते है। इस समस्या को सुलझाने के लिए—

'दोहरे प्रयत्न की आवश्यकता है, कुछ थोडे लोग नयी बात उत्पन्न करने का प्रयत्न करते है और शेष इस बात की चेष्टा करते है कि यह नयी बात हमारी परिस्थिति के अनुकूल हो और हम नयी परिस्थिति के अनुकूल हो। समाज को सभ्य तब कहा जाता है जब ये दोनो कार्य प्रारम्भ होने वाले और उसके अनुकूल आचरण होने वाले—साथ-साथ चले। असभ्य समाजो में विशेष व्यक्तियो का अभाव हो ऐसा नही है। (कोई कारण नही है कि प्रकृति ने सब युगो में और सब स्थानो पर ऐसे व्यक्ति न पैदा किये हो)। असभ्य समाजो में कमी इस बात की जान पडती है कि ऐसे व्यक्ति नही है जो अपनी विशेषता का इस प्रकार प्रयोग कर सकें कि समाज के शेष व्यक्ति उसका नेतृत्व ग्रहण करे।'[१]

१ बर्गसो पहले वर्णित पुस्तक, पृ० १८१।

इस सामाजिक परिस्थिति से उलझन उत्पन्न हो जाती है। यदि सजनकारी प्रतिभा अपने समाज में परिवर्तन करने में विफल होती है तो उसकी सजनात्मक प्रतिभा उसके लिए विनाशकारी सिद्ध होगी। वह अपने कार्यक्षेत्र से अलग हो जायगा। कार्य शक्ति समाप्त हो जाने पर उसकी जीवनी शक्ति भी समाप्त हो जायगी। चाहे उसके साथी उस सुरलोक न पहुँचा दें जैसे अन्य सामाजिक जन्तुओं अथवा कीडो के जीवन में होता है। और यदि यह प्रतिभाशाली व्यक्ति अपने साथियों की गतिहीनता अथवा विरोध पर विजय पा जाता है तो अपनी परिवर्तित आत्मा के अनुरूप समाज को भी बना देता है और साधारण पुरुष अथवा स्त्री के जीवन को तबतक असह्य बनाये रखता है जबतक कि वे उसी के अनुरूप अपने जीवन को न बना लें।

बाइबिल में जो निम्नलिखित यीसू का कथन बताया गया है, उसका यही अभिप्राय है —

यह न समझो कि मैं ससार में शान्ति के लिए आया हूँ—मैं शान्ति का सन्देश नही, तलवार का सन्देश देने आया हूँ 'क्योंकि मैं इसलिए आया हूँ कि पुत्र को पिता के विरोध में खडा करूँ, पुत्री को माता के विरोध में और वधू को सास के विरोध में।' और लोगों के बैरी उसके घर वाले ही होंगे।"[1]

सामाजिक सन्तुलन तब सम्भव है जब एक बार प्रतिभाशाली व्यक्ति के प्रभाव का आक्रमण प्रारम्भ हो जाता है।

इसका सबसे सरल समाधान इस प्रकार हो सकता है कि समाज का प्रत्येक व्यक्ति स्वतन्त्र रूप से बराबर शक्ति से और सब ओर आक्रमण आरम्भ कर दे। इसका परिणाम यह होगा कि बिना तनाव या विकृति के विकास होने लगेगा। किन्तु यह कहना अनावश्यक होगा कि किसी प्रतिभा के आवाहन के उत्तर में शत प्रतिशत प्रतिक्रिया नहीं होती। इतिहास में ऐसे उदाहरण अवश्य मिलते हैं जब कोई वैज्ञानिक अथवा धार्मिक विचार जनता के सम्मुख आता है तब अनेक बुद्धिमानों के मन में एक ही समय और स्वतन्त्र रूप से उसकी प्रतिक्रिया होती है। किन्तु इस प्रकार के उत्तम से उत्तम उदाहरणों में ऐसे आदमियों की संख्या उँगली पर गिनी जा सकती है जिनके मन में स्वतन्त्र रूप से और एक ही प्रतिक्रिया हुई हो। हजारों और लाखों व्यक्ति ऐसे रहते हैं जिनपर इन विचारों का कुछ भी प्रभाव नहीं पडता। सच्ची बात तो यह है कि जब किसी व्यक्ति द्वारा निजी तथा मौलिक सृजन की विचारधारा प्रवाहित होती है तब सब लोग समान रूप से उसे ग्रहण नहीं करते। इसका कारण यह है कि प्रत्येक व्यक्ति में सजनात्मक शक्ति निहित रहती है और सब एक ही वातावरण में रहते हैं। इसलिए जब सजनशील व्यक्ति उभरता है तब उसे बहुत बड़े निष्क्रिय समूह का सामना करना पड़ता है यद्यपि उसके साथ थोड़े से उसी के समान क्रियाशील व्यक्ति भी रहते हैं। जितना भी सामाजिक निर्माण हुआ है वह या तो एक व्यक्ति की कृति है अथवा कुछ थोड़े से निर्माताओं की है। और प्रगति के हर कदम पर समाज की बहुत बड़ी संख्या पीछे छूट जाती है। यदि आज हम ससार के महान् धार्मिक संगठनों का जैसे ईसाई इस्लामी तथा हिन्दू पर विचार करें तो हमको पता चलेगा कि उनके अधिकांश अनुयायी चाहे जिस भी मौलिक रूप से वे अपने धर्म का गुणगान करते हों, ऐसी मानसिक परिस्थिति में रहते हैं जो अधर्मियों से अधिक दूर नहीं है। यही हाल आज की भौतिक सभ्यता की उपलब्धि का

१ मत्ती १० । ३४–६ इसकी तुलना कीजिए, ल्यूक १२, ५१–३ ।

भी है। हमारा पश्चिमी वैज्ञानिक ज्ञान और हमारी तकनीक जो उस ज्ञान को कार्यान्वित करती है भयकर रूप से कुछ चुने हुए सीमित लोगो के हाथो में है। लोकतन्त्र तथा उद्योगवाद की नयी सामाजिक शक्तियां बहुत थोडे मौलिक लोगो द्वारा निर्मित हुई है और अधिकाश मानव उसी बौद्धिक तथा नैतिक स्तर पर है जिसपर वह इन शक्तियो के आविर्भाव के पहले था। सच पूछिए तो इस 'पश्चिम के ससार के नमक' के स्वाद के समाप्त होने का भय है क्योकि पश्चिमी समाज के अधिकाश लोगो को उसका स्वाद मिला ही नही।

यह तथ्य कि सभ्यताओ का विकास कुछ मौलिक विचार के व्यक्तियो अथवा अल्प सख्यको द्वारा होता है यह भी साथ-साथ बताता है कि बहुसख्यक लोग पीछे छूट जाते है जब तक नेता लोग कोई ऐसी व्यवस्था न करे कि इस अकर्मण्य पिछडी बहुसख्या को अपने साथ साथ न ले चलें। इस विचार के कारण हमें सभ्य तथा पिछडे समाजो के—जिन पर हम अभी तक विचार करते आये है—अतर की परिभाषा मे कुछ परिवर्तन करना होगा। इस अध्ययन में पहले हमने कहा है कि आदिम समाजो का हमें जो ज्ञान है उसके अनुसार वे स्थतिक (स्टेटिक) है और अविकसित सभ्यताओ को छोडकर सब गत्यात्मक है। अब हम इस सम्बन्ध मे यह कहना चाहेंगे कि प्रगतिशील सभ्यताओ तथा स्थतिक सभ्यताओ में गत्यात्मक दृष्टि का सामाजिक सस्थाओ का तथा मौलिक व्यक्तियो का अतर है। और इसके साथ हम यह भी कहेंगे कि ये मौलिक व्यक्ति अधिक से अधिक भी जब उनकी सख्या होगी तब भी समाज में उनकी अल्प सख्या होगी। प्रत्येक विकासशील सभ्यता में भी उस समाज की बहुत बडी सख्या उसी गतिहीन तथा निष्क्रिय स्थिति में रहती है जिस स्थैतिक परिस्थिति में आदिम समाज के लोग रहते है। और भी। प्रगतिशील सभ्यता के अधिकाश लोगो में शिक्षा की ऊपरी वार्निश केवल होती है नही तो उनमें भी आदिम समाज के मनुष्यो की भाति ही भावनाएँ होती है। यहाँ उस कथन की सच्चाई हम पाते है कि मानव समाज कभी बदलता नही। विशिष्ट व्यक्ति—प्रतिभा सम्पन्न रहस्यवादी महामानव—जो कुछ भी उन्हें कहिए साधारण मानवता की ढेरी में केवल अश में ही है।

अब हमें इस पर विचार करना है कि ये थोडे गतिशील व्यक्ति समाज के रूढिवाद को तोडने में किस प्रकार सफल होते है और अपनी विजय को स्थायी बनाते है। अपनी प्रगति का सामाजिक पराजय से सुरक्षित रखते है और अपनी सामाजिक परिस्थिति में प्रगति करते रहते है। इस समस्या को सुलझाने के लिए—

'दोहरे प्रयत्न की आवश्यकता है कुछ थोडे लोग नयी बात उत्पन्न करने का प्रयत्न करते है और शेष इस बात की चेष्टा करते है कि यह नयी बात हमारी परिस्थिति के अनुकूल हो और हम नयी परिस्थिति के अनुकूल हो। समाज को सभ्य तब कहा जाता है जब ये दोनो कार्य प्रारम्भ होने वाले और उसके अनुकूल आचरण होने वाले—साथ-साथ चले। असभ्य समाजो में विशेष व्यक्तियो का अभाव हो ऐसा नही है। (कोई कारण नही है कि प्रकृति ने सब युगो में और सब स्थानो पर ऐसे व्यक्ति न पैदा किये हो)। असभ्य समाजो में कभी इस बात की जान पडती है कि ऐसे व्यक्ति नही है जो अपनी विशेषता का इस प्रकार प्रयोग कर सकें कि समाज के शेष व्यक्ति उसका नेतृत्व ग्रहण करे।'[1]

१ बर्गसों पहले वर्णित पुस्तक, पृ० १८१।

निष्क्रिय बहुसंख्यक क्रियाशील अल्पसंख्या के नेतृत्व को स्वीकार कर, इस समस्या के सुलझाने के दो ढंग हो सकते हैं। एक व्यवहारात्मक दूसरा, आत्म। पहला ढंग है कठोर अनुशासन द्वारा लोगों में सुधार करना—दूसरा रहस्यवादी। पहले के लिए ऐसी निश्चितता होनी चाहिए जिसमें जड़ न रह जाय। दूसरा ढंग यह है कि दूसरे के (नेता के) व्यक्तित्व का अनुसरण करने का प्रलोभन औरों को दिया जाय। दोनों में आत्मिक संयोग की भावना उत्पन्न की जाय, यहाँ तक कि उसके साथ एक हो जाय।[१]

एक आत्मा दूसरी आत्मा में मौलिकता की शक्ति का प्रकाश पैदा करे, अवश्य ही आदर्श ढंग है, किन्तु इसी पर निर्भर रहना 'पूर्णता' से ही सम्भव है। निष्क्रिय जनता को गतिशील नेताओं के समकक्ष लाने के लिए व्यवहार में अनुकरण की प्रवृत्ति ही उत्पन्न करनी पड़ती है जिसमें प्रेरणा कम, अनुशासन ही अधिक व्यावहारिक होता है।

अनुकरण का प्रयोग इस कार्य के लिए आवश्यक है क्योंकि अनुकरण मनुष्य की मूल प्रवृत्तियों में से है। हमने पहले बताया है कि अनुकरण सामाजिक जीवन का व्यापक गुण है। आदिम समाजों में पुरानी पीढ़ी के जीवित व्यक्तियों का अनुकरण होता है या उन मृत व्यक्तियों का जिन्होंने किसी प्रथा का पुनः स्थापन किया था। जिन समाजों की सभ्यता प्रगतिशील है उनमें उन लोगों का अनुकरण किया जाता है जिन्होंने किसी नवीन विचार, प्रथा अथवा कार्य की सृष्टि की है। शक्ति वही है किन्तु दोनों में विरोधी ढंग से प्रयुक्त होती है।

आदिम समाज के सम्बन्ध में सामाजिक अनुशासन का जो हमने फिर से विचार किया है और जो बाहर से लादा जाता है तथा जो स्वाभाविक ढंग से उन्हें क्रियाशील करता है वह कठिन तथा बौद्धिक सम्पर्क स्थापित कर सकता है वह घनिष्ठ व्यक्तिगत तादात्म्य ला सकता है जिसके सम्बन्ध में अफलातून ने कहा था कि यही एक ढंग है जिससे एक व्यक्ति से दूसरे तक दार्शनिक विचार लाये जा सकते हैं। इसके उत्तर में यही कहा जा सकता है कि मानव समूह में जो जड़ता है उस पर अफलातून की प्रणाली से विजय नहीं प्राप्त की जा सकती। बहुसंख्यक जनता को अल्पसंख्यक के साथ ले जाने के लिए यह आदर्श ढंग तो है कि व्यक्तिगत बौद्धिक सम्पर्क स्थापित किया जाय किन्तु उसे सफल बनाने के लिए व्यावहारिक ढंग सार्वजनिक सामाजिक अनुशासन आवश्यक है। यही आदिम मानव का अभ्यास है। और जब नये नेता कार्यक्षेत्र में प्रवेश करते हैं तब जनता को अपने संग ले चलने के लिए और सामाजिक प्रगति के लिए यही ढंग सफल होता है।

अनुकरण से वे सामाजिक सम्पदाएँ रुझान (ऐप्टिचूड) या संवेग (एमोशन) या विचार (आइडिया) ग्रहण की जा सकती हैं जो ग्रहण करने वाला के पास प्रारम्भ में नहीं थी और जो उन्हें कभी न प्राप्त होती यदि वे उनके सम्पर्क में न आये होते और उनका अनुकरण न करते जिनके पास ये सम्पदाएँ थीं। वास्तव में यह सरल ढंग है। आगे चलकर इस अध्ययन में हम देखेंगे कि यह लक्ष्य की ओर जाने के लिए आवश्यक राह है किन्तु साथ ही साथ सन्देहपूर्ण भी है। क्योंकि लाभ के साथ-साथ सभ्यता का इससे विनाश भी हो सकता है। किन्तु इस खतरे पर यहाँ विचार करना असामयिक होगा।

१ बर्गसाँ वही पुस्तक, पृ० ९८–९९।

(२) अलग होना और लौटना व्यक्ति

गत अध्याय में हमने उन सजन व्यक्तियों के सम्बन्ध में अध्ययन किया है जो उच्चतम आत्मिक स्थिति को प्राप्त करते हैं और तब रहस्यात्मक पथ पर चलते हैं। हमने देखा है कि पहले वह भावातिरेक में समाधि की अवस्था को पहुँचते हैं और क्रियाहीन हो जाते हैं और तब इस क्रियाहीनता से पुन नये और उच्चतर स्तर पर क्रियाशीलता की ओर आते हैं। ऐसी भाषा के प्रयोग से हम मनुष्य की मानसिक अनुभूति शब्दों में सामाजिक उन्नति का वर्णन करते हैं। इसी दोहरी गति को, हम उस मनुष्य तथा जिस समाज का वह नेता है उसके भौतिक सम्बन्ध का वर्णन करें तो कह सकते हैं कि यह 'हट जाना और फिर लौटना' है। हट जाने पर वह व्यक्ति अपने अन्दर की शक्ति का ज्ञान प्राप्त करता है। यह शक्ति शायद सुषुप्त रह जाती यदि वह व्यक्ति सामाजिक बाधाओं और सामाजिक उन्नति के लिए जो परिश्रम करना पड़ता है उसका पहले थोड़े समय के लिए अनुभव न करता। वह अपने मन से अपने आप अथवा उन परिस्थितियों के कारण हट जाने को विवश हो, जिस पर उसका कोई वश नहीं है। दोनों अवस्थाओं में हट जाने से ऐसा अवसर मिलता है कि वह एकान्तवासी (एकराइट) बन सके। एकराइट यूनानी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है 'वह जो अलग हो जाता है।' किन्तु एकान्तवास का कोई अभिप्राय नहीं है न कोई अर्थ हो सकता है जब तक कि फिर लौट कर सक्रिय होने की बात न हो। जब तक वह उस सामाजिक वातावरण में फिर नये रूप में न आ जाय जिसमें से वह अलग हुआ था। वह सामाजिक प्राणी सदा के लिए अलग नहीं रह सकता। नहीं तो वह मानवता से अलग हो जायगा और अरस्तू के शब्दों में 'या तो पशु हो जायगा या देवता'। सारी प्रवृत्ति का उद्देश्य ही लौटना है। यही उसका मूल कारण है।

सिनाई पर्वत पर हजरत मूसा के अकेले जाने की जो सिरियाइ कथा है उससे यह स्पष्ट है। मूसा यहवा[1] की आज्ञा के अनुसार पहाड़ पर उनसे बात करने गया था। ईश्वर ने केवल मूसा को पुकारा। इसरायल[2] के और सारे परिवार को दूर ही रहने के लिए कहा गया। मूसा को बुलाने का मुख्य उद्देश्य यही है कि नये नियमों को वह ले जाकर यहूदियों को दे क्योंकि वे इस योग्य नहीं हैं कि इन नियमों को प्राप्त कर सकें।

'और मूसा ईश्वर के पास गये। पहाड़ों में ईश्वर ने उसे पुकारा और कहा—'इस प्रकार तू याकूब के घराने वालों से कहेगा और इसरायल के पुत्रों से कहेगा। और जब ईश्वर उससे बात समाप्त कर चुका तब उसने दो तख्तियाँ इस वार्ता के प्रमाण में दीं जिन पर ईश्वर के हाथ से लिखा था।'[3]

इसी प्रकार 'लौटने' का महत्त्व ई० चौदहवीं शती के अरबी दार्शनिक इब्न खल्दून ने पैगम्बरी अनुभूति और पैगम्बरी धर्म प्रचार के अपने वर्णन में बताया है।

१ यहूदियों के अनुसार ईश्वर का एक नाम।—अनुवादक
२ याकूब का दूसरा नाम। यहूदियों के पूर्वज।
३ एक्सोडस, १६ का ३ तथा २१ का १८। देखिए, मासिम का, १६ वाँ अध्याय।

उपेक्षा करते थे। अफलातून ने 'लौटने' का जो स्वय चित्रण किया है वह बहुत ही नीरस है और आश्चर्य होता है कि अपने ही बनाये दार्शनिक के प्रति वह इतना हृदयहीन है। किन्तु यदि अफलातूनी व्यवस्था के लिए आवश्यक है कि नेता दार्शनिक ज्ञान प्राप्त कर तो साथ ही यह भी आवश्यक है कि वह दार्शनिक हीन रह जाय। उनके ज्ञान उपलब्धि का अभिप्राय यह है कि वे दार्शनिक शासक बनें। अफलातून ने उन नेताओं के लिए जो प्रणाली बतायी है वह उसी पथ पर ईसाई सन्त (मिस्टिक) भी चले ह।

पथ एक ही है, किन्तु जिस भावना स हलेनी तथा ईसाई आत्माएँ चली वह अलग अलग है। अफलातून यह मान लेता है कि स्वतन्त्र तथा ज्ञानप्राप्त दार्शनिक का व्यक्तिगत हित तथा इच्छाएँ उसके साथियो के हितो के प्रतिकूल हैं क्योकि वे 'अधकार' और मत्यु की छाया में पडे हुए हैं और दुख तथा लोह की श्रृंखला मे बँधे ह।[1] बन्दियो का जो कुछ भी हित हो, अफलातून का दार्शनिक अपने सुख और पूणता की पूर्ति नही कर सकता। क्योकि (उसके अनुसार) एक बार जब दार्शनिक को प्रकाश मिल गया उसके लिए उत्तम बात यही होगी कि वह गुफा के बाहर प्रकाश में सदा सुख मे रह। हेलेनी दर्शन का मुख्य सिद्धान्त यह रहा है कि जीवन की सबसे अच्छी अवस्था ध्यान की अवस्था है। इसके लिए यूनानी शब्द की जगह अग्रेजी शब्द थियरी (सिद्धान्त) है जिसके विपरीत हम लोग प्रेक्टिस (व्यवहार) शब्द का व्यवहार करते है। पाइथागोरस साधना के जीवन को कम के जीवन से बढकर मानते हैं और यही सिद्धान्त सारी हेलेनी परम्परा में व्याप्त है। प्राचीन काल से लेकर हेलेनी समाज के नव अफलातूनी युग तक इस समाज का विघटन हो रहा था। अफलातून का विश्वास था कि उसके दार्शनिक कर्तव्य भावना से प्रेरित होकर ससार के कार्यक्षेत्र में उतरगे, पर ऐसा नही हुआ। उन्होने ऐसा नही किया, एक कारण हो सकता है कि अफलातून की पहले की पीढी में हलेनी सभ्यता को धक्का लगा जिससे वह कभी फिर स्थिर न हो सकी। हेलेनी दार्शनिको ने कमक्षेत्र म क्यो नही पदापण किया इसका कारण स्पष्ट है। उनकी नतिक सीमा विश्वास की एक भूल का परिणाम है। उन्होने समझा कि इस आत्मिक ओडेसी की जो यात्रा उन्होने आरम्भ की थी उसका अन्तिम तथा पूण ध्येय ध्यान में मग्न होना ही है लौटना नही। उन्होने समझा कि ध्यान से कर्तव्य क्षेत्र म लौटना जिस काय में वे रहते ह उसका बलिदान है। उनकी रहस्यवादी अनुभूति में उस मुख्य ईसाई प्रेम के गुण की कमी थी जिसके वशीभूत होकर ईसाई सन्त ध्यान की स्थिति से उतर कर नतिक तथा भौतिक मलिनता की ओर आये जहा ससार के लोगो के उद्धार की आवश्यकता थी।

अलग होने और लौटने का काय मनुष्य के जीवन की ही विशेषता नही है जो मनुष्यो और उनके साथियो के सम्बन्ध में दिखाई देती है। जीव मात्र की यह विशेषता है। वनस्पति जगत् के जीवन में भी मनुष्य को इसका भास होता है जब वह कृषि की ओर देखता है। इसी कारण खेती के सम्बन्ध में उसकी आशा और निराशा की भावना बन गयी है। अन्न के प्रति वर्ष समाप्त होने और फिर उपजने की कथा और कमकाण्ड (रिचुअल) में ऐसा रूप दिया गया है माना वे

१ साम (बाइबिल में) १०७, १०।

'मनुष्य की आत्मा का जन्मजात लक्षण है कि वह अपने मानवी स्वभाव का त्याग कर फरिश्ता का स्वरूप ग्रहण कर। क्षण भर के लिए फरिश्ता बन जाय। यह क्षण उतने ही काल तक रहता है जितना पलक मारने में लगता है। और फिर चला जाता है। उसके पश्चात् आत्मा पुन अपने मानवी स्वभाव को ग्रहण कर लेती है। इसी काल में फरिश्ता के बीच वह उस सन्देश को ग्रहण करता है जो उस मनुष्यों तक पहुँचाता है।'[१]

इस्लामी पैगम्बरी के इस दार्शनिक व्याख्या में हम हेलेनी दर्शन का प्रतिबिम्ब देखते हैं अफलातून का गुफा वाला रूपक। इस वर्णन में साधारण मनुष्यों की उपमा वह गुफा में बन्द कैदियों से देता है जो प्रकाश की ओर पीठ किये उसमें बैठे हैं और उनके पीछे जो लोग चल फिर रहे हैं उनकी परछाई गुफा की दीवार पर वे देखते हैं। ये कैदी समझते हैं कि जो छाया हम गुफा की दीवार पर देख रहे हैं वही वास्तविकता है क्योंकि इनके अतिरिक्त वे और कुछ देख नहीं पाते। फिर अफलातून कल्पना करता है कि एक कैदी एकाएक छोड़ दिया जाता है और उसे प्रकाश की ओर मुह फेरने और बाहर निकलने के लिए विवश किया जाता है। इस मुह फेरने का पहला परिणाम यह होता है कि वह चकाचौंध में पड जाता है और भ्रमित हो जाता है। किन्तु यह स्थिति अधिक देर तक नहीं रहती। क्योंकि देखने की शक्ति उसमें मौजूद है और धीरे धीरे उसकी आँखें बताती हैं कि वास्तविक संसार यह है। उसे फिर गुफा में भेज दिया जाता है। वह फिर इस धुंधलके में उतना ही चकित और भ्रमित हो जाता है जितना प्रकाश में पहले। जैसा पहले वह प्रकाश में जाने पर दुखी हुआ था वैसा ही फिर यहाँ लौटने पर दुखी होता है। इस बार दुखी होने का कारण अधिक उपयुक्त है। क्योंकि जब वह अपने उन साथियों के बीच आता है जिन्होंने कभी सूर्य का प्रकाश नहीं देखा है तब उसे विरोध के सामना करने का भय है। 'अवश्य ही लोग उस पर हँसेंगे और यह कहा जायगा कि उसके चले जाने का यही परिणाम हुआ कि वह अपनी दृष्टि को नष्ट कर के लौटा है। शिक्षा ऊपर की ओर भी उठना मूर्खता है। और उस हलचल मचाने वाले व्यक्ति को जो स्वतन्त्र करने तथा ऊँचे उठने का प्रयत्न करता है यदि पकड़ जाय और मार डालने का अवसर मिले तो अवश्य ही मार डालेंगे।

राबर्ट ब्राउनिंग की कविता के पाठक इस स्थल पर उसकी लाजरस की कल्पना को स्मरण करेंगे। उसकी कल्पना है—लाजरस जो अपनी मृत्यु के चार दिन बाद जी उठा गुफा में लौटा अपनी पहली अवस्था से भिन्न अवस्था में था। और वह इसी बयानी के लाजरस का चालीस वर्ष के बाद वृद्धावस्था का विचित्र वर्णन करशीश के ऐन एपिस्ल (एक पत्र) में वर्णन करता है। करशीश एक अरबी चिकित्सक था जो घूमा करता था और अपनी दूकान के मालिक को जानकारी के लिए बराबर विवरण भेजता था। करशीश के अनुसार बयानी ग्राम के निवासी बेचारे लाजरस को समझ नहीं पाये। उसे वह सरल ग्रामीण मूर्ख समझते थे। किन्तु करशीश ने लाजरस की कहानी सुनी थी और वह गाव वालों के विश्वास को ठीक नहीं समझता था।

ब्राउनिंग का लाजरस लौटने पर कुछ प्रभावकारी नहीं सिद्ध हुआ। न तो वह पैगम्बर हुआ न शहीद। अफलातून के दार्शनिक की भाँति उसके प्रति लोग उदार तो थे किन्तु उसकी

१ इब्न खल्दून मुकद्दमात बैरन एम० डी० स्लेन द्वारा फ्रेंच अनुवाद, जि० २, पृ० ४३७।

उपेक्षा करते थे। अफलातून ने 'लौटने' का जो स्वय चित्रण किया है वह बहुत ही नीरस है और आश्चर्य होता है कि अपने ही बनाये दार्शनिक के प्रति वह इतना हृदयहीन है। किन्तु यदि अफला तूनी व्यवस्था के लिए आवश्यक है कि नेता दार्शनिक ज्ञान प्राप्त कर तो साथ ही यह भी आवश्यक है कि वह दार्शनिक हीन रह जाय। उनके ज्ञान उपलब्धि का अभिप्राय यह है कि वे दार्शनिक शासक बनें। अफलातून ने उन नेताओ के लिए जो प्रणाली बतायी है वह उसी पथ पर ईसाई सन्त (मिस्टिक) भी चले ह।

पथ एक ही है, किन्तु जिस भावना से हेलेनी तथा ईसाई आत्माएँ चला वह अलग अलग है। अफलातून यह मान लेता है कि स्वतन्त्र तथा ज्ञानप्राप्त दार्शनिक का व्यक्तिगत हित तथा इच्छाएँ उसके साथियो के हितो के प्रतिकूल हैं क्योकि वे 'अधकार' और मत्यु की छाया में पडे हुए ह और दुख तथा लोहे की शृखला में बँधे ह।"[1] बन्दियो का जो कुछ भी हित हो, अफलातून का दार्शनिक अपने सुख और पूर्णता की पूर्ति नही कर सकता। क्योकि (उसके अनुसार) एक बार जब दार्श निक को प्रकाश मिल गया उसके लिए उत्तम बात यही होगी कि वह गुफा के बाहर प्रकाश में सदा सुख में रहे। हेलेनी दर्शन का मुख्य सिद्धान्त यह रहा है कि जीवन की सबसे अच्छी अवस्था ध्यान की अवस्था है। इसके लिए यूनानी शब्द की जगह अंग्रेजी शब्द थियरी (सिद्धान्त) है जिसके विपरीत हम लोग 'प्रेक्टिस' (व्यवहार) शब्द का व्यवहार करते ह। पाइथोगोरस साधना के जीवन का कम के जीवन से बढकर मानते ह और यही सिद्धान्त सारी हेलेनी परम्परा में व्याप्त है। प्राचीन काल स लेकर हेलेनी समाज के नव अफलातूनी युग तक इस समाज का विघटन हो रहा था। अफलातून का विश्वास था कि उसके दार्शनिक कर्तव्य भावना से प्रेरित होकर ससार के कार्यक्षेत्र में उतरगे, पर ऐसा नहा हुआ। उन्होने ऐसा नही किया एक कारण हो सकता है कि अफलातून की पहले की पीढ़ी में हेलेनी सभ्यता को धक्का लगा जिससे वह कभी फिर स्थिर न हो सकी। हेलेनी दार्शनिको ने कर्मक्षेत्र में क्यो नही पदार्पण किया इसका कारण स्पष्ट है। उनकी नैतिक सीमा विश्वास की एक भूल का परिणाम है। उन्होने समझा कि इस आत्मिक आडेसी की जो यात्रा उन्होने आरम्भ की थी उसका अन्तिम तथा पूर्ण ध्येय ध्यान में मग्न होना ही है, लौटना नहा। उन्होने समझा कि ध्यान से कर्तव्य क्षेत्र में लौटना जिस कार्य में वे रहते ह उसका बलिदान है। उनकी रहस्यवादी अनुभूति में उस मुख्य ईसाई प्रेम के गुण की कमी थी जिसके वशीभूत होकर ईसाई सन्त ध्यान की स्थिति से उतर कर नैतिक तथा भौतिक मलिनता की ओर आये जहा ससार के लोगो के उद्धार की आवश्यकता थी।

अलग होने और लौटने का कार्य मनुष्य के जीवन की ही विशेषता नही है जो मनुष्यो और उनके साथियो के सम्बन्ध में दिखाई देती है। जीव मात्र की यह विशेषता है। वनस्पति जगत् के जीवन में भी मनुष्य को इसका भास होता है जब वह कृषि की ओर देखता है। इसी कारण खेती के सम्बन्ध में उसकी आशा और निराशा की भावना बन गयी है। अन्न के प्रति वर्ष समाप्त होने और फिर उपजने की कथा और कर्मकाण्ड (रिचुअल) में ऐसा रूप दिया गया है मानो वे

१ साम (बाइबिल में) १०७, १०।

मनुष्य हैं। जगे कोरे या पर्सिफोनी[1] का अपहरण और फिर लौटना या डायानिगस, एडोनिगस, ओसाइरिस अथवा जो कुछ भी—अन्न के अथवा वन के देवता का स्थानीय नाम हो उनकी मृत्यु और पुनर्जन्म का यही अभिप्राय है। उनकी पूजा अथवा उनकी कथा विभिन्न नामों से सब जगह उसी का रूपान्तर करती हैं और उतनी ही व्यापक हैं जितना स्वयं खेती का कार्य।

इसी प्रकार मनुष्य की कल्पना ने अपने जीवन का रूपक पेड़-पौधों के अवसान (निन्ड्रायल) तथा पुनर्जीवन में स्थापित किया। और इस रूपक के ही आधार पर मृत्यु से द्वन्द्व किया है। यह समस्या मनुष्य के मन को, उन्नतिशील सभ्यताओं में, उसी समय चिन्तित करने लगती है जब महान् व्यक्ति साधारण जनता से अलग होने लगते हैं।

कुछ लोग पूछेंगे 'मृत लोग कैसे जी जाते हैं? और किस शरीर से वे आते हैं?

'ए मूर्ख, जो कुछ तू बोता है वह जीवन इसीलिए धारण करता है कि वह मरे और जो कुछ तू बोता है वह इस शरीर में नहीं बोता जिस शरीर में वह फिर उपजेगा बल्कि केवल दाना बोता है। चाहे गेहूँ हो या कोई दूसरा दाना,

'परन्तु ईश्वर जैसा उसका मन होता है वैसा शरीर प्रदान करता है और हर एक बीज अपना शरीर देता है

'इसी प्रकार मृत व्यक्ति का पुनर्जीवन भी है। विकृति (करप्शन) में वह बोया जाता है (मरता है) और पावनता में वह पुनर्जीवित होता है

'अप्रतिष्ठा में वह बोया जाता है प्रतिष्ठा में वह उगता है दुर्बलता में वह बोया जाता है, शक्ति लेकर उगता है'

'प्राकृतिक शरीर में बोया जाता है, आध्यात्मिक शरीर में वह उगता है

'और इसलिए लिखा है 'पहला मनुष्य आदम जीवित आत्मा के रूप में बनाया गया, अंतिम आदम, सजीव करने वाली आत्मा के रूप में

'पहला मानव मिट्टी का है, धरती का, दूसरा स्वर्ग का मालिक।[2]

ऊपर के अवतरण में जो कोरिंथियनों को पाल के पहले पत्र से लिया गया है चार विचार लगातार प्रस्तुत किये गये हैं और प्रत्येक पहले से ऊँचा है। पहला विचार यह है कि हम एक पुनर्जीवन उस समय देखते हैं जब शरत् में फसल की समाप्ति हो जाती है और वसन्त में फिर उसका आगमन हम देखते हैं। दूसरा विचार यह है कि अनाज का पुनर्जीवन मनुष्य के पुनर्जीवन की भविष्यवाणी है। यह सिद्धान्त हेलेनी रहस्यवाद के पहले का है। तीसरा विचार यह है कि मनुष्य का पुनर्जीवन सम्भव है और उसकी प्रकृति में परिवर्तन भी होने की सम्भावना होती है। वह परिवर्तन ईश्वर द्वारा उस काल में होता है जो उसकी मृत्यु और पुनर्जीवन के बीच आता है।

१ पर्सिफोनी एक यूनानी देवी थी। जीयूस की पुत्री। वह जब फूल चुन रही थी यम (प्लूटो) उसे लेकर भाग गया। जब तक वह पाताल में थी, पृथ्वी की देवी ने पृथ्वी में कुछ उत्पन्न होना बन्द कर दिया। अन्त में जीयूस ने उसे पाताल से बुलवाया। उसका हरण और लौटना अनाज के बोने तथा उगने का प्रतीक है।

२ कोरिंथियन्स १५ ३५–८, ४२–५, ४७।

कहा जाता है कि मत व्यक्ति के दूसरे रूप धारण करने का प्रमाण यही है कि बीज फूल तथा फल का रूप ग्रहण करता है। मनुष्य की प्रकृति में यह परिवतन यो होता है कि उसमे अधिक सहन शीलता, सौन्दय, शक्ति तथा आध्यात्मिकता के गुण आ जाते ह। इस अवतरण में चौथा विचार अन्तिम है और उदात्त है। पहले और दूसरे मानव की कल्पना में मत्यु की समस्या की आर ध्यान नही दिया गया और व्यक्ति के पुनर्जीवन को थोडी देर के लिए बढ चढकर माना गया है। दूसरा मानव स्वग का मालिक है। उसके आगमन को पाल एक नयी जाति की सष्टि के रूप में स्वागत करता है जो एक व्यक्ति में निहित होकर आता है जो 'न्याय का देवता' है, जो स्वय ईश्वर से प्रेरणा प्राप्त करता है और अपनी प्रेरणा से अपने साथी दूसरे मानवा का अनुप्राणित करता है और महामानव के स्तर पर उन्हें उठाने की चेष्टा करता है।

अलग हाने और फिर शक्ति तथा वैभव के साथ लौटने का अभिप्राय रहस्यवादी आत्मिक उन्नति में देखा जा सकता है। यही भावना वनस्पति जगत् में है यही भावना मनुष्य ने मृत्यु के पश्चात् के सम्बन्ध में जो अनेक कल्पनाएँ हैं उसमें भी है। जिसमें अमरता की भावना है या नीची श्रेणी से उच्च श्रेणी में परिवतन का भाव है। यह विश्वव्यापी विषय है। इसकी बुनियाद पर अनेक प्राचीन पौराणिक कल्पनाएँ ह। इन कल्पनाओ द्वारा सावभौमिक सत्य प्रकट किया गया है।

इसी अभिप्राय का परिवर्तित रूप ऐसे त्यक्त शिशुआ की पौराणिक कहानिया ह। राजकुल में उत्पन्न बच्चा फेंक दिया जाता है। कभी-कभी स्वय पिता या प्रपिता उसे छोड आते हैं, जिन्हें स्वप्न द्वारा सूचना मिलती है कि शिशु गद्दी ले लेगा (जसे ओडिप्स और परस्यूस की कथा में) उन्हें सपने में अथवा देववाणी द्वारा सूचना मिलती है कि बच्चा मेरी गद्दी छीन लेगा, कभी (जसे रोपुल्स की कहानी में) गद्दी हडपने वाला फेंक आता है। उसे यह भय होता है कि बडा होने पर यह बालक बदला लेगा, और कभी-कभी (जैसा कि जेसन ओरिस्टीज जीयूस, होरस, मूसा और साइरस की कहानियो में) मित्र ही बच्चे को उसकी रक्षा के लिए हटा देते ह। उन्हें भय होता है कि दुष्ट उनकी हत्या कर डालेगा। आगे कथा में त्यक्त शिशु चमत्कारिक ढग से सुरक्षित हो जाता है और कहानी के अन्तिम भाग मे यह बालक जिसका जीवन कठिनाइयो में बीतता है, वीर और साहसी युवक हो जाता है और शक्ति तथा वैभव के साथ अपना राज्य पाता है।

ईसा की कहानी में भी हट जाने और लौटने का अभिप्राय बराबर मिलता है। ईसू राज परिवार में जन्म लेता है। वह दाऊद का वशधर है या ईश्वर का पुत्र है। स्वग से आकर वह पथ्वी पर जन्म लेता है। उसका नाम दाऊद के नागर बतलहम में होता है। फिर भी उसका सराय में स्थान नही मिलता और उसे चारे की नाद में रख देत है जस मूसा नौका में व परस्यूस पिटारी में। अस्तबल में पशु मित्रवत् उसकी देख रख करते है जसे रोपुल्स की देख रेख भेडिये ने की और साइरस की कुत्ते ने। चरवाहे उसकी सेवा सुश्रुषा करते ह और उसका पालन-पोषण रोपुल्स साइरस और ओडिपस की भाति साधारण स्थिति का व्यक्ति करता है। इसके बाद हेरोद की हिंसक योजना से इस प्रकार रक्षा होती है कि उसे चुपके स मिस्र भगा ले जाते ह जिस प्रकार मसा की रक्षा फरऊन की हत्याकारी योजना से उसे सेवार में छिपा कर की गयी और जसे जेसन की राजा पैलिआस से बचाने के लिए पोल्यिन पवत के दुर्गों में रख कर की गयी। और अन्त में दूसरे वीरा की भांति ईसू भी अपने राज्य में लौटता है। वह जूडा के राज्य जेरुशलेम में लौटता

मनुष्य हैं। जैसे कोरे या पर्सिफनी[1] का अपहरण और फिर लौटना या डायोनिसस, एडोनिसस, आसाइरिस अथवा जो कुछ भी—अन्न के अथवा वन के देवता का स्थानीय नाम हो उनकी मृत्यु और पुनर्जन्म का यही अभिप्राय है। उनकी पूजा अथवा उनकी कथा विभिन्न नामों से सब जगह उसी का स्पष्ट प्रदर्शन करती है और उतनी ही व्यापक हैं जितना स्वयं खेती का कार्य।

इसी प्रकार मनुष्य की कल्पना ने अपने जीवन का स्पष्ट पेड़-पौधों के अवसान (विदड्रावल) तथा पुनर्जीवन में स्थापित किया। और इस स्पष्टता के ही आधार पर मृत्यु से द्वंद्व किया है। यह समस्या मनुष्य के मन की उन्नतिशील सभ्यताओं में, उसी समय चिन्तित करने लगती है जब महान् व्यक्ति साधारण जनता से अलग होने लगा है।

कुछ लोग पूछेंगे 'मृत लोग कैसे जी जाते हैं ? और किस शरीर से वे आते हैं ?'

'ए मूर्ख जो कुछ तू बोता है वह जीवन इसीलिए धारण करता है कि वह मरे और जो कुछ तू बोता है वह इस शरीर में नहीं बोता जिस शरीर में वह फिर उगेगा बल्कि केवल दाना बोता है। चाहे गेहूँ हो या कोई दूसरा दाना,'

'परन्तु ईश्वर जैसा उसका मन होता है वैसा शरीर प्रदान करता है, और हर एक बीज अपना शरीर देता है

इसी प्रकार मृत व्यक्ति का पुनर्जीवन भी है। विकृति (करप्शन) में वह बोया जाता है (मरता है) और पावनता में वह पुनर्जीवित होता है'

'अप्रतिष्ठा में वह बोया जाता है प्रतिष्ठा में वह उगता है, दुर्बलता में वह बोया जाता है शक्ति लेकर उगता है'

'प्राकृतिक शरीर में बोया जाता है, आध्यात्मिक शरीर में वह उगता है,'

'और इसलिए लिखा है 'पहला मनुष्य आदम, जीवित आत्मा के रूप में बनाया गया, अंतिम आदम सजीव करने वाली आत्मा के रूप में '

'पहला मानव मिट्टी का है धरती का, दूसरा स्वर्ग का मालिक।[2]

ऊपर के अवतरण में जो कोरिंथियन्स को पाल के पहले पत्र से लिया गया है चार विचार लगातार प्रस्तुत किये गये हैं और प्रत्येक पहले से ऊँचा है। पहला विचार यह है कि हम एक पुनर्जीवन उस समय देखते हैं जब शरद् में फसल की समाप्ति हो जाती है और वसन्त में फिर उसका आगमन हम देखते हैं। दूसरा विचार यह है कि अनाज का पुनर्जीवन मनुष्य के पुनर्जीवन की भविष्यवाणी है। यह सिद्धान्त हेलेनी रहस्यवाद के पहले का है। तीसरा विचार यह है कि मनुष्य का पुनर्जीवन सम्भव है और उसकी प्रकृति में परिवर्तन भी होने की सम्भावना होती है। वह परिवर्तन ईश्वर द्वारा उस काल में होता है जो उसकी मृत्यु और पुनर्जीवन के बीच आता है।

१ पर्सिफोनी एक यूनानी देवी थी। जीयूस की पुत्री। वह जब फूल चुन रही थी यम (प्लूटो) उसे लेकर भाग गया। जब तक वह पाताल में थी, पृथ्वी की देवी ने पृथ्वी में कुछ उत्पन्न होना बन्द कर दिया। अन्त में जीयूस ने उसे पाताल से बुलवाया। उसका हरण और लौटना अनाज के बोने तथा उगने का प्रतीक है।

२ कोरिंथियन्स १५ ३५–८, ४२–५, ४७।

कहा जाता है कि मत व्यक्ति के दूसरे रूप धारण करने का प्रमाण यही है कि बीज फूल तथा फल का रूप ग्रहण करता है। मनुष्य की प्रकृति में यह परिवतन यो होता है कि उसमें अधिक सहन शीलता, सौदय, शक्ति तथा आध्यात्मिकता के गुण आ जाते हैं। इस अवतरण मे चौथा विचार अन्तिम है और उदात्त है। पहले और दूसरे मानव की करपना में मत्यु की समस्या की ओर ध्यान नही दिया गया और व्यक्ति के पुनर्जीवन को थोडी देर के लिए बन्द चढकर माना गया है। दूसरा मानव स्वग का मालिक है। उसके आगमन को पाल एक नयी जाति की सष्टि के रूप में स्वागत करता है जा एक व्यक्ति में निहित होकर आता है जो न्याय का देवता है, जो स्वय ईश्वर से प्रेरणा प्राप्त करता है और अपनी प्रेरणा से अपने साथी दूसरे मानवो को अनुप्राणित करता है और महामानव के स्तर पर उन्हें उठाने की चेष्टा करता है।

अलग होने और फिर शक्ति तथा वैभव के साथ लौटने का अभिप्राय रहस्यवादी आत्मिक उन्नति में देखा जा सकता है। यही भावना वनस्पति जगत् में है यही भावना मनुष्य ने मत्यु के पश्चात् के सम्बन्ध में जो अनेक कल्पनाएँ ह उसमें भी है। जिसमें अमरता की भावना है या नीची श्रेणी से उच्च श्रेणी में परिवतन का भाव है। यह विश्वव्यापी विषय है। इसकी बुनियाद पर अनेक प्राचीन पौराणिक कल्पनाएँ हैं। इन कल्पनाओ द्वारा सावभौमिक सत्य प्रकट किया गया है।

इसी अभिप्राय का परिवर्तित रूप ऐसे त्यक्त शिशुओ की पौराणिक कहानिया है। राजकुल में उत्पन्न बच्चा फेंक दिया जाता है। कभी-कभी स्वय पिता या प्रपिता उसे छोड आते ह जिन्हें स्वप्न द्वारा सूचना मिलती है कि शिशु गद्दी ले लेगा (जैसे ओडिप्स और परस्यूस की कथा में) उन्हें सपने में अथवा देववाणी द्वारा सूचना मिलती है कि बच्चा मेरी गद्दी छीन लेगा, कभी (जसे रोपुलस की कहानी में) गद्दी हडपने वाला फेंक आता है। उसे यह भय होता है कि बडा होने पर यह बालक बदला लेगा, और कभी-कभी (जैसा कि जेसन, ओरिस्टीज जीयूस, होरस, मूसा और साइरस की कहानियो में) मित्र ही बच्चे को उसकी रक्षा के लिए हटा देते हैं। उन्हें भय होता है कि दुष्ट उनकी हत्या कर डालेगा। आगे क्या में त्यक्त शिशु चमत्कारिक ढग से सुरक्षित हो जाता है और कहानी के अन्तिम भाग में यह बालक जिसका जीवन कठिनाइयो में बीतता है वीर और साहसी युवक हो जाता है और शक्ति तथा वैभव के साथ अपना राज्य पाता है।

ईसा की कहानी में भी हट जाने और लौटने का अभिप्राय बराबर मिलता है। इसू राज परिवार में जन्म लेता है। वह दाऊद का वशधर है या ईश्वर का पुत्र है। स्वग से आकर वह पथ्वी पर जन्म लेता है। उसका नाम दाऊद के नागर बैतल्लहम में होता है। फिर भी उसको सराय में स्थान नहा मिलता और उसे चारे की नाद में रख दते ह जसे मूसा नौका में व परस्यूस पिटारी में। अस्तवल में पशु मित्रवत् उसकी देख रेख करत ह जसे रोपुलस की देख रेख भेडिये ने की और साइरस की कुत्ते ने। चरवाहे उसकी सेवा सुश्रुषा करते है और उसका पालन-पोषण रोपुलस, साइरस और ओडिपस की भाति साधारण स्थिति का व्यक्ति करता है। इसके बाद हेरोद की हिंसक योजना से इस प्रकार रक्षा होती है कि उसे चुपके से मिस्र भगा ले जाते ह जिस प्रकार मूसा की रक्षा फरऊन की हत्याकारी योजना से उसे सेवार में छिपा कर की गयी और जसे जेसन को राजा पलिआस से बचाने के लिए पीलियन पवत के दुर्गों में रख कर की गयी। और अन्त में दूसरे वीरो की भाति इसू भी अपने राज्य में लौटता है। वह जूडा के राज्य जेरूसलेम में लौटता

है और दाऊद के पुत्र के रूप में उसका स्वागत होता है। और अन्त में वह स्वर्ग के राज्य में प्रवेश करता है।

ईसू की ये सब बातें ऐसे त्यागे बच्चों की कथाओं के समान हैं किन्तु बाइबिल में अलग होने और लौट आने का जो अभिप्राय है उसके और रूप भी हैं। ज्यों-ज्यों ईसू को ईश्वरत्व की आत्मिक अनुभूति होती है त्यों-त्यों क्रमशः इसकी भी अभिव्यक्ति होती है। जब जान के बपतिस्मे के बाद ईसू को अपने मिशन का ज्ञान होता है, वह चालीस दिनों के लिए वन में चला जाता है और आत्मिक बल प्राप्त कर वहाँ से लौटता है। इसके पश्चात जब ईसू को ज्ञात होता है कि मेरे मिशन से मेरी मृत्यु की सम्भावना है, वह पहाड़ों में चला जाता है जहाँ उसमें परिवर्तन होता है। इस अनुभूति के पश्चात् मृत्यु के लिए तैयार होकर वह लौटता है। इसके पश्चात् जब वह सूली पर चढ़ा दिया जाता है और मनुष्यों की भाँति उसकी मृत्यु हो जाती है, वह कब्र में जाता है जहाँ से पुनर्जीवन प्राप्त कर अमरता प्राप्त करता है। और अन्त में जब उसका आरोहण होता है, वह स्वर्ग को चला जाता है इसलिए कि 'फिर आयेगा और जीवित तथा मृत लोगों के प्रति न्याय करेगा और उसके राज्य का कभी अन्त न होगा।'

अलग होने और लौट जाने के अभिप्राय को लेकर जो महत्त्वपूर्ण घटनाएँ ईसू के जीवन में हैं उसी के समान और भी उदाहरण हैं। ईसू के पहाड़ों में चले जाने के ही समान मूसा के मीडियन में चले जाने की बात भी है। पहाड़ों में जो दशा का परिवर्तन हुआ वैसा ही मूसा का परिवर्तन सीनाई पहाड़ पर हुआ। ईश्वरीय प्राणी (ईसू) की मृत्यु और उसके पुनर्जीवन की बात हेलेनी रहस्यवादी कथाओं में पहले आ चुकी है। वह महान् व्यक्ति जिसका अवतरण होने वाला है और जो इस सृष्टि प्रलय के समय सूत्रधार होगा जरथुस्त्री पुराण में उसकी कल्पना त्राता के रूप में की गयी है, और यहूदी पुराण में मसीहा और ईश्वर के पुत्र के रूप में की गयी है। किन्तु ईसाई पुराण में एक बात है जिसका कोई पहले का दृष्टान्त नहीं है। वह उस व्यक्ति की है जो ऐतिहासिक व्यक्ति हो और पहले पृथ्वी पर साधारण मनुष्य के रूप में रहा हो और फिर मृत्यु के पश्चात् त्राता अथवा मसीहा के रूप में लौट कर आये। यह कल्पना का प्रकाश अनन्त भूतकाल में शिशु की कल्पना और अनन्त वर्तमान में कृषि के धार्मिक कृत्यों की कल्पना उस ऐतिहासिक मानवता के रूप में परिवर्तित की गयी है जो चेष्टा करके अपने उद्देश्य को प्राप्त करती है। दूसरी बार फिर लौटने की भावना में अलग होने और लौटने का अभिप्राय गम्भीर आध्यात्मिक तात्पर्य है।

अन्त प्रणा का प्रकाश जिसमें ईसाइयों ने दोबारा लौटने की कल्पना की है किसी विनाश काल तथा देश की चुनौती के फलस्वरूप की गयी होगी। वह आलोचक जो यह समझने की भूल करता है कि किसी वस्तु में इसके अतिरिक्त कुछ नहीं है जो उसकी उत्पत्ति के समय उसमें होती है तो वह इस ईसाई सिद्धान्त की इसलिए उपेक्षा करेगा कि इसका आरम्भ निराशा में हुआ होगा। वह बतायेगा कि यह निराशा उस समय आरम्भिक ईसाई समाज में हुई होगी जब उनका प्रभु आया और बिना उस परिणाम के चला गया जिसे देखने के लिए लोग इच्छुक थे। उसकी हत्या कर दी गयी, और जहाँ तक सोचा जा सकता था उसकी मृत्यु से उसके अनुगामियों का भविष्य अन्धकारमय हो गया। यदि उन्हें अपने प्रभु के मिशन को आगे बढ़ाना है तो उन्हें प्रभु के जीवन की असफलता की चोट को इस प्रकार निकालना होगा कि उसके भूतकाल के जीवन को भविष्यकाल में परिणत करने के इस बात का प्रचार करें कि वह फिर से शक्ति और वैभव से पूर्ण होकर आयेगा।

यह सत्य है कि दोबारा आने के सिद्धान्त को और समाजो ने भी मान लिया है, जिन्हें उसी प्रकार की निराशा या कुण्ठा हो गयी। उदाहरण के लिए, जब आर्थर बर्बर अंग्रेज आक्रमणकारियो पर विजय नही पा सका तो पराजित ब्रिटनो ने यह कथा बनायी कि आर्थर फिर आयेगा। जब उत्तर माध्यमिक काल में जर्मन पश्चिमी ईसाई जगत् में अपना प्रभुत्व स्थापित नही कर सके तब उन्होने यह कथा गढी कि सम्राट् फ्रेडरिक बारबरोसा (११५२–९० ई०) फिर आयेंगे।

"उस हरे भरे मैदान के दक्षिण पश्चिम की ओर, जो साल्जबुर्ग पर्वत के चारो ओर है, बडा पहाड उनटर्सबुर्ग खडा है। उसी के नीचे से एक सडक घूमती हुई बरखटेसगेडेन झील की तराई की ओर गयी है। वही चूने के पत्थरो की चट्टानो में एक स्थान है जहा मनुष्य का जाना बहुत कठिन है। वहाँ के किसान एक काली कन्दरा यात्रियो का दिखाते है और कहते है कि उसी के अन्दर बारबरोसा अपने वीरो के साथ मन्त्रमुग्ध निद्रा में सोया है। जब पहाड की चोटी पर कौवे न मँडरायेंगे, और नाशपाती के पेड फूलेंगे वह अपने योद्धाओ के साथ घाटी में आयेगा और जरमनी में शान्ति, शक्ति और एकता का स्वर्णयुग लायेगा।"[1]

इसी प्रकार मुसलिम जगत् में शीया समाज की कल्पना है। जब युद्ध में ये हार गये और प्रताडित वर्ग हो गये उन्होने कल्पना की कि बारहवें इमाम (पैगम्बर के दामाद अली की बारहवी पीढी) मरे नही बल्कि एक कन्दरा में जा बैठे है जहा से अपने अनुगामियो का भौतिक तथा आध्यात्मिक पथ प्रदर्शन करते रहते है और एक दिन प्रतिज्ञा के अनुसार मेहदी के रूप में आयेंगे और अत्याचार के शासन का अन्त करेंगे।

किन्तु यदि हम एक बार फिर पुरानी ईसाई अभिव्यक्ति के अनुसार दूसरी बार आने के सिद्धान्त की ओर ध्यान दें तो हम देखेंगे कि वास्तव में वह उस आध्यात्मिक वापसी का भौतिक रूपक है जो शिष्यो (अपासिल्स) के हृदय में उनके पराजित प्रभु ने अंकित कर दिया था। जब शिष्यो ने यह निश्चय किया कि भौतिक रूप से तो हमारे प्रभु चले गये किन्तु अपने साहसी मिशन की पूर्ति का कार्य हमारे सुपुर्द कर गये। यानी समय के भ्रम निवारण और निराशा के पश्चात् शिष्यो के साहस और विश्वास ने फिर क्रियात्मक पुनर्जीवन प्रदान किया और वह बाइबिल के 'एक्टस' में पौराणिक भाषा में लिखी गयी है जिसमें कहा गया है कि पवित्र आत्मा पेंटिकास्ट[2] के दिन फिर आयेगी।

अलग होने और लौट आने का क्या वास्तव में अभिप्राय है यह समझ लेने के बाद अब हम इसी दृष्टि से मनुष्य के इतिहास की प्रक्रिया का प्रयोगात्मक सर्वेक्षण करेंगे। क्रियाशील व्यक्तियो और क्रियाशील अल्पसंख्यको में किस प्रकार ऐसी ही घटना हुई है। इस प्रकार की क्रिया के विख्यात उदाहरण जीवन के विभिन्न क्षेत्रो में मिलते है। योगियो, सन्तो राजनीतिज्ञो, सैनिको, इतिहासकारो, दार्शनिको और कवियो मे तथा राष्ट्रो, राज्यो और धर्मो के इतिहासो में हमें ऐसी घटनाएँ मिलती है। जिस सिद्धान्त को हम प्रमाणित करना चाहते है उसी सचाई को

१ जेम्स ब्राइस द होली रोमन एम्पायर, अध्याय ११—अन्त।

२ पेंटिकास्ट जिस दिन यहूदियो की मिस्र वालो से मुक्ति हुई उसके बाद का पचासवाँ दिन। फसल काटने के बाद इस दिन उत्सव होता है।—अनुवादक

वाल्टर बेजहाट ने इस प्रकार लिखा है 'सब बडे राष्ट्रो की तयारी गुप्त ढग से और लोगो से छिपाकर हुई है। सारे आकर्षणो से अलग उनका निर्माण हुआ है।'[1]

अब हम विभिन्न उदाहरणो को देखेंगे। सजनात्मक व्यक्तियो से हम आरम्भ करेगे।

सन्त पाल

टारसस के पाल का जन्म यहूदी परिवार में ऐसे युग में हुआ था जब सीरियाई समाज पर हेलेनीवाद का आक्रमण हो रहा था और जो रुक नही सकता था। अपने जीवन के प्रथम काल में उसने ईसा के यहूदी अनुगामियो पर अत्याचार किया। उत्साही यहूदियो की दृष्टि में ये यहूदी समाज में भेद उत्पन्न कर रहे थे। अपने जीवन के अन्तिम काल में इसने शक्ति बिल्कुल दूसरी ओर लगायी। नयी भावना का प्रचार किया जिसमें कहा कि जहाँ न यूनानी है न यहूदी, खतना वाले और बिना खतना वाले, बबर या सीथियाई (साथियन) पराधीन या स्वाधीन।[2] और इसे उसी सम्प्रदाय के नाम पर यह सान्त्वना युक्त प्रचार किया जिस पर पहले अत्याचार किया था। पाल के जीवन का यह अन्तिम अध्याय सजनात्मक अध्याय था। पहला अध्याय मिथ्या अध्याय था। *दोनो अध्यायो के बीच बहुत बड़ा व्यवधान था। दमिश्क जाते हुए जब उसे एकाएक प्रकाश* प्राप्त हुआ, पाल ने जीवित मनुष्यो से बातचीत नही की बल्कि, अरब चला गया। तीन साल बाद वह यरुशलम आया और तब पुराने शिष्यो से मिलकर क्रियाशील हुआ।

सन्त बेनेडिक्ट

नरसिया का बेनेडिक्ट (४८०–५४३ ई० सम्भवत) उसी समय था जब हेलेनी समाज मृत्यु की हिचकियाँ ले रहा था। अपने घर अब्रिया से उसे रोम भेजा गया था कि उच्च वर्ग के परम्परागत शास्त्रो का (ह्युमनिटीज) अध्ययन करे। वहाँ के जीवन का उसने विरोध किया और प्रारम्भिक *जीवन में ही कहीं जगल में चला गया। तीन साल तक एकान्तवास करता रहा।* उसके जीवन ने उस समय पलटा खाया जब वह जवान हुआ और उसने एक मठ वाले समाज का अध्यक्ष होना स्वीकार किया पहले सुवियाको की घाटी में और उसके बाद माटे कसिनो में। अपने जीवन के इस अन्तिम काल में इस सन्त ने शिक्षा की नयी प्रणाली निकाली और उस पुरानी शिक्षा के स्थान पर, जिसका बचपन में उसने विरोध किया था इसे प्रचारित किया। माटे कसिनो का मठ अनेक मठो का जन्मदाता हुआ जो बढ़ते गये और सुदूर पश्चिम तक बेनेडिक्टी शिक्षा प्रसारित करते रहे। सच पूछिए तो यह शिक्षा-व्यवस्था इस नये सामाजिक सगठन की आधार शिला था जो पुरानी हेलेनी व्यवस्था के ध्वसावशेष पर पश्चिमी ईसाई जगत् ने स्थापित किया।

बेनेडिक्ट की व्यवस्था का एक महत्त्वपूर्ण अंग था शारीरिक श्रम और इसका मुख्य अंग था खेतो में कृषि काय। बेनेडिक्टी आदोलन आर्थिक स्तर पर था और कृषि का पुन स्थापन उसमें था। हनिबली युद्ध में जो इटली की आर्थिक व्यवस्था नष्ट हो गयी थी उसके स्थान पर यह पहला महत्त्व पुन स्थापन था। बेनिडिक्टी व्यवस्था से वह उपलब्धि हुई जो न तो ग्रक्को[3] के कृषि

---

१ वाल्टर बेजहाट फिजिक्स एण्ड पोलिटिक्स, १० वाँ संस्करण, पृ० २१४।
२ कोलोशियस ३, २२।
३ ग्रेक्स नाम के तीन रोमन शासक।—अनुवादक

सम्बधी कानूना स न रोमन साम्राज्य के खाद्य पदाथ सम्बधी कानूना से हुई। क्योंकि ये कानून राज्य की ओर से लादे गये थे और ऊपर से नीचे की ओर इनका काय-सचालन होता था, किन्तु बेनेडिक्टी व्यवस्था में व्यक्तिगत प्रेरणा थी, धार्मिक उत्साह था और नीचे से ऊपर की ओर इनका काय होता था। इस आध्यात्मिक सजीवता के कारण बेनिडिक्टी समूह ने इटली के आर्थिक जीवन को ही नही परिवर्तित किया, इसने आल्पस के उत्तर के प्रदेशा में जगलो के काटने, दलदला के सुखाने और खेना तथा पशुआ के चरागाहो के तयार करने में वही पथ प्रदशका का काम किया जो उत्तरी अमरीका में फ्रासीसी, और ब्रिटिश जगल काटने वाला ने किया था।

सन्त ग्रेगरी महान्

बेनेडिक्ट की मृत्यु के तीम वष बाद ग्रेगरी को, जा रोम म नागरिक शासक था, असम्भव काय का सामना करना पडा। ५७३ ई० में रोम की वही अवस्था थी जो वियना की १९२० ई० में। रोम शतिया तक एक बडे साम्राज्य की राजधानी हाने के कारण महान् नगर हो गया था। किन्तु एकाएक अपने सारे प्रान्ता से अलग हो गया था और उसके सब ऐतिहासिक काय समाप्त हो गये और उसे अपने पाँव पर खडा होना पडा। जिस साल ग्रेगरी रोम का प्रशासक (प्रिफेक्ट) हुआ राम का शासन क्षेत्र प्राय उतना ही रह गया था जितना नौ सौ साल पहले था। उसके पहले जब रोमना ने इटली के आधिपत्य के लिए सैमनाइटा से युद्ध करना आरम्भ किया। किन्तु जिस क्षेत्र को पहले केवल व्यापारिक नगर का भरण-पोषण करना पडता था उसे अब परआश्रयी राजधानी का पालन करना पडा। इस नयी परिस्थिति का सामना करने में पुरानी व्यवस्था असमय था। इस रोमन शासक ने इसे भलीभाँति अनुभव किया और कटु अनुभव के परिणाम स्वरूप ग्रेगरी भौतिक समार से बाद में दो वर्षों के लिए अलग हो गया।

पाल की भाँति तीन वर्षों तक वह अन्तर्धान रहा। इस अवधि के बाद उसकी योजना थी कि म स्वय अपने मिशन को पूरा करूँ जिस उसने बाद में अपने प्रतिनिधि से कराया। जब वह पोप द्वारा राम में बुलाया गया उसका मिशन था मूर्तिपूजक अग्रेजा को ईसाई बनाना। अनेक पदा पर रहकर और अन्त में जब वह स्वय पोप के पद पर आसीन हुआ (५९०-६०४ ई०)। उसने तीन महान् काय किये। उसन इटली के तथा सागर पार के ईसाई धम द्वारा शासित राज्या के शासन का पुन सगठन किया, उसने इटली के साम्राज्य वाले अधिकारियो तथा लोबार्डी आक्रमणकारिया के बीच समझौता कराया और राम के पुराने साम्राज्य के स्थान पर, जा अब नष्ट हो गया था, नये साम्राज्य की नीव डाली। यह रामन साम्राज्य सैनिका के बल पर नही स्थापित किया गया वल्कि मिशनरी उत्साह से बना। और इसने ससार के ऐस नये देशा पर विजय प्राप्त की जहाँ पुरानी रोमन सेना पहुँची भी नही और जिसके अस्तित्व की कल्पना भी सीपिया या सीजरा ने नही की थी।

बुद्ध

गौतम बुद्ध सिद्धाथ भारतीय ससार म सकटकाल में पदा हुए थे। उमने देखा कि मेरी राजधानी कपिलवस्तु लूटी गयी। और मेरे परिवार के लोगो की शाक्यो की हत्या हुई। प्राचीन भारत के जो अभिजात्य (एरिस्टाक्रेटिक) गणतन्त्र थे जिनमें शाक्य समाज भी था, गौतम के काल में धीरे धीरे समाप्त हो रहा था और उसके स्थान पर बडे स्तर पर एकतन्त्रीय (आटोक्रेटिक) राजतन्त्र की स्थापना हो रही थी। गौतम अभिजात्य कुल में जन्मा था। जब उस वग पर नयी

सामाजिक शक्तियों का आक्रमण हो रहा था। इसका उत्तर गौतम ने संसार का त्याग कर दिया क्योंकि वह संसार उनके पूर्वजों के समान अभिजात्य लोगों के अनुकूल नहीं रह गया था। सात साल घोर तपस्या करके उन्होंने प्रकाश की खोज की। जब वह अपना व्रतभंग कर संसार की ओर लौटने वाला था, उसे प्रकाश मिला और जब उसे प्रकाश मिल गया उसने अपना जीवन दूसरों को प्रदान करने में बिताया। यह प्रकाश अच्छी तरह लोगों में पहुँचे इसलिए उसने कुछ शिष्य बनाये। इस प्रकार एक संघ बनाया जिसका केन्द्र और मुखिया वह बना।

मुहम्मद

मुहम्मद का जन्म रोमन साम्राज्य के बाहरी सर्वहारा प्रदेश में अरब के रेगिस्तान में उस समय हुआ था जब रोमन साम्राज्य और अरब का सम्बन्ध बहुत संकटपूर्ण था। ईसाई संवत् की छठी तथा सातवीं शती में यह स्थिति पराकाष्ठा को पहुँच गयी जब रोमन साम्राज्य की संस्कृति का प्रभाव अरब में पहुँचने लगा। अरब की ओर से इसके प्रतिकार में कुछ सजीव प्रतिक्रिया आवश्यक थी। यह प्रतिक्रिया मुहम्मद का चरित था (जिनका जीवन काल सम्भवतः ५७०-६३२ ई०)। इन्हीं के जीवन ने निश्चय कर लिया कि इस प्रतिक्रिया का क्या रूप हो। मुहम्मद के जीवन की दो महत्त्वपूर्ण घटनाओं द्वारा यह हुआ। दोनों घटनाएँ 'अलग होने और लौटने' के सिद्धान्त पर आश्रित हैं।

मुहम्मद के समय रोमन साम्राज्य के सामाजिक जीवन में दो बातें ऐसी थीं जिनका गहरा प्रभाव अरबी आदिवासियों के जीवन पर पड़े बिना नहीं रह सकता था। और उन दोनों का नितान्त अभाव था। एक तो धर्म में एकेश्वरवाद और दूसरा शासन में विधि और व्यवस्था। मुहम्मद के जीवन का यही कार्य था कि इन दोनों तत्त्वों को रूप दे सामाजिक जीवन में अरबी भाषा के माध्यम से कार्यान्वित करना। और अरबी एकेश्वरवाद तथा अरबी शासन-व्यवस्था की विधि विधान इस्लाम धर्म में स्थापित करना। उसने इस धर्म को इतनी शक्ति तथा गति प्रदान की, और एक व्यवस्था अरब के कबीलों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उदार आयोजन से बनायी थी। इस व्यवस्था ने अरब की सीमा को पार करके अतलान्तिक सागर से लेकर यूरेशियन स्टेप तक सारे मारिटाइम सागर पर विजय प्राप्त कर ली।

सात साल के निर्वासन के पश्चात् (६२२–९ ई०) वह मक्का लौटे । क्षमा प्राप्त भगाडे के रूप में नही, आधे अरब के अधिकारी होकर ।

मेकियावली

मेकियावली (१४६९–१५२७ ई०) फ्लारेंस का नागरिक था । जब वह पचास साल का था तब फ्रास के आठवें चार्ल्स ने, सन् १४९४ में फ्रासीसी सेना लेकर आल्प्स को पार किया और इटली को नष्ट भ्रष्ट कर दिया । वह ऐसी पीढी में हुआ जब उसकी अवस्था ऐसी थी कि उस वह समय याद था जब इटली में फ्रेंच आक्रमण के पहले सुख और शान्ति का जीवन था । वह इतने दिना तक जीवित रहा कि उसने वह अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक सघर्ष देखे जो आल्प्स के उस पार वाली अथवा समुद्र पार की शक्तिया एक दूसरे पर विजय प्राप्त करने के लिए और नतत्व प्राप्त करने के लिए इटली में सघर्ष कर रही थी । और उनमें कभी एक शक्ति तथा कभी दूसरी शक्ति न इटली के नागरिक राज्या की सत्ता छीन ली । इटली में इटली के बाहर की शक्तिया के आक्रमण का सामना मेकियावली की पीढी का करना पडा और उससे अनुभूति भी उन्हें प्राप्त हुई । यह ऐसी अनुभूति थी जो उस पीढी के इटालियनो के लिए कठिन थी क्योकि उनके अथवा उनके पितामहा के सामने ऐसी परिस्थिति ढाई सौ साल से कभी उत्पन्न नही हुई थी ।

स्वभावत मेकियावली म बडी राजनीतिक क्षमता थी और अपनी प्रतिभा का प्रयाग करने की उसमें तीव्र लालसा थी । भाग्यवश वह फ्लारेस का नागरिक था जो उस प्रायद्वीप का प्रमुख नागरिक राज्य था । अपनी योग्यता के बल पर वह उन्तीस साल की अवस्था में सरकार का सचिव हो गया । पहले फ्रासीसी आक्रमण के चार साल बाद सन् १४९८ में उसने यह पद ग्रहण किया । अपने सरकारी कार्यों के बीच उसे इन बर्बर शक्तिया का निजी ज्ञान प्राप्त हुआ । चौदह साल के शासन के इस अनुभव के बाद जीवित इटालियनो में उसके अतिरिक्त कोई नही रह गया था जो इटली के राजनीतिक उद्धार के लिए सफलता से काय कर सकता । उसी समय फ्लारेस की राजनीति का चक्र ऐसा घूमा कि वह निकाल दिया गया । सन् १५१२ में वह राज्य के मन्त्रिपद से हटाया गया और दूसरे ही वर्ष वह बन्दी बना लिया गया और उसे अनेक यन्त्रणाएँ दी गयी । यद्यपि वह जीवित छूट गया किन्तु जेल से छूटने का मूल्य उसे इस प्रकार चुकाना पडा कि उसे फ्लारेंस के गाव म अपने फार्म पर ग्रामीण जीवन बिताना पडा । उसके जीवन पर घोर विपत्ति आयी किन्तु इस व्यक्तिगत चुनौती का सामना करने के लिए उसमें पर्याप्त शक्ति थी और उस शक्ति का उसने उपयोग किया ।

ग्राम में निवासित होने के कुछ ही दिना बाद उसने अपने एक पुराने मित्र और साथी को एक पत्र लिखा । उसमें पूरे ब्योरे के साथ और विनोदात्मक तटस्थता से उसने लिखा है कि म किस प्रकार का जीवन अब बिताने जा रहा हूँ । प्रात काल उठकर दिनभर वह जिस नयी परिस्थिति में आ गया था उसके अनुसार सामाजिक कार्यो तथा खेल कूद और क्रीडा में अपना जीवन बिताता था । किन्तु इसी में वह अपना क्रियाकलाप समाप्त नही कर देता था । सध्या को जब म घर लौटता हूँ, पढने के कमरे में चला जाता हूँ, दरवाजे पर म अपना ग्रामीण वस्त्र जो कीचड मिट्टी से सना होता है उतार देता हूँ और दरबारी वस्त्र धारण करता हूँ । और इस प्रकार फिर कपडे पहनकर प्राचीन काल के लोगा के साथ पुराने महला में प्रवेश करता हूँ । वहा मेरे आतिथेय

बड़े प्रेम से मेरा स्वागत करते हैं और मैं ऐसे पदार्थ का भोजन करता हूँ जो वास्तव में मेरा पोषक है और जिसके लिए मैंने जन्म लिया था।

इसी विद्याव्यसन के दिनों में 'द प्रिंस' की कल्पना हुई और वह लिखी गयी। इसके अंतिम अध्याय में 'इटली को बर्बरों से मुक्त करने का उद्बोधन है।' और इससे पता चलता है कि जब मेकियावली ने इसे आरम्भ किया तब उसका अभिप्राय क्या था। एक बार फिर उसने सम सामयिक इटली की राजनीति के सम्बन्ध में विचार प्रकट किया। इस आशा से कि शायद अब भी मौलिक सृजनात्मक विचारों द्वारा लोगों में वह शक्ति उत्पन्न कर सके, जो कुंठित हो गयी थी और इटली की राजनीतिक समस्या का समाधान उपस्थित हो सके।

किंतु जो राजनीतिक आशा 'द प्रिंस' से जाग्रत हुई वह सफल नहीं हुई। लेखक के तात्कालिक लक्ष्य तक वह नहीं पहुँच सकी। इसका यह अर्थ नहीं है कि पुस्तक असफल रही। मेकियावली खेत से लौटकर रात रात भर प्राचीन काल के महापुरुषों के बीच जो लिख रहा था तो उसका यह अभिप्राय नहीं था कि साहित्य के माध्यम से व्यावहारिक राजनीति को कार्यान्वित करे। अपनी कृतियों द्वारा मेकियावली बहुत ऊँचे धरातल पर पहुँच कर लौटा जहाँ से उसका प्रभाव संसार पर इससे कहीं अधिक पड़ा जितना वह फ्लारेंस राज का मन्त्री होकर पहुँचा सकता था। विवेचन (कथार्सिस) की उन चमत्कारिक घड़ियों में जिनमें आत्मपीड़ा से वह ऊपर उठ चुका था उसने द प्रिंस, द डिसकोर्सेज आन लिवी दि आर्ट आव वार, तथा द हिस्ट्री आव फ्लारेंस, ऐसे महान बौद्धिक ग्रन्थों का निर्माण किया। हमारे आधुनिक पश्चिमी राजनीति दर्शन के ये बीज हैं।

दान्ते

इससे दो सौ साल पहले इसी नगर के इतिहास में इसी प्रकार का एक उदाहरण मिलता है। दान्ते ने उस समय तक अपना कार्य पूरा नहीं किया जब तक वह अपने नगर से निष्कासित नहीं हो गया। फ्लारेंस में दान्ते बीट्रिस से प्रेम करने लगा। उसने अपने सामने ही दूसरे की पत्नी के रूप में उसकी मृत्यु देखी। फ्लारेंस में उसने राजनीति में प्रवेश किया और वहाँ से वह निकाल दिया गया और वहाँ फिर न लौटा। परन्तु फ्लारेंस की नागरिकता भले ही छिन गयी वह विश्व का नागरिक हो गया। क्योंकि विदेश में जिस प्रतिभा ने असफल प्रेम के कारण असफल राजनीति में प्रवेश किया उसी के द्वारा उसके जीवन की कृति डिवाइना कामीडिया लिखा गयी।

(३) अलग होना और लौटना सृजनात्मक अल्पसंख्यक वर्ग

हेलेनी समाज के विकास के दूसरे अध्याय में एथेंस

अलग होने और लौटने का बड़ा स्पष्ट उदाहरण दूसरे सम्बन्ध में हमारे सामने आया है। यह है हेलेनी समाज के उस समय का एथीनियनों का व्यवहार जब ईसा के पहले आठवीं शताब्दी में जनसंख्या की समस्या उनके सामने आयी।

हमने देखा कि इस चुनौती के प्रति उनका पहला उत्तर केवल नकारात्मक था। अपने दूसरे पड़ोसियों की भाँति उन्होंने समुद्र पार उपनिवेश नहीं बनाये, न उन्होंने स्पार्टा की भाँति दूसरे यूनानी राज्यों पर आक्रमण करके उनको विजय करके, वहाँ के निवासियों को दास बनाया। उस काल में जब तक उसके पड़ोसियों ने उसे छेड़ा नहीं एथेन्स अकर्मण्य रहा। किंतु जब स्पार्टा के राजा

प्रथम क्लियोमिनीस ने लेसिडिमोनियन शासन में मिलाने की चेष्टा की पहले पहल उसकी सुषुप्त प्रबल शक्ति का संकेत मिला। लेसिडिमोनियन शक्ति का बलपूर्वक सामना करते हुए और उपनिवेश बनाने की क्रिया से अपने को दूर रखते हुए दो सौ साल तक एथेंस हेलेनी संसार से अलग रहा। किंतु ये दो सौ साल निष्क्रियता के नहीं थे। इसके विपरीत, अलग रहकर उसने साधारण हेलेनी समस्या का अपना एवं एथेनी समाधान निकाला। यह सुलझाव, उपनिवेश स्थापित करने के हेलेनी न्याय और स्पार्टा के समाधान से अधिक अच्छा था। क्योंकि इनसे क्रमशः ह्रास हो रहा था। जब उसने अपने मन के अनुसार समय लेकर अपनी परम्परागत संस्थाओं को नये जीवन के अनुकूल बना लिया तभी वह अखाड़े में उतरा। किन्तु जब वह आया तब इतनी शक्ति लेकर जैसी हेलेनी इतिहास में कभी पैदा नहीं हुई थी।

एथेंस ने अपने लौटने की घोषणा फारसी (परशियन) साम्राज्य को ललकार कर की। उस समय एथेंस ही था जिसने एशियाई यूनानी विद्रोहियों की प्रार्थना ४९९ ई० पू० में सुनी और उस दिन से बराबर यूनान तथा सीरियाई सार्वभौम राज्य के बीच के पचास वर्षीय युद्ध मे यूनानियों की सहायता की। ईसा के पूर्व पाचवी शती से दो सौ सालों के हेलेनी इतिहास में एथेंस की भूमिका उसके नितांत विपरीत थी जो दो सौ साल पहले थी। इस दूसरे काम में हेलेनी अंतर राज्यों के राजनीतिक युद्धों में वह बराबर योगदान करता रहा और जब वे सिकन्दर के पूरबी योद्धा वीरों से परास्त हो गये तभी विवश होकर उन्होंने महान् हेलेनी शक्ति के पद को छोड़ा। जब ई० पू० २६२ में मैसेडन के युद्ध में वे पराजित हो गये तब भी हेलेनी इतिहास में योगदान से व हट नहीं गये। सैनिक तथा राजनीतिक दौड़ में हार जाने के पहले ही उन्होंने और क्षेत्रों में यूनान के शिक्षक बनने का पद प्राप्त कर लिया था।

पश्चिमी समाज के विकास के दूसरे अध्याय मे इटली

मैकियावली के सम्बन्ध में लिखते हुए हमने बताया था कि तेरहवीं शती के मध्य से जब होहेंसटाउफेन विनष्ट हुआ था और पन्द्रहवीं शती के अन्त तक जब फ्रांसीसियों ने आक्रमण किया—इन दो सौ वर्षों तक इटली आल्पीय पार (ट्रांस आलिपाइन) अर्ध बर्बर सामन्ती झगड़ों से अलग रहा। इन ढाई सौ सालों तक अलग रहकर इटली ने विस्तृत नहीं, गम्भीर, भौतिक नहीं, आध्यात्मिक उन्नति की। वास्तुकला, मूर्तिकला, चित्रकला, तथा साहित्य और सांस्कृतिक तथा सौदर्यात्मक जगत् में मौलिक सृजन किया जिसकी तुलना यूनान के ईसा के पूर्व पाँचवीं तथा चौथी शताब्दी की उपलब्धियों से की जा सकती है। वास्तव में इटालियनों ने प्राचीन यूनान प्रतिभा से प्रेरणा प्राप्त की। उन्होंने मृत यूनानी संस्कृति के भूत को जगाया और यूनानी उपलब्धियों को निरपेक्ष, क्लासिक और आदर्श माना जिसकी नकल की जा सकती है, किंतु उनसे बढ़ा नहीं जा सकता। और हम लोगों ने उन्हीं के पद-चिह्नों पर चलकर क्लासिक शिक्षा की प्रणाली स्थापित की जो आजकल की तकनीकी शिक्षा की माँग के कारण हट रही है। और अन्त में यह कहा जा सकता है कि इटालियनों ने विदेशी सत्ता से सुरक्षा प्राप्त कर अपने प्रायद्वीप में जिसकी रक्षा संदिग्ध ही थी, ऐसे संसार का सृजन किया जिसने पश्चिमी सभ्यता का स्तर समय से पूर्व इतना ऊँचा कर दिया कि केवल मात्रा का अंतर नहीं रह गया, प्रकार (काइंड) का अंतर हो गया। पन्द्रहवीं शती के अन्त तक उन्होंने अपने को दूसरे पश्चिम वालों से इतना ऊँचा समझा कि सचमुच, कुछ घमण्ड में आल्पस के

पार और टाइरीन सागर के पार के लोगों को बर्बर कहकर इस शब्द को फिर जाग्रत किया। और इस काल में ये 'बर्बर' इस प्रकार क्रियाशील हुए कि सांस्कृतिक इटालियनों से राजनीतिक तथा सैनिक दृष्टि से श्रेष्ठ दिखाई दिये।

प्रायद्वीप से इटालियन संस्कृति जब चारों ओर फैली, उसने सभी दिशाओं में लोगों के सांस्कृतिक विकास को जाग्रत किया। पहले उसने संस्कृति के स्थूल तत्वों का जागरण किया जैसे राजनीतिक संगठन तथा सैनिक तरकीब का। ऐसी बातों पर बहुत जल्द प्रसार का प्रभाव पड़ता है। और जब 'बर्बरों' ने इन इटालियन कलाओं को भली प्रकार सीख लिया तब उन्होंने इटालियन नगरराज्यों से अधिक व्यापक रूप में इसका प्रयोग किया।

'बर्बर' लोग इटालियनों से इस संगठन में क्यों अधिक सफल हुए इसका कारण यह है कि उन्होंने इटालियनों से जो शिक्षा ग्रहण की उसके प्रयोग के लिए उनके सामने परिस्थिति उपयुक्त थी। इटालियनों के सामने ऐसी परिस्थिति नहीं थी। इटालियनों की राजनीतिज्ञता को बाधाओं का सामना करना पड़ा। बर्बरों के लिए यह सरल हो गया क्योंकि 'शक्ति सन्तुलन (बैलेंस आव पावर)' के एक सुव्यवस्थित नियम की सहायता उन्हें मिल गयी।

शक्ति-सन्तुलन राजनीतिक गत्यात्मक शक्ति की एक प्रणाली है जो उस समय कार्यान्वित होती है जब समाज में उन विभिन्न राज्यों का संगठन बन जाता है जो एक दूसरे पर निर्भर रहते हैं। जब इटालियन समाज पश्चिमी ईसाई जगत् से अलग हुआ तब इसी प्रकार के राज्यों में परिवर्तित हुआ। इटली को पवित्र रोमन साम्राज्य (होली रोमन एम्पायर) से अलग करने का जो आन्दोलन चला तो अनेक नगर राज्यों का संगठन बन गया और प्रत्येक राज्य आत्मनिर्णय (सेल्फ डिटरमिनेशन) की चेष्टा करने लगा। इस प्रकार एक अलग इटालियन संसार का निर्माण हुआ और इस इटालियन संसार में अनेक राज्यों का संगठन साथ साथ हुआ। ऐसे संसार में शक्ति सन्तुलन का कार्य इस प्रकार होता है कि राज्यों की औसत क्षमता को राजनीति के प्रत्येक मापदण्ड से जैसे क्षेत्रफल, जनसंख्या सम्पत्ति निम्न स्तर पर रखा जाता है। क्योंकि कोई राज्य यदि साधारण औसत से किसी बात में बढ़ जाने का साहस करता है तो निकट के सभी राज्य प्रायः अपने-आप उसपर दबाव डालने लगते हैं और शक्ति सन्तुलन का यह नियम है कि यह दबाव राज्यों के समूह के केन्द्र में सबसे अधिक होता है और परिधि पर सबसे कम।

केन्द्र का कोई राज्य यदि अपने अभ्युदय की चेष्टा करता है तो उसके पड़ोसी उसे देखते रहते हैं और चतुराई से उसकी चेष्टा को निष्फल करते हैं। कुछ वर्गमीलों का राज कठिन संघर्ष का विषय हो जाता है। इसके विपरीत परिधि वाले राज्यों में चढ़ा-ऊपरी कम होती है और थोड़े प्रयत्न से भी परिणाम श्रेष्ठ होता है। संयुक्त राज्य (यूनाइटेड स्टेटस) अतलान्तक से प्रशान्त सागर तक बिना रुकावट के बढ़ सकता है, रूस बाल्टिक से प्रशान्त सागर तक विस्तार कर सकता है किन्तु फ्रांस या जरमनी की सारी शक्ति ऐलसेस या पोसेन को प्राप्त करने के लिए पर्याप्त न होगी।

पश्चिमी यूरोप के पुराने और सिकुड़े राष्ट्र राज्यों के लिए आज जिस रूप में रूस और संयुक्त राज्य हैं वैसे ही चार सौ साल पहले इटालियन नगर राज्यों फ्लारेंस वेनिस तथा मिलन के लिए उस समय का फ्रांस जिसे ग्यारहवें लूई ने स्पेन को आरागोन के फरडिनंड ने, और इंग्लैंड को आरम्भिक ट्यूडरों ने राजनीतिक दृष्टि से इटालियन बना दिया था, उसी रूप में थे।

तुलनात्मक दृष्टि से हम देख सकते हैं कि ईसा के पूर्व आठवी, सातवी तथा छठी शती में एथेन्स के अलग हो जाने में और ईसा की तेरहवी, चौदहवी तथा पन्द्रहवी शती में इटालियनो के अलग हो जाने में बहुत कुछ समता है। दोनो स्थितिया में राजनीतिक दृष्टि से यह अलग हो जाना पूर्ण और दृढ था। दोनो स्थितिया में जो अल्पसख्यक दल अलग हो गया, वह इस चेष्टा में लगा रहा कि सारे समाज के सम्मुख जो समस्याएँ ह उनके निराकरण के उपाय ढूढ निकाले जायें। और दोनो अल्पसख्यक दल जब उसका सजनात्मक काय समाप्त हो चुका अपना पूरा समय बिताकर उसी समाज में लौटा जिसे कुछ समय के लिए उसने छोड दिया था और सारे समाज पर अपना छाप अकित किया। यह भी है कि एथेन्स और इटली ने अलग होकर जिन समस्याओ का समाधान खोजा वे दोनो समान थे। जिस प्रकार यूनान में एटिका ने अलग से एक सामाजिक प्रयोगशाला में स्थानीय स्वावलम्बी, अपने में पूर्ण कृषि समाज को परम्परावलम्बी राष्ट्रीय औद्योगिक तथा व्यावसायिक समाज में परिवर्तन करने का सफल प्रयोग किया था उसी प्रकार पश्चिमी ईसाई जगत् में लोम्बार्डी और टसकनी ने किया। और जिस प्रकार एथेन्स में, उसी प्रकार इटली में परम्परागत सस्थाओ में नये जीवन के अनुसार आमूल परिवर्तन हुआ था। एथेन्स जब व्यापारिक तथा औद्योगिक राज्य बन गया तब राजनीतिक स्तर पर जहाँ जन्म के आधार पर अभिजात तत्रीय (एरिस्टोक्रैसी) सविधान था उसके स्थान पर सम्पत्ति के आधार पर बुर्जुआ सविधान बना। औद्योगिक तथा व्यावसायिक मिलन या बोलोना या फ्लारेंस या सिएना पश्चिमी ईसाई जगत् के प्रचलित सामन्तवादी शासन प्रणाली से नयी शासन प्रणाली में परिवर्तित हो गया जिसमें प्रत्येक नागरिक और स्थानीय प्रभुत्व सत्ता वाली सरकार से सीधा सम्बन्ध हो गया जिसमें प्रत्येक नागरिक में प्रभुत्व सत्ता निहित थी, इन मूर्त आर्थिक तथा राजनीतिक आविष्कारो तथा इटालियन प्रतिभाओ को और सूक्ष्म तथा अलौकिक कृतियो को इटली ने पन्द्रहवी शती तथा उसके बाद आल्पस के पार के यूरोप में प्रसारित किया।

किन्तु इस समय से पश्चिमी ईसाई जगत् तथा हेल्लेनी इतिहास अलग-अलग चलते ह। उसका कारण पश्चिमी ईसाई जगत् के इटालियन नगर राज्यो तथा यूनान के एथेन्स की स्थिति में अन्तर था। एथेन्स नगर राज्य था और नगर राज्यो का ससार बन रहा था, किन्तु इटालियन नगर राज्य जिस ढाँचे पर बना था वह ससार के भीतर एक ससार था और पश्चिमी ईसाई जगत् में मूलत इस प्रकार का सामाजिक सयोजन नही हुआ था। इसका मूल आधार सामन्तवाद था। और पन्द्रहवी शती के अन्त म पश्चिमी ईसाई समाज का अधिकाश सामन्तवादी आधार पर सगठित था, उस समय जब इटली के नगर राज्य पश्चिमी समाज में फिर से मिल गये थे।

इस स्थिति में जो समस्या उत्पन्न हुई उसका समाधान दो प्रकारो से हो सकता था। इटली ने जो नयी सामाजिक परिस्थिति सामने उपस्थित की उसके अनुरूप बनने के लिए आल्पस पार यूरोप या तो अपनी प्राचीन सामन्तवादी पद्धति को त्याग देता और नगर राज्य के आधार पर नये ढग से सगठन करता या इटालियन नये आविष्कारो को इस ढग स परिवर्तित करता कि उनसे सामन्तवादी आधार पर काम लिया जा सकता और राष्ट्र राज्य (किंगडम स्टेट) का रूप ग्रहण करता। इस बात के होते हुए कि स्विटजरलड, स्वाबिया, फ्रैंकोनिया और नेदरलडस में नगर राज्यो को पर्याप्त सफलता मिली थी जहा आन्तरिक तथा सामुद्रिक माग के मूल स्थानो का नियन्त्रण हैसियाटिक लीग के नगरो के हाथ में था आल्पस के पार के लोगो ने नगर राज्य वाले

समाधान नही स्वीकार किया। इसके परिणामस्वरूप पश्चिम के इतिहास का नया अध्याय आरम्भ होता है। यह भी अलग होने और लौट आने के महत्त्व का और उदाहरण है जिसका परिणाम समझने योग्य है।

पश्चिमी समाज के विकास के तीसरे अध्याय मे इग्लड

पश्चिमी समाज के सामने यह समस्या थी कि खेतिहर अभिजाततत्रीय जीवन से बदलकर औद्योगिक लोकतन्त्रात्मक जीवन में कैसे परिवर्तन हो और नगर राज्य प्रणाली न अपनायी जाय। इस परिस्थिति का सामना किया स्विटजरलैड, हालैन्ड और इग्लैन्ड ने और उन्होंने ही इसका समाधान निकाला। इन तीनो देशो का यूरोप के साधारण जीवन से अलग होने में यूरोप की भौगोलिक स्थिति से बहुत सहायता मिली। स्विटजरलैन्ड को पर्वतो से, हालैड को अपने बाधो से और इग्लैड को इगलिश चैनल से। उत्तर माध्यमिक काल मे जो नगर राज्य बन रहे थे उस सकट से स्विटजरलैड ने सघ का निर्माण करके अपने को बचाया। पहले हैप्सबर्ग से फिर बरगडी की शक्ति से। डचो ने स्पेन से अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा की और सात सयुक्त प्रदेश बनाये। महाद्वीप के देशो पर विजय प्राप्त की महत्त्वाकांक्षा को इग्लैड को त्याग देना पडा क्योकि शत वर्षीय युद्ध में वह पराजित हो गया और कैथोलिक स्पेन के आक्रमण को उसने एलिजाबेथ के काल में डचो की भाति विफल किया। और उस समय से लेकर १९१४–१९१८ के युद्ध तक अग्रेजो की विदेशी प्रमुख नीति सदा यह रही कि महाद्वीप के मामलो में हस्तक्षेप न किया जाय।

किन्तु ये तीन स्थानीय अल्पसख्यक अपने अलग होने की नीति में समान स्थिति में नही थे। स्विटजरलैड के पहाड और हालैड के बाँध का प्रभाव रुकावट में उतना नही था जितना इगलिश चैनल का। डचो ने चौदहवें लूई से जो युद्ध किये उनसे वे पूर्ण रूप से अपनी पूर्वावस्था को नही पहुँचे थे और कुछ दिनो के लिए हालैड तथा स्विटजरलैड दोनो को नैपोलियन निगल गया था। साथ ही डच तथा स्विस दोनो को यह असुविधा थी कि वे उस समस्या के समाधान मे लगे थे जिसका वर्णन ऊपर किया गया है दो में से कोई भी केन्द्रीभूत राष्ट्र राज्य नही था। केवल कैटनो (प्रदेशो) अथवा नगरो के अदृढ सघ थे। परिणामत इग्लैड के और सन १७०७ के मिलन के बाद ग्रेट ब्रिटेन के ऐंग्लो स्काटिश सयुक्त राज्य को पश्चिमी ईसाई ससार के इतिहास में तीसरे अध्याय का कार्य करना पडा जैसा इटली ने दूसरे अध्याय में किया था।

यह ध्यान देने की बात है कि इटली स्वय नगर राज्य की ईकाई की सीमा के बाहर जा रहा था क्योकि उसके अलग होने के समय के अन्त तक सत्तर या अस्सी नगर राज्य विजय द्वारा आठ या दस बडे बडे समूह बन गये थे। किन्तु दो बातो में परिणाम समुचित नही हुआ। पहली बात तो यह कि ये नयी राजनीतिक इकाइयाँ यद्यपि पहले से बडी थी फिर भी वे बर्बरो के आक्रमणो को जिस काल में वे आरम्भ हुए रोकने में असमर्थ थी। दूसरी बात यह कि इन बडी इकाइयो में जो शासन-व्यवस्था बनी वह सत्ता नाशक थी और नगर राज्य के जो राजनीतिक गुण थे वे इस प्रणाली की प्रक्रिया में समाप्त हो गये। यह उत्तरकालीन इटली का निरकुश शासन आल्पस पार पहुँचा और उसे स्पेन में हैप्सबर्गों ने बेलाया और बूरबनो ने फ्रास में आस्ट्रिया में भी हैप्सबर्गों ने और प्रशा में होहेनजालर्नों ने अपनाया। किन्तु यह अपनाना अधो गली में जाने के समान था। क्योकि किसी प्रकार के एक राजनीतिक लोकतन्त्रीय शासन के बिना आल्पस के देश इटली की पहले की वे आर्थिक उपलब्धियाँ नही प्राप्त कर सकते थे जिन्हें इटली ने नगर राज्य का शासन

व्यवस्था में प्राप्त की थी, जब वह खेतिहर परिस्थिति से व्यापारिक और औद्योगिक रूप में परिवर्तित हुआ।

फ्रास और इग्लैंड के विपरीत निरकुश राजतन्त्र चुनौती थी जिसका सामना सफल ढग से हुआ। आल्पस पार की राजनीतिक व्यवस्था प्राचीन पश्चिमी ईसाई ससार के समान उत्तराधिकार में मिली थी जो अग्रेजी भी थी, फ्रेंच भी और स्पेनी भी। अग्रेजा ने इस प्राचीन परम्परागत विधान में नयी जान फूकी और नया काय उसे सौंपा। आल्पस पार की सस्थाओ की एक परम्परागत विशेषता यह थी कि राजा तथा राज्य के जनवग के बीच समय समय पर ससद अथवा कानफरेंस हुआ करती थी। इसके दो काय थे। एक तो जनवग अपने कष्टो के निराकरण के लिए कहता था और दूसरे राजा को धन देना स्वीकार करता था इसके बदले में कि हमारी उचित शिकायतें दूर की जायेंगी। आल्पस पार के इन राज्या ने इस सस्था के क्रमश विकास द्वारा अत्यधिक सख्या तथा अव्यावहारिक दूरी की, भौतिक—राजनीतिक समस्या का समाधान प्रतिनिधित्व रूपी वध फूट का आविष्कार करके किया अथवा फिर से ढूढ निकाला। नगर राज्य में ससद के कार्यों में स्वय योगदान करने का प्रत्येक व्यक्ति का अधिकार या कतव्य था। बडे बडे दु साध्य सामन्ती राज्यो को इस व्यवस्था को प्रतिनिधि के रूप में परिवर्तित किया गया कि ये प्रतिनिधि वहा जायें जहाँ ससद का अधिवेशन हो।

समय-समय पर प्रतिनिधिया के सम्मेलन का यह सामन्ती रूप राजा तथा प्रजा के सम्पक के लिए बहुत उपयुक्त व्यवस्था थी। किन्तु वह मौलिक रूप में उस काय के लिए बिल्कुल अनुपयुक्त थी जो सत्रहवी शती में इग्लड ने सफलतापूवक अपने अनुकूल बनाया। अर्थात धीरे धीरे राजा से वह शक्ति जो राजनीतिक सत्ता की कुजी थी, अपने हाथ में कर ली।

क्या कारण था कि इग्लड ने उस चुनौती का सफलतापूवक सामना किया जिस प्रकार की चुनौती में कोई आल्पस के पार का राज्य सफल नही हो सका। इसका उत्तर यही है कि महाद्वीप के सामन्ती राज्यो की अपेक्षा इग्लड छोटा था और उसकी सीमाएँ स्पष्ट ढग से निर्धारित थी। इसी कारण वहाँ पडोसी राज्या की अपेक्षा बहुत पहले सामन्ती राज के विपरीत राष्ट्रीय जीवन का विकास हो गया। यदि यह कहा जाय कि पश्चिमी ईसाई समाज के इतिहास के मध्य अर्थात् दूसरे अध्याय में अग्रेजी राजतन्त्र का जो बल था उसी के परिणामस्वरूप तीसरे अध्याय में ससदीय शासन ने सफलता पायी तो विरोधाभास न समझना चाहिए। दूसरे अध्याय में किसी शासन का इतना शक्तिशाली अधिकार और कठोर अनुशासन नही था जितना विलियम द कावार का, प्रथम और दूसरे हेनरियो का और पहले और तीसरे एडवर्डो का। इन प्रबल शासको के शासन में इग्लड राष्ट्रीय एकता में सयोजित हुआ जसा फ्रास या स्पेन या जरमनी नही हुआ था। इस परिणाम का एक कारण और था वह था लन्दन का प्रभुत्व। आल्पस पार के पश्चिमी राज्यो में कोई एक नगर ऐसा नही था जो दूसरा से श्रेष्ठ रहा हो। सत्रहवी शती के अन्त में जब फ्रास अथवा जरमनी की जनसख्या की तुलना में इग्लड की जनसख्या नगण्य थी और स्पेन या इटली की जनसख्या से कम थी लन्दन यूरोप का सबसे बडा नगर था। यह कहा जा सकता है कि इग्लैंड ने इटालियन नगर राज्य को राष्ट्रीय पैमाने पर अपने अनुकूल बनाने की समस्या का समाधान दूसरे आल्पस पार राज्यो की अपेक्षा पहले कर लिया था। इसके कारण थे उसका छोटा आकार, उसकी निश्चित सीमाएँ उसके बलशाली राजे और एक बहुत बडा नगर। वास्तव में यह एक नगर राज्य की सघनता तथा आत्मजागरण का विस्तृत रूप था।

इन तमाम अनुकूल परिस्थितियों के होने पर भी अंग्रेज जाति ने इटालियन शासन की दक्षता के पुनर्जागरण की नयी शराब मध्ययुगीन आल्पस पार के संसदीय शासन की नयी बोतल में भरा और बोतल टूटा नही। यह वैधानिक विजय है जिसका कारण आश्चर्यजनक और असाधारण शक्ति ही कही जा सकती है। यह असाधारण शक्ति जिसने शासन के कार्य तथा उसकी आलोचना में पार्लमेंट की विजय पश्चिमी समाज के लिए प्राप्त की उन अंग्रेज सृजनशील अल्पसंख्यकों की देन है जो आरम्भिक काल में महाद्वीप की उलझनों से अलग हो गये थे। एलिजाबेथी काल तथा सत्रहवी शती के अधिकांश भाग का यह समय था। जिस समय चौदहवें लुई की चुनौती स्वीकार करके *मालबरो के प्रतिभापूर्ण नेतृत्व में अंग्रेजो ने महाद्वीप के क्षेत्र में अशत पुन प्रवेश किया।* तब यूरोपीय महाद्वीप के लोग देखने लगे कि अंग्रेज क्या करते रहे हैं। फ्रेंच लोगो की भाषा में 'एग्लोमेनी[1]' का युग आरम्भ हो गया था। मार्टेसक्यू ने अंग्रेजो की उपलब्धियो की प्रशंसा की और इसे गलत समझा। वैधानिक राजतन्त्र के रूप में एग्लोमेनी उस बारूद की ढेरी में था जिसने फ्रास की राज्यक्रान्ति की आग भडकाई और यह साधारण ज्ञान की बात है कि उन्नीसवी शती समाप्त होकर बीसवी शती जब आरम्भ हुई ससार के सभी लोगो की आकाक्षा हुई कि अपनी राजनीतिक नग्नता को सासारिक पत्तो के आवरण में छिपायें। पश्चिमी इतिहास के तीसरे अध्याय के अतिम चरण में अंग्रेजी राजनीतिक सस्थाओ की पूजा स्पष्टत उसी प्रकार है जैसे दूसरे अध्याय के अतिम चरण में इटालियन सस्थाओ की पूजा। अंग्रेजो के यहा इसका सबसे स्पष्ट उदाहरण यह है कि शेक्सपियर के कथा वाले नाटको के तीन चौथाई भाग इटालियन कहानियो पर आधारित है। 'रिचर्ड द्वितीय' में शेक्सपियर इस इटली प्रेम की ओर सकेत करता है और मजाक उडाता है यद्यपि यह प्रेम स्वय उसकी रचनाओ में दिखाई देता है। यार्क का सुयोग्य ड्यूक कहता है कि मूर्ख राजा निम्नलिखित बातो से बहक गया है—

'घमण्डी इटली के फैशनो के समाचार से
जिसके रग-ढग को हमारी आलसी मर्कट की सी जाति
निम्न कोटि की नकल करने के लिए पीछे-पीछे चलती है।

नाटककार अपने स्वाभाविक समय-दोषपूर्ण (एनाक्रानिस्टिक) ढग से चासर के युग के सम्बध *में वह बात कह रहा है जो उसके युग की थी। यद्यपि चासर के युग में इसका आरम्भ हो गया था।*

अंग्रेजो के ससदीय शासन का राजनीतिक आविष्कार आगे के उद्योगवाद के अंग्रेजी आविष्कार के लिए अनुकूल सामाजिक वातावरण बना। वह लोकतत्रीय शासन जिसमें कार्यकारी (एक्जिक्यूटिव) उस ससद के प्रति उत्तरदायी है जिसे जनता ने चुना है तथा उद्योगवाद जिसमें कारखाना में मजदूर केन्द्रित होते है और मशीन द्वारा उत्पादन होता है हमारे युग की दो महान् सस्थाएँ है। ये इसलिए चल सकी कि इन्ही के द्वारा पश्चिमी समाज उस समस्या का समाधान कर सका जिससे इटालियन नगर राज्य की सस्कृति की राजनीतिक तथा औद्योगिक उपलब्धियो का राज राज्य के स्तर पर ले जा सके। और ये दोनो समाधान उस समय हुए जब इग्लैंड का वह युग था जिसे बाद के राजनीतिज्ञो ने 'महान्' कहा है।

1 अंग्रेजी बातों के प्रति प्रेम।—अनुवादक

पश्चिम के इतिहास में रूस की भूमिका क्या होगी ?

जिस महान् समाज के रूप में हमारे पश्चिमी ईसाई जगत का विकास हुआ है उसके समसामयिक इतिहास में हमें ऐसा आभास मिलता है जहाँ एक युग की प्रवृत्ति दूसरे युग की प्रवृत्ति के ऊपर छा जाती है और जहा पूरे समाज का एक भाग भविष्य की समस्याओ के समाधान के लिए अलग हो जाता है और समाज का शेष भाग पुरानी समस्याओ को सुलझाने मे लगा रहता है। इससे पता चलता है कि विकास की प्रक्रिया चल रही है। पहले की इटालियन समस्याओ के समाधानो से जो नयी समस्याएँ उत्पन्न हुइ उनका समाधान इग्लैंड में हुआ। देखना यह है इन अग्रेजी समाधानो ने नयी समस्याएँ तो नही खडी कर दी। हम यह बात जानते है कि हमारी ही पीढी मे लोकतन्त्र तथा उद्योगवाद की विजय को दो नयी चुनौतियो का सामना करना पडा है। विशेषत उद्योगवाद की आर्थिक प्रणाली में इस प्रणाली का अर्थ यह है कि ससार के बाजार के लिए कुशल तथा मूल्यवान् स्थानीय उत्पादन हो। इसके लिए ससार को ध्यान मे रखकर कोई ढाचा बनाना पडता है। और लोकतन्त्र तथा उद्योगवाद, दोनो मे मानव-स्वभाव म अधिक व्यक्तिगत आत्मनियन्त्रण, पारस्परिक सहिष्णुता तथा सार्वजनिक सहयोग की अपेक्षा होती है जिसका मानव प्राणी अभी तक अभ्यासी नही रहा है। क्योकि इन नयी सस्थाओ ने मनुष्य के सारे सामाजिक कार्यों में नयी सक्रियता उत्पन्न कर दी है। उदाहरण के लिए सब लोगो ने मान लिया है कि जिन सामाजिक तथा तकनीकी परिस्थितियो में आज हम है उनमें हमारी सभ्यता का अस्तित्व इसी प्रकार बचा रह सकता है कि आपसी मतभेदो के निपटारे के लिए युद्ध न किया जाय। यहाँ हम केवल इसी पर विचार करेंगे कि इन नयी चुनौतियो के कारण ऐसे नये उदाहरण मिलते है कि नही जहा कोई अलग हुआ हो और फिर लौटा हो।

इतिहास के ऐसे अध्याय पर जिसका अभी आरम्भ हुआ हो, कुछ कहना असामयिक होगा। किन्तु यह कहने का साहस तो किया ही जा सकता है कि इस समय जो रूसी परम्परावादी ईसाई समाज है क्या इसी प्रकार का कुछ नही है। हमने पहले कहा है कि रूसी साम्यवाद पश्चिमी पर्दे में उस पश्चिमीकरण से अलग होने का कट्टरतापूर्ण प्रयत्न है जो दो सौ साल पहले महान् पीटर द्वारा हुआ था। और हमने देखा कि यह परदा चाहे-अनचाहे हटता जा रहा है। हम इस परिणाम पर पहुँचे है कि जो रूस अनिच्छा स पश्चिमी बना और जहा पश्चिम के विरोध मे क्रातिकारी आदोलन हुआ उसने रूस को अधिक पश्चिमी बना दिया। किसी पश्चिमी सामाजिक सिद्धान्त का अनुगामी होने से ऐसा न हुआ होता। रूस तथा पश्चिम के इस सपर्क को हमने इस प्रकार व्यक्त किया है कि यह सम्बन्ध जो पहले दो विभिन्न समाजो का केवल ऊपरी सम्पर्क था वह उस बडे समाज के आन्तरिक रूप मे परिवर्तित हो गया जिस समाज का अब रूस अग बन गया है। क्या हम इससे आगे बढकर यह कह सकते है कि रूस इस बडे (यूरोपीय) समाज में सम्मिलित होने के साथ साथ अपने साधारण जीवन से अलग होने की चेष्टा कर रहा है कि वह सर्जनात्मक अल्पसख्यक के रूप में इस बडे समाज की समस्याओ का समाधान खोजे ? यह सोचा जाता है और रूसी प्रयोग के प्रशसको का विश्वास है कि रूस पुन इस बडे समाज में सर्जनात्मक भूमिका अदा करने के लिए लौटेगा।

इन तमाम अनुकूल परिस्थितियो के होने पर भी अंग्रेज जाति ने इटालियन शासन की दक्षता के पुनर्जागरण की नयी शराब मध्ययुगीन आल्पस पार के ससदीय शासन की नयी बोतल में भरा और बोतल टूटा नही। यह वैधानिक विजय है जिसका कारण आश्चर्यजनक और असाधारण शक्ति ही कही जा सकती है। यह असाधारण शक्ति जिसने शासन के काय तथा उसकी आलोचना में पालमण्ट की विजय पश्चिमी समाज के लिए प्राप्त की उन अंग्रेज सजनशील अल्पसख्यको की देन है जो आरम्भिक काल में महाद्वीप की उलझनो से अलग हो गये थे। एलिजाबेथी काल तथा सत्रहवी शती के अधिकाश भाग का यह समय था। जिस समय चौदहवें लुई की चुनौती स्वीकार करके मालबरो के प्रतिभापूर्ण नेतत्व में अंग्रेजो ने महाद्वीप के क्षेत्र म अशत पुन प्रवेश किया। तब यूरोपीय महाद्वीप क लोग देखने लगे कि अंग्रेज क्या करते रहे हैं। फ्रेंच लोगो की भाषा में एंग्लोमेनी[1] का युग आरम्भ हो गया था। माटेंसकू ने अंग्रेजो की उपलब्धियो की प्रशसा की और इसे गलत समझा। वैधानिक राजतन्त्र के रूप में 'एंग्लोमेनी' उस बारूद की ढेरी में था जिसने फ्रास की राज्यक्रान्ति की आग भड़काई और यह साधारण ज्ञान की बात है कि उन्नीसवी शती समाप्त होकर बीसवी शती जब आरम्भ हुई ससार के सभी लोगो की आकाक्षा हुई कि अपनी राजनीतिक नग्नता को सासारिक पत्तो के आवरण में छिपायें। पश्चिमी इतिहास के तीसरे अध्याय के अतिम चरण में अंग्रेजी राजनीतिक सस्थाओ की पूजा स्पष्टत उसी प्रकार है जसे दूसरे अध्याय के अन्तिम चरण में इटालियन सस्थाओ की पूजा। अंग्रेजो के यहाँ इसका सबसे स्पष्ट उदाहरण यह है कि शेक्सपियर के कथा वाले नाटको के तीन चौथाई भाग इटालियन कहानियो पर आधारित हैं। 'रिचड द्वितीय' में शेक्सपियर इस इटली प्रेम की ओर सकेत करता है और मजाक उड़ाता है यद्यपि यह प्रेम स्वय उसकी रचनाओ में दिखाई देता है। यार्क का सुयोग्य ड्यूक कहता है कि मूर्ख राजा निम्नलिखित बातो से बहक गया है—

धमण्डी इटली के फैशनो के समाचार से
जिसके रग-ढग को हमारी आलसी मक्ट की सी जाति
निम्न कोटि की नकल करने के लिए पीछे-पीछे चलती है।

नाटककार अपने स्वाभाविक समय-दोषपूर्ण (एनाक्रानिस्टिक) ढग से चासर के युग के सम्बन्ध में वह बात कह रहा है जो उसके युग की थी। यद्यपि चासर के युग में इसका आरम्भ हो गया था।

अंग्रेजो के ससदीय शासन का राजनीतिक आविष्कार आगे के उद्योगवाद के अंग्रेजी आविष्कार के लिए अनुकूल सामाजिक वातावरण बना। वह लोकतत्रीय शासन जिसमें कार्यकारी (एक्जिक्यूटिव) उस ससद के प्रति उत्तरदायी है जिसे जनता ने चुना है तथा उद्योगवाद जिसमें कारखानो में मजदूर केन्द्रित होते ह और मशीन द्वारा उत्पादन होता है हमारे युग की दो महान् सस्थाएँ हैं। ये इसलिए चल सकी कि इन्ही के द्वारा पश्चिमी समाज उस समस्या का समाधान कर सका जिससे इटालियन नगर राज्य की सस्कृति को राजनीतिक तथा औद्योगिक उपलब्धियो का राज राज्य के स्तर पर ले जा सके। और ये दोनो समाधान उस समय हुए जब इंग्लैंड का वह युग था जिसे बाद के राजनीतिज्ञो ने महान् कहा है।

1 अंग्रेजी बातों के प्रति प्रेम।—अनुवादक

पश्चिम के इतिहास में रूस की भूमिका क्या होगी ?

जिस महान् समाज के रूप में हमारे पश्चिमी ईसाई जगत् का विकास हुआ है उसके समसामयिक इतिहास में हमें ऐसा आभास मिलता है जहाँ एक युग की प्रवृत्ति दूसरे युग की प्रवृत्ति के ऊपर छा जाती है और जहा पूरे समाज का एक भाग भविष्य की समस्याओ के समाधान के लिए अलग हो जाता है और समाज का शेष भाग पुरानी समस्याओ को सुलझाने में लगा रहता है। इससे पता चलता है कि विकास की प्रक्रिया चल रही है। पहले की इटालियन समस्याओ के समाधानो से जो नयी समस्याएँ उत्पन्न हुइ उनका समाधान इग्लैंड में हुआ। देखना यह है इन अग्रेजी समाधानो ने नयी समस्याएँ तो नही खडी कर दी। हम यह बात जानते है कि हमारी ही पीढी में लोकतन्त्र तथा उद्योगवाद की विजय को दो नयी चुनौतियो का सामना करना पडा है। विशेषत उद्योगवाद की आर्थिक प्रणाली में इस प्रणाली का अर्थ यह है कि ससार के बाजार के लिए कुशल तथा मूल्यवान् स्थानीय उत्पादन हो। इसके लिए ससार को ध्यान में रखकर कोई ढाँचा बनाना पडता है। और लोकतन्त्र तथा उद्योगवाद, दोनो में मानव-स्वभाव में अधिक व्यक्तिगत आत्मनियन्त्रण, पारस्परिक सहिष्णुता तथा सार्वजनिक सहयोग की अपेक्षा होती है जिसका मानव प्राणी अभी तक अभ्यासी नही रहा है। क्योकि इन नयी सस्थाओ ने मनुष्य के सारे सामाजिक कार्यों में नयी सक्रियता उत्पन्न कर दी है। उदाहरण के लिए सब लोगो ने मान लिया है कि जिन सामाजिक तथा तकनीकी परिस्थितियो में आज हम है उनमें हमारी सभ्यता का अस्तित्व इसी प्रकार बचा रह सकता है कि आपसी मतभेदो के निपटारे के लिए युद्ध न किया जाय। यहा हम केवल इसी पर विचार करेंगे कि इन नयी चुनौतियो के कारण ऐसे नये उदाहरण मिलते है कि नही जहाँ कोई अलग हुआ हो और फिर लौटा हो।

इतिहास के ऐसे अध्याय पर जिसका अभी आरम्भ हुआ हो, कुछ कहना असामयिक होगा। किन्तु यह कहने का साहस तो किया ही जा सकता है कि इस समय जो रूसी परम्परावादी ईसाई समाज है क्या इसी प्रकार का कुछ नही है। हमने पहले कहा है कि रूसी साम्यवाद, पश्चिमी परदे में उस पश्चिमीकरण से अलग होने का कट्टरतापूर्ण प्रयत्न है जो दो सौ साल पहले महान् पीटर द्वारा हुआ था। और हमने देखा कि यह परदा चाहे-अनचाहे हटता जा रहा है। हम इस परिणाम पर पहुँचे है कि जो रूस अनिच्छा से पश्चिमी बना और जहा पश्चिम के विरोध में क्रान्तिकारी आन्दोलन हुआ उसने रूस को अधिक पश्चिमी बना दिया। किसी पश्चिमी सामाजिक सिद्धान्त का अनुगामी होने से ऐसा न हुआ होता। रूस तथा पश्चिम के इस सपर्क का हमने इस प्रकार व्यक्त किया है कि यह सम्बन्ध जो पहले दो विभिन्न समाजो का केवल ऊपरी सम्पर्क था वह उस बडे समाज के आन्तरिक रूप में परिवर्तित हो गया जिस समाज का अब रूस अग बन गया है। क्या हम इससे आगे बढकर यह कह सकते है कि रूस इस बडे (यूरोपीय) समाज में सम्मिलित होने के साथ साथ अपने साधारण जीवन से अलग होने की चेष्टा कर रहा है कि वह सर्जनात्मक अल्पसख्यक के रूप में इस बडे समाज की समस्याओ का समाधान खोजे ? यह सोचा जाता है और रूसी प्रयोग के प्रशसको का विश्वास है कि रूस पुन इस बडे समाज में सर्जनात्मक भूमिका अदा करने के लिए लौटेगा।

१२ विकास द्वारा विभिन्नता

हमने उस प्रक्रिया की छानबीन पूरी कर दी जिससे सभ्यताओ का विकास होता है और जिन उदाहरणो की परीक्षा की है उससे पता चलता है कि सबमें प्रक्रिया एक ही है। विकास तब होता है जब कोई व्यक्ति या अल्पसंख्यक दल या सारा समाज किसी चुनौती का सामना करता है और यह सामना केवल चुनौती पर विजय ही नही पाता बल्कि विजय प्राप्त करने वाले के सामने नयी चुनौती उपस्थित कर देता है जिसका फिर उसे सामना करना पडा है। विकास की यह प्रक्रिया समान हो सकती है किन्तु चुनौती का सामना करने वाले वर्गों की अनुभूति एक सी नही होती। समान चुनौतियो का सामना करने में विभिन्न प्रकार की अनुभूतियाँ होती ह। किसी एक समाज में जो विभिन्न समुदाय संयुक्त होते ह उनकी अनुभूतियो की हम तुलना करें तो यह स्पष्ट हो जाता है। कुछ परास्त हो जाते ह कुछ अलग होने और लौट आने की सजनात्मक क्रिया से विजय पा जाते है, कुछ ऐसे होन ह जो न पराजित होते ह न विजयी होते ह। ये अपना अस्तित्व बनाये रखते ह और जब विजयी समुदाय उनको नयी राह दिखाता है तब उसी के चरण-चिह्नो पर चलते ह। इस प्रकार प्रत्येक चुनौती में समाज में विभिन्नता उत्पन्न होती रहती है। और जितनी ही लम्बी चुनौती की शृखला होती है उतनी ही विभिन्नता अधिक होती है। यदि किसी एक विकास वाले समाज में जिसमें सभी के लिए चुनौती एक सी है, विकास के कारण विभिन्नता उत्पन्न होती है तो निणयात्मक रूप से कहा जा सकता है कि जहा चुनौतियो में भी भेद है वहाँ एक सी प्रक्रिया होने पर भी एक विकासोन्मुख समाज दूसरे विकासोन्मुख समाज से विभिन्न होगा।

इसका स्पष्ट उदाहरण कला के क्षेत्र में मिलता है। क्योकि यह सवमान्य सिद्धान्त है कि प्रत्येक सभ्यता की अपनी कला की शैली होती है। और यदि हम किसी सभ्यता की देश और काल की सीमा निर्धारित करना चाहें तो सबसे निश्चित तथा सबसे सूक्ष्म कसौटी सौन्दयबोधात्मक है। उदाहरण के लिए मिस्र में जो कलात्मक नमूने पायी जाती ह यदि उनका सर्वेक्षण किया जाय तो यह बात स्पष्ट हो जायगी प्रीडाइनास्टिक' युग की कला में। अभी मिस्री कला की विशेषता नही आयी है और काप्टिक कला ने मिस्री कला की विशेषताओ को त्याग दिया है। इस आधार पर हमें मिस्री सभ्यता के काल का पता चल सकता है। इसी परीक्षण के आधार पर उस समय का पता लगा सकते ह जब मिनोई समाज के आवरण से हेलनी सभ्यता प्रकट हुई और कब परम्परावादी ईसाई समाज के विकास के लिए उसका विघटन हुआ। मिनोई कलाओ की शैली से हम यह जान सकते हैं कि मिनोई इतिहास की विभिन्न अवस्थाओ म उसका सभ्यता के क्षेत्र की सीमा कहाँ तक थी।

इसीलिए यदि हम स्वीकार कर लें कि कला के क्षेत्र में प्रत्येक सभ्यता की अपनी अलग शैली होती है तब हमें इसका पता लगाना होगा कि कला का जो विशेष गुण कला के क्षेत्र में है क्या वह प्रत्येक सभ्यता के दूसरे क्षेत्रो, कार्यों तथा संस्थाओ में बिना प्रवेश किये रह सकता है। इस प्रकार की

४

सभ्यताओ का विनाश

१३ समस्या का रूप

सभ्यताओ के विकास की समस्या की अपेक्षा उनके विनाश की समस्या अधिक स्पष्ट है। वह उतनी ही स्पष्ट है जितनी उनकी उत्पत्ति की समस्या। सभ्यताओ की उत्पत्ति के सम्बध में कहना आवश्यक है कि इतना सभ्यताएँ उत्पन्न हो गयी और उनके अट्ठाईस प्रतिनिधियो के नाम हमने गिनाये है। इनमें पाच अविकसित सभ्यताएँ भी सम्मिलित ह। अकाल प्रसूत सभ्यताओ को छोड दिया गया है। अब हम कह सकते ह कि इन अट्ठाईस में से अठारह ऐसी ह जो काल कवलित हो गयी ह। जो दस बची ह वे ह पश्चिमी समाज निकट पूव का परम्परावादी ईसाई जगत उसकी शाखा रूप में इस्लामी समाज, हिन्दू समाज, सुदूर पूव समाज का मुख्य भाग, उसकी शाखा जापान में और पोलिनेशियना एक्सिमो तथा खानाबदोशा की तीन अविकसित सभ्यताएँ। यदि हम इन दस अवशिष्ट सभ्यताओ पर ध्यान दें तो हम दखेंगे कि पोलिनेशियाई और खानाबदोश अपनी अतिम साँस ले रहे है और शेष सात या तो विनाश की ओर उन्मुख है या आठवी अर्थात् पश्चिमी सभ्यता में विलीन हो जाने वाली ह। इन सात में से छ का विघटन होने लगा है। एक अपवाद है एसकिमो का जिसका विकास आरम्भ काल में ही रुक गया था।

विघटन का मुख्य लक्षण जसा पहले बताया जा चुका है यह है जो अन्त में दृष्टिगोचर होता है और वह पतन और विनाश का है वह यह है कि विघटन वाली सभ्यता सावभौम राज्य के साथ जबदस्ती राजनीतिक एकीकरण करके अपने अस्तित्व की रक्षा कुछ काल के लिए करती है। पश्चिम के विद्यार्थी के लिए इसका क्लासिक उदाहरण रोमन साम्राज्य है जिसमें हेलेनी समाज बलपूवक अपने इतिहास के अन्तिम अध्याय के पहल मिला लिया गया था। यदि हम अपनी सभ्यता के अतिरिक्त शेष छ जीवित सभ्यताओ की ओर देखें तो हमें पता चलता है कि परम्परावादी इसाई जगत् उसमानिया साम्राज्य के रूप में सावभौम राज्य में जा चुका था, रूस का परम्परावादी ईसाइ ससार पन्द्रहवी शती के अन्त में, जब मास्को और नोवगोराड का एकीकरण हुआ था, सावभौम राज्य में सम्मिलित हो चुका था हिन्दू सभ्यता मुगल साम्राज्य में और उसके बाद ब्रिटिश राज के सावभौम राज्य में सम्मिलित हो गयी थी, सुदूर पूर्वी सभ्यता मगोल साम्राज्य में सम्मिलित हो चुकी थी जिसका पुनरुद्धार मचुआ ने किया सुदूर पूर्वी सभ्यता की जापानी शाखा तोकूगावा शागून राज्य में सम्मिलित हुई। इस्लामी समाज क विश्व इस्लामी आन्दोलन के सावभौम राज्य में विलीन हो जाने की सम्भावना है।

यदि हम इस सावभौम राज्य की घटना को विनाश का लक्षण स्वीकार करें तो सभी छ अ पश्चिमी सभ्यताएँ जो आज जीवित ह वे पश्चिमी सभ्यता के सघात के पहले ही आन्तरिक रूप में विघटित हो चुकी थी। इस अध्ययन में आगे हम इस मत पर विश्वास करेंगे कि जिन

सभ्यताओ पर विजयपूर्ण बाहरी आघात हुआ है वे आन्तरिक रूप में मर चुकी थी और विकास के योग्य नही रह गयी थी। यहाँ हम इतना ही कहना पर्याप्त समझते हैं कि जीवित सभ्यताओ में हमारी सभ्यता के अतिरिक्त सब पतनोन्मुख हो चुकी है और विघटन के पथ पर है।

और हमारी पश्चिमी सभ्यता ? अभी वह सार्वभौम राज्य की स्थिति तक नही पहुँची है। हमने पहले बताया है कि सार्वभौम राज्य विघटन की पहली मजिल नहा है और न अंतिम। सार्वभौम राज्य के बाद 'अन्त काल' होता है और उसके पहले 'सकट का काल' होता है जो कई शतिया चलता रहता है। और यदि हम अपने युग में आत्मपरक भाव से इसी कसौटी पर विचार करे तो कह सकते है कि 'सकट का काल' निश्चित रूप से हमारी सभ्यता के लिए आरम्भ हो गया है। किन्तु सम्प्रति यह प्रश्न हम छोड देते है।

हमने सभ्यताओ के विनाश की प्रकृति की परिभाषा बना दी है। आदिम मानव अतिमानव के जीवन की ऊँचाई तक पहुँचने के अनेक साहसपूर्ण प्रयास करता है और असफल होता है। उस महाप्रयास की दुर्घटनाओ का अनेक उपमाओ द्वारा वर्णन हमने किया है। उदाहरण के लिए हमने उनकी उन पर्वतारोहियो से तुलना की है जो गिर पडते है और मर जाते है या उन लोगो के समान जो वहाँ रह गये। जिस चट्टान से उन्होने चढना आरम्भ किया था और जीवित मृतक के समान वहाँ पडे हुए है और ऊपर एक और चट्टान पर पहुँच कर विश्राम नही ले सके। इन विनाशो को हमने अभौतिक (नान मटीरियल) भाषा में इस प्रकार कहा—सजनात्मक व्यक्तियो अथवा अल्पसख्यको की आत्मा में सजनात्मक शक्तियो का अभाव। इस अभाव के कारण असजनात्मक जनसमह को वे प्रभावित नही कर सकते। जहाँ रचना नही है वहाँ अनुकरण भी नहा है। जो वशी वाला अपनी कला भूल गया वह अपने सामने की भीड के चरणो मे वसी गति नही ला सकता कि वे नाच सकें। और यदि क्रोध में वह ड्रिल सरजट या दासो का हाँकने वाला बन जाय और उन लोगो को, जिन्हें अपनी मोहनी शक्ति से वह नचा देता था न नचा सके और जबरदस्ती नाचने पर विवश करे, तो उसका अभिप्राय सफल नही हो सकता। जो लोग उसके साथ नही पाँव उठा सकते क्योकि स्वर्गीय सगीत अब बन्द हो गया, वे चाबुक की चोट के कारण विद्रोह करेंगे।

हमने देखा है कि वास्तव में, जब किसी समाज के इतिहास में कोई सजनात्मक अल्पसख्यक समुदाय शक्तिशाली अल्पसख्यक दल मे परिवर्तित हो जाता है और बलपूर्वक वह स्थान अपने लिए बनाये रहना चाहता है जिसके योग्य वह नही है तो इस शासक वर्ग की मनोवृत्ति के परिवर्तन के कारण दूसरी ओर सर्वहारा अलग हो जाता है क्योकि अपने शासको के प्रति उसकी आस्था नही रह जाती, न वह उनका अनुकरण करता है बल्कि विद्रोह करता है। हमने यह भी देखा है कि जब यह सर्वहारा दृढ हो जाता है तब आरम्भ से ही उसके दो भाग हो जाते है। एक तो अन्दर का सर्वहारा होता है जो अकर्मण्य और शिथिल होता है, दूसरा सीमा के बाहर सर्वहारा होता है जो सम्मिलन का घोर विरोध करता है।

इस प्रकार सभ्यताओ के विनाश के सम्बन्ध में तीन बातें है अल्पसख्यको में (शासक वर्ग) रचनात्मक शक्ति का अभाव तदनुसार बहुसख्यक वर्ग में अनुकरण शक्ति का लोप और परिणाम-स्वरूप सारे समाज म एकता का अभाव। सभ्यताओ के विनाश की प्रवृत्ति का यह चित्र अपने सामने रखकर अब हम उनके कारणो का अध्ययन करे। इस अध्ययन के शेष अंग में यही खोज की जायगी।

है। जिसके कारण उनकी स्वस्थ शक्तियाँ भी सजनात्मक सामाजिक काय करने के लिए क्षेत्र बनाने में असमथ होती हैं।

इस अमान्य प्राक्कल्पना (हाईपोथेसिस) का कि प्रजातीय (रेशल) पतन के कारण सभ्यता का विनाश होता है समथन कभी-कभी यह कह कर किया जाता है कि किसी समाज के पूण विनाश तथा नये समाज के उद्भव के बीच जो अन्त काल होता है उसमें एक जनरला होता है जिसमें इन दोनो समाजो के बीच, जिनका निवास स्थान एक ही तरह का होता है, 'नये रक्त' का सचरण होता है। इस तक के अनुसार, कि बाद की घटना कारण है, यह मान लिया जाता है कि नयी सभ्यता में जो सजनात्मक शक्ति दिखाई देती है वह उस 'नये रक्त' का परिणाम है जो 'आदिम बबर प्रजाति' के विशुद्ध स्रोत से आया है। और तब इसके विपरीत यह परिणाम निकाला जाता है कि पुरानी सभ्यता में सजनात्मक शक्ति का ह्रास इस कारण हुआ होगा कि कोई प्रजातीय रक्तक्षीणता रही होगी जो नये तथा स्वस्थ रक्त के सचार बिना जीवित नहीं रह सकती।

इस विचार के समथन में इटली के इतिहास से उदाहरण दिया जाता है। कहा जाता है कि इटली के निवासियों में ईसा के पूव की अन्तिम चार शतियो में बहुत अधिक सजनात्मक शक्ति दिखाई देती है। और फिर इसी प्रकार की शक्ति ईसा की ग्यारहवी शती से सोलहवी शती के छ सौ वर्षों में दिखाई देती है। इन दोनो के बीच का एक हजार वष, पतन दुबलता और फिर स्वस्थ होने का है जिससे जान पडता है इटली गुणविहीन हो गया था। प्रजातिवादियो (रेशियलिस्ट) का कहना है कि इटली के इतिहास के इन अद्भुत परिवतनो का कारण इसके सिवाय और कुछ नहीं हो सकता कि गाथो और लम्बार्डो ने आक्रमण करके इस अन्त काल में इटली की नसो में नये रक्त का सचार किया। इस सजीवनी द्वारा समय पाकर शतियो की सुश्रूषा के बाद इटली में नवजीवन अर्थात् पुनर्जागरण (रनेसा) का जन्म हुआ। कहते ह कि नये रक्त के अभाव के कारण रोमन जनतन्त्र के काल में अपार शक्ति की उत्पत्ति के बाद रोमन साम्राज्य का क्षय और विनाश हुआ। और रोमन जनतन्त्र के उद्भव के समय जिस क्रियात्मक शक्ति का आविर्भाव हुआ वह भी नये बबर रक्त के सचार के कारण हो सका जो हेलनी सभ्यता के जन्म के पहले की जनरेला में हुआ।

ईसाई सवत् की सोलहवी शती तक के इतिहास का प्रजातीय समाधान ऊपरी दृष्टि से युक्ति सगत जान पडता है यदि हम इसी काल तक रुक जायें। किन्तु यदि हम सोलहवीं शती से आज तक के इतिहास तक दृष्टि डालें तो हम देखेंगे कि सत्रहवी तथा अठारहवी शती पुन पतन का काल थी और उसके बाद एकाएक उन्नीसवी शती में जाग्रति हो गयी। यह जाग्रति ऐसे नाटकीय ढग से हुई कि इस आधुनिक काल में जो मध्ययुगीन इटालियन अनुभव हुआ है उसका नाम ही 'रिसारजिमेन्टो' (पुनर्जागरण) रख दिया गया। इस इटालियन शक्ति के प्रस्फुटन में किस बबर रक्त का सचार हुआ? उत्तर स्पष्ट है कोई नहीं। इतिहासकार इस स्वीकार करते ह कि उन्नीसवी शती में जो रिसारजिमेन्टो हुआ वह उस चुनौती तथा जाग्रति का परिणाम था जो फ्रास की क्रान्ति तथा नेपालियन की विजय तथा शासन के कारण उत्पन्न हुई।

ईसाई सन् के आरम्भ के दो हजार वष पहले इटली में जो जाग्रति हुई थी उसका अ प्रजातीय कारण बताना कठिन नहीं है। और ईसा के पूव दो सौ साल में उसका जो पतन हुआ उसका भी।

यह पतन रोमन सनिकवाद का परिणाम था जिसके कारण भयकर हैनिबली युद्ध हुआ था। उत्तर हेलेनी अन्त काल में इटली के सामाजिक जागरण का भी कारण यह था कि पुरानी इटालियन प्रजाति के अनेक सजनात्मक महान व्यक्तियो ने योगदान किया। विशेषत सन्त बेनिडिक्ट तथा पोप ग्रेगरी महान जिन्होने केवल मध्ययुगीन इटली को ही प्राणदान नही दिया, बल्कि नयी पश्चिमी सभ्यता को जाग्रत किया जिसमें मध्ययुगीन इटली ने योगदान किया। इसके विपरीत जब हम इटली के उन क्षेत्रो को देखते ह जिन्हें शुद्ध रक्त वाले लोबार्डो ने आक्रान्त किया तब उनमे वेनिस और रोमाना तथा वे जनपद सम्मिलित नही है जिन्होने इटालियन पुनर्जागरण में योगदान किया। और जिनका काय उन नगरो से अधिक श्रेष्ठ था जो लोम्बाड के शासन क्षेत्र मे थे, जैसे पाविया, बेनवेल्टो, और स्पोलेटो। यदि हम इटालियन इतिहास के प्रजातीय समाधान को महत्त्व देना चाहते है तो जो साध्य है उसके आधार पर कहना पडेगा कि लोम्बाड रक्त ने सुधा के बजाय विष का काम किया।

प्रजातीय समाधान वालो का एक और किले से हम खदेड देना चाहते ह जो उन्होने इटालियन इतिहास में बना रखा है। वह रोमन रिपब्लिक का उदय है जो अ प्रजातीय समाधान है। इस उदय का कारण यूनानियो तथा एट्रस्कनो द्वारा उपनिवेश बनाने की चुनौती थी। इटालियन प्रायद्वीप के निवासियो के सामने तीन विकल्प थे। नष्ट हो जायें विजित हो जाय या पच जायें जसे यूनानियो ने सिसिली वालो को और एट्रस्कनो न अम्ब्रिया वालो को बलपूवक सम्मिलित कर लिया था। हेलेनी सभ्यता को अपनी इच्छा के अनुसार और अपनी मर्यादा के अनुकूल ढाल कर अपनी सत्ता को कायम रखें (जिस प्रकार जापान ने पश्चिमी यूरोप का ग्रहण करके किया) और इस प्रकार अपने को यूनानी तथा हेलनी दक्षता तक ले जायें। रोमनो ने अतिम ढग पर चलने का निश्चय किया और इस निश्चय के कारण अपनी महत्ता के विधायक बने।

सभ्यता के विनाश के तीन नियतिवादी समाधानो को हमने समाप्त कर दिया अर्थात यह सिद्धान्त कि विनाश इसलिए होता है कि विश्व के यन्त्र का जीवन समाप्त हो गया था या पथ्वी की जरावस्था आ गयी या यह सिद्धान्त कि जीवो के नियमो के समान उसकी आयु की सीमा भी निर्धारित है और यह सिद्धान्त कि सभ्यता का विनाश इसलिए होता है कि जो व्यक्ति इस समाज के सदस्य होते ह उनके गुणो का ह्रास हो जाता है क्योकि उनके पूवजो की सभ्यता की कहानी बहुत प्राचीन हो जाती है। एक प्राक्कल्पना पर और विचार करना है जिसे इतिहास का चक्रीय सिद्धान्त (साइक्लिकल थियरी) कहा जा सकता है।

मनुष्य के इतिहास का चक्रीय सिद्धान्त उन ज्योतिष के आविष्कारो का स्वाभाविक परिणाम था जो ईसा के पूव अरवी तथा छठी शती के बीच बेबिलानी समाज ने खोज निकाले थे। तीन स्पष्ट चक्र थे—दिन और रात, चान्द्र मास और सौर वष। ये आकाशीय पिण्डो के सामयिक प्रत्यावतन क उदाहरण ह। यह भी कहा गया था कि पथ्वी, चाँद सूय तथा और ग्रहो का गतियो में सामजस्य है। और आकाशीय सगीत जो नक्षत्रो की गतियो के मिलन स उत्पन्न होता है सूय का प्रतिवष का चक्र का नियमित क्रम उसके सामने कुछ नही है। इसका परिणाम यह निकाला गया कि जिस प्रकार वनस्पति जगत् में जीवन तथा विनाश का क्रम है, जो सूय क नियमित आवतन के कारण है उसी प्रकार विश्व के चक्र में सभी का जीवन और मरण होता है।

मानव इतिहास की इस चक्रीय व्याख्या ने अफलातन को आकृष्ट किया (टीमियस २१ई–२२ सी तथा पोलिटियस १६९ सी–२१०३ ई०) और यही सिद्धात वर्जिल के चौथे सवाद (एक्लोग) में दिखाई देता है।[1]

हलेनी ससार को आगस्टस ने जो शात किया था उससे प्रभावित होकर वर्जिल ने कविता लिखी थी उसमें इस चक्रीय सिद्धात की प्रशसा की गयी है। किन्तु क्या यह बधाई का विषय है कि 'पुराने युद्ध फिर होग।' बहुत से लोगो ने, जिनका जीवन सफल और सुखी रहा है दृढ़ता से कहा है कि हम नही चाहते कि पुरानी लडाइयाँ फिर हो। तो जो बात व्यक्ति नही चाहता उसे क्या इतिहास दोहराना चाहेगा? इस प्रश्न का उत्तर वर्जिल नही देता। किन्तु शली ने अपने काव्य 'हेलास के कोरस'[2] के अतिम अश में इसका उत्तर दिया है। जो आरम्भ तो होता है वर्जिल के सस्मरण की भाँति किन्तु अत के भाव शेली के अपने ह —

विश्व का महान युग फिर से आता है
स्वर्णिम वर्ष लौटते ह
पथ्वी सर्प के समान—अपना केंचुल बदलती है
शीत काल में उगे पौधे मुरझा जाते ह
आकाश मुस्कुराता है
भग्न स्वप्नो के समान
विश्वास और साम्राज्य धुधले पड जाते ह।
एक और विशाल आरगो सागर को चीरता है
जिसमें नयी सम्पत्ति लदी हुई है
नया आरफ्यूज फिर गाता है
प्रेम करता है रोता है और मर जाता है
नया यूलिसिस अपनी जन्मभूमि
के लिए कलिप्सो से चलता है
किन्तु ट्राय की कहानी अब मत लिखो
पृथ्वी म सहार होना ही है तो
स्वतन्त्रता से जो आनन्द—प्राप्त होता है
उसमें लइमी आक्षेप मत सम्मिलित होने दो
चाहे और भी चतुर स्फिक्स मृत्यु क

१ क्यूमियनो की भविष्यवाणी के अनुसार अंतिम-युग आ गया है। युगो का जन्म फिर से क्रमानुसार होता है। नया तथा स्वर्णयुग लौट रहा है। भगवान के यहाँ से नया जाति आ रही है। वीरो के विशिष्ट समूह का नेतृत्व करने के लिए टाइफिस और आरगो फिर से उत्पन्न होगे। पुराने युद्ध फिर होंगे और फिर एकिलीज महान ट्राय को भेजा जायगा।

२ किसी नाटक अथवा बडे काव्य के आरम्भ में समवत गान जिसमें कविता अथवा उसमें आये पात्रों के सम्बन्ध में कुछ कहा जाता है।—अनुवादक

उन रहस्यो का उदघाटन करे
जिन्हें थीबी भी नही जानता था
बन्द करो—क्या घृणा और मृत्यु फिर लौटेगी
चुप हो—क्या मानव हत्या करेगा और मरेगा
शान्त हो भविष्यवाणी के पात्र के अन्तिम
बूद तक मत पान करो
ससार भूतकाल के इतिहास से ऊब गया है
या तो इसका विनाश हो जाय या यह शान्त हो ।

यदि विश्व का नियम सचमुच ऐसा ही विषादपूर्ण है कि सृजन और विनाश होता रहे तब हमें इस पर आश्चर्य न होना चाहिए कि कवि बौद्ध दर्शन के अनुसार कहता है कि जीवन के चक्र से मुक्त हो जाना चाहिए। जब तक यह चक्र नक्षत्रो के भ्रमण में उनका पथ प्रदर्शक है तब तक वह सुन्दर जान पडता है किन्तु जब वही मनुष्य के जीवन को प्रभावित करने लगता है असह्य हो जाता है ।

नक्षत्रो के प्रभाव को अलग रख दीजिए । क्या बुद्धि इस बात पर विश्वास कर सकती है कि मानव का इतिहास नक्षत्रो की गति से प्रभावित होता है ? हमने भी क्या इस अध्ययन के बीच ऐसे ही विचार को प्रोत्साहित नही किया है ? यिन और याग चुनौती और उसका सामना, अलग होना और लौटना, उत्पत्ति और सम्वद्धता, सभी गतिया जिनका विवचन हमने किया है, क्या इसी ओर लक्षित नही होता है ? क्या ये सब उसी पुरानी कहावत के विभिन्न रूप नही है कि 'इतिहास का पुनरावर्तन होता है । निस्सन्देह इन सब शक्तियो में, जो मानव इतिहास का जाल बुनती है पुनरावर्तन का तत्त्व अवश्य है । किन्तु समय के करघे में जो ढरकी बराबर इधर से उधर चलती है उससे ऐसे नक्शे बनते है जिनमे नयापन होता है, उसी नक्शे को बार बार समय दोहराता नही । इसे भी हमने बार-बार देखा है । पहिये का जो रूपक दिया गया है उसमे भी आवर्तन के साथ प्रगति भी है । यह ठीक है कि पहिया अपनी धुरी पर बराबर एक समान घूमता है किन्तु गाडी में पहिया इसलिए लगा है कि गाडी चले । पहिया गाडी का अग है । पहिया घूम घूमकर गाडी को चलाता है किन्तु वह गाडी को विवश नही कर सकता कि चरखी के समान वह एक ही दिशा में चला करे ।

हमारा अभिप्राय लय से दो विभिन्न गतियो का सामजस्य है । एक मुख्य गति है जो पीछे नही जाती । यह आवर्तन वाली गति से उत्पन्न होती है । इन गतियो को हम आधुनिक मशीनो में ही नही पाते, जीव जगत् में भी यही लय पाया जाता है । ऋतुओ का प्रत्यावर्तन, जिससे वनस्पतियो का जन्म और क्षय होता, वनस्पति जगत् के विकास का कारण है । जन्म, प्रजनन तथा मृत्यु का जो दुखद चक्र है उससे ही सारे मनुष्य तक सारी सृष्टि का विकास हुआ है । एक के बाद दूसरा पाव चलता है इससे हम पृथ्वी पर आगे बढते है फेफडो और हृदय से रक्त का सचालन होता है इसी से जीव अपना जीवन बिताता है । सगीत के स्वर और कविता की पक्तियो द्वारा सगीतज्ञ तथा कवि अपने विषयो का प्रसार करते है । ग्रहो का चक्र जिससे हमारा वर्ष बनता है और जो भी सम्भवत चक्र के विचारो का स्रोत है, विशाल सृष्टि का मूल नही बन सकता । क्योकि पश्चिम के ज्योतिष शास्त्र ने महान दूरबीनो की सहायता से हमारे सौर मण्डल को विश्व के बीच एक कण के समान प्रमाणित कर दिया है । पिण्डो को सगीत (म्युजिक आव स्फियस)

का अस्तित्व विश्व में नही रह जाता, आकाश में लीन हो जाता है। क्योकि ब्रह्माण्ड अपने नक्षत्र समूह के साथ बढता चला जा रहा है और नक्षत्र समूह अविश्वसनीय गति से एक दूसरे से दूर होते जा रहे ह। और देशकाल के प्रभाव से ससार में जो भिन्न भिन्न स्थितियाँ उत्पन्न होती ह उन नाटकीय परिस्थितियो में सभी लोग अभिनय करते ह।

इस प्रकार चक्र के प्रत्यावतन की गति का हमने सभ्यता की प्रगति की दृष्टि से जो विश्लेषण किया है उसका अथ यह नही है कि प्रगति उसी चक्र के अनुसार नहा होती जैसा एक बार चक्र आता है। इसके विपरीत यदि प्रत्यावतन का कोई अथ हो सकता है तो यही कि लघु गति चक्र की है और प्रधान गति चक्र की भाँति नहा होती वह आगे की ओर ले जाती है। मानवता इक्सायन[1] नही है कि पहिये से बँधा रहे न सिसाइफस[2] जो पत्थर को एक ही पहाड की चोटी पर ले जाय और विवश होकर देखा करे कि पत्थर फिर नीचे लुढक जाता है।

पश्चिमी सभ्यता की हम सताना को यह उत्साहवधक सदेश है जब हम अकेले इधर उधर भटक रहे ह और हमारे साथ घायल सभ्यता के अतिरिक्त और कोई नही है। सम्भव है हमारी सभ्यता पर भी मृत्यु का प्रकोप हो। सभ्यताए मृत्यु से नही मरती, या नियमानुसार उनका विनाश नही होता, इसलिए हम यह न समझें कि हमारी सभ्यता भूत सभ्यताओ की श्रेणी म सम्मिलित होगी। जहाँ तक हमारा ज्ञान है सोलह सभ्यताएँ मर चुकी ह और नौ मतप्राय ह। हमारा छब्बीसवा स्थान है और हम विवश होकर जन्म-मरण के नियमानुसार मरने को नही ह। सजनात्मक शक्ति की ईश्वरीय चिनगारी हममें है। यदि हम उसे फूककर प्रज्वलित कर सकें तो नक्षत्र हमारी चेष्टाओ को विफल नही कर सकते और हम अपनी मानवीय चेष्टा से अपने लक्ष्य पर पहुँच सकते है।

१ यूनानी पुराण में इक्सायन एक व्यक्ति था जिसे नरक में एक पहिये में बाँध दिया गया था। उसी में सदा वह घूमा करता है।—अनुवादक

२ यूनानी पुराण में एक व्यक्ति जिसका काम था पत्थर को पहाड पर ले जाना। पत्थर फिर नीचे लुढक जाता था और फिर वह ले जाता है। सदा उसे यही करना था, यही उसे दण्ड मिला था।—अनुवादक

१५ वातावरण पर से नियत्रण का लोप होना

(१) भौतिक परिस्थिति

यदि हमने प्रमाणित कर दिया है कि सभ्यताओं का विनाश मानव शक्ति के बाहर ब्रह्माण्ड (कास्मिक) की शक्तियों के कारण नहीं होता तो विनाश का वास्तविक कारण हमें ढूढना चाहिए। पहले हम इस बात पर विचार करेंगे कि यह विनाश इस कारण तो नहीं है कि समाज के वातावरण पर से नियन्त्रण उठ गया है ? इस प्रश्न के समाधान के लिए दो वातावरणों के अन्तर ध्यान रखेंगे। भौतिक वातावरण और मानवी वातावरण।

क्या सभ्यताओं का विनाश इस कारण होता है कि भौतिक वातावरण पर से नियन्त्रण लोप हो जाता है ? किसी समाज का, उसके भौतिक वातावरण पर कितना नियन्त्रण होता है नापा जा सकता है। जैसा कहा गया है उसकी तकनीक होती है। 'विकास' की समस्या का अध्ययन करते समय हमने देखा था कि यदि हम दो वक्र रेखा (कर्व) बनायें जिनमें एक सभ्यताओं के उत्थान पतन के लिए हो और दूसरी तकनीक के अदल-बदल के लिए तो दोनों रेखाओं में एकता नहीं होती, बल्कि बहुत अधिक अन्तर होता है। हमने देखा है कि सभ्यता स्थैतिक रही और तकनीक गतिशील अथवा तकनीक स्थैतिक रही है और सभ्यता आगे या पीछे प्रगतिशील रही है।[1] हमने अच्छी तरह प्रमाणित कर दिया है कि भौतिक वातावरण पर नियन्त्रण का अभाव सभ्यता के विनाश की कसौटी नहीं है। अपने प्रमाण को और दृढ करने के लिए हम बतायेंगे कि जहा सभ्यता का पतन हुआ है और साथ ही तकनीक की अवनति हुई है वहाँ तकनीकी अवनति सभ्यता के विनाश का कारण नहीं रही है। हम देखेंगे कि तकनीकी अवनति कारण नहीं है, बल्कि परिणाम या लक्षण है।

जब कोई सभ्यता पतनोन्मुख होती है कभी कभी ऐसा होता है कि कोई विशेष तकनीक, जो ह्रास की अवस्था में उपयुक्त भी रही हो और लाभदायक भी, तो इस समय उसे सामाजिक बाधाओं का सामना करना पडता है और उसका आर्थिक प्रतिफल (रिटर्न) कम होने लगता है। वह बिल्कुल लाभहीन हो जाती है और यह तकनीक छोड देनी पडती है। ऐसी अवस्था में यदि हम यह मानें कि तकनीक का इसलिए त्याग दिया गया कि उसे काम में लाने की क्षमता नहीं रह गयी और तकनीकी अयोग्यता के कारण सभ्यता का ह्रास हुआ तो कारण कार्य के क्रम का स्पष्टतः उलट देना होगा।

इसका स्पष्ट उदाहरण पश्चिमी यूरोप में रोमन सडकों का त्यागना है। यह रोमन साम्राज्य के पतन का कारण नहीं था परिणाम था। ये सडकें इसलिए नहीं त्याग दी गयी कि तकनीकी कौशल का अभाव था, बल्कि जिस समाज ने उसे सैनिक कारणों के लिए बनाया था और जिसे

१ देखिए, पृ० १५८-६६

उसकी आवश्यकता थी वह समाज नष्ट हो गया। हेलनी सभ्यता की विजय में भी हम नहीं कह सकते कि उनकी आर्थिक व्यवस्था की सारी तकनीक के नाश हो जाने से उनका विनाश हुआ।

'प्राचीन संसार के पतन का आर्थिक कारण हमें पूर्णत त्याग देना पड़ेगा। पुराना जीवन का आर्थिक सरलता पुराने संसार के पतन का कारण नहीं था बल्कि दूसरी साधारण घटना (पतन सेनन) का एक अश था।'[1]

यह साधारण घटना मध्यवर्ग का विनाश तथा शासन की असफलता थी।

जिस प्रकार रोमन सड़का को त्याग दिया गया था उसी के समान उससे पुरानी इजला फरात के कछारी डेल्टा की सिंचाई की व्यवस्था को भी त्याग दिया गया था। ईसा की सातवीं शती में दक्षिण पश्चिम इराक में इस जल की इजीनियरी व्यवस्था को इसलिए छोड़ दिया कि बाढ़ के कारण वे उपयोगी नहीं रह गयी। यद्यपि ऐसी बाढ़ें अनेक बार आयी और उनसे जो हानि हुई उससे अधिक हानि इस बार नहीं हुई थी। और इसके बाद तेरहवी शती में इराक की सारी सिंचाई का व्यवस्था नष्ट हो गयी। ऐसा क्या हुआ? इराक निवासियों ने उस प्रणाली की रक्षा क्या नहीं की जिसे उनके पूर्वज हजारों वर्षों से सफलतापूर्वक काम में लाते रहे और जिसके कारण धरती कृषि से सम्पन्न होती रही और उनकी बड़ी जनसख्या का भरण-पोषण करती रही। तकनीक का यह विनाश कारण नहीं था। जनसख्या के ह्रास और समाज की सम्पन्नता की समाप्ति का यह परिणाम था। ईसा की सातवी शती और फिर तेरहवी शती में इराक में सीरियाई सभ्यता इतनी नीचे आ गयी थी और अरक्षा इतनी अधिक था कि किसी के पास इस व्यवस्था में पूजी लगाने को न सम्पत्ति थी न सिचाई तथा नदी के पानी रोकने की व्यवस्था के लिए किसी में प्रेरणा थी। *और कारण ये थे कि सातवी शती में रोमन-परशियन युद्ध (६०३–६२८ ई०) हुआ जिसमें मुसलिम अरबों ने इराक को तहस नहस कर दिया तेरहवी शती में सन् १२५८ में मगोलो ने आक्रमण किया जिससे उसकी पूर्ण आहुति हो गयी।*

इसी प्रकार के परिणाम पर हम उस समय पहुँचते है जब हम उसी प्रकार का निरीक्षण सीलोन में करते है।[2] आज हम सीलोन के उस क्षेत्र का जब निरीक्षण करते है जो भारतीय (इडिक) सभ्यता का ध्वंसावशेष है तब हम देखते है कि यही क्षेत्र सूखा हुआ ही नहीं है यही क्षेत्र मलेरिया से पूर्ण है। आजकल जल कृषि कार्य के लिए सर्वथा अपूर्ण है किन्तु मलेरिया वाले मच्छरों के पनपने के लिए पर्याप्त है। पुरानी सभ्यता की यह विचित्र निशानी है। और यह तो सम्भव नहीं कि उस समय भी मलेरिया के मच्छर वहाँ रहे हो जब सीलोन में भारतीय समाज ने ऐसी सुन्दर जल की व्यवस्था की थी। वास्तव में यह प्रमाणित किया जा सकता है कि नहरों की प्रणाली के विनाश के कारण ही वहाँ मलेरिया फैला हो अर्थात इन नहरों के निर्माण के बाद। सीलोन के इस भाग में मलेरिया इस कारण फैला कि सिचाई की नहरों के नाश हो जाने के बाद

१ एम० रोस्टोफ्जेफ द सोशल एण्ड एकनामिक हिस्ट्री आव द रोमन एम्पायर, पृ० ३०२–५ तथा ४८२–५।

२ इस विषय पर पहले भी विचार किया गया है। देखिए, पृ० ६८–६६।

नहरें छोटे छोटे ताला में परिवर्तित हो गयी, जहाँ का जल कम हो गया और वे मछलिया नष्ट हो गयी जो मच्छरा के अण्डा को खा जाती थी।

किन्तु भारतीय सिंचाई प्रणाली नष्ट क्या हुई ? लगातार तथा विनाशकारी युद्धो के कारण नहरे तोड फोड दी गयी और नालियाँ भर गयी। जान-बूझकर सैनिक कारणा से आक्रमणो ने नहरो का नष्ट किया और युद्ध पीडित जनता को इनकी मरम्मत करने का उत्साह न रहा और यह भी उन्हें भय रहा कि बन जाने पर ये फिर तोड डाली जायेंगी। इस उदाहरण में भी तकनीकी ह्रास सभ्यता के ह्रास का कारण नही है। सामाजिक कारण काय की शृंखला में तकनीकी ह्रास उत्पन्न होता है। उसके सामाजिक कारण का पता लगाया जा सकता है।

सीलोन में भारतीय सभ्यता के इस अध्याय के समान ही हेलेनी सभ्यता में भी उदाहरण मिलता है। यहा भी हमको ऐसे प्रदेश मिलते ह जहा किसी बीते युग में वैभवशाली सभ्यता थी और जिसने इस क्षेत्र को सजीव बनाया था। बाद में वह क्षेत्र मलेरियापूर्ण दलदल हो गया जिसका उद्धार इस युग में किया गया है। कोपेक के दलदल, जो दो हजार वर्षा तक घातक बने थे और जिसका उद्धार सन् १८८७ में एक ब्रिटिश कम्पनी ने किया, किसी समय उपजाऊ प्रदेश थे जो धनवान आरकोमेनास के नागरिका का पोषण करते थे। पाम्पटाइन के दलदल जिसका बहुत काल तक उजाड रहने के पश्चात मसोलिनी ने उद्धार किया किसी समय लैटिन उपनिवेशा तथा वोल्शियन नगरा का पोषण करते थे। ऐसा संकेत किया गया है कि नाडिया का विनाश (राम आव नव—यह वाक्यांश प्रोफेसर गिल्बर्ट मर का है) जिसके कारण हेलनी सभ्यता की समाप्ति हो गयी इसलिए हुआ कि वहा मलेरिया का प्रकाप फैला। किन्तु यहा भी और सीलोन म भी उस समय मलेरिया का आरम्भ हुआ जब उस समय की सभ्यता का ह्रास होने लगा था। इस युग के एक विशेषज्ञ[1], जिसने इसे अपने अध्ययन का विषय बनाया है कहते ह कि मलेरिया पेलोपानेशियाई युद्ध के पहले यूनान में फैला नही था और लटियन में हैनिबली युद्ध के बाद ही फैला। ऐसा कहना मूर्खता होगी कि सिकन्दर के बाद के युग के यूनानी तथा सापिया और सीजरा के युग के रोमन कापेक और पाम्पटाइन के दलदला के जल की कठिनाइया को दूर करने में अयोग्य थे जब उस समस्या को उनसे कम योग्य पूर्वजा ने सुलझा लिया था। इसका समाधान तकनीकी बाता में नही है सामाजिक स्तर पर ये मिलेंगे। हैनिबली युद्ध और उसके पश्चात दो शतियो तक रोमन लूट पाट और घरेलू युद्ध का इटली के सामाजिक जीवन पर विघटनात्मक प्रभाव पडा। पहले कृषि संस्कृति और अर्थ व्यवस्था का विनाश हुआ उसके पश्चात अनेक विनाशकारी शक्तियो का प्रभाव पडा। हैनिबल द्वारा सत्यानाश, कृषको का सेना में बराबर भर्ती होना, भूमि सम्बन्धी क्रान्ति जिसमें दासा द्वारा जाते जाने वाले बडे बडे खेता के स्थान पर किसाना द्वारा छोटे छोटे खेत जाते जाने लगे जा अपने में पूर्ण थे, और गाँवा से पराश्रित शहरा की ओर अधिक सख्या में लोग जाने लगे। इन अनेक सामाजिक बुराइया के कारण मनुष्य का पतन हुआ। हैनिबल की पीढी से लेकर इटली के सन्त बेनेडिक्ट की पीढी तक सात शताब्दियो में मच्छरा का प्रकोप बढा।

१ डब्ल्यू० एच० एस० जोन्स मलेरिया एण्ड ग्रीक हिस्ट्री।

इसी प्रकार की बुराइयों का परिणाम यूनान में भी हुआ। पलोपोनेसियाई युद्ध में पाली बियस के समय (२०६–१२८ ई० पू०) तक वहाँ आबादी बहुत घट गयी। इससे भी अधिक वहाँ निर्जनता हो गयी। पालीबियस ने एक विख्यात स्थल पर कहा है कि यूनान के सामाजिक तथा राजनीतिक पतन का कारण परिवार में गर्भपात तथा शिशु हत्या की प्रथा है। यह स्पष्ट है कि तकनीकी ह्रास के कारण मापेक अथवा पाम्पटाइन के समान उपजाऊ धना के स्थान पर मच्छरों के प्रजनन के घर नहीं बने।

यदि हम इंजीनियरी की तकनीक की जगह वास्तुकला और मूर्तिकला की तकनीक पर, चित्रकला, लेखन कला तथा साहित्य पर विचार करें तब भी इसी परिणाम पर पहुँचेंगे। उदाहरण के लिए वास्तुकला की हेलेनी शैली ईसा की चौथी से सातवीं शती तक में क्यों लोप हो गयी? उसमानी तुर्कों ने सन् १९२८ में अरबी वर्णमाला का क्यों त्याग किया? क्या कारण है कि आज प्रायः सभी अ-पश्चिमी देश अपने परम्परागत वस्त्रों को तथा कलाओं को छोड रहे हैं? और हम इस प्रश्न की ओर भी लोगों का ध्यान दिलाना चाहेंगे कि क्या हमारी नयी पीढी के अधिकांश लोग हमारे परम्परागत सगीत नृत्य चित्रकला और मूर्तिकला को छोड रहे हैं।

हमारी स्थिति में क्या कला की तकनीक का ह्रास है? क्या हम लोग लय के राग दृश्य विषय के (पर्सपेक्टिव) तथा अनुपात के नियमों को भूल गये जिनका हमारे इतिहास के दूसरे और तीसरे अध्यायों में इटालियन तथा दूसरे सर्जनात्मक अल्पसंख्यकों ने आविष्कार किया था। स्पष्ट है हम लोग भूले नहीं हैं। अपनी कलात्मक परम्पराओं को छोड देने की जो वर्तमान प्रवृत्ति है उसका कारण तकनीकी अक्षमता नहीं है। जान-बूझकर इस शैली का त्याग किया जा रहा है क्योंकि नयी पीढी को वह रुचती नहीं। यह पीढी पश्चिमी परम्परा की कलाओं के प्रति आकृष्ट नहीं हो रही है। हमारे पितामहों को जिन महान् आत्माओं की जानकारी थी उन्हें जान-बूझकर इस पीढी ने त्याग दिया है। और जो आध्यात्मिक शून्यता हमने रची है उसी से सन्तुष्ट होकर हम पड़े हैं और उष्ण देश अफ्रीका के सगीत नृत्य तथा मूर्तिकला की आत्मा ने कृत्रिम बाइजंटाइन चित्रकला तथा नक्काशी से अपवित्र गठबंधन करके उस घर में डेरा जमा लिया है जिसे उसने खाली पाया। पतन तकनीकी नहीं है आध्यात्मिक है। कला की अपनी पश्चिमी परम्परा को छोडकर हमने अपनी शक्तियों को निर्जीव कर दिया है और इस स्थिति में डहोमे और बनिन की विदेशी आदिम कला को अपनाया है मानो हमारे लिए मरुभूमि में मन्ना[1] सन्न है। ऐसा करके मानव मात्र के सम्मुख हमने स्वीकार किया है कि हमने अपने आध्यात्मिक जन्मसिद्ध अधिकार को खो दिया है। हमने अपनी परम्परागत कला के तकनीक को त्याग दिया है। वह स्पष्टतः पश्चिमी सभ्यता के एक प्रकार के आध्यात्मिक पतन का परिणाम है। इस पतन का कारण उस घटना में नहीं मिल सकता जो स्वयं परिणाम है।

इधर अरबी वर्णमाला छोड कर तुर्कों ने लटिन वर्णमाला अपनायी है इसका कारण भी यही है। मुस्तफा कमाल अतातुर्क और उनके शिष्यों ने अपने इस्लामी ससार में रहते हुए पश्चिम का अनुकरण किया है। उन्हें अपनी सभ्यता की परम्परा में विश्वास नहीं रह गया और इसलिए

1 इसरायलियो को ईश्वर की ओर से जो भोजन दिया गया था।—अनुवादक

उस साहित्यिक माध्यम का उन्होंने त्याग किया जिसके द्वारा वह परम्परा आयी है। यही कारण पहले की उन मतप्राय सभ्यताओं की अपनी परम्परागत लिपियों को त्याग देने का है जैसे मिस्र की चित्रलिपि और बबिलोनिया की कील वाली लिपि। चीन और जापान में आज एक आन्दोलन चल रहा है कि चीनी लिपि त्याग दी जाय।

एक तकनीक के स्थान पर दूसर को स्थापित करने का एक अच्छा उदाहरण यह है जो वास्तुकला की हेलेनी शैली को छोडकर बाइज़ेंटाइन शैली अपनायी गयी। इस स्थिति में खम्भा पर पत्थर रखने के (आरकिट्रेव) सरल ढंग को छोडकर क्रूसाकार भवन (क्रसिफाम) बनाकर उस पर वत्ताकार गम्बज बनाने की कठिन प्रणाली को अपनाया है इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि तकनीकी अक्षमता इसका कारण थी। क्या यह विश्वास नही किया जा सकता कि वास्तुशिल्पी जिन्होंने सम्राट जस्टीनियन के लिए हेगिया सोफिया के गिरजाघर के निर्माण की समस्याओं को सफलतापूर्वक सुलझा लिया था तो वह यूनानी मन्दिर भी बना सकते थे यदि सम्राट की या उनकी इच्छा होती? जस्टीनियन तथा उसके वास्तुशिल्पियों ने नयी शैली को इसलिए प्रयोग किया कि पुरानी शैली उन्हें अरुचिकर हो गयी थी क्योंकि वह सडी हुई प्राचीनता से सम्बन्धित थी।

हमारी खोज का परिणाम यह निकला कि परम्परागत कला की शैलियों का त्याग यह सूचित करता है कि जो सभ्यता उस शैली से सम्बद्ध थी उस (सभ्यता) का पतन हो चुका था और वह विघटित हो रही थी। प्रतिष्ठित तकनीक का व्यवहार बन्द हो जाता है तो वह सभ्यता के पतन का परिणाम है, कारण नहीं।

(२) मानवी वातावरण

सभ्यताओं के विकास के सम्बन्ध में जब हमने इस विषय पर विचार किया था तब हमने देखा था कि किसी समाज के इतिहास में मानवी वातावरण पर नियन्त्रण होता है तो उसे इस प्रकार नाप सकते हैं कि उसका भौगोलिक विस्तार कितना है। जितना नियन्त्रण होगा उतना ही विस्तार होगा। उदाहरणों के अध्ययन से यह भी हमने देखा कि भौगोलिक विस्तार के साथ साथ सामाजिक विघटन भी हुआ है। यदि ऐसा है तब यह सम्भव नहीं जान पडता कि सभ्यता का विघटन इस कारण होता है कि मानवी वातावरण पर समाज का नियन्त्रण कम हो जाता है। बल्कि यह सम्भव है कि विदेशी मानवी शक्तियां के सफल आक्रमण के कारण ऐसा होता है। फिर भी यह विचारधारा बहुत प्रचलित है कि आदिम समाजों की भांति सभ्यताएँ भी विदेशी शक्तियों के प्रहार से समाप्त हो जाती है। इस विचार का प्रतिपादन गिबन ने अपने 'द हिस्टी आव द डिक्लाइन एण्ड फाल आव द रोमन एम्पायर' में शास्त्रीय ढंग से किया है। एक वाक्य में गिबन ने अपनी कथा के विषय को कह डाला है—"मैंने बबरता तथा धर्म की विजय का वर्णन कर दिया है।" हेलेनी समाज रोमन साम्राज्य में उस समय मिल गया जब अतोनाइनों के समय साम्राज्य अपने शिखर पर था। ऐसा बताया जाता है कि दो विदेशी शक्तियों के दो विभिन्न दिशाओं में एक साथ आक्रमण होने के कारण हेलेनी समाज का विनाश हुआ। एक डैन्यूब तथा राइन के पार से अन्तर्वर्ती भूमि के उत्तरयूरोपीय बबरों द्वारा और दूसरा ईसाइयों द्वारा जो उन पूर्व प्रदेशों से निकले थे जिन्हें पराजित तो कर लिया गया था किन्तु आत्मसात् नहीं किया जा सका था।

गिबन को यह नहीं सूझा कि अन्तोनाइनों का युग प्रारम्भ नहीं था बल्कि 'भारतीय ग्रीष्म' था। उसकी पुस्तक के नाम से ही उसका भ्रम प्रकट होता है। रोमन साम्राज्य का क्षय और पतन। ऐसे इतिहास का लेखक, जिसका ऐसा नाम हो और जिसने ईसा की दूसरी शती से इतिहास आरम्भ किया हो अपने इतिहास में उस समय से आरम्भ कर रहा है जब कथानक का प्रायः अन्त हो रहा है। जिस ऐतिहासिक अध्ययन के बौद्धिक क्षेत्र के सम्बन्ध में गिबन लिखना चाहता है वह रोमन साम्राज्य नहीं है हेलेनी सभ्यता है और रोमन साम्राज्य का बढ़ा हुआ ह्रास स्वयं पतन का रोग चिह्न है। पूरी कथा पर विचार करने से पता चलता है कि अन्तोनाइनों के युग के बाद रोमन साम्राज्य का पतन जिस द्रुत गति से हुआ उस पर आश्चर्य नहीं होता। इसके विपरीत यदि रोमन साम्राज्य बना रहता तो आश्चर्य होता। क्योंकि सभ्यता से पहले ही साम्राज्य का विनाश होना निश्चित था। विनाश इसलिए निश्चित था कि यह जो सार्वभौम राज्य बना यह केवल एक जटाव था जो हेलेनी समाज के पतन में विलम्ब कर सकता था सदा के लिए रोक नहीं सकता था। क्योंकि यह निश्चय रूप से पतनोन्मुख हो चुका था।

यदि गिबन बड़ी कथा आरम्भ से कहता तो उसे पता लगता कि बर्बरता तथा धर्म की विजय मुख्य कथानक नहीं था कथा का केवल उपसंहार था। पतन का कारण नहीं बल्कि पतन का आवश्यक उपकरण था जो विघटन के साथ अवश्यम्भावी था। उसे यह भी पता चलता कि विजयी धर्म तथा विदेशी शक्तियाँ नहीं थीं। ये हेलेनी परिवार की सन्तानें थीं जो परिक्लियन पतन और आगस्टी समाहरण (रैली) के बीच के संकट काल में शक्तिशाली अल्पसंख्यकों से अलग हो गयी थीं। सच बात यह है कि यदि गिबन ने इस दुःखमय गाथा के वास्तविक आरम्भ तक खोज की होती तो वह दूसरे परिणाम पर पहुँचता। वह इस परिणाम पर पहुँचता कि यह हेलेनी समाज की आत्महत्या थी। इसलिए कि जब उसके जीवन की कोई आशा नहीं रह गयी कि अपने ऊपर किये गये घातक प्रहार को वह टाल सके। और जिस पर बाद में उसी की भ्रष्ट और निर्लज्जायी सन्तान ने अन्तिम प्रहार किया। ऐसा उस समय हुआ जब आगस्टी समाहरण के तीन शतियों के बाद पुनः रोग ने दबाया और रोगी अपने ही प्रहार के घावों के प्रभाव से मर रहा था।

ऐसी अवस्था में खोज करने वाला इतिहासकार अपना ध्यान उपसंहार पर न रखता बल्कि इस बात का पता लगाता कि कब और कैसे आत्महत्या के लिए हाथ उठा। इस समय का पता लगाने के लिए सम्भवतः वह ४३१ ई० पू० पेलोपोनेशियाई युद्ध पर अपनी उँगली रखेगा। यह सामाजिक विनाश था जिसके बारे में थ्यूसिडाइडस ने अपने नाटक के एक पात्र से उस समय कहलाया है कि यह यूनान (हेलास) के लिए महान् विपत्ति का आरम्भ है। इस बात का विवरण देते हुए कि किस प्रकार हेलेनी समाज ने अपने ही विनाश का अपराध किया है वह इस बात पर भी जोर देता कि दो और भी बुराइयाँ थीं राज्यों के बीच युद्ध और वर्गों के बीच युद्ध। थ्यूसिडाइडस के अनुसार इन दो बुराइयों के दो विशेष उदाहरण भी वह देता। अथेनियनों ने जो विजित मेलियनों को भयावह दण्ड दिया और कोरसाइरा के आपस के दलों का युद्ध। किसी भी अवस्था में, वह बताता कि जैसा गिबन ने सोचा था उसके छः सौ वर्ष पहले घातक प्रहार हो चुका था और घातक प्रहार उसके अपने हाथों हुआ था।

इस उदाहरण से हम और सभ्यताओं के सम्बन्ध में खोज कर जो या तो समाप्त हो गयी है या मृत प्राय हैं तो यही बात मिलेगा।

उदाहरण के लिए सुमेरी समाज का पतन और विनाश। इसमें हमूरबी का स्वर्णयुग (जैसा कि कैंब्रिज एन्शेंट हिस्ट्री में कहा गया है) भारतीय ग्रीष्म का और उसमें भी आग का समय है जो अताराइला के युग का था। क्योंकि हमूरबी सुमेरी इतिहास का ट्राजन नहीं डायाक्लीशियन है। इसलिए सुमेरी सभ्यता का नाश करने वाले वे बर्बर नहीं थे जिन्होंने चारों दिशाओं के राज्य पर ईसा के पूर्व अठारहवीं शती में आक्रमण किया। हम देखेंगे कि घातक प्रहार नौ सौ वर्ष पहले हो चुका था। स्थानीय महत्ता तथा लगाश के उरकाजिना के बीच का वर्गयुद्ध और उरकाजिना के विध्वंसक लुगाल्जागिसी का सैनिकवाद। सुमेरी संकट का आरम्भ इन्हीं दो कारणों से हुआ।

चीनी समाज के पतन और विनाश 'धर्म और बर्बरता की विजय' उस समय हुई जब व लगभग ३०० ई० में चीनी सार्वभौम राज्य के स्थान पर यूरेशियाई खानाबदोश राज्यों की स्थापना हुई और साथ ही-साथ चीनी संसार में महायान बौद्ध का आक्रमण हुआ। चीन के उत्तर-पश्चिमी प्रदेशों के सवहारा का यही धर्म था। किन्तु यह सब विजय रोमन साम्राज्य के 'बर्बरता और धर्म' की भाँति एक मृतप्राय समाज के बाहरी और आन्तरिक सर्वहारा की विजय मात्र थी। और ये कहानी के अन्तिम अध्याय के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। चीनी सार्वभौम राज्य केवल उस समय एक सामाजिक जमाव था जब चीनी समाज के छोटे छोटे प्रदेशीय राज्यों में आपसी युद्ध हो रहा था। कुछ पहले चीनी समाज में ही ये राज्य बन गये थे। चीनी इतिहास की यह घातक तिथि ४७९ ई० पू० है जो हेलेनी तिथि ४३१ ई० पू० के समान है। यही समय ऐतिहासिक 'युद्धरत राज्यों का काल है' जब से विघटन आरम्भ होता है। किन्तु यह तिथि वास्तविक घटना से ढाई सौ साल बाद की है। यह तिथि चीन के संकट की तिथि सम्भवतः इसलिए मान ली गयी है कि उस समय कनफूशियस की मृत्यु हुई थी।

जहाँ तक सीरियाई समाज का सम्बन्ध है, उसका 'भारतीय ग्रीष्म' बगदाद के अब्बासी खलीफा के समय था और उसने 'बर्बरता और धर्म की विजय' उस समय देखी जब खानाबदोश तुर्कों ने आक्रमण किया और उन्होंने स्थानीय इस्लाम धर्म स्वीकार किया। इस सम्बन्ध में हमें एक बात याद रखनी चाहिए जो हमने इस अध्ययन में पहले ही स्थापित की थी कि सीरियाई पतन और विनाश हेलेनी प्रवेश के कारण एक हजार साल तक रुक गया था। और अब्बासी खलीफ सीरियाई इतिहास का सूत्र वहीं से पकड़ते हैं जहाँ ईसा के पूर्व चौथी शती में एकेमीनियाई साम्राज्य ने छोड़ दिया था।[1] इसलिए हमें सीरियाई संकट के लिए उस काल के पहले देखना पड़ेगा, जब खुसरू ने अकेमीनियाई शान्ति स्थापित की थी।

उस सभ्यता के विनाश का क्या कारण हुआ जिसने अपने विकास के अल्पकाल में अपनी प्रतिभा का प्रमाण दिया था और तीन महान आविष्कारों में अपनी शक्ति दिखायी थी—एकेश्वरवाद, वर्णमाला और अतलान्तक। पहले पहल शायद हम यहाँ ठिठकें कि हमें ऐसी सभ्यता का उदाहरण मिल गया जिसमें विदेशी मानवी शक्ति के प्रहार से सभ्यता का विनाश हुआ। क्या

१ देखिए, पृष्ठ १४–१६।

सीरियाई सभ्यता उन प्रहारो से नष्ट हो गयी जो नवी, आठवी, सातवी ई० पू० शती में असीरियना द्वारा हुआ था ? देखने में ऐसा जान पडता है। किन्तु ध्यान से देखा जाय तो जब 'असीरियन ने भेडिये के समान बाडे (फोल्ड) पर आक्रमण किया' उस समय एक बाडा और उसका रखवाला नही था। दसवी शती (ई० पू०) में इसरायली नतृत्व में हिब्रू फोनीशियन, अरमेइयन, तथा हिताइती प्रदेशा को जो बबिलोनी तथा मिस्री ससार के बीच स्थित थे राजनीतिक सूत्र में बाँधने का प्रयत्न निष्फल हो गया। और सीरियाई भातृघातक (फ्रेट्रिसाइडल) युद्ध के परिणामस्वरूप असीरियनो को अवसर मिला। सीरियाई सभ्यता के पतन की तिथि उस समय से नही माननी चाहिए जब ८७६ ई० पू० में पहले पहल असूर नजीरपल ने फरात नदी को पार किया बल्कि ९३७ ई० पू० जब सुल्मान का साम्राज्य उसके सस्थापक की मृत्यु के बाद से विघटित होने लगा।

बहुधा यह भी कहा जाता है कि परम्परावादी ईसाई सभ्यता, जिसका 'बाइजेन्टाइन' स्वरूप पूरवी रोमन साम्राज्य था और जिसका वणन उपसहार में गिवन ने विस्तार से किया है, तुर्कों द्वारा नष्ट की गयी। इसके साथ यह कहा जा सकता है कि उस समाज को जिसे पश्चिमी ईसाई आक्रमण के घातक रूप ने क्षत विक्षत कर दिया था उस पर मुसलिम तुर्कों ने अतिम प्रहार कर दिया। जिसे भष्ट ढग से चौथा धार्मिक युद्ध कहा जाता है और जिसके कारण बाइजेंटाइनी सम्राट् को आधी शती तक (१२०४–६१ ई०) अपने साम्राज्य स बाहर रहना पडा। किन्तु यह लटिन आक्रमण, उसी प्रकार जसे उसके बाद तुर्की आक्रमण हुआ, ऐसी जगह से हुआ जो विदेशी था। यदि हम अपना विश्लेषण यही समाप्त कर दें ता हम कहना पडेगा कि इस सभ्यता की वास्तविक हत्या की गयी जहा इसन इसी सूची म बताया है कि और सभ्यताओ न आत्महत्या की। किन्तु हम देखते ह तो पता चलता है कि परम्परावादी ईसाई समाज के इतिहास में जा परिवतनशील घटना हुई वह न तो चौदहवी पन्द्रहवी शती का तुर्की आक्रमण था और न तेरहवी शती का लटिन आक्रमण था और न ग्यारहवी शती का तुर्की आक्रमणकारियो (सल्जुको) द्वारा अनातोलिया पर विजय थी। यह एक घरेलू घटना थी जो इन सबके पहल हुई थी। ९७७–१०१९ ई० की रोमानी-बुल्गारियाई युद्ध हुआ था। परम्परावादी ईसाई जगत् की दो शक्तियो का आपसी घातक युद्ध तब तक नही समाप्त हुआ जब तक एक की राजनीतिक स्थिति नही समाप्त हो गयी और यह कहना ठीक होगा कि दूसरा इतना आहत हो गया कि उसके घाव अच्छे नही हुए।

सन् १४५३ ई० में जब उसमानिया बादशाह मुहम्मद द्वितीय न कास्टेनटिनोपल पर विजय प्राप्त की उस समय परम्परावादी ईसाइ सभ्यता की समाप्ति नही हुई। विचित्र विरोधाभास है कि विदेशी विजता ने जिस समाज पर विजय प्राप्त की उस सावभौम राज्य बनाया। यद्यपि हागिया सोफिया का गिरजाघर मुसल्मानी मसजिद बन गया परम्परावादी ईसाई सभ्यता अपन पूरे जीवन भर रही जिस प्रकार हिन्दू सभ्यता तुर्की वश के मुगल सम्राट अकबर के निर्मित सावभौम राज्य में जीवित रही, और विदेशी ब्रिटिश राज में जीवित है। किन्तु कुछ समय में उस उसमानिया तुर्की साम्राज्य में जो परम्परावादी ईसाइ समाज का क्षत्र था विघटन तथा जनरला हाना आरम्भ हो गया। यूनानी सब और अल्बनियन आठवा शती क समाप्त हान क पहल गतिमान् हा गय। क्या कारण था कि इस गति स ववरता और धम की विजय नहा हुई जसा हल्ना चानी तथा और समाजा की समाप्ति पर हमन देखा।

इसका उत्तर यह है कि पश्चिमी सभ्यता का धावा परम्परावादी ईसाई समाज के बबर उत्तराधिकारियों के पीछ बहुत शक्तिशाली था। बबरता और धम नहीं बल्कि पश्चिमीकरण ही उसमानिया साम्राज्य के विघटन का मुख्य कारण था। 'वीरता के युग' के ढग पर बबर राज्य न होकर उसमानिया साम्राज्य के उत्तराधिकारी राज्य पश्चिमी ढग के बने। वे पश्चिमी राज्यों की भाँति राष्ट्रीय राज्य के समूह बन गये। कोई-कोई तो जैसे, सर्बिया और यूनान, पश्चिमी ढग के नवीन राष्ट्रीय राज्य के समान बने। जो बबर राष्ट्र पश्चिमी प्रभाव से अलग रहे और पश्चिम की राष्ट्रीय भावना को नहीं ग्रहण कर सके, उन्होंने अवसर खो दिया। अल्बानियनों ने, यूनानियों, सर्बों और बुलगरों को आत्मसमपण कर दिया यद्यपि अठारहवी शती में उसका पुरातन वभव इन लोगों से अधिक था। और बीसवीं शती में बहुत अल्प पतक सम्पत्ति को लेकर वह पश्चिमी राष्ट्रों के समूह में सम्मिलित हुआ।

इस प्रकार परम्परावादी ईसाई समाज के इतिहास का अन्तिम दृश्य 'बबरता और धम की विजय' नहीं थी बल्कि एक विदेशी सभ्यता की विजय थी जो इस मृतप्राय समाज को धीरे धीरे हड़प किये जा रही थी और उसके ताने बाने से अपने सामाजिक वस्त्र को बुन रही थी।

हमको यहाँ एक और ढग दिखाई दिया जिसके द्वारा कोई समाज अपना अस्तित्व खो देता है। 'बबरता और धम की विजय' का यह अर्थ होता है कि मृतप्राय समाज प्राचीन मान्यताओं के विरुद्ध क्रांति के परिणामस्वरूप अपने ही बाहरी और भीतरी सर्वहारा द्वारा तिरस्कृत हो जाता है, इसलिए कि इनमें से कोई एक सर्वहारा नये समाज की स्थापना करने के लिए नया क्षेत्र बना दे। इस घटना में पुराना समाज समाप्त हो जाता है। यद्यपि एक प्रकार प्रतिनिधि रूप में वह नये समाज में रहता है। और इस सम्बन्ध का हमने 'सम्बद्ध या प्रजनित' कहा है। जब पुरानी सभ्यता तिरस्कृत नहीं होती, बल्कि अपनी ही किसी समकालीन सभ्यता द्वारा विलीन कर ली जाती है तब उसका निजत्व पूर्ण रूप से खो जाता है। पहली परिस्थिति में ऐसा नहीं होता। इस मृतप्राय समाज के जो-जो रूप बनते हैं वे सब नष्ट नहीं हो जाते। पुराने सामाजिक स्वरूप से बिना ऐतिहासिक शृंखला को तोड़े भी वे नये समाज में परिवर्तित हो जाते हैं जैसे वर्तमान यूनानी लोग चार सौ साल तक उसमानिया के पिट्ठू रहने के बाद भी पश्चिमी जगत् के राष्ट्र हो गये। दूसरी स्थिति में निजत्व और भी अधिक लोप हो जायगा क्योंकि जो समाज दूसरे समाज में लोप हो जाता है तो एक नये समाज के न निर्माण करने का मूल्य इस रूप में चुकाता है कि अपनी विशिष्टता को किसी सीमा तक अक्षुण्ण रखता है और वह नये समाज की नयी पीढ़ी में उपस्थित होता है जैसे हमारा समाज हेलेनी समाज का प्रतिनिधि है हिंदू समाज भारतीय समाज का प्रतिनिधि है और सुदूर पूर्वी समाज चीनी का।

सम्मिलित होने पर लोप हो जाने का जो उदाहरण हमारे सामने है वह है परम्परावादी ईसाई समाज का पश्चिमी सभ्यता में लोप हो जाना। किन्तु हम यह देख सकते हैं कि आज की सभी सभ्यताएँ उसी राह पर चल रही हैं। रूस में परम्परावादी ईसाई समाज का वर्तमान इतिहास यही है, इस्लामी और हिंदू समाज और सुदूर पूर्वी समाज की दोनों शाखाओं का भी यही वर्तमान इतिहास है। तीन अविकसित समाज जो वर्तमान हैं अर्थात एस्किमो खानाबदोश तथा पालिनेशियनों का भी यही इतिहास है। पश्चिमी सभ्यता इन्हें पूरा नष्ट नहीं कर रही है उसमें ये सम्मिलित होते जा रहे हैं। सत्रहवीं शती के अन्त में परम्परावादी ईसाई संसार का पश्चिमीकरण

सीरियाई सभ्यता उस प्रकार से नष्ट हो गयी जो नवीं, आठवीं, सातवीं ई० पू० शती में असीरियनों द्वारा हुआ था ? देखने में ऐसा जान पड़ता है। किन्तु ध्यान से देखा जाय तो जब 'असीरियन ने भेफिथ के समीप बाड़ (फोर्ड) पर आक्रमण किया उस समय तक बाड़ा और उसका रखवाला नहीं था। दसवीं शती (ई० पू०) में इसरायली ऐक्य में हिब्रू, फिलिस्तिया, अरमइयन, तथा हित्ताइनी प्रदेशों को जो बबिलोनी तथा मिस्री सागर के बीच फैला था राजनीतिक सूत्र में बाँधने का प्रयत्न विफल हो गया। और सीरियाई भ्रातृघातक (फ्रेट्रिसाइडल) युद्ध के परिणामस्वरूप असीरियनों को अवसर मिला। सीरियाई सभ्यता के पतन की तिथि उस समय से नहीं माननी चाहिए जब ८७६ ई० पू० में पहले पहल असुर-नजीरपाल ने फरात नदी को पार किया बल्कि ९३७ ई० पू० जब सुलेमान का साम्राज्य उसके सम्राट की मृत्यु के बाद से विघटित होने लगा।

बहुधा यह भी कहा जाता है कि परम्परावादी ईसाई सभ्यता जिसका बाइजेंटाइन स्वरूप पूरबी रोमन साम्राज्य था और जिसका वर्णन उपसंहार में गिबन ने विस्तार से किया है, तुर्कों द्वारा नष्ट की गयी। इसके साथ यह कहा जा सकता है कि उस समाज का जिसे पश्चिमी ईसाई आक्रमण के पहले रूप ने क्षत विक्षत कर दिया था उस पर मुसलिम तुर्कों ने अन्तिम प्रहार कर दिया। जिसे भ्रष्ट ढंग से चौथा धार्मिक युद्ध कहा जाता है और जिसके कारण बाइजेन्टाइनी सम्राट को आधी शताब्दी तक (१२०४–६१ ई०) अपने साम्राज्य से बाहर रहना पड़ा। किन्तु यह लटिन आक्रमण उसी प्रकार जैसे उसके बाद तुर्की आक्रमण हुआ ऐसा जगह से हुआ जो विदेशी था। यदि हम अपना विश्लेषण यहीं समाप्त कर दें तो हमें कहना पड़ेगा कि इस सभ्यता *की वास्तविक हत्या की गयी जहाँ इसने इसी सूची में बताया है कि और सभ्यताओं ने आत्महत्या* की। किन्तु हम देखते हैं तो पता चलता है कि परम्परावादी ईसाई समाज के इतिहास में जो परिवर्तनशील घटना हुई वह न तो चौदहवीं पन्द्रहवीं शती का तुर्की आक्रमण था और न तेरहवीं शती का लटिन आक्रमण था और न ग्यारहवीं शती का तुर्की आक्रमणकारियों (सल्जुकों) द्वारा अनातोलिया पर विजय थी। यह एक घरेलू घटना थी जो इन सबके पहले हुई थी। ९७७–१०१९ ई० की रोमानी-बुल्गेरियन युद्ध हुआ था। परम्परावादी ईसाई जगत् की दो शक्तियों का आपसी घातक युद्ध तब तक नहीं समाप्त हुआ जब तक एक की राजनीतिक स्थिति नहीं समाप्त हो गयी और यह कहना ठीक होगा कि दूसरा इतना आहत हो गया कि उसके घाव अच्छे नहीं हुए।

सन् १४५३ ई० में जब उसमानिया बादशाह मुहम्मद द्वितीय ने कास्टनटिनोपल पर विजय प्राप्त की उस समय परम्परावादी ईसाई सभ्यता की समाप्ति नहीं हुई। विचित्र विरोधाभास है कि विदेशी विजेता ने जिस समाज पर विजय प्राप्त की उसे सार्वभौम राज्य बनाया। यद्यपि हागिया सोफिया का गिरजाघर मुसलमानी मसजिद बन गया परम्परावादी ईसाई सभ्यता अपने पूरे जीवन भर रही जिस प्रकार हिन्दू सभ्यता तुर्की वंश के मुगल सम्राट अकबर के निर्मित सार्वभौम राज्य में जीवित रही और विदेशी ब्रिटिश राज में जीवित है। किन्तु कुछ समय में उस उसमानिया तुर्की साम्राज्य में जो परम्परावादी ईसाई समाज का क्षेत्र था विघटन तथा जनरेला होना आरम्भ हो गया। यूनानी सर्ब और अल्बेनियन आठवीं शती के समाप्त होने के पहले गतिमान हो गये। क्या कारण था कि इस गति से बर्बरता और धर्म की विजय नहीं हुई जैसा हेलेनी चीनी तथा और समाजों की समाप्ति पर हमने देखा।

इसका उत्तर यह है कि पश्चिमी सभ्यता का धावा परम्परावादी ईसाई समाज के बर्बर उत्तराधिकारियों के पीछे बहुत शक्तिशाली था। बर्बरता और धर्म नहीं बल्कि पश्चिमीकरण उसमानिया साम्राज्य के विघटन का मुख्य कारण था। 'वीरता के युग' के ढंग पर बर्बर राज्य बनकर उसमानिया साम्राज्य के उत्तराधिकारी राज्य पश्चिमी ढंग के बने। ये पश्चिमी राज्यों की भाँति राष्ट्रीय राज्य के समूह बन गये। धीरे-धीरे ये जैसे, सर्विया और यूनान, पश्चिमी देशों के नवीन राष्ट्रीय राज्य के समान बने। जो बर्बर राष्ट्र पश्चिमी प्रभाव से अलग रहे और पश्चिम की राष्ट्रीय भावना को नहीं ग्रहण कर सके, उन्होंने अवसर खो दिया। अल्बानियनों ने यूनानियों, सर्वो और बुलगरों को आत्मसमर्पण कर दिया यद्यपि अठारहवीं शती में उनका जनन वैभव इन लोगों से अधिक था। और वास्तव में बहुत अल्प पतन सम्पत्ति का लेकर पश्चिमी राष्ट्रों के समूह में सम्मिलित हुआ।

इस प्रकार परम्परावादी ईसाई समाज के इतिहास का अन्तिम दृश्य 'बर्बरता और धर्म की जय' नहीं थी बल्कि एक विदेशी सभ्यता की विजय था जो इस मृतप्राय समाज को धीरे धीरे हड़प किये जा रही थी और उसके ताने-बाने से अपने सामाजिक वस्त्र को बुन रही थी।

हमको यहाँ एक और ढंग दिखाई दिया जिसके द्वारा कोई समाज अपना अस्तित्व खो देता है। 'बर्बरता और धर्म की विजय' का यह अर्थ होता है कि मृतप्राय समाज प्राचीन मान्यताओं के विरुद्ध क्रान्ति के परिणामस्वरूप अपने ही बाहरी और भीतरी सर्वहारा द्वारा तिरस्कृत हो जाता है इसलिए कि इनमें से कोई एक सर्वहारा नये समाज की स्थापना करने के लिए नया क्षेत्र बना दे। इस घटना में पुराना समाज समाप्त हो जाता है। फिर भी एक प्रकार प्रतिनिधि रूप में वह नये समाज में रहता है। और इस सम्बन्ध को हमने 'सम्बद्ध या प्रजनित' कहा है। जब पुरानी सभ्यता तिरस्कृत नहीं होती, बल्कि अपनी ही किसी समकालीन सभ्यता द्वारा विलीन कर ली जाती है तब उसका निजत्व पूर्ण रूप से खो जाता है। पहली परिस्थिति में ऐसा नहीं होता। इस मृतप्राय समाज के जो जो रूप बनते हैं वे सब नष्ट नहीं हो जाते। पुराने सामाजिक स्वरूप से बिना ऐतिहासिक शृंखला को तोड़े भी वे नये समाज में परिवर्तित हो जाते हैं जैसे वर्तमान यूनानी लोग चार सौ साल तक उसमानिया के पिट्ठू रहने के बाद भी पश्चिमी जगत् के राष्ट्र हो गये। दूसरी दृष्टि से निजत्व और भी अधिक लोप हो जायगा क्योंकि जो समाज दूसरे समाज में लोप हो जाता है तो एक नये समाज के न निर्माण करने का मूल्य इस रूप में चुकाता है कि अपनी विशिष्टता को किसी सीमा तक अक्षुण्ण रखता है और वह नये समाज की नयी पीढ़ी में उपस्थित होता है जैसे हमारा समाज हेलेनी समाज का प्रतिनिधि है हिन्दू समाज भारतीय समाज का प्रतिनिधि है और सुदूर पूर्वी समाज चीनी का।

सम्मिलित होने पर लोप हो जाने का जो उदाहरण हमारे सामने है वह है परम्परावादी ईसाई समाज का पश्चिमी सभ्यता में लोप हो जाना। किन्तु हम यह देख सकते हैं कि आज की सभी सभ्यताएँ उसी राह पर चल रही हैं। रूस में परम्परावादी ईसाई समाज का वर्तमान इतिहास यही है इस्लामी और हिन्दू समाज और सुदूर पूर्वी समाज की दोनों शाखाओं का भी यही इतिहास है। तीन अविकसित समाज जो वर्तमान हैं अर्थात् एस्किमो, खानाबदोश तथा पॉलिनेशियनों का भी यही इतिहास है। पश्चिमी सभ्यता इन्हें पूरा नष्ट नहीं कर रही है, उनमें ये सम्मिलित होने जा रहे हैं। सत्रहवीं शती के अन्त में परम्परावादी ईसाई समाज का पश्चिमीकरण

सीरियाई सभ्यता उन प्रहारों से नष्ट हो गयी जो नवीं, आठवीं, सातवीं ई० पू० शती में असीरियनों द्वारा हुआ था ? देखने में ऐसा जान पड़ता है । किन्तु ध्यान से देखा जाय तो जब असीरियन ने भविष्य में समाज धारे (पाण्ड) पर आक्रमण किया उस समय वह बाढ़ा और उसका स्वरूपता नहीं था । दसवीं शती (ई० पू०) में इसरायली राज्य में हिब्रू फोनीशियन अरमइयन तथा हिताइती प्रदेशों का जो यक्तिशाली तथा विरोधी समाज के बीच किया व राजनीतिक सूत्र में बाँधने का प्रयत्न विफल हो गया । और सीरियाई भ्रातृघातक (फ्रैट्रिसाइडल) युद्ध के परिणामस्वरूप असीरियनों का अवसर मिला । सीरियाई सभ्यता के नाश की तिथि उस समय से नहीं माननी चाहिए जब ८७६ ई० पू० में पहले पहल असुर नजीरपाल ने फरात नदी को पार किया बल्कि ९३७ ई० पू० जब सुलेमान का साम्राज्य उसके सम्राट की मृत्यु के बाद से विघटित होने लगा ।

बहुधा यह भी कहा जाता है कि परम्परावादी ईसाई सभ्यता जिसका बाइजेण्टाइन स्वरूप पूरवी रोमन साम्राज्य था और जिसका वर्णन उपसंहार में गिबन ने विस्तार से किया है तुर्कों द्वारा नष्ट की गयी । इसके साथ यह कहा जा सकता है कि उस समाज का जिस पश्चिमी ईसाई आक्रमण के घातक रूप ने धराशायी कर दिया था उस पर मुसलिम तुर्कों ने अन्तिम प्रहार कर दिया । जिसे भ्रष्ट ढंग से चौथा धार्मिक युद्ध कहा जाता है और जिसके कारण बाइजेण्टाइनी सम्राट को आधी शताब्दी तक (१२०४-६१ ई०) अपने साम्राज्य से बाहर रहना पड़ा । किन्तु यह लैटिन आक्रमण उसी प्रकार जैसे उसके बाद तुर्की आक्रमण हुआ ऐसी जगह से हुआ जो विनाश था । यदि हम अपना निरूपण यहीं समाप्त कर दें तो हमें कहना पड़ेगा कि इस सभ्यता की वास्तविक हत्या की गयी जहाँ इसने इसी सूची में बताया है कि और सभ्यताओं ने आत्महत्या की । किन्तु हम देखते हैं तो पता चलता है कि परम्परावादी ईसाई समाज के इतिहास में जो परिवर्तनशील घटना हुई वह न तो चौदहवीं पन्द्रहवीं शती का तुर्की आक्रमण था और न तेरहवीं शती का लैटिन आक्रमण था और न ग्यारहवीं शती का तुर्की आक्रमणकारियों (सल्जुक) द्वारा अनातोलिया पर विजय थी । यह एक घरेलू घटना थी जो इन सबके पहले हुई थी । ९७७-१०१९ ई० की रोमानी-बुल्गरियन युद्ध हुआ था । परम्परावादी ईसाई जगत् की दो शक्तियों का आपसी घातक युद्ध तब तक नहीं समाप्त हुआ जब तक एक की राजनीतिक स्थिति नहीं समाप्त हो गयी और यह कहना ठीक होगा कि दूसरा इतना आहत हो गया कि उसके घाव अच्छे नहीं हुए ।

सन् १४५३ ई० में जब उसमानिया बादशाह मुहम्मद द्वितीय ने कांस्टेनटिनोपल पर विजय प्राप्त की उस समय परम्परावादी ईसाई सभ्यता की समाप्ति नहीं हुई । विचित्र विरोधाभास है कि विदेशी विजेता ने जिस समाज पर विजय प्राप्त की उसे सार्वभौम राज्य बनाया । यद्यपि हागिया सोफिया का गिरजाघर मुसल्मानी मसजिद बन गया परम्परावादी ईसाई सभ्यता अपने पूरे जीवन भर रही जिस प्रकार हिन्दू सभ्यता तुर्की वंश के मुगल सम्राट अकबर के निर्मित सार्वभौम राज्य में जीवित रही और विदेशी ब्रिटिश राज में जीवित है । किन्तु कुछ समय में उस उसमानिया तुर्की साम्राज्य में जो परम्परावादी ईसाई समाज का क्षेत्र था विघटन तथा जनरेला होना आरम्भ हो गया । यूनानी सब और अल्बेनियन आठवीं शती के समाप्त होने के पहले गतिमान हो गये । क्या कारण था कि इस गति से बर्बरता और धर्म की विजय नहीं हुई जैसा हेलेनी चीनी तथा और समाजों की समाप्ति पर हमने देखा ।

उदाहरण के लिए हमने देखा कि परम्परावादी ईसाई समाज के मुख्य भाग का अस्तित्व तब तक नही लोप हुआ जब तक उसका सार्वभौम राज्य क्षय होते-होते अन्त काल की स्थिति को नही पहुँच गया और उसका वास्तविक विघटन आठ सौ साल पहले रोमन-बुलगारिन युद्ध के समय आरम्भ हुआ जब पश्चिमीकरण का कोई चिह्न भी न था। मिस्री समाज के विघटन और विलीनीकरण के बीच का समय अधिक था। विघटन उस समय आरम्भ हुआ जब लगभग २४२४ ई० पू० पाँचवी से छठी पीढ़ी में परिवर्तन हो रहा था जब पिरामिड बनाने वालो के पाप का परिणाम उनके उत्तराधिकारियो ने भोगा और 'पुराने राज्य' का भारी भरकम राजनीतिक ढाचा ढह गया। सुदूर पूर्वी समाज के विघटन और विलीनीकरण के आरम्भ की प्रक्रिया के बीच उतना समय नही लगा जितना मिस्री समाज के इतिहास में किन्तु उससे अधिक लगा जितना परम्परावादी ईसाई राज्य के इतिहास में। सुदूर पूर्वी समाज का विघटन ईसा की नवी शती के अन्तिम चतुर्थांश मे ताग वश के विनाश से आरम्भ होता है। उसके बाद सकट काल आया जिसमें बबरो ने कई सार्वभौम राज्य साम्राज्य के ढग पर बनाया। इनमें पहला कुबलाई खाँ ने मगोलिया द्वारा शान्ति स्थापित करने के लिए बनाया। किन्तु उसम उतनी सफलता नही मिली जितनी अकबर ने हिंदू समाज म शान्ति स्थापित करके पाया और परम्परावादी ईसाई समाज मे विजयी मुहम्मद ने। चीनी इस सिद्धान्त पर काय करते रहे हैं कि "म यूनानियो से उस समय भी डरता हूँ जब वे लाभ का काम करते है ?" और इसके अनुसार उन्होने मगोलो को निकाल बाहर किया जिस प्रकार मिस्रियो ने हाइक्सो को। पश्चिमीकरण के पहले मचुओ को मच पर आना था।

रूस और जापान में, जो इस समय पश्चिम से प्रभावित महान् शक्तियाँ है, इनकी सभ्यता के विघटन के बहुत पहले पश्चिमी सभ्यता का आघात हो चुका था। किन्तु इन दोनो सभ्यताओ में विघटन हो रहा था क्योंकि रोमानोफ जारशाही जिसका आरम्भ पीटर महान् ने किया था। पश्चिमी राष्ट्रो के समूह म राष्ट्रीय राज्य बन रहा था और दो सौ साल तक सार्वभौम राज्य रहा, इसी प्रकार जापानी सार्वभौम राज्य भी तीन सौ साल तक रहा जिसके पश्चिमीकरण का आरम्भ ताकुगावाशोगुन वश ने किया था। इन दोनो स्थितियो में यह कोई नही कहेगा कि पीटर महान अथवा ताकुगावा के कार्यों से विघटन आरम्भ हुआ। इसके विपरीत देखने म ये उपलब्धियाँ इतनी सफल थी कि बहुत पर्यवेक्षक इन्हे इस बात का प्रमाण मान सकते है कि जिन समाजो ने जान-बूझकर ये परिवर्तन स्वीकार किये और जो कम से कम कुछ काल के लिए सफल रहे वे इस समय पूर्ण रूप स सजीव होगे। रूसी तथा जापानियो ने जिस चुनौती का सामना किया वह उसी प्रकार की उस चुनौती के विपरीत है जिसका सामना उसमानलियो, हिंदुओ, चीनियो एजटेको और इनका को करना पडा। इनपर कुछ प्रभाव न पडा। रूसियो और जापानियो ने अपने पश्चिमी पडोसियो—पोल स्वीड, जरमन या अमरीकन द्वारा जबरदस्ती पश्चिमीकरण स्वीकार नही किया। उन्होने अपना सामाजिक परिवर्तन अपने हाथो किया और परिणाम यह हुआ कि पश्चिम की बराबरी के राष्ट्र में बन गये। औपनिवेशिक दासता या गरीब रिश्तेदार नही बने।

ध्यान देने की बात है कि सत्रहवी शती के आरम्भ में पीटर महान् के लगभग सौ साल पहले और मइजी पुन स्थापन (मइजी रेस्टारेशन) के ढाई सौ साल पहले रूस और जापान को अनुभव हुआ कि पश्चिम हमें विलीन करने की चेष्टा कर रहा है उसी प्रकार जैसे और देशो को उसने

आरम्भ हुआ, उसका प्रभाव दो सौ साल पहले से अमरीका के मक्सिको तथा एडियन-समाज पर पड रहा था और अब यह प्रक्रिया प्राय समाप्त हो गयी है। ईसा के पूव अन्तिम शती में बविलोनी समाज सीरियाई समाज में लय हो गया और इसी सीरियाई समाज में कुछ शतियों के बाद मिस्री समाज भी लीन हो गया। मिस्री समाज सबसे दीघजीवी ठास और एकताबद्ध था। उसका सीरियाइ समाज में लय हो जाना इस प्रकार के लीन हा जाने वाले उदाहरणा में सबसे विचित्र है।

यदि हम उन जीवित सभ्यताओ की ओर देखें जो हमारी पश्चिमी सभ्यता में लीन होने की प्रक्रिया में है तो हम देखेंगे कि यह प्रक्रिया भिन्न भिन्न स्थानो पर भिन्न भिन्न गति से चल रही है।

आर्थिक स्तर पर य सभी समाज आधुनिक पश्चिमी उद्योगवाद के जाल में, जा विश्व भर मे फला है फँस गये ह।

उनके लाल बुझक्कडा ने
पश्चिम की बिजली की बत्ती देखी और उसे पूजन लगे [1]

राजनातिक स्तर पर भी इन मतप्राय सभ्यताआ का सतानें विभिन्न दरवाजा स पश्चिमा राज्य परिवार म आने की चेष्टा कर रही ह। सास्कृतिक स्तर पर इस प्रकार का झुकाव नही है। परम्परावादी ईसाई समाज के मुख्य लाग, पुरान उसमानिया साम्राज्य की रिआया यूनानी, सब रूमानियन बुल्गारियन ने खुले दिल स पश्चिमी सास्कृतिक तथा राजनातिक पश्चिमीकरण स्वीकार किया और उनके पुरान मालिक तुर्कों के नताआ ने भी उनका अनुसरण किया है। किन्तु य उदाहरण अपवाद जान पडते ह। अरब, परशियन हिंदू चीनी और जापानी भी समझ बूझकर नतिक तथा बौद्धिक प्रतिबन्धा क सहित पश्चिमी सस्कृति को स्वीकार कर रहे ह। जहाँ तक रूसियो का सम्बन्ध है पश्चिम की चुनौती के सम्बन्ध म उनकी गोल मटोल नीति के सम्बन्ध में दूसरे सदभ में विचार किया जा चुका है।

इस प्रकार पश्चिमी राजनीतिक, आर्थिक तथा सास्कृतिक स्तर पर ससार के एकीकरण की जो प्रवृत्ति है वह उतनी उन्नतिशील या अन्त में उतनी सफल सम्भवत न हा जितना पहल देखने में वह जान पडती है। इसके विपरीत मक्सिकी एडियन बबिलानी तथा मिस्री चार समाजा के उदाहरण स स्पष्ट है कि आत्मीकरण (असिमिलेशन) स भी अपना स्वरूप उसी प्रकार लाप हो जाता है जिस प्रकार विघटन स जस हेलेनी, भारतीय चीनी सुमरी और मिनाई समाजा का हुआ। हम अब अपन उस बात की ओर ध्यान दें जो इस अध्याय का लक्ष्य था कि जा समाज पडासी समाज द्वारा विनाश हा गय अथवा हा रहे ह वहा उनके विनाश का कारण है कि जसा कि दूसर समूह के सम्बन्ध में हमन देखा है विनाश हान या सम्मिलित हाने क पहले ही विघटन आरम्भ हा गया था? यदि हम दूसरे निणय पर पहुँचते ह तो हमारी खाज का काम पूरा हा जायगा। और हम इस स्थिति में हाग कि वह सके कि किसी समाज क भौतिक अथवा मानवी वातावरण पर नियन्त्रण न हाना समाज क विनाश का मूल कारण नहा है।

१ रायट ब्रिजेज द टस्टामेंट आव ब्यूटी, भाग १ ५६४-५।

उदाहरण के लिए हमने देखा कि परम्परावादी ईसाई समाज के मुख्य भाग का अस्तित्व तब तक नहीं लोप हुआ जब तक उसका सार्वभौम राज्य क्षय होते-होते अंत काल की स्थिति को नहीं पहुँच गया और उसका वास्तविक विघटन आठ सौ साल पहले रोमन-बुलगानिन युद्ध के समय आरम्भ हुआ जब पश्चिमीकरण का कोई चिह्न भी न था। मिस्री समाज के विघटन और विलीनीकरण के बीच का समय अधिक था। विघटन उस समय आरम्भ हुआ जब लगभग २८२४ ई० पू० पाँचवीं से छठी पीढ़ी में परिवर्तन हो रहा था जब पिरामिड बनाने वालों के पाप का परिणाम उनके उत्तराधिकारियों ने भोगा और 'पुराने राज्य' का भारी भरकम राजनीतिक ढाँचा ढह गया। सुदूर पूर्वी समाज के विघटन और विलीनीकरण के आरम्भ की प्रक्रिया के बीच उतना समय नहीं लगा जितना मिस्री समाज के इतिहास में किन्तु उससे अधिक लगा जितना परम्परावादी ईसाई राज्य के इतिहास में। सुदूर पूर्वी समाज का विघटन ईसा की नवीं शती के अन्तिम चतुर्थांश में ताग वंश के विनाश से आरम्भ होता है। उसके बाद संकट काल आया जिसमें बबरों ने कई सार्वभौम राज्य साम्राज्य के ढंग पर बनाया। इनमें पहला कुबलाई खाँ ने मंगोलिया द्वारा शान्ति स्थापित करने के लिए बनाया। किन्तु उसमें उतनी सफलता नहीं मिली जितनी अकबर ने हिन्दू समाज में शान्ति स्थापित करके पायी और परम्परावादी ईसाई समाज में विजयी मुहम्मद ने। चीनी इस सिद्धान्त पर कार्य करते रहे हैं कि 'मैं यूनानियों से उस समय भी डरता हूँ जब वे लाभ का काम करते हैं'' और इसके अनुसार उन्होंने मंगोलों को निकाल बाहर किया जिस प्रकार मिस्रियों ने हाइकसों को। पश्चिमीकरण के पहले मचुओं को मंच पर आना था।

रूस और जापान में, जो इस समय पश्चिम से प्रभावित महान् शक्तियाँ हैं इनकी सभ्यता के विघटन के बहुत पहले पश्चिमी सभ्यता का आघात हो चुका था। किन्तु इन दोनों सभ्यताओं में विघटन हो रहा था क्योंकि रोमानोफ जारशाही जिसका आरम्भ पीटर महान् ने किया था। पश्चिमी राष्ट्रों के समूह में राष्ट्रीय राज्य बन रहा था और दो सौ साल तक सार्वभौम राज्य रहा, इसी प्रकार जापानी सार्वभौम राज्य भी तीन सौ साल तक रहा जिसके पश्चिमीकरण का आरम्भ ताकुगावाशोगुन वंश ने किया था। इन दोनों स्थितियों में यह कोई नहीं कहेगा कि पीटर महान अथवा ताकुगावा के कार्यों से विघटन आरम्भ हुआ। इसके विपरीत देखने में ये उपलब्धियाँ इतनी सफल थीं कि बहुत पर्यवेक्षक इन्हें इस बात का प्रमाण मान सकते हैं कि जिन समाजों ने जान-बूझकर ये परिवर्तन स्वीकार किये और जो कम से कम कुछ काल के लिए सफल रहे वे इस समय पूर्ण रूप में सजीव होंगे। रूसी तथा जापानियों ने जिस चुनौती का सामना किया वह उसी प्रकार की उस चुनौती के विपरीत है जिसका सामना उसमानलियों, हिन्दुओं, चीनियों एजटेकों और इनकों को करना पड़ा। इनपर कुछ प्रभाव न पड़ा। रूसियों और जापानियों ने अपने पश्चिमी पड़ोसियों—पोल, स्वीड, जरमन या अमरीकन-द्वारा जबरदस्ती पश्चिमीकरण स्वीकार नहीं किया। उन्होंने अपना सामाजिक परिवर्तन अपने हाथों किया और परिणाम यह हुआ कि पश्चिम की बराबरी के राष्ट्र में बन गये। औपनिवेशिक दासता या गरीब रिश्तेदार नहीं बने।

ध्यान देने की बात है कि सत्रहवीं शती के आरम्भ में पीटर महान् के लगभग सौ साल पहले और 'मेइजी पुनः स्थापन (मेइजी रेस्टोरेशन) के ढाई सौ साल पहले, रूस और जापान का अनुभव हुआ कि पश्चिम हमें विलीन करने की चेष्टा कर रहा है उसी प्रकार जैसे और देशों को उसने

आरम्भ हुआ उसका प्रभाव दो सौ साल पहले से अमरीका में मेक्सिको तथा एंडियन-समाज पर पड़ रहा था और अब यह प्रक्रिया प्रायः समाप्त हो गयी है। ईसा के पूर्व अन्तिम शती में बैबिलोनी समाज सीरियाई समाज में लय हो गया और इसी सीरियाई समाज में कुछ शतियों के बाद मिस्री समाज भी लीन हो गया। मिस्री समाज सबसे दीर्घजीवी ठोस और एकतारबद्ध था। उसका सीरियाई समाज में लय हो जाना इस प्रकार के लीन हो जाने वाले उदाहरणों में सबसे विचित्र है।

यदि हम उन जीवित सभ्यताओं की ओर देखें जो हमारी पश्चिमी सभ्यता में लीन होने की प्रक्रिया में है तो हम देखेंगे कि यह प्रक्रिया भिन्न भिन्न स्थानों पर भिन्न भिन्न गति से चल रही है।

आर्थिक स्तर पर ये सभी समाज आधुनिक पश्चिमी उद्योगवाद के जाल में, जो विश्व भर में फैला है, फँस गये हैं।

'उनके लाल घुमक्कड़ों ने
पश्चिम की बिजली की चमक देखी और उसे पूजने लगे'[1]

राजनीतिक स्तर पर भी इन मृतप्राय सभ्यताओं की सन्तानें विभिन्न दरवाजों से पश्चिमी राज्य-परिवार में आने की चेष्टा कर रही हैं। सांस्कृतिक स्तर पर इस प्रकार का झुकाव नहीं है। परम्परावादी ईसाई समाज के मुख्य लोग, पुराने उसमानिया साम्राज्य की रिआया यूनानी, सर्ब रूमानियन बुल्गारियन ने खुले दिल से पश्चिमी सांस्कृतिक तथा राजनीतिक पश्चिमीकरण स्वीकार किया और उनके पुराने मालिक तुर्कों के नेताओं ने भी उनका अनुसरण किया है। किन्तु ये उदाहरण अपवाद जान पड़ते हैं। अरब ईरानियन हिन्दू चीनी और जापानी भी समझ बूझकर नैतिक तथा बौद्धिक प्रतिबन्धों के सहित पश्चिमी संस्कृति को स्वीकार कर रहे हैं। जहाँ तक रूसियों का सम्बन्ध है पश्चिम की चुनौती के सम्बन्ध में उनकी गोल मटोल नीति के सम्बन्ध में दूसरे संदर्भ में विचार किया जा चुका है।

इस प्रकार पश्चिमी राजनीतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक स्तर पर संसार के एकीकरण की जो प्रवृत्ति है वह उतनी उन्नतिशील या अन्त में उतनी सफल सम्भवतः न हो जितनी पहले देखने में वह जान पड़ती है। इसके विपरीत मेक्सिको एंडियन बैबिलोनी, तथा मिस्री चार समाजों के उदाहरण से स्पष्ट है कि आत्मीकरण (असिमिलेशन) से भी अपना स्वरूप उसी प्रकार लोप हो जाता है जिस प्रकार विघटन से जैसे हेलेनी भारतीय, चीनी, सुमेरी और मिनाई समाजों का हुआ। हम अब अपने उस बात की ओर ध्यान दें जो इस अध्याय का लक्ष्य था कि जो समाज पड़ोसी समाज द्वारा विलीन हो गये अथवा हो रहे हैं वही उनके विनाश का कारण है कि जैसा कि दूसरे समूह के सम्बन्ध में हमने देखा है विलीन होने या सम्मिलित होने के पहले ही विघटन आरम्भ हो गया था? यदि हम दूसरे निर्णय पर पहुँचते हैं तो हमारी खोज का काम पूरा हो जायेगा। और हम इस स्थिति में होंगे कि कह सकें कि किसी समाज के भौतिक अथवा मानवी वातावरण पर नियन्त्रण न होना समाज के विनाश का मूल कारण नहीं है।

१ ... किप्लिंग ... भाग १, ५६४–५ ।

उदाहरण के लिए हमने देखा कि परम्परावादी ईसाई समाज के मुख्य भाग का अस्तित्व तब तक नहीं लोप हुआ जब तक उसका सार्वभौम राज्य क्षय होते-होते अंत काल की स्थिति को नहीं पहुच गया और उसका वास्तविक विघटन आठ सौ साल पहले रोमन बुल्गारियन युद्ध के समय आरम्भ हुआ जब पश्चिमीकरण का कोई चिह्न भी न था। मिस्री समाज के विघटन और विलीनीकरण के बीच का समय अधिक था। विघटन उस समय आरम्भ हुआ जब लगभग २४२४ ई० पू० पाचवी से छठी पीढी में परिवर्तन हो रहा था जब पिरामिड बनाने वालो के पाप का परिणाम उनके उत्तराधिकारियो ने भोगा और 'पुराने राज्य' का भारी भरकम राजनीतिक ढाचा ढह गया। सुदूर पूर्वी समाज के विघटन और विलीनीकरण के आरम्भ की प्रक्रिया के बीच उतना समय नही लगा जितना मिस्री समाज के इतिहास में किन्तु उससे अधिक लगा जितना परम्परावादी ईसाई राज्य के इतिहास में। सुदूर पूर्वी समाज का विघटन ईसा की नवी शती के अन्तिम चतुर्थांश में ताग वश के विनाश से आरम्भ होता है। उसके बाद सकट काल आया जिसमे बर्बरो ने कई सार्वभौम राज्य साम्राज्य के ढाचे पर बनाया। इनमें पहला कुबलाई खाँ ने मगोलिया द्वारा शान्ति स्थापित करने के लिए बनाया। किन्तु उसमें उतनी सफलता नही मिली जितनी अकबर ने हिन्दू समाज में शान्ति स्थापित करके पायी और परम्परावादी ईसाई समाज में विजयी मुहम्मद ने। चीनी इस सिद्धान्त पर काम करते रहे हैं कि मै यूनानियो से उस समय भी डरता हूँ जब वे लाभ का काम करते है ?" और इसके अनुसार उन्होने मगोलो को निकाल बाहर किया जिस प्रकार मिस्रियो ने हाइकसो को। पश्चिमीकरण के पहले मचुओ को मच पर आना था।

रूस और जापान में जो इस समय पश्चिम से प्रभावित महान् शक्तिया है, इनकी सभ्यता के विघटन के बहुत पहले पश्चिमी सभ्यता का आघात हो चुका था। किन्तु इन दोनो सभ्यताओ में विघटन हो रहा था क्योकि रोमानोफ जारशाही जिसका आरम्भ पीटर महान् ने किया था। पश्चिमी राष्ट्रो के समूह में राष्ट्रीय राज्य बन रहा था और दो सौ साल तक सार्वभौम राज्य रहा, इसी प्रकार जापानी सार्वभौम राज्य भी तीन सौ साल तक रहा जिसके पश्चिमीकरण का आरम्भ ताकुगावाशोगुन वश ने किया था। इन दोनो स्थितियो में यह कोई नही कहेगा कि पीटर महान अथवा तोकुगावा के कार्यो से विघटन आरम्भ हुआ। इसके विपरीत देखने में ये उपलब्धियाँ इतनी सफल थी कि बहुत पर्यवेक्षक इन्हे इस बात का प्रमाण मान सकते है कि जिन समाजो ने जान-बूझकर ये परिवर्तन स्वीकार किये और जो कम से कम कुछ काल के लिए सफल रहे वे इस समय पूर्ण रूप से सजीव होगे। रूसी तथा जापानियो ने जिस चुनौती का सामना किया वह उसी प्रकार की उस चुनौती के विपरीत है जिसका सामना उसमानलियो, हिन्दुओ, चीनियो, एज्टेको और इनकाओ को करना पडा। इनपर कुछ प्रभाव न पडा। रूसियो और जापानियो ने अपने पश्चिमी पडोसियो—पोल, स्वीड, जरमन या अमरीकन द्वारा जबरदस्ती पश्चिमीकरण स्वीकार नही किया। उन्होने अपना सामाजिक परिवर्तन अपने हाथो किया और परिणाम यह हुआ कि पश्चिम की बराबरी के राष्ट्र मे बन गये। औपनिवेशिक दासता या गरीब रिश्तेदार नही बने।

ध्यान देने की बात है कि सत्रहवी शती के आरम्भ में पीटर महान् के लगभग सौ साल पहले और मइजी पुनःस्थापन (मेइजी रेस्टोरेशन) के ढाई सौ साल पहले रूस और जापान को अनुभव हुआ कि पश्चिम हमें विलीन करने की चेष्टा कर रहा है, उसी प्रकार जैसे और दूसरो को उनके

आरम्भ हुआ, उसका प्रभाव दो सौ साल पहले से अमरीका के मेक्सिको तथा एंडियन-समाज पर पड़ रहा था और अब यह प्रक्रिया प्राय समाप्त हो गयी है। ईसा के पूर्व अन्तिम शती में बेबिलानी समाज सीरियाई समाज में लय हो गया और इसी सीरियाई समाज में कुछ शतियों के बाद मिस्री समाज भी लीन हो गया। मिस्री समाज सबसे दीर्घजीवी ठोस और एकतारूढ़ था। उसका सीरियाई समाज में लय हो जाना इस प्रकार के लीन हो जाने वाले उदाहरणों में सबसे विचित्र है।

यदि हम उन जीवित सभ्यताओं की ओर देखें जो हमारी पश्चिमी सभ्यता में लीन होने की प्रक्रिया में है तो हम देखेंगे कि यह प्रक्रिया भिन्न भिन्न स्थानों पर भिन्न भिन्न गति से चल रही है।

आर्थिक स्तर पर ये सभी समाज आधुनिक पश्चिमी उद्योगवाद के जाल में, जो विश्व भर में फैला है फंस गये हैं।

उनके लाल युद्धक्षेत्र ने
पश्चिम की विजय की बत्ती देखी और उसे पूजने लगे।[1]

राजनीतिक स्तर पर भी इन मृतप्राय सभ्यताओं की सन्तानें विभिन्न दरवाजों से पश्चिमी राज्य-परिवार में आने की चेष्टा कर रही हैं। सांस्कृतिक स्तर पर इस प्रकार का झुकाव नहीं है। परम्परावादी ईसाई समाज के मुख्य लोग पुराने उसमानिया साम्राज्य की रिआया यूनानी, सर्व रूमानियन बुल्गारियन ने पूरे दिल से पश्चिमी सांस्कृतिक तथा राजनीतिक पश्चिमीकरण स्वीकार किया और उनके पुराने मालिक तुर्कों के नेताओं ने भी उनका अनुसरण किया है। किन्तु ये उदाहरण अपवाद जान पड़ते हैं। अरब, परशियन हिन्दू चीनी और जापानी भी समझ बूझकर नैतिक तथा बौद्धिक प्रतिबन्धों के सहित पश्चिमी संस्कृति को स्वीकार कर रहे हैं। जहां तक रूसियों का सम्बन्ध है पश्चिम की चुनौती के सम्बन्ध में उनकी गोल मटोल नीति के सम्बन्ध में दूसरे संदर्भ में विचार किया जा चुका है।

इस प्रकार पश्चिमी राजनीतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक स्तर पर संसार के एकीकरण की जो प्रवृत्ति है वह उतनी उन्नतिशील या अंत में उतनी सफल सम्भवत न हो जितनी पहले देखने में वह जान पड़ती है। इसके विपरीत मेक्सिको एंडियन, बेबिलानी तथा मिस्री चार समाजों के उदाहरण से स्पष्ट है कि आत्मीकरण (असिमिलेशन) से भी अपना स्वरूप उसी प्रकार लोप हो जाता है जिस प्रकार विघटन से जैसे हेलनी, भारतीय चीनी, सुमेरी और मिनोई समाजों का हुआ। हम अब अपने उस बात की ओर ध्यान दें जो इस अध्याय का लक्ष्य था कि जो समाज पड़ोसी समाज द्वारा विलीन हो गये अथवा हो रहे हैं, वही उनके विनाश का कारण है कि जैसा कि दूसरे समूह के सम्बन्ध में हमने देखा है विलीन होने या सम्मिलित होने के पहले ही विघटन आरम्भ हो गया था? यदि हम दूसरे निर्णय पर पहुँचते हैं तो हमारी खोज का काम पूरा हो जायगा। और हम इस स्थिति में होंगे कि कह सकें कि किसी समाज के भौतिक अथवा मानवी वातावरण पर नियन्त्रण न होना समाज के विनाश का मूल कारण नहीं है।

१ राबर्ट ब्रिजेज द टेस्टामेंट आव ब्यूटी, भाग १, ५६४–५।

जापान की स्थिति इससे अधिक स्पष्ट है। यहाँ विघटन मगोलो के आक्रमण के कारण नही हुआ क्योकि जापानियो ने सन् १२८१ में अपने तट से इन्हें मार भगाया। इस महान् विजय का कारण एक तो उनकी द्वीप की स्थिति थी, दूसरे आपस में सौ साल से लडते लडते उनकी सैनिक दक्षता बहुत बढ गयी थी।

हिन्दू, बैबिलानी तथा एडियाई समाजो में विदेशी समाजो द्वारा विलीनीकरण की घटना अकस्मात् घटी जबये पतनोन्मुख समाज सावभौम राज्य के रूप में थे, जैसे रूस और जापान के उदाहरणो म। किन्तु पहले तीन उदाहरणो में प्रक्रिया विपत्तिपूर्ण थी क्योकि विदेशियो ने सैनिक बल से इन पर विजय प्राप्त की थी। हिन्दू इतिहास में ब्रिटिश विजय के पहले तथा मुगलो के काल से पहले, मुसल्मानो न विजय प्राप्त की थी जब उनके आक्रमण सन् ११९१ से १२०४ के बीच हुए। यह विजय और इसके बाद की ब्रिटिश तथा मुगल विजय इस कारण हुई कि उस समय हिन्दू समाज में बेतरह अराजकता फली हुई थी।

बबिलानी समाज को सीरियाई समाज ने अपने में विलीन कर लिया जब नेबुक्दनजार के साम्राज्य सावभौम राज्य का—फारस के खुसरू ने पराजित किया। इसके बाद से धीरे धीरे बैबिलोनी सस्कृति सीरियाइ सस्कृति में लीन होती गयी और परिणामस्वरूप एकेमेनियाई सावभौम राज्य बना। किन्तु बबिलोनी पतन का कारण असीरियाई सेना का अत्याचार था।

एडियाई समाज के सम्बन्ध में यह जान पडता है कि 'इनका' साम्राज्य को स्पेनी विजेताओ ने तहस-नहस किया। और सम्भव है कि यदि पश्चिम के लोग वहाँ न पहुँचे होते तो 'इनका' साम्राज्य कुछ और शतियो तक चलता। किन्तु एडियाई सभ्यता का विनाश और 'इनका' साम्राज्य का 'विनाश' एक ही बात नही है। हमें एडियाई इतिहास के सम्बन्ध में इतना ज्ञात है कि इसका पतन इनकाओ के सनिक तथा राजनीतिक उत्थान के पहले हो गया था। स्पेनी विजय के एक शती पहले यह घटना हो चुकी थी। एडियाई सभ्यता के सास्कृतिक उद्भव के साथ ही यह घटना न थी। यह पतन बाद में हुआ।

मेक्सिको की सभ्यता स्पेनी विजेताओ क आक्रमण से उस समय नष्ट हुई जब ऐज्टेक साम्राज्य, जो अपने समाज का सावभौम राज्य होने वाला था, अपनी विजय पूरी नही कर पाया था। दोनो का अन्तर हम इस प्रकार कह सकते हैं कि एडियाई समाज अपने एन्टोनाइनो के काल में पराजित हुआ और मेक्सिकी समाज अपने सीपियो के काल म समाप्त हुआ। किन्तु 'सीपियो का काल' सकट का काल है और इस कारण हमारी परिभाषा के अनुसार विनाश के पहले का स्वरूप है।

उसके विपरीत इस्लामी ससार में पश्चिमीकरण उस समय होने लगा जब किसी प्रकार का इस्लामी सावभौम राज्य दृष्टि में नहीं था। उसके कई राज्य जसे फारस, इराक, सऊदी अरब, मिस्र, सीरिया, लेबनान पश्चिमी राष्ट्रो के 'गरीब रिश्तेदार' के रूप में, जो उन्नति सम्भव है कर रहे ह। अखिल इस्लामी आन्दोलन अकाल प्रसूत जान पडता है।

दूसरी सभ्यताएँ जो प्रौढ हुइ अथवा अविकसित तथा अकाल प्रसूत सभ्यताओ को हम छोड द सकते हैं। किन्तु कुछ प्रौढ सभ्यताएँ जसे मिनाई हिनाइटी और माया के इतिहास अभी पूर्ण रूप से जाने नही गये है और जो ज्ञान उपलब्ध ह उसके आधार पर कोई परिणाम निकालना ठीक न होगा। अविकसित सभ्यताओ क सम्बन्ध में इस खोज में कुछ परिणाम निकालना ठाक

किया। रूस में तो पोलैंड तथा लिथुएनिया ने संयुक्त राज ने मास्को पर सैनिक आक्रमण किया। रूसी गद्दी पर एक झूठ दावेदार की सहायता के लिए। जापान में यह आक्रमण दूसरे प्रकार हुआ। स्पेनी और पुर्तगाली मिशनरियों ने कई लाख जापानियों को कैथालिक ईसाई बनाया। ऐसा हो सकता था कि ये ईसाई अल्पसंख्यक स्पेनी जहाजों की सहायता से जापान पर अपना अधिकार जमा लेते। रूसियों ने तो पोलों को मार भगाया और जापानियों ने इस सफेद खतरे को इस प्रकार दूर किया कि सभी पश्चिमी व्यापारियों को जापान से निकाल बाहर किया और आगे से जापानी धरती पर किसी पश्चिमी का आना बन्द कर दिया। केवल कुछ डच रह गये जिनके ऊपर बहुत अपमानजनक शर्तें लगा दी गयी थी। और जापानी ईसाइयों को निर्दयतापूर्वक समाप्त कर दिया। इस प्रकार पश्चिमी समस्या को हल करके रूसियों और जापानियों ने समझा कि अब हम अपने घोसले में शान्ति से रहेंगे। समय ने बताया कि ऐसा नहीं सम्भव था। इन्होंने नये ढंग से पश्चिम की चुनौती को स्वीकार किया जिसका वर्णन पहले हो चुका है।

किन्तु ऐसे स्पष्ट चिह्न मौजूद हैं कि नागासाकी में पहला पुर्तगाली जहाज पहुँचने के पहले और आरचेंजल में प्रथम अंग्रेजी जहाज के पहुँचने के पहले (मास्को में पोलों के आक्रमण के पूर्व यह पश्चिम का अग्रदूत पहुँचा चुका था) जापान की सुदूर पूर्वी सभ्यता तथा रूस के परम्परावादी ईसाई समाज का विनाश आरम्भ हो गया था।

रूसी इतिहास में वास्तविक संकट का काल जिस अर्थ में ये शब्द इस अध्ययन में प्रयोग किये गये हैं सत्रहवीं शती की वह अराजकता नहीं है जिसके लिए रूसियों ने ही ये शब्द गढ़े थे। वह पहले तथा दूसरे रूसी सार्वभौम राज्य के बीच केवल एक घटना थी जो हेलेनी संसार के अन्तोनाइनों के काल तथा डायाक्लीशियन के पदारोहण के बीच की अराजकता का युग था। रूसी इतिहास का वह अध्याय तो हेलेनी इतिहास के उस अध्याय के समान है जो पलोपोनेसियाई युद्ध और आगस्टस के शासन के बीच पड़ता है और इसलिए वह हमारे विचार के अनुसार रूसी संकट का काल है। यह वह समय है जब मास्को और नवगोरोड सन १४७८ ई० में एक साथ मिलाये गये और रूसी सार्वभौम राज्य की नींव पड़ी। इसी हिसाब से जापानी संकट का काल कामाकुरा और आशीकागा का काल है जब सामन्तवादी अराजकता थी। यह काल उसके पहले था जब नोबूनागा हिदयोशी और इयेयासू का मिलाकर शान्ति तथा मर्यादा स्थापित की गयी। यहाँ दोनों मिलाकर सन ११८४ ई० से सन् १५९७ ई० तक का काल होता है।

यदि ये सचमुच रूसी और जापानी संकट-काल हैं तो इन दोनों हालतों में हमें यह देखना है कि ये संकट के काल किसी निजी घातक कारणों से उपस्थित हुए अथवा किसी विनाशकारी के कारण। रूसी उदाहरण में साधारणतः यह कारण बताया जाता है कि पश्चिमी मध्ययुग के अनुसार जो विघटन का काल है वह यूरोपीय स्टेप से मंगोल खानाबदोशों के कारण था। किन्तु दूसरे उदाहरणों में हमने विचार करके अस्वीकार कर दिया है। जैसे परम्परावादी ईसाई समाज की पुरानी शाखा के सम्बन्ध में यह तर्क कि यूरेशियाई खानाबदोश अनेक प्रकार के दुष्ट थे। क्या यह सम्भव नहीं है कि रूस में परम्परावादी ईसाई समाज ने इसके पहले कि सन् १२३८ में मंगोलों ने वोल्गा को पार किया अपने ही कृत्यों से अपना विघटन किया हो। इसका पुष्टीकरण इससे होता है कि कीव की आरम्भिक रूसी राज्य इसी की बारहवीं शती में छिन्न भिन्न होकर अनेक लड़ाकू राज्यों में बँट गया।

और यदि यह बात मान ली जाय तो हमारे परिणाम का प्रमाणित करता है कि मानवी वातावरण पर नियन्त्रण हट जाने से सभ्यताओ का विनाश नही होता ।

सम्पादक की टिप्पणी

कुछ पाठक सोच सकते है कि ऊपर के अध्याया में लेखक तक के लिए कई बार अनक सभ्यताआ के विघटन का काल बहुत पीछे ले गया है । यह भावना इसलिए हो सकती है कि 'ह्रास' के अनेक अथ हो गये ह । जब हम किसी मनुष्य के स्वास्थ्य के ह्रास की बात करते है तब उसमें यह ध्वनि निहित रहती है कि यदि वह स्वस्थ न हुआ तो उसका सक्रिय जीवन समाप्त हो गया । हम लोग साधारणत 'ह्रास उसी अथ में प्रयोग करत ह जिसमें टवायनबी 'विघटन' कहते हैं । किन्तु इस अध्ययन में 'विघटन का वही अथ नही है, उसका अथ है विकास का युग समाप्त हो जाना । जीवधारिया के जीवन और समाजा के जीवन की तुलना अनुचित होती है, किन्तु पाठका का यह बता देना चाहता हूँ कि जीवधारिया में विकास जीवन म बहुत पहले ही समाप्त हो जाता है । जीवधारिया और समाजो में अन्तर है । इसे ऊपर के अध्याय के पहले अध्याय में लेखक ने बडे परिश्रम से स्पष्ट करने की चेष्टा की है । जीवधारी जसे मनुष्य की अवस्था 'सत्तर साल'[1] की बतायी गयी है । समाजो के लिए कोई ऐसी सीमा नही है। दूसरे शब्दा में समाजो की मत्यु प्राकृतिक कारणा से नही हुआ करती । सदा आत्महत्या अथवा हत्या से उनका अन्त हुआ करता है । विशेषत आत्महत्या से जैसा कि इस अध्याय में बताया गया है । इसा प्रकार विकास-काल की समाप्ति जीवधारिया के जीवन में स्वाभाविक क्रम है । समाज में यह 'भूल' या 'अपराध' के कारण अस्वाभाविक कारण है। इसी 'भूल' या 'अपराध' को टवायनबी समाज के लिए 'ह्रास' कहते ह । इस अथ में जब इस शब्द का प्रयोग किया जाता है तब पता चलता है कि सभ्यता के इतिहास में अनेक सफल, विख्यात और विशिष्ट घटनाएँ ह्रास के पश्चात घटी ह या उनके कारण हुई ह ।

१ बाइबिल के अनुसार —अनुवादक

न होगा क्योंकि हमारी परिभाषा के अनुसार उनका जन्म तो हुआ किन्तु विकास न हो सका। और अकाल प्रसूत सभ्यता के सम्बन्ध में कुछ कहना निरर्थक रूप से बेकार होगा।

(३) नकारात्मक अभिमत (यडिक्ट)

ऊपर के अनुसंधान से हम सामान्यत इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि सभ्यताओं के पतन का कारण मानवी परिस्थितियों पर नियन्त्रण का अभाव रहा है। यदि यह नियन्त्रण इस दृष्टि से नापा जाय कि जिस समाज के बारे में हम खोज कर रहे हैं उस पर विदेशियों का आक्रमण कब और कैसे हुआ तो जितने उदाहरण हमने दिये हैं उन सबके बारे में यही कहा जा सकता है कि अधिक से-अधिक निजी घातक कारणों के अन्त में विदेशी कारण अन्तिम प्रहार रहा है। जहाँ सभ्यता के इतिहास के किसी काल में विदेशी सम्पर्क शक्तिशाली आक्रमण के रूप में रहा है सभ्यता का विनाश नहीं हुआ, उसे स्फूर्ति ही मिली। सिवाय उसके अन्तिम काल में जब सभ्यता का विनाश हो गया। ईसा के पूर्व पाँचवीं शती के आरम्भ में परशियनों के आक्रमण से हेलेनी समाज को सजीवता मिली और उसकी प्रतिभा का अभूतपूर्व विकास हुआ। ईसा की नवीं शती में नार्स और मगयरों के आक्रमण से पश्चिमी समाज को स्फूर्ति प्राप्त हुई और इन्होंने शक्ति तथा राजनीतिज्ञता के विशिष्ट कौशल दिखाये जिसका परिणाम था इंग्लैण्ड और फ्रांस का राज्य और सेक्सनों द्वारा पवित्र रोमन साम्राज्य का पुन संगठन। मध्य युग में इटली के उत्तरी राज्यों को होहेंस्टाउफन आक्रमणों से शक्ति प्राप्त हुई और स्पेन के आक्रमणों से आधुनिक इंग्लैण्ड और हालैण्ड को। और आठवीं शती में अरब मुसलमानों के आक्रमण से शिशु हिन्दू समाज को स्फूर्ति मिली।

ऊपर के सभी उदाहरण ऐसे हैं कि उन देशों पर ऐसे समय आक्रमण हुआ जब उनका विकास हो रहा था। हम ऐसे भी अनेक उदाहरण दे सकते हैं जो अपनी ही कुव्यवस्था से नष्ट हो चुके थे और विदेशी आक्रमण ने कुछ दिनों के लिए उन्हें स्फूर्ति प्रदान की। क्लासिक उदाहरण मिस्री समाज का है जिस पर इस प्रकार के आक्रमण की अनेक बार प्रतिक्रिया हुई। दो हजार वर्षों तक मिस्र में प्रतिक्रियाएँ बार-बार होती रहीं। मिस्री इतिहास का यह उपसंहार उस समय हुआ जब उसके सार्वभौम राज्य का जीवन समाप्त हो चुका था। और ऐसा अन्त काल था जिसके बाद शीघ्र ही वह विनाश की अवस्था को पहुँचा। इस अन्तिम अवस्था में मिस्री समाज ने इतनी शक्ति प्राप्त की कि हाइक्सो आक्रमणकारियों को निकाल बाहर किया और बीच-बीच में ऐसी शक्ति उत्पन्न होती रही कि सागर के दस्युओं को, असीरियों को और अकेमेनिडियों को मार भगाया और टोलेमियों ने हेलनीकरण की जो प्रक्रिया आरम्भ की थी उसका भी सफल सामना किया।

इसी प्रकार की प्रतिक्रिया चीन की सुदूर पूर्वी सभ्यता में भी हुई। मिंग वंश ने मंगोलों को निकाला, यह उसी प्रकार है जैसे नये साम्राज्य के थीबी संस्थापकों ने हाइक्सों को निकाला। और सन् १९०० में पश्चिम विरोधी बाक्सर आन्दोलन तथा १९२५–२७ का रूसी साम्यवादी उपकरणों की नकल करते हुए पश्चिम से असफल युद्ध, उसी के समान है जैसे मिस्र ने हेलनीकरण का विरोध किया था।

ये उदाहरण तथा दूसरे भी बहुत-से उदाहरण दिये जा सकते हैं जो हमारे इस पक्ष के समर्थन के लिए पर्याप्त हैं कि बाहरी दबाव तथा घात साधारणत स्फूर्तिदायक होते हैं विनाशकारी नहीं।

वह कौन दुर्बलता है जिसके कारण विकासोन्मुख सभ्यता अपने जीवन के मध्यकाल में पतनोन्मुख हो जाती है और अपनी महती शक्ति खो बैठती है। यह दुर्बलता महत्त्वपूर्ण होगी, क्योंकि पतन का संकट निश्चित नहीं है फिर भी संकट भयावह तो है ही। हमारे सामने यह तथ्य है कि इक्कीस सभ्यताओं में, जो सजीव जन्मी और विकसित हुई, तेरह तो मर गयी और दफन हो गयी और जो आठ बची हैं उनमें सात स्पष्टतः पतनोन्मुख हैं। आठवां जो हमारी है वह कौन जानता है अपने उत्कर्ष पर पहुँच चुकी हो। अनुभव के आधार पर कहा जा सकता है कि विकासोन्मुख सभ्यता को अनेक संकटों का सामना करना पड़ता है। और जो विकास का विश्लेषण किया गया है उसका ध्यान हम रखेंगे तो देखेंगे कि विकास की ही राह में वह संकट रहता है।

विकास सृजनात्मक व्यक्तियों और सृजनात्मक अल्पसंख्यकों का काम है। वह आगे बढ़ नहीं सकते यदि इस प्रगति में अपने साथियों को अपने साथ न ले चलें। समाज की बहुसंख्यक जनता अ-सृजनात्मक होती है। उन्हें निर्माण करने वाले नेता क्षण भर में अपने समान नहीं बना सकते। यह असम्भव होगा। क्योंकि सन्तों के समागम से तपोमय आत्मा का प्रकाशमान होना उतना ही चमत्कारपूर्ण है जितना सन्त का संसार में प्रकट होना। नेता का काम है कि अपने साथियों को अपना अनुगामी बनाये। अपने नेता के अनुसार उन्नति के लक्ष्य की ओर बढ़े, उसका एक ही ढंग है वह नेता का अनुकरण करे। अनुकरण एक प्रकार का सामाजिक अभ्यास (ड्रिल) है। जो कानओरफ्यूज की मधुर वीणा के स्वरों से प्रभावित नहीं होते वे सार्जेंट की आज्ञा के शब्दों के वशीभूत हो जाते हैं। जब हैमल्नि का वंशीवाला प्रशा के राजा फ्रेडरिक विलियम के रूप में गरजता है तब वे, जो अब तक निष्क्रिय थे, गतिशील हो जाते हैं और जिस विकास की ओर वह ले जाना चाहता है चलते हैं। किन्तु उसका साथ वे छोटे रास्ते से ही कर सकते हैं। लम्बी राह विपत्ति की ओर ले जाती है। जब विवश होकर लम्बा रास्ता ही पकड़ना पड़ता है तभी उन्हें विनाश का सामना करना पड़ता है।

एक बात और ध्यान देने की है। अनुकरण के अभ्यास में एक दुर्बलता है। इस ढंग के अतिरिक्त जिस ढंग से जनता की शक्ति का उपयोग किया जाय। और अनुकरण चूंकि अभ्यास है इसलिए इससे मानव जीवन और गति यन्त्रवत् हो जाती है।

जब हम 'कौशलपूर्ण यन्त्र' अथवा 'चतुर मिस्त्री' की बात करते हैं तब इन शब्दों से यह बोध होता है कि जीव की पदार्थ (मैटर) पर विजय है मानवी चतुराई की भौतिक बाधाओं पर विजय है। वास्तविक उदाहरणों से भी यही बात मालूम होती है जैसे ग्रामोफोन या हवाई जहाज से लेकर पहली बार जब पहिया बना होगा या पहली डोंगी, जो लकड़ी को खोदकर बनी होगी (कनू) उन तक, क्योंकि इन आविष्कारों द्वारा मनुष्य की शक्ति अपने वातावरण पर इतनी अधिक हो जाती है कि निर्जीव पदार्थों को वे जिस प्रकार चाहे काम में ला सकते हैं जैसे सारजेंट अपनी आज्ञा से यन्त्रवत् मनुष्य से जिस प्रकार चाहे ड्रिल करा सकता है। अपनी पल्टन को ड्रिल कराते समय सारजेंट अपने को ब्राएरियस के समान बना लेता है जिसके सैकड़ों हाथ और पाँव इस प्रकार आज्ञा पालन करते हैं जैसे उसके ही हाथ-पाँव हैं। उसी प्रकार दूरबीन मनुष्य की आँख का विस्तार है, भेरी मनुष्य की आवाज का, स्टिल्ट पाँव का और तलवार मनुष्य के बाहु का।

मनुष्य कैसे-कैसे यन्त्र बनायेगा उसके पहले ही प्रकृति ने उसकी चतुराई की प्रशंसा कर रखी

१६ आत्मनिर्णय की असफलता

(१) अनुकरण की यान्त्रिकता (द मेकानिकलनेस आव माइमेसिस)

सभ्यताओं के ह्रास से सम्बन्ध की खोज के आधार पर हम अनेक नकारात्मक परिणाम पर पहुँचे हैं। हमने देखा है कि ये ह्रास ईश्वर कृत्य नहीं हैं कम से कम जैसा वकील लोग इन शब्दों का अर्थ कहते हैं। न तो ये प्रकृति के अन्ध नियमों के कारण होते रहते हैं। हमने यह भी देखा है कि वातावरण पर नियन्त्रण का अभाव भी उनका कारण नहीं है—चाहे वातावरण भौतिक हो या मानवी। ह्रास इस कारण भी नहीं होता कि औद्योगिक अथवा कलात्मक तकनीक की विफलता हो और न विदेशी आक्रमण द्वारा की गयी नर हत्या ही कारण है। इन कारणों को अस्वीकार करते हुए हमको अपनी खोज का परिणाम नहीं मिला। किन्तु अन्तिम तर्काभास में हमें एक सकेत मिल गया। हमने जहाँ यह बताया कि ह्रास विदेशों के द्वारा नर हत्या के कारण नहीं हुआ वहाँ हम यह नहीं प्रमाणित कर सके कि ह्रास का कारण हिंसा नहीं है। प्रत्येक उदाहरण में हम इसी परिणाम पर पहुँचे हैं कि ह्रास का कारण हिंसा है अपने ही द्वारा—आत्महत्या। इस परिणाम पर अच्छी तरह विचार करने के लिए सकेत का सहारा लेना चाहिए। और इस सम्बन्ध में एक आशाजनक बात है जिसे हम तुरत देख सकते हैं। इसमें कोई मौलिक बात हम नहीं बता रहे हैं।

जिस परिणाम पर हम इतने परिश्रम से पहुँचे हैं उसे पहले ही एक आधुनिक पश्चिम के कवि ने कहा है —

ईश्वर जानता है, इस दुखमय जीवन में किसी दुरात्मा की
आवश्यकता नहीं है। हमारी ही कुवासनाएँ जाल बुनती हैं
हमारी अन्तरात्मा ही हमारे साथ घात करती है।

(मेरेडिथ का लव्ज़ग्रेव) यह कोई नयी बात नहीं है। इससे पहले तथा और अधिकारी व्यक्तियों ने यह बात कही है। शेक्सपियर ने 'किंग जान' की अन्तिम पंक्तियों में कहा है —

यह इग्लैंड घमंडी विजेता के
चरणों पर कभी न पड़ा है, न पड़ेगा
जब तक कि वह स्वयं अपने पर घात नहीं करेगा।
हमें कभी पछताना न पड़ेगा,
यदि इग्लैंड अपने प्रति सच्चा रहेगा।

इसी प्रकार ईसू के शब्द हैं (मत्थु १५ १८–२०) 'जो कुछ मुंह द्वारा प्रवेश करता है पेट में जाता है और फिर बाहर फेंक दिया जाता है। किन्तु जो मुंह से निकलता है वह हृदय से आता है और वह मनुष्य को गन्दा करता है। क्योंकि हृदय से बुरे विचार, हत्या, परस्त्री गमन, वेश्यागमन, चोरी, झूठी गवाही देना, ईश्वर निन्दा आदि हृदय से निकलते हैं। इनसे मनुष्य अपवित्र होता है।'

वह कौन दुर्बलता है जिसके कारण विकासोन्मुख सभ्यता अपने जीवन के मध्यकाल मे पतनोन्मुख हो जाती है और अपनी महती शक्ति खो बैठती है। यह दुर्बलता महत्वपूर्ण होगी, क्योंकि पतन का सकट निश्चित नही है फिर भी सकट भयावह तो है ही। हमारे सामने यह तथ्य है कि इक्कीस सभ्यताओ में, जो सजीव जन्मी और विकसित हुई, तेरह तो मर गयी और दफन हो गयी और जो आठ बची ह उनमें सात स्पष्टत पतनोन्मुख हैं। आठवी जो हमारी है वह कौन जानता है अपने उत्कर्ष पर पहुँच चुकी हो। अनुभव के आधार पर कहा जा सकता है कि विकासोन्मुख सभ्यता को अनेक सकटो का सामना करना पडता है। और जो विकास का विश्लेषण किया गया है उसका ध्यान हम रखेंगे तो देखेंगे कि विकास की ही राह में वह सकट रहता है।

विकास सजनात्मक व्यक्तियो और सजनात्मक अल्पसख्यको का काम है। वह आगे बढ नही सकते यदि इस प्रगति में अपने साथियो को अपने साथ न ले चलें। समाज की बहुसख्यक जनता अ-सजनात्मक होती है। उन्ह निर्माण करने वाले नेता क्षण भर में अपने समान नही बना सकते। यह असम्भव होगा। क्योंकि सन्तो के समागम से तपोमय आत्मा का प्रकाशमान होना उतना ही चमत्कारपूर्ण है जितना सत का ससार में प्रकट होना। नेता का काम है कि अपने साथियो को अपना अनुगामी बनाये। अपने नेता के अनुसार उन्नति के लक्ष्य की ओर बढ़े, उसका एक ही ढग है वह नेता का अनुकरण करे। अनुकरण एक प्रकार का सामाजिक अभ्यास (ड्रिल) है। जो वानओरफ्यूज की मधुर वीणा के स्वरों से प्रभावित नही होते वे सार्जेंट की आज्ञा के शब्दो के वशीभूत हो जाते ह। जब हेमलिन का वशीवाला प्रशा के राजा फ्रडरिक विलियम के रूप में गरजता है तब वे, जो अब तक निष्क्रिय थे, गतिशील हो जाते ह और जिस विकास की ओर वह ले जाना चाहता है चलते ह। किन्तु उसका साथ वे छोटे रास्ते से ही कर सकते ह। लम्बी राह विपत्ति की ओर ले जाती है। जब विवश होकर लम्बा रास्ता ही पकडना पडता है तभी उन्हें विनाश का सामना करना पडता है।

एक बात और ध्यान देने की है। अनुकरण के अभ्यास में एक दुर्बलता है। उस ढग के अतिरिक्त जिस ढग से जनता की शक्ति का उपयोग किया जाय। और अनुकरण चूंकि अभ्यास है इसलिए इससे मानव जीवन और गति यन्त्रवत् हो जाती है।

जब हम 'कौशलपूर्ण यन्त्र' अथवा 'चतुर मिस्त्री' की बात करते ह तब इन शब्दो से यह बोध होता है कि जीव की पदार्थ (मैटर) पर विजय है, मानवी चतुराई की भौतिक बाधाओ पर विजय है। वास्तविक उदाहरणो से भी यही बात मालूम होती है जसे ग्रामोफोन या हवाई जहाज से लेकर पहली बार जब पहिया बना होगा या पहली डोगी, जो लकडी को खोदकर बनी होगी (कनू) उन तक, क्योकि इन आविष्कारो द्वारा मनुष्य की शक्ति अपने वातावरण पर इतनी अधिक हो जाती है कि निर्जीव पदार्थों को व जिस प्रकार चाहे काम में ला सकते ह जैसे सार्जेंट अपनी आज्ञा से यन्त्रवत् मनुष्य से जिस प्रकार चाह ड्रिल करा सकता है। अपनी पल्टन की ड्रिल कराते समय सार्जेंट अपने को ब्राएरियस के समान बना लेता है जिसके सकडो हाथ और पाव इस प्रकार आना पालन करते है जसे उसके दो ही हाथ पाव ह। उसी प्रकार दूरबीन मनुष्य की आँख का विस्तार है भेरी मनुष्य की आवाज का, स्टिल्ट पाव का और तलवार मनुष्य के बाहु का।

मनुष्य कसे-कसे यन्त्र बनायगा उसके पहले ही प्रकृति ने उसकी चतुराई की प्रशसा कर रखी

है । अपनी सर्वोत्तम कृति मनुष्य के शरीर में प्रकृति ने उसका खूब प्रयोग किया है । हृदय तथा फेफड़े बनाकर प्रकृति ने ऐसे स्वचालित यन्त्र बनाये हैं जो आदर्श हैं । इन्हें तथा और अवयवों में प्रकृति ने ऐसा सामजस्य स्थापित किया है कि वे अपने से सब काम करते हैं । लगातार एक ढंग से काम करते रहने से जो शक्ति उत्पन्न होती है उससे हम चलते हैं, बात चीत करते हैं और उसने ही इतनी सभ्यताओं को जन्म दिया है । यह समझिए कि किसी अवयव का नब्बे प्रतिशत काम अपने से होता है और कम से कम शक्ति उसमें व्यय होती है । यह इसलिए कि अधिक से अधिक शक्ति शेष दस प्रतिशत व्यय में लगे । इस दस प्रतिशत शक्ति द्वारा प्रकृति आगे बढ़ती है । सच बात यह है कि प्राकृतिक जीवन भी मानव समाज की भांति है जिसमें एक सृजनात्मक अल्पसंख्यक समूह है और एक निष्क्रिय बहुसंख्यक । विकासोन्मुख जीव में विकासोन्मुख समाज की भांति अल्पसंख्यक बहुसंख्यकों को यन्त्रवत् चालित करते रहते हैं ।

मानव की इन यन्त्रवत् सफलताओं की सराहना में हम मग्न हो जाते हैं किन्तु कुछ ऐसी शब्दावली है जिन्हें सुनकर हमें चिन्ता होती है—जैसे मशीन के बने सामान, यन्त्रवत् आचरण जिनमें मशीन का अर्थ पदार्थ पर मानव की विजय नहीं मानव पर पदार्थ की विजय का संकेत हम करते हैं । मशीन मनुष्य का दास बनने के लिए बनायी गयी है । किन्तु यह भी सम्भव है कि मनुष्य मशीन का दास बन जाय । उस सजीव प्राणी में जिसमें प्रतिशत मशीन है अधिक सृजन शक्ति है बजाय उस प्राणी में जिसमें पचास प्रतिशत मशीन है । जैसे—यदि सुकरात को भोजन बनाने में समय न लगाना पड़ता तो वह विश्व के रहस्य के उद्घाटन में अधिक समय लगा सकता है । मगर जो जीव शत प्रतिशत यन्त्र है वह जीवन से ही रोबोट—यन्त्र रूपी मानव—है ।

इसलिए अनुकरण के माध्यम से समाज में जो यान्त्रिक कार्य होता है उसमें विपत्ति का भय रहता है । और यह स्पष्ट उस समाज में अधिक रहता है जो गत्यात्मक है बजाय उस समाज के जो सुषुप्त है । अनुकरण की प्रक्रिया का दोष यह है—इस यन्त्रवत् संचालन की प्रेरणा बाहर से होती है । यदि आज्ञापालन करने वाले पर छोड़ दिया जाय तो वह अपनी ओर से कभी यह कार्य न करेगा । अनुकरण की क्रिया अपने मन से नहीं होती और इस क्रिया को पूर्ण रूप से सफल करने के लिए आवश्यक है कि उसे रीति रिवाज या आचार का रूप दे दिया जाय । जैसा कि वास्तव में आदिम समाजों की स्थिर अवस्थाओं में होता है । किन्तु जब रीति की परम्परा टूट जाती है तब तो जो अनुकरण शक्ति पुरातन लोगों के या अपरिवर्तनीय सामाजिक परम्परा के अवतारों की पूजा में लगती थी वह नेताओं की पूजा में लगायी जाती है जो सुन्दर भविष्य की ओर ले जाने का सपना दिखाते हैं । इस दशा में समाज का रास्ता भयपूर्ण हो जाता है । और संकट का भय सिर पर सवार रहता है । क्योंकि विकास को सुरक्षित रखने के लिए सदैव स्वेच्छा और स्वाभाविक प्रवृत्ति चाहिए और समुचित अनुकरण के लिए मशीन के समान स्वचालित होना चाहिए जो विकास के लिए आवश्यक है । वाल्टर बेजहाट के मन में यही दूसरी बात थी जब उसने अपने व्यंग्यपूर्ण ढंग से अंग्रेज पाठकों से कहा था कि तुम्हारी सफलता बहुत कुछ तुम्हारी मूढ़ता के कारण है । अच्छे नेताओं को अच्छे अनुगामी कभी नहीं मिल सकते यदि ये सब स्वयं विचार करने लगें । फिर यदि सब मूढ़ हैं तो नेता कौन बनेगा ?

सच बात यह है सृजनात्मक व्यक्ति सभ्यता के आगे-आगे हैं और जो अनुकरण के माध्यम का सहारा लेते हैं दो प्रकार की असफलताओं के सम्मुख रहते हैं । एक प्रतिकूल और एक अनुकूल ।

प्रतिकूल असफलता इस प्रकार हो सकती है कि नेता स्वय उस शक्ति के वशीभूत हो जायें जिससे उन्होने अपने अनुगामियो को प्रभावित किया है। ऐसी अवस्था मे जन-साधारण की शिक्षा उसके नेता अपनी स्व प्रेरणा (इनिशियेटिव) का गवा कर देते हैं जो नाशकारी है। यही अविकसित सभ्यताओ के इतिहास में हुआ, और अन्य सभ्यताओ में भी, जो निष्क्रिय रूप में है। किन्तु यह प्रतिकूल असफलता ही कहानी का अन्त नही है। जब नेता का नेतत्व समाप्त हो जाता है तब उनके कार्यकाल का दुरुपयोग होने लगता है। तब जनता विद्रोह कर देती है और अफसर दमन द्वारा शान्ति स्थापन करना चाहते है। ओरफ्यूज जिसकी वशी खो गयी या जो वशी बजाना भूल गया, अब जरक्सेज का कोडा हाथो में लेता है। परिणाम यह होता है कि भयकर अशान्ति छा जाती है और सुव्यवस्थित समाज में क्रान्ति हो जाती है। यह अनुकूल असफलता है और हमने बार-बार इसी के लिए दूसरे शब्द का प्रयोग किया है। वह है पतनोन्मुख सभ्यता का विघटन जिसमें नेता शक्तिशाली अल्पसख्यका का रूप धारण करते है और जनता सर्वहारा होकर अलग हो जाती है।

सर्वहारा का इस प्रकार अपने नेताओ से अलग हो जाना समाज के उस सामजस्य को खो देना है जो उसे एक बनाये रखती है। किसी पूर्ण समाज में, जिसमें कई भाग हो, भागो की एकता मिट जाय तो सारे समाज को अपने आत्मनिर्णय की भावना को खो कर उसका मूल्य चुकाना पडता है। आत्मनिर्णय की शक्ति का अभाव ह्रास की अन्तिम कसौटी है। इस निष्कर्ष से हमें आश्चर्य न होना चाहिए कि यह उस निष्कर्ष के विपरीत है जिस पर हम इस अध्ययन में पहले पहुँच चुके है कि आत्मनिर्णय की भावना की ओर जाना सभ्यता के विकास का चिह्न है। हम अब कुछ उन तत्त्वो की परीक्षा करेंगे जिनमें सामजस्य के अभाव के कारण आत्मनिर्णय की भावना लोप हो जाती है।

(२) पुरानी बोतल में नयी शराब

समायोजन, क्रान्ति और अनाचार[1]

समाज जिन सस्थाओ का बना हुआ है उनमें असगति का एक कारण नयी सामाजिक शक्तियाँ, जैसे नयी रुझान, नये आवेग, नये विचार—है जिन्हें सस्थाएँ वहन करने के लिए मूल रूप से नही बनी थी। इस प्रकार के दो विरोधी तत्त्वो का कितना अनिष्टकर परिणाम होता है उसका एक विख्यात बाना में वर्णन है जिसके बारे में कहा जाता है ईसा ने कहा था

'कोई मनुष्य नये कपडे में पुराने कपडे का जोड नही लगाता। क्योकि जो नया कपडा लगाया जाता है पर पुराने कपडे म से कुछ हटा देता है और छेद और भी भद्दा हो जाता है। और लोग नयी शराब को भी पुरानी बोतल में नही रखते नही तो बोतल फूट जाती है और शराब बह जाती है। लोग नयी शराब को नयी बोतल में रखते है और दोनो की रक्षा होती है।'[2]

जिस घरेलू व्यवस्था की उपमा ऊपर दी गयी है उसका अक्षरश पालन किया जा सकता है परन्तु सामाजिक जीवन में मनुष्य को कार्य करने की शक्ति सीमित होती है। समाज कपडे या

१ एडजस्टमेंट, रिवोल्यूशन एण्ड एनामिटीज।

२ मथ्यु—६, १६–१७।

बोतल के समान एक आदमी की सम्पत्ति नहीं है। यह अनेक मनुष्यों का कार्यक्षेत्र है इसलिए जो शिक्षा घरेलू व्यवस्था में साधारण और व्यावहारिक ज्ञान है वह समाज में अन्धा है।

आदर्श रूप में नयी गत्यात्मक शक्तियों को समाज की सारी संस्थाओं का नये सिर से निर्मित करना चाहिए और वास्तविक विकासोन्मुख समाज में निरोप काल-दोषों (एनाक्रोनिज्म) का समायोजन होना रहता है। किन्तु स्थिर शक्तियाँ सदा समान के ढाँचे के बहुत-सा हिस्से को ज्यों का त्यों बनाये रखती हैं यद्यपि नयी कार्यशील शक्तियों और पुरानी शक्तियों में असंगति रहती है। ऐसी स्थिति में नयी शक्तियाँ दो विरोधी दिशाओं में साथ-साथ कार्य करती रहती हैं। एक ओर तो नयी संस्थाओं द्वारा, जिनका उन्होंने निर्माण किया है या उन पुरानी संस्थाओं द्वारा जिन्हें उन्होंने अपने अनुसार गढ़ लिया है अपना सृजनात्मक कार्य करती रहती है, कल्याण करती हैं। साथ ही साथ वे ऐसी संस्थाओं में अव्यवस्थित ढंग से घुस पड़ती हैं, जो उनके सामने आ जाता हैं जैसे शक्तिशाली भाप की लिया इंजन घर में चली जाय और किसी पुराने इंजन में घुस जाय। ऐसी अवस्था में दो में एक दुर्घटना हो सकती है। या तो भाप के दबाव से पुराना इंजन चूर चूर हो जाय या किसी प्रकार वह बना रहे और इस प्रकार कार्य करने लगे जो भयानक विनाशकारी हो।

इन रूपकों का सामाजिक जीवन के अर्थ में लें अर्थात पुराने इंजनों का विस्फोट जो भाप के दबाव को सहन नहीं कर सकते, या पुरानी बोतलों का फूटना जिसमें नयी शराब रखी जाती है तो इसका अभिप्राय होगा—वे क्रान्तियाँ जो कभी-कभी उन संस्थाओं में होती हैं जो समय के साथ नहीं है। इसके विपरीत वे इंजन जो दबाव को सहन कर लेते हैं और ऐसे विनाशकारी कार्य करने लगते हैं जिनके लिए वे बनाये नहीं गये थे। वे उन सामाजिक अपराध के प्रतीक हैं जो कभी कभी समय के साथ न चलने वाली 'परम्परावादी' संस्थाओं में उत्पन्न हो जाते हैं।

क्रान्ति की परिभाषा यह हो सकती है कि वे ऐसे अनुकरण के कार्य हैं जिनका अवरोध हुआ है और जो थोड़े बहुत हिंसात्मक हैं। उनका मूल तत्त्व अनुकरण है। क्योंकि प्रत्येक क्रान्ति का संदर्भ ऐसी घटना से है जो पहले कभी कहीं हो चुकी है और यह स्पष्ट है कि किसी क्रान्ति का अध्ययन जब हम उसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर करते हैं तब देखते हैं कि यह क्रान्ति कभी न होती यदि पहले की किसी बाहरी शक्ति ने उसे उद्बुद्ध न किया होता। प्रत्यक्ष उदाहरण सन १७८९ की फ्रांस की क्रान्ति है जिसको प्रेरणा कुछ बातों में उन घटनाओं से मिली थी जो ब्रिटिश अमरीका में घटी थी। इन घटनाओं में फ्रांस की पुरानी सरकार भी सहायक थी जो उसके लिए घातक सिद्ध हुई। और कुछ प्रेरणा उन शताब्दियों पुराने अंग्रेजी विचारों से मिली जिनका फ्रांस में माटेस्क्यू आदि ने प्रचार किया था और जिनका वहाँ प्रभाव पड़ा।

अवरोध भी क्रान्ति का एक तत्त्व है और इसी के कारण हिंसा को बल मिलता है जो क्रान्ति का मुख्य अंग है। क्रान्ति हिंसात्मक इसलिए होती है कि नयी पराक्रमी सामाजिक शक्तियों की उन पुरानी दृढ़ संस्थाओं पर देर में विजय होती है जो जीवन की नयी अभिव्यक्तियों का विरोध करती हैं और उन्हें पराजित करने की चेष्टा करती हैं। जितना ही अधिक दिनों तक अवरोध होता है उतना उस शक्ति का दबाव बढ़ता है जो बाहर निकलना चाहती है। और जितना ही अधिक दबाव होगा उतने ही जोर का विस्फोट होगा जिसके परिणामस्वरूप अवरुद्ध शक्तियाँ बाहर निकल पड़ती हैं।

क्रान्ति का स्थान सामाजिक अपराध भी ले लेते हैं। उनकी यह परिभाषा की जा सकती है

कि वह दण्ड है जिसे समाज को भुगतना पडता है, जब अनुकरण जिसे पुरानी सस्थाओ को नयी सामाजिक शक्तियो के साथ चलना चाहिए था केवल रुकती ही नही, बिल्कुल विफल हो जाती है।

इससे स्पष्ट है कि जब किसी समाज की सस्था पर नयी सामाजिक शक्ति का आघात होता है तीन विकल्पो में एक की सम्भावना है या तो शक्ति के साथ सम्या का सामजस्य, या क्रान्ति (जो एक प्रकार का सामजस्य है जो विलम्ब से होता है और विरोधी तत्त्वो का होता है), अथवा अपराध। यह भी स्पष्ट है कि इन विकल्पो में प्रत्येक उसी समाज के विभिन्न भागो में विभिन्न राष्ट्रीय राज्यो में, विभिन्न ढग से परिपूर्ण हो, यदि कोई विशेष समाज विशेष ढग से बन गया हो। यदि सन्तुलन के साथ सामजस्य है तो समाज का विकास होगा। यदि क्रान्ति होगी तो विकास में खतरा रहेगा, यदि अनाचार होगा तो समाज का ह्रास होगा।

उद्योगवाद का दासप्रथा पर सघात

विगत दो शतियो में दो बलशाली नयी सामाजिक शक्तियाँ गतिमान् हुइ। उद्योगवाद और लोकतन्त्र। पुरानी सस्थाओ में से एक पर, दासत्व प्रथा पर, इसका आघात हुआ। यह विनाशकारी सस्था हेलेनी सभ्यता के पतन और विनाश का एक कारण थी। पश्चिमी समाज के देशो में इसका पाव नही जमा था, किन्तु जब पश्चिमी ईसाई ससार का सागर पार विस्तार हुआ, तब नये सागर पार के राज्यो मे यह स्थापित हो गयी। किन्तु खेत पर काम करने वाले दासो का यह सक्रामक रोग बहुत जोरदार नही था। अठारहवी शती के अन्त मे जब उद्योगवाद और लोकतन्त्र की नयी शक्तिया ग्रेट ब्रिटेन से पश्चिमी दुनिया में फैलने लगी, दासत्व उपनिवेशो में ही थोडा बहुत पाया जाता था और वहा भी इसका क्षेत्र कम होता जाता था। ऐसे राजममज्ञ जैसे वाशिंगटन और जेफरसन जिनके पास स्वय दास थे, इस सस्था से दुखी थे और उन्हें आशा थी कि आगामी शती में शान्तिपूर्वक इस सस्था की समाप्ति हो जायगी।

किन्तु यह सम्भावना ग्रेट ब्रिटेन में औद्योगिक क्रान्ति के आरम्भ होने पर समाप्त हो गयी। क्योकि इसी के कारण उन कच्चे मालो की माग बढ गयी जिन्हें खेतो में दास पैदा करते थे। उद्योगवाद के सघात के कारण इस जीर्ण और समय के विपरीत सस्था को नया जीवन मिला। पश्चिमी समाज के सामने दो विकल्प थे। या तो वह दासत्व प्रथा का अन्त करने के लिए तुरत सक्रिय कार्य करे अथवा इस पुरानी सामाजिक बुराई को उद्योगवाद की नयी गतिशील शक्ति द्वारा ऐसे रूप में बदल दे जो समाज के जीवन के लिए विनाशकारी सिद्ध हो।

ऐसी स्थिति में पश्चिमी समाज के अनेक राष्ट्रीय राज्यो में दास प्रथा के विरुद्ध कार्य हुए और शान्तिपूर्ण सफलता भी मिली। एक महत्त्व का क्षेत्र रह गया जहाँ दास प्रथा के विरुद्ध कुछ कार्य न हो सका। वह थे उत्तरी अमरीकी सघ के दक्षिणी राज्य जिन्हें 'रुई का क्षेत्र' कहते है। यहाँ दास प्रथा के समर्थक एक पीढी तक और शक्तिशाली रहे। इस तीस वर्ष की अल्प अवधि में अर्थात् सन् १८३३ से जब ब्रिटिश साम्राज्य में दास प्रथा अन्त कर दी गयी, सन् १८६५ तक जब सयुक्त राज में दास प्रथा का अन्त हुआ, दक्षिण के राज्यो की यह 'विशिष्ट सस्था' उद्योगवाद की गतिशील शक्ति के कारण भीषण रूप से उन्नत हुई। इसके पश्चात् इस पिशाच का पराजित किया गया और नष्ट किया गया। किन्तु सयुक्त राज्य में दास प्रथा के विनाश में जो विलम्ब हुआ उसके परिणामस्वरूप विनष्टकारी क्रान्ति हुई जिसका भीषण परिणाम आज भी दिखाई देता है। इस अनुकरण के अवरोध का यह मूल्य चुकाना पडा।

फिर भी हमारे पश्चिमी समाज का आगे को साधुवाद करना चाहिए कि इस मूल्य पर भी अन्तिम पश्चिमी गढ़ से दास प्रथा का सामाजिक रोग हटाया गया। इस दया के काय के लिए हमें लोकतन्त्र की शक्ति का धन्यवाद करना चाहिए। पश्चिमी जगत् में यह शक्ति उद्योगवाद से कुछ पहले उत्पन्न हो गयी थी क्योंकि यह केवल आकस्मिक संयोग नहीं था कि पश्चिमी गढ़ से दास की प्रथा को निर्मूल करने वाले लिंकन सबसे महान् लोकतान्त्रिक राजममज्ञ (स्टेटमैन) था। लोकतन्त्र मानवतावाद की राजनीतिक अभिव्यक्ति है और मानवतावाद तथा दासता एक दूसरे के विरोधी हैं, इसलिए नये लोकतन्त्रात्मक जागरण ने दासता के विरुद्ध आन्दोलन को उसी समय शक्तिशाली बना दिया जब नवीन उद्योगवाद दासता को उत्साहित कर रहा था। यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि उद्योगवाद जिस प्रकार दासता की प्रथा को कायम रखना चाहता था उसे यदि लोकतन्त्र की प्रगतिशील शक्तियाँ न समाप्त न कर दिया होता तो पश्चिमी जगत् में इतनी सरलता से दासता समाप्त न होती।

युद्ध पर लोकतन्त्र और उद्योगवाद का संघात (इम्पैक्ट)

साधारणत कहा जाता है कि उद्योगवाद के कारण युद्ध की विभीषिका बढ़ गयी है जैसे उसके कारण दासता की विभीषिका बढ़ गयी थी। युद्ध प्राचीन तथा युग के विपरीत प्रथा है और उसी नैतिक सिद्धान्त पर उसकी भर्त्सना की जाती है जिसपर दासता की। बौद्धिक दृष्टि से बहुत-से लोगों का यह भी विचार है कि युद्ध से उन लोगों को भी कुछ लाभ नहीं होता जो समझते हैं कि इससे लाभ होता है। जिस प्रकार अमरीकी गृह-युद्ध के ठीक पहले एच० आर० हारपर ने 'दि इम्पेंडिंग क्राइसिस आव द साउथ' नाम की पुस्तक लिखी जिसमें बताया था कि दास के मालिकों को दास रखने से कोई लाभ नहीं होता। मन भ्रष्ट होने के कारण उन्हीं लोगों ने उस पुस्तक की भर्त्सना की जिनके लाभ के लिए तथा ज्ञान के लिए वह पुस्तक लिखी गयी थी और उसमें बताया गया था कि वास्तविक लाभ उनका क्या होगा उसी प्रकार १९१४–१८ के महायुद्ध के पहले नारमन एंजल ने एक पुस्तक लिखी थी—'यूरोप्स आपटिकल इल्यूजन' जिसमें प्रमाणित करने की चेष्टा की गयी थी कि युद्ध से विजयी तथा पराजित–दोनों की हानि होती है। बहुत लोगों ने लेखक की निन्दा की जो स्वयं उसी के समान शान्ति बनाये रखना चाहते थे। फिर क्यों हमारा समाज युद्ध बन्द करने में सफल नहीं हुआ और दासता के उन्मूलन में सफल हुआ? उत्तर स्पष्ट है। दासता के उन्मूलन में लोकतन्त्र तथा उद्योगवाद की शक्तियाँ एक ही ओर लगी।

यदि हम लोकतन्त्र तथा उद्योगवाद के आरम्भ के पहले के पश्चिमी संसार की परिस्थिति पर विचार करें तो हमें पता चलेगा कि उस समय अठारहवीं शती के मध्य युद्ध तथा दासता की प्राय समान स्थिति थी। युद्ध की प्रवृत्ति घट रही थी, इसलिए नहीं कि लड़ाइयाँ कम हो रही थीं। यद्यपि अंकों द्वारा इसे भी प्रमाणित किया जा सकता है[1] बल्कि इसलिए कि उनका संचालन

१ यद्यपि पी० ए० सोरोकिन ने जो संख्याएँ एकत्र की हैं उनसे पता चलता है कि उन्नीसवीं शती में अठारहवीं शती से कम युद्ध हुए हैं (सोशल एण्ड कलचरल डाइनेमिक्स)। खण्ड ३, न्यूयार्क, १९३७, अमेरिकन बुक क०, पृ० ३४२ तथा ३४५–४६।

सयम से होना था । हमारे अठारहवी शती के बुद्धिवादी इस बात को अनुचित समझते ह कि कुछ ही पहले युद्धा में धार्मिक मन्धता के कारण युद्ध में भीषणता अधिक थी । सत्रहवी शती के अन्तिम भाग में यह विभीषिका हटा दी गयी और युद्ध की भीषणता यथासम्भव कम हा गयी । पश्चिम के इतिहास के किसी अध्याय में इसके पहले या उसके बाद फिर ऐसा कभी नही हुआ । इस 'सम्यता के सग्राम का युग उस समय अठारहवी शती के अन्त में समाप्त हो गया जब एक बार फिर लोकतन्त्र और उद्योगवाद के सघष के कारण युद्ध की ओर लोग अग्रसर होने लगे । यदि हम पूछें कि विगत डढ़ सौ वर्षों में इन दोनो में किस शक्ति ने युद्ध की ओर लोगा को उत्तजित किया है, ता सम्भवत पहली प्रक्रिया यही होगी कि उद्योगवाद न इस दृष्टि स इस चक्र में पहला आधुनिक युद्ध फ्रास की राज्यक्रान्ति के युद्धा से आरम्भ हुआ और इन पर उद्योगवाद का प्रभाव नगण्य था और फ्रास की राज्यक्रांति वाले लोकतन्त्र का महत्त्वपूण । नपोलियन की सैनिक प्रतिभा का परिणाम उतना नही था जितना नयी क्रान्तिकारी फ्रासीसी सेना का, जिसने पुराने ढग क अठारहवी शती के अक्रान्तिकारी राज्या के सयबल को नष्ट कर दिया और वह सेना सारे यूराप की सेना को इस प्रकार काटती चली गयी जसे मक्खन को चाकू काटता है और यह सेना सारे यूरोप में घुस गयी । यदि इसके प्रमाण की आवश्यकता हो ता दखिए कि इस बलपूवक एकत्र की हुई अध शिक्षित सेना ने जितना कमाल दिखाया वह नेपोलियन के आने के पहले चौदहवी लूई की सेना के लिए असम्भव था । और हमें यह भी स्मरण कर लेना चाहिए कि रोमन—और असीरियाइ तथा दूसरी उग्र सयवादी शक्तिया न प्राचीन युगो में बिना किसी यात्रिक उपकरणा के बडी-बडी सम्यताआ को नष्ट कर डाला और एस हथियारा स जो सोलहवी शती के लोहारा के सामने खिलवाड के समान थे ।

अठारहवी शती में, उसके बाद अथवा उसके पहले की लडाइयाँ क्या कम भीषण थी, उसका कारण यह था कि उन युद्धा में धार्मिक उन्माद नही रह गया था और न राष्ट्रीय उन्माद की सफलता के वे साधन बने थे । इस बीच युद्ध 'राजाआ के मनोरजन' थे । नतिक दष्टि से इस प्रकार के मतलब के युद्ध घणास्पद हो सकते थे किन्तु उनसे भौतिक क्षति अधिक नही होती थी, इसे कोई इनकार नहा कर सकता । ऐसे युद्ध करने वाले राजा भलीभाँति समझते थे कि हमारी प्रजा कहाँ तक इस प्रकार के खिलवाड का सहन कर सकती है और अपने कायकलाप को वे इसी सीमा के अन्दर रखते थे । जबरदस्ती उनक सनिक नही भर्ती किये जाते थे, धार्मिक युद्ध की सेनाआ की भाँति वे उन देशा के सहारे जीवन यापन नही करते थे जिन्हे वे जीत लेते थे और न बीसवी शती की सेना की भाँति उन वस्तुआ का नष्ट करते थे जिनका निर्माण शान्ति के समय हाता है । युद्ध के नियमा का वे पालन करते थे, उनके ध्येय सतुलित होते थे और पराजित पक्ष के लिए वे कठोर शर्तें नहा लगाते थे । जब कभी इन नियमो का उल्लघन होता था जसे उस समय जब चौदहवें लूई ने सन् १६७४ ई० और १६८९ ई० मे पलेटिनेट का ध्वस किया तब पराजित पक्ष ने ही नही तटस्थ जनमत ने भी ऐसे भीषण कार्यों की निन्दा की ।

इसका क्लासिक उदाहरण एडवड गिबन की लेखनी में मिलता है

युद्ध में यूरोपीय सेनाएँ सयत और अनिर्णीत युद्धा क अभ्यासी ह । शक्ति-सन्तुलन में परिवतन होता रहता है और हमारे पडोसी राज्या की समद्धि बढेगी, कभी घटेगी । किन्तु ये आकस्मिक घटनाएँ हमारे साधारण सुख-वभव को नष्ट नही कर सकता, जा हमारे विधि विधान कला,

आचार-व्यवहार के कारण उत्पन्न हुए हैं और जिनके कारण यूरोपियन तथा औपनिवेशिक अन्य मानवों से भिन्न हैं ।'[1]

इस अतिशय आत्मतुष्टि का लेखक इतने दिन तक जीवित रहा कि उसने ऐसे युद्धों को देखा कि उसका हृदय हिल गया और उसके ये विचार अति प्राचीन पड़ गये ।

जिस प्रकार उद्योगवाद के समय दासता की उग्रता के परिणामस्वरूप दासता के विरुद्ध आन्दोलन खड़ा हुआ उसी प्रकार लोकतन्त्र के परिणामस्वरूप और फिर उद्योगवाद संपात के कारण युद्ध विरोधी आन्दोलन उत्पन्न हुआ । सन् १९१४-१८ ई० के महाभारत के परिणामस्वरूप लीग आव नेशन्स की स्थापना हुई किन्तु वह सन् १९२९-४५ ई० के युद्ध से संसार को न रोक सकी । इस विपत्ति के बाद युद्ध बन्द करने के लिए हम एक और नवीन तथा कठिन प्रयोग, सहयोगी (कोआपरेटिव) विश्वशासन (वर्ल्ड गवर्नमेण्ट) की स्थापना करके, कर रहे हैं, बजाय इसके कि युद्ध का चक्र चले और अन्त में कोई एक प्रबल शक्ति सबको हराकर एक विश्वराज्य स्थापित कर ले । हम लोग इस बात में सफल होंगे कि नहीं जिसे विश्व की कोई सभ्यता नहीं कर सकी, ऐसा प्रश्न है जिसका उत्तर भगवान् ही दे सकता है ।

लोकतन्त्र तथा उद्योगवाद का संकुचित प्रभुसत्ता (परोकियल सावरेंटी) पर संघात

क्या कारण है कि लोकतन्त्र ने जिसे ईसाई धर्म का स्वाभाविक परिणाम लोग साधारणतः बताते हैं और दासता के प्रति उसका जो रुख था उससे यह धारणा अनुचित नहीं जान पड़ती थी, युद्ध की उग्रताओं में वृद्धि की जो वैसी ही बड़ी बुराई है जैसा युद्ध । इसका उत्तर यह है कि युद्ध की प्रथा से टक्कर लेने के पहले लोकतन्त्र को संकुचित (अथवा स्थानीय) प्रभु सत्ता से टक्कर लेनी पड़ी । और लोकतन्त्र तथा उद्योगवाद की नयी सजीव शक्ति का संकुचित राज्य पर जो आघात हुआ उससे दो अभिशाप प्रकट हुए—राजनीतिक तथा आर्थिक राष्ट्रवाद । लोकतन्त्र विदेशी माध्यम के द्वारा इस रूप में उत्पन्न हुआ कि उसकी पवित्र आत्मा युद्ध को समाप्त करने के बजाय उसे उत्तेजित करने लगी ।

इसमें भी हमारा पश्चिमी समाज अठारहवीं शती के पूर्व राष्ट्रीयतावाद के युग में सुखी था । एक-दो विशिष्ट अपवादों को छोड़कर पश्चिमी जगत् के संकुचित राज्य, नागरिकों की साधारण इच्छा की बुनियाद पर नहीं बने थे, वे राजवंशों की निजी सम्पत्ति थे । राजकीय युद्ध तथा राजकीय विवाह दो प्रणालियाँ थीं जिनके द्वारा ऐसे राज्य एक से दूसरे के हाथों में जाते थे और इन दो प्रणालियों में स्पष्टतः विवाह को लोग अधिक पसन्द करते थे । इस कारण हैप्सबर्ग के घराने की वैदेशिक नीति के सम्बन्ध में प्रशंसा की यह पंक्ति कही जाती थी कि 'दूसरों को युद्ध करने दो सुखमय आस्ट्रिया, तुम विवाह करो । *अठारहवीं शती के पहले पचीस सालों के तीन मुख्य युद्ध* के नाम—स्पेनी, पोलिश और आस्ट्रियाई उत्तराधिकार के युद्ध—यह बताते हैं कि युद्ध तभी हुआ जब वैवाहिक समस्याएँ नहीं सुलझ सकीं ।

विवाह वाली राजनीति में कुछ क्षुद्रता थी, इसमें सन्देह नहीं । आज के लोकतन्त्रात्मक

१ ई० गिबन द हिस्ट्री आव द डिक्लाइन एण्ड फाल आव द रोमन एम्पायर, अध्याय २८ से अन्तत ।

युग की भावना को यह बात घणास्पद मालूम होती है कि राजवशो के मेल-जोल से एक देश के निवासी एक स्वामी के अधिकार से दूसरे स्वामी के पास चले जायें जसे कोई गाँव अपने पशुधन के साथ एक स्वामी के पास से दूसरे के पास मोल लेने के बाद चला जाता है। किन्तु अठारहवी शती में इसका कुछ प्रतिकार भी था। इससे देश प्रेम की भावना कुछ कम अवश्य हो जाती थी, पर भावना के साथ ही तीव्रता भी कम हो जाती थी। स्टन के 'सेंटिमेंटल जर्नी' में विख्यात वणन है कि लेखक फ्रास चला गया। उसे यह ध्यान नही रहा कि फ्रास और इग्लड में सप्तवर्षीय युद्ध हो रहा है। फ्रेंच पुलिस से कुछ झगडे के बाद एक फ्रासीसी रईस ने, जिससे उसस कभी का परिचय नही था, बिना किसी कठिनाई के, उसे यात्रा करने की सुविधा कर दी। चालीस साल के बाद अमीस की सधि जब टूट गयी, नैपोलियन ने यह आज्ञा दी कि उस समय फ्रास में जितने अग्रेज अठारह और साठ साल के बीच की अवस्था के थे, नजरबद कर लिये जायें, तब यह काय नैपोलियन की पशुता का द्योतक समझा गया और जमा बाद में वेलिंग्टन ने कहा कि 'नपोलियन भला आदमी नही है' उसका एक उदाहरण माना गया। नैपोलियन ने इस काय के लिए अनेक तक दिये। किन्तु यह वही काय था जिसे आज बहुत ही उदार तथा दयालु सरकार स्वाभाविक और साधारण समझ कर करती है। आजकल का युद्ध 'पूण युद्ध' (टोटल वार) हो गया है। इसका कारण यह है कि सकुचित राज्य अब राष्ट्रीय लोकतत्र म परिवर्तित हो गये हैं।

पूण युद्ध से यह अभिप्राय है कि लडने वाले केवल वे चुनी हुई गोटियाँ नही है जिन्हें हम सनिक या नाविक कहत हैं बल्कि देश की सारी आबादी है। इस नयी दष्टि का आरम्भ हमें कहा मिलता है? सम्भवत उस क्रातिकारी युद्ध क अत में जो व्यवहार विजयी ब्रिटिश-अमरीकी उपनिवेशवा ने उन अमरीकियो के साथ किया जिन्होने अपनी मातभूमि (इग्लड) का पक्ष लिया था। ये इग्लैंड के भक्त-युद्ध के बाद पुरुष, स्त्री, बच्चे—बोरिया बिस्तर के साथ अपने घरो से निकाल बाहर कर दिये गये। यह व्यवहार उससे कितना भिन था जो बीस साल पहले ग्रेटब्रिटेन ने पराजित कनेडियनो के साथ किया। इतना नही कि वे अपने देश में रहने दिये गये, इतना ही नहा उनके विधान उनकी धार्मिक सस्थाएँ ज्यो की त्यो रहने दी गयी। 'एकदलवाद' (टोटालिटेरियनिज्म) का यह पहला उदाहरण महत्त्वपूण है क्योंकि अमरीकी उपनिवेशक पश्चिमी समाज के पहले लोकतत्रात्मक राष्ट है।[1]

आर्थिक राष्ट्रीयतावाद भी उतनी ही बडी बुराई है जितना राजनीतिक राष्ट्रीयतावाद। और वह उद्योगवाद की विकृति से उत्पन हुआ है जो सकुचित राज की सकीण सीमा में पनपा है।

पूव-औद्योगिक युग में भी आर्थिक लिप्सा तथा प्रतिद्वद्विता थी। आर्थिक राष्ट्रीयतावाद का क्लासिक उदाहरण अठारहवी शती के 'वाणिज्यवाद' (मरकेंटिलिज्म) में व्यक्त होता है जिसका उदाहरण यूट्रेट की सधि की वह धारा है जिसके अनुसार ग्रेट ब्रिटेन को स्पेनी अमरीकी

१ वास्तव में इसके पहल का एक उदाहरण है जब सप्तवर्षीय युद्ध के आरम्भ में ब्रिटिश अधिकारियों ने नोवास्कोशिया से फ्रेंच एकेडियनों को निकाल बाहर किया था। यद्यपि अठारहवीं शती की मान्यता से यह काय भीषण था, पर यह छोटी घटना थी और इसके लिए कुछ युद्धनीतिक कारण थे, या समझे गये थे।

उपनिवेश में दास-व्यापार का एकाधिकार लिया गया था। परन्तु अठारहवीं शती में आर्थिक संघर्ष का प्रभाव थोड़े वर्गों और कम लोगों पर पड़ता था। उस युग में जब कृषि ही प्रधान उद्योग था, प्रत्येक देश ही नहीं, प्रत्येक गाँव जीवन की प्रायः सभी आवश्यकताओं को अपने में पूरी कर लेता था। उस समय अंग्रेजों का बाजारों पर युद्ध व्यापारियों की क्रीड़ा कही जा सकती है जिस प्रकार प्रदेशों के लिए यूरोप के युद्ध 'राजाओं की क्रीड़ा' कहे गये हैं।

आर्थिक सन्तुलन की साधारण परिस्थिति उद्योगवाद के कारण गड़बड़ा गयी, क्योंकि लोकतन्त्र की समाज उद्योगवाद के भी अपनी कार्यप्रणाली में सार्वभौम (कास्मोपालिटन) है। यदि लोकतन्त्र का मूल तत्व भ्रातृ भावना है, जैसा कि फ्रांस की क्रान्ति ने भ्रम में घोषणा की थी, उद्योगवाद की भी प्रमुख अपेक्षा विश्वव्यापक सहयोग है। उद्योगवाद की सामाजिक व्यवस्था का अठारहवीं शती में इसके नेताओं ने अपनी नयी तकनीक के विख्यात सिद्धांत का इन शब्दों में उद्घोषित किया था निर्माण (मनुफैक्चर) की स्वतन्त्रता, विनिमय की स्वतन्त्रता। डेढ़ सौ साल हुए जब विश्व छोटी छोटी आर्थिक इकाइयों में बँटा हुआ था उद्योगवाद ने विश्व की आर्थिक संरचना (स्ट्रक्चर) को दो रूपों में बदलना आरम्भ किया और दोनों विश्व की एकता लाने की ओर थे। इसका अभिप्राय था कि आर्थिक इकाइयाँ कम हों और बड़ी हों और इनके बीच की सीमाएँ भी कम हो जायें।

इन प्रयत्नों के इतिहास पर यदि हम ध्यान दें तो हम देखेंगे कि गत शती के साठवें और सत्तरवें दशक में एक परावर्तन हुआ। उस समय तक लोकतन्त्र इस बात में उद्योगवाद का सहायक था कि आर्थिक इकाइयाँ कम हों और उनके बीच की सीमाएँ घटें। इस समय के बाद लोकतन्त्र तथा उद्योगवाद ने अपनी नीतियाँ उलट दीं और विरोधी दिशाओं की ओर काम करने लगे।

यदि हम आर्थिक इकाइयों के आकार पर पहले विचार करें तो हमें ज्ञात होगा कि अठारहवीं शती के अन्त में पश्चिमी जगत् में ग्रेट ब्रिटेन सबसे बड़ा मुक्त व्यापार (फ्री ट्रेड) क्षेत्र था। जिससे यह भी स्पष्ट होता है कि क्यों ग्रेट ब्रिटेन में ही औद्योगिक क्रान्ति आरम्भ हुई और देशों में नहीं। परन्तु सन् १७८८ ई० में ब्रिटेन के गत उपनिवेश उत्तरी अमरीका ने फिलाडेलफिया वाला विधान स्वीकार किया और राज्यों के बीच की व्यापारिक सीमाएँ मिटा दीं और स्वाभाविक विस्तार द्वारा सबसे बड़ा मुक्त व्यापार क्षेत्र स्थापित किया। उसका सीधा परिणाम यह हुआ कि अमरीका इस समय संसार का सबसे शक्तिशाली औद्योगिक देश है। कुछ वर्षों के बाद फ्रांस की क्रान्ति ने प्रान्तों के बीच की चुंगी (टैरिफ) की वे सीमाएं तोड़ दीं जिनके कारण फ्रांस की आर्थिक एकता न बन पायी थी। उन्नीसवीं शती के दूसरे चतुर्थांश में जरमनी ने आर्थिक 'जोल वेराइन' की स्थापना की जो राजनीतिक ऐक्य का अग्रदूत था। तीसरे चतुर्थांश में इटली में राजनीतिक एकता स्थापित होने के कारण साथ-ही साथ आर्थिक एकता भी स्थापित हो गयी। यदि हम इस एकता के कच-खुच कार्यक्रम को देखें अर्थात् चुंगी का कम करना और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के निमित्त संकुचित स्थानीय सीमाओं को तोड़ना, तो हम देखेंगे कि पिट ने, जो अपने को आदम स्मिथ का शिष्य कहता था, मुक्त आयात का आन्दोलन आरम्भ किया और जिसे उन्नीसवीं शती के अन्त में पील, कावडेन तथा ग्लेडस्टन ने पूरा किया। और संयुक्त राज्य (यूनाइटेड स्टेटस) अधिक चुंगी लगाने का प्रयोग करने के पश्चात् क्रमशः सन १८३२ से १८६० ई० तक बराबर

मुक्त व्यापार की ओर चला। फ्रांस में लुई फिलिप तथा तीसरे नेपोलियन और बिसमार्क के पूर्व के जरमनी ने भी यही राह पकड़ी।

फिर हवा का रुख बदला। लिबरल आत्मक राष्ट्रीयतावाद, जिसके फलस्वरूप जरमनी और इटली जिसने बहुत-से राज्यों का एकीकरण किया था वही अब अनेक राष्ट्र (मल्टी नेशनल) वाले राज्यों का हैप्सबुर्ग उसमानिया तथा रूसी साम्राज्य का बिलगाने का कार्य करने लगा। सन् १९१४–१८ ई० के महान् युद्ध के बाद डैन्यूबी राज्य मुक्त व्यापार की इकाई कई राज्यों में विभाजित हो गयी और प्रत्येक अपनी आर्थिक स्वाधीनता के लिए जी-तोड़ प्रयत्न करने लगा। कुछ और नये राज्य कटे छटे जरमनी और कटे छटे रूस के बीच बन गये जो नये आर्थिक काष्ठ हो गये। इस बीच एक पीढ़ी पहले से एक के बाद दूसरे देश मुक्त व्यापार के विरुद्ध जाने लगे थे और अंत में धारा ऐसी पलटी कि सन १९३१ ई० में ग्रेट ब्रिटेन में ही 'वाणिज्यवाद (मरकेंटिलिज्म) लौट आया।

मुक्त व्यापार के त्यागने के कारण आसानी से समझ में आ जाते हैं। ग्रेट ब्रिटेन के लिए मुक्त व्यापार उस समय अनुकूल था जब वह 'विश्व का कारखाना (वर्कशाप) था। यह प्रथा रुई के निर्यात करने वाले राज्यों के भी अनुकूल थी जो संयुक्त राज्य के शासन पर सन् १८३२–१८६० ई० तक नियंत्रण रखते थे। अनेक कारणों से इसी काल में यह फ्रांस तथा जरमनी के अनुकूल भी था। किन्तु ज्यों-ज्यों एक के बाद दूसरे राष्ट्र का औद्योगीकरण हो गया, संकुचित हितों के कारण उन्होंने अपने पड़ोसियों से प्राणघातक प्रतिद्वंद्विता करनी आरम्भ की और संकुचित राज की प्रभुसत्ता को कौन मना कर सकता था?

कावडेन तथा उसके साथियों ने गलत अनुमान किया था। उन्होंने ऐसी कल्पना की थी कि संसार के राज्य तथा राष्ट्र इस संसार भर के आर्थिक सम्बन्ध के इस नये घने बुने जाल में आकर नयी सामाजिक एकता में बँध जायेंगे। यह जाल अंधाधुंध उद्योगवादी नयी शक्तियाँ ब्रिटिश केन्द्र से बुन रही थीं। यदि यह कहा जाय कि विक्टोरियन मुक्त व्यापार का आन्दोलन प्रबुद्ध स्वार्थ का श्रेष्ठ कृतित्व था तो कावडेनियों के प्रति अन्याय होगा। यह आन्दोलन सृजनात्मक अन्तर्राष्ट्रीय नीति तथा नैतिक कल्पना की अभिव्यंजना थी। उसके योग्यतम अभिव्यक्ति करने वालों का लक्ष्य इससे कुछ अधिक था कि ग्रेट ब्रिटेन संसार के बाजार का अधिपति बन जाय। उनका यह भी लक्ष्य था कि धीरे धीरे एक ऐसी राजनीतिक विश्व-व्यवस्था का विकास हो जिसमें नये आर्थिक जगत् की व्यवस्था पनप सके। वे ऐसा राजनीतिक वातावरण उत्पन्न करना चाहते थे जिसमें वस्तुओं तथा सेवाओं का शांति और सुरक्षा के साथ विनिमय हो सके। और यह सुरक्षा बढ़ती चले और इसके साथ हर कदम पर विश्व भर के मानव के रहन सहन का स्तर ऊँचा हो जाय।

कावडेन का अनुमान इसलिए गलत निकला कि उसने यह भविष्य नहीं देखा कि संकुचित राज्यों की प्रतिद्वंदिता पर लोकतन्त्र तथा उद्योगवाद के संघात का क्या परिणाम होगा? उसने मान लिया था कि ये महान् शक्तियां (लोकतन्त्र तथा उद्योगवाद) उन्नीसवीं शती में भी वैसे ही सुपुप्त रहेंगी जैसे अठारहवीं में थीं। और सोचा था कि मनुष्यरूपी मकड़ियाँ जो विश्वव्यापी औद्योगिक जाल बुन रही हैं सारे संसार को अपनी बारीक तन्तु में फँसा लेंगी। वह समझता था कि लोकतन्त्र तथा उद्योगवाद में जो स्वाभाविक एकता लाने वाला तथा शान्तिदायक प्रभाव है उसकी अभिव्यक्ति अवश्य होगी और लोकतन्त्र से भ्रातृ भावना फैलेगी और उद्योगवाद से सहयोग

का प्रसार होगा। उसने यह नही सोचा कि ये ही शक्तियाँ, सकुचित राज्य के पुराने ढंग में अपने आप का ऐसा दबाव डालेंगी जिससे विध्वस हो जायगा और अराजकता फल जायगी। उसे यह नही स्मरण हुआ कि फ्रास की क्रान्ति के नेताओ ने जो भ्रातृ भावना की शिक्षा का प्रचार किया था उसका परिणाम इस युग का पहला राष्ट्रीयतावादी युद्ध था। उसने सोचा कि इससे प्रमाणित होगा कि अपने ढग का यह पहला ही नही अन्तिम युद्ध होगा। उसने यह नही सोचा कि अठारहवी शती के व्यापारिक अल्पतन्त्र (ओलिगार्की) जब अपेक्षाकृत महत्वहीन विलास की सामग्रियों के लिए युद्ध करते रहे, क्योकि उन दिनो इसी का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार होता रहा, तब प्रबल युक्ति द्वारा यह भी निश्चय था कि लोकतन्त्रात्मक राष्ट्र आर्थिक कारणो से एक दूसरे से अन्त तक लड़ेंगे क्योकि औद्योगिक क्रान्ति ने विलासी सामग्री के स्थान पर आवश्यकता की सामग्री का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार आरम्भ कर दिया था।

साराश यह है कि मचेस्टर वर्ग के अर्थ शास्त्रियो ने मानवी प्रवृत्ति को नहीं समझा। उन्होने नही समझा कि विश्व की आर्थिक व्यवस्था भी केवल आर्थिक बुनियाद पर नहीं स्थापित की जा सकती। सच्चे आदर्शवादी होने पर भी उन्होने नही सोचा कि 'मनुष्य केवल रोटी पर नही जीवित रहेगा।' यह घातक भूल ग्रेगरी महान् तथा पश्चिमी ईसाई जगत् के अन्य प्रतिष्ठापको ने की जिनसे विक्टोरियाई इगलैड ने आदर्श की प्रेरणा पायी थी। इन लोगो ने पारलौकिक विषयो के लिए अपने को समर्पित कर दिया किन्तु ससार की व्यवस्था की स्थापना के लिए चेष्टा नही की। ससार के लिए उनका सीधा साधा ध्येय ध्वस्त समाज के बचे खुचे लोगो को जीवित रखना ही था। ग्रेगरी ने जो बोझिल आर्थिक अट्टालिका उठाया वह आवश्यक तो थी किन्तु उसके लिए किसी ने साधुवाद तक नही किया और वह काम चलाऊ थी। किन्तु उसकी नीव उन्होने धार्मिक चट्टान पर रखी थी आर्थिक बालू पर नहीं। उनके परिश्रम का धन्यवाद करना चाहिए कि पश्चिमी समाज की नीव ठोस धार्मिक थी और चौदह शतियो से कम में एक अज्ञात कोने में आरम्भ होकर आज सर्वव्यापी महान् समाज बन गया। अगर ग्रेगरी के सीधे सादे आर्थिक भवन के लिए धार्मिक नीव की आवश्यकता पडी, तो इसी तर्क से हम समझ सकते है कि आज के ससार की और अधिक विशाल इमारत, जिसे बनाना हमारा आज कर्तव्य है, आर्थिक हितो के मलबे पर नही बन सकती।

निजी सपत्ति पर उद्योगवाद का सघात

निजी सम्पत्ति वह सस्था है जो उन समाजो में स्थापित है जहाँ आर्थिक कार्य-क्षेत्र की इकाई एक परिवार या घर साधारणत होता है। और ऐसे समाज में भौतिक सम्पत्ति के वितरण की यह बहुत सन्तोषप्रद प्रणाली है। किन्तु आज आर्थिक कार्य-कलाप की स्वाभाविक इकाई एक परिवार, एक गाँव या एक राष्ट्रीय राज्य नही है बल्कि मानव की सारी जीवित पीढी है। हमारे आधुनिक पश्चिमी आर्थिक उद्योगवाद के कारण परिवार की इकाई वस्तुत समाप्त हो गयी और परिणामस्वरूप परिवार की सस्था निजी सम्पत्ति भी समाप्त हो गयी। किन्तु व्यवहार में पुरानी सस्था चल रही है ऐसी परिस्थिति में उद्योगवाद ने निजी सम्पत्ति पर बलपूर्वक आक्रमण किया है। इसके कारण सम्पत्ति वाले व्यक्ति की सामाजिक शक्ति तो बढ गयी, किन्तु सामाजिक उत्तरदायित्व कम हो गया। परिणाम यह हुआ कि पूर्व-औद्योगिक काल में जो सस्था लाभकारी रही होगी उसमें बहुत-सा सामाजिक बुराइयाँ आ गयी है।

ऐसी परिस्थिति में आज हमारे समाज के सामने यह समस्या है कि निजी सम्पत्ति की पुरानी संस्था को उद्योगवाद की नयी शक्तियों में किस प्रकार सामंजस्यपूर्ण सम्बन्ध स्थापित किया जाय। यह शान्तिमय व्यवस्था इस प्रकार स्थापित की जाय कि उद्योगवाद के कारण निजी सम्पत्ति के विभाजन में जो अनिवार्य दोष आ गये हैं उन्हें दूर किया जाय और राज्य द्वारा निजी सम्पत्ति का समझ-बूझकर, बौद्धिक ढंग से और सुनीतिसंगत फिर से विभाजन किया जाय। मुख्य उद्योगों पर नियन्त्रण करके राज्य उस महान् शक्ति की रोक थाम कर सकता है जो ऐसे उद्योगों के निजी स्वामित्व के कारण लोगों के जीवन को वश में किये हुए है और सम्पत्ति पर अधिक टैक्स लगाकर सामाजिक सेवाओं द्वारा निर्धनता जनित दोषों को दूर कर सकता है। इस प्रणाली से साथ ही साथ एक और सामाजिक लाभ होगा कि राज्य युद्ध प्रेमी यन्त्र न रह जायगा, जो प्राचीन काल से उसका विशेष धर्म रहा है। वह सामाजिक कल्याण का साधन होगा।

यदि यह शान्तिमय नीति पर्याप्त न हुई तो निश्चय ही कोई न-कोई क्रान्ति हो जायगी जिससे किसी-न किसी ढंग का साम्यवाद उत्पन्न होगा और निजी सम्पत्ति प्रायः लोप हो जायगी। सामंजस्य के बदले यही व्यावहारिक विकल्प जान पड़ता है क्योंकि उद्योगवाद के संघात के कारण निजी सम्पत्ति के असमान वितरण की विभीषिका असह्य हो जायगी यदि सामाजिक सेवाओं द्वारा और अत्यधिक कर लगा कर इस कष्ट को कम न किया गया। परन्तु रूसी प्रयोग बताता है कि साम्यवादी क्रान्ति की औषधि रोग से कुछ ही कम घातक है। क्योंकि पूर्व औद्योगिक काल से निजी सम्पत्ति की संस्था की ऐसी विरासत मिली है कि उसे नष्ट कर देने से हमारे पश्चिमी समाज की सामाजिक परम्परा पर भयावह प्रभाव पड़े बिना नहीं रह सकता।

शिक्षा पर लोकतन्त्र का संघात

लोकतन्त्र के आगमन से बहुत बड़ा परिवर्तन यह हुआ कि समाज में शिक्षा का प्रसार बहुत हुआ। उन्नतिशील देशों में सार्वभौम अनिवार्य निःशुल्क शिक्षा के कारण शिक्षा प्रत्येक बालक का जन्मसिद्ध अधिकार हो गयी है। इसके विपरीत लोकतन्त्र प्रणाली के पहले शिक्षा विशिष्ट अल्प-संख्यक लोगों का एकाधिकार थी। शिक्षा की यह नवीन व्यवस्था ही एक राज्य का जो विश्व के राष्ट्रों में अपना स्थान चाहता है, प्रमुख आदर्श है।

जब सार्वभौम शिक्षा का पहले पहल आविर्भाव हुआ उस युग के उदार विचारकों ने उसका इसलिए स्वागत किया कि यह न्याय और प्रबुद्धता की विजय थी और आशा की गयी कि इसके द्वारा मानवता को सुख और कल्याण की प्राप्ति होगी। किन्तु आज यह देखा जाता है कि इन आशाओं ने उन रुकावटों का विचार नहीं किया जो इस सतयुग की राह में मिले। और जैसा कि और बातों में देखा जाता है इसमें भी ऐसी अदृष्ट बातें आ गयीं जो बहुत महत्त्वपूर्ण प्रमाणित हुईं।

एक अड़चन यह हुई कि जब शिक्षा 'जन-जन' के लिए हो गयी और अपनी परम्परागत सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से अलग हो गयी तब शिक्षा के परिणाम में क्षीणता आ गयी, जो स्वाभाविक था। लोकतन्त्र की सदाशयता में यह जादू नहीं है कि भोजन और भरण-पोषण की आवश्यकता पूरी करने का चमत्कार दिखला सके। जनगण द्वारा अर्जित बौद्धिक आहार में स्वाद और विटामिन नहीं होते। दूसरा रोड़ा यह था कि जब शिक्षा सबकी पहुँच तक हो जाती है तब शिक्षा के परिणाम

को उपयोगिता में परिवर्तित करने का प्रयत्न होता है। उस व्यवस्था में जिसमें शिक्षा उन्ही लोगो तक सीमित रहती है जिन्हें उत्तराधिकार में सामाजिक सुविधा मिली होती है या जिन्हें परिश्रम और बुद्धि का विशेष वरदान मिला होता है या तो शिक्षा अनधिकारी के पास चली जाती है या शिक्षा ग्रहण करने वाले को अपना सब कुछ देकर प्राप्त करना होता है। दो में से किसी परिस्थिति में वह लक्ष्य का माध्यम रहती है या तो सासारिक आकाक्षाओ के लिए साधन या ओछे मनोरजन के लिए। शिक्षा को जनता के मनोरजन के लिए प्रयोग करना और उन साहसी आदमियो का, जो ऐसे मनोरजन का प्रबन्ध करके लाभ उठाते हैं, आविर्भाव उसी समय से हुआ है जब से सार्वभौम प्रारम्भिक शिक्षा आरम्भ हुई। और इस नयी सम्भावना ने तीसरी रुकावट उत्पन्न कर दी है। सार्वभौम शिक्षा की रोटी ज्योही सबमें बाटी जाती है इधर उधर से बडे-बडे मगरमच्छ आ जाते है और बच्चो के लिए दिये गये भोजन को शिक्षको की आँखो के सामने ही साफ कर जाते है। इंग्लैड के शिक्षा के इतिहास की तारीखो से स्पष्ट हो जाता है। साधारण रूप से सन् १८७० ई० के फास्टर के अधिनियम के अनुसार सार्वभौम शिक्षा की व्यवस्था पूर्ण हुई। इसके बीस साल बाद उसी समय जब राष्ट्रीय स्कूलो से बच्चो की पहली पीढ़ी ने कुछ क्रय शक्ति प्राप्त कर ली उत्तेजना फैलाने वाले पत्रो (येलो प्रेस) का जन्म अनुत्तरदायी प्रतिभाशाली व्यक्तियो द्वारा हुआ जिन्होने यह भाप लिया था कि जिस उदारता और सामाजिक प्रेम के कारण यह प्रथा चली है उससे समाचार पत्रो के श्रीपति अच्छा लाभ उठा सकते हैं।

आधुनिक भावी एकदलवादी राष्ट्रीय राज्यो का ध्यान शिक्षा पर लोकतन्त्र की इस अशान्त कर देने वाली प्रतिक्रिया पर गया है। यदि प्रेस के श्रीपति अर्ध शिक्षित लोगो को निठल्ला मनोरजन देकर करोडो रुपये पैदा कर सकते है तो गम्भीर राजनीतिक उसी साधन से धन नही तो शक्ति तो अर्जित कर ही सकते है। आधुनिक अधिनायको ने प्रेस के श्रीपतियो को हटा दिया है और निजी उद्यम के अपरिपक्व तथा भ्रष्ट मनोरजन के स्थान पर वैसे ही अपरिपक्व और भ्रष्ट प्रचार की स्थापना की है। ब्रिटिश और अमरीकी शासनो की जिस व्यापारी अबाध नीति ने निजी सम्पत्ति अर्जित करने के अभिप्राय से अर्ध शिक्षित जनता की मानसिक दासता के लिए विस्तृत और कुशल यन्त्र का आविष्कार किया था, उसे राज्य के शासको ने अपना लिया और सिनेमा और रेडियो की सहायता लेकर अपने कुटिल स्वार्थ के लिए इन मानसिक उपकरणो का प्रयोग कर रहे हैं। नार्थक्लिफ के बाद हिटलर। यद्यपि हिटलर ही इस क्षेत्र में पहला व्यक्ति नहीं था।

इस प्रकार उन देशो में जहाँ लोकतन्त्रात्मक शिक्षा का आरम्भ हुआ है लोगो को दो बौद्धिक दासता के नीचे आ जाने का भय है या तो निजी शोषण के या सरकारी शासन के। यदि मानव की आत्मा की रक्षा करनी है तो एक ही ढग है। शिक्षा के मान-दण्ड को इस दर्जे तक उठाना चाहिए कि शिक्षार्थी शोषण तथा प्रचार से कम-से-कम स्पष्ट रूप से अपने को सुरक्षित रख सकें। यह कहना अनुचित न होगा कि काम साधारण नही है। प्रसन्नता की बात है कि हमारे पश्चिमी ससार में शिक्षण के एक निःस्वार्थ तथा प्रभावकारी माध्यम है जो इस समस्या से जूझ रहे हैं जैसे ब्रिटेन में वर्कर्स एजुकेशनल असोसिएशन और ब्रिटिश ब्राडकास्टिंग कारपोरेशन और अनेक देशो के विश्वविद्यालयों में विश्वविद्यालय की पढ़ाई के अतिरिक्त काम।

परा-आल्पाइन (ट्रास-आल्पाइन) सरकारो पर इटालियाई दक्षता का सघात

हमने अब तक जितने उदाहरण दिये हैं वे पश्चिम के इतिहास के आधुनिकतम काल के हैं। हम पाठको को केवल स्मरण कराना चाहते हैं कि इसी काल के इतिहास के एक पहले के अध्याय में एक पुरानी सस्था पर नयी शक्तियों के सघात से क्या समस्या उत्पन्न हुई। एक दूसरे सन्दर्भ में हमने इस पर विचार किया था। वह समस्या यह थी कि पुनर्जागरण काल में नगर राज्यो की राजनीतिक दक्षता का सघात जब परा आल्पाइन सामन्ती राजतन्त्र पर हुआ तब सामजस्यपूर्ण समझौता कैसे हो। सरल और निम्न कोटि के समझौते का ढग यह था कि राजतन्त्र नृशस शासक या निरकुश शासन में बदल जाते जिस ढग पर इटली के अनेक राज्य पराभूत हो गये थे। कठिन और अच्छा ढग यह होता कि परा आल्पाइन राज्यो के मध्ययुगीन विधान सभाओ (असेम्बली) को प्रतिनिधिक शासन (रिप्रेजेंटेटिव) मे परिवर्तित कर देते। ये उतने ही दक्ष होते जितने बाद का निरकुश शासन। और साथ ही साथ राष्ट्रीय पैमाने पर बसे उदार ढग का स्वराज्य भी हो जाता जैसा कि इटालियाई नगर राज्यो का अपने अच्छे दिनो में था।

जैसा कि हमने पहले एक जगह बताया है इगलैंड में ऐसे सामजस्यपूर्ण समझौते की उपलब्धि हुई। और इगलैंड पश्चिमी इतिहास के दूसरे अध्याय मे इस विषय का अग्रगामी हुआ जैसा कि इटली पहले अध्याय में था। वह इस मौलिकता में अल्पसख्यक था। राष्ट्रीय विचार के तथा चतुरट्यूडरो के समय राजतन्त्र निरकुशता में बदलने लगा किन्तु अभागे स्टुअर्टो के समय पार्लिमेंट राजा की बराबरी करने लगी और अन्त में उससे आगे बढ गयी। फिर भी दो क्रान्तियो के पहले सामजस्य नही स्थापित हो सका। किन्तु ये क्रान्तियाँ तथा दूसरी क्रान्तियो की तुलना में सयम और मर्यादा के साथ हुई। फ्रास में निरकुशता अधिक दिनो तक और अधिक मात्रा मे चली। उसका फल यह हुआ कि वहा क्रान्ति अधिक तीव्र हुई और उसका परिणाम था राजनीतिक अस्थिरता जिसका अन्त अभी नही दिखाई पडता। स्पेन और जरमनी में निरकुशता हमारे सामने तक रही है। इसके विरोध में लोकतन्त्रीय आन्दोलन बहुत दिनो तक रुके रहे। जिसके फलस्वरूप अनेक जटिलताएँ उत्पन्न हो गयी जिनका वर्णन इस अध्याय के पहले खण्ड में आ चुका है।

हेलेनी नगर-राज्यो पर सालोनी (सोलोनियन) क्रान्ति का सघात

पश्चिमी इतिहास मे दूसरे से तीसरे अध्याय के सक्रमण में इटालियाई राजनीतिक दक्षता का जो सघात पश्चिमी जगत् के परा आल्पाइन दशा पर हुआ उसी प्रकार की घटना हेलेनी इतिहास में हुई जब ईसा के पहले सातवी और छठी शती में हेलेनी जगत् के कुछ राज्यो ने आर्थिक दक्षता प्राप्त की। यह उस समय, जब जनसख्या की समस्या उत्पन्न हुई। क्योकि यह आर्थिक दक्षता एथेन्स अथवा उन राज्यो तक ही नहीं रह गयी जिन्होने इसे आरम्भ किया था। आगे बढती हुई सारे हेलेनी नगर राज्यो के अन्तरराष्ट्रीय तथा घरेलू राजनीति पर इसका सघात हुआ।

हम इस नयी आर्थिक नीति का वर्णन पहले कर चुके है और जिसे सालोनी क्रान्ति कह सकते है। भोजन का अन्न उपजाने के बजाय नकदी फसल (कैश क्राप) उपजाने का यह आवश्यक परिवर्तन किया गया और इससे व्यापार तथा उद्योग का विकास हुआ। धरती पर आबादी के इस दबाव से जो आर्थिक समस्या उत्पन्न हुई इससे दो राजनीतिक समस्याएँ भी उपस्थित हुइ। एक ओर इस आर्थिक क्रान्ति से एक नया सामाजिक वर्ग उत्पन्न हो गया अर्थात् नागरिक व्यापारी

और औद्योगिक श्रमिक, कारीगर, नाविक जिनके लिए राजनीतिक ढाँचे में स्थान निकालना आवश्यक था। दूसरी ओर यह कि एक नगर राज्य दूसरे से पहले से जो अलग थे, वे आर्थिक स्तर पर अन्योन्याश्रित हो गये। जब एक बार अनेक नगर राज्य अन्योन्याश्रित हो गये तब यह असम्भव था कि राजनीतिक स्तर पर वे अपने प्राचीन ढंग से बिना विपत्ति बुलाये अलग अलग रहते। पहली समस्या इंग्लैंड के विक्टोरियाई काल के समान है जब पार्लिमेंट में अनेक सुधारक विधेयकों से सुलझाया गया और दूसरी समस्या को मुक्त व्यापार आन्दोलन द्वारा सुलझाने का प्रयत्न किया गया। इन समस्याओं पर अलग अलग उसी क्रम से विचार किया जायगा जिस क्रम से पहले विचार किया गया था।

हेलेनी नगर राज्यों की निजी राजनीति में नये वर्गों के मताधिकार (एन फ्रैंचाइजमेंट) देने के लिए राजनीतिक संस्था की बुनियाद पर आमूल परिवर्तन की आवश्यकता पड़ी। परम्परागत वंश आधार को छोड़कर नया मताधिकार सम्पत्ति के आधार पर दिया गया। एथेन्स में यह परिवर्तन सोलन के युग से पेरिक्लीज के युग के बीच अनेक वैधानिक विकासों द्वारा किया गया। यह परिवर्तन पूर्ण रूप से और सरलता से हुआ। इसका प्रमाण यही है कि एथेनी इतिहास में निरंकुशों का कार्यकलाप बहुत कम है। क्योंकि नगर राज्यों के राजनीतिक इतिहास में यह साधारण नियम रहा है कि जब कभी उन्नतिशील समुदायों के अनुकूल चलने की गति में बाधा उपस्थित हुई, वर्गयुद्ध उपस्थित हो गया जिसकी समाप्ति तभी हुई जब कोई निरंकुश शासक उत्पन्न हो गया, जिसे रोम से ली हुई भाषा में हम अधिनायक कहते हैं। दूसरी जगहों के समान एथेन्स में भी सामंजस्य स्थापित करने की क्रिया में अधिनायकवाद आवश्यक मंजिल थी। किन्तु यहाँ पाइसिसट्राटस और उसके लड़कों की निरंकुशता थोड़े काल के लिए थी अर्थात् सोलानी और क्लाइस्थीनी सुधार के बीच का काल।

दूसरे यूनानी नगर राज्य इतनी सुगमता से समझौता नहीं कर पाये। कारिंथ में बहुत दिनों तक अधिनायकवाद रहा और साइराक्यूज में बार बार अधिनायकवाद स्थापित हुआ। कोरसाइरा की निरंकुशता को थ्यूसिडाइड्स ने अपने वर्णन में अमर कर दिया है।

अन्त में हम रोम की स्थिति पर विचार करें। यह अ-यूनानी समुदाय था जो ई० पू० ७२५–५२५ के बीच हेलेनी सभ्यता की प्रसारवादी नीति के फलस्वरूप हेलेनी संसार में सम्मिलित हुआ था। इस सांस्कृतिक परिवर्तन के बाद ही रोम में वे आर्थिक तथा राजनीतिक विकास आरम्भ हुए जो हेलेनी और हेलेनीकृत नगर राज्यों में साधारणतः स्वाभाविक थे। परिणामस्वरूप रोम को, एथेन्स के इस विकास के बाद उन सब अवस्थाओं का डेढ़ सौ वर्षों में सामना करना पड़ा। समय में इतना पिछड़ जाने के कारण रोम को कटु कठोर शांति का दण्ड भोगना पड़ा जिसमें एक ओर तो जन्म के अधिकार से शक्ति पाये हुए अभिजात (पैट्रीशियन) एकाधिकारी (पोटा पालिस्टस) थे और दूसरी ओर सामान्य वर्ग (प्लीबियन) जो संख्या और सम्पत्ति के बल पर अधिकार चाहते थे। यह रोमन शान्ति जो ईसा के पूर्व पाँचवीं शती से तीसरी शती तक चलती रही यहाँ तक पहुँची कि अनेक अवसरों पर सामान्य वर्ग आबादी की सीमा से बाहर चला गया जहाँ उसने सामान्य वर्ग का शासन राज्य के विरुद्ध स्थापित कर लिया। उसने राष्ट्र के अन्दर हो अपनी विधान सभा बनायी अपने अफसर नियुक्त किये। बाहरी आक्रमण के कारण ही सन् २८७ ई० पू० में रोमन राजनीतिज्ञता सफल हो पायी जब राज्य तथा राज्य विरोधी शासन को काम

सचालन के लिए राजनीतिक एकता स्थापित की गयी और इस वधानिक भीषणता का सामना किया गया । डेढ सौ साल बाद जब साम्राज्य की विजय हुई सन् २८७ ई० पू० के काम चलाऊ स्थिति का पता चला । अभिजात वग और सामाय वग को कच्चे ढग से मिलाकर जो ढीला ढाला विधान रोम ने स्वीकार किया था वह नये सामाजिक सामजस्य की उपलब्धि के लिए राजनीतिक दृष्टि से अपर्याप्त था और ग्रेची के उग्र तथा विफल शासन से परिणामस्वरूप दूसरी क्रान्ति (१३१–३१ ई० पू०) हुई जो पहले से भी भीषण थी । इस बार एक शती तक अपने को क्षत विक्षत करने के पश्चात् रोमन शासन में स्थायी अधिनायकत्व की स्थापना हुई । इस समय तक रोमन सेना ने हेलेनी ससार पर विजय प्राप्त कर ली थी और आगस्टस तथा उसके उत्तराधिकारी नृशस शासको के कारण हेलेनी समाज सावभौम राज्य बन गया ।

अपनी घरेलू समस्याओ का मूखता और अ।डीपन स बराबर सुल्झाने का प्रयत्न उनकी उम योग्यता के विपरीत था जा उन्होंने अपने विदेशी पराजित अधिकृत देशा के सगठन, निर्माण और सुरक्षित रखने में दिखायी । यह ध्यान में रखने की बात है कि जिन अथेनियना ने अपनी घरेलू राजनीति से सफलतापूवक क्रान्ति को समाप्त किया, वे ही पाँचवी शती ई० पू० में अन्तर्राष्ट्रीय सुव्यवस्था को नहीं स्थापित कर सके जिसकी उम समय वहाँ बहुत आवश्यकता थी जिसे रोमना ने चार सौ साल बाद उसी के अनुकरण में स्थापित करके सफलता प्राप्त की ।

जिस अन्तर्राष्ट्रीय काय में एथेन्स असफल हुआ वह उन समझौतो की दो समस्याओ में दूसरी थी जो सोलोनी क्रान्ति से उत्पन्न हुई थी । जिस राजनीतिक सुरक्षा की आवश्यकता हेलेनी अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिए आवश्यक थी उसके लिए बाधा थी, पुराने नगर राज्य की राजनीतिक प्रभुसत्ता । ईसा के पूव पाचवी शती के आरम्भ से यूनान का सारा राजनीतिक इतिहास इसी सघष में व्यक्त किया जा सकता है जो उसे नगर-राज्या की प्रभुसत्ता को समाप्त करने और उस सत्ता को स्थिर रखने की चेष्टा में चलता रहा । पाचवी शती की समाप्ति के पहले ही इस सत्ता की समाप्ति के विराध में जो प्रयत्न हुआ उससे हेलेनी सभ्यता नाश हो गयी और यद्यपि रोम ने एक ढग से इस समस्या को सुल्झाया, किन्तु वह ऐसे समय तक न हो पाया कि हेलेनी समाज को विनाश की राह मे रोक सके । इस समस्या का आदश समाधान यह था कि नगर राज्या के बीच आपसी स्वीकृति से उनकी प्रभुसत्ता सीमित कर दी जाय । दुभाग्य से इस प्रकार की सबसे प्रसिद्ध चेष्टा डीलियन लीग थी जो फारस के विरुद्ध विजय के अवसर पर एथेन्स ने अपने एजियन मित्रा के साथ बनायी थी । यह प्रयत्न इम कारण विकृत हो गया कि हेलेनी प्रभुत्व (हजिमनी) की पुरानी परम्परा उसमें प्रवेश कर गयी थी । यह प्रभुत्व ऐसा था कि उसके मुख्य सदस्य ने जबरदस्ती मित्रता की थी । डीलियन लीग एथेनी साम्राज्य हो गया और एथेनी साम्राज्य के कारण पेलोपोनेशियाई युद्ध हुआ । चार शती के बाद रोम सफल हुआ, जहा एथेन्स को विफलता हुई । जो दण्ड साधारण ढग से अपनी छोटी दुनिया को एथेनी साम्राज्य ने दिया वह उसकी तुलना में कुछ नही था, जो कठोर दण्ड रोमन साम्राज्य ने दो शतिया बाद हेलेनी तथा हेलेनीकृत समाज को दिया । यह हेनीबली युद्ध के बाद और आगस्टनी शान्ति के पहले हुआ ।

पश्चिमी ईसाई समाज पर सकुचित नागरिक राजनीति का सघात

हेलेनी समाज का इसलिए विनाश हुआ कि समय से रहते हुए उसने अपनी परम्परागत राजनीति की सकीणता का परित्याग नहीं किया । हमारा पश्चिमी समाज इसलिए निष्फल हुआ कि

अपने सामाजिक सगठन को, जो उसकी मौलिक प्रतिभा की सबसे मूल्यवान् देन थी, रक्षा नहीं कर सका। हमारे पश्चिम के इतिहास में मध्यकाल और आधुनिक काल के सक्रमण के अध्याय में सामाजिक परिवर्तन में सबसे महत्त्व की बात सकीर्ण राजनीतिक सगठन थी। अपनी पीढ़ी में इस परिवर्तन पर तन्मय होकर विचार करता आ रहा है क्योंकि उसके कारण बड़ी बुराइयाँ हुई है। आज यह समय के विपरीत है और उसके कारण हमारी बहुत हानि हुई है फिर भी हम देख सकते है कि पाँच सौ साल पुरानी (ईसाई जगत् की) मध्ययुगीन (ईसाई जगत् की) सार्वभौमिकता छोड़ देना अच्छा था। उसमें नैतिक महत्ता तो थी किन्तु यह प्राचीन काल का प्रेत था जो हेलेनी समाज से उत्तराधिकार में मिला था। और इस सार्वभौमिकता के सैद्धान्तिक आधिपत्य और मध्ययुगीन व्यावहारिक वास्तविक अराजकता में असामञ्जस्य अन्तर था। नयी सकीर्णता कम से कम इस बात में सफल हुई। छोटा आकाक्षाओं का यह सँभाल सकी। जो भी हो नयी शक्ति की विजय हुई। राजनीति में इसकी अभिव्यक्ति बहुत से स्वतन्त्र राज्यों में हुई, साहित्य में अनेक जनपदीय भाषाओं (वर्नाक्युलर) में हुई और धर्म में माध्यमिक पश्चिमी ईसाई धर्म से उसकी टक्कर हुई।

यह अन्तिम सघर्ष इस कारण इतना प्रचण्ड था कि ईसाई धर्म पोप के धर्मतन्त्र (हायरार्की) के कारण सुसगठित था और वह मध्ययुगीन व्यवस्था का सबसे उच्च अधिकारी था। सम्भवत समस्या का सामञ्जस्य उसी ढग पर हो सकता था जिस पोपों ने जब वे पूर्ण शक्तिशाली थे, खोजकर निकाला था। उदाहरण के लिए स्थानीय माँगों को पूरा करने के लिए सार्वजनिक पूजन विधि में लैटिन के बजाय स्थानीय भाषाओं के प्रयोग की आज्ञा रोमन चर्च ने दे दी। क्रोटो को उनकी भाषा में पूजन विधि के अनुवाद की आज्ञा इसलिए मिली क्योंकि रोम जनपद की सीमा उसे परम्परावादी पूरबी प्रतिद्वद्वी का सामना करना पड़ा जिसने अ-यूनानी लोगों को जो धर्म परिवर्तन करके आये थे यूनानी भाषा में पूजा करने पर विवश नहीं किया किन्तु यह उदारता दिखायी कि पूजन विधि का अनेक भाषाओं में अनुवाद हो गया। और भी। पोपगण, यद्यपि पवित्र रोमन सम्राटों से उनके सार्वभौम दावा का जी-तोड़ विरोध कर रहे थे उन्होंने आधुनिक प्रभुसत्ता वाली सरकारों के पूर्वजों से उनके सकुचित शासन के दावा के सम्बन्ध में बहुत समझौते का व्यवहार किया। वे सरकारें इग्लैण्ड फ्रास और कास्टिल की थी। दूसरे स्थानीय राज्यों को भी यह आज्ञा दे दी गयी कि अपनी-अपनी सीमा में धार्मिक सगठनों पर भी वे नियन्त्रण करे।

ईसाई धर्ममण्डल (होली सी) उस समय तक जिसको जितना मिलना चाहिए उसे उतना देने की बात समझ गया था जब सकीर्ण नव-सीजरवाद (निओ-सीजरिज्म) पूर्ण रूप से अपने अधिकार को स्थापित कर चुका था। और पोप तन्त्र अपने तथाकथित सुधार के एक सौ साल पहले लौकिक (सेकुलर) राजाओं से इस बात का समझौता करने में बहुत लगा रहा कि रोम और सकीर्ण राजनीतिक शासकों के बीच धार्मिक शासन पर किसका कितना नियन्त्रण रहे। यह समझौता उन विफल अखिल ईसाई धार्मिक सम्मेलनों का अनायोजित परिणाम था जो पन्द्रहवी शती के प्रथम पचास वर्षों में कान्स्टेन्स (१४१४–१८ ई०) तथा बेसेल में (१४३१–४९) में हुए।

सम्मेलन का यह आन्दोलन एक सजनात्मक चेष्टा थी कि सार्वभौम स्तर पर धार्मिक ससदीय प्रणाली स्थापित की जाय और उन लोगों के अधिकारों को प्रभावहीन कर दिया जाय जो

अनुत्तरदायी और कभी-कभी भद्दे ढग से उनका दुरुपयोग करते थे और अपने को ईसा मसीह का प्रतिनिधि कहते थे । इस प्रकार की धार्मिक ससदीय प्रणाली साम तो युग में मध्ययुगीन राजाओ के सकीण शासन पर निय त्रण करने में सफल हुई थी । किन्तु इस सम्मेलन के आ दोलन का जिन पोपा ने सामना किया उन्होंने अपना हृदय कठोर बना लिया और उनका दुराग्रह भयानक रूप से सफल हुआ । उसने सम्मेलन के आ दोलन को विफल कर दिया और समझौते के इस अंतिम अवसर को खो दिया । पश्चिमी ईसाई समाज इसके परिणामस्वरूप उस भीषण आन्तरिक फूट के कारण छिन्न भिन्न हो गया जो प्राचीन सावभौम शासन की भावना और नये सकीण शासन की ओर झुकाव के बीच उत्पन्न हो गयी ।

इसका परिणाम यह हुआ कि अनेक अशोभनीय क्रान्तियाँ और भीषणताएँ हुइ । पहले के सम्बन्ध में इतना बता देना पर्याप्त होगा कि धार्मिक सगठन (चच) टूट कर अनेक सगठनो में परिवर्तित हो गया । प्रत्येक दूसरे पर यह दोषारोपण कर रहा था कि दूसरा ईसाई मत का नही है और अनेक युद्ध तथा एक दूसरे के प्रति अत्याचार करने लगे । दूसरे के सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि लौकिक राजाओ ने दवी अधिकार (डिवाइन राइट) को अपना लिया जो पोपो का स्वत्व समझा जाता था जो पश्चिमी राज्यो में राष्ट्रीय राज्यो की प्रभुसत्ता के रूप में आज भी पूजा जाता है । डाक्टर जानसन ने व्यग्यात्मक ढग से कहा था कि देश भक्ति गुडो की अंतिम शरण है और जिसे नस कवेल ने अधिक विवेक से कहा, इतना ही पर्याप्त नही है । इस देशभक्ति ने पश्चिमी जगत् में ईसाइ धम का स्थान ले लिया है । जो भी हो, ईसाई धम की आवश्यक शिक्षा के विरुद्ध इससे अधिक क्या हो सकता था जैसा पश्चिमी ईसाई समाज पर इस सकीण राजनीतिक भावना के सघात का पडा । दूसरे उच्च ऐतिहासिक धर्मों की भी यही भावना है जो ईसाई धम की सावभौमिकता की भावना रही है ।

धम पर एकता की भावना का सघात

मानव के इतिहास के रगमच पर 'ऊँचे धम' जिनका मिशन सारी मानवता के लिए है अपेक्षाकृत बाद में आये ह । आदिम समाजो को इसका ज्ञान नही था, ये भावनाएँ उन समाजो में भी नहा पायी जाती जो सभ्यता के विकास के पथ पर थे । ये उस समय के बाद आयी जब कितनी ही सभ्यताएँ नष्ट हो चुकी और कितनी विनाश के पथ पर आ गयी । जब कुछ सभ्यताएँ विघटित होने लगी तब इस चुनौती का सामना करने के लिए इन ऊँचे धर्मों का ज म हुआ । ऐसी सभ्यताओ में, जिनका उदगम अनिश्चित है जसे आदिम समाजो की सभ्यताएँ ऐसी धार्मिक सथाएँ होती ह जिनका सम्बन्ध उन समाजो की लौकिक सस्थाओ से ही होता है और उसके आगे उनकी दृष्टि नही जाती । ऊँची आध्यात्मिकता के अनुकूल एसे धम नही होते, कि तु उनमें निषेधात्मक विशेषता होती है । वे विभिन्न धर्मों के बीच (जीओ और जीने दो) के भाव का पोषण करते हैं । ऐसी अवस्था में ससार में जब बहुत से राज्य होते ह, अनेक सभ्यताएँ होती ह तब स्वाभाविक परिणाम होता है कि बहुत से देवता हो और बहुत-से धम माने जाते ह ।

ऐसी सामाजिक परिस्थिति में आत्मा ईश्वर की सवव्यापकता तथा सवशक्तिमत्ता का अनुभव नही कर सकती किन्तु उस पाप का लालच उन्हें नही होता कि उन धम वालो के प्रति वे अनुदार हो, जो ईश्वर को विभिन्न रूपो तथा नामो से पूजते ह । मानवता के इतिहास की बहुत बडी विडम्बना है कि जिस प्रकाश ने यह भावना उत्पन्न की कि सब धर्मों का ईश्वर एक

है, और मनुष्य मात्र भाई है उसने इसी के साथ अनुदारता और उत्पीडन का भी जन्म दिया। इसका कारण यह है कि इस धार्मिक एकता की भावना के जो आध्यात्मिक नेता है वे इस इतना उच्च समझते है कि वे चाहते है कि ये विचार जितना जल्द हो सके यथार्थता में परिणत हो जायें। जहाँ जहाँ महान् धर्मों का प्रचार हुआ है अनुदारता तथा उत्पीडन का भयानक रूप निश्चय दिखाई दिया है। यही धर्मान्धता ई० पू० चौदहवी शती में मिस्र में दिखाई दी जब सम्राट इखनातान ने अपने एकेश्वरवाद की कल्पना को साधक करने का असफल प्रयत्न किया। यहूदी धर्म के उदय और विकास में इसी धर्मान्धता का भयानक प्रभाव दिखाई पडा। यहूदी पैगम्बरों ने धर्म में एकेश्वरवाद की जिस स्पष्ट और उदात्त आध्यात्मिक भावना की उपलब्धि की उसी के साथ उसका दूसरा रूप यह था कि अन्य सीरियाई समाज की पूजा की निन्दा की गयी। ईसाई धर्म के इतिहास में आन्तरिक मतभेद के साथ-साथ दूसरे धर्मों से भी बार-बार संघर्ष देखने में आता है।

इस प्रमाण से हम देखते है कि एकता की भावना का संघात जब धर्म पर होता है तब साथ ही साथ आध्यात्मिक भीषणता भी उत्पन्न होती है। इसका नैतिक सामंजस्य उदारता के आचार-व्यवहार से ही हो सकता है। उदारता के लिए उचित प्रेरणा यही है कि यह मान लिया जाय कि सभी धर्म एक आध्यात्मिक लक्ष्य की खोज में जा रहे है। हो सकता है कि इसमें कोई आगे बढ़ गया हो और उचित राह पर हो कोई ऐसा नही किन्तु जो उचित राह पर हो वह अनुचित धर्म वाले को उत्पीडित करे यह परस्पर विरोधी बातें है। 'उचित धर्म वाला दूसरे को उत्पीडित करके अपने को अनुचित बना देता है और अपने ही गुणों पर आघात पहुँचाता है।

इस ऊँचे स्तर की उदारता कम से-कम एक पैगम्बर ने अपने अनुयायियों के लिए निर्धारित की थी। मुहम्मद साहब ने आदेश दिया था कि उन यहूदियों तथा ईसाइयों के प्रति धार्मिक उदारता दिखायी जाय जिन्होंने ऐहलौकिक इस्लामी सत्ता के प्रति अपनी राजनीतिक अधीनता स्वीकार कर ली है। *क्योंकि ये दो धार्मिक समाज मुसलमानों की ही भाँति 'कुरान शरीफ* के लोग हैं। प्राचीन इस्लाम की उदार भावना की विशेषता है कि यद्यपि पैगम्बर ने कहीं इस बात का संकेत नही किया है फिर भी जो पारसी धर्मावलम्बी मुसलमान शासन के अधीन आ गये उनके प्रति भी उदारता का व्यवहार उन्होंने किया।

सत्रहवी शती की दूसरी अर्धशती में ईसाइयो ने जिस उदारता की भावना दिखायी उसका कारण नितान्त निन्दात्मक था। उसे 'धार्मिक उदारता' केवल इस अर्थ में कह सकते है कि धर्मों के प्रति उदारता थी। यदि हम उसके कारण की ओर देखें तो वह अधार्मिक उदारता थी। इस अर्ध शती में कैथोलिक और प्रोटेस्टेन्ट दलों ने एकाएक अपना संघर्ष समाप्त कर दिया इसलिए नही कि उनको विश्वास हो गया कि अनुदारता पाप है, बल्कि इसलिए कि दोनो समझ गये कि एक दूसरे को हम पराजित नही कर सकते। साथ ही साथ उन्हें इस बात का भी आभास हो गया कि हम जो बलिदान कर रहे है वह किसी धार्मिक सिद्धान्त के लिए नहीं। उत्साह (एन्थूजियाज्म, व्युत्पत्ति से जिसका अर्थ होता है ईश्वरत्व से भरा हुआ) की परम्परागत भलाई को उन्होंने त्याग दिया था और अब उसे वह बुराई समझने लगे। इसी अर्थ में एक अठारहवी शती के बिशप ने अठारहवी शती के एक अंग्रेज मिशनरी को 'दयनीय उत्साही' कहा था।

फिर भी चाहे जिस भावना से हो उदारता धमान्धता का उच्चतम प्रतिकार है। और जब एकता की भावना का सिद्धान्त धम पर होता है तब धमान्धता का जन्म हो ही जाता है। ऐसा नही होता तो उसके बदले में या तो अत्याचार की भीषणता हो अथवा धम की प्रतिक्रिया में क्रान्ति हो। ऐसी प्रतिक्रिया को ल्युक्रीशियस ने विख्यात पक्ति में कहा है—'धम की प्रतिक्रिया में कैसी कैसी भीषणता हुई है।' वाल्टेयर ने कहा है 'धम बुरी चीज है, ग्रेमबेरा ने कहा है 'धम सबका बैरी है।'

जाति पर धर्म का सघात

ल्युक्रीशियस तथा वाल्टेयर के इस कथन का कि धम स्वय बुराइ है—और सम्भवत मानव जीवन की मूल्भूत बुराई भारतीय तथा हिन्दू इतिहास से समथन किया जा सकता है। इन सभ्यताओ पर धम का जो विषाक्त प्रभाव पडा है उसका परिणाम जाति की सस्था है।

यह सस्था एक प्रकार का सामाजिक विल्गाव है जहा भौगालिक परिस्थितियावश दो अथवा दो से अधिक समुदाया में एक समुदाय दूसरा पर अपना आधिपत्य जमा लेता है और पराजित समुदाय को न तो नष्ट कर पाता है, न अपने में मिला पाता है। उदाहरण के लिए यूनाइटेड स्टेटस में दो जातिया उत्पन्न हो गयी है। एक बहुसख्यक गौर वण की जाति और दूसरी अल्पसख्यक श्याम वण की जाति। इसी प्रकार दक्षिण अफ्रीका में प्रभुता सम्पन्न अल्पसख्यक गौर वण समुदाय और बहुसख्यक नेग्रो समुदाय। उप महाद्वीप भारत में जान पडता है उस समय जातियो का निर्माण हुआ जब ईसा के दो हजार वष पहले के लगभग तथा कथित सिन्धु सभ्यता के क्षेत्र में यूरेशियाई खानाबदोश आर्यों का अभियान आरम्भ हुआ।

इससे पता चलता है कि जाति की सस्था से धम का कोई सम्बन्ध नही है। सयुक्त राज्य और दक्षिण अफ्रीका में जहा नेग्रो लोगो ने अपना प्राचीन धम छोड दिया है और शक्तिसम्पन्न यूरोपियनो का ईसाई धम ग्रहण कर लिया है। चर्चों का विभाजन जातिया की विभिनता के अनुसार नही हुआ, यद्यपि प्रत्येक धम के गोरे तथा काले सदस्य अपनी धार्मिक उपासना में एक दूसरे से अलग ह, उसी प्रकार जसे अपने और सामाजिक कृत्या में। इसके विपरीत भारतीय उदाहरण में, हम यह कल्पना कर सकते ह कि पहले से ही विभिन्न जातियो के धार्मिक आचार-व्यवहार अलग-अलग थे। किन्तु यह स्पष्ट है कि यह धार्मिक भेद उस समय तीव्र हुआ हागा जब भारतीय सभ्यता की बहुत अधिक धार्मिक भावना बढ गयी और वही उसने अपने उत्तराधिकारिया का सौंपी। यह भी स्पष्ट है कि *जाति पर धार्मिकता के सघात के कारण यह सस्था विनाश की गति* को प्राप्त हुई है। जाति सामाजिक दोष है किन्तु जब धम द्वारा उसका समथन होने लगता है और उसकी व्याख्या धम द्वारा होने लगती है तब यह दोष बडा भीषण रूप धारण करने लगता है।

जाति पर धम का जो सघात भारत में हुआ उसका ज्वलन्त प्रमाण अनुपम सामाजिक दोष अस्पश्यता' है। और ब्राह्मणा ने, जो प्रत्येक धार्मिक कृत्या में पुरोहित का काय करते ह कभी इसे मिटाने की चेष्टा नही की। यह दोष अभी तक वतमान है। हा, क्रान्ति द्वारा इस पर आक्रमण हुआ है।

जहाँ तक ज्ञात है, जाति पर पहला आक्रमण जैनधम के प्रवतक महावीर ने तथा बुद्ध ने ईसा के जन्म से ५०० वष पहले किया था। बौद्ध अथवा जन धम ने यदि भारतीय जगत् पर अपना

है, और मनुष्य मात्र भाई है, उसने इसी के साथ अनुदारता और उत्पीडन को भी जन्म दिया। इसका कारण यह है कि इस धार्मिक एकता की भावना के जो आध्यात्मिक नेता है वे इसे इतना उच्च समझते है कि वे चाहते कि ये विचार जितना जल्द हो सके वास्तविकता में परिणत हो जायें। जहा जहाँ महान् धर्मों का प्रचार हुआ है अनुदारता तथा उत्पीडन का भयानक रूप निश्चय दिखाई दिया है। यही धर्मान्धता ई० पू० चौदहवी शती में मिस्र में दिखाई दी जब सम्राट इखनातोन ने अपने एकेश्वरवाद की कल्पना को साधक करने का असफल प्रयत्न किया। यहूदी धर्म के उदय और विकास में इसी धर्मान्धता का भयानक प्रकाश दिखाई पडा। यहूदी पगम्बरो ने धर्म में एकेश्वरवाद की जिस स्पष्ट और उदात्त आध्यात्मिक भावना की उपलब्धि की उसी के साथ उसका दूसरा रूप यह था कि अन्य सीरियाई समाज की पूजा की निन्दा की गयी। ईसाई धर्म के इतिहास में आन्तरिक मतभेद के साथ साथ दूसरे धर्मों से भी बार-बार सघर्ष देखने में आता है।

इस प्रमाण से हम देखते है कि एकता की भावना का सघात जब धर्म पर होता है तब साथ-ही साथ आध्यात्मिक भीषणता भी उत्पन्न होती है। इसका नैतिक सामजस्य उदारता के आचार व्यवहार से ही हो सकता है। उदारता के लिए उचित प्रेरणा यही है कि यह मान लिया जाय कि सभी धर्म एक आध्यात्मिक लक्ष्य की खोज में जा रहे है। हो सकता है कि इसमें कोई आगे बढ गया हो और उचित राह पर हो, कोई ऐसा नही किन्तु जो उचित राह पर हो वह अनुचित धर्म वाले को उत्पीडित करे, यह परस्पर विरोधी बातें हैं। उचित धर्म वाला दूसरे को उत्पीडित करके अपने को अनुचित बना देता है और अपने ही गुणो पर आघात पहुँचाता है।

इस ऊँचे स्तर की उदारता कम से कम एक पगम्बर ने अपने अनुयायियो के लिए निर्धारित की थी। मुहम्मद साहब ने आदेश दिया था कि उन यहूदियो तथा ईसाइयो के प्रति धार्मिक उदारता दिखायी जाय जिन्होने ऐहलौकिक इस्लामी सत्ता के प्रति अपनी राजनीतिक अधीनता स्वीकार कर ली है। क्योकि ये दो धार्मिक समाज मुसल्मानो की ही भाँति 'कुरान शरीफ के लोग है। प्राचीन इस्लाम की उदार भावना की विशेषता है कि यद्यपि पैगम्बर ने कही इस बात का सकेत नही किया है, फिर भी जो पारसी धर्मावलम्बी मुसल्मान शासन के अधीन आ गये उनके प्रति भी उदारता का व्यवहार उन्होने किया।

सत्रहवी शती की दूसरी अर्धाशी में ईसाइयो ने जिस उदारता की भावना दिखायी उसका कारण नितान्त निन्दात्मक था। उसे धार्मिक उदारता केवल इस अर्थ में कह सकते है कि धर्मों के प्रति उदारता थी। यदि हम उसके कारण की ओर देखें तो वह अधार्मिक उदारता थी। इस अर्ध शती में कैथोलिक और प्रोटेस्टेन्ट दलो ने एकाएक अपना सघर्ष समाप्त कर दिया इसलिए नही कि उनको विश्वास हो गया कि अनुदारता पाप है बल्कि इसलिए कि दोनो समझ गये कि एक दूसरे को हम पराजित नहीं कर सकते। साथ-ही साथ उन्हें इस बात का भी आभास हो गया कि हम जो बलिदान कर रहे है वह किसी धार्मिक सिद्धान्त के लिए नहीं। उत्साह (एन्थूजियाज्म व्युत्पत्ति में जिसका अर्थ होता है ईश्वरत्व से भरा हुआ) की परम्परागत भर्त्सना की। उन्होने त्याग दिया था और अब उसे वह बुराई समझने लगे। इसी अर्थ में एक अठारहवी शती के बिशप ने अठारहवी शती के एक अग्रज मिशनरी को दयनीय उत्साही कहा था।

फिर भी चाहे जिस भावना से हो उदारता धर्मांधता का उच्चतम प्रतिकार है। और जब एकता की भावना का सिद्धान्त धम पर होता है तब धर्मांधता का जन्म हो ही जाता है। ऐसा नही होना तो उसके बदले में या तो अत्याचार की भीषणता हो अथवा धम की प्रतिक्रिया में क्रान्ति हो। ऐसी प्रतिक्रिया को ल्युक्रीशियस ने विख्यात पक्ति में कहा है—'धम की प्रतिक्रिया में कैसी कैसी भीषणता हुई है।' वाल्टेयर ने कहा है 'धम बुरी चीज है', ग्रेमबेरा ने कहा है 'धम सबका बैरी है।'

जाति पर धर्म का सघात

ल्युक्रोशियस तथा वाल्टेयर के इस कथन का कि धम स्वय बुराई है—और सम्भवत मानव जीवन की मूलभूत बुराई भारतीय तथा हिंदू इतिहास से समथन किया जा सकता है। इन सभ्यताओ पर धम का जो विपाक्त प्रभाव पडा है उसका परिणाम जाति की सस्था है।

यह सस्था एक प्रकार का सामाजिक विलगाव है जहा भौगालिक परिस्थितियावश दो अथवा दो से अधिक समुदायो में एक समुदाय दूसरो पर अपना आधिपत्य जमा लेता है और पराजित समुदाय को न तो नष्ट कर पाता है, न अपने में मिला पाता है। उदाहरण के लिए यूनाइटेड स्टेटस में दो जातियाँ उत्पन्न हो गयी ह। एक बहुसख्यक गौर वण की जाति और दूसरी अल्पसख्यक श्याम वण की जाति। इसी प्रकार दक्षिण अफ्रीका में प्रभुता सम्पन्न अल्पसख्यक गौर वण समुदाय और बहुसख्यक नेग्रो समुदाय। उप महाद्वीप भारत में जान पडता है उस समय जातियो का निर्माण हुआ जब ईसा के दो हजार वष पहले के लगभग तथा-कथित सिन्धु सभ्यता के क्षेत्र में यूरेशियाई खानाबदोश आर्यों का अभियान आरम्भ हुआ।

इससे पता चलता है कि जाति की सस्था से धम का कोई सम्बन्ध नही है। सयुक्त राज्य और दक्षिण अफ्रीका में जहा नेग्रो लोगो ने अपना प्राचीन धम छोड दिया है और शक्तिसम्पन्न यूरोपियनो का ईसाई धम ग्रहण कर लिया है। चर्चों का विभाजन जातियो की विभिन्नता के अनुसार नही हुआ, यद्यपि प्रत्येक धम के गोरे तथा काले सदस्य अपनी धार्मिक उपासना में एक दूसरे से अलग ह उसी प्रकार जसे अपने और सामाजिक कृत्यो में। इसके विपरीत, भारतीय उदाहरण में, हम यह कल्पना कर सकते है कि पहले से ही विभिन्न जातियो के धार्मिक आचार-व्यवहार अलग-अलग थे। किन्तु यह स्पष्ट है कि यह धार्मिक भेद उस समय तीव्र हुआ होगा जब भारतीय सभ्यता की बहुत अधिक धार्मिक भावना बढ गयी और वही उसने अपने उत्तराधिकारियो को सौंपी। यह भी स्पष्ट है कि जाति पर धार्मिकता के सघात के कारण यह सस्था विनाश की गति को प्राप्त हुई है। जाति सामाजिक दोष है किन्तु जब धम द्वारा उसका समथन होने लगता है और उसकी व्याख्या धम द्वारा होने लगती है तब यह दोष बडा भीषण रूप धारण करने लगता है।

जाति पर धम का जो सघात भारत में हुआ उसका ज्वलन्त प्रमाण अनुपम सामाजिक दोष 'अस्पृश्यता' है। और ब्राह्मणो ने, जो प्रत्येक धार्मिक कृत्यो में पुरोहित का काय करते ह, कभी इसे मिटाने की चेष्टा नही की। यह दोष अभी तक वतमान है। हाँ, क्रान्ति द्वारा इस पर आक्रमण हुआ है।

जहाँ तक बात है जाति पर पहला आक्रमण जनधम के प्रवतक महावीर न तथा बुद्ध ने ईसा के जन्म से ५०० वष पहले किया था। बौद्ध अथवा जैन धम ने यदि भारतीय जगत् पर अपना

प्रभाव जमा लिया होता तो सम्भवत जाति की संस्था समाप्त हो गयी होती। किन्तु जैसी घटना घटी, भारतीय पतन तथा विनाश के अंतिम अध्याय में सार्वभौम धर्म स्थापित करने का कार्य हिंदू धर्म ने किया। यह हिंदू धर्म नये तथा पुराने प्रयोगो का मिश्रित एक नया भव्य रूप था। इस हिंदू धर्म में पुरानी जो बातें थी उनमें एक संस्था जाति की भी थी। इतना ही नही कि हिंदू धर्म ने इस पुरानी संस्था को ग्रहण किया, उसने इसका विस्तार किया। और आरम्भ से ही हिंदू सभ्यता इस बोझ को अपने ऊपर धारण किये हुए है और यह बोझ इतना भारी हो गया जितना इसके पूर्वजो पर कभी नही था।

हिंदू सभ्यता के इतिहास में जाति के विरुद्ध समय-समय पर अनेक विद्रोह हुए और विद्रोही दूसरे धर्मों से आकृष्ट होकर हिंदू धर्म से अलग हो गये। इस प्रकार का बिलगाव हिंदू सुधारको ने किया और उन्होंने नया सम्प्रदाय (चर्च) स्थापित किये जिसमें हिंदू धर्म के दोषो को हटाया और विदेशी धर्मों की कुछ बातें ली। उदाहरण के लिए नानक जिन्होंने (१४६९–१५३८ ई०) सिख धर्म की स्थापना की, इस्लाम से कुछ बातें ली, और राजा राममोहन राय (१७७२-१८३३) ने ब्रह्म समाज की स्थापना की जिसमें हिंदू धर्म और ईसाई धर्म की सम्मिलित बातें थी। इन दोनो धर्मों में जाति नही मानी जाती। दूसरे विद्रोहियो ने हिंदू धर्म को बिल्कुल छोड दिया और या तो मुसलमान हो गये या ईसाई हो गये। ऐसा परिवर्तन उन्ही क्षेत्रो में अधिक हुआ जहाँ नीच जातियां या अछूतो की संख्या अधिक थी।

'अस्पृश्यता' की भीषणता का यही क्रांतिकारी उत्तर है जो जाति पर धर्म के आघात के कारण हुआ है। और ज्यो-ज्यो भारत की जनता पश्चिम के आर्थिक, बौद्धिक तथा नैतिक विक्षोभ से प्रभावित होती जाती है, अछूतो में परिवर्तन की जो क्षीण भावना है वह बढती जायगी जब तक, ब्राह्मणो के विरोध होने पर भी, हिंदू समाज के कुछ ऐसे नेता धार्मिक तथा सामाजिक भावनाओ का सामंजस्य न स्थापित करें जो महात्मा गांधी की राजनीतिक तथा सामाजिक आदर्शों का समर्थन करते है।

श्रम-विभाजन पर सभ्यता का संघात

हमने पहले ही देख लिया है कि आदिम समाज श्रम विभाजन से अनभिज्ञ न था। उसके उदाहरण में हमें धातु के काम करने वाले, चारण पुरोहित, दवा देने वाले तथा इसी प्रकार के और वर्ग मिलते है। किन्तु सभ्यता का संघात श्रम विभाजन पर ऐसा होता है कि साधारण विभाजन इतना अधिक होने लगता है कि क्रमागत सामाजिक ह्रास ही नही होने लगता उसका कार्य असामाजिक होने लगता है। इसका प्रभाव सर्जनात्मक अल्पसंख्यक तथा असर्जनात्मक बहुसंख्यक पर समान रूप से पडता है। सर्जनात्मक वर्ग रहस्यवादी होता जाता है और साधारण जनता का किसी एक ओर झुकाव (स्पेशलाइज़ेशन) हो जाता है।

रहस्यवादिता उस असफलता का लक्षण है जो सर्जनात्मक व्यक्ति को अपने जीवन-कृत्यो में मिलता है। और उसे 'अलग हो जाने और लौटने की स्पंदमान आरम्भिक गति की तीव्रता कह सकते है जो इस कार्य को पूरा करने में सफल न हो सकी। इस प्रकार जो लोग असफल हुए उन्हें यूनानी लोग इडियट्स' कहते थे। पाँचवी सदी में यूनानी भाषा में 'इडियोट्स' उस महान् व्यक्ति को कहते थे जो अपने को सबसे अलग तथा अपने में ही रहने का सामाजिक अपराध

करता था और अपने गुणा से सवसाधारण को लाभ नही पहुँचाता था। पेरिक्लीज के युग के एथेन्स में इस प्रकार का व्यवहार किस दृष्टि से देखा जाता था इसी से समझा जा सकता है कि आजकल की भाषा में इस शब्द से उत्पन्न शब्द 'इडियट' का अथ पागल होता है। किन्तु आधुनिक पश्चिमी समाज के 'इडियोटाइ' पागलखाने में नही मिलते। इनमें से एक वग बुद्धिमान मानवा का, पतित होकर अथलोलुप मानव हो गया जिसका व्यग्य डिकेन्स ने 'ग्रड ग्राइड' तथा बौण्डरबी के रूप में किया है। दूसरा वग दूसरे छोर पर है जो अपने को ज्ञान का ठेकेदार समझता है परन्तु वास्तव में वह तिरस्कार के योग्य है। ये बौद्धिक तथा कला विशेषज्ञ दम्भी और घमण्डी व्यक्ति ह जिनका विश्वास है कि कला कला के लिए है। जिसका व्यग्य गिल्बट ने बन्थान के रूप में किया है। डिकेन्स और गिल्बट के समय के अन्तर से यह प्रमाणित होता है कि ग्रैड ग्राइड और बौडरबी वग के लोग पूव विक्टोरियाई इगलण्ड में वतमान थे ब थान वग उत्तर विक्टोरियाई काल में। ये दोनो विरोधी सीमाओ पर ह किन्तु हमारी धरती के उत्तरी तथा दक्षिणी ध्रुवा के सम्बध में बताया गया है कि दोना सुदूर विपरीत दिशाओ में ह कितु दोनो के जलवायु की भीषणता समान है।

अब हमें उस पर विचार करना है जिसे हमने झुकाव कहा है। यह वह प्रभाव है जो श्रम विभाजन पर सभ्यता के सघात के कारण असजनात्मक बहुसख्यको के जीवन पर पडता है।

जब सजनशील व्यक्ति अलग हो जाने के बाद फिर लौटता है और अपने साथियो से पुन सम्पक स्थापित करता है तब उसके सामने यह समस्या उपस्थित होती है कि साधारण जन की आत्मा को उसी स्तर पर ऊँचा उठाये जिस स्तर पर उसकी आत्मा पहुँच चुकी है। और ज्यो ही इस प्रश्न को हल करने की चेष्टा करता है, उसके सामने यह तथ्य उपस्थित होता है कि इच्छा, शक्ति, हृदय और उत्साह होते हुए साधारण जनता उस ऊँचे स्तर पर नही उठ सकती। ऐसी स्थिति में उसे कोई सरल उपाय ढूढने का लालच हो सकता है। अर्थात वह सारे व्यक्तित्व के विकास का प्रयत्न न करके मनुष्य के किसी एक गुण को ऊपर उठाने की चेष्टा करता है। इस कल्पना के अनुसार इसका अथ होता है कि मानव का विकास किसी एक झुकाव की ओर होता है। इस प्रकार का परिणाम यान्त्रिक तकनीक के धरातल पर हमें सरलता से मिलता है क्योकि किसी सस्कृति के सब तत्वो में से उसकी यान्त्रिक स्थान का अलग करना तथा उससे सम्पक स्थापित करना सबसे सरल है। किसी ऐसे व्यक्ति को मिस्त्री बनाना सरल नही है जिसकी आत्मा और प्रिथाओ में बबर तथा आदिम हो। किन्तु और शक्तियो को इसी प्रकार विशेष बना सकते ह और अतिविस्तत कर सकते ह। अपनी पुस्तक 'कलचर एण्ड अनार्की (१८६९) मे मथ्यु आनल्ड न, धमशील मध्यवर्गीय नान-कनफर्मिस्ट अग्रज फिलिस्तीनो की जो हिब्रू काल के अवरुद्ध जाल में रहते ह यह आलोचना की है कि इन लोगो ने ऐसे मिथ्या धार्मिक विचारो में विशेषता अर्जित की है जिसे वे ईसाई धम समझते ह। और दूसरे हेलेनी गुणो का तिरस्कार करते ह जिनसे मनुष्य का सन्तुलित व्यक्तित्व निर्मित होता है।

इस प्रकार के झुकाव को हमने उस समय देख लिया था जब हमने इस पर विचार किया था कि अल्पसख्यको का जब दमन किया जाता है तब वे किस प्रकार इसका सामना करते ह। हमने देखा कि जब शासतावग इन अल्पसख्यको को पूरी नागरिकता के अधिकार नही दिये जाते तब जो काय उनके लिए बच रहते हैं उन्ही में वे उन्नति करते ह और विशिष्टता प्राप्त करत ह।

और हमने उस असाधारण शक्ति को आश्चर्य से देखा और प्रशंसा की। इस शक्ति से जान पड़ता है कि अल्पसंख्यक मानव प्रकृति की अजेयता को प्रकट करते हैं। साथ ही साथ हम इसे भी नही भूल सकते कि इनमें से कुछ अल्पसंख्यक—ल्वेनटीन, फैमरियाट, आरमीनियन और यहूदी—और मनुष्यो से अच्छे नही हैं तो बुरे भी नही हैं। यहूदियो और अ-यहूदियो के बीच जो असोभनीय सम्बन्ध रहा है वह महत्त्वपूर्ण उदाहरण है। अ-यहूदी अपने अ-सेमेटिक (एण्टी सेमेटिक) साथी गोय्यिम् के व्यवहार पर जब लज्जित होता है और घृणा प्रकट करता है तब साथ ही यह स्वीकार करने पर उसे उलझन भी होती है कि उस व्यंग्य में भी कुछ तथ्य है जो यहूदी को बहकाने वाले ने अपने पात्रत्व के सम्बन्ध में चित्रित किया है। दुख इस बात का है कि जो दमन की प्रतिक्रिया उत्पीडित अल्पसंख्यको में दमन का सामना करने का साहस उत्पन्न करती है उसी दमन से उनकी मानव प्रकृति भी विकृत हो जाती है। जो बात उत्पीडित अल्पसंख्यको के सम्बन्ध में ठीक है वही उन बहुसंख्यको के सम्बन्ध में ठीक है जिन्होने तकनीकी विशेषता प्राप्त की है। यह बात ध्यान में रखने की है क्योकि हम देखते हैं कि पाठ्यक्रम में उदार (लिबरल) शिक्षा के स्थान पर, जो यद्यपि कुछ अव्यावहारिक थी, तकनीकी शिक्षा स्थान लेती चली जा रही है।

पाँचवी शती में यूनानी इस झुकाव के लिए एक शब्द 'बेनेंडिया' का प्रयोग करते थे। बनेंडास' वह व्यक्ति था जिसने किसी विशेष तकनीक में विशेष योग्यता अर्जित की थी और सामाजिक प्राणी के लिए जो अन्य साधारण गुणो की आवश्यकता होती है उसे तिरस्कृत कर दिया था। इस तकनीक का जो लोगो के मन में तात्पर्य था वह यही कि यह कोई हस्त-कौशल अथवा यान्त्रिक व्यापार है जिसे निजी लाभ के लिए वह व्यक्ति प्रयोग कर रहा है। किन्तु हेलेनी लोगो को 'बेनेंडिया' के प्रति जो घृणा थी वह इससे अधिक थी। और हलेनियो के मन में सभी व्यवसायो (प्रोफेशन) के प्रति घृणा हो गयी थी। उदाहरण के लिए सैनिक तकनीक में स्पार्टनो ने जो विशेषता अर्जित की थी वह बेनेंडिया का साक्षात् स्वरूप था। बडा राजनीतिज्ञ अथवा देश का रक्षक भी इस आरोप से वंचित नही हो सकता था यदि वह जीवन की कला तथा जीवन के और सर्वरूपी (आल राउण्ड) गुणो से वंचित था।

'परिष्कृत तथा सुसंस्कृत समाज में उदार शिक्षा वाले थेमिस्टाक्लीज पर यह दोष लगाया जाता था (क्योकि उसमें सर्वरूपी योग्यताओ का अभाव था) कि वह किसी वाद्य यन्त्र का भी प्रयोग नही जानता था किन्तु यदि उसके हाथो में कोई छोटा और अनात देश दे दिया जाय तो वह उसे महान् और विख्यात देश बना देगा।'[1] इसके विपरीत बेनेंडिया का हल्का उदाहरण दिया जा सकता है। कहा जाता है वियना में हडन, मोजार्ट और बीथोवेन के स्वर्ण युग में, हैप्सबुर्ग का एक सम्राट और उसके प्रधान मन्त्री अवकाश के समय उनके साथ संगीत में योगदान करते थे।

बनेंडिया के भयावह परिणाम के प्रति हेलेनियो की इस असहिष्णुता और समाजो की संस्थाओ में भी पायी जाती है। उदाहरण के लिए यहूदियो का सबत और ईसाइयो का रविवार, सात दिनो में एक दिन इसलिए अलग कर दिया गया है कि छ दिनो तक वे अपने विशेष व्यवसाय में निरन्तर लगे रहते हैं तो एक दिन अपने कर्ता को स्मरण रखें और साधारण मानव का जीवन

1 प्लूटार्क लाइफ आव थेमिस्टाक्लीज, अध्याय २।

बितायें। यह केवल सयोग की घटना नही है कि उद्योगवाद की प्रगति के साथ साथ इग्लैंड में आयोजित खेल-कूद और मनोरजन की भी उन्नति हुई। इस प्रकार के मनोरजन जान-बूझकर आत्महत्ता तक्नीकी विशेषताओ के विरुद्ध सन्तुलित करने के लिए स्थापित किये गये है, जो उद्योगवाद के श्रम विभाजन के कारण उत्पन हो गयी है।

दुर्भाग्यवश खेल कूद द्वारा उद्योगवाद के जीवन को सन्तुलित करने की यह चेष्टा सफल न हो सकी क्योकि खेल कूद में भी उद्योगवाद की भावना प्रवेश कर गयी है। पश्चिमी ससार में आजकल व्यावसायिक खेलाडी (एथलीट) बन गये हैं जिन्होने विशेषता प्राप्त की है और औद्योगिक विशेषज्ञो से अधिक कमा रहे है। 'बेवेन्डिया' के ये भीषण उदाहरण है। इस पुस्तक के लेखक ने सयुक्त राज्य के दो कालेजो के क्षेत्रों में दो फुटबाल के मदानो को देखा। एक में विद्युत् के प्रकाशयन्त्र की व्यवस्था थी जिससे रात और दिन बारी-बारी से बराबर अभ्यास कराकर फुटबाल के खेलाडियो का निर्माण किया जाय (मनुफ्क्चड)। दूसरे मदान के ऊपर छत बनी हुई थी कि किसी भी ऋतु में खेल चलता रहे। कहा जाता है यह ससार की सबसे बडी छत है और इसके बनाने में कल्पनातीत धन लगा है। मदान के चारो ओर पलगो का प्रबन्ध किया गया है जिसमें थके अथवा घायल खेलाडी आराम कर सकें। इन दोनो क्षेत्रो में मने देखा कि इन खेलाडियो की सख्या सारे छात्रो की सख्या का अतिसूक्ष्म भाग था। मुझे यह भी बताया गया कि ये लडके मच खेलने की उसी आशका से प्रतीक्षा कर रहे हैं जिस भय से उनके बडे भाई १९१८ के युद्ध में खाइयो में गये थे। सच पूछिए तो यह ऐंग्लो सक्सन फुटबाल खेल कूद में नही गिना जा सकता।

हेलेनी जगत् के इतिहास में भी इसी प्रकार के विकास का पता लगता है। जहा कुलीन शौकिया (अमेच्यूर) खेलाडियो के स्थान पर, जिनकी विजय की प्रशसा पिंडार ने अपनी कविता में की है, व्यावसायिक खेलाडियो की टीम आ गयी। और सिकन्दर के पश्चात् युग में पारशिया से स्पेन तक जो नाटक के खेल यूनाइटेड आरटिस्ट्स लिमिटेड द्वारा दिखाये जाते थे एथेन्स में डायोनीसियस के अपने रगमच पर दिखाये जाने वाले नाटको से उतने ही भिन्न थे जितने आजकल के नवीन नाटक-गृहो के नाटक मध्ययुगीन रहस्य नाटको (मिस्ट्री प्ले) से।

तब इसमें आश्चर्य नही है कि जब सामाजिक दोष इस निराशाजनक ढग से सन्तुलन को असफल कर देते है तब दार्शनिक लोग ऐसी क्रान्तिकारी योजना की कल्पना करते है जिससे ये दोष लोप हो जायें। हेलेनी सभ्यता के पतन की पहली पीढी के बाद, अफलातून ने बेवेन्डिया को समाप्त करने के लिए यह योजना बनायी है कि अन्तर्देशीय यूटोपिया (एक आदर्श देश) का निर्माण किया जाय जहा सागर द्वारा दूसरे देशो से व्यापार न हो सकेगा और देश के अन्दर भी उतनी ही आर्थिक व्यवस्था रहेगी कि भोजन भर के लिए किसान धान्य उत्पन्न कर सकें। अमरीकी आदर्शवाद के, जो दुख की बात है अपनी राह से भटक गया है, मूल स्रोत टामस जेफरसन ने उन्नीसवी शती के आरम्भ में ऐसा ही सपना देखा था। उसने लिखा है—'यदि मेरे सिद्धान्तो का प्रयोग हो तो मैं चाहूँगा कि लोग न तो व्यापार करें न समुद्र की यात्रा करें। बल्कि यूरोप से उनका सम्बन्ध वैसा ही होना चाहिए जसा यूरोप से चीन का।'[1] (जिसके बन्दरगाह

1 डब्ल्यू० ई० उडवड द्वारा उद्धरित ए न्यू अमेरिकन हिस्ट्री, पृ० २६०।

और हमने उस असाधारण शक्ति को आश्चर्य से देखा और प्रशंसा की । इस शक्ति से जान पड़ता है कि अल्पसंख्यक मानव प्रकृति की अजेयता को प्रकट करते हैं । साथ ही साथ हम इसे भी नहीं भूल सकते कि इनमें से कुछ अल्पसंख्यक—लेवेनटीन, फनेरियाट, आरमीनियन और यहूदी—और मनुष्यों से अच्छे नहीं हैं तो बुरे भी नहीं हैं । यहूदियों और अ-यहूदियों के बीच जो अशोभनीय सम्बन्ध रहा है यह महत्त्वपूर्ण उदाहरण है । अ-यहूदी अपने अ-सेमेटिक (एण्टी सेमेटिक) साथी गोयिम् के व्यवहार पर जब लज्जित होता है और घृणा प्रकट करता है तब साथ ही यह स्वीकार करने पर उसे उलझन भी होती है कि उस व्यंग्य में भी कुछ तथ्य है जो यहूदी को बहकाने वाले ने अपने पशुत्व के सम्बन्ध में चित्रित किया है । दुख इस बात का है कि जो दमन की प्रतिक्रिया उत्पीडित अल्पसंख्यकों में दमन का सामना करने का साहस उत्पन्न करती है उसी दमन से उनकी मानव प्रकृति भी विकृत हो जाती है । जो बात उत्पीडित अल्पसंख्यकों के सम्बन्ध में ठीक है वही उन बहुसंख्यकों के सम्बन्ध में ठीक है जिन्होंने तकनीकी विशेषता प्राप्त की है । यह बात ध्यान में रखने की है क्योंकि हम देखते हैं कि पाठ्यक्रम में उदार (लिबरल) शिक्षा के स्थान पर, जो यद्यपि कुछ अव्यावहारिक थी तकनीकी शिक्षा स्थान लेती चली जा रही है ।

पाँचवीं शती में यूनानी इस झुकाव के लिए एक शब्द 'बवेंडिया' का प्रयोग करते थे । 'बेवेंडास' वह व्यक्ति था जिसने किसी विशेष तकनीक में विशेष योग्यता अर्जित की थी और सामाजिक प्राणी के लिए जो अन्य साधारण गुणों की आवश्यकता होती है उसे तिरस्कृत कर दिया था । इस तकनीक का जो लोगों के मन में तात्पर्य था वह यही कि यह कोई हस्त-कौशल अथवा यान्त्रिक व्यापार है जिसे निजी लाभ के लिए वह व्यक्ति प्रयोग कर रहा है । किन्तु हेलेनी लोगों को 'बेवेंडिया' के प्रति जो घृणा थी वह इससे अधिक थी । और हेलेनिया के मन में सभी व्यवसायों (प्रोफेशन) के प्रति घृणा हो गयी थी । उदाहरण के लिए सैनिक तकनीक में स्पार्टनों ने जो विशेषता अर्जित की थी वह 'बेवेंडिया' का साक्षात् स्वरूप था । बड़ा राजनीति मर्मज्ञ अथवा देश का रक्षक भी इस आरोप से वंचित नहीं हो सकता था यदि वह जीवन की कला तथा जीवन के और सर्वरूपी (आल राउण्ड) गुणों से वंचित था ।

'परिष्कृत तथा सुसंस्कृत समाज में उदार शिक्षा वाले थेमिस्टाक्लीज पर यह दोष लगाया जाता था (क्योंकि उसमें सर्वरूपी योग्यताओं का अभाव था) कि वह किसी वाद्य यंत्र का भी प्रयोग नहीं जानता था किन्तु यदि उसके हाथों में कोई छोटा और अनात देश दे दिया जाय तो वह उसे महान् और विख्यात देश बना देगा ।'[1] इसके विपरीत बवेंडिया का हल्का उदाहरण दिया जा सकता है । कहा जाता है वियना में हेडन मोजार्ट और बीथोवेन के स्वर्ण युग में, हैप्सबुर्ग का एक सम्राट और उसके प्रधान मन्त्री अवकाश के समय उनके साथ संगीत में योगदान करते थे ।

बेवेंडिया के भयावह परिणाम के प्रति हेलेनिया की इस असहिष्णुता और समाजों की संस्थाओं में भी पायी जाती है । उदाहरण के लिए यहूदियों का सबत और ईसाइयों का रविवार, सात दिनों में एक दिन इसलिए अलग कर दिया गया है कि छः दिनों तक वे अपने विशेष व्यवसाय में निरंतर लगे रहते हैं तो एक दिन अपने कर्ता को स्मरण रखें और साधारण मानव का जीवन

१ प्लूटार्क लाइफ आव थेमिस्टाक्लीज, अध्याय २ ।

बितायें। यह केवल सयोग की घटना नही है कि उद्योगवाद की प्रगति के साथ साथ इग्लैड में आयोजित खेल-कूद और मनोरजन की भी उन्नति हुई। इस प्रकार के मनोरंजन जान-बूझकर आतमह ता तकनीकी विशेषताओ के विरुद्ध सन्तुलित करने के लिए स्थापित किये गये है, जो उद्योगवाद के श्रम विभाजन के कारण उत्पन्न हो गयी ह।

दुर्भाग्यवश खेल कूद द्वारा उद्योगवाद के जीवन को सन्तुलित करने की यह चेष्टा सफल न हो सकी क्योकि खेल कूद में भी उद्योगवाद की भावना प्रवेश कर गयी है। पश्चिमी ससार में आजकल व्यावसायिक खेलाडी (एथलीट) बन गये ह जिन्होने विशेषता प्राप्त की है और औद्योगिक विशेषता से अधिक कमा रहे ह। 'बेवेडिया' के ये भीषण उदाहरण हैं। इस पुस्तक के लेखक ने सयुक्त राज्य के दो कालेजो क क्षेत्रो में दो फुटबाल के मदानो को देखा। एक में विद्युत् के प्रकाश यन्त्र की व्यवस्था थी जिससे रात और दिन बारी बारी से बराबर अभ्यास कराकर फुटबाल के खेलाडियो का निर्माण किया जाय (मनुफैक्चड)। दूसरे मैदान के ऊपर छत बनी हुई थी कि किसी भी ऋतु में खेल चलता रहे। कहा जाता है यह ससार की सबसे बडी छत है और इसके बनाने में कल्पनातीत धन लगा है। मदान के चारो ओर पलगो का प्रबन्ध किया गया है जिसमें थके अथवा घायल खेलाडी आराम कर सकें। इन दोनो क्षेत्रो में मने देखा कि इन खेलाडियो की सख्या सारे छात्रो की सख्या का अतिसूक्ष्म भाग था। मुझे यह भी बताया गया कि ये लडके मैच खेलन का उसी आशका से प्रतीक्षा कर रह ह जिस भय से उनके बडे भाई १९१८ के युद्ध में खाइयो में गये थे। सच पूछिए तो यह ऐंग्लो सक्सन फुटबाल खेल-कूद में नही गिना जा सकता।

हेलनी जगत् के इतिहास में भी इसी प्रकार के विकास का पता लगता है। जहाँ कुलीन शौकिया (अमेच्यूर) खेलाडियो के स्थान पर, जिनकी विजय की प्रशसा पिंडार ने अपनी कविता में की है व्यावसायिक खेलाडियो की टीम आ गयी। और सिकन्दर के पश्चात् युग में परशिया से स्पेन तक जो नाटक के खेल यूनाइटेड आरटिस्टस लिमिटेड द्वारा दिखाये जाते थे एथेन्स में डायोनीसियस के अपने रगमच पर दिखाये जाने वाले नाटको से उतने ही भिन्न थे जितने आजकल के नवीन नाटक-गृहो के नाटक मध्ययुगीन रहस्य नाटको (मिस्ट्री प्ले) से।

तब इसमें आश्चय नही है कि जब सामाजिक दोष इस निराशाजनक ढग से सन्तुलन को असफल कर देते ह तब दार्शनिक लोग ऐसी क्रान्तिकारी योजना की कल्पना करते हैं जिससे ये दोष लोप हो जायें। हेलेनी सभ्यता के पतन की पहली पीढी के बाद, अफलातून ने 'बेवेडियो को समाप्त करने के लिए यह योजना बनायी है कि अन्तर्देशीय यूटोपिया (एक आदर्श देश) का निर्माण किया जाय जहाँ सागर द्वारा दूसरे देशो से व्यापार न हो सकेगा और देश के अन्दर भी उतनी ही आर्थिक व्यवस्था रहेगी कि भोजन भर के लिए किसान धान्य उत्पन्न कर सकें। अमरीकी आदर्शवाद के, जो दुख की बात है अपनी राह से भटक गया है, मूल स्रोत टामस जैफरसन ने उन्नीसवी शती के आरम्भ मे एसा ही सपना देखा था। उसने लिखा है—"यदि मेरे सिद्धान्तो का प्रयोग हो तो म चाहूँगा कि लोग न तो व्यापार करें न समुद्र की यात्रा करें। बल्कि यूरोप से उनका सम्बन्ध वसा ही होना चाहिए जैसा यूरोप से चीन का।"[1] (जिसके बन्दरगाह

१ डब्ल्यू० ई० उडवड द्वारा उद्धरित ए न्यू अमेरिकन हिस्ट्री, पृ० २६०।

और हमने उस असाधारण शक्ति को आश्चर्य से देखा और प्रशंसा की। इस शक्ति से जान पड़ता है कि अल्पसंख्यक मानव प्रकृति की अजेयता को प्रकट करते हैं। साथ ही साथ हम इस भी नहीं भूल सकते कि इनमें से कुछ अल्पसंख्यक—फ्रैनेटी, फनरियाट, आरमीनियन और यहूदी—और मनुष्यों से अच्छे नहीं हैं तो बुरे भी नहीं हैं। यहूदियों और अ-यहूदियों के बीच जो अशोभनीय सम्बन्ध रहा है वह महत्त्वपूर्ण उदाहरण है। अ-यहूदी अथवा अ-सामेटिक (एण्टी सेमेटिक) साथी गोयिम् के व्यवहार पर जब लज्जित होता है और घृणा प्रकट करता है तब साथ ही यह स्वीकार करने पर उसे उलझन भी होती है कि उस व्यंग्य में भी कुछ तथ्य है जो यहूदी को पहचानने वाले ने अपने पशुत्व के सम्बन्ध में चित्रित किया है। दुख इस बात का है कि जो दमन की प्रतिक्रिया उत्पीड़ित अल्पसंख्यकों में दमन का सामना करने का साहस उत्पन्न करती है उसी दमन से उनकी मानव प्रकृति भी विकृत हो जाती है। जो बात उत्पीड़ित अल्पसंख्यकों के सम्बन्ध में ठीक है वही उन बहुसंख्यकों के सम्बन्ध में ठीक है जिन्होंने तकनीकी विशेषता प्राप्त की है। यह बात ध्यान में रखने की है क्योंकि हम देखते हैं कि पाठ्यक्रम में उदार (लिबरल) शिक्षा के स्थान पर, जो यद्यपि कुछ अव्यावहारिक थी, तकनीकी शिक्षा स्थान लेती चली जा रही है।

पाँचवीं शती में यूनानी इस झुकाव के लिए एक शब्द 'बेवेंडिया' का प्रयोग करते थे। 'बेवेंडास' वह व्यक्ति था जिसने किसी विशेष तकनीक में विशेष योग्यता अर्जित की थी और सामाजिक प्राणी के लिए जो अन्य साधारण गुणों की आवश्यकता होती है उसे तिरस्कृत कर दिया था। इस तकनीक का जो लोगों के मन में तात्पर्य था वह यही कि यह कोई हस्त-कौशल अथवा यान्त्रिक व्यापार है जिसे निजी लाभ के लिए वह व्यक्ति प्रयोग कर रहा है। किन्तु हलेनी लोगों को 'बेवेंडिया' के प्रति जो घृणा थी वह इससे अधिक थी। और हेलेनिया के मन में सभी व्यवसायों (प्रोफेशन) के प्रति घृणा हो गयी थी। उदाहरण के लिए सैनिक तकनीक में स्पाटना ने जो विशेषता अर्जित की थी वह बेवेंडिया का साक्षात् स्वरूप था। बड़ा राजनीति-मर्मज्ञ अथवा देश का रक्षक भी इस आरोप से वंचित नहीं हो सकता था यदि वह जीवन की कला तथा जीवन के और सर्वरूपी (आल राउण्ड) गुणों से वंचित था।

'परिष्कृत तथा सुसंस्कृत समाज में उदार शिक्षा वाले थेमिस्टाक्लीज पर यह दोष लगाया जाता था (क्योंकि उसमें सर्वरूपी योग्यताओं का अभाव था) कि वह किसी वाद्य यन्त्र का भी प्रयोग नहीं जानता था किन्तु यदि उसके हाथों में कोई छोटा और अज्ञात देश दे दिया जाय तो वह उसे महान् और विख्यात देश बना देगा।[1] इसके विपरीत बेवेंडिया' का हल्का उदाहरण दिया जा सकता है। कहा जाता है वियना में हेडन मोजार्ट और बीथोवन के स्वर्ण युग में, हप्सबुर्ग का एक सम्राट् और उसके प्रधान मन्त्री अवकाश के समय उनके साथ संगीत में योगदान करते थे।

'बेवेंडिया' के भयावह परिणाम के प्रति हेलेनियों की इस असहिष्णुता और समाजों की संस्थाओं में भी पायी जाती है। उदाहरण के लिए यहूदियों का सबत और ईसाइयों का रविवार, सात दिनों में एक दिन इसलिए अलग कर दिया गया है कि छः दिनों तक वे अपने विशेष व्यवसाय में निरन्तर लगे रहते हैं तो एक दिन अपने कर्ता को स्मरण रखें और साधारण मानव का जीवन

१ प्लूटार्क लाइफ आव थेमिस्टाक्लीज, अध्याय २।

नये बाइबिल (टेस्टामेन्ट) की नाटकीय कथा में उसी ईसा को, जिसके सम्बन्ध में यहूदिया को आशा थी कि पृथ्वी पर अवतरित होकर मसीहा होंगे, यहूदी धर्म के व्यासा (इसराइल्स) और फरीसिया (फरीसीज) ने निरस्कृत कर दिया था उन्ही यहूदिया ने जिन्होंने कुछ ही पीढी पहले हेलेनीकरण की विजय के विरोध का नेतृत्व किया था। जिस सचाई और अन्तदृष्टि ने इन धर्म के व्यासा और फरीसियो को पहले के सकटकाल में नेता बना दिया था वह अब अधिक सकट के समय इन्हें छोड गये और यहूदी जिन्होने इसका सामना किया 'वे भटियार और वेश्यावृत्ति वाले मसर्म गये। मसीहा स्वय 'भटियारे और वेश्यावृत्ति वाले' वर्ग स आये थे और उनके बाद उनका सबस बडा शिष्य टारसस का यहूदी था। टारसस बहुमूर्ति पूजक नगर था जिसका हलेनी करण हो चुका था और वह परम्परागत स्वर्ग की कल्पना के बाहर था। यदि इस कथा को दूसरी दृष्टि से और विस्तृत मच पर देखें, जैसा कि चौथे गास्पेल में लिखा है तो प्राय सभी यहूदिया ने फरीसियो का काय किया और मूर्तिपूजका ने सन्त पाल की शिक्षा को जिसे यहूदिया ने अमान्य कर दिया था, ग्रहण किया और इन्होने भटियारे और वेश्यावृत्ति वाला की भूमिका अदा की।

भूमिका के विपयय' का यही विषय बाइबिल के अनेक दृष्टान्ता में तथा घटनाआ में अकित है। डाइव्ज और लाजरस के, फरीसी और भटियार के दृष्टान्ता में यही बात दिखायी गयी है। यही बात भले समारिटन के दृष्टान्त में पुरोहित और लेवाइट की कथा के विपरीत दिखायी गयी है, और यही बात अपव्ययी पुत्र और उसके विपरीत उसके सम्मानित भाई की कहानी में है। यही विषय ईसा और रोमन-सेना नायक (सन्चूरियन) और साइराफोनेशियन स्त्री के सम्बन्ध में है। यदि नये और पुराने बाइबिल को एक ही शृखला म देखें तो हम देखगे कि पुरानी बाइबिल की कथा में इसाऊ ने अपना जन्माधिकार याकूब (जेकब) का समर्पित कर दिया था और उसका उत्तर नयी बाइबिल में याकूब के उत्तराधिकारिया ने अपना उत्तराधिकार ईसा का तिरस्कृत करके छाड दिया और यह भूमिका का विपयय हुआ। यही अभिप्राय ईसा की उक्तिया में बार-बार आता है। जो अपने को ऊँचा उठायेगा वह गिराया जायेगा', प्रथम अन्तिम होगा और अन्तिम प्रथम होगा, *जब तक तुम छोटे बालक के समान अपने को न बना लो स्वर्ग के राज्य में प्रवेश नही* कर सकते। और ईसा मसीह ने अपने मिशन का मूल तत्त्व गीत (साम) की ११८वा रचना का उद्धृत करके स्पष्ट किया है—जिस पत्थर को मकान बनाने वाला ने फेंक दिया वही कोने का शीप बना।

यही भाव सार हेलेनी साहित्य की महान् रचनाआ में मिलता है। और उनके इस सिद्धान्त में निहित है 'घमडी का सिर नीचा'। हेरोडोटस यही शिक्षा जरक्सीज क्रीसस और पालिक्रिटीज की जीवनियो में व्यक्त करता है। वास्तव में उसके सारे इतिहास का विषय ही एकेमीनियाई साम्राज्य का गर्व और पतन है। एक पीढी पीछे थुसिडाइडाज ने तटस्थ और वैज्ञानिक' भावना से लिखा है जो अधिक प्रभावकारी है क्याकि इतिहास के पिता' ने एथेन्स के गर्व और पतन को उद्देश्य सहित लिखा था। यहाँ यूनानी (एटिक) ट्रेजेडी के विषया का बताना अनावश्यक है जैसे एसकाइलस के अगामेम्नान मे साफोक्लीज के ओडिपस और एजेक्स में और युरिपिडीज के पेन्थ्यूज में। चीनी पतन और विनाश के एक कवि ने यही भाव व्यक्त किया है —

'जो अँगूठे के बल पर खडा होता स्थिर नही खडा हो सकता,

१८४० तक यूरोपीय व्यापार के लिए बन्द थे)। उसी साल ब्रिटिश सेना ने बन्दरगाहों को खोलने के लिए विवश किया। इसी प्रकार समुअल बटलर ने कल्पना की है कि अरव्हानिया के रहने वाले (उनका काल्पनिक समाज) जान-बूझकर और योजनाबद्ध प्रकार यन्त्रों को नष्ट कर डालें जिससे वे उनके दास न बन जायें।

अनुकरण (माइमेसिस) पर सभ्यता का संघात

जब आदिम समाज सभ्यता की ओर विकसित होने लगता है तब अनुकरण की गति प्राचीन लोगों से हटकर नये नेताओं की ओर उन्मुख होती है। इसका अभिप्राय यह होता है कि जो नया अराजनात्मक समूह होता है उसे नये लोगों के स्तर पर ले जायें। परन्तु अनुकरण की धार जान की यह प्रकृति वास्तविक बात की जगह काम चलाऊ 'सस्ती वस्तु' ही है। और लक्ष्य की प्राप्ति मृगतृष्णा ही है। जन-साधारण महात्माओं की पंक्ति में नहीं बैठ पाता। बहुधा आदिम मनुष्य राहचलतू साधारण निकृष्ट प्राणी में ही समान्तरित हो जाता है। अनुकरण पर सभ्यता के संघात के परिणामस्वरूप एक बनावटी, दिखौवा कृत्रिम नागरिकों का भीषण समूह बन जाता है जो अनेक गुणों में अपने आदिम पूर्वजों से निम्न कोटि का होता है। ऐटिक रंगशाला पर अरिस्टाफेनीज ने विज्ञान को व्यंग्य वाणों से पछाड़ा किन्तु रंगशाला के बाहर विज्ञान ही विजयी हुआ। विज्ञानी 'राहचलतू मानव' का पाँचवीं शती ईसा के पूर्व हेलेनी इतिहास में आना सामाजिक पतन का स्पष्ट लक्षण है। और इसने उस संस्कृति का पूर्ण रूप से तिरस्कृत करके अपनी आत्मा को विमुक्त किया जिस संस्कृति ने भूसे से उसका पेट भरा। विरोधी सर्वहारा का यह बालक था जिसकी आत्मा जाग्रत हुई और उसने एक ऊँचे धर्म का आविष्कार करके अपनी मुक्ति की राह बनायी।

इन उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जायगा कि सभ्यताओं के पतन में इन घटनाओं ने वहाँ तक योगदान किया जब नयी सामाजिक शक्तियों का पुरानी संस्थाओं से सम्पर्क हुआ। अथवा बाइबिल की भाषा में नयी शराब रखने में पुरानी बोतलें असमर्थ रहीं।

(३) सृजन का प्रतिशोध अस्थायी अपनत्व को आदर्श बनाना

भूमिका (रोल) का विपर्यय

हमने आत्मनिर्णय की असफलताओं के उन दो स्वरूपों के सम्बन्ध में कुछ अध्ययन किया है जिनके कारण सभ्यताओं का विनाश होता है। हमने अनुकरण की, यान्त्रिकता (निर्जीवता) *और संस्थाओं की असमर्थता पर विचार किया है।* सृजनात्मकता का जो बाहरी प्रतिशोध होता है उस पर विचार कर के यह अध्ययन हम समाप्त करेंगे।

ऐसा जान पड़ता है कि किसी अल्पसंख्यक वर्ग को यदि सभ्यता के इतिहास में लगातार दो या अधिक चुनौतियों का सामना करना पड़ा है तो उसी सृजनात्मक अल्पसंख्यक वर्ग को बराबर सफलता नहीं मिली है। इसके विपरीत यह देखा गया है कि जिस वर्ग को एक चुनौती का सामना करने में सफलता मिली वही वर्ग दूसरी चुनौती का सामना करने में विफल रहा। यह विचलित करने वाली किन्तु देखने में स्वाभाविक मानवी परिस्थिति एटिक (यूनानी) नाटकों का मुख्य अभिप्राय (मोटिफ) रहा है और अरस्तू ने इसे पोएटिक्स में परिपट्रीइया के नाम से विवेचन किया है जिसका अर्थ है भूमिका का विपर्यय।

नये बाइबिल (टेस्टामेन्ट) की नाटकीय कथा में उसी ईसा को, जिसके सम्बन्ध में यहूदियो को आशा था कि पृथ्वी पर अवतरित होकर मसीहा होगे, यहूदी धम के व्यासो (इस्त्राइन्स) और फरीसियो (फरीसीज) ने तिरस्कृत कर दिया था उन्ही यहूदिया ने जिन्होंने कुछ ही पीढी पहले हेलेनीकरण की विजय के विराध का नेतत्व किया था। जिस सचाई और अन्तदष्टि ने इन धम के व्यासा और फरीसिया को पहले के सक्टकाल में नेता बना दिया था वह अब अधिक सक्ट के समय इन्हें छोड गये और यहूदी जिन्हाने इसका सामना किया 'वे भटियारे और वेश्यावत्ति वाले' समझे गये। ममीहा स्वय 'भटियारे और वेश्यावत्ति वाले' वग से आये थे और उनके बाद उनका सबस बडा शिष्य टारसस का यहूदी था। टारसस बहुमूर्ति पूजक नगर था जिसका हलेनी करण हा चुका था और वह परम्परागत स्वग की कल्पना के बाहर था। यदि इस कथा को दूसरी दष्टि से और विस्तत मच पर देखें, जैसा कि चौथे गोस्पल म लिखा है तो प्राय सभी यहूदिया ने फरीसियो का काय किया और मूर्तिपूजका ने सत पाल की शिक्षा का जिसे यहूदिया न अमान्य कर दिया था, ग्रहण किया और इन्होंने भटियारे और वेश्यावत्ति वाला की भूमिका अदा की।

'भूमिका के विपयय' का यही विषय बाइबिल के अनेक दृष्टान्ता में तथा घटनाआ में अकित है। डाइव्ज और लाजरस के, फरीसी और भटियार के दष्टान्ता मे यही बात दिखायी गयी है। यही बात भले समारिटन के दृष्टान्त में पुरोहित और लेवाइट की कथा के विपरीत दिखायी गयी है और यही बात अपव्ययी पुत्र और उसके विपरीत उसके सम्मानित भाई की कहानी में है। यही विषय ईसा और रोमन-सेना नायक (सेन्चूरियन) और साइरोफोनेशियन स्त्री के सम्बन्ध में है। यदि नये और पुराने बाइबिल को एक ही शृखला मे देखें तो हम देखेंगे कि पुरानी बाइबिल की कथा में इसाऊ ने अपना जन्माधिकार याकूब (जेकब) को समर्पित कर दिया था और उसका उत्तर नयी बाइबिल में याकूब के उत्तराधिकारिया न अपना उत्तराधिकार ईसा को तिरस्कृत करके छाड दिया और यह भूमिका का विपयय हुआ। यही अभिप्राय ईसा की उक्तियों में बार बार आता है। 'जो अपने को ऊँचा उठायेगा वह गिराया जायेगा, 'प्रथम अन्तिम होगा और अन्तिम प्रथम होगा, जब तक तुम छोटे बालक के समान अपने को न बना लो स्वग के राज्य में प्रवेश नही कर सकते। और ईसा मसीह ने अपने मिशन का मूल तत्त्व गीत (साम) की ११८ वी रचना को उद्धत करके स्पष्ट किया है—जिस पत्थर को मकान बनाने वाला ने फेंक दिया वही कोने का शीष बना।

यही भाव सारे हेलेनी साहित्य की महान् रचनाओ में मिलता है। और उनके इस सिद्धान्त में निहित है घमडी का सिर नीचा'। हेरोडाटस यही शिक्षा जरक्सीज क्रीसस और पोलिक्रिटीज की जीवनिया में व्यक्त करता है। वास्तव में उसके सारे इतिहास का विषय ही एकेमीनियाई साम्राज्य का गव और पतन है। एक पीढी पीछे थुसिडाइडीज ने तटस्थ और 'वज्ञानिक' भावना से लिखा है जो अधिक प्रभावकारी है क्योंकि 'इतिहास के पिता ने एथेन्स के गव और पतन को उद्देश्य सहित लिखा था। यहा यूनानी (एटिक) ट्रेजेडी के विषया को बताना अनावश्यक है जसे एसकाइलस के अगामेम्नान में सोफोक्लीज के आडिपस और एजेक्स में और युरिपिडीज के पन्थ्यूज में। चीनी पतन और विनाश के एक कवि ने यही भाव व्यक्त किया है —

'जो अँगूठे के बल पर खडा हाता स्थिर नही खडा हो सकता,

१८४० तक यूरोपीय व्यापार के लिए बन्द थे)। उसी साल ब्रिटिश सेना ने बन्दरगाहों को खोलने के लिए विवश किया। इसी प्रकार सैमुअल बटलर ने कल्पना की है कि अरहोनिया के रहने वाले (उसका काल्पनिक नगर) जान-बूझकर और योजनाबद्ध ढंग से यन्त्रों को नष्ट कर डालें जिससे वे उनके दास न बन जायें।

अनुकरण (माइमेसिस) पर सम्यता का संघात

जब आदिम समाज सम्यता की ओर विकसित होने लगता है तब अनुकरण की शक्ति प्राचीन लोगों से हटकर नये नेताओं की ओर उन्मुख होती है। इसका अभिप्राय यह होता है कि जो नया असृजनात्मक समूह होता है उसे नये लोगों के स्तर पर ले जायें। परन्तु अनुकरण की ओर जाने की यह प्रवृत्ति वास्तविक बात की जगह काम चलाऊ सस्ती वस्तु ही है। और लक्ष्य की प्राप्ति मृगतृष्णा ही है। जन-साधारण महात्माओं की पंक्ति में नहीं बैठ पाता। बहुधा आदिम मनुष्य 'राहचलतू' साधारण निकृष्ट प्राणी में ही रूपान्तरित हो जाता है। अनुकरण पर सम्यता के संघात के परिणामस्वरूप एक बनावटी, स्थिर कृत्रिम नागरिकों का मोहक समूह बन जाता है जो अनेक गुणों में अपने आदिम पूर्वजों से निम्न कोटि का होता है। ऐटिक रंगशाला पर अरिस्टोफेनीज ने क्लिआन को व्यंग्य बाणों से पछाड़ा किन्तु रंगशाला के बाहर क्लिआन ही विजयी हुआ। क्लिआनी राहचलतू मानव का पाँचवीं शती ईसा के पूर्व हेलनी इतिहास में आना सामाजिक पतन का स्पष्ट लक्षण है। और इसने उस संस्कृति को पूर्ण रूप से तिरस्कृत करके अपनी आत्मा को विमुक्त किया जिस संस्कृति ने भूखे से उसका पेट भरा। विरोधी सर्वहारा का यह बालक था जिसकी आत्मा जाग्रत हुई और उसने एक ऊँचे धर्म का आविष्कार करके अपनी मुक्ति की राह बनायी।

इन उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जायगा कि सम्यताओं के पतन में इन घटनाओं ने कहाँ तक योगदान किया जब नयी सामाजिक शक्तियों का पुरानी संस्थाओं से सम्पर्क हुआ। अथवा बाइबिल की भाषा में नयी शराब रखने में पुरानी बोतलें असमर्थ रहीं।

(३) सृजन का प्रतिशोध : अस्थायी अपनत्व को आदर्श बनाना

भूमिका (रोल) का विपर्यय

हमने आत्मनिर्णय की असफलताओं के उन दो स्वरूपों के सम्बन्ध में कुछ अध्ययन किया है जिनके कारण सम्यताओं का विनाश होता है। हमने अनुकरण की, यान्त्रिकता (निर्जीवता) और संस्थाओं की असमर्थता पर विचार किया है। सृजनात्मकता का जो बाहरी प्रतिशोध होता है उस पर विचार कर के यह अध्ययन हम समाप्त करेंगे।

ऐसा जान पड़ता है कि किसी अल्पसंख्यक वर्ग को यदि सम्यता के इतिहास में लगातार दो या अधिक चुनौतियों का सामना करना पड़ा है तो उसी सृजनात्मक अल्पसंख्यक वर्ग को बराबर सफलता नहीं मिली है। इसके विपरीत यह देखा गया है कि जिस वर्ग को एक चुनौती का सामना करने में सफलता मिली वही वर्ग दूसरी चुनौती का सामना करने में विफल रहा। यह विचलित करने वाली किन्तु देखने में स्वाभाविक मानवी परिस्थिति एटिक (यूनानी) नाटकों का मुख्य अभिप्राय (मोटिफ) रहा है और अरस्तू ने इस पोएटिक्स में 'परिपट्रीइया' के नाम से विवेचन किया है, जिसका अर्थ है भूमिका का विपर्यय।

नये बाइबिल (टस्टामेन्ट) की नाटकीय कथा में उसी ईसा को, जिसके सम्बन्ध में यहूदियो को आशा थी कि पथ्वी पर अवतरित होकर मसीहा होगे, यहूदी धम के व्यासो (इस्काइब्स) और फरीसिया (फरीसीज) ने तिरस्कृत कर दिया था उन्ही यहूदियो ने जिन्होने कुछ ही पीढी पहले हेल्नीकरण की विजय के विरोध का नेतत्व किया था। जिस सचाई और अतदृष्टि ने इन धम के व्यासो और फरीसियो को पहले के सकटकाल मे नेता बना दिया था वह अब अधिक सकट के समय इन्हें छोड गये और यहूदी जिन्होने इसका सामना किया वे भटियारे और वेश्यावृत्ति वाले' समझे गये। मसीहा स्वय 'भटियारे और वेश्यावत्ति वाले' वग से आये थे और उनके बाद उनका सबसे बडा शिष्य टारसस का यहूदी था। टारसस बहुमूर्ति पूजक नगर था जिसका हेलेनीकरण हो चुका था और वह परम्परागत स्वग की कल्पना के बाहर था। यदि इस कथा को दूसरी दृष्टि से और विस्तत मच पर देखे, जसा कि चौथे गोस्पेल में लिखा है तो प्राय सभी यहूदियो ने फरीसियो का काय किया और मूर्तिपूजको ने सन्त पाल की शिक्षा को, जिसे यहूदियो ने अमान्य कर दिया था, ग्रहण किया और इन्होने भटियारे और वेश्यावृत्ति वालो की भूमिका अदा की।

भूमिका के विपयय' का यही विषय बाइबिल के अनेक दृष्टान्तो में तथा घटनाओ में अकित है। डाइज और लाजरस के, फरीसी और भटियारे के दृष्टान्तो में यही बात दिखायी गयी है। यही बात भले समारिटन के दृष्टान्त में पुरोहित और लेवाइट की कथा के विपरीत दिखायी गयी है, और यही बात अपव्ययी पुत्र और उसके विपरीत उसके सम्मानित भाई की कहानी में है। यही विषय इसा और रोमन सेना नायक (सेंचूरियन) और साइराफानेशियन स्त्री के सम्बन्ध में है। यदि नये और पुराने बाइबिल को एक ही शृखला म देखें तो हम देखेंगे कि पुरानी बाइबिल की कथा में इसाऊ ने अपना जन्माधिकार याकूब (जेकब) का समर्पित कर दिया था और उसका उत्तर नयी बाइबिल में याकूब के उत्तराधिकारियो ने अपना उत्तराधिकार ईसा को तिरस्कृत करके छोड दिया और यह भूमिका का विपयय हुआ। यही अभिप्राय इसा की उक्तियो में बार बार आता है। जो अपने को ऊँचा उठायेगा वह गिराया जायेगा', प्रथम अन्तिम होगा और अन्तिम प्रथम होगा, 'जब तक तुम छोटे बालक के समान अपने को न बना लो स्वग के राज्य में प्रवश नही कर सकते। और ईसा मसीह ने अपने मिशन का मूल तत्त्व गीत (साम) की ११८ वी रचना को उद्धत करके स्पष्ट किया है— जिस पत्थर को मकान बनाने वालो ने फेंक दिया वही कोने का शीष बना।'

यही भाव सारे हेलेनी साहित्य की महान् रचनाओ में मिलता है। और उनके इस सिद्धान्त में निहित है 'घमडी का सिर नीचा। हेरोडोटस यही शिक्षा जरक्सीज क्रीसस और पालिक्रिटीज की जीवनियो में व्यक्त करता है। वास्तव में उसके सारे इतिहास का विषय ही एकेमीनियाई साम्राज्य का गव और पतन है। एक पीढी पीछे थुसिडाइडीज ने तटस्थ और 'वज्ञानिक' भावना से लिखा है जो अधिक प्रभावकारी है क्योकि 'इतिहास के पिता' ने एथेंस के गव और पतन का उद्देश्य सहित लिखा था। यहाँ यूनानी (एटिक) ट्रजेडी के विषयो को बताना अनावश्यक है जसे एसकाइलस के अगामेम्नान में सोफोक्लीज के आडिपस और एजेक्स में और युरिपिडीज के पथ्यूज में। चीनी पतन और विनाश के एक कवि ने यही भाव व्यक्त किया है —

'जो अँगूठे के बल पर खडा होना स्थिर नही खडा हो सकता,

जो लम्बे-लम्बे डग धरता है वह बहुत तेज नहीं चलता
जो घमड करता है कि म यह कर डालूगा, वह कुछ नहीं कर सकता
जिसे अपने काय का घमड है वह कोई ऐसा काय नहीं कर सकता जो शाश्वत हो।[1]

सजनात्मकता का यह प्रतिशोध है। यदि इस दृजडी की इस प्रकार की कथा वस्तु साधारणत ऐसी होती है—यदि यह सत्य है कि एक अध्याय में जो सर्जन कर्ता है उसकी यहा सफलता दूसरे अध्याय में सजन के काय में बाधक है, जो परिस्थिति विजयी घोड के पक्ष में पहले थी, वही उसके विरोध में होकर 'अम्परों घोडे के पक्ष में हो गयी—तब यह स्पष्ट है कि हमने सम्यताओं के पतन का एक महत्त्वपूर्ण कारण जान लिया है। हम देख सकते हैं कि यह प्रतिशोध दो ढंग से सामाजिक पतन लाता है। एक ओर तो इसी कारण उन लोगों की संख्या कम हो जाती है जो चुनौती का सामना करने के लिए सजनकर्ता की भूमिका अदा करने के लिए सम्मुख आते हैं, क्योंकि इनमें वे लोग नहीं रह जाते जो पहली चुनौती में सफल हुए थे, दूसरी ओर से ही सजनकर्ता जो पहली पीढ़ी में सजनकर्ता की भूमिका अदा कर चुके थ अब नयी चुनौती का सामना करने वाले नेताओं के विरोधी हो जाते ह। और ये भूतपूव सजनकर्ता अपने पहले सजन के महत्त्व के कारण महत्त्वपूर्ण स्थान ग्रहण कर लेते हैं और उस समाज में प्रभावशाली हो जाते हैं जिसमें नय शक्तिशाली सजन कर्ता उत्पन्न हो जाते ह—इस परिस्थिति में वे समाज की प्रगति में सहायक नहीं हो सकते। केवल दशक मात्र रह जाते ह।

इस प्रकार ये 'दशक' मात्र, सजनात्मकता के प्रतिशोध के कारण अकमण्य रहते ह। यह मानसिक अकमण्यता उन्हें नतिक अपराध से विमुक्त नहीं कर सकती। वतमान के प्रति इस प्रकार की बुद्धिहीन अकमण्यता का कारण होता है, प्राचीन के प्रति प्रमाधता और यही प्रमाधता मूर्तिपूजा का पाप है। मूर्तिपूजा की परिभाषा यह हो सकती है कि वह एक प्रकार का बौद्धिक और नतिक अधापन है जिसमें स्रष्टा के स्थान पर सृष्ट वस्तु की पूजा की जाती है। इसका स्वरूप यह हो सकता है कि मूर्तिपूजक अपने व्यक्तित्व की पूजा करने लगे या समाज के किसी अस्थायी स्वरूप की, जो चुनौती और सामना और फिर चुनौती और सामना की शाश्वत गति से उत्पन्न हो जाती है, जो जीवन का चिह्न है। इसका दूसरा रूप यह हो सकता है कि सीमित रूप से वह किसी ऐसी सस्था अथवा तकनीक की पूजा करने लगे जिससे पहले कभी उसको लाभ हुआ हो। इन विभिन्न प्रकारो की पूजा की अलग-अलग परीक्षा करना सुविधाजनक होगा। पहले हम स्वय की पूजा की परीक्षा करेंगे क्योंकि जिस पाप का अध्ययन करन हम जा रहे ह उसका सबसे स्पष्ट उदाहरण यह होगा। यदि यह सत्य है कि—

'मानव अपनी मृत आत्मा
की सीढी बनाकर उस पर चढ कर ऊपर उठता है।[2]

तो वह मूर्तिपूजक जो यह भूल करता है कि अपनी मृत आत्मा का सीढी न बनाकर सिंहासन बनाता है वह अपने को जीवन से उसी प्रकार अलग कर देता है जसे वह उपासक जो खभे के ऊपर बठकर उपासना करता है जो अपने को अपने साथियो से अलग कर देता है।

१ द टाओ-टे किंग, अध्याय २४ (द वे एण्ड इटस पावर का ए० वेले द्वारा अनुवाद)।
२ टेनिसन इन मेमोरियम।

अब हमने वर्तमान विषय के अध्ययन करने के लिए पूरी तयारी कर ली है और कुछ उदाहरणों को प्रस्तुत करेंगे।

यहूदी

इस प्रकार की अस्थायी आत्मा की मूर्तिपूजा का सबसे कुख्यात ऐतिहासिक उदाहरण यहूदियों की वह भूल है जो नयी बाइबिल में है। उनके इतिहास के उस युग में जो सीरियाई सभ्यता के शैशव में आरम्भ हुआ और जो पैगम्बरों के युग में समाप्त हुआ, इसरायल और जूदा के लोगों ने धर्म की एकेश्वरवादी विचारधारा को स्थापित कर अपने को सीरियाई लोगों से बहुत ऊपर उठा दिया। अपनी आध्यात्मिक सम्पत्ति के ज्ञान और उचित ही गर्व के कारण उन्होंने अपने आध्यात्मिक विकास के इस अस्थायी परिस्थिति की पूजा आरम्भ करने की भूल की। वास्तव में उनकी आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि अद्वितीय थी। किन्तु इस शाश्वत और निरपेक्ष वास्तविकता की उपलब्धि के पश्चात् एक सापेक्ष तथा अस्थायी अर्द्धसत्य के मोह में वे फँस गये। उन्होंने यह विश्वास कर लिया कि इसरायल के लोगों ने एक ईश्वर की खोज की है इसलिए इस खोज द्वारा ईश्वर ने अभिव्यक्त किया है कि इसरायल के लोग ईश्वर के विशिष्ट मनोनीत लोग हैं। इस अर्द्ध सत्य से वे इतने मुग्ध हुए कि ऐसी घातक भूल की कि कुछ काल तक अपने को आध्यात्मिक दृष्टि से बहुत महान् समझने लगे। यह महत्ता उन्होंने परिश्रम और कष्ट से प्राप्त की थी, किन्तु उन्होंने समझा कि ईश्वर ने विशेषतः उन्हें यह अधिकार दिया है। उस प्रतिभा को उन्होंने धरती में छिपाकर निर्जीव कर दिया और जो सम्पत्ति ईश्वर ने नजारथ के ईसा को भेजकर उन्हें दिया उसका उन्होंने तिरस्कार कर दिया।

एथेंस

यदि इसरायल सजनात्मकता के प्रतिशोध का शिकार इसलिए हुआ कि उसने अपने को विशिष्ट जाति' समझा तो एथेंस इसी प्रकार के प्रतिशोध का शिकार इसलिए हुआ कि उसने अपने को यूनान का शिक्षक' समझा। हम यह देख चुके हैं कि यह अस्थायी गौरव एथेंस ने अपनी उपलब्धि के कारण सोलन के युग और परिक्लीज के युग के बीच प्राप्त कर लिया था। परन्तु एथेंस की अपूर्णता यह थी या होनी चाहिए थी, कि यह गौरव उसके अपने ही पुत्र ने प्रदान की थी। पेरिक्लीज ने इस वाक्य का अंत्येष्टि भाषण में कहा था। थ्यूसिडाइडीज के अनुसार यह उन एथेनी सिपाहियों की प्रशंसा में कहा गया था जो उस युद्ध के पहले वर्ष में मरे थे, जो हेलनी समाज के साधारणतः और एथेंस के विशेष, आध्यात्मिक जीवन के विनाश का बाहरी और प्रत्यक्ष चिह्न था। यह घातक युद्ध इसलिए हुआ कि सोलोनी आर्थिक क्रांति ने एक समस्या उपस्थित कर दी थी। समस्या यह थी कि संसार में हेलनी राजनीतिक व्यवस्था स्थापित की जाय। किन्तु यह समस्या पाँचवीं शती के एथेंस की नैतिक सीमा के *लिए असम्भव थी।* ४०४ ई० पू० में एथेंस की सैनिक पराजय हुई और उससे भी बड़ी नैतिक पराजय पुनः स्थापित एथेनी लोकतंत्र ने स्वयं की जब पाँच साल बाद उसने सुकरात की वैधानिक हत्या की (जुडिशियल मर्डर)। इसके परिणामस्वरूप दूसरी पीढ़ी में अफलातून ने पेरिक्लीज के युग के एथेंस तथा उसके सारे साहित्य का खण्डन कर दिया। किन्तु अफलातून के किंचित् दुर्विनीत और कुछ-कुछ कृत्रिम संकेत का प्रभाव नागरिकों पर नहीं पड़ा। एथेनी नेताओं के अनुगामियों ने

जिन्होंने अपने नगर को 'यूनान का शिक्षक' बना दिया था, अपनी इस आहृत उपाधि का उत्कृष्ट ढंग से पुनः स्थापित करने की चेष्टा की। यह ढंग यह था कि उन्होंने ऐसा रूप धारण किया कि उनकी शिक्षा ऐसी दुरूह हो गयी कि कोई ग्रहण न कर पाये। और वे अपनी अगगन और प्रभावहीन नीतियों को इसी रूप में मेसडोनियाई उत्तर से लेकर एथेन्स के इतिहास के उस कटु युग तक व्यवहार करते रहे जब वह रोमन साम्राज्य का गतिहीन और निष्प्रभ केवल प्रान्तीय नगर रह गया।

उसके पश्चात् जब एक नयी संस्कृति का उदय उन स्थानों में हुआ जो किसी काल में हेलेनी जगत् के स्वतन्त्र नगर थे तब एथेन्स में इसका बीजारोपण नहीं हुआ। अथेनियनों तथा सन्त पाल के बीच जिस संघर्ष का वर्णन 'अपासल्स के एक्टा, (एक्ट्स आव अपासल्स) में किया गया है, उससे पता चलता है कि सन्त पाल गर ईसाइयों से जब कुछ कहना था तो उस नगर के दार्शनिक वातावरण के प्रति वह असवेदनशील नहीं था। क्योंकि यह नगर इतना आत्मगर्वी हो चुका था और जब उसने मास हिल पर निमका (डान) के सम्मुख भाषण किया तब अपने श्रोताओं के मनोनुकूल बोलने की भरपूर चेष्टा की। किन्तु वर्णन से स्पष्ट है कि उसका प्रचार एथेन्स में असफल रहा और यद्यपि अन्त में उसने जो चर्च यूनानी नगरों में स्थापित किये थे उन्हें पत्र लिखने का अवसर निकाला तथापि हम जानते हैं कि वह अपनी लेखनी से भी उन अथेनियनों का धर्म-परिवर्तित न करा सका जिसे अपनी वाणी से बदलने में असफल रहा।

इटली

यदि पाँचवी शती ई० पू० का एथेन्स 'यूनान का शिक्षक' बनने का कुछ-न-कुछ समुचित दावा कर सकता था तो न्यायतः वही उपाधि आधुनिक पश्चिमी जगत् के उत्तरी इटली के नगर राज्यों को मिल सकती है क्योंकि पुनर्जागरण युग (रेनसा) की यही उपलब्धि थी। यदि हम पन्द्रहवी शती के अन्तिम भाग से उन्नीसवी शती के अन्तिम भाग के चार सौ वर्षों के इतिहास का परीक्षण करें, तो हम देखेंगे कि उसकी वर्तमान आर्थिक तथा राजनीतिक दक्षता और उसकी आधुनिक कलात्मकता तथा बौद्धिक संस्कृति की उत्पत्ति स्पष्टतः इटालियाई है। पश्चिमी इतिहास के आधुनिक आन्दोलन में यह रचना इटालियाई सवेग का परिणाम थी और यह सवेग इसके पहले के युग की इटालियाई संस्कृति के प्रकाश का विकिरण था। वास्तव में पश्चिमी इतिहास का यह अध्याय उसी प्रकार इटालियाई कहा जा सकता है जिस प्रकार हेलेनी इतिहास का तथाकथित हेलेनी युग का वह काल, जिसमें पाँचवी शती के एथेन्स की संस्कृति का प्रसार सिकन्दर की सेना के साथ साथ भूमध्य सागर के तट से जलमग्न सुदूर आकेमीनियाई साम्राज्य की सीमान्त तक किया गया था।[१]

१ जब सिकन्दर ने आकेमीनियाई साम्राज्य को पराजित किया और आगस्टस ने शान्तिमय रोमन साम्राज्य की स्थापना की इन तीन शतियों के युग को 'हेलेनी' के स्थान पर 'अटिसिस्टिक' कहना अधिक उपयुक्त होगा। एडविन बेवन के अनुसार 'हेलेनी' शब्द हेलेनी सभ्यता के इतिहास के किसी विशेष अध्याय के लिए प्रयोग करना उपयुक्त न होगा। बल्कि उन दोनों सभ्यताओं की सारी विशेषताओं के लिए ठीक होगा जिसे इस अध्ययन में पश्चिमी तथा परम्परावादी ईसाई सभ्यता कहा गया है।

किन्तु हमें फिर उसी विराधाभास का सामना करना पडता है, क्योंकि जिस प्रकार हेलेनी युग में एथेन्स का योगदान निरन्तर अलाभकारी होता रहा उसी प्रकार आधुनिक युग में पश्चिमी समाज के जीवन में इटली का योगदान उसके आल्पस पार के शिष्यों की अपेक्षा निम्नकोटि का था।

आधुनिक युग में इटली की अपेक्षाकृत निर्जीवता मध्ययुगीन इटली की संस्कृति में घर घर दिखाई पडती है—फ्लारेन्स में, वेनिस में, मिलन में, साएना म, बोलोना में और पाडुआ में। और आधुनिक युग के अन्त में परिणाम और भी उल्लेखनीय है। इतिहास के इस अध्याय के अन्त में आल्पस पार की जातियाँ इस योग्य हो गयी थी कि मध्ययुगीन इटली का जो ऋण उनके ऊपर था, उसे वे चुका दें। अठारहवी तथा उन्नीसवी शती में आल्पस के पार स एक नया सांस्कृतिक प्रवाह फूटा। इस बार उल्टी दिशा में। इटली में आल्पस पार का यह प्रभाव इटली के पुनरुत्थान का पहला कारण था।

आल्पस के उस पार से पहली राजनीतिक शक्ति जो प्राप्त हुई उसका नपोलियन के साम्राज्य में अस्थायी समावेश था। पहली आर्थिक शक्ति उस समय मिली जब भूमध्य सागर स भारत को व्यापारिक रास्ता बना, जो स्वेज नहर के निर्माण क पहले की बात है और अप्रत्यक्ष रूप से मिस्र पर नपोलियन के आक्रमण का परिणाम था। आल्पस पार की इन शक्तियो का पूरा प्रभाव तब तक नहीं फलीभूत हुआ जब तक कि वे इटालियाई कामकर्ताओ के हाथो में नही आयी। किन्तु जिन इटालियाई सजनात्मक शक्तियो से पुनरुत्थान का जन्म हुआ वह उस इटालियाई धरती पर नही हुआ जहाँ मध्ययुगीन इटालियाई संस्कृति पनपी थी।

उदाहरण के लिए आर्थिक क्षेत्र में आधुनिक सामुद्रिक व्यापार में पहला इटालियाई बन्दरगाह सफल होने वाला वेनिस, या जेनोआ या पीसा नही था, किन्तु लेगहान था। और लेगहान का निर्माण पुनर्जागरण के पश्चात् टसकनी के एक ग्रेंड ड्यूक ने किया था। उसन स्पेन और पुर्तगाल से प्रच्छन्न यहूदियो को लाकर बसाया था। यद्यपि लेगहान पीसा से कुछ ही मील दूर बसा था उसकी समृद्धि इन परिश्रमी शरणार्थियो के कारण हुई थी जो पश्चिमी भूमध्य सागर के दूसरे तट से आये थे। उनके लिए नही जो मध्ययुगीन पीसा के नाविकों के दुबल वशज थे।

राजनातिक क्षेत्र में इटली का एकीकरण मूलत आल्पस पार एक छोटे राज्य द्वारा हुआ था जिसका अस्तित्व इटली की ओर के आल्पस क्षेत्र में नगण्य था सिवाय फ्रेंच बोलने वाले वाल ड आयास्टा प्रदेश के। सेवाय के घराने की शक्ति इटली की और आल्प्स क्षेत्र में तब तक शात नहीं हुई जब तक कि इटालियाई नगर राज्यो की स्वाधीनता और इटालियाई पुनर्जागरण की प्रतिभा क्रमश समाप्त नहीं हो गयी। और जब तक सारे प्रथम श्रेणी के नगर सारडिनिया के राजा के, जो अब सेवाय के घराने के शासक का नाम हो गया था, शासन में नहीं आ गये थे और जब तक नेपाल्यिनियाई युद्ध के पश्चात् जेनोआ भी नही ले लिया गया। सेवाय के घराने की विशिष्टता अब भी नगर राज्य परम्परा से इतनी भिन्न थी कि सारडिनियाँ के राजा के शासन में जेनोआ वाले बहुत क्षुब्ध थे। यह क्षोभ उस समय सन् १८४८ में शात हुआ जब इस घराने ने इटालियाई राष्ट्रीय आन्दोलन का नेतृत्व ग्रहण किया।

सन् १८४८ में लाम्बार्डी और वेनिशिया में आस्ट्रियाई शासन को पीडमाट क आक्रमण की आशका हुई और साथ ही आस्ट्रियाई राज्य के वेनिस मिलन तथा इटली के और नगरो में विप्लव हुआ। इन दोनो आस्ट्रिया विरोधी आन्दोलनो की भिन्नता के ऐतिहासिक महत्त्व पर

विचार करना मनोरंजक होगा। ये दोना आन्दोलन एक साथ हुए और सरकारी रूप से दोना ने इटालियाई स्वतन्त्रता के आन्दोलन के समर्थन में प्रहार किया। वेनिस और मिलन के विप्लव स्वतन्त्रता के पक्ष में अवश्य थे किन्तु जिस स्वतन्त्रता की भावना ने उन्हें उत्प्रेरित किया था वह मध्ययुगीन प्राचीनता की स्मृति का स्वप्न था। य नगर हाहेनस्टाउफेन के विरुद्ध अपना मध्य युगीन संघर्ष पुन आरम्भ कर रहे थे। ये विफल हुए किन्तु इनका प्रयत्न वीरतापूर्ण था। तुलना में सन १८४८–४९ का पीडमाट का प्रयत्न अशोभनीय था। इन्होने (पीडमाट वाला ने) जो बुद्धिमत्तायुक्त विराम सन्धि का उल्लंघन किया उसका दण्ड उन्हें नोवारा की लज्जाजनक पराजय में मिला। किन्तु पीडमाट का यह अपमान वेनिस और मिलन की यशस्वी दशा से, इटली के लिए कही अधिक कल्याणकारी हुआ। क्योकि पीडमाट की सेना बची रही और (पर्याप्त फ्रासीसी सहायता स) दस साल बाद मजेंटा मे इसने बदला ले लिया। और राजा चार्ल्स आलबर्ट ने अंग्रेजी ढग का, नये ढग का जो संसदीय विधान प्रदान किया वही १८६० में संयुक्त इटली का विधान बना। इसके विपरीत १८४८ में मिलन तथा वनिस के नताओ ने जो कीर्तिकर कारनामे दिखलाये व फिर दोहराये न जा सके। उसके बाद ये पुराने नगर पुन स्थापित आस्टियाई शासन में आये और उनकी मुक्ति पीडमाट की सेना तथा कूटनीति के कारण हो पायी।

इस अन्तर का कारण यह जान पडेगा कि वेनिस तथा मिलन की १८४८ के य कारनामे असफल होने ही, क्योकि इनके पीछे जो आध्यात्मिक शक्ति थी वह आधुनिक राष्ट्रीयता नही थी पुराने मध्ययुगीन नगर राज्यो के अपने मत रूप की मूर्तिपूजा थी। उन्नीसवी शती के वनिस वाले, जिन्होने मैनिन की पुकार सुनी केवल वनिस के लिए लड रहे थ। वे लुप्त वेनिसी लोक तन्त्र की पुन स्थापना करना चाहते थे। संयुक्त इटली क निर्माण में योगदान नही करना चाहते थे। इसके विपरीत पीडमाट के लोग अपने प्राचीन लुप्त रूप को मूर्ति बनाकर पूजना नही चाहते थे, क्योकि उनकी प्राचीनता म कोई बात ऐसी नही थी जिसकी पूजा के लिए मूर्ति स्थापित की जा सकती थी।

दोनो का अन्तर मनिन और काबूर के अन्तर स स्पष्ट हो जाता है। मनिन निश्चय रूप स वेनिसी था और चौदहवी शती क लिए बिल्कुल उपयुक्त था। काबूर जिसकी मातृभाषा फ्रासीसी थी और जिसकी दृष्टि विक्टोरियाई थी, चौदहवी शती क इटालियाई नगर राज्यो क वातावरण के नितान्त प्रतिकूल था जिस प्रकार उसके आल्पस पार क समकालीन पील और थायस थ। वह अपने संसदीय राजनीतिक तथा कूटनीतिक गुणो को और वैज्ञानिक कृषि तथा रेल्व निर्माण की रुचि का अच्छे प्रकार उपयोग करता यदि भाग्यवश वह उन्नीसवी शती म इटली में उत्पन्न होने क स्थान पर इंग्लैड अथवा फ्रास म जमीदार हुआ होता।

इन प्रमाण स १८४८ का विप्लव इटली के पुनर्जागरण में निरर्थक था। यह असफलता मूल्यवान् थी और १८५९–७० की क्रान्ति की सफलता क लिए आवश्यक था। सन् १८४८ में मिलन और वनिस के मध्ययुगीन देवता इतने चकनाचूर तथा विरल हो गये थ कि उनके उपासको पर स उनका प्रभाव जाता रहा। और प्राचीनता का यह विनाश यद्यपि दर में हुआ तथापि इसने संयुक्त इटालियाई राज्य की स्थापना के लिए स्थान बना लिया जिसमें किसी मध्ययुगीन स्मृति का छाप नही थी।

स्पष्ट है, किन्तु आगे चलकर ये राज्य क्या असफल हो गये और उत्तर करोलिना सफल हो गया। इसका कारण यह है कि पीडमाट की भाति उत्तर करोलिना के लिए कोई गौरवमय प्राचीन पूजा विघ्न डालने वाली न थी। गृहयुद्ध से उसकी प्राय कुछ हानि नही हुई क्योकि हानि के लिए उसके पास कुछ था नही। और किसी विशेष ऊचाई से पतन नही हुआ इसलिए उठने में कठिनाई नही हुई।

पुरानी समस्याओ पर नया प्रकाश

सजनात्मकता के प्रतिशोध के इन उदाहरणो से उन परिस्थितिया पर नया प्रकाश पडता है, जिनपर इस अध्ययन में पहले हमारा ध्यान गया था और जिसे हमने नयी धरती की प्रेरणा' कहा था। यह परिस्थिति ऊपर के उदाहरणो में हमने फिर पायी। यहूदियो की तुलना में गलीनियन और गैर ईसाई मिस्न और वेनिस की तुलना में पीडमाट और उसके पडोसियो की तुलना में उत्तर करोलिना। इसी प्रकार की खोज यदि एथेन्स के सम्बध में करते तो हमने प्रमाणित किया होता कि यूनान ने जो ई० पू० तीसरी तथा दूसरी शती में अपने नगर राज्या के सघ बनाने का प्राय सफल किन्तु असाध्य प्रयत्न किया था वह अटिका में नही अकेडया में हुआ। यह असफल प्रयत्न नगर राज्या की स्वतत्रता सुरक्षित करने के लिए उन महान् शक्तिया के विरुद्ध था जो हेलेनी जगत् की सीमा पर नये नये राज्यो के रूप में बन गये थे। हम इस प्रकार देखते ह कि नयी धरती की उत्कृष्ट उवरता ही पूर्ण रूप से अथवा निश्चित रूप से उस धरती को जोतने की प्रेरणा का कारण नही होती। नयी धरती में सफलता क्या होती है इसके लिए निषेधात्मक कारण भी है और नियति भी। अर्थात् वहाँ अहितकर प्राचीन स्मृतियाँ और परम्पराएँ नही ह जिन्हें हटाया नही जा सकता और जो विघ्नरूप में नही ह।

एक दूसरी सामाजिक परिस्थिति का कारण भी हम समझ सकते ह। किस प्रकार सजनात्मक अल्पमख्यक वग शक्तिशाली अल्पमख्यक वग में परिवर्तित हो जाता है। हमने इस अध्ययन में पहले इस प्रकार के अध्ययन का आरम्भ कर दिया था कि यह सामाजिक पतन और विनाश का एक प्रमुख कारण है। सजनात्मक अल्पमख्यक वग इस परिवतन से बहुत अवनत नही होता, सजन कर्ता निश्चय ही इस अवनति की ओर जाने लगता है। सजन की प्रतिभा जब पहले-पहल प्रस्फुटित होती है तब चुनौती का सफल सामना करती है और बाद में स्वय नयी और शक्तिशाली चुनौती उसी के लिए बन जाती है जिसने इस प्रतिभा का बहुत ही अच्छा उपयोग किया था।

(४) सर्जनात्मकता का प्रतिशोध अस्थायी सस्था की भक्ति

हेलेनी नगर-राज्य

हेलनी समाज के पतन और विघटन में इस सस्था (नगर राज्य) की भक्ति का बहुत योगदान रहा है। अपनी सीमा में य अत्यन्त सफल रहे किन्तु सभी मानवी सष्टिया के अनुसार अस्थायी। हमें दो विभिन्न परिस्थितिया का अन्तर समझना पडेगा जिनमें यह केवल सामाजिक समस्या क सुलझाने में बाधक रहा है।

इन दो समस्याओ में पहली और जो अधिक गम्भीर था उसे हमने दूसरे सदभ में पहले अध्ययन कर लिया है इसलिए उसे हम छोड देंगे। जिसे हमने मानसी आर्थिक क्रान्ति बताया है उसके

परिणामस्वरूप एक हेलेनी ससार का सघटन आवश्यक था । इसका प्रयत्न अथीनियना ने किया किन्तु विफल रहे और परिणामस्वरूप हेलेनी समार का विघटन हो गया । स्पष्ट है कि इसका कारण यह था कि नगर-राज्य की प्रभुता के रोडे को हटाने में सब सम्बधित लोग असफल रह । एक ओर यह मुख्य और अनिवाय समस्या बिना सुल्झे रह गयी और एक दूसरी समस्या उत्पन्न हो गयी जो हेलेनी प्रमुख अल्पसख्यको की स्वय उत्पन्न की हुई थी । यह ठीक उसी समय उत्पन्न हुई जब हेलेनी इतिहास चौथी और तीसरी शती ई० पू० में दूसरे से तीसरे अध्याय में पहुँचा ।

इस सक्रमण काल का वाहरी चिह्न यह था कि हेलेनी जीवन में भौतिकता बहुत बढ गयी । अभी तक उनका सामुद्रिक जीवन भू मध्यसागर के बेसिन तक सामित था । अब वह डाइनलीज से भारत तक और ओलिम्पस तथा अपेनाइन से डेन्यूब और राइन तक विस्तत हो गये । जो समाज इतना विस्तृत हो गया हा और जिसने उन राज्या के बीच, जो सगठित किये गये थे शान्ति और व्यवस्था की आध्यात्मिक समस्या का समाधान न किया हो, उसमें प्रभुसत्ता वाला राज्य इतना छोटा हो गया कि राजनीतिक जीवन में व्यावहारिक इकाई के रूप में वह नहा रह सकता था । इतना वडा दुर्भाग्य कम नही था । हेलेनी समाज की यह परम्परागत सकुचित प्रभुसत्ता का नाश हो जाना एक दु स्वप्न की समाप्ति की भाँति अच्छा ही हाता । इस प्रकार इस परम्परागत सकुचित सत्ता का विनाश भगवान् की देन होती । यदि सिकन्दर, जीनो और एपीक्यूरस को मित्र वनाने के लिए जीवित रहता तब यह कल्पना की जा सकती है कि हेलेनी लोग नगर-राज्य की सकुचित सीमा से बाहर निकल कर सावभौमिक नगर का स्वरूप बनाते । और इस परिस्थिति में हेलेनी समाज का जीवन-काल बढ जाता । किन्तु सिकन्दर की अकाल मृत्यु के कारण ससार उसके उत्तराधिकारियो की दया पर रह गया । और समशक्ति वाले मैसिडानियाई युद्ध-नायको ने नगर राज्य की सकुचित प्रभुसत्ता उस नये युग में भी जीवित रखी, जिसका सिकन्दर ने प्रादुर्भाव किया था । किन्तु हेलेनो जीवन में जा भौतिकता की उन्नति हो रही थी उसमें एक ही स्थिति में सकुचित प्रभुसत्ता की रक्षा हो सकती थी । प्रभुसत्ता नगर राज्य के स्थान पर ऊँचे चरित्र बल के नये राज्य वनें ।

ये नये राज्य सफलतापूवक बने किन्तु २२० और १६८ ई० पू० के बीच राम ने जो आक्रमण अपने प्रतिद्वन्द्वियो के ऊपर किये उसक फलस्वरूप ये सब राज्य नष्ट हो गये और केवल एक वच गया । जिस हेलेनी समाज ने स्वेच्छा स सघटित हाने का अवसर खा दिया वह जबरदस्ती एक सावभौम राज्य के रूप में बध गया । किन्तु इस समय हमारी अभिरुचि की यह बात है कि जिस चुनौती ने पेरिक्लीज़ के एथेन्स को पराजित किया था और रोम न जिसका सामना किया और वे सब वस्तुएँ जिनके कारण यह सावभौम राज्य वना, उन लोगा की सहायता के कारण है जिन्हें परम्परागत सकुचित प्रभुसत्ता स कोई मोह नही था ।

हेलेनी ससार की सकीण प्रभुसत्ता तथा उसी प्रकार की आज की हमार ससार की समस्या की समानता पर यहाँ जोर देने की आवश्यकता नही है । किन्तु इतना कहा जा सकता है कि हेलेनी इतिहास के प्रमाण पर हम यह आशा कर सकते ह कि हमारे पश्चिमी जगत् की समस्या, यदि सुलझ सकती है तो उसी दिशा या दिशाआ से जहा की राष्टीय सत्ता को निम्न श्रेणी की भक्ति का रूप नहीं दिया गया है । हमारी मुक्ति पश्चिम यूरोप के राष्ट्रीय राज्या द्वारा नही

मिल सकती क्योंकि वहा प्रत्येक राजनीतिक विचार तथा भावना सकुचित प्रभुसत्ता से बधी हुई है और जिसे वे वभवपूर्ण पुरातन का प्रतीक मानते है। इस एपिमेथियाई मनोवैज्ञानिक वातावरण में हमारा समाज ऐसे किसी नये अन्तर्राष्ट्रीय सस्था को नही खोज सकता जो सकुचित प्रभुसत्ता को किसी ऊँचे विधान की मर्यादा के अन्तर्गत रख सके और अन्तिम प्रहार के विनाश से, जो अवश्यम्भावी है, सुरक्षित कर सके। यदि कभी यह खोज हो सके तो जिस राजनीतिक प्रयोगशाला में हमें यह सस्था प्राप्त होगी वह इस प्रकार की कोई सस्था होगी जसे ब्रिटिश राष्ट्र-मण्डल जिसने एक प्राचीन यूरोपीय राष्ट्रीय राज्य के अनुभव को अनेक समुद्र पार विदेशी राज्यो का जो अभी निर्माण काल मे है गठबन्धन किया है या वह सोवियत यूनियन के समान कोई राजनीतिक सघटन होगा जो अनेक अ-पश्चिमी जातियो को पश्चिमी क्रान्तिकारी विचारो द्वारा नये समाज में सघटित करने का प्रयत्न कर रहा है। सोवियत यूनियन की तुलना हम सल्युकस के साम्राज्य से कर सकते है और ब्रिटिश साम्राज्य का रोमन राष्ट्रमण्डल से। क्या ये अथवा पश्चिमी शृखला की सीमा पर का कोई राजनीतिक समाज अन्त में किसी एसे राजनीतिक सघटन का निर्माण करेगा जिससे हमें उस अप्रौढ अन्तर्राष्ट्रीय सघटन के स्थान पर, जो हम युद्ध के पश्चात के लीग आव नेशन्स के बाद बनी है वास्तविक स्थायित्व प्रदान कर सके। हम कह नही सकते, किन्तु हमें विश्वास है कि यदि ये नेता असफल रहे तो राष्ट्रीय प्रभुसत्ता वाले कट्टर भक्तो के द्वारा यह कभी नही हो सकेगा।

पूर्वी रोमन साम्राज्य

ऐसी सस्था की अन्ध भक्ति का क्लासिक उदाहरण वह है जिसके कारण समाज को दुख भोगना पडा, परम्परावादी ईसाई जगत का रोमन साम्राज्य के भूत के प्रति अत्यधिक मोह था। यह प्राचीन सस्था अपना ऐतिहासिक कार्य समाप्त कर चुकी थी और हेलनी समाज से उत्पन्न सार्वभौम राज्य के रूप की अपने जीवन की अवधि पूर्ण कर चुकी थी।

ऊपरी तौर पर ऐसा जान पडता है कि पूर्वी रोमन साम्राज्य एक ही सस्था के रूप में बराबर उस समय से जब कान्स्टैंटाइन ने कान्स्टटिनोपल की स्थापना की थी और ग्यारह शती बाद तक जब उसमानिया तुर्कों ने १४५३ में इस नगर पर विजय प्राप्त की कायम रहा। अथवा कम से कम उस समय तक जब लटिन धर्म-योद्धाओ ने १२०४ ई० में कान्स्टटिनोपल अपने अधिकार में कर लिया था और अस्थायी रूप से पूर्वी रोमन साम्राज्य की सरकार को निकाल बाहर किया था। किन्तु वास्तविकता दूसरी जान पडती है। इन दोनो सस्थाओ को अलग-अलग समझना ठीक होगा। इन दोनो के बीच अन्तर था और समय के हिसाब से दोनो के बीच अन्त काल था। मूल रोमन साम्राज्य का जिसने हेलनी सार्वभौम राज्य का रूप ग्रहण किया था, अधकार काल में पश्चिम में अन्त हो चुका था। यथार्थत चौथी और पाँचवी शती में और आधिकारिक ढग स सन् ४७६ ई० में जब एक बर्बर योद्धा ने इटली के अन्तिम कठपुतली सम्राट को गद्दी से उतार दिया और उसके नाम पर वह कान्स्टन्टिनोपल पर शासन करता रहा। सम्भवत इस बात को अच्छी तरह नही माना जाता कि वही परिणाम मौलिक रोमन साम्राज्य का पूरब में भी अधकार युग समाप्त होने के पहले हो चुका था। उसका विघटन उसी समय हुआ जब ५६५ ई० में जस्टीनियन का परिश्रमपूर्ण और सकटपूर्ण शासन समाप्त हुआ। इसके पश्चात् पूरब में डेढ सौ वर्षों का

अन्त काल था । इसमे हमारा यह अभिप्राय नही है कि ऐसे व्यक्ति नहीं थे जो अपने को रोमन सम्राट कहकर कास्टैंटिनोपल से राज्य करते थे । किन्तु यह युग विघटन और जन्म का था जिसमें मृत समाज के अवशेष को फेंका गया और उसके नये उत्तराधिकारी का जन्म दिया गया । उसके पश्चात् ईसा की आठवी शती के पहले पचास में लिओसाइरस की प्रतिभा से मृत रोमन साम्राज्य का भूत जगाया गया । परम्परावादी ईसाई समाज के इतिहास के पहले अध्याय के पढने से यह जान पडता है कि लिओसाइरस सफलपूर्ण किन्तु असफल शार्लिमान था । शार्लिमान की असफलता के कारण पश्चिमी ईसाई धर्मतन्त्र से मध्ययुग में अनेक संकुचित पश्चिमी राज्य उत्पन्न हुए जिनके सम्बन्ध में हमें पर्याप्त जानकारी है । लिओ की सफलता ने पुनर्जीवित सार्वभौम राज्य के तंग वासकेट को परम्परावादी ईसाई समाज को कसकर पहना दिया, इसके पहले कि यह नवजात समाज अपने अंगो का संचालन भी कर सके । किन्तु इस अन्तर से लक्ष्य में कोई अन्तर न था । शार्लिमान और लिओ दोनो उसी अस्थायी और लुप्तप्राय सस्था के ऐपिमिथियाइ उपासक थे ।

परम्परावादी ईसाई जगत् की अपरिपक्वता तथा घातक महत्ता राजनीतिक संरचना में पश्चिम के प्रति उत्कृष्ट होने का हम क्या कारण बता सकते है । एक महत्वपूर्ण बात तो यह है कि इन दोनो ईसाई समाजो के ऊपर एक साथ अरब के मुसलमानो का आक्रमण था । सुदूर पश्चिम में अरबो ने सीरियाई समाज के लिए उत्तरी अफ्रीका और स्पेन में उसके खोये औपनिवेशिक राज्य को फिर से लेने के लिए आक्रमण किया । उसी समय जब उन्होने पिरनीज को पार किया और जब वे शिशु पश्चिमी समाज के हृदय पर आघात कर रहे थे उनकी आक्रमणकारी शक्ति समाप्त प्राय हो चुकी थी और जब भूमध्यसागर के दक्षिणी और पश्चिमी किनारे पर आक्रमण करने चल रहे थे उन्हें टूस में आस्ट्रेशियाई ढाल के समान दीवार का सामना करना पडा जिस पर उनके भाले ठीक निशाने पर न बैठकर इधर उधर छिटक गये । थके आक्रमणकारी पर यह निष्क्रिय विजय आस्ट्रेशियाई भाग्योदय के लिए पर्याप्त थी । सन ७३२ में टूस की यह कीर्ति आस्ट्रेशिया के पश्चिमी ईसाई समाज की आरम्भिक शक्तियो का नेता बनाने के लिए पर्याप्त थी । यदि अरब अस्त्र का यह दुर्बल आक्रमण करोलिजियनो को भरपूर तैयार कर सकने के योग्य था, तो इसमें आश्चर्य नही था कि परम्परावादी समाज में पूर्वी रोमन साम्राज्य का ठोस भवन बन जाय जो उस आक्रामक के जिसने परम्परावादी ईसाई समाज पर आक्रमण किया था जोरदार और अधिक समय तक चलने वाले हमले का सामना कर सके ।

इस तथा और कारणो से[1] लिओसाइरस तथा उसके उत्तराधिकारियो ने उस लक्ष्य को प्राप्त किया जहाँ तक पश्चिम में शार्लिमान नहा पहुँच सका या ओटो प्रथम, और तीसरा हेनरी पोप की सहमति से भी नहीं पहुँचा । और निश्चय ही बाद के सम्राट जिन्हें पोप के विरोध का सामना करना पडा नही पहुँच सके । पूरब (ईसाई जगत्) के सम्राटो ने अपने राज्यो में धर्म को

१ श्री टवायनबी की बडी पुस्तक में पूर्वी रोमन साम्राज्य के प्रति अधिक विस्तार से लिखा गया है । उतना और किसी ऐतिहासिक उदाहरण के सम्बन्ध में नहीं । देखिए, भाग ४, पृ० ३२०-४०८ ।—सम्पादक

राज्य का एक विभाग बना दिया और सब ईसाइयो के मुखिया (पेट्रियार्क) को एक प्रकार का धर्म का उपसचिव नियुक्त किया। इस प्रकार राज्य में और धर्म में सम्बन्ध पुन स्थापित किय जिसे कान्स्टैन्टाइन ने आरम्भ किया था और उसके उत्तराधिकारियो ने, जस्टीनियन तक, बनाये रखा। इस काय के दो प्रभाव हुए। एक साधारण और दूसरा विशेष।

साधारण प्रभाव तो यह हुआ कि परम्परावादी ईसाई समाज के जीवन से विविधता तथा परिवतनशीलता (एलास्टिसिटी), प्रयोगशीलता तथा सजनात्मकता की भावनाएँ रुक गयी और वे निर्जीव हो गयी। इसका दुष्परिणाम जो हुआ उसे हम पश्चिम की सहोदरा सभ्यता से जिसकी विशिष्ट उपलब्धियाँ ह तुलना करके देख सकते ह, जहाँ परम्परावादी ईसाइयो का प्रतिरूप नही है। परम्परावादी ईसाई समाज में हिल्डब्रैड के पोप तन्त्र सी कोई वस्तु नहा है और न स्व शासित विश्वविद्यालय है, न स्व शासित नगर राज्य।

इसका विशेष प्रभाव यह हुआ कि पुनर्जीवित साम्राज्य शासन ने स्वतन्त्र बबर राज्यो की उपस्थिति सहन नही की जो उस क्षेत्र में फले हुए थे जहाँ की सभ्यता का प्रतिनिधित्व यह साम्राज्य करता था। इस असहिष्णुता का परिणाम ईसा की दसवी शती के रोमन-बुल्गारियन युद्ध थे, जिसमें पूर्वी रोमन साम्राज्य को अपूरणीय क्षति पहुँची यद्यपि ऊपरी ढग से यह विजयी था और जसा कि दूसरे स्थान पर हम बता चुके है इन युद्धा से परम्परावादी ईसाई समाज का विनाश हुआ।

राजा, ससद और नौकरशाही

नगर राज्य अथवा साम्राज्य ही ऐसी राजनातिक सस्थाएँ नही ह जिन्हें लागा ने भक्ति और पूजा की दृष्टि से देखा है। ऐसी ही प्रतिष्ठा, राज्यो की और सत्ताओ का भी मिली है—चाहे वह 'ईश्वरीय' राजा हो अथवा सवशक्तिमान् ससद हा। और परिणाम भी वैसा ही हुआ है। किसी जाति वग अथवा व्यवसाय के प्रति भी जिसके कौशल अथवा शक्ति के ऊपर किसी राज्य को निभर रहना पडा हो वैसी निष्ठा रही है और परिणाम वसा ही हानिकारक हुआ है।

ऐसी भक्ति का महत्त्वपूण उदाहरण जिसमें कि एक मानव की पूजा की गयी है मिस्री समाज के पुराने राज्य-तन्त्र में मिलता है। एक दूसरे सम्बन्ध में हम पहले देख चुके ह कि मिस्री सयुक्त राज्य के राजाओ ने ईश्वरीय प्रतिष्ठा को स्वीकार किया अथवा उसकी माँग की और उसका परिणाम यह हुआ कि दूसर ऊँचे उद्देश्य का महान् तिरस्कार किया। मिस्री इतिहास की इस दूसरी चुनौती को स्वीकार न करने के कारण घातक असफलता इस समाज को मिली जिसके कारण मिस्री समाज का अकाल प्रौढ यौवन जल्दी ही समाप्त हा गया और मिस्री सभ्यता का पतन हा गया। मिस्री जीवन पर इन मानवी देवताओ ने भय देने वाले दुःस्वप्न की भाँति जो कुप्रभाव डाला उसके प्रतीक पिरामिड है जा प्रजा स जबरदस्ती श्रम कराकर बनवाये गये और इसलिए कि ये पिरामिड अमर हा। जो कौशल धन और परिश्रम भौतिक परिस्थितियो पर नियन्त्रण करने क लिए लगाना चाहिए था जिससे सार समाज का हित हाता राज-पूजा की ओर गलत रास्त पर लगाये गये।

मनुष्य में राजनीतिक सत्ता की इस प्रकार पूजा करना कसी पथ भ्रष्टता है इसका उदाहरण और भी दिया जा सकता है। यदि हम इसी प्रकार का उदाहरण आधुनिक पश्चिमी समाज में खोजें तो उसका भ्रष्ट स्वरूप फ्रास क सूयवंशी राजा रि क राजकुमार चौदहवें लुई में पा सकत

हैं । इस पश्चिमी सूय का वरसाई का महल फ्रास की धरती पर उतना ही भारी बोझ था जितना गाजा के पिरामिड मिस्र पर । 'चिओप' भी ठीक इसी तरह कह सकता था कि 'म ही राज्य हूँ' और द्वितीय पेपी कह सकता था 'मेरे बाद प्रलय' । किन्तु आधुनिक पश्चिमी समार में जो सबसे मनोरजन उदाहरण राजसत्ता की पूजा का है उस पर ऐतिहासिक फसला अभी नही सुनाया जा सकता ।

वस्टमिनिस्टर की 'ससदो की जननी' का जो देव-तुल्य माना जाता है उसमें पूजा का पात्र व्यक्ति नही, एक समिति है । समितिया की इस असाध्य नीरसता ने, जिहे तथ्यात्मक आधुनिक अग्रेजी सामाजिक परम्परा से सहयोग कर लिया है, इस कारण वहा के ससद की भक्ति उचित सीमा में है और कोई अग्रेज जो सन् १९३८ में ससार की ओर देखे ता कह सकता है कि मेरी समुचित भक्ति का जो अपने राजनीतिक देवता के प्रति है समुचित पुरस्कार मिल रहा है । वह कहेगा कि मेरे देश की भक्ति जो 'ससदो की जननी' के प्रति है क्या उन पडोसियो से अच्छी नही है जो दूसरे देवताओ के पीछे दौडे ह ? क्या महाद्वीप की उन पथभ्रष्ट देश जातियो को शाति अथवा सुख मिला जो विदेशी डूचे, फ्यूरार अथवा कमिसरा की विह्वल चाटुकारिता म दौड रहे थे ? किन्तु साथ ही उसे यह भी स्वीकार करना पडेगा कि इधर हाल में ससदीय शासन की प्राचीन सकीर्ण (इनसुलर) सस्था से महाद्वीप पर जो सस्थाएँ उत्पन्न हुई हैं वे अस्वस्थ बच्चे की भाँति हैं और मानव की जीवित पीढी के अ ब्रिटिश बहुसख्यक जनता को उनम त्राण नही मिला है और युद्ध-जनित तानाशाही से वे रक्षा नही कर सकी है ।

शायद सत्य यह है कि वेस्टमिनिस्टर की ससद की वही विशेषताएँ जिनके कारण अग्रेज उसे प्रेम और आदर की दृष्टि स देखते हैं रुकावटें भी है जिनके कारण यह प्राचीन सस्था ससार के राजनीतिक रोगा की औषधि नही बन सकी । सम्भवत उस नियम के अनुसार जिसके सम्बध में हम पहले कह चुके हैं कि जो एक चुनौती का सफलतापूवक सामना कर लेते हैं दूसरी चुनौती का सामना करने में सफल नही होते—वेस्टमिनिस्टर की ससद मध्ययुग मे पूण सफल हुई क्योकि उसने आधुनिक (अथवा इसके पहले के आधुनिक) युग की जो अभी समाप्त हुआ है कठिनाइया पर विजय प्राप्त की । परन्तु उत्तर आधुनिक युग की चुनौती का जो इस समय हमारे सामने है नवीन मौलिक परिवतन करके, सामना करने म असमथ है ।

यदि हम ससद (ब्रिटिश) की रचना की ओर ध्यान द तो मालूम होगा कि वह मुख्यत स्थानीय निर्वाचन क्षेत्रो के प्रतिनिधिया की सभा है । जिस काल और जिस स्थान पर वह बनी उसस यही आशा की जाती है । क्योकि मध्ययुगीन पश्चिमी ससार के राज्य ग्राम-समुदाया के समूह थे जिनके बीच-बीच छोटे छोटे नगर थे । ऐसे तत्र में सामाजिक तथा राजनीतिक कार्यों के लिए पडोसिया का सगठन ही होता था और इस प्रकार के बने समाज में भौगोलिक समूह ही राजनीतिक सगठन की स्वाभाविक इकाई बन सकता था । किन्तु ये ससदीय प्रतिनिधित्व की मध्ययुगीन भित्तिया उद्योगवाद के आक्रमण से ढह गयी । आज स्थानीय शृखलाएँ राजनीतिक तथा और कार्यों के लिए महत्त्वहीन हो गयी ह । आज यदि हम अग्रेजो मतदाताओ स पूछें कि तुम्हारा पडोसी कौन है तो सम्भवत उसका उत्तर होगा मेरा साथी रेलवे-कमचारी या मेरा साथी खनिक चाहे वह लैंडस एण्ड से वान आव ग्रोटस के बीच कही रहता हो । आज वास्तविक निर्वाचन क्षेत्र स्थानीय न होकर व्यावसायिक हो गया है । किन्तु प्रतिनिधित्व का यह आधार

राज्य का एक विभाग बना दिया और सब ईसाइयो के मुखिया (पेट्रियार्क) को एक प्रकार का धर्म का उपसचिव नियुक्त किया। इस प्रकार राज्य में और धर्म में सम्बन्ध पुनःस्थापित किया जिसे कान्स्टैंटाइन ने आरम्भ किया था और उसके उत्तराधिकारियो ने, जस्टीनियन तक, बनाये रखा। इस काय के दो प्रभाव हुए। एक साधारण और दूसरा विशेष।

साधारण प्रभाव तो यह हुआ कि परम्परावादी ईसाई समाज के जीवन से विविधता तथा परिवतनशीलता (एलास्टिसिटी), प्रयोगशीलता तथा सजनात्मकता की भावनाएँ रुक गयी और वे निर्जीव हो गयी। इसका दुष्परिणाम जो हुआ उसे हम पश्चिम की सहोदरा सभ्यता से जिसकी विशिष्ट उपलब्धियाँ हैं तुलना करके देख सकते ह, जहाँ परम्परावादी ईसाइयो का प्रतिरूप नही है। परम्परावादी ईसाई समाज में हिल्डब्रड के पाप तन्त्र सी कोई वस्तु नहा है और न स्व शासित विश्वविद्यालय है न स्व शासित नगर राज्य।

इसका विशेष प्रभाव यह हुआ कि पुनर्जीवित साम्राज्य शासन न स्वतन्त्र बबर राज्यो की उपस्थिति सहन नही की जो उस क्षेत्र में फले हुए थे जहाँ की सभ्यता का प्रतिनिधित्व यह साम्राज्य करता था। इस असहिष्णुता का परिणाम ईसा की दसवी शती के रोमन-बुल्गारियन युद्ध थे जिसमें पूर्वी रोमन साम्राज्य को अपूरणीय क्षति पहुँची यद्यपि ऊपरी ढग से यह विजयी था और जैसा कि दूसरे स्थान पर हम बता चुके हैं इन युद्धो से परम्परावादी ईसाई समाज का विनाश हुआ।

राजा, ससद और नौकरशाही

नगर राज्य अथवा साम्राज्य ही एसी राजनीतिक सस्थाएँ नहा ह जिन्हें लोगो ने भक्ति और पूजा की दृष्टि से देखा है। ऐसी ही प्रतिष्ठा, राज्यो की और सत्ताओ को भी मिली है—चाहे वह 'ईश्वरीय' राजा हो अथवा 'सवशक्तिमान्' ससद हो। और परिणाम भी वसा ही हुआ है। किसी जाति वग अथवा व्यवसाय के प्रति भी, जिसके कौशल अथवा शक्ति के ऊपर किसी राज्य को निभर रहना पडा हो, वसी निष्ठा रही है और परिणाम वसा ही हानिकारक हुआ है।

ऐसी भक्ति का महत्त्वपूण उदाहरण जिसमें कि एक मानव की पूजा की गयी है मिस्री समाज के पुराने राज्य-तन्त्र में मिलता है। एक दूसरे सम्बन्ध में हम पहले देख चुके ह कि मिस्री सयुक्त राज्य के राजाओ ने ईश्वरीय प्रतिष्ठा को स्वीकार किया अथवा उसकी माग की, और उसका परिणाम यह हुआ कि दूसरे ऊँचे उद्देश्य का 'महान् तिरस्कार' किया। मिस्री इतिहास की इस दूसरी चुनौती को स्वीकार न करने के कारण घातक असफलता इस समाज को मिली जिसके कारण मिस्री समाज का अकाल प्रौढ यौवन जल्दी ही समाप्त हो गया और मिस्री सभ्यता का पतन हो गया। मिस्री जीवन पर इन मानवी देवताओ ने भय देने वाले दु स्वप्न की भाति जो कुप्रभाव डाला उसके प्रतीक पिरामिड है जो प्रजा से जबरदस्ती श्रम कराकर बनवाये गये और इसलिए कि ये पिरामिड अमर हो। जो कौशल धन और परिश्रम भौतिक परिस्थितियो पर नियन्त्रण करने के लिए लगाना चाहिए था जिससे सारे समाज का हित होता राज-पूजा की ओर गलत रास्ते पर लगाये गये।

मनुष्य में राजनीतिक सत्ता की इस प्रकार पूजा करना कसी पथ भ्रष्टता है, इसका उदाहरण और भी दिया जा सकता है। यदि हम इसी प्रकार का उदाहरण आधुनिक पश्चिमी ससार में खोजें तो उसका भ्रष्ट स्वरूप फ्रास के 'सूयवशी राजा' रे' के राजकुमार चौदहवें लुई में पा सकते

ह। इस पश्चिमी सूय का वरसाई का महल फ्रास की धरती पर उतना ही भारी बोझ था जितना गाजा के पिरामिड मिस्र पर। 'चिओप' भी ठीक इसी तरह वह सकता था कि 'मै हा राज्य हूँ' और द्वितीय पेपी वह सकता था 'मेरे बाद प्रलय'। किन्तु आधुनिक पश्चिमी ससार में जो सबसे मनोरजन उदाहरण राजसत्ता की पूजा का है उस पर ऐतिहासिक फैसला अभी नही सुनाया जा सकता।

वेस्टमिनिस्टर की 'ससदा की जननी' को जो देव-तुल्य माना जाता है उसमें पूजा का पात्र व्यक्ति नहा, एक समिति है। समितिया की इस असाध्य नीरसता ने जिद्दी तथ्यात्मक आधुनिक अग्रेजी सामाजिक परम्परा से सहयोग कर लिया है, इस कारण वहाँ के ससद की भक्ति उचित सीमा में है और कोई अग्रेज जो सन् १९३८ में ससार की आर देखे ता वह सकता है कि मेरी समुचित भक्ति का जो अपने राजनीतिक देवता के प्रति है समुचित पुरस्कार मिल रहा है। वह कहेगा कि मेरे देश की भक्ति जो 'ससदा की जननी' के प्रति है, क्या उन पडासिया से अच्छी नही है जो दूसरे देवताओ के पीछे दौडे ह? क्या महाद्वीप की उन पथभ्रष्ट दस जातिया को शाति अथवा मुख मिला जा विदेशी डूचे, फ्यूरार अथवा कमिसरा की विह्वल चाटुकारिता में दौड रहे थे? किन्तु साथ ही उस यह भी स्वीकार करना पडेगा कि इधर हाल में ससदीय शासन की प्राचीन सकीर्ण (इनसुलर) सस्था मे महाद्वीप पर जो सस्थाएँ उत्पन्न हुई ह वे अस्वस्थ बच्चे की भाँति ह और मानव की जीवित पीढी के अ ब्रिटिश बहुसख्यक जनता को उनसे त्राण नही मिला है और युद्ध-जनित तानाशाही से व रक्षा नहा कर सकी है।

शायद सत्य यह है कि वस्टमिनिस्टर की ससद की वही विशेषताएँ जिनके कारण अग्रेज उसे प्रेम और आदर की दृष्टि से देखते ह, रुकावट भी ह जिनके कारण यह प्राचीन सस्था ससार के राजनीतिक रोगा की औषधि नही बन सकी। सम्भवत उस नियम के अनुसार जिसके सम्बन्ध में हम पहले कह चुके ह कि जा एक चुनौती का सफलतापूवक सामना कर लेते ह दूसरी चुनौती का सामना करने में सफल नहा होते—वेस्टमिनिस्टर की ससद मध्ययुग में पूण सफल हुई क्योकि उसने आधुनिक (अथवा इसके पहले के आधुनिक) युग की जो अभा समाप्त हुआ है कठिनाइया पर विजय प्राप्त की। परन्तु उत्तर आधुनिक युग की चुनौती का जो इस समय हमारे सामने है नवीन मौलिक परिवतन करके, सामना करने म असमथ है।

यदि हम ससद (ब्रिटिश) की रचना की ओर ध्यान दें तो मालूम होगा कि वह मुख्यत स्थानीय निर्वाचन क्षेत्रो के प्रतिनिधिया की सभा है। जिस काल और जिस स्थान पर वह बनी उससे यही आशा की जाती है। क्योकि मध्ययुगीन पश्चिमी ससार के राज्य ग्राम-समुदाया के समूह थे जिनके बीच-बीच छोटे छोटे नगर थे। ऐसे तन्त्र में सामाजिक तथा राजनीतिक कार्यों के लिए पडोसिया का सगठन ही होता था और इस प्रकार के बने समाज में भौगोलिक समूह ही राजनीतिक सगठन की स्वाभाविक इकाई बन सकता था। किन्तु ये ससदीय प्रतिनिधित्व का मध्ययुगीन भित्तिया उद्योगवाद के आक्रमण से ढह गयी। आज स्थानीय शृखलाएँ राजनीतिक तथा और कार्यों के लिए महत्त्वहीन हो गयी ह। आज यदि हम अग्रेजी मतदाताओ से पूछ कि तुम्हारा पडासी कौन है तो सम्भवत उसका उत्तर होगा मेरा साथी रेलवे कमचारी या मेरा साथी खनिक चाहे वह लड्स एण्ड से जान आव ग्रोटस के बीच कहीं रहता हो। आज वास्तविक निर्वाचन क्षेत्र स्थानीय न होकर व्यावसायिक हो गया है। किन्तु प्रतिनिधित्व का यह आधार

वैधानिक 'अज्ञात देश' है और 'ससद की जननी' अपने बुढ़े जरा जीवन में उसका पता लगाने की आवश्यकता नहीं समझती ।

बीसवी शती की ससद का प्रशसक इसका चलता जवाब दे सकता है । अमूत रूप से वह कह सकता है कि बीसवी शती के समाज के लिए तेरहवी शती की निर्वाचन प्रणाली अनुपयुक्त है । किन्तु साथ ही यह भी कहेगा कि सिद्धान्त रूप से जो अनुपयुक्त है वह व्यवहार में ठीक चल रही है । वह कहेगा, 'हम अग्रेजो ने जिन सस्थाओ का निर्माण किया है उनमे हम किसी भी अवस्था में काम कर सकते है । रह गया विदेशियो के लिए फिर तो—और यह उदासीनता प्रकट करेगा ।

हो सकता है कि अपने राजनीतिक उत्तराधिकार के विश्वास का वह सदा समथन करता रहे कि 'वे छोटे लोग जिनके पास विधान नही था आश्चय करगे क्योकि उन्होने जिस गोली को सर्वोत्तम औषधि समझकर निगल लिया था, घोर अपच होने के कारण उसका तिरस्कार कर दिया । इसी उदाहरण के अनुसार यह इग्लैड के लिए सम्भव नही होगा कि जिस सत्रहवी शती के कौशल से उसे सफलता मिली उसके अनुसार फिर वह कोई नयी राजनीतिक सस्था नही बना सकता जिसकी इस नये युग में आवश्यकता है । जब कोई नयी चीज बनानी होती है तो उसके दो ही ढग है—सजन अथवा अनुकरण । अनुकरण तब तक नही हो सकता जब तक किसी ने सजन न किया हो जिसका अनुकरण किया जा सके । पश्चिम के इतिहास के चौथे अध्याय में, जो हमारे युग का अध्याय है—कौन नया राजनीतिक सजनकर्ता होगा ? अभी हमें इसका कोई प्रमाण नही मिल रहा है कि कोई इस पद के योग्य है किन्तु हम विश्वास के साथ कह सकते हैं कि वह नवीन राजनीतिक सजक 'ससद की जननी' का कोई उपासक नही होगा ।

सस्था के देवता के सर्वेक्षण को हम जातियो, वर्गों और व्यवसायो की मूर्तिपूजा पर विचार करके समाप्त करगे । हमारे पास इसके लिए सामग्री है । अविकसित सभ्यताओ का अध्ययन करते समय हमें दो ऐसे समाज मिले—स्पाटन और उस्मानली वग—जिसके भवन का मूल जाति या जो वास्तव में सामूहिक देवता और देवता रूप में लेविआयन[1] था । यदि किसी जाति की भक्ति से सभ्यता का विकास रुक सकता है तो उससे उसका विनाश भी हो सकता है । इस बात को ध्यान में रखते हुए यदि हम मिस्री समाज का अध्ययन कर तो हम देखग कि दैवी राज्य ही भक्ति का भयावह स्वप्न नही था, जिसका बोझ 'पुराने राज्य' के मिस्री किसानो की पीठ पर पडा था, शिक्षित वग की नौकरशाही का भी बोझ उन्हें वहन करना पडता था ।

सच्ची बात यह है कि दैवी राज्य के लिए शिक्षित सचिवालय आवश्यक है । इसकी सहायता के बिना राज्य का दवी रूप सिंहासन पर सुरक्षित नही रह सकता । मिस्री शिक्षित वग ही गद्दी के पीछे की शक्ति था और समय के हिसाब से समय से पहले था । वे जानते थे कि हम अनिवाय हैं । इस ज्ञान का उन्होने फायदा उठाया और प्रजा के कधो पर ढोने के लिए यह बोझ रखा । मिस्री व्यास इन बोझो को उठाने के लिए एक उँगली भी नही लगाते थे ।' मिस्री इतिहास के प्रत्येक युग का यही विषय है कि शिक्षित वग को साधारण किसानो के ऊपर विशेषाधिकार प्राप्त है और मिस्री नौकरशाही का यशगान है । 'दि इन्स्ट्रक्शन आव दुआफ' पुस्तक में यह बात

१ एक विशालकाय जीव ।

जोरा से लिखी गयी है, यह रचना मिस्री सकट के काल की है। हजार साल बाद की उसकी प्रतिया प्राप्त हैं जब 'नये साम्राज्य' में स्कूल के विद्यार्थी उसकी लिपि उतारने का अभ्यास किया करते थे। यह 'िाा दुआफ' ने अपने पुत्र पेपी के लिए उस समय लिखी थी जब वह जहाज से 'रेजिडेन्स' की ओर जा रहा था जहा वह अपने पुत्र को मजिस्ट्रटा के लडका के साथ पढने के लिए ले जा रहा था विदाई के समय अपने पुत्र को महत्त्वाकाक्षी पिता की यह शिक्षा है

'मने उसे देखा है जो पीटा गया है, जो पीटा गया है, तुम अपना मन पुस्तका में लगाना। मने बेगार से मुक्त होने वाला को दखा है, किन्तु याद रखा पुस्तका से बढकर कुछ नही है। जो शिल्पी छनी से काम करता है वह उससे अधिक तक जीता है जो धरती खोदता है। सगतराश को हर प्रकार के कठोर पत्थर से काम करना पडता है। जब उसका काय समाप्त हो जाता है उसकी बाहें शिथिल पड जाती ह और वह थक जाता है। खेत में काम करने वाले का हिसाब सदा बना रहता है , वह जितना थक जाता है उसका वणन नही हो सकता। अपने करघे पर जुलाहे को किसी स्त्री से भी अधिक परिश्रम करना पडता है। उसकी जाघें कमर से सटी रहती हैं और वह साँस नही ले सकता। हम यह भी बतला दें कि मछुए को क्या करना पडता है। क्या उसे नदिया में नही काम करना पडता जिसमें घडियाल भरे रहते है। दखो कोई व्यवसाय ऐसा नही है जिसमें कोई निर्देशक न हो। केवल लिपिक का कोई निर्देशक नही है। वह स्वय अपना निर्देशक है '

सुदूर पूव ससार में मिस्री 'लिपिक शाही' के ही समान मन्दारिन की भयावह सस्था थी जिसे सुदूर पूर्वी समाज ने अपने पूवजा के अतिम युग में उत्तराधिकार म पाया था। कनफ्यूशियस वाले इस शिक्षित वग न लाखा श्रमिका के परिश्रम के बोझ को हल्का करने के लिए उँगली न उठाने के लिए अपने नखा को इतना बढा लिया था कि लिखने के ब्रुश के प्रयोग करने के अतिरिक्त उनका हाथ और काइ काय नही कर सकता था। और उत्तर-पूर्वी इतिहास में इतना परिवतन होने पर तथा इतने अवसर आने पर भी उन्होने अपने मिस्री सहकर्मिया के समान अपनी दुखदायी स्थिति को स्थिर रखा। पश्चिमी सस्कृति के सघात म भी वह अपने स्थान स हटा नही। अब कनफ्यूशियाई क्लासिक्स की परीक्षाएँ नही होती किन्तु शिक्षित वग किसानो पर शिकागो विश्व विद्यालय अथवा 'लदन-स्कूल आव एकनामिक्स एण्ड पालिटिक्स' की डिगरी दिखाकर अपना रोब जमाता है।

मिस्री इतिहास में राजसत्ता के मानवीकरण से—यद्यपि बहुत विलम्ब से—दीघकाल पीडित जनता के दु खा में जो कमी हुई उसका सतुलन अनेक वगजनित पीडाओ से हुआ। नौकरशाही का बोझ वहन करना मानो पर्याप्त नही समझा गया नये साम्राज्य में शक्तिशाली मत्र मिस्री सघ के रूप में पुरोहितवाद का सगठन किया गया और सम्राट तोतमिज ततीय (१४९० १४३६ ई० पू०) ने थीबिस में अमान र को उसका अध्यक्ष बनाया। इसके बाद स मिस्री मदारिन के साथ मिस्री ब्राह्मण भी जनता (रूपी घोड) की गदन पर सवार हो गया। उसके बाद यह मिस्री सरकस का घोडा जिसकी रीढ टूट चुकी थी अपने चिरतन चक्र में ठोकर खाता रहा और फिर लिपिक तथा पुरोहित के पीछे एक शानदार सनिक भी तीसरा सवार हो गया।

जिस प्रकार पूर्वी रोमन साम्राज्य अपने विकास काल म सयवादी नही था उसी प्रकार मिस्री समाज अपने स्वाभाविक जीवन काल में सयवाद से अलग था। और जब हाइक्सो

राजाओं से मुठभेड़ होने लगी तब आक्रमण कर सत्यवाद की ओर मुड़ना पड़ा जिस प्रकार पूर्वी रामन साम्राज्य को बुल्गारिया से लड़ाई करने पर विवश होने पर गैयवादी होना पड़ा। अठारहवीं पीढ़ी के सम्राट हाइक्सो लोगों को मिस्री ससार की सीमा से बाहर निकाल कर ही सन्तुष्ट नहीं हुए। आत्मरक्षा से आगे बढ़कर वे आक्रमणकारी हो गये और एशिया में मिस्री साम्राज्य बनाया। इस गैर जिम्मेदार काम में बढ़ जाना तो सरल था, लौटना कठिन था। और जब धारा पलटी तब उन्नीसवीं पीढ़ी के सम्राटों ने देखा कि हमारे विरुद्ध धारा प्रवाहित होने लगी तो मिस्र की ही एकता स्थिर रखने के लिए उन्हें मिस्री समाज की शीघ्र क्षीण होती हुई शक्ति को दृढ़ करने के लिए विवश होना पड़ा। बीसवीं पीढ़ी के राज्य में पुरानी और जर्जर ठठरी पर फालिज गिर पड़ा। उत्तर मिनोई जनरेला के आवेग से यूरोपीय, अफ्रीकी तथा एशियाई बर्बरों ने मिलकर जो आक्रमण किया उसे विफल करने में इस अन्तिम असाधारण शौर्य के रूप में मिस्र ने उसका मूल्य चुकाया। जब (मिस्री घोड़े का) शरीर धराशायी हो गया, वहाँ का शिक्षित वर्ग और पुरोहित अभी तक जीन पर बैठे हुए थे और गिरने से उनकी हड्डियाँ नहीं टूटी थीं। इनके साथ वही लिबियाई आक्रामक का पौध आ मिला, और मिस्री संसार में उसने भाग्य की परीक्षा करने वाले सैनिक की भाँति पुनः प्रवेश किया। उसके दादा को इसी मिस्र की सीमा से उसी देश की सेना ने अपने अपूर्व बल से निकाल बाहर किया था। ग्यारहवीं शती की धन लोभी सेनाओं से जिस सैनिक वर्ग का जन्म हुआ था वह हजार वर्षों बाद तक मिस्री समाज पर सवारी करता रहा। यह वर्ग रणक्षेत्र में भले ही जनिसारियों और स्पार्टियेटों की अपेक्षा अपने बरियों से कम शक्तिशाली रहा हो, किन्तु अपने देश में किसानों को अपने पाँव तले निश्चित रूप से दाबे रही।

(५) सृजनात्मकता का प्रतिशोध अस्थायी तकनीक पर अंधविश्वास

मछली, सरीसृप और स्तनधारी जीव

जब हम यदि तकनीकों पर अंधविश्वास के सम्बन्ध में विचार करें, तो हमें उन उदाहरणों को स्मरण करना पड़ेगा जिन्हें हम देख चुके हैं और जिन्होंने कठोरतम दण्ड भोगा है। उसमानिया तथा स्पार्टन सामाजिक प्रणाली में मूल तकनीक मानव रूपी पशुओं का गड़ेरिया बनना अथवा मानव रूपी पशुओं का शिकार खेलना था, जिन पर वहाँ के शासकों का अंधविश्वास था और साथ ही साथ जिन संस्थाओं के द्वारा ये क्रियाएँ होती थीं उन पर भी उनकी भक्ति थी। और जब हम उन सभ्यताओं से जो मानवी चुनौती के कारण अविकसित रह गयीं उन सभ्यताओं की ओर देखते हैं जो भौतिक परिस्थितियों की चुनौती के कारण विकसित रहीं तो हम देखते हैं कि उनकी विपत्ति का कारण तकनीक पर अंधविश्वसनीय भक्ति ही है। खानाबदोश और एस्किमो की सभ्यता इस कारण विकसित न हो सकी कि उन्होंने शिकार तथा पशुपालन के तकनीक पर अपनी सब शक्तियों को केन्द्रीभूत कर दिया। उनके एकांगी जीवन ने पशु की भाँति जीवन निर्वाह करने को बाध्य किया, जिसके कारण मानवी बहुमुखी प्रतिभा का लोप हो गया। और यदि हम इस धरती के मनुष्य के जन्म के पहले के इतिहास को देखें तो इस नियम के अनेक उदाहरण मिलेंगे।

इस नियम को एक आधुनिक पश्चिमी विद्वान् ने जिसने अमानवी तथा मानवी जगत् का इस विषय का तुलनात्मक अध्ययन किया है इन शब्दों में वर्णन किया है

"जीवन सागर से आरम्भ होता है। वहाँ वह असाधारण दक्षता प्राप्त करता है। मछलियाँ ऐसे रूपों में विकसित हो जाती हैं जो बहुत सफल होती हैं (उदाहरण के लिए जैसे शार्क) कि आज तक बिना परिवर्तन के उनका अस्तित्व है। किन्तु आरोही (एसेंडिंग) विकास इस दिशा में नहीं है। विकास में डाक्टर हेंग का सूत्र सम्भवतः ठीक है 'सफलता के समान कोई विफलता नहीं है।' जो जीवन अपने वातावरण के नितान्त अनुकूल बन गया है, जिस जन्तु ने अपनी सारी क्षमता तथा जीवनी शक्ति एक स्थान पर केन्द्रित करके समाप्त कर दी है उसके पास मूल (रेडिकल) परिवर्तन के लिए कुछ शेष नहीं रह जाता। वह युग-युगों तक अपने प्रचलित तथा अभ्यासानुरूप जीवन का सामना करने में अपनी शक्ति को कम से कम व्यय करने लगता है। अन्त में यह होता है कि बिना चेष्टा किये स्वाभाविक ढंग से वह सब कुछ कर लेता है जो उसे जीवित रहने के लिए आवश्यक होता है। उस विशेष क्षेत्र में सभी प्रतिद्वन्द्वियों को वह पराजित कर सकता है। किन्तु इसी के साथ यदि क्षेत्र में परिवर्तन हो जाय तो वह विलुप्त हो जाता है। दक्षता की यही सफलता है जिसके कारण जातियों की विशाल संख्या लोप हो गयी। जल-वायु में परिवर्तन हो गया। उन जीवों में अपनी सारी जीवन शक्तियाँ, जहाँ वे थे उसके अनुकूल जीवित रहने में व्यय कर डालीं। मूर्ख कुमारियों के समान उनके पास साधन शेष नहीं रह सका कि वातावरण के अनुकूल अपने को बना सकें। वे सामंजस्य स्थापित नहीं कर सके और लुप्त हो गये।[1]

मछलियों की यह पूर्ण घातक सफलता जिसे उन्होंने सागरी जीवन में प्राप्त की और धरती पर के जीवन में नहीं, उसका विवरण इसी लेखक ने इसी सन्दर्भ में बताया है 'जिस समय जीवन समुद्रों तक ही सीमित था, मछलियों का विकास हो रहा था। उनके शरीर इस प्रकार बनने लगे कि एक रीढ़ बना और इस प्रकार उस समय के सबसे विकसित कशेरुका (वर्टिब्रेट) में उनका स्थान था। फिर सिर की सहायता के लिए रीढ़ से दोनों ओर टोह लेने वाले पंखे उगे, जो समय पाकर अग्र-पक्ष (फोर फिन) हुए। शार्क में और प्रायः सभी मछलियों में इसी टोह लेने वालों ने विशेषता प्राप्त की और वे टटोलने वाले न रहकर खेने वाले चप्पे (पैंडल) हो गये। और ये शिकारों के सामने पहुँचने के लिए अद्भुत तथा दक्ष पंजे बन गये। शीघ्र प्रतिक्रिया ही इसका कार्य हो गया, इसका कार्य अब धीरे धीरे का नहीं रह गया। अब यह चप्पे टटोलने वाले, परीक्षा करने वाले, खोज करने वाले नहीं रह गये, केवल पानी में गतिमान होने की दक्षता ही पा सके और किसी काम के नहीं रह गये। ऐसा जान पड़ता है कि मत्स्य जीवन के और रीढ़ वाले जीवन के पहले जीव छिछले गम तालों में रहने होंगे और तल से इनका सम्पर्क रहा होगा जिस प्रकार आज गरनेट (एक प्रकार की मछली) अपने टटोलने वाले अवयव की सहायता से तल से सम्पर्क रखती है। परन्तु बिना पूर्व विचार किये गति ही सब कुछ हो गयी, विशेषता के कारण मछलियों को तल छोड़कर जल में ही आना पड़ा और तल से तथा ठोस धरती से सब प्रकार का सम्पर्क जाता रहा। जल ही उनके लिए आधार रह गया। इसका अर्थ यह हुआ कि नयी परिस्थितियों से किसी प्रकार की प्रतिक्रिया बहुत सीमित हो गयी इसलिए वे ऊँची जाति की मछलियाँ, जिनसे और उच्च प्राणियों का विकास हुआ होगा, ऐसे जीव रहे होंगे जिन्होंने इस प्रकार के पंखों

१ जराल्ड हर्ड द सोस आव सिविल्जिशन, पृ० ६६–७।

भाप) था । आज यह ससार की अनेक कमनालाओ का प्रतिद्वन्द्वी है और उसका अपना हिस्सा बहुत दिनो से छोटा, अपेक्षाकृत छोटा होता जा रहा है । इस विषय पर कि 'क्या ब्रिटेन समाप्त हो गया' बहुत लोगो ने लिखा है और अनेक उत्तर मिले हैं । सम्भवत सब बातो को ध्यान में रखकर यह कहा जा सकता है कि विगत सत्तर वर्षों में हमने उससे अधिक किया जितनी आशा की जाती थी । यद्यपि निराशावादियो के और भर्त्सना करने वाले भविष्य वक्ताओ के लिए जिसका वर्णन सेमुएल बटलर ने एक उलटे वाक्य से किया है काफी गुजाइश है ।[1] किन्तु कोई एक बात हम ले लें जिसमें हमारा बहुत दोष है, तो हम अपने उद्योग के नेताओ का बतायेंगे जो उन्ही दकियानूसी तकनीको की पूजा अभी तक करते हैं जिनसे उनके पूवजो ने सम्पत्ति अर्जित की ।

इससे अधिक शिक्षाप्रद उदाहरण क्योकि वह व्यापक नही है, सयुक्त राज्य का है । इससे कोई इनकार नही कर सकता कि उन्नीसवी शती के मध्य में अमरीकियो ने अपने औद्योगिक आविष्कारो की विभिन्नता और कौशल में सबको पीछे कर दिया था और इन आविष्कारो का उपयोग व्यावहारिक रूप से किया था । सीने की मशीन, टाइप रायटर जूता सीने की मशीन, मैककार्मिक की खेत काटने की मशीन, कुछ यन्त्र है जो उनकी कल्पना के फल हैं और हमें पहले ध्यान में आते हैं । किन्तु आविष्कार ऐसा है जिसके प्रयोग में ब्रिटिशो की अपेक्षा अमरीकी पीछे रह गये । यह पिछडापन और भी विचित्र जान पडता है, क्योकि जिसकी अमरीकियो ने उपेक्षा की वह इन्ही के आविष्कार का सुधार था अर्थात भाप का जहाज । अमरीका के चप्पू स्टीमर यातायात के लिए बहुत लाभदायक थे क्योकि राज्य की सीमा बहुत बढ रही थी और देश के अन्दर की नदियो में जिनकी अमरीका में बहुतायत है वे हितकर सिद्ध हुए । इस सफलता का सीधा परिणाम यह हुआ कि स्क्रू से चलने वाले (स्क्रू प्रोपेलर) धूमपोतो के सचालन में जो सामुद्रिक नौ चालन के लिए अधिक उत्तम था अमरीकी ब्रिटिशो की अपेक्षा देर में आये । क्योकि वे पुराने अस्थायी तकनीक के प्रति अधिक भक्त थे ।

युद्ध का प्रतिशोध

सैनिक इतिहास में और प्राणि इतिहास में जो साम्य है अर्थात् छोटे कोमल लोम वाले जन्तु और भारी कवच वाले सरीसृप में जो प्रतिद्वन्द्विता है वह डेविड और गोलियथ के द्वन्द्व-युद्ध की कथा में अकित है ।

इस घातक दिन के पहले जिस दिन गोलियथ ने इसरायल की सेना को ललकारा था उसने अपने भाले से अनेक विजय प्राप्त की थी । उसके भाले का डडा जुलाहे के तीर (बीम) के समान था और उसका सिरा लोहे का छ सौ शकल[2] का था वैरी के अस्त्रो से वह अपने को पूर्ण रूप से सुरक्षित समझता था क्योकि उसका कवच शिरस्त्राण वक्षत्राण ढाल तथा पिंडलियो के रक्षक से बना था । दूसरे किसी शस्त्र-सज्जा की वह कल्पना भी नही कर सकता था । और वह समझता था कि इस प्रकार की शस्त्र सज्जा से मै अजेय हूँ । उसे विश्वास था कि कोई इसरायली जो मुझसे लडने का दुस्साहस करेगा वह भी इसी प्रकार सिर से पाँव तक कवच से ढका रहेगा ।

१ अपने भविष्य वक्ताओ को छोडकर और सब प्रकार से किसी देश का सम्मान होता है ।

२ यहूदियो की प्राचीन तौल । एक शकेल आध सेर के लगभग होता था ।—अनु०

और किसी भी प्रतिद्वंद्वी का कवच मेरे कवच से हीन होगा। ये दोना विचार गोलियथ के मन में इतने जम गये थे कि जब डेविड उसके सामने दौडा आया और उसके शरीर पर कोई कवच नही था और हाथ में केवल एक डडा था तो गोलियथ डरा नही, उसे अपमानजनित क्रोध हुआ और वह कहता है—'क्या म कुत्ता हूँ—जो तू डडा लिये आ रहा है ? गोलियथ को यह सन्देह नहा हुआ कि इस युवक की अशिष्टता केवल सोची समझी सैनिक चाल है। वह यह नही जानता था कि उसके ही समान डेविड ने सोच लिया था कि गोलियथ की सैन्य सज्जा के सम्मुख म कभी जीत नही सकता और इसलिए जिम कवच का पहनने के लिए साल ने उससे जिद्द किया था, उसने उसे नही पहना। गोलियथ ने उस झोले (स्लिग) की ओर ध्यान नही दिया जो डेविड लटकाये था। न जाने क्या दुष्टता उम गडेरिये के झोले में छिपी हो। इस प्रकार यह अभागा फिलिस्तीन शान से अपने विनाश की ओर चला गया—किन्तु ऐतिहासिक तथ्य यह है कि उत्तर मिनोई जनरेला का प्रत्येक हापलाइट[1]—गोथ का गालियथ या ट्राय का हेक्टर—डेविड के झोले से या फिलावलटीज के धनुप से नहीं हारा बल्कि मरमाइडनों[2] के व्यूह से। इनका विशाल समूह था जिसमे सनिक कधे से कधा और ढाल से ढाल मिलाकर खडे थे।[3] व्यूह का प्रत्येक सनिक अपनी सन्य सज्जा में गोलियथ या हेक्टर के समान था। वह भावना में हामरा सैनिक के विपरीत था क्योकि व्यूह का मूल सनिक मर्यादायुक्त था जिसके कारण व्यक्तिगत लडने वाले मर्यादायुक्त सेना में परिवर्तित हा गये थे। इसके नियमबद्ध विकास से उसका दस गुना काय हो सकता था जितना उतने ही उसी प्रकार अस्त्र शस्त्र सज्जित वह सेना कर सकती थी जिनमें आपसमें समन्वय नही था।

इस सनिक तकनीक का कुछ पूर्वाभास हमें ईलियड में मिलता है। इसी तकनीक का वणन इतिहास में टाइरटिमस की कविता द्वारा मिलता है। इसी तकनीक के कारण दूसर स्पार्टा मेसिनियाई युद्ध में स्पाटा की सामाजिक सवनाशी विजय हुई। किन्तु इस विजय स कहानी समाप्त नही हाती है। अपने सब विराधिया को रणक्षेत्र से हटाकर स्पार्टा का व्यूह कुछ दिना के लिए आराम करने लगा और चौथी शती ई० पू० म अपमान के साथ उसका विनाश हुआ। पहले एथेनो पेल्टाम्टा[4] द्वारा जा एक प्रकार डेविडो के समूह थे, जिनका सामना स्पार्टा के गालियथ रूपी सनिक नहा कर सकत थे—और फिर थीबी सेना के समरतन्त्र के नये तकनीक से। किन्तु एथेनी और थाबी तकनीक को एक क्षण में ३३८ ई० पू० में मैसिडोनी मेना ने परास्त और समय के प्रतिकूल कर दिया। ममिडाना तकनीक यह थी कि व्यूह के प्रत्येक उच्च श्रेणी के प्रशिक्षित पदल सनिक को घुडसवार के साथ लगा दिया गया था और इनकी एक सेना बना दी गयी थी।

१ प्राचीन यूनान का भारी अस्त्र शस्त्रा से सज्जित सनिक। —अनु०

२ प्राचीन यूनान की एक जाति जो ट्राय के युद्ध में लडी था। इसकी मर्यादा बहुत प्रशसनीय थी।—अनु०

३ ईलियड—१६–२, २११–१७।

४ यूनानी पदल सनिक जिनके हाथो में भाला रहता था और बरी पर फेंकनें के लिए पत्थर के टुकडे।—अनु०

मसिडोनी युद्ध के सगठन की मूल दक्षता सिकन्दर की उस विजय से प्रमाणित होती है जो उसने एकेमीनियाई साम्राज्य पर की । और मैसिडानी सनिक व्यूह रचना एक सौ सत्तर साल तक सैनिक तकनीक का अन्तिम शब्द था । पिरोनिया के युद्ध से, जिसमें यूनान के नगर राज्यो की नागरिक सेना समाप्त हो गयी, पाइडना की लडाई तक, जिसमें मैसिडानी व्यूह रोमन अक्षौहिणी (लीजियन) से पराजित हो गयी, मसिडोनी सनिक तकनीक का महत्व था । मसिडानी सेना के इस एकाएक भाग्य परिवतन का कारण प्राचीन अस्थायी तकनीक के प्रति भक्ति थी । जब मैसिडोनी लोग अपने को हेलेनी ससार की पश्चिमी सीमा को छोडकर ससार का एकमात्र स्वामी समझते थे, और चुपचाप बैठे थे रोमन महान् हेनीबली युद्ध के दुखपूण अनुभव को दृष्टि में रखकर अपनी युद्ध कला में क्रान्तिकारी परिवतन कर रहे थे ।

रोमन अक्षौहिणी मसिडोनी व्यूह पर इस कारण विजयी हुई कि उसने हल्की पदल सेना के व्यूह के समन्वय के साथ और आगे उन्नति की । रोमनो ने वास्तव में नये क्रम (फारमेशन) और नये ढग के सन्य-सज्जा का आविष्कार किया जिसके परिणामस्वरूप कोई सनिक और कोई टुकडी इच्छानुसार चाहे हल्के पदल सैनिक की भाति लडे, या हापलाइट की भाँति, और वैरी के सम्मुख एक क्षण की सूचना पर एक से दूसरे रण कौशल म अपने को बदल दे ।

पाइडना के युद्ध में यह रोमन दक्षता एक पीढी से अधिक पुरानी नही थी । हेलेनी जगत की इस इटालियाई उपच्छाया में पूव मैसिडानी ढग का व्यूह कन्नी के रण में (२१४ ई० पू०) दिखाई पडा था । इसमें भारी रोमन पदल सेना जो प्राचीन स्पाटन व्यूह के ढग पर रची गयी थी हैनीबल के स्पेनी और गैलिक भारी घुडसवारो से घिर गयी और भारी अफ्रीकी पदल सेना द्वारा दोनो पार्श्वों में पशुओ की भाँति बँध गयी । इसके पहले भी लेक ट्रेसिमीन में भी एक बार विपत्ति आयी थी जिसकी चोट से एक रोमन नेता ने प्रयोग करने का विचार किया और सोचा (भ्रमपूण धारणा के कारण) कि इससे रक्षा होगी । कन्नी की घोर पराजय की कठोर पाठशाला में रोमनो ने अपनी पदल सेना की तकनीक में सुधार किया और एक क्षण में रोमन सेना हल्नी ससार मे सबसे दक्ष सेना हो गयी । फिर जामा, साइनोसिफाली, और पाइडना की विजय हुई । इसके बाद बबरो से, रोमनो से, और रोमनो तथा रोमनो से कितने ही युद्ध हुए जिनका सचालन मरियस से सीजर तक बडे-बडे कप्तानो ने किया । और रोमन अक्षौहिणी आग्नयास्त्र के पहले जितना सम्भव हो सकता था उतनी दक्ष सेना हो गयी । इसी समय जब अक्षौहिणी अपने ढग की पूण सेना बन गयी थी, घुडसवार सेना ने रोमन सेना को कई बार पराजित किया । इनकी तकनीक भिन्न थी । और उन्होने अक्षौहिणी को सेना क्षेत्र से निकाल बाहर किया । सन् ५३ ई० पू० में कर्री में घुडसवारो ने अक्षौहिणी पर जो विजय पायी वह युद्ध फारसेल्स के क्लासिक युद्ध से पाच साल पहले हुआ जिसमें अक्षौहिणी से अक्षौहिणी लडी थी । इस युद्ध में रोमन पदल सेना की तकनीक सर्वोच्च थी । कर्री के युद्ध का अपशकुन चार सौ साल बाद सन ३७८ ई० में एड्रियानोप्ल में ठीक उतरा जब भाले बरदार घुडसवारो ने अक्षौहिणी पर अन्तिम प्रहार किया । इस युद्ध में समकालीन इतिहासकार अमियानस मारसेलिनस जो सनिक अफसर भी था इस बात की साक्षी देता है कि रोमनो की सेना के तीन चौथाई लोग मारे गये और मत प्रकट करता है कि कन्नी के युद्ध के पश्चात रोमन सना पर ऐसी महान् विपत्ति कभी नही आयी थी ।

इन दोनो युद्धो के बीच की ६ शतियो में से अन्तिम चार शतियो में रोमन लोग आराम ही

करते रहे। कर्री की चेतावनी के पश्चात, और गाथिक भाला बरदार घुडसवारा के फारसी प्रतिरूप के द्वारा जिन्होंने ३७८ ई० में वेलेंस और उसकी अक्षौहिणी का नष्ट किया। सन् २६० ई० में वलेरियन में और ३६३ ई० में जूलियन की बार बार पराजय की चेतावनी के बाद भी ध्यान नही दिया।

एड्रियानोप्ल की दुघटना के बाद सम्राट् थियोडासियस ने उन बबर घुडसवारा को जिन्हाने रोमन पैदल सेना में बडी भारी दरार पैदा कर उसे भ्रष्ट कर दिया था, उन्ही को उस स्थान को भरने के लिए नियुक्त करके, पुरस्कार दिया। और साम्राज्य की सरकार ने इस अदूरदर्शी नीति का मूल्य इस प्रकार चुकाया कि इन बबर भाडे के टट्टुआ ने पश्चिमी प्रदेशा को विभाजित करके 'उत्तराधिकारी राज्य' बना लिया, अंतिम समय जिस स्थानीय सेना ने, पूर्वी प्राता को अलग हो जाने से बचाया, वह इसी बबर ढग के भाले बरदार घुडसवारा की थी। भारी अस्त्रा से सज्जित इन घुडसवारो की सेना एक हजार साल तक सर्वोपरि थी। यह और भी आश्चय की बात है कि इस प्रकार की सेना विभिन्न देशा में बनी। उसे हम हर जगह पहचान सकते ह, चाहे वह ईसा की पहली शती में क्रीमिया के कब्रा में भित्ति चित्र के रूप में हो या तीसरी, चौथी, पाचवी या छठी शती में फास के चट्टाना में ससानियाई राजा द्वारा तराशी हो या ताग पीढी (६१८–९०७) के पूरब के योद्धाओ की मिट्टी की मूर्ति हो या ग्यारहवी शती का बेयो (नगर का नाम) का परदा हा, जिसमें विलियम द काकरर के नारमन वीरो (नाइट) द्वारा पुराने अंग्रेजी पदला की पराजय कढी हुई है।

यदि भाला बरदार घुडसवार का यह दीघ जीवन आश्चयपूण है तो यह भी ध्यान देने की बात है कि यह सवव्यापक सैनिक पतनोन्मुख अवस्था में है। एक प्रत्यक्षदर्शी ने उसके पराजय का इस प्रकार वणन किया है। 'जब वह टारटरा से लडने शाति नगर (बगदाद) के पश्चिम की ओर गया तब म उपमन्त्री की सेना में था। जब सन् १२५८ ई० (६५६ हिजरी) में उस नगर पर महान् विपत्ति आयी। हम लोगा का सामना नहर बशीर पर हुआ जो दुजैल के अधीन राज्य था। वहाँ हम लोगा में से एक सनिक पूण रूप से अस्त्रो से सज्जित अरबी घाडे पर सवार द्वन्द्व युद्ध के लिए आगे बढता था। यह सवार और उसका घोडा ठोस पहाड के समान था। और हमारा सामना करने के लिए एक मगोल सवार आता था जो ऐसे घोडे पर सवार रहता था जो गदहे के समान था। उसके हाथ का भाला तकुए (स्पिड्ल) सा दिखाई देता था। न उसके पास लबादा था, न कवच। जो लाग उसे देखते थे उन्हें हँसी छटती थी। किन्तु दिन ढलते-ढलते विजय उनकी थी और हमारी करारी हार हुई जो अनिष्ट की कुजी थी और इसके बाद तो विपत्ति आयी सो आयी[1]।'

इस प्रकार गालियथ और डेविड की पौराणिक कथा का युद्ध जो सीरियाई इतिहास के प्रभात में हुआ था तेइस शतिया के बाद साध्य काल में दोहराया गया। और यद्यपि इस बार दैत्य और बौना घोडा पर है, परिणाम वही है।

१ ई० जी० ब्राउन ए लिटरैरी हिस्ट्री आव परशिया। भाग २, पृ० ४६२, फख्रुद्दीन मुहम्मद बिन ऐदिमीर से उद्धत जिसके इब्न तिक्तका के किताबुल फाखरी से उद्धत किया।

अजय तातार क्ज्जाक जिसने इराकी भारी भरकम सिपाहियो पर विजय प्राप्त की और बगदाद पर घेरा डाला और अब्बासी खलीफा को भूखो मार डाला हल्का सवार था, उसका भाला भी हल्का था। वह खानाबदोश ढग का था जिसने आठवी तथा सातवी शती ई० पू० में सिमेरियाई और साइथ के आक्रमण द्वारा दक्षिण पश्चिम एशिया में अपना परिचय दिया था और आतक फलाया था। किन्तु यदि घुडसवार डेविड ने घुडसवार गालियथ को यूरेशियाई स्टेप से आकर तातारी आक्रमण के आरम्भ में पराजित किया तो इस कथा की पुनरावत्ति में युद्ध का परिणाम पहले की भाति ठीक-ठीक था। हमने देखा कि पैदल क्वचयुक्त सनिक डेविड के झोले द्वारा परास्त हुआ। उसके पश्चात विजयी डेविड नही हुआ बल्कि गोलियथो का मर्यादा युक्त ब्यूह विजयी हुआ। हलाकू खा के मगोल हल्के घुडसवार जिन्होने बगदाद में अब्बासी खलीफा क वीरो को पराजित किया था, मिस्र के ममलूक स्वामियो से बार बार हारे। अपनी साज सज्जा में ममलूक वीर जो बगदाद के बाहर पराजित हुए थे मुसलिम वीरो की अपेक्षा न तो अच्छी तरह सज्जित थे न बुरी तरह, किन्तु अपने समरतन्त्र में वे मर्यादित थे जिसके कारण मगोल तीव्र तीर अन्दाजा तथा फाक धमयुद्धकर्ताओ से वे बीस पडते थे। मगोलो ने जिस गुरु से पहली शिक्षा पायी उसके दस साल पहले सन्त लूई के वीर मसूरा मे हारे थे।

तेरहवा शती के अन्त तक ममलूक फासीसी और मगोलो के ऊपर अपनी श्रेष्ठता स्थापित कर चुके थे और अपनी सीमा में सनिक श्रेष्ठता मे वैसे ही बेजोड थे जसे पाइडना के बाद रोमन अक्षौहिणी। इस उच्च किन्तु दुबल करने वाली स्थिति में ममलूक भी अक्षौहिणी के समान निष्काम बैठ गये। और यह विचित्र सयोग है कि ये लोग भी उतने ही दिनो तक निष्काम रहे और पुराने बरी ने नयी तक्नीक के सहारे एकाएक उन पर आक्रमण किया। पाइडना और एड्रियानोप्ल के युद्ध में ५४६ वर्षो का अन्तर है सन्त लूई पर ममलूको ने जो विजय पायी और अपने उत्तराधिकारी नपोलियन से ममलूक जब पराजित हुए उसके बीच ५४५ वर्षो का अन्तर है। इन साढे पाच सौ वर्षो में पदल सेना का प्रभाव बढ गया। इस अवधि की पहली शती समाप्त होते-होते डेविड रूपी पैदल सेना ने लाग वो[1] द्वारा घुडसवार गोलियथो को क्रेसी में हराया था। इस परिणाम को लोगो ने अच्छी तरह समझा और आग्नेयास्त्र के आविष्कार से और जानिसारियो (एक सेना) की मर्यादा से इसका समथन हुआ।

नपोलियन से हारे जाने के बाद और तेरह साल के बाद जब मुहम्मद अली ने अन्तिम रूप स इसे नष्ट कर डाला तब जो बचे-खुचे थे वे ऊपरी नील के पास चले गये और अपने अस्त्र तथा तक्नीक सुडान के महदी के खलीफा क क्वचधारी घुडसवारो को दान कर दिया, जो सन् १८९८ में ओमदुरमान में ब्रिटिश पैदल सेना से ध्वस्त हुए।

जिस फासीसी सेना न ममलूको पर विजय पायी वह जानिसरियो के पश्चिमी प्रतिरूप की पहली सेना से भिन्न थी। वह फासोसियो का सामूहिक रूप से भर्ती की हुई सेना का नवीन फल थी। वह उस पश्चिमी सना के नये पूण अभ्यासयुक्त नमूने के स्थान पर उस सुधार कर बनी थी, जिसे फ्रेडरिक महान् ने पूणता प्रदान की। किन्तु जब जेना में नपोलियन की नयी सना न पुरानी

१ वह तीर धनुष जिसमें तीर हाथ से छोडा जाता है। तीर के पीछे पर रूगे रहते ह।—अनु०

प्रशियन सेना को पराजित किया तब प्रशिया के राजनीतिक तथा सैनिक सम्प्रत्ययों को प्रेरणा मिली कि फ्रांसीसियों से बढ़कर असाधारण शक्ति प्राप्त की जाय। इसके लिए नये सैनिकों को पुरानी मर्यादा की शिक्षा दी गयी। सन् १८१३ में इसके परिणाम का आभास मिला और सन् १८७० में वह स्पष्ट हुआ। किन्तु दूसरे चक्र में प्रशियन सैनिक मशीन में जरमनी और उसके साथी फँस गये और अप्रत्याशित रूप से घिरकर पराजित हुए। १९१८ में १८७० की प्रणाली बेकार हो गयी। क्योंकि खाइयाँ तथा आर्थिक नाकेबंदी की नयी तकनीक प्रयोग में लायी गयी। १९४५ तक यह ज्ञात हो गया कि जिस तकनीक से १९१४-१८ का युद्ध जीता गया वह युद्ध की लम्बी शृंखला में अंतिम कड़ी नहीं थी। प्रत्येक कड़ी, आविष्कार, विजय, निष्क्रियता और विनाश के चक्र के रूप में आती रहती है। सैनिक इतिहास के तीन हजार वर्षों में डेविड और गोलियथ के युद्ध से लेकर और मेजिना पंक्ति और पश्चिमी दीवार के भेदन तक, जिसमें यान्त्रिक घुड़सवारों और बन्दूक के चालकों ने और उड़ने वाले घोड़ों ने (हवाई जहाजों ने) योगदान किया हम आशा कर सकते हैं कि इस विषय के नये नये उदाहरण मिलेंगे। और जब तक मनुष्य की युद्ध की कला के अभ्यास की दुष्प्रवृत्ति रहेगी इस प्रकार के मन को थका देने वाला इस प्रकार का चक्र आता रहेगा।

(६) सैनिकवाद की आत्मघाती प्रवृत्ति

'कोरोस', 'यूबरीस', 'एथ'

'निष्क्रियता का हमने सर्वेक्षण कर लिया। सृजन के प्रतिशोध का यह अकर्मण्य ढंग है। अब हम जरा क्रियाशील विपथन की ओर ध्यान दें जो तीन यूनानी शब्दों द्वारा व्यक्त किया गया है। 'कोरोस', 'यूबरीस' 'एथ'। इन शब्दों का आत्मनिष्ठ और वस्तुनिष्ठ दोनों अभिप्राय है। वस्तुनिष्ठ दृष्टि से कोरोस का अर्थ है 'अति-तृप्ति' 'यूबरीस' का 'अत्याचार', और 'एथ' का विनाश। आत्मनिष्ठ दृष्टि से कोरोस का अर्थ सफलता से बिगड़ी हुई मानसिक परिस्थिति यूबरीस का अर्थ है सफलता के कारण मानसिक तथा नैतिक संतुलन का अभाव एथ का अर्थ है हठी अनियन्त्रित आवेग जिसके कारण असन्तुलित आत्मा असम्भव कार्य करने की चेष्टा करती है। 'पाँचवीं शती के एथेनी ट्रेजेडियों में जिनमें से कुछ महत्त्वपूर्ण आज प्राप्य हैं तीन अंकों में यह मनोवैज्ञानिक विनाश दिखाना साधारण विषय था। एसकाइलस के अगामेमनान नाम के नाटक में यही विषय है जरक्सीज के परसी में यही विषय है, सोफोक्लीस के नाटक एजेक्स में यही विषय है ओडिपस के ओडिपस टिरानस, क्रिओन के एन्टीगानी और युरिपीडीज के बके में पेन्थ्यूज की कहानी का यही विषय है। अफलातून की भाषा में

'यदि अनुपात के नियमों के विरुद्ध कार्य करने का कोई पाप करता है और बहुत छोटी वस्तु को बहुत बड़ी वस्तु ले जाने के लिए देता है—बहुत छोटी जहाज को बहुत बड़ा पाल बहुत छोटे शरीर को बहुत अधिक भोजन, तो परिणाम यह होगा कि सब उलट-पलट जायगा। यूबरीस के विस्फोट के कारण बहुत अधिक खाने वाला शरीर तुरत बीमार पड़ जायगा, और घमण्डी व्यक्ति असत्य की ओर चलेगा क्योंकि यूबरीस से यह उत्पन्न होता है।'[1]

१ अफलातून विधान, ६९१।

विनाश की ओर जाने के सक्रिय और निष्क्रिय ढगो का अन्तर स्पष्ट करने के लिए हम सैनिक क्षेत्र में कोरोस, यूबरीस और एथ का सर्वेक्षण करेगें । जिस प्रकार निष्क्रियता का सर्वेक्षण अभी हमने समाप्त किया है ।

गोलियथ के व्यवहार में दोनो का उदाहरण मिलता है । एक ओर तो हम देखते ह कि किस प्रकार अपने व्यक्तिगत भारी अस्त्रा से सज्जित सैनिक की अपराजेय शक्ति की निष्क्रियता के कारण वह विनाश को प्राप्त होता है क्योकि वह उस नयी उच्च तकनीक को पहले से न अपनाता है न देखता है जिसका प्रयोग डेविड करता है । साथ-ही साथ हम यह भी देखेंगे कि डेविड के हाथा गोलियथ अपना विनाश रोक सकता था यदि तकनीक की उन्नति की ओर न ध्यान देने के साथ साथ स्वभाव में भी निष्क्रियता होती । दुर्भाग्य से गोलियथ ने सैनिक महत्ता के प्रति पुरातनपन की रक्षा करते हुए स्वभाव में सयम नही रखा । इसके विपरीत बेकार ललकार दिया । वह आक्रामक और अपर्याप्त सनिक तैयारी का प्रतीक है । ऐसा सत्यवादी अपनी योग्यता पर विश्वास रखता है कि म ऐसे सामाजिक या असामाजिक तन्त्र के काय-सचालन के योग्य हूँ जिसमें सब झगडे तलवार के बल पर तय किये जाते ह और वह लडाई में भिड जाता है । उसके बोझ का बल उसके अनुकूल होता है और अपनी विजय को प्रमाण में प्रस्तुत करता है कि तलवार ही सब शक्तिमान् है । किन्तु कहानी के दूसरे अध्याय में परिणाम यह निकलता है कि उस विशेष परिस्थिति में जिसमें उसकी अभिरुचि है वह अपने सिद्धान्त को व्यक्तिगत रूप से प्रमाणित नही कर पाता । क्योकि दूसरी घटना यह होती है कि उससे अधिक बली सैन्यवादी उसे पराजित कर देता है । उसने इस सिद्धान्त को प्रमाणित कर दिया जिसका उसे आभास नही था—कि जो लोग तलवार उठाते ह तलवार से नष्ट होते हैं ।'

इस भूमिका को पढकर हम सीरियाई कथा को छोडकर ऐतिहासिक उदाहरणा पर ध्यान दें ।

असीरिया

६१४–६१० ई० पू० असीरियाई सनिक शक्ति की जो पराजय हुई वह इतिहास में सबसे पूण थी । उससे केवल असीरियाई सनिक तन्त्र का ही विनाश नही हुआ असीरियाई राज्य और असीरियाई जाति का भी विनाश हो गया । वह समुदाय जो दो हजार साल तक जीवित रहा, और लगभग ढाई सौ साल तक दक्षिण पश्चिम एशिया में प्रमुख रूप से क्रियाशील रहा पूरी तरह मिट गया । दो सौ दस वर्षों के बाद युवक साइरस की दस हजार यूनानी सेना कुनाक्सा के रणक्षेत्र से टाइग्रिस की घाटी के ऊपर ब्लैक सी के तट की ओर लौट रही थी, तब उन्होंने काल्ह और नेनिवा का स्थान देखा और उन्हें महान् आश्चय हुआ इस कारण नही कि वहाँ बडे-बडे किले थे और नगरा का बडा विस्तार था बल्कि इसलिए कि मनुष्य द्वारा निमित इतने विशाल नगर निजन हा । इन निजन घरा की विलक्षणता ऐसी थी कि किसी का निवास न होने पर भी वे दृढ थे । इससे प्रमाणित होता था कि उनमें रहने वाले कितने शक्तिशाली थे । इसका सजीव चित्रण यूनानी अभियान सेना म एक सनिक ने जिसे वहाँ की अनुभूति हुई थी, किया है । किन्तु जेनाफ़ेन की कहानी जब आधुनिक पाठक पढ़ता है तब उसे आश्चय होता है—क्योकि पुरातत्त्ववित्ता ने वहाँ खुदाई करके जो खोज की है उसम उनने असीरिया के भाग्य का ज्ञान प्राप्त किया है—कि जेनाफ़ेन इन दुग समान नगरा के खण्डहरा क वास्तविक इतिहास का प्रारम्भिक ज्ञान भी नहीं प्राप्त कर सका । यद्यपि जेनाफ़ेन जब उधर स गया उसस केवल दो साल पहले

सारा दक्षिण पश्चिम एशिया जरुसलेम से अरारात तक और एल्म से लीडिया तक इन नगरो के स्वामियो के अधिकार में था और सत्रस्त रहा, उसके अच्छे-अच्छे वणन में वहाँ के इतिहास से कोई सम्बन्ध नही है। असीरिया का नाम भी उसे नही मालूम था।

आरम्भ में असीरिया के दुर्भाग्य का कारण ठीक समझ में नही आता। क्योकि मसिडोनियना, रोमनो और ममलका की भाँति उन पर 'निष्क्रियता' का दोष नही लगाया जा सकता। जब इनके सैन्य-तन्त्र का विनाश हुआ तब इनका तन्त्र अप्रचलित हो गया था और उनका सुधार नहीं हो सकता था। असीरियाई सैन्य-तन्त्र में वरावर सुधार होता रहा, उनका नवीनीकरण होता रहा और वे विनाश के समय तक प्रवलित (री इनफोम) होते रहे। ईसा की चौदहवी शती के आरम्भ में असीरिया की सनिक प्रतिभा ने दक्षिण पश्चिम एशिया के स्वामित्व ग्रहण करने के समय भारी कवचधारी पैदल सैनिक का शिशु उत्पन किया था, और ईसा के पूव सातवी शती में अपने विनाश के पहले उसी ने भाला वरदार घुडसवार का शिशु उत्पन्न किया था। वह शिशु बीच की सात शतियो तक विकसित होता रहा। उत्तरकालिक असीरिया के चरित्र की विशेषता थी कि अपनी युद्धकला में वे बराबर सुधार करते रहे और नयापन लाते रहे। इसका निश्चित प्रमाण अपने मूल स्थान में अनेक नक्काशी रूप में राजमहलो में अंकित है। इनमें असीरी इतिहास के अन्तिम तीन सौ वर्षों की सनिक साज सज्जा तथा तकनीक का क्रमागत विकास बडे ब्योरे, सावधानी और यथार्थता से दिखाया गया है। इनमें हम देखते हैं कि शरीर के कवच में, रथो में, आक्रमण के यन्त्रो में, विशेष काय की विशेष सेना में वरावर प्रयोग और सुधार होता रहा। तब असीरिया के विनाश का क्या कारण था?

पहले तो लगातार आक्रमणात्मक नीति थी और इस नीति को कार्यान्वित करने के लिए शक्तिशाली साधन। इसके कारण असीरिया के युद्ध के सरदारो ने अपने चौथे तथा अन्तिम उपक्रम को उस सीमा के आगे बढाया जहा तक उनके पूवज जा चुके थे। असीरिया निरन्तर अपने सनिक साधनो का आह्वान इसलिए करता रहा कि वह बैविलोनी ससार की सीमा तक के क्षेत्र का रक्षक बना रहे, जिससे एक ओर जागरोम तथा टारस के बबर पहाडी निवासियो से और दूसरी ओर सीरियाई सभ्यता के आरमीयन सनिक अग्रगामियो से उन्हे सुरक्षित रख सके। इसके पहले के तीन सैनिक सघर्षों में असीरिया ने इन दोनो सीमाओ पर रक्षात्मक से आक्रमणात्मक नीति ग्रहण की थी। किन्तु इस आक्रमण में सीमा के आगे नही बढे और दूसरी दिशाओ में जाकर अपनी सेना की शक्ति नही क्षीण की। फिर भी तीसरे सघष में जिसमें नवी शती ई० पू० के मध्य के पचास साल लगे, सीरिया में सीरियाई राज्यो का अस्थायी सम्मिलन (कोअलिशन) बना जिसने ८५३ ई० पू० में करकार के पास असीरिया का आगे वढना रोक दिया और उरातू का राज्य स्थापित न होने के कारण आरमीनिया में बडा विरोध हुआ। इन चेतावनियो के बावजूद टिगल्थ पाइलेसर (७४६-७२७ ई० पू०) ने जब अन्तिम और सबसे बडा आक्रमण आरम्भ किया उसकी राजनीतिक आकाक्षा बढ गयी थी और उसका सनिक लक्ष्य ऐसा था जिसके कारण उसे तीन नये बैरियो—बविलन, एल्म और मिस्र का सामना करना पडा। इनमें प्रत्येक के पास उतनी ही सैनिक शक्ति थी जितनी असीरिया के पास।

टिगल्थ पाइलेसर ने जब सीरिया के छोटे राज्य को पूर्ण रूप से जीत लिया तब उसने मिस्र से लडाई ठानी। उसके उत्तराधिकारियो को यह लडाई लडनी पडी क्योकि मिस्र इस बात पर

विनाश की ओर जाने के सक्रिय और निष्क्रिय ढगो का अन्तर स्पष्ट करने के लिए हम सैनिक क्षेत्र में कोरोस, यूबरीस और एथ का सर्वेक्षण करेगें। जिस प्रकार निष्क्रियता का सर्वेक्षण अभी हमने समाप्त किया है।

गोलियथ के व्यवहार में दोनो का उदाहरण मिलता है। एक ओर तो हम देखते ह कि किस प्रकार अपने व्यक्तिगत भारी अस्त्रा से सज्जित सनिक की अपराजेय शक्ति की निष्क्रियता के कारण वह विनाश को प्राप्त होता है क्यांकि वह उस नयी उच्च तक्नीक को पहले से न अपनाता है न देखता है जिसका प्रयोग डेविड करता है। साथ-ही साथ हम यह भी देखेंगे कि डेविड के हाथो गोलियथ अपना विनाश रोक सकता था यदि तक्नीक की उन्नति की ओर न ध्यान देने के साथ साथ स्वभाव मे भी निष्क्रियता होती। दुर्भाग्य से गोलियथ ने सनिक महत्ता के प्रति पुरातनपन की रक्षा करते हुए स्वभाव में सयम नही रखा। इसके विपरीत वेकार ललकार दिया। वह आक्रामक और अपर्याप्त सनिक तयारी का प्रतीक है। ऐसा सैन्यवादी अपनी योग्यता पर विश्वास रखता है कि मैं ऐसे सामाजिक या असामाजिक तन्त्र के काय सचालन के योग्य हूँ जिसमें सब झगडे तलवार के बल पर तय किये जाते ह और वह लडाई में भिड जाता है। उसके बोझ का वल उसके अनुकूल हाता है और अपनी विजय को प्रमाण मे प्रस्तुत करता है कि तलवार ही सव शक्तिमान् है। किन्तु कहानी के दूसरे अध्याय में परिणाम यह निकलता है कि उस विशेष परिस्थिति में जिसमें उसकी अभिरुचि है वह अपने सिद्धा त का व्यक्तिगत रूप से प्रमाणित नही कर पाता। क्याकि दूसरी घटना यह होती है कि उससे अधिक वली सैन्यवादी उसे पराजित कर देता है। उसने इस सिद्धा त को प्रमाणित कर दिया जिसका उसे आभास नही था—कि 'जो लोग तलवार उठाते हैं तलवार से नष्ट होते ह।'

इस भूमिका को पढकर हम सीरियाई कथा को छोडकर ऐतिहासिक उदाहरणो पर ध्यान दें।

असीरिया

६१४–६१० ई० पू० असीरियाई सनिक शक्ति की जो पराजय हुई वह इतिहास में सबसे पूण थी। उससे केवल असीरियाई सनिक तन्त्र का ही विनाश नही हुआ असीरियाई राज्य और असीरियाई जाति का भी विनाश हो गया। वह समुदाय जो दो हजार साल तक जीवित रहा, और लगभग ढाई सौ साल तक दक्षिण पश्चिम एशिया में प्रमुख रूप से क्रियाशील रहा पूरी तरह मिट गया। दो सौ दस वर्षों के बाद युवक साइरस की दस हजार यूनानी सेना कुनाक्सा के रणक्षेत्र से टाइग्रिस की घाटी के ऊपर ब्लक सी के तट की ओर लौट रही थी तव उन्हाने काल्ह और नेनिवा का स्यान दखा और उन्हें महान् आश्चय हुआ, इस कारण नही कि वहाँ बडे-बडे किले थे और नगरा का बडा विस्तार था वल्कि इसलिए कि मनुष्य द्वारा निर्मित इतने विशाल नगर निजन हा। इन निजन घरा की विलक्षणता ऐसी थी कि किसी का निवास न होने पर भी वे दृढ थे। इससे प्रमाणित होता था कि उनमें रहने वाले कितने शक्तिशाली थे। इसका सजीव चित्रण यूनानी अभियान सेना के एक सनिक ने, जिसे वहाँ की अनुभूति हुई थी, किया है। किन्तु जेनाफेन की कहानी जव आधुनिक पाठक पढता है तव उसे आश्चय होता है—क्याकि पुरातत्वविदा ने वहाँ खुदाई करके जो खोज की है उससे उसने असीरिया के भाग्य का ज्ञान प्राप्त किया है—कि जेनाफेन इन दुग समान नगरा के खण्डहरा के वास्तविक इतिहास का प्रारम्भिक ज्ञान भी नही प्राप्त कर सका। यद्यपि जेनाफेन जव उधर से गया उससे केवल दो सौ पहले

सारा दक्षिण पश्चिम एशिया जरुसलेम से अरारात तक और एलम से लीडिया तक इन नगरो के स्वामियो के अधिकार में था और सन्त्रस्त रहा, उसके अच्छे-अच्छे वर्णन में वहाँ के इतिहास से कोई सम्बन्ध नही है। असीरिया का नाम भी उसे नही मालूम था।

आरम्भ में असीरिया के दुर्भाग्य का कारण ठीक समझ में नही आता। क्योकि मैसिडोनियना, रोमनो और ममलूको की भाँति उन पर 'निष्क्रियता' का दोष नही लगाया जा सकता। जब इनके सैन्य-तन्त्र का विनाश हुआ तब इनका तन्त्र अप्रचलित हो गया था और उनका सुधार नही हो सकता था। असीरियाई सैन्य-तन्त्र में बराबर सुधार होता रहा, उनका नवीनीकरण होता रहा और वे विनाश के समय तक प्रवलित (री इनफोस) होते रहे। ईसा की चौदहवी शती के आरम्भ में असीरिया की सैनिक प्रतिभा ने दक्षिण पश्चिम एशिया के स्वामित्व ग्रहण करने के समय भारी कवचधारी पदल सैनिक का शिशु उत्पन्न किया था और ईसा के पूर्व सातवी शती में अपने विनाश के पहले उसी ने भाला बरदार घुडसवार का शिशु उत्पन्न किया था। वह शिशु बीच की सात शतियो तक विकसित होता रहा। उत्तरकालिक असीरियो के चरित्र की विशेषता थी कि अपनी युद्धकला में वे बराबर सुधार करते रहे और नयापन लाते रहे। इसका निश्चित प्रमाण अपने मूल स्थान में अनेक नक्काशी रूप में राजमहलो में अंकित है। इनमें असीरी इतिहास के अन्तिम तीन सौ वर्षो की सैनिक साज सज्जा तथा तकनीक का क्रमागत विकास बडे ब्योरे, सावधानी और यथार्थता से दिखाया गया है। इनमे हम देखते हैं कि शरीर के कवच में, रथो में, आक्रमण के यन्त्रो में, विशेष कार्य की विशेष सेना में बराबर प्रयोग और सुधार होता रहा। तब असीरिया के विनाश का क्या कारण था ?

पहले तो लगातार आक्रमणात्मक नीति थी और इस नीति को कार्यान्वित करने के लिए शक्तिशाली साधन। इसके कारण असीरिया के युद्ध के सरदारो ने अपने चौथे तथा अंतिम उपक्रम को उस सीमा के आगे बढाया जहा तक उनके पूर्वज जा चुके थे। असीरिया निरन्तर अपने सैनिक साधनो का आह्वान इसलिए करता रहा कि वह बबिलोनी ससार की सीमा तक के क्षेत्र का रक्षक बना रहे, जिससे एक ओर जागरोस तथा टारस के बर्बर पहाडी निवासियो से और दूसरी ओर सीरियाई सभ्यता के आरमीयन सैनिक अग्रगामियो से उन्हे सुरक्षित रख सके। इसके पहले के तीन सैनिक सघर्षो में असीरिया ने इन दोनो सीमाओ पर रक्षात्मक से आक्रमणात्मक नीति ग्रहण की थी। किन्तु इस आक्रमण में सीमा के आगे नही बढे और दूसरी दिशाओ में जाकर अपनी सेना की शक्ति नही क्षीण की। फिर भी तीसरे सघर्ष में जिसमें नवी शती ई० पू० के मध्य के पचास साल लगे, सीरिया में सीरियाई राज्यो का अस्थायी सम्मिलन (कोअलिशन) बना जिसने ८५३ ई० पू० में करकार के पास असीरिया का आगे बढना रोक दिया और उरातू का राज्य स्थापित न होने के कारण आरमीनिया में बडा विरोध हुआ। इन चेतावनियो के बावजूद टिगलथ पाइलेसर (७४६-७२७ ई० पू०) ने जब अन्तिम और सबसे बडा आक्रमण आरम्भ किया उसकी राजनीतिक आकांक्षा बढ गयी थी और उसका सैनिक लक्ष्य ऐसा था जिसके कारण उसे तीन नये बैरियो—बबिलन एलम और मिस्र का सामना करना पडा। इनमें प्रत्येक के पास उतनी ही सैनिक शक्ति थी जितनी असीरिया के पास।

टिगलथ पाइलेसर ने जब सीरिया के छोटे राज्यो को पूर्ण रूप से जीत लिया तब उसने मिस्र से लडाई ठानी। उसके उत्तराधिकारियो को यह लडाई लडनी पडी क्योकि मिस्र इस बात पर

तटस्थ नही रह सकता था कि उसकी सीमा तक असीरियाई साम्राज्य फल जाय । और उसने असीरियाई साम्राज्य निर्माता की इस चेष्टा को निष्फल कर दिया । इसे तब तक के लिए असम्भव कर दिया जब तक असीरिया मिस्र को घेर कर पूरा राज्य न ले ले । सन् ७३४ ई० पू० में टिगल्थ पाइलेसर ने फिलिस्टिया पर अधिकार कर लिया । यह बडी कुशल रणनीति थी जिसके परिणाम स्वरूप अस्थायी रूप से समरिया ने ७३३ में पराजय स्वीकार कर ली और ७३२ में डैमसकस का पतन हो गया । किन्तु इसका परिणाम यह भी हुआ कि ७२० ई० पू० में सारगन को मिसिया से लडना पडा और ७०० म सेनाशरीब से । इन अनिश्चित सघर्षों के बाद एसारहैडन ने तीन युद्धो ६७५ ६७४ तथा ६७१ में मिस्र पर विजय पायी और उस पर अधिकार कर लिया । इसके बाद यह स्पष्ट हो गया कि यद्यपि असीरियाई सेना के पास मिस्र पर विजय पाने की शक्ति है, वह इतना शक्तिशाली नही है कि मिस्र को कब्जे में रख सके । एक बार और एसारहैडन मिस्र की ओर चला किन्तु ६६९ में इसकी मृत्यु हो गयी । यद्यपि अशूरबनिपाल ने ६६७ में मिस्री विद्रोह को शान्त किया उसे ६६३ में फिर से मिस्र को विजय करना पडा । इस समय तक असीरियाई सरकार ने समझ लिया होगा कि मिस्र में वह असम्भव काय करने में लगी है । और जब सामेटिक्स ने चुपचाप असीरियाई सेना को ६५८–६५१ में निकाल बाहर किया तब अशूरब निपाल कुछ न बोला । इस प्रकार अपनी मिस्री हानि को छोड देने में असीरिया ने बुद्धिमानी की किन्तु यह बुद्धि तब आयी जब यह नात हो गया कि मिस्र के पाँच युद्धो में लगायी शक्ति बेकार हो गयी । साथ ही मिस्र को छोड देना असीरिया के पतन की भूमिका थी जा दूसरी पीढी म हुई ।

टिगल्थ पाइलेसर का बैबिलोनिया में हस्तक्षेप का अन्तिम परिणाम सीरिया में हस्तक्षेप के परिणाम से कही अधिक गम्भीर था । क्योकि इसके कारण और काय की शृखला के सीधे परिणामस्वरूप ६१४–६१० की विपत्ति थी ।

बैबिलोनिया में पहले आक्रमणा में असीरिया की राजनीतिक नीति नरमी की थी । विजेता ने विजित देश पर अधिकार नही किया वही के राजाओ को अपनी छत्र छाया में कठपुतला शासक बना दिया । ६९४–६८९ के विप्लव के बाद ही वहाँ की स्वतन्त्रता समाप्त कर दी गयी, सेनाशरीब ने अपने पुत्र एसारहैडन को अपना उत्तराधिकारी घोषित करके वहा प्रतिनिधि बना दिया । किन्तु इस नरमी की नीति से काल्डियन सतुष्ट नही हुए और असीरियाई सेना का सामना अधिक शक्ति से करने लगे । असीरियाई सनिक प्रहार का परिणाम यह हुआ कि काल्डियना ने अपना घर ठीक कर लिया और अपने पडोसी एल्म से समझौता कर लिया । दूसरी बार जब राजनीतिक सयम की नीति छोडकर ६८९ में बबिलोन पर घेरा डाल दिया गया तब असीरिया को एसी शिक्षा मिली जसी आशा नही थी । इस भीषण काय स वहाँ की पुरानी नागरिक जनता में और काल्डिया के खानाबदोशो में जो घृणा की अग्नि प्रज्वलित हुई उससे नागरिक और कबीले वाले अपना आपसी भेद भाव भूल गय और नये बबिलोनियाई कृत्य को न भूल सके, न उन्हें क्षमा कर सके और जब तक आक्रामक का चित नहा कर दिया, शान्त होकर नही बठे ।

फिर भी लगभग सौ वर्षों तक अवश्यम्भावी एथ टलता रहा क्योकि असीरियाई सैन्य तन्त्र की दमता बराबर बनी रही । उदाहरण के लिए ६३९ में एल्म पर ऐसा घातक प्रहार हुआ कि उसका विच्छृखल राज्य पूरबी सीमा से लकर फारस के पहाडी निवासियो के राज्य में चला गया और छलाँग मारने वाला स्थान बन गया, जहाँ स अकामेनिडी लाग एक शती के बाद सारे

उत्तर पश्चिम एशिया के स्वामी बन गये । जब ६२६ में असूरबनिपाल की मृत्यु हो गयी बबिलोन में नवोपोलास्सार के नेतृत्व में फिर एक बार विप्लव हुआ और उसने मीडिया से मित्रता की, जो एलम से अधिक शक्तिशाली था और सोलह साल बाद असीरिया संसार के नक्शे से गायब हो गया ।

जब हम डेढ सौ साल पुराने इतिहास की ओर देखते ह जिसमें लगातार भीषण युद्ध होते रहे । जो ७४५ ई० पू० से आरम्भ हुआ, जब टिगलथ पाइल्सर गद्दी पर बैठा और ६०५ में समाप्त हुआ, जब बबिलोन के नबुदक्दनजार ने कारचेमिश में फेरो नेको को पराजित किया । इनमें इतिहास विख्यात घटनाओ से पहली दृष्टि में पता लगता है कि बार बार के आक्रमण से असीरिया ने समुदाय के समुदाय नष्ट कर डाले, नगरो को मिट्टी में मिला दिया और सारी जनता का बन्दी बना कर ले गये । डैमसक्स को ७३२ में, समारिया को ७२२ में मुसासिर को ७१४ में, बबिलोन को ६८९ में, सिडोन को ६७७ में, मेंफिसको ६७१ में, थीबीस का ६६३ में और सूसा को सम्भवत ६३९ में । जहा तक असीरिया की बाहें पहुँच सकी उन सब देशो की राजधानियो में केवल टायर जेरसलेम उस समय तक अछूता रह गया जब ६१३ में निनेवा पर घेरा पडा । असीरिया ने अपने पडोसियो को जो हानि की और उन पर विपत्ति ढायी उसकी कोई गणना नहा हो सकती । फिर भी असीरियाई सैनिक कृत्यो की उचित आलोचना उस अध्यापक के कथन के अनुसार होगी जिसने बालक को बेंत मारते समय कहा था—'तुम्हें कम पीडा होती है, मुझे अधिक पीडा होती है ।' असीरियाई योद्धाओ ने जिस निलज्जता और आत्मतुष्टि के साथ अपने निष्ठुर कृत्यो का बखान किया है उसका वही परिणाम हुआ । उन्ही को अधिक पीडा हुई । जिन विजिता का नाम ऊपर दिया गया है वे पुन जीवित हो गये और उनमें कुछ का भविष्य तो उज्ज्वल हुआ । केवल निनेवा जो मरा सो मरा ।

इन जातियो के भाग्यो में जो अन्तर हुआ उसका कारण खोजने के लिए दूर नही जाना पडेगा । अपनी सैनिक विजयो के पीछे असीरिया धीरे धीरे अपनी आत्महत्या कर रहा था । जिस समय का हम वणन कर रहे ह उस समय के असीरिया के आन्तरिक इतिहास से निश्चित रूप स प्रमाणित होता है कि वहा राजनीतिक अस्थिरता आर्थिक विनाश संस्कृति का पतन और जनसंख्या का ह्रास हो रहा था । असीरिया के डेढ सौ साल के जीवन में वहा की भाषा अक्कादी के स्थान पर अरमाई भाषा की प्रगति इस बात का प्रमाण है कि जिन्हें असीरियाई सेना पूर्ण हमलो के बाद अपनी शक्ति द्वारा बन्दी करके लायी थी, वे धीरे धीरे अपना संस्कार फैला रहे थे । जो सैनिकशक्ति अपनी वीरता के बल पर ६१२ में निनेवा में खडी थी वह वास्तव म मुर्दा थी । वह आत्महत्या कर चुकी थी । उसका सैनिक ढाँचा खडा था । जब मीडिया और बैबिलोनिया की सेना ने इसे अपने सैनिक बल से पछाड कर गिरा दिया तब वे यह नहा समझते थे कि हमारा कठोर शरी मुर्दा हो चुका है ।

असीरिया का विनाश अपने ढग का एक ही है । उसकी समता उससे की जा सकती है जो ३७१ ई० पू० में ल्यूकट्रा के रणक्षेत्र में स्पार्टा के जत्थे की आर जा सन् १६८३ में वियना के युद्ध के पूर्व जानिसारिया की खाई में थी । वे सत्यवादी जो अपने पडोसियो को नष्ट करने के लिए उनसे उग्र युद्ध किया करते हैं अपना ही विनाश करते ह । यह हमें करालिजियना और तमूरा का स्मरण दिलाता है जिन्होने सक्सनो और फारसियाको तबाह करके बडे-बडे साम्राज्य बनाये,

जिनको स्कॉडिनेवियाई और उजबका ने फिर लूटा । उस समय ये साम्राज्य निर्माता एक ही जीवन काल में शक्तिहीन हो गये और इस प्रकार अपने साम्राज्यवाद का मूल्य चुकाया । इस प्रकार साम्राज्यवादियों के भाग्य का निबटारा होता है । असीरियाई उदाहरण से एक और प्रकार की आत्महत्या उन सैन्यवादियों की याद आती है जो बर्बर अथवा उच्च सभ्यता के हों, जो सदा सार्वभौम राज्यों अथवा बड़े साम्राज्यों पर आक्रमण करते हों और उन्हें नष्ट करते हों और ऐसे राज्यों का जिनके द्वारा अपने देश को अथवा जिन देशों पर उनका शासन है, शांति और व्यवस्था प्राप्त हुई है । ऐसे विजेता साम्राज्य को निर्दयतापूर्वक नष्ट भ्रष्ट कर डालते हैं और वहाँ के लोगों के लिए जो शांति के वातावरण में रहते आये हैं मृत्यु और विनाश उपस्थित करते हैं परन्तु इन पर विनाश लाने वालों के ऊपर भी मृत्यु की छाया आ जाती है । विजय की महत्ता से उनका पतन हो जाता है और बलात्कृत देश के इन स्वामियों का भी हाल किल्केनी बिल्लियों के समान हो जाता है जो एक-दूसरे के लिए मित्रता का कार्य करती हैं । और इन लुटेरों में से एक भी लूट का माल भोगने के लिए नहीं रह जाता ।

हम यह भी देख सकते हैं कि जब मैसिडोनिया वालों ने अकेमीनियाई साम्राज्य को नष्ट कर डाला और उसकी सीमा के और आगे भारतवर्ष पर आये तब उसका परिणाम यह हुआ कि उन बयालीस वर्षों के बीच जो सिकन्दर की ३२३ ई० पू० में मृत्यु और २८१ में जब कोरूपीडियन में लाइसिमेकस की हार हुई तब तक एक दूसरे से ये लड़ते ही रहे । यह विभीषिका एक हजार साल बाद दोहरायी गयी जब आदिम मुसल्मान अरबों ने बारह वर्षों में दक्षिण-पश्चिम एशिया के रोमन तथा सुसानियन राज्यों को तहस नहस किया । यह लगभग उतना ही विस्तृत प्रदेश था जिसे सिकन्दर ने ग्यारह सालों में जीता था । और इस प्रकार सिकन्दर के कार्य को मिटा दिया । इस अरबों के बारह वर्षों की लूटपाट के पश्चात् चौबीस वर्षों तक वे एक दूसरे की हत्या करते रहे । एक बार फिर देखिए कि विजयी एक दूसरे पर तलवार चलाते रहे और सीरियाई सार्वभौम राज्य बनाने का श्रेय और लाभ अनधिकारी उम्मैयदों और अब्बासियों को मिला । पैगम्बर ने जो बिजली की गति के समान विजय प्राप्त करके राह बनायी उनके उत्तराधिकारियों को नहीं मिली । असीरियाई सैन्यवाद का आत्महत्या का ढंग उन बर्बरों में भी मिलता है जिन्होंने पतनोन्मुख रोमन साम्राज्य के त्यक्त प्रदेशों पर आक्रमण किया जैसा कि इस पुस्तक के आरम्भ में कहा जा चुका है ।

असीरियाई सैन्यवाद के अनुरूप एक दूसरा सैनिक विपर्यय हम उस समय भी पाते हैं जब असीरिया बड़ी सामाजिक व्यवस्था का अंग था जिसे हम बैबिलोनी समाज कहते हैं । इसमें असीरिया वह सीमा थी जिसका कार्य केवल अपनी ही सुरक्षा करना नहीं था बल्कि उस संसार का भी जिसका वह अंग था । अर्थात् उत्तर और पूरब के उपद्रवी पर्वतियों से और दक्षिण तथा पश्चिम के सीरियाई समाज के आक्रामक पुरोगामियों से । पहले की बिना भेद वाली सामाजिक अवस्था वाले किसी देश की सीमा से इस प्रकार का सम्बन्ध स्थापित करने से सारे समाज का लाभ होता है । क्योंकि इस सीमा के कारण बाहरी दबाव रोका जाता है और अन्दर का भाग अपनी आन्तरिक परिस्थिति दूसरी चुनौतियों का सामना करने के लिए सुरक्षित रहता है । यह श्रम विभाजन बेकार हो जाता है, यदि सीमा वाले जिन्होंने बाहर वालों का सामना करने के लिए सैनिक शिक्षा पायी है, अन्दर वालों पर आक्रमण करके अपनी आकांक्षाओं की पूर्ति करने

लगें। परिणाम होता है गृह-युद्ध। इसी से इस भयावह परिणाम का कारण मालूम होता है जो उस समय हुआ जब टिगल्थ पाइलेसर तृतीय ने ७४५ ई० पू० में असीरियाई सेना द्वारा बैबिलोनिया पर आक्रमण किया। इस प्रकार सीमावालों का अन्दर की ओर आक्रमण करना सारे समाज के लिए विपत्ति कारक है मगर सीमा वालों को तो इसमें आत्महत्या ही है। इनका कृत्य उस हाथ के समान है जो तलवार लिए हो और उसी शरीर में भोंक दे जिस शरीर का वह हाथ है या उस लकड़हारे के समान है जो उसी डाल को चीर रहा है जिस पर वह बैठा है। वह तो डाल के साथ धम से नीचे गिर पड़ता है, पेड़ का तना खड़ा रहता है।

शालमान

जिस अनुचित दिशा में शक्तियों के प्रयोग के परिणाम का ऊपर वर्णन किया गया है सम्भवत यही अनुमान था जिसने आस्ट्रेशियाई फ्रैंक को ७५४ ई० में अपने योद्धा पेपिन को पोप स्टेफेन के निर्णय का बलपूर्वक विरोध करने को विवश किया था जब उसने उनके लम्बार्डी भाइयों से लड़ने के लिए कहा था। पोप की दृष्टि इस परा-आल्पस वाली शक्ति की ओर थी और उसने पेपिन को ७४९ में इसीलिए राजा बना दिया जिससे उसकी अभिलाषाएँ तीव्र हो गयी और उसे वास्तविक अधिकार प्राप्त हो गया क्योंकि पेपिन के समय आस्ट्रेशिया अपनी दोनों सीमाओं की रक्षा करके प्रसिद्ध हो चुका था। अर्थात् राइन के पार सैक्सन बर्बरों से और आइबीरियन प्रायद्वीप के विजेताओं, अरब मुसलमानों से, जो पिरेनीज की ओर बढ़ रहे थे। सन् ७५४ में आस्ट्रेशियाइयों से अपनी शक्ति इस क्षेत्र से दूसरी ओर लगाने के लिए कहा गया कि वे लम्बार्डों को नष्ट करें जो पोप की राजनीतिक अभिलाषाओं के मार्ग के रोड़े थे। आस्ट्रेशियाइयों की सेना में इस आक्रमण के सम्बन्ध में बहुत सन्देह था और उनके नेता की अभिलाषाओं के प्रतिकूल उनका सन्देह अधिक ठीक निकला। अपनी सेना के विरोधों को ठुकराकर पेपिन ने राजनीतिक तथा सैनिक वचन बद्धता की शृंखला की पहली कड़ी बनायी। जिसके कारण आस्ट्रेशिया इटली के साथ और भी जकड़ गया। सन् ७५५-६ के उसके इटालियाई अभियान के कारण शालमान का ७७३-४ का अभियान हुआ। इस अभियान के कारण सक्सनी की विजय में भयानक बाधा उपस्थित हुई। जिसके लिए वह चला था। इसके बाद उसके सक्सनी के कठिन आक्रमण में आगे तीस साल में बार बार बाधाएँ उपस्थित हुईं क्योंकि इटली में समय समय पर संकट उपस्थित होता रहा और इन अवसरों पर उस समय उसका रहना आवश्यक हो गया। उसके परस्पर विरोधी आकांक्षाओं के कारण शालमान की प्रजा पर जो बोझ पड़ा उसके कारण आस्ट्रेशिया की पीठ पर जो बोझ पड़ा वह इतना बढ़ा कि वह उठ न सका।

तैमूर लंग

इसी प्रकार तैमूर ने अपने ट्रांस-आक्सोनिया की रीढ़ तोड़ दी। उसने ईरान, इराक और भारत, अनातोलिया और सीरिया पर बेमतलब आक्रमण करके अपनी शक्ति क्षीण की। जो थोड़ी ट्रांस आक्सेनिया की शक्ति उसे यूरेशिया खानाबदोशों में शान्ति और व्यवस्था स्थापित करने में व्यय करना चाहिए थी। ट्रांस आक्सोनिया निश्चल ईरानी समाज के और यूरेशियाई खानाबदोश संसार के बीच सीमा थी। अपने शासन के प्रथम उन्नीस वर्ष (सन् १३६२-८० ई०) उसने सीमा की सुरक्षा में बिताये। पहले उसने चगताई खानाबदोशों को पीछे हटाया, फिर उन

पर आक्रमण किया और निचली आक्सस घाटी ख्वारिज्म मरुद्यान (ओएसिस) को जूजिया के खाना-बदोशों से मुक्त करके अपने राज्य की सीमा ठीक की। १३८० में जब यह काम वह पूरा कर चुका तमूर को और बड़ा राज्य मिला। उसे चंगेज खाँ का पूरा साम्राज्य मिल गया। क्योंकि तमूर के समय खानाबदोश लोग मरुभूमि और उपजाऊ भूमि के बीच की सीमा से सब स्थानों से पीछे हट गये। यूरेशिया के इतिहास का दूसरा अध्याय चंगेज खाँ के उत्तराधिकार को प्राप्त करने के लिए आस पास के नव-जाग्रत निष्क्रिय जातियों की दौड़ का इतिहास है। इस होड़ में मोल्डेवियन और लियुएनियन इतनी दूर थे कि दौड़ में सम्मिलित नहीं हो सकते थे। मसको वाइट[1] अपने जंगलों में और चीनी अपने घेरों से बँधे हुए थे। कज्जाक तथा ट्रांस आक्ससानियन मात्र प्रतिद्वंद्वी रह गये थे जो अपने निश्चल जीवन के गुणों का त्याग बिना स्टेप में रहने के अभ्यस्त हो गये थे। इन दोनों में ट्रांस आक्ससानियनों की सफलता का अच्छा अवसर था। वह अधिक शक्तिशाली भी थे, स्टेप के केन्द्र के निकट थे और क्षेत्र में पहले उतरे भी। सुन्नी धर्म का रक्षक होने के कारण निश्चल मुस्लिम समुदायों में उसके शक्तिशाली सहायक भी थे जो स्टेप के सामने की सीमा पर इस्लाम के चौकीदार थे।

कुछ क्षण के लिए तमूर ने इस अवसर को उपयुक्त समय और दृढ़ता से इससे लाभ उठाना चाहा। किन्तु थोड़े से वीरतापूर्ण हमलों के बाद वह दक्षिण की ओर घूम गया और ईरानी संसार के अन्दर अपनी सेना को ले गया और अपने जीवन के अन्तिम चौबीस वर्ष उसने इस क्षेत्र में असफल तथा विनाशात्मक आक्रमण करने में लगाये।

तैमूर का यह मूर्खतापूर्ण आचरण सैन्यवाद की आत्महत्या का सुन्दर उदाहरण है। यही नहीं कि उसका साम्राज्य उसके बाद रहा नहीं बल्कि साम्राज्य के बाद का कोई स्पष्ट चिह्न भी नहीं रहा। उसका बाद का प्रभाव निषेधात्मक ही रहा। जो कुछ राह में आया उसको नष्ट करते हुए वह अपने विनाश की ओर तेजी से बढ़ रहा था। तमूर के इस साम्राज्यवाद ने दक्षिण पश्चिम एशिया में राजनीतिक और सामाजिक शून्यक (वकुअम) बना दिया। इस शून्यक के कारण उसमानली समुदाय और सफावी लड़ गये जिसने ईरानी समाज को धराशायी कर दिया।

खानाबदोशी संसार की विरासत ईरानी समाज को नहीं प्राप्त हुई। इसका प्रभाव पहले धर्म पर पड़ा। तैमूर के समय से चार सौ साल पहले से इस्लाम पूर्वी स्टेप की सीमा पर रहने वाले निश्चल लोगों पर अपना प्रभाव क्रमशः जमाता चला आ रहा था। और जब भी खाना बदोश लोग मरुभूमि छोड़कर उर्वर भूमि में आते थे उनके द्वारा पकड़ लिये जाते थे। चौदहवीं शती तक ऐसा मालूम होने लगा कि सारे यूरेशिया में इस्लाम धर्म फैलने से कोई रोक नहीं सकता। किन्तु तैमूर की जीवन-यात्रा की समाप्ति पर यूरेशिया में इस्लाम की प्रगति एकदम बन्द हो गयी। और दो सौ साल बाद मंगोल और कालमुक महायान बुद्ध धर्म के लामाई रूप में परिवर्तित हो गये। प्राचीन विलुप्त भारतीय (इंडिक) सभ्यता की, जो जीवाश्म (फासिल) हो चुकी थी, विजय के फलस्वरूप यूरेशियाई खानाबदोशों के कारण तमूर की मृत्यु के दो सौ वर्षों में इस्लाम की प्रतिष्ठा बहुत गिर गयी।

१ मासको के आसपास वाले।

राजनीतिक धरातल पर, जिस ईरानी सस्कृति का तमूर ने पहले समथन किया था और फिर उसके प्रति विश्वासघात किया उसका भी यही हाल हुआ । जिन निश्चल समाजो ने यूरेशियाई खानाबदोशो को राजनीतिक दृष्टि से पराजित करने का कमाल दिखाया वे रूसी और चीनी थे । खानाबदोशो के इतिहास के बार-बार दोहराये जाने वाले नाटक के अन्तिम दृश्य का भविष्य उस समय जान लिया गया जब ईसा की सत्रहवी शती के बीच मसकोवा के कज्जाक चाकर और चीन के मचू मालिक एक-दूसरे से भिड गये । ये लोग उत्तरी स्टेप की सीमा पर एक दूसरे के आमने सामने आ रहे थे और टकरा गये और यूरेशिया पर अधिकार करने के लिए उनकी पहली लडाई आमूर के ऊपरी बेसिन में चगेज खा के पुराने चरागाह के पास हुई । सौ साल के बाद इन प्रति द्वन्द्वियो के बीच यूरेशिया का विभाजन हो गया ।

ऐसा विचार व्यक्त करना विचित्र जान पडता है कि यदि वह यूरेशिया की ओर से मुह न मोडता और ईरान पर सन् १३८१ में आक्रमण न करता तो आज ट्रास-आक्सेनिया और रूस में जो सम्बन्ध है, उसका उल्टा होता । इन काल्पनिक परिस्थितियो में रूस उस साम्राज्य में होता जिसका क्षेत्र उतना ही बडा होता जितना आज सोवियत रूस का है, किन्तु उसका गुरुत्व केन्द्र (सेंटर आव ग्रेविटी) दूसरा होता । वह ईरानी साम्राज्य होता जिसमें समरकन्द मास्को पर शायद शासन करता, न कि मास्को समरकन्द पर । यह काल्पनिक चित्र विचित्र जान पडेगा क्योकि साढे पाच सौ साल की वास्तविक घटनाएँ भिन्न है । पश्चिमी इतिहास के वैकल्पिक रास्ते का इस धारणा पर यदि हम नक्शा खीचे कि शालमान का आक्रमण जो तैमूर के आक्रमण से कम तीव्र और कम घातक था, पश्चिमी सभ्यता के लिए उतना ही विनाशकारी होता जितना तैमूर का ईरान के लिए, तो कम से-कम आश्चर्यजनक चित्र सामने आता । इस तुलना के आधार पर हम देखते है कि दसवी शती के अन्धकार में आस्ट्रेशिया मागचरो द्वारा निमग्न कर लिया गया होता, न्यूस्ट्रिया वाइकिंगो द्वारा और कैरोलिंजियन साम्राज्य का केन्द्र इसी बबर स्वामियो के हाथ में होता । उस समय तक जब चौदहवी शती मे उसमानलियो का आगमन हुआ और उन्होने बबरो से कम बुरा विदेशी शासन इन पश्चिमी ईसाई जगत् की त्यक्त सीमाओ पर स्थापित किया ।

किन्तु तमूर का सबसे विनाशकारी काय उसके अपने ही विरुद्ध हुआ । उसने अपने नाम को इस प्रकार अमर किया कि भावी पीढियो ने उसके सब कार्यो को भुला दिया जिससे वह सदा के लिए याद किया जाता । कितने आदमी ईसाई जगत् में या दारुस्सलाम में जानते है कि वह बबरो के विरुद्ध सभ्यता के लिए लडने वाला था, जिसने उन्नीस वर्षों तक लड कर अपने देश के पुरोहितो और निवासियो के लिए स्वतन्त्रता प्राप्त की । अधिकाश लोगो के लिए तमूर लग के नाम का कोई अथ है तो यही कि वह सनिक था जिसने विनाशकारी आक्रमण किये और चौबीस वर्षों तक उसी भीषणता का काय किया जो पाच असीरियाई राजाओ ने एक सौ बीस वर्षों में । हम उसे उस पिशाच के रूप में स्मरण करते है जिसने सन् १३८१ ई० में इसफराइन को भूमिसात् किया, जिसने सब्जावार में १३८३ में दो हजार जीवित बन्दियो का टीला बनवाया और उसे ईटो से चुनवा दिया, जिसने उसी साल जारा में पाच हजार मनुष्यो के सिरो की मीनार खडी की, जिसने लूरी के जीवित बन्दियो को १३८६ में चट्टानो के ऊपर से नीचे फेंकवा दिया, जिसने १३८७ ई० में सत्तर हजार आदमियो को कत्ल करके इसफहान में उनके सिरो की मीनार बनवायी, जिसने सन् १३९८ में दिल्ली में एक लाख आदमियो को कत्ल किया, जब सन् १४०० में सीवास के

गैरिजन ने समपण कर दिया तब जिसने चार हजार ईसाइयो को जीवित गडवा दिया। और सीरिया में जिसने सन् १४०० और १४०१ में मनुष्य के सिरो की बीस मीनार बनवायी। हमें तमूर इन्ही कारनामो से याद आते ह। और हम स्टप का उसे दानव समझते ह जस चगज खाँ और अटिला या इसी प्रकार के और विनाशकारी दत्य जिनके विरुद्ध उसन अपने जीवन का अधिक भाग धार्मिक युद्ध लडने में बिताया। यह पागल व्यक्ति था जिसकी एक सनक थी कि ससार यह समझे कि मेरे समान सनिक शक्ति वाला कोई व्यक्ति नही है और जिसने इस शक्ति का कुप्रयोग इसीलिए किया। इसी को अग्रेज कवि मारलोने अत्युक्ति के साथ बडे सुदर ढग से लिखा है और उसे तमूर के मुख से कहलाया है —

> युद्ध के देवता ने अपना स्थान मुझे द दिया है,
> कि म ससार का जनरल बनू,
> ईश्वर मुझ हथियार लिए देखकर पीला पड गया,
> उसे भय हो गया कि म उसे गद्दी से उतार न दूं।
> जहाँ कही भी म जाता हूँ घातक बहनो[1] को पसीना छूटने लगता है,
> और मृत्यु भय खाकर इधर उधर दौडने लगती है,
> कि वे सदा मेरी तलवार को श्रद्धा अर्पित करती रहें।
> करोडा आत्माएँ स्टाइक्स[2] के किनारे बठी रहती ह
> कि कब करन[3] आकर हमें उस पार नरक में ले जाता है ?
> स्वग और नरक उन मनुष्यो की प्रेतात्माओ से भरा है
> जिन्हें मने रणक्षत्र से भेजा है
> वे मेरी ख्याति स्वग और नरक में फलायें[4]

गवर्नर डाकू बन गया

तैमूर और शालमान तथा पिछले असीरियाई राजाओ के जीवन वृत्त के विश्लेषण में हमने देखा कि तीनो उदाहरणो का एक-सा हाल है। समाज जिस सनिक शक्ति को अपनी सीमा के निवासियो में इसलिए पुष्ट करता है कि वह बाहरी बरियो से रक्षा करे, वह यदि अवान्तर भूमि में अपने उचित क्षेत्र को छोडकर अन्दर की ओर सीमा के निवासियो के भाइयो पर आक्रमण करने लगे तो वह अमगलकारी और नतिक दोष हो जाता है। इस सामाजिक बुराई के और भी उदाहरण हमें याद आते ह।

हम मरशिया के बारे में विचार करेंगे जिसने ब्रिटेन में रोम के दूसरे उत्तराधिकारी राज्यो पर आक्रमण किया। उसने अपनी सेना इसलिए तैयार कर रखी थी कि वेल्स के विरुद्ध अग्रेजी

१ प्राचीन यूरोपीय साहित्य में भाग्य की तीन बहनें मानी गयी ह।
२ यूनानी पुराण की वतरणी।
३ वह नाविक जो वतरणी में नाव खेकर आत्माओ को पार ले जाता है।
४ क्रिस्टोफर मारलो तमूर महान्, २, २२३२–८, २२४५–६।

सीमा की रक्षा करे, अंग्रेजी प्लटेजेनेट राज्य का उदाहरण भी है जिसने इसके बजाय कि केल्टिक सीमा को पार करके लैटिन ईसाई ससार क्षेत्र को बढाये, फ्रास को विजय करने के लिए सौ साल तक लडाई की, और मिसली के नारमन राजा रोजर का उदाहरण है जिसने अपनी सनिक शक्ति इटली के राज्यो को जीतने में लगायी और अपने पुरखा के उस काय को नही किया कि परम्परावादी ईसाइ जगत और जरुसलाम पर विजय प्राप्त करके भूमध्यसागर में पश्चिमी ईसाई ससार के क्षेत्र को बढाये। इसी प्रकार यूरोपीय धरती पर मिनोई सभ्यता के माइसीनियन चौकीदारो ने अपनी शक्ति का दुरुपयोग किया अपनी जन्मभूमि क्रीट को तहस नहस करने मे। यह शक्ति उन्होने महाद्वीप के बबरो से रक्षा करने के लिए अर्जित की थी।

मिस्री ससार में नील नदी के पहले प्रपात के दक्षिण, दक्षिणी सीमा के लोगो ने इसलिए सनिक शक्ति अर्जित की कि उत्तर के न्यूबियन बबरो के आगमन को रोक सकें किन्तु उन्होने पीछे मुडकर अदर के लोगो पर आक्रमण किया और पशुबल से दो राजाओ को मिलाकर सयुक्त राज्य बनाया। सन्यवाद की इस घटना को इसके अपराधी ने बडी आत्मतुष्टि के साथ मिस्री सभ्यता के सबसे प्राचीन अनुलेखो में अकित कराया है। नारमर के चित्र में अकित है कि ऊपर का मिस्री योधा विजयोल्लास के साथ निचले मिस्र को पराजित करके आ रहा है। उसका अकन इस प्रकार है—विजयी राजा अति मानव की भाति फूल गया है और वह अकडे हुए झण्डा बरदारो के पीछे-पीछे चल रहा है। और उसके सामने बैरी की सिर कटी हुई लाशो की दोहरी पक्तिया है। इसके नीचे एक बल के रूप में वह गिरे हुए बैरी को कुचलता है और एक नगर के किले के दरवाजे को छोड रहा है। इसके साथ अनुलेख है जिसमें लिखा है उसने १२०,००० मनुष्यो को ४००,००० बलो को और १,४२२,००० भेड और बकरियो को बन्दी बनाया।

इस पुरातन मिस्री भीषण चित्रण में सन्यवाद की पूरी ट्रेजेडी दिखायी गयी है जिसका अभिनय नारमन के समय से बार-बार हुआ है। इन सब अभिनयो में सबसे भयकर वह है जिसका अपराधी एथन्स था, जब उसने यूनान के मुक्तिदाता की भूमिका छोडकर 'अत्याचारी नगर' का रूप धारण किया। एथन्स के इस विपथन के कारण सारे यूनान तथा एथन्स को उस विनाश का सामना करना पडा जो एथेनो पेलापोनीशियाई युद्ध का कारण हुआ और जिससे वह कभी सँभल न सका। जिन सनिक क्षेत्रो का सर्वेक्षण इस अध्याय में हमने किया है व कोरोस-युबरीस एथ' की घातक शृखला के ज्वलन्त उदाहरण ह। क्योकि सनिक कौशल और शक्ति दोधारी तलवार है। यदि उचित रूप से उसका प्रयोग न किया गया तो चलाने वाले को घातक हानि पहुँचा सकता है। साथ ही जो सनिक कृत्यो के लिए सत्य है वही मानव के और क्षेत्रो के लिए भी सत्य है जो कम सकटमय है जहाँ वह बारूद तो कोरास से युबरीस' होते हुए एथ' तक पहुँचती है उतनी तीव्र नही होती। जो भी मानवी शक्ति हो और जो भी उसका कायक्षेत्र हो यह प्रकल्पना कि एक उचित क्षेत्र में उसने सीमित काय में सफलता प्राप्त कर ली है तो दूसरी परिस्थिति में भी उसे अपरिमित सफलता प्राप्त होगी बौद्धिक और नैतिक विपथन के सिवाय और कुछ नही है और इसका परिणाम विनाश ही होता है। इस काय कारण के परिणाम का अब हम असनिक क्षेत्र से उदाहरण देंगे।

(७) विजय का मद

पापा धर्ममण्डल (द होली सी)

एक और साधारण रूप जो हमें कोरोस, कुकरीस और एय' की दुर्गमय भूखण्ड में मिलता है, वह है विजय का मद। चाहे वह सैनिक विजय के पुरस्कार के कारण हो या आध्यात्मिक संघर्ष में विजय का परिणाम हो। रोम के इतिहास से इन दोनों प्रकारों के उदाहरण दिये जा सकते हैं। दूसरी शती ई० पू० में रिपब्लिक के नष्ट हो जाने पर सैनिक विजय का मद और आध्यात्मिक विजय का मद जो ईसा की तेरहवीं शती में पापातन्त्र की समाप्ति पर हुआ। रोमन रिपब्लिक के विनाश के सम्बन्ध में हम कह चुके हैं। अब हम दूसरे विषय पर कहेंगे। पश्चिमी संस्थाओं में सबसे बड़ा रोमन धर्ममण्डल था। इसके इतिहास के जिस अध्याय से हमारा अभिप्राय है वह २० दिसम्बर, सन् १०४६ से आरम्भ होता है जब सम्राट हेनरी तृतीय ने सूत्री के धर्म-परिषद् (साइनाड आव सूत्री) का उद्घाटन किया और बीस सितम्बर का सन् १८७० में राजा विक्टर एमानुएल की सेना ने रोम पर अधिकार कर लिया, समाप्त होता है।

मानवी संस्थाओं में पोप का यह 'ईसाइयों का जनतन्त्र' अद्वितीय है। दूसरे समाजों में जिन संस्थाओं का विकास हुआ है उनसे इनकी तुलना करना बेकार है क्योंकि उनमें और इसमें मौलिक अंतर है। नकारात्मक रूप में ही इसका ठीक वर्णन हो सकता है। यह जनतन्त्र सीजर-पोप शासन का ठीक उलटा था जिस शासन की यह सामाजिक प्रतिक्रिया आध्यात्मिक प्रतिवाद थी। यह वर्णन और किसी वर्णन से अधिक ठीक हिल्डब्रैंड की सफलताओं को बताता है।

जब ग्यारहवीं शती के दूसरे चतुर्थांश में टसकनी का हिल्डब्रैंड रोम में आ बसा, उसने अपने को पूर्वी रोमन साम्राज्य की परित्यक्त सीमा में पाया जिस पर बाइजेंटाइन समाज की एक निकृष्ट शाखा ने अधिकार कर रखा था। इस युग के रोमन सैनिक दृष्टि से उपेक्षणीय, सामाजिक दृष्टि से उपद्रवी और आध्यात्मिक तथा आर्थिक दृष्टि से दिवालिये थे। वे अपने लोम्बार्ड पड़ोसियों का सामना नहीं कर सकते और वे अपने देश के तथा सागर पार की पोप की सारी जागीरों को खो चुके थे और जब मठ के जीवन (मोनास्टिक लाइफ) के स्तर को ऊँचा उठाने का प्रश्न आया तब उन्होंने आल्पस के पार क्लूनी से निर्देश माँगा। पोपतन्त्र की आध्यात्मिक स्थिति सुधारने का पहला प्रयत्न इस प्रकार हुआ कि उसने रोमनों को त्याग दिया और आल्पस के पार से नियुक्ति हुई। ऐसे विदेशी और तिरस्कृत रोम में हिल्डब्रैंड तथा उसके उत्तराधिकारियों ने पश्चिमी ईसाई समाज की श्रेष्ठ संस्था की स्थापना की। उन्होंने पोप के रोम के लिए ऐसे साम्राज्य की विजय प्राप्त की जिसका प्रभाव रोम के सम्राटों से अधिक मनुष्य के हृदय पर था। और जिसका क्षेत्र पश्चिमी यूरोप में राइन से डैन्यूब तक विस्तृत था जहाँ आगस्टस और मारकस आरीलियस की अक्षौहिणी ने पाँव भी नहीं रखा था।

पोप की यह सब विजय ईसाई जनतन्त्र के विधान के कारण थी, जिसकी सीमा का विस्तार पोप लोग कर रहे थे। यह ऐसा विधान था जिससे लोगों में विरोध के बजाय विश्वास होता था। इस विधान में दो नीतियों का संयोग था। चर्च सम्बन्धी केन्द्रीय शासनवादी नीति और

साम्य की राजनीतिक विभिन्नता और अधिकार के हस्तान्तरण की नीति का यह मिलाप था और वधानिक सिद्धात में लौकिक शक्ति पर आध्यात्मिक शक्ति का प्रभुत्व मुख्य बात थी, इस सयोग में एकता प्रमुख थी। इसके कारण पश्चिमी समाज की स्वतन्त्रता और लचीलापन अक्षुण्ण बना रहा, जो विकास के लिए आवश्यक है। उन मध्य के राज्यो में भी जहा पाप धार्मिक तथा लौकिक दोनो प्रकार के अधिकारा का दावा करता था, बारहवा शती के पोपा ने नगर राज्या को स्वतन्त्रता के विकास की ओर प्रोत्साहित किया। बारहवी और तेरहवी शती में जब इटली में नागरिक आन्दोलन पूरी शक्ति पर था, और जब पश्चिमी ईसाई जगत् में पोप का अधिकार शिखर पर था, वेरस के एक कवि ने कहा कि कसी विचित्रता है जहां राम में पाप की ताडना, एक तिनके को भी नही हटा सकती वह दूसरी जगह राजाआ की सन्ताना को कँपा रही है।[१] गिराल्डस कम्ब्रेनसिस ने अनुभव किया कि म एक विराधाभास उपस्थित कर रहा हूँ जो व्यग्य के लिए सुदर विषय है। इस युग में पश्चिमी ईसाई जगत् के अधिकाश राजाआ तथा नगर राज्यो ने पोप का आधिपत्य बिना आनाकानी क स्वीकार किया। उसका कारण यह था कि यह सन्देह नही था कि पोप लौकिक शक्ति का अपहरण करेगा।

उस समय जब पोपा की महन्तशाही (हायरार्की) लौकिक तथा क्षेत्रिक (टेरिटोरियल) आकाक्षाआ से तटस्थ रहने की इस राजममज्ञता की नीति के साथ शासन की शक्तिशाली तथा साहसिक क्षमता मिली हुई थी। यह क्षमता रोम के पापो को बाइजैन्टाइन से उत्तराधिकार में मिली थी। परम्परावादी ईसाई समाज में इस क्षमता का इस बात के लिए प्रयोग किया गया कि रोमन साम्राज्य के पुनर्जीवित प्रेत को यथार्थ बनाया जाय, जा प्रयत्न घातक था। इससे परम्परावादी ईसाई समाज एक भयावह सस्था के बोझ स दब गया, क्योकि यह बोझ वह नहा सभाल सकता था। जब कि इसाइ जनतन्त्र के रोमन सजनकर्ताआ ने अपनी शासन-क्षमता, नयी योजना द्वारा और विस्तृत आधार पर, हल्की रचना में लगायी। पोप के मकडी के जाले के महीन धागा मे, जा पहले बुना गया था मध्ययुगीन पश्चिमी ईसाई समाज स्वतन्त्रता से फँस गया जिससे प्रत्यक भाग को और सम्पूण समाज को लाभ हुआ। बाद में जब सघष क आघात से धागे माटे और कठोर हो गये, ये रशमी धागे लोहे के पट्टे बन गये। इनका स्थानीय राजाआ और जनता पर इतना अधिक दबाव पडा कि उन्होने ऐसी मनस्थिति मे उन्ह ताडा कि इस बात की परवाह नही का कि हम अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करने मे उस सम्पूण ईसाई जगत् की एकता को छिन्न भिन्न कर रहे ह जिस पोपतन्त्र ने स्थापित किया था और सुरक्षित रखा था।

शासन की क्षमता भी भूमि प्राप्त करने की आकाक्षा का अभाव पाप के निर्मिन काय में, मूल प्रेरक शक्ति नही था। पोप तन्त्र इसलिए सजनात्मक हो सका कि उसने एक प्रौढ समाज की जाग्रत इच्छा को, जो विकास और उच्च जीवन चाहती थी बिना सकाच और प्रतिबन्ध के अपना नेतृत्व प्रदान किया उसकी अभिव्यक्ति की और उसका सगठन किया।

१ दी राइट रेवरेंड एच० के० मानसिगनर मन दि लाइव आव दि पोप्स इन दि मिडिल एजेज, खण्ड ६, पृ० ७२।

पोपतन्त्र ने उसका आकार स्थिर किया और कीर्तिवान् बनाया और बिखरे अल्पसख्यकों तथा अलग-अलग व्यक्तियों के दिवास्वप्न को साकार किया। और एक मन से उन लोगों को विश्वास हो गया कि इस उद्देश्य के लिए चेष्टा करना श्रेयस्कर है। उन्हें यह जानकर और भी आनन्द हुआ जब उन्होंने देखा कि पवित्र धममण्डल की बाजी लगाकर भी पोप लोग इसके लिए प्रचार कर रहे है। ईसाई लोकतन्त्र की विजय के लिए पोप का यह अभियान था कि पादरी वर्ग दो नैतिक प्लेग से मुक्त हो—कामुकता के व्यभिचार और आर्थिक भ्रष्टाचार से, वे यह भी चाहते थे कि लौकिक शक्तियाँ धर्म के विषयों में हस्तक्षेप न करें और पूर्वी ईसाई तथा पवित्र स्थलों को इस्लाम के तुर्की हिमायतियों से मुक्त किया जाय। किन्तु हिल्डब्रैंड के पोप तन्त्र का कुल यही काम नहीं था क्योंकि कठिन से कठिन समय में जब पोपों के नेतृत्व में ये 'पवित्र युद्ध' होते रहे उन्हें शान्ति के समय के कार्यों के लिए विचार और इच्छा थी जिसके कारण चर्च की सुन्दरतम आत्माभिव्यक्ति होती रही और उसके द्वारा सृजनात्मक काम होता रहा, नवजात विश्व विद्यालय, नये ढंग का मठ का जीवन और भिक्षुओं का नया संगठन।

हिल्डब्रैंडी चर्च का पतन उतना ही विचित्र है जितना उसका उत्कर्ष था। क्योंकि जो भी गुण उसमें उस समय थे जब वह शिखर पर था वे सब उसके ठीक उल्टे हो गये जब वह अधोबिन्दु पर पहुँचा। वह ईश्वरीय संस्था भौतिक शक्तियों के विरुद्ध आध्यात्मिक स्वतन्त्रता के लिए लड़ रही थी और जीत रही थी। वह उन्हीं दोषों से भर गयी जिनका वह विरोध कर रही थी। जिस पवित्र धर्ममण्डल ने धार्मिक पदों के विक्रय के विरुद्ध संघर्ष किया था उसी ने अब पादरियों को विवश किया कि धार्मिक पदोन्नति के लिए रुपये देकर रोम से रसीद प्राप्त कर लें। यद्यपि रोम ने स्वयं मना कर दिया था कि किसी लौकिक अधिकारी से पदोन्नति न खरीदें। जो रोम के पोप की सरकार (क्यूरिया) नैतिक तथा बौद्धिक उन्नति का दीपक थी और सबके आगे थी, वही आध्यात्मिक संकीर्णता का दुर्ग बन गयी। धर्म की प्रभुसत्ता ने स्वयं अपने लौकिक अधीनस्थ लोगों अर्थात् स्थानीय राजाओं और उभरते हुए स्थानीय राज्यों के हाथों में आर्थिक और शासकीय साधन दे डाले। इन साधनों को पोप ने ही निर्मित किया था जिससे उसके अधिकार का प्रभाव रहे। अन्त में पोपतन्त्र की एक जागीर का वह स्थानीय राजा रह गया। जिस पोप के पास कभी महान् प्रभुसत्ता थी उसी को अब पोपतन्त्र के विनष्ट साम्राज्य के उत्तराधिकारी राज्यों का सबसे छोटा भाग पुरस्कार में मिला। उसे इसी थोड़े से राज्य पर सन्तोष करना पड़ा। क्या कभी कोई संस्था इतनी पतित हुई कि ईश्वर के विरोधियों को उसकी निन्दा करने का अवसर मिले। यह कैसे हुआ और क्या ?

किस प्रकार ऐसा हुआ। यह हिल्डब्रैंड के सार्वजनिक जीवन के सम्बन्ध में सर्वप्रथम लिखित विवरण से पता चलता है।

रोमन चर्च की सृजनात्मक आत्मा जिसने ग्यारहवीं शती में ईसाई जनतन्त्र स्थापित करके सामन्ती अराजकता से पश्चिमी समाज को मुक्त करने का जो प्रयत्न किया उसी प्रकार द्विविधा में पड़ गये जिस प्रकार हमारे समय में उनके आध्यात्मिक उत्तराधिकारी अन्तर्राष्ट्रीय अराजकता को दूर करने के लिए विश्व-व्यवस्था स्थापित करने में लगे हैं। उनका अभिप्राय था मूल या शारीरिक बल के स्थान पर आत्मिक अधिकार स्थापित करना। और उनकी बड़ी-बड़ी विजय आध्यात्मिक तलवार से हुई। किन्तु ऐसे अवसर भी आये जब ऐसा जान पड़ा

कि शारीरिक बल आध्यात्मिक शक्ति की मलिनता के साथ अवहेलना कर सकता है और ऐसी ही अवस्था मे रोमन चच की सैनिक तत्र को चुनौती मिली कि स्फिक्स की पहेली का उत्तर दे। अर्थात् क्या ईश्वर के सैनिक का अपने आध्यात्मिक शस्त्र का छोडकर किसी दूसरे अस्त्र का प्रयोग नही करना चाहिए, चाहे उसकी गति स्थिर हो जाय ? या उसे अधिकार है कि जब शतान ईश्वर से युद्ध करे तब बैरी के विरुद्ध उसी के अस्त्र का प्रयोग करे ? हिल्डब्रैंड ने अतिम विकल्प को चुना। जब ग्रेगरी षष्ठ ने उसे पोप के खजाने का सरक्षक मनोनीत किया और उसने देखा कि बराबर उसे लुटेरे लूट रहे है उसने सेना तैयार की और लुटेरे को सेना द्वारा पराजित किया।

जिस समय हिल्डब्रैंड ने यह काय किया उसके आन्तरिक नतिक चरित्र का पता लगाना कठिन था। चालीस साल के बाद उसके अतिम समय भी इस पहेली का उत्तर थोडा-थोडा ही स्पष्ट होने लगा। क्योकि जब वह सन १०८५ में सलेरिनो में निर्वासित होकर पोप के रूप में मर रहा था, रोम दूसरी विपत्ति के बोझ से धराशायी हो गया था और यह उस नीति के कारण जो उसके विशप द्वारा व्यवहृत की गयी थी। सन् १०८५ में नारमना ने रोम को लूटा और उसे जला दिया। पोप ने इन्हें इसलिए बुलाया था कि सन्त पीटर की वेदी से, जा पाप का खजाना था, उस पर जो सैनिक सघष हो रहा था, उसे सहायता दें। यह सघष सारे पश्चिमी ईसाइ ससार में फैल गया। हिल्डब्रड और सम्राट हेनरी चतुथ के बीच के युद्ध की चरम सीमा से कुछ उस युद्ध की बानगी मिलती है जा डेढ सौ साल बाद इनोसेंट चतुथ और फ्रेडरिक द्वितीय में हुआ और जो अधिक भीषण और विनाश करने वाला था। जब हम इनासेंट चतुथ तक पहुँचते है जो वकील से मनिक बन गया था हमारे सन्देह दूर हो जाते हैं। हिल्डब्रड स्वय हिल्डब्रैंडो चर्च को ऐसी राह पर लाया जिससे उसके बरियो की विजय हो—उसके बैरी थे ससार, शरीर और शतान जो ईश्वर के नगर को ध्वस्त करना चाहते थे जिसे वह धरती पर लाना चाहता था—

उसने किसी बुद्धिमान् को स्वीकार नही किया
न किसी शिक्षक को, चच भी अपने
पुरोहितो की सभा में इसलिए बैठा था
कि सोजर की गद्दी पर सन्त पीटर को बैठाये
और इस प्रकार मानव के लिए उन वचनो का पूरा करे
जिनके लिए ईसा को उन्होने पूजा और उससे प्रेम किया।
इस किसी बात ने उसके धार्मिक नियमो को
शिथिल नही किया कि वह लौकिक शासन का विस्तार करे।[1]

यदि हम इस बात को समझा सके है कि किस प्रकार पोपतन्त्र को शारीरिक शक्ति के दत्य ने ग्रस लिया जिसका वह शमन करना चाहता था, तब हम उस तथ्य को भी पा गये कि किस प्रकार पोप के गुण दोषो में परिवर्तित हो गये। आध्यात्मिक तलवार की जगह भौतिक

१ राबट ब्रिजेज दि टेस्टामेन्ट आव ब्यूटी, ४,२, २५६–६४।

तलवार का आना ही मुख्य परिवर्तन है, शेष सब तो स्वाभाविक परिणाम हैं। उदाहरण के लिए यह कैसे हुआ कि पवित्र धर्ममण्डल जिसका ग्यारहवीं शती में मुख्य सम्बन्ध पुरोहितों की अर्थ व्यवस्था से केवल इतना था कि पदोन्नति के लिए धन न लिया जाय, वही तेरहवीं शती में *अपने नियुक्त व्यक्तियों के लाभ के लिए धन की व्यवस्था करे ?* और चौदहवीं शती में अपने लाभ के लिए उसी धार्मिक आय पर कर लगाये जिसे उसने लौकिक अधिकारियों को धार्मिक पदोन्नति के लिए घृणित कहकर वर्जित कर दिया था। इसका उत्तर है कि पोपतन्त्र सैनिकवादी हो गया और युद्ध में धन की आवश्यकता पड़ती है।

तेरहवीं शती के पोपों और होहेनस्टाउफेन के बीच जो महान् युद्ध हुआ उसका वही परिणाम हुआ जो उन युद्धों का हुआ करता है जो कटुपूर्ण अन्त तक होते हैं। नाम मात्र के विजयी ने अपने पराजित पर घातक प्रहार किया और उसी में अपने ऊपर भी घातक प्रहार कर डाला। इन दोनों योद्धाओं में वास्तविक विजयी तीसरा था। पचास साल बाद फ्रेडरिक द्वितीय की मृत्यु के पश्चात पोप बोनिफेस अष्टम ने फ्रास पर उसी वज्र से प्रहार किया जिससे उसने (पवित्र रोमन) सम्राट को ध्वस्त किया था। परिणाम में सन् १२२७–६८ के बीच के युद्ध के कारण पोपतन्त्र भी उतना ही नष्ट हो गया जितना उसने (पवित्र रोमन) साम्राज्य को नष्ट किया था। फ्रास उतना बलशाली हो गया जितना पोप या साम्राज्य उस युद्ध के पहले था, जिसमें दोनों ने एक दूसरे को नष्ट कर दिया। राजा फिलिप ला बेल ने नोत्रदाम के गिरजाघर के सामने पोप के आदेश (बुल) को जला दिया जिसमें पादरियों और जनता की सहमति थी। फिर पोप का अपहरण कर दिया और उसकी मृत्यु के बाद पोप की राजधानी रोम से एविगनान को बदलवा दी। इसके बाद (१३०५–७८) तक वह बन्दी रहा और (१३७९–१४१५) तक रोम तथा फ्रास में विच्छेद रहा।

यह अब निश्चित हो गया कि स्थानीय लौकिक राजा, शीघ्र या विलम्ब से अपने-अपने राज्यों में उन सब शासकीय और आर्थिक संगठनों को पा जायेंगे जिन्हें पोप अपने लिए निर्मित कर रहे थे। यह स्थानान्तरण केवल समय की बात थी। सड़क के सीमा चिह्न के रूप में देखें—इंग्लैंड की प्रोवाइजरा की सविधि[1], (सन् १३५१) और प्रिमुनायर[2] (१३५३), वे सुविधाएँ जो सौ साल बाद क्युरिया को विवश होकर फ्रास और जरमनी को इसलिए देनी पड़ी कि बसेल की परिषद में वह समर्थन न करे, सन् १५१६ की फ्रास तथा पोप की सन्धि और १५३४ का इंगलिश एक्ट आव सुप्रिमेसी।[3] पोप की सत्ता का लौकिक शासक के हाथों में स्थानान्तरण 'रिफार्मेशन' (धार्मिक सुधार का आन्दोलन) के दो सौ साल पहले से आरम्भ

१ स्टेट्यूट आव प्रोवाइजर्स—इस कानून के अनुसार पोप किसी को किसी ऐसे स्थान पर नियुक्त नहीं कर सकता था जो रिक्त न हो।—अनु०

२ वह कानून जिससे मजिस्ट्रेट को अधिकार होता था कि उन लोगों को तलब कर सके जो पोप की व्यवस्था इंग्लैंड में रखने का प्रयास करते थे।—अनु०

३ वह विधि जिससे पोप का अधिकार हटाकर राजा का अधिकार स्थापित किया गया।
—अनुवादक

हो गया था और वह उन सभी राज्यो में हुआ जो कैथोलिक बने रहे और जो प्रोटेस्टेंट हो गये। सोलहवी शती में प्रक्रिया पूरी हो गयी। और यह सयोग की बात नही है कि उसी शती में वह नीव पडी जिस पर आधुनिक पश्चिमी समाज के अधिकेन्द्रित (टोटालिटेरियन) राज्य खडे है। जो कुछ सीमा चिह्न हमने बताये है उस प्रक्रिया में प्रमुख बात थी सावभौम धमतन्त्र (चच) से हटकर स्थानीय लौकिक राज्यो की ओर भक्ति का चला जाना।

उन लूट के मालो में सबसे मूल्यवान् निधि मानव-हृदय पर अधिकार था जो इस महान् तथा उच्च सस्था से इन्हें मिली थी। क्योकि आय के लिए धन उगाहने और सेना सज्जित करने की अपेक्षा भक्ति प्राप्त करना अधिक श्रेयस्कर है और इसी से ये नये बने राज्य अपने को जीवित रख सके। इसी लक्षण के अनुसार, हिल्डब्रड का जो आध्यात्मिक उत्तराधिकार हमें मिला है, उससे जो स्थानीय राज्य एक समय निर्दोष थे वे आज सभ्यता के लिए अभिशाप बन गये है। क्योंकि भक्ति की भावना जो भगवान् की सेवा के कारण परोपकारी सजनात्मक शक्ति थी, वही जब मनुष्य के गढे देवताओ की ओर लगी तब विनाशात्मक शक्ति हो गयी। जैसा हमारे मध्ययुगीन पुरखे जानते थे, स्थानीय राज्य मनुष्य की बनायी सस्थाएँ है वे आवश्यक और लाभकारी थी और जागरूकता किन्तु बिना जोश के, उनसे साधारण सामाजिक कतव्य पालन की अपेक्षा करती थी। जिस प्रकार आज हम नगरपालिकाओ और जिला परिषदो के प्रति कतव्यपालन करते है। इन सामाजिक तन्त्रो के प्रति देवता के समान भक्ति दिखाना विनाश को बुलाना है।

हमें सम्भवत उस प्रश्न का कुछ उत्तर मिल गया कि किस प्रकार पोपतन्त्र को ऐसे विचित्र भाग्य परिवतन का सामना करना पडा। किन्तु प्रक्रिया के वणन करने में हमने कारण नही बताया। क्या कारण था कि मध्ययुगीन पोपतन्त्र अपने ही यन्त्रो का दास बन गया और उसने अपने ही भौतिक साधनो से अपने को ही धोखा दिया। क्यो वह आध्यात्मिक पक्ष से रह गया जिसके लिए उसका निर्माण हुआ था। इसका उत्तर इसमें जान पडता है कि आरम्भ की सफलता का दुर्भाग्यपूर्ण प्रभाव था। शक्ति और शक्ति का सघष भयकर है। किसी सीमा तक तो यह उचित है, जो अन्तरात्मा से जाना जा सकता है—कैसे यह नहीं कहा जा सकता परन्तु इसका परिणाम भयावह होता है क्योकि आरम्भ में बहुत अच्छी सफलता प्राप्त हो जाती है। पवित्र रोमन साम्राज्य से सकटमय सघष में आरम्भ में विजय के मद में आकर ग्रेगरी सप्तम (हिल्डब्रैड) ने शक्ति का प्रयोग जारी रखा और आध्यात्मिक धरातल पर की विजय अपना ही अन्त हो गयी। इस प्रकार पोप ग्रेगरी सप्तम साम्राज्य से इसलिए लड रहा था कि धमतन्त्र के सुधार में जो अडचन है उसको हटाये, पोप इनासेंट षष्ठ साम्राज्य से इसलिए लडा कि उसकी लौकिक सत्ता को नष्ट कर दे।

क्या हम उस विशेष प्रकरण का पता लगा सकते है जब हिल्डब्रड की नीति पथ से विचलित हो गयी, या पुरानी परम्परा की भाषा में सकीण राह से वह हट गयी। हमें उस प्रकरण के पता लगाने का प्रयत्न करना चाहिए जब वह गलत रास्ते की ओर मुडी।

सन् १७०५ ई० तक पादरियो की काम-वासना तथा आर्थिक भ्रष्टाचार के विरुद्ध दोहरी लडाई सारे पश्चिमी ससार में सफलता के साथ आरम्भ हुई। यह विजय रोमन धममण्डल की शक्ति से हुई। यही रोमन धममण्डल पचास साल पहले अपने व्यभिचार के लिए कुख्यात था।

यह विजय हिल्डब्रड का व्यक्तिगत काय था। यह लडाई वह आल्पस के पार लडा और पोप की गद्दी के पास। और अन्त में वह उस पद पर पहुँचा जिसे उसने धूल में से ऊपर उठाया। वह यह युद्ध भौतिक तथा आध्यात्मिक सभी शस्त्रो से लडा, जिनका भी वह प्रयोग कर सका। जब वह पोप ग्रेगरी सप्तम के रूप में शासन कर रहा था, उस समय विजय की घडी में उसने ऐसा कदम उठाया जिसे उसके समथक समझते ह कि बहुत आवश्यक था और उसके लिए तर्क उपस्थित करते हैं और उसके आलोचक भी तक उपस्थित करते है कि वह विनाशकारी था। उसी साल हिल्डब्रैड ने अपने युद्ध-क्षत्र को बढाया। पहले तो यह युद्ध रखेलियो के रखने और धम पद विक्रम के विरुद्ध था जो उचित जान पडता था, अब वह धार्मिक अभिषेक के विरुद्ध भी बढा, जो सघप विवादास्पद है।

तक की दृष्टि से धार्मिक अभिषेक के विरुद्ध का सघप कदाचित् उचित जान पडे क्योकि रखेलियो के रखने और धम-पद विक्रम के विरुद्ध के सघप का यह अन्तिम रूप जान पडता है और यदि ये तीनो सघप धमतन्त्र की स्वतन्त्रता का सघप माना जाय। हिल्डब्रड की दृष्टि में सारा परिश्रम व्यथ जान पडा यदि वह काम और लक्ष्मी के विरुद्ध लडकर धमतन्त्र को लौकिक शक्ति के बन्धन में छोड देता। किन्तु इस तक से एक प्रश्न उठता है जिसे हिल्डब्रड क आलाचक पूछने के अधिकारी ह यद्यपि वे स्वय इसका उत्तर इसके समथन या विरोध में नही दे सकते। *सन् १०७५ में क्या ऐसी परिस्थिति थी जिसमें कोई तीव्र बुद्धि और दृढ मन वाला व्यक्ति,* जो पोप की गद्दी पर बैठा हो यह सोच सकता था कि धम-तन्त्र के सुधारवादी दल में जिसका प्रतिनिधि रोमन क्यूरिया था और ईसाई राष्ट्रमण्डल की लौकिक शक्ति में जिसका प्रतिनिधि पवित्र रोमन साम्राज्य था किसी सच्चे और फलदायक सहयोग की सम्भावना नही थी ? इस प्रश्न पर प्रमाण का बोझ कम-से-कम दो कारणो से हिल्डब्रड के समथको पर है।

पहली बात यह है कि न तो हिल्डब्रड, न उसके समथक—सन् १०७५ के उस आज्ञप्ति (डिकरी) के पहले या बाद जिसमें जो पादरी नही थे उनकी पदोन्नति का निषेध किया गया था—इस बात से इनकार कर सकते कि धमतन्त्र के पोप से लेकर नीचे तक के, पादरी अधिकारियो के चुनाव में लौकिक अधिकारियो का भी योगदान था। दूसरी ओर १०७५ से पहले तीस वर्षों में रोमन धममण्डल और पवित्र रोमन साम्राज्य रखेलियो और धम व्यवस्था में पदोन्नति वाले सघप में कन्धे-से कन्धा मिलाकर काम कर रहे थे। यह भी स्वीकार करना होगा कि हेनरी तृतीय की मृत्यु के बाद और उसक पुत्र की अवयस्कता (माइनारिटी) म साम्राज्य का यह सहयोग कम हो गया और जब हेनरी चतुथ वयस्क हो गया उसका आचार असतोपजनक था। इन परिस्थितियो में पोपतन्त्र ने वह नीति अपनायी कि जो पादरी नही थे (ले) उनका धार्मिक नियुक्तिया में हाथ न रहे। यह उचित भले ही रहा हो, बडा क्रान्तिकारी कदम था और सब उत्तेजनाओ के होते हुए हिल्डब्रड १०७५ में युद्ध के लिए न ललकारता तो ऐसा समझा जाता है कि अच्छा सम्बन्ध फिर स्थापित हो जाता। यह धारणा बनाये बिना नही रहा जा सकता कि हिल्डब्रड *असहिष्णुता* के धोखे में आ गया जो 'यूब्रीस' का प्रमुख चिह्न है। साथ ही यह धारणा भी होती है कि उसके श्रेष्ठ उद्देश्य में साम्राज्य की शक्ति से बदला लेने की भावना भी मिली हुई थी, उस अपमान का बदला, जो १०४६ में सुतारी की धमसभा में, पतित पोपतन्त्र का

किया गया था। यह अन्तिम धारणा इस बात से और दृढ़ हो जाती है कि पोप का ताज पहनते समय हिल्डब्रैंड ने ग्रेगरी का नाम रखा जो उस पोप का था जिसे उसने गद्दी से उतारा।

पदोन्नति के इस नये प्रश्न को सैनिक बल के सहारे उठाने के कारण साम्राज्य और पोपतन्त्र के बीच संघर्ष संकटपूर्ण था क्योंकि यह तीसरा विषय पहले दोनों विषयों की अपेक्षा कम स्पष्ट था। पहले दोनों विषयों पर कुछ ही पहले साम्राज्य और पोपतन्त्र सहमत थे।

सन्दिग्धता का एक कारण इसलिए यह था कि हिल्डब्रैंड के समय तक यह निश्चित हो चुका था कि बिशप की श्रेणी के पादरी अधिकारी की नियुक्ति में अनेक दलों की सहमति आवश्यक थी। धार्मिक तन्त्र की मर्यादा का प्रारम्भिक एक नियम था कि बिशप का चुनाव पादरियों तथा उसके धर्ममण्डल के लोगों द्वारा होना चाहिए और उसका पवित्रीकरण संस्कार उसके प्रदेश के बिशपों के निश्चित कोरम द्वारा होना चाहिए। और जब से कान्स्टेंटाइन के धर्म परिवर्तन के समय यह प्रश्न उठा, किसी लौकिक शक्ति ने बिशपों के धार्मिक विशेषाधिकार को हड़पने की चेष्टा नहीं की, न चुनौती दी। कम-से-कम सिद्धान्ततः यह अधिकार पादरियों और जनता का था। विधानतः क्या उचित है इसका विचार स्थगित करके लौकिक अधिकारियों द्वारा यथार्थतः यही होता रहा कि प्रत्याशियों का वे नामांकित करते थे और चुनाव में उन्हें प्रतिषेध (विटो) का अधिकार था। हिल्डब्रैंड ने स्वयं अनेक अवसरों पर इसे स्वीकार किया था।

इसके अतिरिक्त ग्यारहवीं शती तक व्यावहारिक दृष्टि से पादरियों की नियुक्ति पर परम्परागत लौकिक नियन्त्रण और दृढ़ हो गया था। क्योंकि पादरी बहुत दिनों से दूसरे अधिकाधिक धार्मिक कृत्यों के साथ-साथ लौकिक कार्य भी करते आये थे। सन् १०७५ तक पश्चिमी ईसाई जगत् का बहुत कुछ सिविल शासन पादरियों के हाथ में था। जो सामन्ती काल से करते आये थे। जो पादरी नहीं हैं उनके धर्म-संस्कार में पादरियों का हाथ न होने से लौकिक शक्ति के अधिकार क्षेत्र से उसके कार्यक्षेत्र का बहुत-सा भाग निकल जाता और धर्मतन्त्र सिविल और धार्मिक दोनों प्रकार का एक में ही शासक बन जाता। यह धारणा कि लौकिक शासकों के हाथों में सिविल कार्य भी सौंप दिये जाते, बेकार है। संघर्ष के दोनों दल जानते थे कि ऐसे कार्य करने वाले लौकिक कर्मचारी नहीं हैं।

१०७५ में हिल्डब्रैंड ने जो कार्य किया उसकी गम्भीरता उसके भयंकर परिणाम के आयाम (डाइमेंशन) से प्रकट होती है। इस धार्मिक पदोन्नति के विषय पर हिल्डब्रैंड ने अपनी सारी प्रतिष्ठा की बाजी लगा दी जो उसने पोपतन्त्र के लिए पिछले तीस वर्षों में प्राप्त की थी। हेनरी चतुर्थ के आल्प्स पार के राज्य की ईसाई जगत् के हृदय पर बहुत प्रभाव था और उसके साथ-ही साथ सक्सन सेना की सहायता थी जिसके बल पर वह सम्राट को कनोसा[1] लाया। यद्यपि कनोसा में सम्राट का ऐसा अपमान हुआ जिसका फिर प्रतिकार नहीं हो सका किन्तु यह युद्ध का अन्त नहीं था पुनरारम्भ था। पचास वर्षों के युद्ध ने पोपतन्त्र और साम्राज्य के बीच बहुत चौड़ी और गहरी खाई उस विशेष बात पर बना दी थी जिसके कारण संघर्ष आरम्भ हुआ।

१ यह इटली का एक गाँव था जहाँ १०७७ में हेनरी चतुर्थ हिल्डब्रैंड (पोप ग्रेगरी सप्तम) के पास आया और उसने क्षमा माँगी।—अनु०

यह खाई किसी कुशल समझौते से पट नही सकती थी। पदोन्नति का विवाद ११२२ की धार्मिक संधि के बाद भले ही मृत हो गया हो किन्तु इसके कारण जो वैर उत्पन्न हो गया था वह बढ़ता ही गया और मनुष्य के हृदय की कठोरता के कारण और उनकी आकांक्षाओं की विकृति के कारण नये नये रूप लेता गया।

हमने १०७५ के हिल्डब्रड के निश्चय पर विस्तार से विचार किया क्योंकि हमें विश्वास है जो कुछ बाद में हुआ इसी महत्त्वपूर्ण निश्चय का परिणाम है। हिल्डब्रड ने अपनी विजय के मद में जिस सस्था को कलक के पक से उठाकर वभव की ऊँचाई पर प्रतिष्ठित किया था उसी को गलत रास्ते पर वह ले गया और उसका कोई उत्तराधिकारी उसे ठीक राह पर न ला सका। हम इस कथा के और ब्योरे में न जायेंगे। इनोसेंट तृतीय पोप का काय काल (११९८–१२१६) एन्टोनाइन युग[1] है, हिल्डब्रड के पोपतन्त्र का भारतीय ग्रीष्म। किन्तु इस पोप की महत्ता परिस्थिति विशेष के कारण है। जैसे होहेनस्टाउफेन वश की बहुत दिनो की अवयस्कता और उसका जीवन चरित इस बात का उदाहरण है कि एक उत्कृष्ट शासक अदूरदर्शी राजमर्मज्ञ (स्टेटसमैन) हो सकता है। इसके बाद पोप का युद्ध फ्रेडरिक द्वितीय और उसके पुत्र से विनाश होने तक चला, फिर अनेग्नी का दुखपूर्ण अत जो कनोसा का लौकिक हाथो द्वारा घणित बदला था, कद और विच्छेद धार्मिक परिषद् के आन्दोलन की अकाल प्रसूत ससदीय व्यवस्था, इटालियाई पुनर्जागरण के काल में पोपतन्त्र का अन ईसाईपन (पेगेनाइजेशन), सुधार आन्दोलन से (रिफार्मेशन) से कैथोलिक धमतन्त्र का विघटन प्रति सुधार (काउन्टर रिफार्मेशन) जनित अनिर्णीत किन्तु भयानक सघष अठारहवी शती में पोप की नगण्यता और उन्नीसवी में उसकी सक्रिय अनुदारता।

किन्तु यह अपूव सस्था जीवित[2] है। आज जिस समय हम इस निणय पर पहुँचे है, यह उचित है कि पश्चिमी ससार में जितने पुरुष और स्त्री जीवित है और जिन्होंने ईसाई धम स्वीकार किया है वे 'वचन के अनुसार' उत्तराधिकारी हैं। और हमारे साथ जितने गैर ईसाई हैं जिन्होने पश्चिमी जगत् के जीवन का अनुकरण कर लिया है वे भी उसी 'वचन' के उत्तराधिकारी हैं। उन्हें चाहिए ईसा के पुरोहित (पोप) से विनती करे कि अपनी महान् पदवी की प्रतिष्ठा स्थापित करे। क्या पीटर के स्वामी (ईसा मसीह) ने पीटर से नही कहा था कि जिसे अधिक दिया गया है, उससे अधिक लिया जायगा जिसे मनुष्य ने बहुत सौंपा है उससे उतना ही अधिक वे माँगेंगे? रोम के देवदूत (पोप) को हमारे पूवजो ने पश्चिमी ईसाई जगत् का भाग्य सौंप दिया था, जो उनकी सारी सपत्ति थी। जब ईश्वर के सेवक ने 'जो उसकी इच्छा जानता था, 'अपने को उसकी इच्छा के अनुसार सनद्ध नही किया' तब उसे 'अनेक कोडो का दण्ड मिला। इसका आघात,

१ यह काल रोम साम्राज्य का स्वण काल माना जाता है। इसमें टाइटस एन्टोनीनस तथा उसके पुत्र ने राज्य किया (सन १३८ से १८० तक)।—अनु०

२ एक विख्यात रोमन कैथोलिक विद्वान ने एक बार निजी बात चीत में कहा (इसके लिए उसका नाम नहीं बताया जा सकता)—'मेरा विचार है कि कैथोलिक धमतन्त्र ईश्वरीय है। उसके ईश्वरीय होने का प्रमाण म यह समझता हूँ कि कोई मानवी सस्था जिसका सचालन इस प्रवचनापूण पागलपन से किया जाता, पन्द्रह दिन भी नहीं टिक सकती थी।—सम्पादक

'उन पुरुषो और स्त्रिया' पर भी पडा जिन्होंने अपनी आत्मा ईश्वर के दासानुदास को सौंप दी। दास के 'यूवरीस' का दण्ड हमें मिला। अब जिसके कारण दण्ड मिला उसका कर्तव्य है कि, चाहे कैथोलिक हो या प्रोटेस्टेंट, ईसाई या गैर ईसाई, सबका उद्धार करे। यदि इस सकटकाल में दूसरा हिल्डब्रड जन्म ले तो क्या वह उस पीडा से शिक्षा लेगा जो शिक्षा पोप ग्रेगरी सप्तम के विजय के मद के विनाश के कारण उत्पन्न होनी चाहिए। और उससे सचेत होकर हमारा रक्षक हमारी रक्षा करेगा।

५

सभ्यताओ का विघटन

१७ विघटन का रूप

(१) साधारण सर्वेक्षण

सभ्यताओ के पतन के पश्चात् उनके विघटन पर विचार करते समय हमें वसे ही प्रश्न का सामना करना पडेगा जैसा सभ्यताओ के जन्म तथा उनके विकास पर विचार करते समय करना पडा था। विघटन नयी समस्या है अथवा पतन का स्वाभाविक और अवश्यम्भावी परिणाम है ? हमने जब पहले की समस्या पर विचार किया था कि क्या सभ्यताओ के विकास की समस्या उसकी उत्पत्ति से भिन्न है तब हमें स्वीकारात्मक उत्तर मिला था। इसका कारण यह था कि हमें इस बात की जानकारी हो गयी कि अनेक अविकसित सभ्यताएँ ह जिन्होंने उत्पत्ति की समस्या तो सुलझा ली किन्तु विकास की समस्या न सुलझा सके। अब हम ऊपर के उसी प्रकार के प्रश्न का उत्तर भी स्वीकारात्मक देंगे। हम दिखायेंगे कि कुछ सभ्यताओ का विकास पतन के बाद रुक गया और बहुत काल तक वे अश्मीकरण (पेट्रिफिकेशन) की अवस्था में रहीं।

अश्मीकृत सभ्यता का क्लासिकी उदाहरण मिस्री सभ्यता के इतिहास के एक समय से मिलता है, जिस पर हम विचार कर चुके हैं। जब पिरामिड निर्माताओ के बोझ से मिस्री समाज का पतन हो गया और जब विघटन की पहली से दूसरी और दूसरी से तीसरी अवस्था में वह पहुँच गया, जो इस प्रकार थी। सकट की स्थिति, सावभौम राज्य और अन्त काल। और तब यह समाज जो मृतप्राय दिखाई देता था अप्रत्याशित रूप से एकाएक दूसरी ओर मुड गया। उस समय ऐसा जान पडता था कि वह अपना जीवन पूरा कर रहा है। यदि हम अस्थायी रूप में हेलेनी उदाहरण को मानक मानें पहले-पहल यह प्रक्रिया हमें दिखाई दी थी तो हम देखेंगे कि मिस्री समाज अन्त काल के बाद दूसरी राह पर चला गया। उसका विघटन नही हुआ और उसका जीवन दुगना हो गया। यदि हम मिस्री समाज के समय विस्तार को उस समय ले लें जब उस पर ईसा के पहले सोलहवी शती के प्रथम चतुर्थांश में हाइक्सा के आक्रमण से गल्वीनी (गल्वेनिक) प्रतिक्रिया हुई थी और उस समय तक जब ईसवी सवत् की पाँचवी शती आयी और मिस्री सस्कृति का अन्तिम चिह्न मिट गया तो हम देखते ह कि यह दो हजार साल उतना ही लम्बा है जितना मिस्री समाज की उत्पत्ति, विकास पतन और पूर्ण विघटन का काल। यदि हम विपरीत ढग से इसकी गणना करें तो ईसा के पूर्व सोलहवी शती से मिस्र पुन सगठन से लेकर ई० पू० चार हजार वर्ष पहले किसी अज्ञात तिथि तक जब आदिम स्तर से वह पहले पहले उठा, इतना ही समय होता है। परन्तु दूसरे युग में मिस्री समाज का जीवन-काल मृत्यु के समान ही था। इन दो हजार

वर्षों में जो फाल्तू थे, वह सभ्यता जो पहले सजीव और सार्थक थी, बिना विकास और शक्ति के जैसे-तैसे जीवन-यापन कर रही थी।

केवल यही उदाहरण नही है। यदि हम सुदूर पूर्व समाज के मुख्य देश चीन के इतिहास को देखें और उसके पतन-काल को देखें तो उसकी समता ईसा की नवीं शती के अंतिम चतुर्थांश में ताग साम्राज्य के पतन काल से कर सकते है। फिर 'संकटकाल' से होते हुए सार्वभौम राज्य बनते हुए विघटन की प्रक्रिया हम देख सकते है और फिर एकाएक प्रतिक्रिया होती है जो उसी प्रकार की है जो हाइक्सा के आक्रमण के बाद मिस्रियो की हुई। मिंग वंश के स्थापक हुग वू के नेतृत्व में दक्षिण चीन का विप्लव सुदूर पूर्वी सार्वभौम राज्य के विरुद्ध था जिसे बर्बर मगोलो ने स्थापित किया था। यह उस विप्लव की याद दिलाता है जो आठवें वंश के प्रतिष्ठापक अमोसिस के नेतृत्व में हुआ था। यह उस 'उत्तराधिकारी राज्य' के विरुद्ध था जो बर्बर हाइक्सा ने व्यक्त और निर्जीव मिस्री सार्वभौम राज्य (तथाकथित मध्य साम्राज्य) के एक भाग पर स्थापित किया था। परिणाम में भी समानता है। क्योकि सुदूर पूर्व समाज जल्दी से सार्वभौम राज्य बनकर अंत काल व्यतीत कर विघटित होकर विनष्ट नही हुआ। इसके विपरीत अश्मीभूत रूप में बहुत दिनो तक रहा।

इन दो उदाहरणो के साथ हम और विलुप्त अश्मीभूत सभ्यताओ का नाम जोड दें, जो हमारी दृष्टि में आये हैं, भारत मे जैन, लका, बर्मा, श्याम और कबोडिया में हीनयानी बौद्ध, तिब्बत और मगोलिया के लामा ढग के महायानी बौद्ध। ये सब भारतीय सभ्यता के अश्मीभूत टुकडे है, इसी प्रकार यहूदी, पारसी, नेस्टोरी और मोनाफाइसाइट सीरियाई सभ्यता के अश्मीभूत टुकडे हैं।

हम अपनी सूची और नही बढा सकते मगर इतना कह सकते हैं कि मेकाले के विचार से इस प्रकार का अनुभव ईसा की तीसरी और चौथी शती में हेलेनी सभ्यता को होते होते रह गया। 'दो प्राचीन विख्यात राष्ट्रो की भावना विशेष ढग से बहिष्कारवादी थी। ऐसा तथ्य जान पडता है कि यूनानी केवल अपने ऊपर मुग्ध थे और रोमन अपने ऊपर तथा यूनानियो पर मुग्ध थे। इसका परिणाम विचारो की सकीर्णता और तद्रूपता थी। यदि हम इस प्रकार कहें तो कह सकते है कि उनकी बुद्धि अन्दर की ओर ही प्रकाशित रही और इसलिए वह वध्या हो गयी, उसका अध पतन हो गया। सीजरो की निरकुशता उनका धीरे धीरे सब राष्ट्रीय विशेषताओ का मिटाना और दूर से-दूर प्रदेशो को एक-दूसरे में आत्मसात् करना—इनके कारण अनिष्ट और बढ गया। ईसा की तीसरी शती की समाप्ति के बाद मानवता का भविष्य भयानक रूप से विषादमय हो गया था। यह महान समाज उससे भी भयावह विपत्ति में पडने वाला था, जो राष्ट्रो पर एकाएक भस्म कर देने वाली विनाशकारी व्याधि के रूप में आया करती है। वह व्याधि स्ट्रल्डब्रुगो[1] के समान चीनी सभ्यता पर आने वाली थी। यह व्याधि लडखडाता, राल टपकाता पक्षाघात से पीडित दीर्घजीवन था। डायाक्लीनियन[2] की प्रजा और चीनी साम्राज्य

१ स्ट्रल्डब्रुग—'गुलिवर की यात्रा' में यह जाति जिसे अमरता का अभिशाप मिला था। —अनुवादक

२ रोम का सम्राट् जो नितान्त निरकुश शासक था।—अनुवादक

हम पूरी तरह यह भी कल्पना कर सकते हैं कि ऐसे अनुशासन का अभाव विघटन का कारण नहीं है। परन्तु जहां तक प्रमाण मिलते हैं कि परिस्थितियों पर जितना ही अधिक अनुशासन होगा उतना ही विकास नहीं, विघटन होगा। सैनिकवाद पतन तथा विघटन दोनों का समान गुण है। और इसके द्वारा जाग्रत समाज तथा प्रकृति की निर्जीव शक्तियों पर समाज का अनुशासन बढ़ता है। किसी सभ्यता के जीवन की पतनोन्मुख अवस्था में आयोनियन दार्शनिक हिराक्लाइटस के कथन में सत्य हो सकता है कि 'युद्ध सब चीजों का पिता है'। चूंकि मानव की सम्पन्नता का अनुमान साधारण लोग शक्ति और सम्पत्ति से लगाते हैं, ऐसा बहुधा होता है कि किसी समाज के पतन की प्रारम्भिक अवस्था महान् विकास की पराकाष्ठा समझी जाती है। कभी-न-कभी इस भ्रम का निवारण हो जाता है क्योंकि जिस समाज में ऐसा भेद हो गया है जो मिट नहीं सकता, वह अपने सारे मानवी और भौतिक अतिरिक्त साधनों को युद्ध में लगायेगा। क्योंकि इसी युद्ध से वे साधन प्राप्त हुए हैं। उदाहरण के लिए जो धन और मानव शक्ति सिकन्दर की विजय द्वारा प्राप्त हुए उन्हें उसके उत्तराधिकारियों ने गृहयुद्ध में लगाया और जो मानव तथा धन की शक्ति रोमनों ने दूसरी शती ई० पू० में अर्जित की थी उन्हें उन्होंने ई० पू० की अन्तिम शती के गृहयुद्ध में व्यय किया।

विघटन की प्रक्रिया की कसौटी हमें कहीं और ढूंढनी पड़ेगी। इसका रहस्य हमें समाज के उस विभाजन और फूट में मिलता है जो वातावरण पर अनुशासन की वृद्धि के साथ-साथ बढ़ते जाते हैं। इसी की हम आशा भी करते हैं क्योंकि हमने देखा है कि विघटन के पूर्व पतन के जो मुख्य कारण होते हैं वे आन्तरिक फूट के परिणाम हैं। इनके कारण समाज के आत्मनिर्णय की क्षमता जाती रहती है।

इस फूट की अभिव्यक्ति अज्ञात सामाजिक भेदों में होती है जिसके कारण पतित समाज दो आयामों में विभाजित हो जाता है। भौगोलिक कारणों से विच्छिन्न समुदायों में शिरोवृत्त (वर्टिकल) भेद होता है और भौगोलिक कारणों से मिश्रित समुदायों में क्षैतिज (हारिजेंटल) भेद होता है।

जहां तक शिरोवृत्त भेद का प्रश्न है, हमने देखा है कि ऐसे समाज के लोग नासमझी से अन्तर राज्यों की लड़ाई में रत रहते हैं और इस प्रकार अपनी आत्महत्या के मार्ग पर अग्रसर होते हैं। किन्तु शिरोवृत्त भेद ही झगड़े की सबसे स्पष्ट अभिव्यक्ति नहीं है जिससे सभ्यताओं का पतन होता है। समाज का स्थानीय समुदायों में विभाजन मानव समाज के सभी वंशों (जीनस) का गुण है, चाहे वे सभ्य हों या असभ्य। और अन्तर राज्य युद्ध उस शक्तिशाली आत्म विनाशी यन्त्र का दुरुपयोग है जो कोई समाज किसी समय कर सकता है। इसके विपरीत किसी समाज का क्षैतिज भेद, समाज के ही वर्गों के बीच, केवल सभ्यता की विशेषता ही नहीं है बल्कि सभ्यताओं के पतन के समय उसका आविर्भाव होता है। पतन और विघटन का यह विशेष चिह्न है और सभ्यता की उत्पत्ति तथा विकास के समय ये नहीं पाये जाते।

इस प्रकार के क्षैतिज भेद को हमने देखा है। जब हम अपने पश्चिमी समाज को समय आयाम के विचार से विलोम दिशा में विस्तृत कर रहे थे, हमें इस प्रकार का भेद मिला। हम ईसाई धर्मतन्त्र तक पहुंचे और हमने अनेक बर्बर युद्ध के जत्थों को देखा जो रोमन साम्राज्य की उत्तरी सीमा में पश्चिमी यूरोप से ईसाई तन्त्र से भिड़े। और हमने युद्ध के जत्थों और धर्मतन्त्र,

दोना सस्थाओ में देखा कि जिस समाज के दल ने इनका निर्माण किया था वह हमारा पश्चिमी समाज नही था। यह निर्माण हमारे पहले के समाज–हैलनी सभ्यता का निर्माण था। हमने ईसाई धमतन्त्र के निर्माताओ को आन्तरिक सवहारा बताया था, और बबर युद्ध के दल को हैलेनी समाज का बाहरी सवहारा कहा था।

जब हमने अपने अन्वेषण को और आगे बढाया, तब हमने देखा कि ये दोना सवहारा हेलेनी समाज से 'सकटकाल' में अलग हो गये थे। इस समय हेलेनी समाज सजनात्मक नही था, ह्रासोन्मुख था। थोडा और पीछे चलकर हमने देखा था कि यह अलगाव इस कारण हुआ था क्योकि हेलनी समाज के शासक वग में परिवतन हो गया था। जिस सजनात्मक अल्पसख्या की असजनात्मक जनता स्वेच्छा से भक्त थी, क्योकि सजनशीलता म भक्त बना लेने का गुण होता है वही अब शक्तिशाली अल्पसख्या बन गयी क्योकि वह सजनात्मक नही रह गयी। यह शक्तिशाली अल्पसख्या बल से अपने स्थान को सुरक्षित रखने में समथ रही। ईसाइ समाज तथा युद्ध का गिरोह इसकी निरकुशता के कारण अलग हुआ। अनुचित ढग से यह शक्तिशाली अल्पसख्या सबको एकता के सूत्र में बाधे रखने का प्रयत्न करती रही, किन्तु असफल रही। शक्तिशाली अल्पसख्या की केवल यही उपलब्धि हमारे सामने नही है। उसन रोमन साम्राज्य के रूप में अपनी यादगार छोड दी है। रोमन साम्राज्य धमतन्त्र और युद्ध के गिरोह से पहले जन्मा। जिस वातावरण में इन दोना न जन्म लिया उसी में रोमन साम्राज्य भी था और इन सस्थाओ के विकास में इसका भी हाथ था, इससे इनकार नही किया जा सकता। जिस सावभौम राज्य ने हेलेनी शक्तिशाली अल्पसख्या को अपने में परिवेष्टित कर लिया था वह उसी प्रकार था जसे विशाल कछुए का ऊपरी खोल। बबरा ने अपन युद्ध करने वाले गिरोह को उसी कछुए की पीठ पर अपना पजा तीव्र करने की शिक्षा दी।

अन्त में अपने अध्ययन के बाद एक स्थान पर हमने स्पष्ट रूप से यह समझना चाहा कि अल्पसख्या की सजनात्मक शक्ति लोप हुई और यह बहुसख्यको को गुणा से आकृष्ट कर शक्ति द्वारा जीतन लगी, इसमें क्या कारण–काय सम्बन्ध है? और यहाँ हम सजनात्मक अल्पसख्या के सामाजिक अभ्यास की ओर सकेत करना पडता है क्योकि असजनात्मक जनता को अपने साथ ले चलन का यही सरल उपाय है। विकास की परिस्थिति मे यही सामाजिक अभ्यास अल्पसख्या और बहुसख्या के सम्बन्ध का दुबल स्थल है। इस दृष्टि से अल्पसख्यका और बहुसख्यको क बीच उस समय भेद बहुत बढ जाता है जब सवहारा अलग हो जाता है। यह सम्बन्ध विच्छेद उस कडी के टूटने का परिणाम है जो विकास काल मे भी अनुकरण की शक्ति का अभ्यास कराके सुरक्षित रखी जाती है। इसमें आश्चय नही कि जब नेताओ की सजन शक्ति समाप्त हो जाती है तब अनुकरण शक्ति भी समाप्त हो जाती है। क्योकि विकास काल में भी अनुकरण की कडी पराश्रित रहती है। इस समय अविश्वसनीय द्वैत भावना होती है अर्थात् अतीच्छुक दास की भावना होती है जो किसी भी यान्त्रिक कौशल के साथ पायी जाती है।

क्षतिज भेद की खोज से हमें ये सूत्र मिले जो हमारे हाथ में है। आगे की खोज के लिए सबसे आशापूण ढग यह होगा कि इन सूत्रा को एकत्र करके हम रस्सी बटें।

हमारा पहला कदम यह होगा कि हम तीन भागो का अर्थात् शक्तिशाली अल्पसख्या और

आन्तरिक तथा बाहरी सर्वहारा का निकट से और विस्तृत सर्वेक्षण कर। हेलेनी उदाहरण तथा और दूसरे उदाहरणों से जिनका हमने इस अध्ययन में विचार किया है, हमें प्रतीत हुआ है कि पतनोन्मुख समाज में, जब क्षतिज फूट पड़ जाती है तब वह समाज छिन्न भिन्न हो जाता है। इसके बाद हम पूर्ण (मक्रोकाज्म) से सूक्ष्म (माइक्राकाज्म) की ओर विचार करेंगे जैसा हमने विकास के समय किया था। और उसमें हम देखेंगे कि विघटन के साथ साथ आत्मा के विकास में भी अवरोध हो जाता है। इस खोज में पहली दृष्टि में हमें ऐसी बात मिलेगी जो विरोधाभास है। अर्थात् विघटन की प्रक्रिया में हम पुनर्जीवन का आभास मिलता है जिसमें अपने पूर्वजों के गुण दिखाई देते हैं। तथापि यह क्रिया विघटन से प्रतिकूल है।

अपने विश्लेषण की समाप्ति के बाद हम देखेंगे कि विघटन के साथ गुणों का जो परिवर्तन होता है, यह विकास के परिवर्तन में जो गुण उत्पन्न होते हैं, उसके विपरीत है। विकास की प्रक्रिया में हमने देखा है कि अनेक विकासोन्मुख सभ्यताएँ एक दूसरे से बहुत भिन्न होती हैं। इसके विपरीत विघटन में एक समानता आ जाती है।

एक समानता की ओर की प्रवृत्ति और भी स्पष्ट हो जाती है, जब हम देखते हैं कि उसे कितनी विभिन्नताओं पर विजय प्राप्त करना होता है। पतन वाली सभ्यताओं का जब विघटन होने लगता है तब उनके साथ विभिन्न प्रवृत्तियाँ उत्पन्न हो जाती हैं जैसे कला की ओर यन्त्रों (मशीनों) की ओर या इसी प्रकार की और बातों की ओर जो उन्होंने विकास के समय अर्जित की थी। वे एक दूसरे से और भी अधिक भिन्न हो जाती हैं क्योंकि पतन उनके जीवन के विभिन्न कालों में होता है। उदाहरण के लिए सीरियाई सभ्यता का पतन सोलोमन की मृत्यु के बाद हुआ जो सम्भवतः ९३७ ई० में हुई। यह समय कदाचित् उस समय से दो सौ साल से कम है जब मिनोई सभ्यता के बाद के अन्त काल में पहले पहल इस (सीरियाई) सभ्यता का जन्म हुआ। इसके विपरीत उसी अन्त काल में एक ही समय हेलेनी सभ्यता का भी जन्म हुआ था। इस सभ्यता का पतन पाँच सौ साल बाद नहीं हुआ। एथेनी पेलोपोनीशियन युद्ध के बाद हुआ। परम्परावादी ईसाई सभ्यता का पतन महान् रोमानो-बुलगारियन युद्ध के समय ९७७ ई० में हुआ और उसी के साथ हमारी सभ्यता अनेक शतियों तक विकसित होती रही और जहाँ तक हम समझते हैं अभी उसका पतन नहीं हुआ है। यदि समकालीन सभ्यताओं का जीवनकाल भिन्न भिन्न होता है तो स्पष्ट है कि सभ्यताओं के विकास का जीवन समान अवधि का नहीं होता। इन बातों से स्पष्ट हो जाता है कि विकासोन्मुख सभ्यताओं का अन्तर गम्भीर और विस्तृत होता है। किन्तु हम यह देखेंगे कि सभ्यताओं के विघटन की प्रक्रिया समान ढंग की होती है। अर्थात क्षतिज भेद जिससे समाज तीन भागों में, जिनका विवरण बताया गया है टूट जाता है। और इन तीन में से प्रत्येक भाग द्वारा अलग-अलग विशेष संस्थाओं का निर्माण होता है—सार्वभौम राज्य, सार्वभौम धर्मतन्त्र और बर्बर योद्धा-दल।

यदि हम सभ्यताओं के विघटन का पूर्ण अध्ययन करना चाहते हैं तो इन संस्थाओं का और इनके रचयिताओं के सम्बन्ध में समझना होगा। किन्तु सरल यह होगा कि प्रत्येक संस्था का अध्ययन अलग-अलग पुस्तकों में करें।[1] क्योंकि ये संस्थाएं विघटन की प्रक्रिया से कुछ और अधिक

१ टवायनबी की उन पुस्तकों में जो अभी छपी नहीं हैं। —सम्पादक

है। यह भी सम्भव है कि एक सभ्यता के दूसरी सभ्यता से सम्बन्ध स्थापित करने में भी इनका योगदान रहा हो। जब हम सार्वभौम धर्मतन्त्रों का अध्ययन करेंगे तब हम यह प्रश्न उठाने को विवश होंगे कि इन तन्त्रों को हम पूर्ण रूप से उन सभ्यताओं के इतिहास के ढाँचे में समझ सकते हैं, जिनमें उनका उदय हुआ या हम उन्हें किसी दूसरी जाति (स्पीसीज) के समाज का प्रतिनिधि समझें जो उन जाति वाली सभ्यता से उसी प्रकार भिन्न है जिस प्रकार ये सभ्यताएँ आदिम समाजों से।

इतिहास के अध्ययन में यह महत्त्व का प्रश्न है किन्तु हमने जिस प्रकार की खोज का वर्णन किया है, उसकी दूसरी छोर पर यह है।

(२) भेद और पुनर्जीवन

जर्मन यहूदी कार्ल मार्क्स (१८१८-८३) ने एक अगृहीत धार्मिक परम्परा के इल्हामी स्वप्न से रंग उधार लेकर विशाल चित्र खींचा है जिसमें उन्होंने सर्वहारा के अलग होने और परिणामस्वरूप वर्ग-संघर्ष का चित्रण किया है। मार्क्स के भौतिकवादी इल्हामी ने करोड़ों लोगों पर प्रभाव डाला है। इसका कारण कुछ तो मार्क्सवादी चित्र में राजनीतिक युद्धप्रियता है। इस चित्र का मूल तो साधारणतः इतिहास का दर्शन है, साथ ही वह क्रान्तिकारी युद्ध के लिए ललकार भी है। इस वर्ग संघर्ष के मार्क्सवादी सूत्र के आविष्कार और चलन को हम इस बात का संकेत समझें कि हमारी पश्चिमी सभ्यता विघटन के पथ पर है, हम इस अध्ययन के अन्त में देखेंगे जब हम अपनी पश्चिमी सभ्यता के भविष्य पर विचार करेंगे। यहाँ पर हमने मार्क्स को और कारणों से उद्धृत किया है। पहला कारण यह है कि हमारे युग में वर्ग संघर्ष का वह क्लासिक व्याख्याकार है और दूसरा यह कि उसका सूत्र परम्परावादी जरथुष्ट्री, यहूदी और ईसाई इल्हामी आदर्शों से मिलता है जो हिंसात्मक पराकाष्ठा के बाद कोमल अन्त का चित्र दिखलाता है।

इस साम्यवादी पैगम्बर की अन्तःप्रज्ञा की सत्रिया का परिणाम ऐतिहासिक भौतिकवाद या नियतत्ववाद है। उसके अनुसार सर्वहारा की क्रान्ति द्वारा वर्ग संघर्ष निश्चित है जिसमें सर्वहारा विजयी होगा। परन्तु संघर्ष का यह रक्तमय परिणाम उसका अन्त भी, क्योंकि सर्वहारा की विजय निश्चित और पूर्ण होगी। और सर्वहारा का अधिनायकवाद जो क्रान्ति के बाद स्थापित होगा स्थायी संस्था नहीं होगा। एक समय आयेगा जब एक नया समाज प्रकट होगा जो जन्म से ही वर्गविहीन होगा और इतना प्रौढ़ और शक्तिशाली होगा कि अधिनायकवाद को हटा दे। अन्तिम और स्थायी आनन्द इस नये मार्क्सी स्वर्णयुग का यों होगा कि सर्वहारा का अधिनायकवाद ही नहीं हट जायगा, किसी भी संस्था का आधार न होगा और राज्य भी नहीं रह जायगा।

इस अध्ययन के सन्दर्भ में मार्क्सी प्रलय विज्ञान का इतना ही सम्बन्ध है कि आश्चर्य की बात है कि एक लुप्त धार्मिक विश्वास की छाया वर्ग-संघर्ष के ठीक राह का चित्र बनाती है या पतित समाज में क्षैतिज भेद की राह का ठीक-ठीक चित्र खींचती है। यह ऐतिहासिक तथ्य है कि पतित समाज यही राह अपनायेगा। इतिहास हमें बताता है कि विघटन की प्रक्रिया युद्ध से शान्ति की ओर है याँग से यिन की ओर। स्पष्टतः मूल्यवान् वस्तुओं का बर्बरतापूर्ण विनाश होता है और उसी विनाश की ज्वाला में से नया सर्जन होता है जिसकी विशेषता उसी अज्ञान के कारण होती है जिसमें वे बने हैं।

भेद स्वय दो नकारात्मक आदोलनो का परिणाम है । दोनो अशिव आवेगो से प्रेरित होते ह । पहले, शक्तिशाली अल्पसख्या उस अधिकार के स्थान को बल से ग्रहण किये रहती, जिसकी उसमें क्षमता नही रह गयी है । तब सवहारा अ याय का उत्तर क्रोध से देता है, भय का घणा से और हिंसा का हिंसा से । परन्तु सारे आदोलन का परिणाम सजनात्मक होता है, साव भौम राज्य सावभौम धमत त्र और बबर योद्धा दल ।

इस प्रकार सामाजिक भेद केवल भेद नही है । सारे आदोलन को हम भेद—और पुनर्जीवन कह सकते हैं । और यह समझकर कि समाज-त्याग एक विशेष ढग से अलग होना है हम भेद और पुनर्जीवन की दोहरी गति को उसी परिस्थिति का एक उदाहरण मानें जिसे हमने 'अलग होने और लौटने' के शीपक में साधारण ढग से पहले अध्ययन किया है ।

एक बात है जिसमें अलग होने और लौटने का यह नवीन रूप उन उदाहरणो से भिन्न है जिनका हमने पहले अध्ययन किया है । क्या वे सजनात्मक सख्या अथवा व्यक्तियो की उपल ब्धियाँ नही थी और समाज त्यागने वाले सवहारा बहुसख्यक हैं जो शक्तिशाली अल्पसख्या के विरोधी ह ? एक क्षण विचार करने के पश्चात् यह जान पडता है, और जो वास्तव में सच्चा चित्र है कि यद्यपि समाज-त्याग बहुसख्या द्वारा होता है, सावभौम धमतन्त्र की स्थापना उन अल्पसख्यक सजनशील दलो या व्यक्तियो की है जो इस बहुसख्या में रहते ह । ऐसी अवस्था में असजनशील बहुसख्या, शक्तिशाली अल्पसख्या और सवहारा से मिलकर बनी होती है । यह भी स्मरण होगा कि हमने बताया था कि विकासो मुख अवस्था में सजनात्मक अल्पसख्या का सजनशील तत्त्व सारी-की सारी अल्पसख्या नही थी, बल्कि उसमें का कोई दल था । दोनो में अ तर यह है विकासकाल में असजनशील बहुसख्या में ऐसी जनता रहती है जिस पर सरलता से प्रभाव पड सकता है और वह नेताओ की राह का अनुकरण करती है विघटन काल में असजन शील बहुसख्या में प्रभा य जनता रहती है (सवहारा के शेष) और कुछ भाग शक्तिशाली अल्प सख्या का जो विपथित व्यक्तियो को छोडकर सगब हठपूवक अलग रहती है ।

१८ सामाजिक जीवन में भेद

(१) शक्तिशाली अल्पसख्यक

शक्तिशाली अल्पसख्यक में भी भिन्नता के तत्त्व हो सकते हैं। इस तथ्य के होते हुए भी लोकाचार की एक निश्चित स्थिरता एव एकरूपता ही इसका विशेष लक्षण है। शक्तिशाली अल्पसख्यक अपने रगरूटो के अनुवर सघभाव को अनुकरीकरण के आश्चयजनक नमूना के रूप में परिवर्तित करने का काय सम्पादन कर सकता है। लगातार इन रगरूटा का शक्तिशाली अल्पसख्यक अपने ह्रासोन्मुख दल में जबरदस्ती भरती करता है। शक्तिशाली अल्पसख्यक इस दल को उस रचनात्मक शक्ति को नियन्त्रित करने में स्वत बाधक नही हो सकता, जा केवल सावभौम राज्य में ही नही, वरन् दाशनिक सम्प्रदायो में भी दिखाई देती है। तदनुसार हम देखते हैं कि यह शक्तिशाली अल्पसख्यक अपने में उन अनेक सदस्या को मिलाने के लिए बाध्य है, जो अदभुत रीति से उस समुदाय के विशिष्ट गुणो से अलग हो जाते हैं जिसके वे सदस्य रहे हैं।

ये विशिष्ट गुण उन सैन्यवादी एव निकृष्ट शोषको के ह जो उनके दल का अनुसरण करते हं। हेलेनी इतिहास से इसका उदाहरण देना अनावश्यक है। हम सिकन्दर में इन सैन्यवादियो का उत्तम रूप तथा 'विरेस' में शोषका का निकृष्ट रूप देखते हैं। इनके मिसिलो के अन्यायी शासन के सम्बन्ध में वास्तविकता का उदघाटन सिसरो की पुस्तिकाओ एव भाषणा के सग्रहो में है। किन्तु, रोमन सावभौम राज्य के अधिक दिना तक टिके रहने का कारण यह था कि उसके सैन्यवादियो तथा शोषका ने, आगस्टी व्यवस्था के पश्चात् असख्य गुमनाम सैनिका तथा उन असैनिक अधिकारिया ने, जिन्हाने अपने पूवजा के कुकृत्यो का प्रायश्चित्त अपने गतिहीन समाज को अनेक पीढिया तक भारतीय ग्रीष्म की तीव्र धूप में तपाकर किया।

इसके अतिरिक्त रोमन कमचारी परायवादी रूप में हेल्नी शक्तिशाली अल्पसख्यक के न तो एक मात्र ही और न आरम्भिक अवतारणा हैं। सेवेरी' युग में स्टोइक सम्राट मारक्स आरीलियस रोमन इतिहास के सवविदित तथ्य ह। जब स्टोइक' जूरी लोग 'स्टोइक आचार का रूपान्तर रोमन विधान में कर रहे थे, रोमन भेडिये को अफलातूनी पहरेदार कुत्ते में रूपान्तरित करना यूनानी दशन का अदभुत काय प्रकट हुआ। यदि रोमन प्रशासक हेल्नी शक्तिशाली अल्पसख्यक की व्यावहारिक कुशलता के परार्थी प्रतिनिधि थे ता यूनानी दाशनिक यूनान के बौद्धिक नेता। यूनानी रचनात्मक दार्शनिका की उस स्वर्णिम शृखला ने जो अफलातून (२०३ ई० ६२ ई०) की पीढी में समाप्त होती है, रोमन सावजनिक सेवा को ध्वस्त होते हुए देखा। यह शृखला सुकरात (४७० ई० पू०–३९९ ई० पू०) से आरम्भ होती है। जब रोमन सभ्यता का पतन हुआ था, तब इसका विकास हुआ। यूनानी दार्शनिक और रोमन प्रशासक के सम्पूण जीवन का प्रयत्न इस पतन के दुखद परिणाम की क्षतिपूर्ति करना या किसी हद तक उसे कम करना था। दार्शनिका के श्रम से प्रशासको के प्रयत्ना की अपेक्षा अधिक मूल्यवान् और टिकाऊ

परिणाम उत्पन्न हुआ । ऐसा इसलिए था कि वे विघटित सामाजिक जीवन के भौतिक ताने बाने के सम्पर्क में नहीं थे । जब रोमन प्रशासकों ने हेलेनी सार्वभौम राज्य का निर्माण किया, तब दार्शनिकों ने अपनी संतति को एकेडमी में शिक्षा प्रदान की और उन्हें अरस्तू ने स्टोआ तथा गार्डेन ऐसी प्रतिभाएँ दी । अपनी भावी पीढ़ी को दार्शनिकों ने 'सनिकों की स्वतन्त्रता के प्रशस्त मार्ग और अफलातून के नये अनुयायियों को 'हार्दिक इच्छाओं की अलौकिक धरती' प्रदान की ।

यदि हम अन्य पतनोन्मुखी सभ्यताओं के इतिहासों का सर्वेक्षण करें, तो हम परमार्थवाद की उच्च भावना को शोषकों एवं सत्यवादियों की निकृष्ट तथा भयानक भावना के समानान्तर पायेंगे । उदाहरणार्थ, जिन्होंने हैन राज्यवंश के अन्तर्गत चीनी सार्वभौम राज्य में शासन (२०२ ई० पू०–२२१ ई०) किया था, उन कन्फूशियस के अनुयायियों में वह सेवा का भाव एवं संघभाव था, जिसे उन्हें रोमन असैनिक अधिकारियों के साथ एक ही नैतिक स्तर पर ला दिया था । ये रोमन असैनिक अधिकारी कन्फूशियस के अनुयायियों के समकालीन तथा उनकी क्रियाशीलता के पूर्वार्ध में संसार की दूसरी ओर थे । पीटर महान् के शासन से लेकर दो शतियों तक चिनोवनिकों (रूस में नौकरशाही के प्रतीक उच्च अधिकारियों) ने परम्परावादी ईसाई सार्वभौम राज्य का प्रशासन किया और अपनी अयोग्यता तथा भ्रष्टाचार के कारण अपने घर के साथ ही साथ पश्चिम के देशों में कुख्यात हुए । वे स्वयं इस बदनामी से इतने निन्द्य रूप से मुक्त न हो सके जितनी बदनामी ..... कल्पना बहुधा इस महान् दोहरे कार्य के करने में की जाती थी । यह दोहरा कार्य गतिशील रूसी साम्राज्य का पोषण करना तथा उसी समय पश्चिमी नमूने की नयी नीति में उसे रूपान्तरित करना था । परम्परावादी ईसाई साम्राज्य के मुख्य भाग में उसमानिया बादशाह के गुलाम परिवार को एक ऐसी संस्था के रूप में कदाचित् याद किया जायगा जिसने कम-से-कम एक प्रमुख सेवा रूढ़िवादी समाज के लिए की है । यह परम्परा वाली ईसाई साम्राज्य इसी तरह अपनी रियाया का शोषण करने के लिए बदनाम हुआ था । दो युगों की अराजकता के बीच स्वतः पीड़ित संसार में उसमानिया शांति लाकर इन दासों ने समाज की सेवा की । जापान के सुदूर पूर्वी समाज में सामन्तों और उनके 'समुराई' दासों ने समाज को शिकार बनाया । टोकुगावा शोगुनेट साम्राज्य की स्थापना के आरम्भ से चार शतियों तक एक-दूसरे का शिकार करने में बिताया । सामन्तवादी निरंकुशता को सामन्तवादी व्यवस्था में परिणत करने के आइयासु के सर्जनात्मक कार्य में हाथ बटाकर उन्होंने अपना अतीत पुनर्जीवित किया । जापानी इतिहास के नये अध्याय के आरम्भ में वे आत्मसंयम की दिव्य पराकाष्ठा पर पहुँचे । उन्होंने स्वतः अपनी सुविधाओं को तिलांजलि दे दी क्योंकि उन्हें विश्वास हो गया था कि उनसे इस त्याग की कामना की जाती है । वह जापान को उस पश्चिमी संसार में अपनी धाक जमाने के योग्य बनाने में समय कर रहे थे जिससे वह स्वयं को अलग नहीं रख सकता था ।

स्वभाव की सज्जनता एक गुण है जो जापानी समुराई में दिखाई देता है । यह गुण मनुष्यों द्वारा भी दो अन्य शासक अल्पसंख्यक पर आरोपित किया जाता है । ये दो शासक अल्पसंख्यक हैं,—एंडियन सार्वभौम राज्य के 'इनका' तथा वे पारसी अभिजात लोग जिन्होंने सीरिया के सार्वभौम राज्य पर शासन एकेमेनिआ के राजाओं के राजा के उपशासकों के रूप में किया था ।

स्पेनी मैक्सीको विजेताओ ने भी इनका के इन गुणा का अनुमोदन किया । यूनानियो द्वारा चित्रित फारसियो के इस चित्र में हिरोडोटस ने फारसी बाल शिक्षा का सार दिया है—'वे ५ वप की अवस्था से २० वप की अवस्था तक के लोगो को तीन काय करने का—केवल तीन काय करने का प्रशिक्षण करते है । ये तीन काय थे—घुडसवारी, चादमारी तथा सत्य बोलना । इस फारसी बालशिक्षा का रूप वैसा ही है जैसा हिरोडोटस ने फारसी बालको का उनकी युवा वस्था का बताया है । फारस के राजा जरक्सीज के अनुयायियो के सम्बध में हिरोडोटस की एक कहानी है । इसमें समुद्र में तूफान आने पर सृष्टि के स्वामी की प्राथना करना तथा जहाज को हल्का करन के लिए सागर में कूद पडना, दिया है । किन्तु सिकन्दर फारसी गुणो का सबसे प्रभावशाली प्रमाण है । परिचित हो जाने के बाद वह फारसी लोगा के सम्बध में कितने उच्च विचार रखता था, इसका प्रदशन उसने अपनी गम्भीर करनी से किया न कि हल्की कथनी से । फारसिया की घोर विनाशकारी प्रतिक्रिया की परीक्षा को ज्यो ही उसने जान लिया, त्या ही उसने निर्णय किया, जिस निणय ने मकदूनिया के लोगा को ही असन्तुष्ट नही किया, वरन् उनकी भावना को भी उत्तेजित किया । यद्यपि जान-बूझकर उसने ऐसा नही किया । अपने उस साम्राज्य की सरकार में फारसियो को साझीदार बनाने का निश्चय कर चुका था जिसे मकदूनिया वासियो के शौय ने फारसियो से छीना था । उसने अपनी इस नीति को पूण रूप से कार्यान्वित किया । उसके एक फारसी दरबारी की लडकी से शादी की । वह मकदूनी अधिकारिया को अपना अनुयायी बनाने के लिए या तो घूस देता था या धमकाता था । वह अपने मकदूनी रेजिमेंट में फारसिया को जबरदस्ती भरती करता था । एसे लोगो मे जो अपन पैतृक शत्रुआ के नता से सम्मानित होते ह अपनी पूण पराजय के समय भी 'शासक जाति' के प्रतिष्ठित गुण अवश्य स्पष्ट रूप मे रहते ह ।

शक्तिशाली अल्पसख्यक के प्रशसनीय शासक वग को उत्पन्न करने की क्षमता के सम्बध में हमने अधिक से-अधिक प्रमाण देने की व्यवस्था की है । ये प्रमाण उन अनेक सावभौम राज्या से लिये गये ह, जिनका निर्माण उन्होने किया है । बीस पतित सभ्यताओ में से कम-स-कम पद्रह इस अवस्था से होकर विनाश की ओर जाने वाले माग पर गयी ह । निम्नलिखित राज्या में हम इस सत्य का मिलान कर सकते है । रोमन राज्य में हेलेनी सावभौम राज्य, इनका साम्राज्य म एडियन, चीनी राज्य में हैन तथा तिसन वश, 'मिनोस के सागर राज्य' में मिनोई, सुमर तथा अक्काद साम्राज्य मे सुमेरी नेबुकाडनजार के नवीन बबिलोनी साम्राज्य में बबि लोनिया, माया के प्राचीन साम्राज्य में माया ११ वें तथा १२ वें राजवश के मध्य साम्राज्य' में मिस्री राज्य एकेमेनियाई साम्राज्य में सीरियाई राज्य, मौय साम्राज्य में भारतीय, मुगल महान् के साम्राज्य में हिंदू, मस्कोवी साम्राज्य में परम्परावादी रूसी राज्य उसमानिया साम्राज्य में परम्परावादी ईसाई का सावभौम राज्य और सुदूर पूर्वी समार में चीन में मगोल साम्राज्य और जापान में टोकुगावा शोगुनट ।

राजनीतिक क्षमता केवल एक सजनात्मक शक्ति ही नही है जो शक्तिशाली अल्पसख्यका का सामान्य गुण है । हम पहले ही देख चुके है कि हेलनी शक्तिशाली अल्पसख्यका ने केवल रोमन प्रशासन की ही उत्पत्ति नही की, वरन् यूनानी दशन की भी सृष्टि की । हम तीन और एसे उदाहरण पा सकते ह जिनमें शक्तिशाली अल्पसख्यक ने ही दशन की उत्पत्ति की ।

में जो विभिन्न शाखाएँ आयी, वे बुद्ध से प्रभावित होने के बाद के हिन्दू धर्म के विचारों का अंग थीं। चीनी सभ्यता के प्रभावशाली अल्पसंख्यकों ने कन्फूशियस के नीतिसंगत कर्मकाण्ड वाद तथा कर्मकाण्डी नैतिकता और टाओ के विरोधाभासी उस ज्ञान को जन्म दिया जो लाओत्से की पौराणिक प्रतिभा द्वारा आरोपित किया गया था।

(२) आन्तरिक सर्वहारा

हेलेनी आदिरूप

जब हम प्रभावशाली अल्पसंख्यक से सर्वहारा की ओर अग्रसर होते हैं, तब तथ्यों के सूक्ष्म परीक्षण से हमारी धारणा दृढ़ होती है कि विघटित समाज के उन खण्डों में से प्रत्येक में रूप की विभिन्नता है। इस आध्यात्मिकता के क्षेत्र में बाहरी सर्वहारा एवं आन्तरिक सर्वहारा को हम दो विरोधी छोरों पर पाते हैं। आन्तरिक सर्वहारा की व्याप्ति बहुत अधिक विस्तृत है, जब कि बाहरी सर्वहारा की व्याप्ति उस प्रभावशाली अल्पसंख्यक वर्ग से संकीर्ण है। विस्तृत क्षेत्र का हमें पहले सर्वेक्षण करना चाहिए।

यदि हम यूनानी आन्तरिक सर्वहारा की उत्पत्ति आरम्भिक भ्रूण अवस्था से जानने की इच्छा करें तो हमारे लिए थुसीडाइडस के एक अवतरण को उद्धृत करने से उत्तम और कुछ नहीं हो सकता। इस अवतारणा में हेलेनी समाज के पतन का दिग्दर्शन कराने वाले इतिहासकार ने अनुवर्ती सामाजिक भेद का वर्णन उसके आरम्भिक रूप में किया है, जैसा कि कोरसाइरा में यह सर्वप्रथम दिखाई दिया।

'कोरसाइरा के वर्ग-युद्ध' (स्थतिकला) की बर्बरता ऐसी थी कि जब वह विकसित हुई तब उसने अपने ढंग का गहरा प्रभाव उत्पन्न किया। अन्त में यह उथल पुथल सम्पूर्ण यूनानी संसार में करीब करीब फैल गयी। प्रत्येक देश में सर्वहारा के उन नेताओं और उनके उन प्रतिक्रियावादियों में संघर्ष था जिन्होंने एथेन्स तथा लेसीडेमानिया के लोगों में हस्तक्षेप के लिए प्रयत्न किया था। शान्ति के समय उनके पास विदेशियों को बुलाने का न तो अवसर था और न उनकी इच्छा थी। किन्तु जब युद्ध हुआ, तब दोनों दलों के किसी भी क्रान्तिकारी आत्मबल वाले को किसी भी विदेशी से अपने दल के बलवर्धन तथा अपने विरोधियों को पराजित करने के लिए सहायता प्राप्त करना आसान हो गया। वर्ग-युद्ध की अभिवृद्धि एक के बाद दूसरी विपत्ति यूनानी देशों में लाती रही। ये विपत्तियाँ तब तक आती रहीं, जब तक मानव स्वभाव में परिवर्तन नहीं हुआ यद्यपि ये विपत्तियाँ बढ़ायी या घटायी जा सकती हैं या लगातार परिवर्तित परिस्थितियों से इन्हें सुधारा जा सकता है। शान्ति के समय की अनुकूल दशा में देश तथा व्यक्ति दोनों मधुर औचित्य प्रदर्शित करते हैं, क्योंकि ये घटनाओं से उत्पन्न तर्कों से प्रभावित नहीं होते। किन्तु युद्ध सम्पूर्ण जीवन का धीरे धीरे क्षय कर देता है तथा अधिकांश लोग अपने स्वभाव को युद्ध के क्रूर प्रशिक्षण के भये पर्यावरण से नियन्त्रित करते हैं। अतएव यूनान के देश वर्ग-युद्ध की छूत से ग्रसित हुए। एक के बाद एक वर्ग-युद्ध से उत्पन्न संवेदना अपना पूंजीभूत प्रभाव दूसरे पर छोड़ती गयी।[1]

1 थुसीडाइडस की पुस्तक, तृतीय परिच्छेद ८२।

नागरिकों में से यहा तक कि कुलीनवर्गीय लोगा में से भी भरती किये गये । इन पहले रगरूटा से सवप्रथम आध्यात्मिक जन्मसिद्ध अधिकार छीनकर इन्हें उत्तराधिकार से वचित कर दिया गया । किन्तु, निश्चित रूप से इनकी आध्यात्मिक विपन्नता ने भौतिक धरातल पर आर्थिक मुहताजा का बहुधा साथ दिया । यह आर्थिक मुहताजी करीब करीब सदव आध्यात्मिक विपन्नता के बाद आयी । दूसरे वर्गों से रगरूटो को भरती करके शीघ्र ही सवहारा का बल-वधन किया गया । ये दूसरे वग के रगरूट आरम्भ से ही जसे आध्यात्मिक थे वैसे ही भौतिक सवहारा में थे ।

मकदूनिया के विजय प्रयाणो ने हेलेनी आन्तरिक सवहारा की सख्या बहुत अधिक बढ़ा दी। इन युद्धा ने सम्पूण सीरिया मिस्र तथा बैबीलोनिया के जन समूहा को यूनानी शक्तिशाली अल्प सख्यका के जाल में फँसा दिया जब कि राम की बाद की विजया ने यूरोप तथा उत्तरी अफ्रीका के आधे जगली लोगा को समाप्त कर दिया ।

हेलेनी सवहारा की बलवद्धि में अपनी इच्छा के विरुद्ध आये । विदेशी आरम्भ में कदाचित यूनान के वास्तविक निवासी सवहारा से एक दृष्टि में अधिक भाग्यशाली थे । यद्यपि वे नतिक दृष्टि स उत्तराधिकार से वचित किये गये और भौतिक दष्टि से लूट लिये गये, फिर भी शारीरिक दष्टि से निमूल नही किय गये । किन्तु विजेताओं के बाद दासा का व्यापार आरम्भ हुआ और ईसा पूव की दो शताब्दियो तक भूमध्यसागरी तटा के क्षेत्र की जनसख्या इटली के दासा के बाजार की अतप्त माग की पूर्ति के लिए थी । इस जनसख्या में पश्चिमी असभ्य तथा पूर्वी सभ्य दोनों प्रकार के लोग थे ।

अब हम देखते हैं कि यूनानी विघटित समाज का आन्तरिक सवहारा तीन विभिन्न तत्त्वा से बना है । ये तत्त्व हैं —(१) समाज के सदस्य जो उत्तराधिकार से वचित तथा सामाजिक जीवन स उन्मूलित ह, (२) विदेशी सम्यताओं के उत्तराधिकार स आंशिक रूप में वचित तथा उस आदिम समाज के सदस्य जो बिना निमूल किये पराजित और शासित किये गये थे (३) दोहरे उत्तराधिकार से वचित तथा बाध्य होकर उस प्रजावग म बने सनिक जिनको केवल उन्मूलन ही नही किया, वरन् जिन्हें दास बनाया गया और मत्यु तक काय करने के लिए सुदूर उपनिवेशो को निर्वासित किया गया । इन तीनो प्रकारा के विपदग्रस्त दलों की यातना वैसी ही भिन्न भिन्न थी, जैसी उनकी उत्पत्ति भिन्न भिन्न थी, किन्तु सामाजिक उत्तराधिकार से वचित होने के अत्यन्त साधारण अनुभव एव शोषण से समाज बहिष्करण द्वारा ये भिन्नताएँ सीमा स अधिक हो गयी था ।

जब हम परीक्षण करते ह कि इन अन्याय के शिकार हुए लोगो की प्रतिक्रिया अपने भाग्य के साथ कैसी होती है तब हमें आश्चय नहीं होता कि उनकी प्रतिक्रियाओं में स एक अपनी बबरता का उद्घाटन है । यह बबरता हिंसा में अपने शोषक एव अत्याचारियों की निमम निष्ठुरता को भी मात दे देती है । निराश सवहारा के उपद्रव के कोलाहल में आक्षेप के स्वर की एकरूपता गूजती है । हम इस गूज को निरन्तर क्रम में मिस्र के मसीडोनी राजाओं के शासन के विरुद्ध की जनता के विद्रोह में तथा जूडास मकाबियस १६६ ई० पू० के उत्थान से लेकर बार कोखाबा (१३२ ई० पू० ३५ ई०) के नेतत्व की परित्यक्त आशा तक में सुनते हैं । यही आक्षेप का स्वर पश्चिमी एशिया माइनर के अद्ध यूनानी तथा अत्यन्त सभ्य लोगों में दो बार

अटालिड अरिस्टोनिकस (१३२ ई० पू०) तथा पोन्टस के राजा मिथ्राडेटिस (८८ ई० पू०) के नेतृत्व में रोम के बदला लेने वाला पर प्रचण्ड क्रोध प्रदर्शित करने की प्रेरणा में था। सिसिली और दक्षिणी इटली में भी दास विद्रोह की एक शृखला है। यह विद्रोह थ्रेस (यूनान का प्राचीन नगर) के पेशेवर फरार सनिक एव दासा के विद्रोही नेता स्पाटक्स् के उग्र कार्यों में चरम सीमा पर था। स्पाटक्स ने सम्पूण इटली प्रायद्वीप में सवत्र इस विद्रोह का सगठन किया और रोम के भेडिये को उसके माँद में ही ललकारा (७३ ई० पू० से ७१ ई० पू० तक)।

इन विद्रोहो की उग्रता सवहारा के केवल विद्रोही तत्वो में ही नही थी। गह-युद्ध में रोम के नागरिक सवहारा ने बबरता द्वारा रोम के धनिकतन्त्र को बदल दिया और उस पर अधिकार कर लिया। विशेष रूप से यह बबरता ९१ ई० पू०—८२ ई० पू० के आवेग में थी। यह बबरता जुडास मैकेबियस या स्पाटक्स की बबरता के समान ही थी। रोम के क्रान्तिकारी नेता—सारटो रियस्, सेक्सटस्, पाम्पियस् मरियस और कटेलाइन—जो अपने भाग्य चक्र के कुछ असाधारण परिवतनो के द्वारा स्वत मुह के बल सिनेट के बाहर गिरे, सबसे अधिक शतान थे। इन शैतानो की काली आकृति की अशुभ प्रतिच्छाया ससार को आक्रान्त करने वाली विद्रोह की ज्वाला से निर्मित हुई थी।

हेलेनी आन्तरिक सवहारा की प्रतिक्रिया केवल आत्महत्यात्मक हिंसा ही नही थी। प्रतिक्रिया की एक दूसरी प्रणाली पूण रूप से थी, जिसकी उच्च अभिव्यक्ति ईसाई धम में पायी गयी। दल से अलग होने की इच्छा की स्वाभाविक अभिव्यक्ति वैसी ही उदार एव अहिंसक प्रतिक्रिया है जैसी हिंसात्मक प्रतिक्रियाएँ।

उच्च कुलोत्पन्न शहीद यहूदियो के फरीसी सम्प्रदाय के आदि गुरु थे, और फरीसी[1] वे ह, जो स्वय को अलग रखते हैं। इसी से ये 'विच्छेदवादी' कहलाते ह। यह उपाधि उन्होने स्वय धारण कर ली है। फरीसी रोमी भाषा की व्युत्पत्ति के अनुसार 'सेसेशनिस्ट (विच्छेदवादी) का रूपान्तर है। इन उच्च कुलोत्पन्न शहीदा को मकाबियो की द्वितीय पुस्तक में वद्ध धर्मलिपिक एलीजर और सात भाई तथा उनकी माँ के रूप में स्मरण किया गया है। ईसा पूव द्वितीय शती के बाद से हेलेनी ससार क पूर्वी आन्तरिक सवहारा के इतिहास में हम हिंसा तथा सौम्यता को आत्मा के उत्कष के लिए भगीरथ प्रयत्न करते हुए तब तक देखते ह जब तक हिंसा स्वय अपना नाश नही कर लेती और सौम्यता का क्षेत्र में अकेला ही नहा छोड देती।

आरम्भ में यह बात उठी। सभ्यता का वह माग जो आदि शहीदा के द्वारा १६७ ई० पू० में अपनाया गया था, हिंसक जुडास (ईसा के १२ शिष्या में स एक जिस हिंसक हाने के कारण नरक मिला।) द्वारा शीघ्र छोड दिया गया। इस सवहारा की 'जिसकी लाठी उसकी भस' वाली भौतिक सफलता ने भावी पीढी को इतना चकाचौंध कर दिया, यद्यपि यह भौतिक सफलता चाकचिक्यपूण होने हुए भी क्षणभगुर थी कि ईसा के सवप्रिय साथी भी अपने गुरु की नियति सम्बन्धी भविष्यवाणिया पर बदनाम किये गये। जब ये भविष्यवाणियाँ सत्य होती थीं तब वे प्रणम्य होते थे। तिस पर भी ईसा के बलिदान के कुछ ही महीने बाद गैमेलिएल (सन्तपाल का

१ कट्टर यहूदी।—अनु०

यहूदी उपदेशक) ने ईसा के चमत्कारिक रूप से एकत्र शिष्यों को ऐसे मनुष्यों की भांति देखा जो सिद्ध कर सकते थे कि ईश्वर उनकी ओर है। कुछ साल बाद गैमेलिएल के शिष्य पाल ईसा की भांति उपदेश दे रहे थे।

ईसा की प्रथम पीढ़ी में हिंसा के मार्ग से शान्ति के मार्ग को परिवर्तन हुआ। यह परिवर्तन भौतिक आशाओं को आघात से छिन्न भिन्न करने के मूल्य पर खरीदा गया। ईसा को सूली पर लटका कर ईसा के अनुयायियों के साथ वैसा ही किया गया जैसा ७० ई० में जेरुसलम को नष्ट कर परम्परावादी यहूदियों के साथ हुआ। 'जुडाइज़्म' (यहूदियत) के नये सम्प्रदाय का उदय हुआ। इस सम्प्रदाय ने यह धारणा त्याग दी कि वस्तुओं की बाह्य अवस्था ही ईश्वर का राज्य है जो शीघ्र ही प्रकट किया जाने वाला है।[1]

वे ईश्वर ज्ञान सम्बन्धी लेख पैगम्बरों तथा धार्मिक कानून के सामान्य नियमों से अलग कर दिये गये, जिनमें यहूदियों के हिंसात्मक तरीके की साहित्यिक अभिव्यक्ति पायी जाती थी। डनियल की विशिष्ट पुस्तक ही केवल इसका अपवाद है। इसके विपरीत मानवीय हाथों से इस संसार में ईश्वरीय इच्छा के पूर्ण करने की धारणा के विकास के सभी प्रयत्नों से स्वयं को अलग रखने का सिद्धान्त यहूदियों की परम्परा में इतने शीघ्र घुल मिल गये कि कट्टर अंधविश्वासी अगुडाथ इसरायल ने यहूदीवादी आन्दोलन को सन्देहास्पद दृष्टि से देखा और बीसवीं शती के फिलस्तीन के यहूदियों ने राष्ट्रभूमि के निर्माण कार्य से स्वयं को एकदम अलग रखा।

यदि अंधविश्वासी यहूदियों का हृदय-परिवर्तन परम्परावाद के रूप में उन्हें जीवित रखने में समर्थ हुआ तो इसी के साथ ही ईसा के साथियों के हृदय परिवर्तन ने ईसाई धर्मतन्त्र की विजय के लिए मार्ग प्रशस्त किया। ईसा को सूली पर चढ़ाना ईसाई धर्मतन्त्र को चुनौती की प्रतिक्रिया इलीजर तथा सात भाइयों की सौम्य पद्धति में व्यक्त हुई। इसका पुरस्कार हेलेनी शक्तिशाली अल्पसंख्यक के परिवर्तन तथा इसके बाद बाह्य सर्वहारा के जंगली तथा लड़ाकू दलों के परिवर्तन के रूप में मिला।

प्रथम शती के अपने विकास में ईसाइयत का प्रत्यक्ष विरोधी हेलेनी समाज का आदिम धर्म अपने नवीनतम छद्मवेष में था। धर्म का यह छद्मवेष डाइवस सीजर के व्यक्तित्व में हेलेनी सार्वभौम राज्य की मूर्तिपूजा में था। अपने सदस्यों को मूर्तिपूजा की अनुमति देने से धर्मतन्त्र का इनकार करना भद्र होते हुए भी दुराग्रही था। यद्यपि यह केवल दिखावटी और रिवाजी तरीका था जिससे राजकीय दण्ड की शृंखला आरम्भ हुई। अन्त में रोम की साम्राज्य सरकार को उस आध्यात्मिक शक्ति के समक्ष आत्मसमर्पण करने के लिए बाध्य किया गया जो सरकार को बाध्य करने में स्वयं समर्थ नहीं थी। किन्तु यद्यपि साम्राज्य का आदि राजधर्म सरकार के सभी अधिकारियों की सम्पूर्ण शक्ति से बनाये रखा गया, फिर भी मानव हृदय पर उसका प्रभाव नहीं के बराबर था। राजधर्म के प्रति पारम्परिक सम्मान प्रारम्भ और अन्त में था। इस सम्मान को रोम के मजिस्ट्रेट ईसाइयों को धार्मिक पूजा के कृत्यों का प्रदर्शित कर दिखाने की आज्ञा देते थे। इसमें उन पर ईसाइयों के लिए इससे कुछ और अधिक नहीं था कि उनमें जो

1 बर्कीट, एफ० सी० जेविस एण्ड क्रिसियन एपोकालिप्सेस, पृष्ठ १२।

अटालिड अरिस्टोनिक्स (१३२ ई० पू०) तथा पोंटस के राजा मिथ्राडेटिस (८८ ई० पू०) के नेतृत्व में रोम के बदला लेने वाला पर प्रचण्ड क्रोध प्रदर्शित करने की प्रेरणा में था। सिसिली और दक्षिणी इटली में भी दास विद्रोह की एक शृंखला है। यह विद्रोह थ्रेस (यूनान का प्राचीन नगर) के पेशेवर फरार सनिक एव दासो के विद्रोही नेता स्पाटकस् के उग्र कार्यों में चरम सीमा पर था। स्पाटक्स ने सम्पूण इटली प्रायद्वीप में सवत्र इस विद्रोह का सगठन किया और रोम के भेडिये को उसके माँद में ही ललकारा (७३ ई० पू० से ७१ ई० पू० तक)।

इन विद्रोहा की उग्रता सवहारा के केवल विद्रोही तत्त्वा में ही नही थी। गृह-युद्ध में रोम के नागरिक सवहारा ने बबरता द्वारा रोम के धनिकतन्त्र को बदल दिया और उस पर अधिकार कर लिया। विशेष रूप से यह बबरता ९१ ई० पू०—८२ ई० पू० के आवेग में थी। यह बबरता जुडास मैकेबियस या स्पाटक्स की बबरता के समान ही थी। रोम के क्रान्तिकारी नेता–सारटो रियस् सेक्मटस् पाम्पियस् मैरियस और कैटेलाइन—जो अपने भाग्य चक्र के कुछ असाधारण परिवतनो के द्वारा स्वत मुह के वल सिनेट के बाहर गिरे, सबसे अधिक शतान थे। इन शैतानो की काली आकृति की अशुभ प्रतिच्छाया ससार को आक्रान्त करने वाली विद्रोह की ज्वाला से निर्मित हुई थी।

हेलेनी आन्तरिक सवहारा की प्रतिक्रिया केवल आत्महत्यात्मक हिंसा ही नही थी। प्रतिक्रिया की एक दूसरी प्रणाली पूण रूप से थी, जिसकी उच्च अभिव्यक्ति ईसाई धम में पायी गयी। दल से अलग होने की इच्छा की स्वाभाविक अभिव्यक्ति वसी ही उदार एव अहिंसक प्रतिक्रिया है जैसी हिंसात्मक प्रतिक्रियाएँ।

उच्च कुलोत्पन्न शहीद यहूदिया के फरीसी सम्प्रदाय के आदि गुरु थे, और फरीसी[1] वे ह, जो स्वय को अलग रखते हैं। इसी से ये विच्छेदवादी' कहलाते हैं। यह उपाधि उन्होंने स्वय धारण कर ली है। फरीसी रोमी भाषा की व्युत्पत्ति के अनुसार 'सेसेशनिस्ट' (विच्छेदवादी) का रूपान्तर है। इन उच्च कुलोत्पन्न शहीदा को मकाबियो की द्वितीय पुस्तक में वद्ध धर्मलिपिक एलीजर और सात भाई तथा उनकी माँ के रूप में स्मरण किया गया है। ईसा पूव द्वितीय शती के बाद से हेलेनी ससार के पूर्वी आन्तरिक सवहारा के इतिहास में हम हिंसा तथा सौम्यता को आत्मा के उत्कर्ष के लिए भगीरथ प्रयत्न करते हुए तब तक देखते ह जब तक हिंसा स्वय अपना नाश नही कर लेती और सौम्यता को क्षेत्र में अकेला ही नही छोड देती।

आरम्भ में यह बात उठी। सभ्यता का वह माग जो आदि शहीदा के द्वारा १६७ ई० पू० में अपनाया गया था, हिंसक जुडास (ईसा के १२ शिष्यो में स एक जिसे हिंसक होने के कारण नरक मिला।) द्वारा शीघ्र छोड दिया गया। इस सवहारा की जिसकी लाठी उसकी भैंस वाली भौतिक सफलता ने भावी पीढी को इतना चकाचौंध कर दिया यद्यपि यह भौतिक सफलता चाकचिक्यपूर्ण होते हुए भी क्षणभगुर थी कि ईसा के सवप्रिय साथी भी अपने गुरु की नियति सम्बन्धी भविष्यवाणियो पर बदनाम किये गये। जब ये भविष्यवाणियाँ सत्य होनी थी, तब वे प्रणम्य होने ये। जिस पर भी ईसा के बलिदान के कुछ ही महाने बाद गैमेलिएल (शन्तपाल का

[1] कट्टर यहूदी।—अनु०

यहूदी उपदेशक) ने ईसा के चमत्कारिक रूप से एकत्र शिष्यो को ऐसे मनुष्यो की भांति देखा जो सिद्ध कर सकते थे कि ईश्वर उनकी ओर है। कुछ साल बाद गैमेलिएल के शिष्य पाल ईसा की भांति उपदेश दे रहे थे।

ईसा की प्रथम पीढी में हिंसा के मार्ग से शान्ति के मार्ग को परिवर्तन हुआ। यह परिवर्तन भौतिक आशाओ को आघात से छिन्न भिन्न करने के मूल्य पर खरीदा गया। ईसा को सूली पर लटका कर ईसा के अनुयायियो के साथ वैसा ही किया गया जैसा ७० ई० में जेरूसलम को नष्ट कर परम्परावादी यहूदियो के साथ हुआ। 'जुडाइजम' (यहूदियत) के नये सम्प्रदाय का उदय हुआ। इस सम्प्रदाय ने यह धारणा त्याग दी कि वस्तुओ की बाह्य अवस्था ही ईश्वर का राज्य है जो शीघ्र ही प्रकट किया जाने वाला है।[1]

वे ईश्वर ज्ञान सम्बन्धी लेख पैगम्बरो तथा धार्मिक कानून के सामान्य नियमो से अलग कर दिये गये, जिनमें यहूदियो के हिंसात्मक तरीके की साहित्यिक अभिव्यक्ति पायी जाती थी। डेनियल की विशिष्ट पुस्तक ही केवल इसका अपवाद है। इसके विपरीत मानवीय हाथो से इस ससार में ईश्वरीय इच्छा के पूर्ण करने की धारणा के विकास के सभी प्रयत्नो से स्वय को अलग रखने का सिद्धान्त यहूदियो की परम्परा में इतने शीघ्र घुल मिल गये कि कट्टर अंधविश्वासी अगुडाथ इसरायल ने यहूदावादी आन्दोलन को सन्देहास्पद दृष्टि से देखा और बीसवी शती के फिलस्तीन के यहूदियो ने राष्ट्रभूमि के निर्माण कार्य से स्वय को एकदम अलग रखा।

यदि अंधविश्वासी यहूदियो का हृदय-परिवर्तन परम्परावाद के रूप में उन्हें जीवित रखने में समर्थ हुआ तो इसी के साथ ही ईसा के साथियो के हृदय परिवर्तन ने ईसाई धर्मतन्त्र की विजय के लिए मार्ग प्रशस्त किया। ईसा को सूली पर चढाना ईसाई धर्मतन्त्र को चुनौती की प्रतिक्रिया इलीजर तथा सात भाइयो की सौम्य पद्धति में व्यक्त हुई। इसका पुरस्कार हेलेनी शक्तिशाली अलेक्जेण्डर के परिवर्तन तथा इसके बाद बाह्य सर्वहारा के जगली तथा लडाकू दलो के परिवर्तन के रूप में मिला।

प्रथम शती के अपने विकास में ईसाइयत का प्रत्यक्ष विरोधी हेलेनी समाज का आदिम धर्म अपने नवीनतम छद्मवेष में था। धर्म का यह छद्मवेष डाइवस सीजर के व्यक्तित्व में हेलेनी सार्वभौम राज्य की मूर्तिपूजा में था। अपने सदस्यो को मूर्तिपूजा की अनुमति देने से धर्मतन्त्र का इनकार करना भद्र होते हुए भी दुराग्रही था। यद्यपि यह केवल दिखावटी और रिवाजी तरीका था जिससे राजकीय दण्ड की शृंखला आरम्भ हुई। अन्त में रोम की साम्राज्य-सरकार को उस आध्यात्मिक शक्ति के समक्ष आत्मसमर्पण करने के लिए बाध्य किया गया जो सरकार को बाध्य करने में स्वय समर्थ नही थी। किन्तु, यद्यपि साम्राज्य का आदि राजधर्म सरकार के सभी अधिकारियो की सम्पूर्ण शक्ति से बनाये रखा गया, फिर भी मानव हृदय पर उसका प्रभाव नही के बराबर था। राजधर्म के प्रति पारम्परिक सम्मान प्रारम्भ और अन्त में था। इस सम्मान को रोम के मजिस्ट्रेट ईसाइयो को धार्मिक पूजा व कृत्या का प्रदर्शन कर दिखाने की आज्ञा देते थे। इसमें उन पर ईसाइयो के लिए इससे कुछ और अधिक नहीं था कि उनका ज्ञा

१ बर्नार्ड, एफ० सी० जेविश एण्ड क्रिश्चियन एपोकालिप्सिस, पृष्ठ १२।

कुछ कहा जाय वे वही करें। वे नही समझते थे कि ईसाई मामूली रीति रिवाज के अनुसार काय करने की अपेक्षा आत्मबलिदान पर क्या जोर देते है। ईसाई धर्म के प्रतिद्वन्द्वी जो स्वय शक्तिशाली थे, न तो राज पूजा थे और न तो धर्म का कोई आदि रूप ही थे। एक प्रकार का—'उच्चतर धर्म' था जिसका उदय हेलेनी आन्तरिक सर्वहारा से ईसाई मत की भाँति हुआ था। ईसाई धर्म का यह प्रतिद्वन्द्वी स्वय स्थानीय आक्रमण के कारण शक्तिशाली था तथा उसे राजनीतिक बाध्यता के समर्थन की आवश्यकता न थी।

विभिन्न सूत्रों को स्वय स्मरण कर हम इन प्रतिद्वन्द्वी 'उच्चतर धर्मों' की कल्पना कर सकते है जिनसे हेलेनी आन्तरिक सर्वहारा के पूर्वी सम्प्रदाय की उत्पत्ति हुई। ईसाई धर्म सीरियाई जनता के पूवजो से आया। सीरियाई ससार के आधे ईरानियो ने मिथ्रावाद को योगदान किया। आधे उत्तरी मिस्र की दरिद्रता में डूबने से आइसिस की पूजा का प्रादुर्भाव हुआ। इनातोल के 'ग्रेट मदर साइबिला' की पूजा सम्भवत उस हिताइती समाज के योगदान से आयी हुई समझी जा सकती है, जो धर्म को छोड़कर समाज के प्रत्यक्ष धरातल से बहुत पहले ही समाप्त हो चुकी थी।

यदि हम स्वय 'ग्रेट मदर' की मूल उत्पत्ति का पता लगाना आरम्भ करें, तब इसे अपने मूल रूप में इशतार नाम से सुमेरी ससार में सुपरिचित पायगे।—एनातोलिया म पसिनस में 'साइबिली' के रूप में स्थापित करने के पहले या हिरापोलिस में डा साइरा' की भाँति अथवा उत्तरी सागर या बाल्टिक सागर के पवित्र द्वीप के कुञ्ज में टयूटोनी पापी पुजारियो की धरती माता की भाँति—यह ग्रेट मदर—पायी जाती है।

मिनोई काल की रिक्तता तथा कुछ हिताइत अवशेष

जब हम अन्य विघटित समाजो में आन्तरिक सर्वहारा के इतिहासो को खोजते है तब हमको स्वीकार करना पडता है कि कुछ स्थितियो म अल्प प्रमाण मिलते है या एकदम नही मिलते। उदाहरणार्थ, हम माया समाज के सर्वहारा के सम्बन्ध म कुछ भी नही जानते। मिनोई समाज के मामले म कुछ वस्तुओ के अवशेष की, जो ऐतिहासिक ओरफिक धर्मतन्त्र के विजातीय तत्त्वो में सुरक्षित रखे जा सकते है तृष्णा उत्तेजित करने वाली आशा की टिमटिमाहट की सम्भावना में हमारा ध्यान खिंच जाता है। इन कुछ अवशेषो को मिनोई सार्वभौम धर्मतन्त्र कहा जा सकता है। ईसा के पूर्व छठी शताब्दी के बाद हेलेनी इतिहास में 'ओफिक' धर्मतन्त्र का अस्तित्व आरम्भ होता है। हम किसी प्रकार निश्चित नही कर सकते कि ओरफीवाद के धार्मिक विश्वास तथा अभ्यास मिनोई धर्म से निकले है। पुन इसके बाद हम हिताइती सभ्यता के आन्तरिक सर्वहारा के बारे म कुछ भी नही जानते जो असामान्य रूप से अपनी आरम्भिक अवस्था में ही नष्ट हो चुका है। हम इतना ही कह सकते है कि हिताइती समाज के अवशेष आंशिक रूप से सीरियाई समाज म तथा आंशिक रूप से हेलेनी समाज में आत्मसात् कर लिये गये है। अतएव हिताइती समाज के किसी भी अवशेष के लिए हमें इन दो विदेशी समाजो के इतिहासो की खोज करनी चाहिए।

बहुत से विघटित समाजो में से एक हिताइती समाज है जिसे विघटन की प्रणाली से पूर्ण होने से पहले ही उसके एक पडोसी ने निगल लिया। ऐसे मामलो में यह स्वाभाविक है कि एक आन्तरिक सर्वहारा शक्तिशाली अल्पसंख्या के भविष्य के भाग्य का सम्मान उपेक्षा की दृष्टि से

या सन्तोष के साथ करें। जब स्पेनी विजेताओं ने अचानक आक्रमण किया, तब इंडियन सव व्यापी राज्य के आन्तरिक सर्वहारा का व्यवहार परीक्षा की बात (टेस्ट केस) है। अब तक जितने विघटित समाज पैदा हुए थे, उनमें 'ओरेजोन्स' ही कदाचित् सबसे अधिक उदार शक्ति शाली अल्पसंख्यक था, किन्तु इसकी उदारता परीक्षा के समय कुछ भी काम न आयी। इसी प्रकार उनके (ओरेजोन्स के) सावधानी से पालित मनुष्यों के झुण्डों ने बिना किसी हिचकिचाहट के स्पेनी विजय को स्वीकार किया जिस प्रकार उन्होंने इनका[1] की सार्वभौम शान्ति को स्वीकार किया था।

हम उन स्थितियों की ओर भी संकेत कर सकते हैं जिनमें आन्तरिक सर्वहारा वर्ग ने अपने प्रभावी अल्पसंख्यक वर्ग के विजेताओं का अदम्य उत्साह के साथ स्वागत किया है। उन नये बैबिलोनी साम्राज्य के फारसी विजेता का स्वागत 'ड्यूटरा इसइया' के भावणा के संग्रहों में मुखरित है। इस विजेता ने यहूदियों को बन्दी बनाया था। दो सौ वर्षों बाद बैबिलोनी लोगों ने हेलनी सिकन्दर का स्वागत एकेमेनियाई प्रभुत्व से मुक्ति दिलाने वाले के रूप में स्वत किया।

जापानी आन्तरिक सर्वहारा

सुदूर पूर्वी समाज के जापान के इतिहास में जापानी आन्तरिक सर्वहारा के पार्थक्य के कुछ स्पष्ट चिह्न पाये जा सकते हैं। पश्चिमी समाज के द्वारा इस सर्वहारा के समाप्त होने से पहले भी ये विपत्तियों के समय दिखाई देते हैं और अपने सार्वभौम राज्य में प्रविष्ट हो जाते हैं। यदि हम उदाहरण के लिए हेलेनी नगर राज्य के उन नागरिकों के प्रतिरूपों को देखें, जिनका उन्मूलन निरन्तर युद्ध एवं क्रान्तियों ने किया—ये युद्ध तथा क्रान्तियाँ ४३१ ई० पू० से आरम्भ हुई थीं—इस समय नगर राज्य के नागरिकों ने भाड़े के सैनिक होकर एक राह पायी—तो हम इसके एकदम समानान्तर उदाहरण 'रोनिन' या स्वामी विहीन बेकार सैनिकों में पायेंगे। ये सैनिक सामन्ती अराजकता के द्वारा जापानी सकटकाल में नष्ट किये गये थे। पुनः विचारार्थ 'एटा' या 'नीच जाति' को ले सकते हैं, जो आज भी बहिष्कृत जाति के रूप में जापानी समाज में बचे हैं, तथा जो मुख्य द्वीप के 'एनू' बर्बर जाति में आत्मसात् होने से आज भी बच गये हैं। ये अवशिष्ट अंग वैसे ही जापानी आन्तरिक सर्वहारा में मिला लिये गये जैसे यूरोप और उत्तरी अफ्रीका के जंगली हेलनी आन्तरिक सर्वहारा में रोम के सैनिकों द्वारा मिला लिये गये थे। तीसरा उदाहरण हम उन 'उच्चतर धर्मों' के जापानी पर्यायों में पा सकते हैं जिनमें हेलेनी आन्तरिक सर्वहारा ने अपनी उन यातनाओं की शक्तिशाली प्रतिक्रिया खोजी और पायी जो उन्हें सहनी पड़ी थी।

ये धर्म जोडो, जोडो शिशु, होक्को और ज़ेन थे। ये सभी ११७५ ई० के पश्चात् उसी शती में स्थापित किये गये थे। ये सभी धर्म उन हेलनी पर्यायों के सदृश हैं जो विदेशी प्रेरणा से उत्पन्न हुए थे। ये चारों महायान के विभिन्न रूप थे। यौन विषय की आध्यात्मिकता की समानता की शिक्षा देने के क्षेत्र में इन चारों धर्मों में से तीन ईसाई धर्म से मिलते थे। सरल

1 एक पुरानी सभ्यता की जाति।—अनुवादक

कुछ कहा जाय वे वही करें। ये नही समझते थे कि ईसाई मामूली रीति रिवाज के अनुसार काय करने की अपेक्षा आत्मबलिदान पर क्या जोर देते ह। ईसाई धम के प्रतिद्वन्द्वी जो स्वय शक्ति शाली थे, न तो राज-पूजा के और न तो धम का कोई आदि रूप ही थे। एक प्रकार का—'उच्चतर धम' था जिसका उदय हेलेनी आन्तरिक सवहारा से ईसाई मत की भाँति हुआ था। ईसाई धम का यह प्रतिद्वन्द्वी स्वय स्थानीय आकषण के कारण शक्तिशाली था तथा उसे राजनीतिक बाध्यता के समथन की आवश्यकता न थी।

विभिन्न सूत्रों का स्वय स्मरण कर हम इन प्रतिद्वन्द्वी 'उच्चतर धर्मों' की कल्पना कर सकते ह जिनसे हेलेनी आन्तरिक सवहारा के पूर्वी सैन्यदल की उत्पत्ति हुई। ईसाई धम सीरियाई जनता के पूवजों से आया। सीरियाई ससार के आधे ईरानियों ने मिथ्रावाद को योगदान किया। आधे उत्तरी मिस्र की दरिद्रता में डूबने से आइसिस की पूजा का प्रादुर्भाव हुआ। इनातोल के ग्रेट मदर साईबिली की पूजा सम्भवत उस हिताइती समाज के योगदान स आयी हुई समझी जा सकती है जो धम को छोड़कर समाज के प्रत्येक धरातल से बहुत पहले ही समाप्त हो चुकी थी।

यदि हम स्वय 'ग्रेट मदर' की मूल उत्पत्ति का पता लगाना आरम्भ करें, तब इसे अपने मूल रूप में इशतार नाम से सुमेरी ससार में सुपरिचित पायेंगे।—एमाताल्या में पसिनस में साइबिली के रूप में स्थापित करने के पहले या हिरापालिस में डी साइरा की भाँति अथवा उत्तरी सागर या बाल्टिक सागर के पवित्र द्वीप के कुञ्ज में ट्यूटोनी भाषी पुजारियों की धरती माता की भाँति—यह ग्रेट मदर—पायी जाती है।

मिनोई काल की रिक्तता तथा कुछ हिताइत अवशेष

जब हम अन्य विघटित समाजों में आन्तरिक सवहारा के इतिहासों को खोजते ह तब हमको स्वीकार करना पडता है कि कुछ स्थितियों म अल्प प्रमाण मिलते ह या एकदम नहीं मिलते। उदाहरणाथ, हम माया समाज के सवहारा के सम्बन्ध म कुछ भी नहीं जानते। मिनोई समाज के मामले में कुछ वस्तुओं के अवशेष की, जो ऐतिहासिक आरफिक धमतन्त्र के विजातीय तत्त्वों में सुरक्षित रखे जा सकते ह तृष्णा उत्तेजित करने वाली आशा की टिमटिमाहट की सम्भावना में हमारा ध्यान खिंच जाता है। इन कुछ अवशेषों को मिनोई सावभौम धमतन्त्र कहा जा सकता है। ईसा के पूव छठी शताब्दी के बाद हेलेनी इतिहास में ओर्फिक' धमतन्त्र का अस्तित्व आरम्भ होता है। हम किसी प्रकार निश्चित नहीं कर सकते कि ओरफीवाद के धार्मिक विश्वास तथा अभ्यास मिनोई धम से निकले ह। पुन इसके बाद हम हिताइती सभ्यता के आन्तरिक सवहारा के बारे में कुछ भी नहीं जानते, जो असामान्य रूप स अपनी आरम्भिक अवस्था में ही नष्ट हो चुका है। हम इतना ही कह सकते ह कि हिताइती समाज के अवशेष आशिक रूप से सीरियाई समाज में तथा आशिक रूप से हेलेनी समाज में आत्मसात् कर लिये गये ह। अतएव हिताइती समाज के किसी भी अवशेष के लिए हमें इन दो विदेशी समाजों के इतिहासों की खोज करनी चाहिए।

बहुत से विघटित समाजों में स एक हिताइती समाज है जिसे विघटन की प्रणाली स पूण होने स पहले ही उसके एक पडोसी ने निगल लिया। ऐसे मामलों में यह स्वाभाविक है कि एक आन्तरिक सवहारा शक्तिशाली अल्पसख्या के भविष्य के भाग्य का सम्मान उपेक्षा की दृष्टि स

या सन्तोर के साथ करें। जब स्पेनी विजेताओं ने अचानक आक्रमण किया, तब इण्डियन सर्व-व्यापी राज्य व आंतरिक सर्वहारा का व्यवहार परीक्षा की बात (टेस्ट केस) है। अब तक जितने विघटित समाज पैदा हुए थे, उनमें 'ओरेजोन्स' ही कदाचित् सबसे अधिक उदार शक्तिशाली अल्पसंख्यक था, किन्तु इसकी उदारता परीक्षा के समय कुछ भी काम न आयी। इसी प्रकार उनके (ओरेजोन्स के) सावधानी से पालित मनुष्यों के झुंडों ने बिना किसी हिचकिचाहट के स्पेनी विजय को स्वीकार किया जिस प्रकार उन्होंने 'इनका'[1] की सार्वभौम शान्ति को स्वीकार किया था।

हम उन स्थितियों की ओर भी संकेत कर सकते हैं जिनमें आन्तरिक सर्वहारा वर्ग ने अपने प्रभावी अल्पसंख्यक वर्ग के विजेताओं का अदम्य उत्साह के साथ स्वागत किया है। उन नये बेबिलोनी साम्राज्य के पारसी विजेता का स्वागत 'ड्यूटेरो इसैया' के भाषणों के संग्रहों में मुखरित है। इस विजेता ने यहूदियों को बन्दी बनाया था। दो सौ वर्षों बाद बेबिलोनी लोगों ने हेलेनी सिकन्दर का स्वागत एकेमेनियाई प्रभुत्व से मुक्ति दिलाने वाले के रूप में स्वतः किया।

जापानी आन्तरिक सर्वहारा

सुदूर पूर्वी समाज के जापान के इतिहास में जापानी आन्तरिक सर्वहारा के पार्थक्य के कुछ स्पष्ट चिह्न पाये जा सकते हैं। पश्चिमी समाज के द्वारा इस सर्वहारा के समाप्त होने से पहले भी ये विपत्तियों के समय दिखाई देते हैं और अपने सार्वभौम राज्य में प्रविष्ट हो जाते हैं। यदि हम उदाहरण के लिए हेलेनी नगर राज्य के उन नागरिकों के प्रतिरूपों को देखें, जिनका उन्मूलन निरन्तर युद्ध एवं क्रान्तियों ने किया—ये युद्ध तथा क्रान्तियाँ ४३१ ई० पू० से आरम्भ हुई थीं—इस समय नगर राज्य के नागरिकों ने भाड़े के सैनिक होकर एक राह पायी—तो हम इसके एकदम समानान्तर उदाहरण 'रोनिन' या स्वामी विहीन बेकार सैनिकों में पायेंगे। ये सैनिक सामन्ती अराजकता के द्वारा जापानी संकटकाल में नष्ट किये गये थे। पुनः विचारार्थ 'एटा' या 'नीच जाति' को ले सकते हैं, जो आज भी बहिष्कृत जाति के रूप में जापानी समाज में बचे हैं, तथा जो मुख्य द्वीप के एनू बर्बर जाति में आत्मसात् होने से आज भी बच गये हैं। ये अवशिष्ट अंश वैसे ही जापानी आन्तरिक सर्वहारा में मिला लिये गये जैसे यूरोप और उत्तरी अफ्रीका के जंगली हेलेनी आंतरिक सर्वहारा में रोम के सैनिकों द्वारा मिला लिये गये थे। तीसरा उदाहरण हम उन उच्चतर धर्मों के जापानी पर्यायों में पा सकते हैं जिनमें हेलेनी आन्तरिक सर्वहारा ने अपनी उन यातनाओं की शक्तिशाली प्रतिक्रिया खोजी और पायी जो उन्हें सहनी पड़ी थीं।

ये धर्म जोडो, जोडो शिन्शु, होक्के और जेन थे। ये सभी ११७५ ई० के पश्चात् उसी शती में स्थापित किये गये थे। ये सभी धर्म उन हेलेनी पर्यायों के सदृश हैं जो विदेशी प्रेरणा से उत्पन्न हुए थे। ये चारों महायान के विभिन्न रूप थे। यौन विषय की आध्यात्मिकता की समानता की शिक्षा देने के क्षेत्र में इन चारों धर्मों में से तीन ईसाई धर्म से मिलते थे। सरल

---

1 एक पुरानी सभ्यता की जाति।—अनुवादक

जनता को अपना धार्मिक उपदेश करते हुए इन धर्मों के प्रचारकों ने चिर क्लासिकी चीनी लिपि का बहिष्कार किया । जब लिखना पडा, सरल जापानी लिपि में लिखा । धम सस्थापकों के रूप में *उनकी मुख्य दुबलता यह थी कि अधिक-से-अधिक जनता के परित्राण की इच्छा में* उन्होंने अपनी मांगो को अत्यन्त कम कर लिया था । कुछ ने कमकाण्ड करने की पद्धति का केवल सूत्र निश्चित किया और दूसरो ने अपने शिष्यो पर नैतिक बोझ कुछ भी नहीं डाला । किन्तु यह *स्मरण रखना होगा कि 'पापो को क्षमा करने' के* ईसाइयत के मुख्य सिद्धान्त का विभिन्न कालो और स्थानो में अपने आप बने ईसाई नेताओ द्वारा दुरुपयोग किया गया या गलत ढग से समझा गया । इन ईसाई नेताओ ने उपयुक्त एक या दोनो आरोपो का उद्घाटन किया । उदाहरणाथ 'लूथर' ने रोमन धमतन्त्र द्वारा किये जाने वाले पाप से मुक्ति की बिक्री पर आक्रमण किया । लूथर ने अपने युग की रोमन धम की 'पाप से मुक्ति' की बिक्री की प्रथा का विरोध किया और कहा कि यह कमकाण्ड के परदे में व्यापारिक लेन देन ही है । किन्तु साथ ही साथ उसने पाल के विश्वास वाले सिद्धान्त का और उसके पाप से निवृत्ति के ढग का समथन किया । और इस प्रकार नैतिकता के प्रति उदासीनता का अपराधी बना ।

विदेशी सावभौम राज्य के अन्तगत आन्तरिक सवहारा

विघटित सभ्यताओ के एकदल द्वारा एक विचित्र दृश्य उपस्थित होता है । स्थानीय शक्तिशाली अल्पसख्यक के नष्ट या पराजित कर दिये जाने के बाद बाह्य घटनाओ का क्रम *सामान्य अवस्था में होता चलता है । तीन समाजो के—हिन्दू सुदूर पूर्वी चीनी तथा निकटवर्ती* पूर्वी परम्परावादी ईसाई—लोग पतन के माग से विघटन की ओर बढे । यह सावभौम राज्य उन तीनो समाजो ने स्वय नही बनाया था, वरन् उन्हें विदेशी लोगो से वरदान के रूप में मिला था *या विदेशियो द्वारा उन पर लादा गया था । एक सावभौम राज्य ईरानी लोगो से परम्परावादी* ईसाई राज्य के मुख्य अश को उसमानिया साम्राज्य के रूप में तथा दूसरा हिन्दू ससार में तमूरी साम्राज्य के रूप में मिला था । अग्रजो न शीघ्र निर्मित मुगल राज्य का पुनर्निर्माण नीव से किया । *चीन में वे मगोल थे जिन्होने मुगलो या उसमानिया लोगो की भूमिका अदा की । भारत में* पुनर्निर्माण का काय जिस दृढ आधार पर अग्रेजो न किया वसे ही चीन में मचुओ ने किया ।

जब विघटनोन्मुख समाज में कुछ विदेशी राज्यनिर्माता सावभौम राज्य के निर्माण के लिए *प्रवेश कर लेते ह तब विघटनोन्मुख समाज का शक्तिशाली अल्पसख्यक अपने को पूर्ण अयोग्य* एव निर्जीव स्वीकार कर लेते ह । अपमानजनक मनवचन (डिसफ्रेंचाइजमेंट) इस अकालिक *वृद्धता का अपरिहाय दण्ड है । जो विदेशी शक्तिशाली अल्पसख्यक का काय करने आते है,* वे स्वभावत *प्रभावशाली अल्पसख्यक के अधिकारी होने का काय अपने ऊपर ले लेते ह ।* विदेशियो द्वारा निर्मित सावभौम राज्य में सम्पूण स्थानीय अल्पसख्यक आन्तरिक सवहारा के रूप में अवनत कर दिये जाते ह । मगोल या मचू खाकान और उसमानिया बादशाह मुगल तथा *ब्रिटिश कसरे हिन्द को चीनी विद्वानो या हिन्दू ब्राह्मणो या ग्रीक के 'फनारियोट' को सेवा के लिए* नियुक्त करने में सुविधा होती थी । किन्तु इन एजेंटो से यह सत्य छिपाया नही जा सकता था कि उन्होने अपनी आत्मा तथा अपनी प्रतिष्ठा को खो दिया है । एसी स्थिति में जब शक्ति*शाली अल्पसख्यक आन्तरिक सवहारा के समान गिर चुका है,* जिसे वह पहले घृणा की दृष्टि से देखता था, तब विघटन का यह कायप्रणाली स्वाभाविक ढग से नहीं हो सकती ।

अपनी पीढी में हिन्दू समाज के आन्तरिक सर्वहारा में हम सवहारा की दो प्रकार की हिंसक तथा अहिंसक प्रतिक्रियाओं का भेद कर सकते हैं। हिंसावादी बगाली क्रान्तिकारियो द्वारा की गयी हत्याएँ तथा गुजराती महात्मा गाधी के अहिंसात्मक उपदेश, ये दोनो प्रतिक्रियाएँ एक दूसरे की विरोधी हैं। अनेक धार्मिक आन्दोलनो से सवहारा की उत्तेजना के लम्बे बीते उस इतिहास से हम निष्कर्ष निकाल सकते हैं जिसमे ये दो विरोधी प्रवत्तिया समान रूप से दिखायी गयी हैं। सिख धर्म में हम हिन्दू तथा इस्लाम के युद्धात्मक सवहारा का तथा ब्रह्म-समाज में हिन्दू धर्म तथा उदार प्रोटेस्टेन्ट ईसाई धर्म की अहिंसा की सहति देखते हैं।

चीन के सुदूर पूर्वी समाज में मचू शासन के अन्तर्गत आन्तरिक सवहारा में वह काय टर्पिंग आन्दोलन में देखते हैं जो प्रोटेस्टेन्ट ईसाई धर्म की उदार भावना के लिए ब्रह्म-समाज का ऋणी है किन्तु वह सिख धर्म का भी युद्धात्मक प्रवत्ति के लिए आभारी है। इसी उपयुक्त सवहारा ने ईसाई युग की १९ वीं शती के मध्य सामाजिक रगमच को प्रभावित किया था।

ईसाई युग के १४ वी शती के पाचवें दशक में परम्परावादी ईसाई साम्राज्य के मुख्य अश के सवहारा में हुई सैलनिका की 'जीलट'[1] क्रान्ति में हमें सवहारा की हिंसात्मक प्रतिक्रिया की झाँकी परम्परावादी ईसाई धर्म के घोर सकटकाल में मिलती है। यह सकटकाल उसमानिया विजेता के कठोर अनुशासन द्वारा परम्परावादी ईसाई समाज के सार्वभौम राज्य में मिलाये जाने के पहले की अन्तिम पीढी में आया था। तात्कालिक सभ्य प्रतिक्रियाएँ आगे बहुत दूर तक नही बढीं। १८ वी तथा १९ वी शती की मोड पर यदि पश्चिमीकरण की प्रणाली का अनुसरण उसमानिया साम्राज्य के साथ-ही साथ नही किया गया होता तो हम अनुमान कर सकते हैं कि 'बेक्टासी' आन्दोलन पूरे निकट पूर्व में स्वत वह स्थिति प्राप्त कर लेता जिसे अल्बेनिया में उसे प्राप्त करने में वास्तविक सफलता मिली।

बैबिलोनी तथा सीरियाई आन्तरिक सवहारा

यदि अब हम बबिलोनी समाज को देखें तो हम पायेंगे कि आन्तरिक सवहारा की दुखमय आत्मा में धार्मिक अनुभव तथा खोज की उत्तेजना वैसी ही सक्रिय थी, जैसी ईसा से सातवी तथा आठवी शतिया पूर्व असीरियाई आतक के अन्तगत दक्षिणी पश्चिमी एशिया में तथा जैसी उपयुक्त घटना के लगभग छ शतिया बाद रोमनी आतक के अन्तगत भूमध्य सागर के हेलनी समुद्रतटो पर थी। असीरियाई सैनिको द्वारा विघटित बबिलोनी समाज का विस्तार भौगोलिक दृष्टि से वैसे ही दो ओर हुआ जैसे मसिडोनी तथा रोमन विजयों द्वारा विघटित हेलेनी समाज का हुआ था।

ईरान में पूरब की ओर जैग्रोस के आगे असीरियाई लोगो ने एपेनाइन के परे यूरोप में रोम द्वारा अनेक आदिम समाजो को जीत कर शोषण की आशा कर ली थी। पश्चिम की ओर दजला नदी के आगे डार्डेनल्स के एशिया की ओर दो विदेशी सभ्यताओं को पराजित कर मसिडोनी शोषण की असीरियाई लोगो ने आशा कर रखी थी। ये सीरियाई तथा मिस्री लोग वास्तव

1 यहूदियो का वह कट्टर दल जिसने रोमनों का विरोध किया था।—अनुवादक

में समान थे। उपयुक्त चार में से दो समाज सिकन्दर के सामरिक अभियान के बाद हलनी आन्तरिक सर्वहारा में मिला लिये गये। बेबिलोनी सर्वहारा के विदेशी शिकार बिना निमूल किये जीत लिये गये थे। पराजित जनसंख्या को निर्वासित करके इसरायली लोग असीरिया के युद्ध के सरदार 'सारगन' द्वारा पुन स्थापित किये गये। नव बबिलोनी युद्ध सरदार नेबुकदनजार के द्वारा यहूदियों को बबिलोनी संसार के मध्य बेबिलोनिया में पुनःस्थापन किया गया।

पराजित लोगों का उत्साह भग करने के लिए बबिलोनी साम्राज्यवाद की मुख्य युक्ति जनसंख्या का अनिवार्य परिवर्तन थी और निष्ठुरता विदेशी तथा नगरों पर ही आरोपित नहीं की गयी। बेबिलोनी संसार में भ्रातृहन्ता युद्ध की प्रभावशाली शक्तियों आपस में ऐसा ही व्यवहार करने में जरा भी नहीं हिचकिचायी। सैमरिटन समुदाय जिसके कुछ प्रतिनिधि अभी गरिजिम पर्वत की छाया में पाये जा सकते हैं, जनसंख्या के पुनःस्थापन के स्मारक हैं। ये पुन स्थापित लोग असीरियनों द्वारा बबिलोनिया सहित अनेक बबिलोनी नगरों से निर्वासित किये गये थे।

यह देखा जायगा कि उत्साही असीरियाई तब तक समाप्त नहीं हुए, जब तक उन्होंने उस बबिलोनी सर्वहारा का अस्तित्व स्थापित नहीं किया जो अपनी उत्पत्ति, बनावट एवं अनुभव में हलनी आन्तरिक सर्वहारा के समान था। इन दोनों वृक्षों में समान ही फल लगे, जब सीरियाई समाज का हलनी सर्वहारा में बाद के समावेशन ने यहूदी धर्म से ईसाइयत का फल पैदा किया, उसी सीरियाई समाज के बबिलोनी आन्तरिक सर्वहारा के आरम्भिक समावेशन ने स्थानीय समुदाय के आदि धर्म से यहूदी धर्म के फल की उत्पत्ति तब की थी, जब सीरियाई समाज ने उसे स्वीकार किया।

यह देखा जा सकता है कि तब तक यहूदी धर्म तथा ईसाई धर्म दार्शनिक दृष्टि से समकालीन तथा बराबर हैं जहाँ तक वे दो विदेशी समाजों के इतिहासों के समान अवस्था की उत्पत्ति समझे जाते हैं। एक दूसरी दृष्टि और भी है जिसमें ये एक-दूसरे के बाद की अवस्था को आध्यात्मिक प्रबोधन की एक ही प्रणाली में उपस्थित हैं। इस बाद के चित्र में ईसाई धर्म यहूदी धर्म के साथ ही साथ नहीं खड़ा है, वरन् उसके कन्धे पर है, जब कि ये दोनों आदिम इसराइल धर्म से ऊँचे हैं। ईसा के पूर्व आठवीं शती में अथवा उसके बाद जिसका एतिहासिक उल्लेख हमारे पास है आदिम का ईसाई धर्म अथवा आहावा की पूजा का सकेत या उल्लेख है। पैगम्बरों के समक्ष तथा उनके बाद बाइबिल की परम्परा में मूसा उपस्थित होते हैं। और मूसा के समक्ष अबराहम की आकृति उपस्थित होती है। इन धुंधली आकृतियों को हम जिस भी ऐतिहासिक प्रामाणिकता की दृष्टि से देखें, यह स्पष्ट है कि परम्परा उसी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में अबराहम तथा मूसा को रखती है जिसमें पैगम्बरों और ईसा को रखा था। मिस्र में मूसा की प्रतीति तथा 'नये साम्राज्य' का ह्रास साथ ही साथ हुआ। उस सुमेरी सार्वभौम राज्य के अन्तिम दिनों के साथ अबराहम की प्रतीति हुई जिसकी क्षणिक पुनरचना 'हेमु रब्बी' द्वारा हुई थी। इस प्रकार ये सभी चार अवस्थाएँ, जो अबराहम, मूसा, पैगम्बरों तथा ईसा के द्वारा उपस्थित की गयी हैं विघटित सभ्यताओं और धर्म की नवीन प्रेरणाओं से सम्बन्धित हैं।

उच्च यहूदी धर्म की उत्पत्ति ने स्वयं अपने सम्बन्ध में इसरायल तथा जूडा के पूर्व निर्वासित पैगम्बरों की पुस्तकों में अद्वितीय ढंग से पूर्ण तथा स्पष्ट उल्लेख किया है। अत्यन्त आध्यात्मिक

भगीरथ प्रयत्न के इन जीवित अभिलेखो में हम एक ज्वलन्त प्रश्न देखते ह जो हमें अन्य स्थानो पर मिला है। यह प्रश्न है हिंसा और अहिंसा में से एक के चुनाव की कठोर परीक्षा का। इस मामले में अहिंसा ने धीरे धीरे हिंसा के ऊपर और भी विजय पायी। सकटकाल जब अपनी पराकाष्ठा पर पहुँचा और उसे पार कर गया, तब उसी सकटकाल ने लगातार प्रखर आघात किया। इस आघात ने 'हिंसा के उत्तर में हिंसा' की निस्सारता जूडा के धार सघष शील हिंसावादियो को सिखायी। नवीन उच्चतर धम जो सीरिया में आठवी शती में आरम्भ हुआ था, बबिलोनिया के निमूलित, निर्वासित तथा आक्रान्त लोगो में छठी तथा पाचवी शती ई० पू० में ही प्रौढ हो चुका था। सीरिया के धम के बीजो को असीरिया के मूसल से कूट कूटकर यह 'उच्चतर धम के रूप में शुद्ध किया गया।

रोमन इटली में पूर्वी निवासित दासो की भाँति नेबुकदनजार के बेबिलोनिया म निर्वासित यहूदी अपने विजेताओ के लोकाचार के अनुसार स्वय को सरलता से ढालने में असमथ सिद्ध हुए।

हे जेरुसलम्, यदि म तुम्हें भूल जाऊँ तो मेरे दाहिने हाथ का कौशल काम न आये।

यदि म तुम्हें स्मरण न कर सकू तो मेरी जिह्वा मेरे तालू से सट जाय।[1]

अपने घर की वह स्मृति, जिसे ये निर्वासित नवीन भूमि पर भी अपने मस्तिष्क में सँजाये रहते थे, केवल नकारात्मक छाप नही थी। यह निश्चित रूप स सकारात्मक क्रिया द्वारा प्रेरित काल्पनिक सृष्टि थी। अलौकिक प्रकाश की इस दृष्टि में आँसुओ के बीच ध्वस्त दुग दिखाइ पडा जो चट्टान पर बसे उस 'पवित्र नगर में रूपान्तरित हो गया था, जिसके सम्मुख नरक का द्वार बन्द था। पराजित लोगो ने विजेताओ क सायन के गीत को गाकर सुनाने की सनक अस्वीकार कर दी और अपनी वीणा फरात की धारा के किनारे के वक्ष पर दृढतापूवक लटका दी। ये पराजित लोग उसी समय नवीन न सुनाई देने वाले गीत अदृश्य हृदतत्री पर गा रह थे।

हे सायन, जब हमने तुम्ह स्मरण किया तब हम बबिलोनी धारा के किनारे बठे और रोये।[2]
और उस रुदन में यहूदियो की भूमि ने प्रकाश पाया।

यह स्पष्ट है कि सीरियाई अनिवाय फौजी भरती की लगातार धार्मिक प्रतिक्रियाओ में तथा बबिलोनी और हेलेनी इतिहास में समानता बहुत निकट है। किन्तु बबिलोनी चुनौती से उत्तेजित प्रतिक्रिया उन विपदग्रस्त लोगो मे नही पायी गयी जो विदेशी सभ्यताओ के सदस्य थे, वरन् जो बबर भी थे। यूरोपी तथा उत्तरी अफ्रीका के बबरो ने, जिन्हे रोमनो ने जीता था किसी भी अपने निजी धम का अन्वेषण नही किया। उन्होने अपने साथी पूर्वी सवहारा द्वारा बाय धम के बीजो को केवल स्वीकार किया। जो असीरयाई राजा के आधिपत्य में बबर ईरानी लोग थे जिनमें एक जरथुष्ट्र नाम के स्थानीय पगम्बर पदा हुए। ये पारसी धम के सस्थापक थे। जरथुष्ट्र की तिथि विवादास्पद है। हम निश्चित रूप से नही कह सकते कि उनका पारसी धम असीरियाई चुनौती की स्वतन्त्र प्रतिक्रिया थी या इनका ध्वनि इसरायल के विस्मृत उन

१ साम १३७, ५–६।
२ वही, १३७–१।

पैगम्बरो ने पुकारा की केवल प्रतिध्वनि मात्र थी जो 'मीडीस'[1] के नगरो में वीरान छोड गये थे। यह कुछ हद तक स्पष्ट है कि इन दोनो 'उच्चतर' धर्मों में जो भी मौलिक सम्बन्ध हो सकते थे, उनके अनुसार पारसी धर्म तथा यहूदी धर्म अपनी प्रौढ़ता में समान दिखाई पडे।

किसी प्रकार जब बबिलोनिया या सकटकाल असीरिया के पतन से समाप्त हुआ और बैबिलोनी ससार नवीन बबिलोनी साम्राज्य के रूप में सार्वभौम राज्य से गुजरा, तब ऐसा ज्ञात हुआ मानो यहूदी धर्म और पारसी धर्म इस राजनीतिक ढाँचे में सार्वभौम धर्मतन्त्र की स्थापना की सुअवसर प्राप्ति के लिए होड लगा रहे हो। ऐसी ही होड ईसाई धर्म तथा मिथ्रवाद ने रोमन साम्राज्य के ढाँचे में सुअवसर प्राप्ति के लिए लगायी थी।

यह पर्याप्त कारण नही था कि नवीन बबिलोनी सार्वभौम राज्य रोमन सार्वभौम राज्य की तुलना में अस्थायी सिद्ध हुआ। ट्राजन सेवेरस और कास्टन्टाइन ने घातिया तक बबिलोनिया के अगस्टस नेबुकदनजार का अनुसरण नही किया। इसके तत्कालीन उत्तराधिकारी नेबोनिडस तथा बेल्शाजार थे जिनकी तुलना जुलियन तथा वैलेन्स से की जा सकती थी। एक शती के भीतर ही नवीन बैबिलोनी राज्य मीडीस तथा फारस के लोगो को दे दिया गया। यह अकमेनियन साम्राज्य राजनीतिक दृष्टि से ईरानी तथा सास्कृतिक दृष्टि से सीरियाई ढग का था। इस प्रकार शक्तिशाली अल्पसख्यक तथा आन्तरिक सर्वहारा के क्रियाकलाप एक दूसरे के विरोधी थे।

इन परिस्थितियो में यहूदी धर्म तथा पारसी धर्म की विजय अत्यन्त शीघ्र तथा निश्चित समझी जाती थी किन्तु दो सौ वर्षों बाद भाग्य बीच में आया और घटनाओ की शृंखला को दूसरा अप्रत्याशित मोड दिया। अब भाग्य ने मेकेडोनी विजेताओ के हाथो में मीडीस तथा फारस के लोगो का राज्य दिया। सीरियाई सार्वभौम राज्य के जीवन समाप्त होने के पहले ही सीरियाई ससार में हेलेनी समाज के हिंसात्मक प्रवेश ने सीरियाई सार्वभौम राज्य को छिन्न भिन्न कर दिया। इसके कारण दो ऊँचे धर्म (जैसा कुछ प्रमाणो से इगित है) अकेमीनियाई अभेद्य सुरक्षा के भीतर शान्तिपूर्वक फलते रहे और अपने उचित धार्मिक कृत्यो को राजनीतिक भूमिका में बदलकर विनाशकारी रूप से पथभ्रष्ट हो गये। वे ऊँचे धर्म अपने अपने धरातल पर हेलेनीवाद के प्रवेश के विरुद्ध सीरियाई सभ्यता के सघर्ष के समर्थक बने। भूमध्य सागरी क्षेत्र में अपनी बनी हुई पश्चिमी स्थिति में यहूदी धर्म अनिवार्य रूप से निराशा में बदल गया और रोमवासियो तथा यहूदियो के ई० ६६–७० ई० ११५–१७, और ई० १३२–३५ में हुए युद्धो में यह यहूदी धर्म रोम की भौतिक शक्तियो के विरुद्ध पूर्ण रूप से छिन्न भिन्न हो गया। जैगरास के पूरब अपने किले में पारसी धर्म ने ईसा की तीसरी शती की विषम परिस्थितियो में सघर्ष आरम्भ किया। जितना यहूदी धर्म मकाबीयो के छोटे छोटे राज्यो में हेलेनी विरोधी सघर्ष करने में समर्थ हुआ उसकी अपेक्षा ससानियाई राजतन्त्र में हेलेनीवाद के विरुद्ध पारसी धर्म अधिक शक्तिशाली रूप में पाया गया। ससानियाइयो ने धीरे धीरे चार सौ वर्षों के सघर्ष में रोमन साम्राज्य की शक्ति नष्ट कर दी। यह सघर्ष ई० ५७२–९१ तथा ई० ६०३–२८ के रोम और फारस के

१ मीडीस—फारस की जनता के निकट सम्बन्धी वे लोग जो पहले एशिया माइनर में रहते थे। जिनके जिला मीडिया के नाम पर ही उनका यह नाम पडा।—अनुवादक

परस्पर ध्वंसकारी युद्ध में चरम सीमा पर था । यहाँ तक कि ससानिया की शक्ति अफ्रीका और एशिया से हेलेनीवाद को उखाडने के काय को पूरा करने में अद्वितीय सिद्ध हुई । यहूदियो को राजनीति की जोखिम के लिए जितना अधिक उधार लेना पडा, पारसी धम को उसी मात्रा में अन्त में चुकाना भी पडा । सप्रति पारसी भी विशृखलित यहूदियो की भाँति जीवित रहे । ये जीवाश्मिन हुए धम जिन्होने अब तक दो समुदायो के बिखरे हुए सदस्यो को बडे शक्तिशाली ढग से बाँधकर रखा था मृतक सीरियाई समाज के अवशेष के रूप में शेष रह गये ।

विदेशी सास्कृतिक शक्तियो के घात प्रतिघात ने इन उच्च धर्मो को केवल राजनीतिक माग पर परिवर्तित ही नही किया, वरन् उन्ह टुकडो में बिखर दिया । राजनीतिक विरोध के साधना द्वारा यहूदी धम तया पारसी धम के परिवतन के बाद सीरिया की धार्मिक प्रतिभाओ ने सीरियाई जनसख्या के उस अक में शरण ली जो हेलेनी चुनौती का हिंसात्मक तरीके द्वारा नही, वरन् शान्तिपूवक विरोध कर रहे थे । सीरियाइ धम ने अपना आत्मा और धारणा के लिए वह नयी अभिव्यक्ति पायी जिसे यहूदी धम और पारसी धम ने छोड दिया था । सीरियाई समाज के हेलेनी विजेताओ को अपनी सदभावना की शक्ति से पराजित करने के बाद इसाई धम अपने नये रुप में तीन शाखाओ में विभाजित हो गया । इन शाखाओ में से एक था क्योलिक तत्र जिसने हेलेनीवाद से सधि का करार किया था और दो थे नेस्टोरियमवाद (बुद्धिमानीवाद) तथा मोनाफाइसिटवाद (ईसा की केवल एक प्रकृति को मानने वाला का सम्प्रदाय) के प्रतिपक्षी अपधम जिन्होने हेलेनीवाद को सीरियाई क्षेत्र से निकाल बाहर करने में अधिक पूण सफलता प्राप्त किये बिना ही पारसी धम तथा यहूदी धम के सैन्यवादी राजनीतिक क्रिया कलापो को ग्रहण किया ।

इन दो लगातार असफलताओ ने हेलेनीवाद के सीरियाई सत्यवादी विरोधियो म किसी भी प्रकार मानसिक जडता एव निराशा कम नही थी । एक तीसरा प्रयत्न किया गया । इसे सफलता मिली । एक दूसरे सीरियाई समाज को हेलेनीवाद पर यह अन्तिम राजनीतिक विजय मिली । अन्त में इस्लाम ने दक्षिण पश्चिम एशिया तथा उत्तरी अफ्रीका से रोमन साम्राज्य को उखाड दिया और सीरियाई सावभौम राज्य के पुनर्निर्माण के लिए अब्बासी खलीफो के रूप में सावभौम धमतन्त्र बना ।

भारतीय तथा चीनी आन्तरिक सवहारा

भारतीय समाज सीरियाई समाज की भाँति अपने विघटन के बीच हेलेनी प्रदेश से प्रचण्ड रूप से विताडित हुआ । इस सम्बन्ध में यह देखना मनोरजक है कि किस सीमा तक एक समान चुनौती द्वारा समान प्रतिक्रिया उत्तेजित हो सकती है ।

उस समय जब सिंधु घाटी पर सिकन्दर के आक्रमण के फलस्वरूप भारतीय तथा हेलेनी समाज का प्रथम सम्पक हुआ तब भारतीय समाज सावभौम राज्य में प्रवेश करने ही वाला था और भारतीय शक्तिशाली अल्पसख्यक बहुत दिनो से जन धम तथा बुद्ध धम के रूप में दो दाशनिक सम्प्रदायों का निर्माण करके विघटन रोकने का घोर प्रयत्न कर रहे थे । किन्तु इसका कोई प्रमाण नही है कि उसके आन्तरिक सवहारा ने कोई उच्च धम उत्पन्न किया । बौद्ध धर्म के दार्शनिक राजा अशोक ने, जिसने २७३ ई० पू० से २३२ ई० पू० तक सावभौम राज्य की गद्दी पर अधिकार रखा, अपने हेलेनी पडोसी का अपने दशन के अनुसार परिवर्तित करने की असफल चेष्टा की ।

यह केवल पिछले दिनो में था कि बौद्ध धर्म ने सिकन्दर के बाद हेलेनी ससार के महत्त्वपूर्ण तथा विस्तृत प्रान्तो पर आक्रमण करके अधिकार कर लिया। ये प्रान्त बक्ट्रिया के यूनानी राज्यो द्वारा शासित थे।

किन्तु जब तक बौद्ध धर्म में आमूल परिवर्तन नही हो गया तब तक उसने पुन आध्यात्मिक विजय नही प्राप्त की। यह बौद्ध धर्म सिद्धार्थ गौतम[1] के आरम्भिक अनुयायियो के प्राचीन दर्शन द्वारा नये 'महायान' धर्म में परिवर्तित किया गया था।

'महायान सर्वथा नया धर्म है। आरम्भिक बौद्ध धर्म से इसका इतना मौलिक भेद है कि इसने बाद के ब्राह्मण धर्म के सम्पर्क सम्बन्धी समानता में अनेक सकेत वैसे दिखाये थे जैसे महायान के अपने पूर्ववर्ती धर्मों के साथ दिखाये थे। यह पूर्ण रूप से कभी अनुभव नही किया गया कि उग्र सुधारवादी क्रांति ने बौद्ध धर्म के रूप का उस समय कितना परिवर्तन किया जब ईसा की प्रथम *शती में उसकी नयी आत्मा पूर्ण विकसित हुई। यह नयी आत्मा किसी प्रकार बहुत समय तक* छिपी थी। व्यक्तिगत निर्वाण सम्बन्धी नास्तिक तथा आत्मा को अस्वीकार करने वाले पूर्ण निर्वाण तथा मानव निर्माता की स्मृति की साधारण पूजा की भावना-सम्बन्धी दार्शनिक उपदेश को जब हम देखते है तथा जब हम अगणित देवताओ तथा ऋषियो से घिरे हुए महान ईश्वर के साथ विशाल उच्च धर्म द्वारा इसे अतिक्रमित होते देखते है, तब भक्ति से धार्मिक कृत्यो से तथा कर्मकाण्ड से परिपूर्ण एक धर्म सभी जीवो की सर्वव्यापी मूर्ति के आदर्श के साथ पाते है, बुद्ध तथा बोधिसत्त्वो की दैवी कृपा से मुक्ति। यह मुक्ति जीवन के विनाश में नही वरन् चिरन्तन जीवन से मुक्ति है। यह कहना न्यायोचित होगा कि धर्मों के इतिहासो ने नये और पुराने के बीच अपनी सीमाओ में ऐसा व्यतिक्रमण नही देखा है। ये नवीन तथा प्राचीन धर्म उसी धर्म सस्थापक द्वारा स्थापित हुए है।[2]

यह परिवर्तित बुद्ध धर्म जो विस्तृत हेलेनी ससार के उत्तर-पूर्व में पुष्पित तथा पल्लवित हुआ, वास्तव में भारतीय 'उच्चतर धर्म' था जिसकी तुलना अन्य उन धर्मों के साथ है जो उसी युग के हेलेनी समाज में प्रवृष्ट हो रहे थे। उस व्यक्तिगत धर्म का मूल क्या था जो महायान

१ यह विवादग्रस्त प्रश्न है जिसका उत्तर कदाचित निश्चयपूर्वक कभी नहीं दिया जा सकता है कि बौद्ध दर्शन (जिसका वर्णन रूसी विद्वान की कृति से लिये हुए निम्नलिखित गद्यांश में है) जिसके विरुद्ध महायान ने क्रान्ति की, सिद्धार्थ गौतम की व्यक्तिगत शिक्षा की प्रतिकृति था या भ्रामक अभिव्यक्ति। कुछ विद्वानों का मत है, जहाँ तक हम बुद्ध के उस व्यवस्थित दर्शन की सतह से नीचे उनकी व्यक्तिगत शिक्षा की कुछ झलक पाते है, जो हमारे लिए हीनयान के धर्म ग्रन्थों में है, तब हम अनुभव करते है कि बुद्ध ने स्वय आत्मा की नित्यता तथा यथार्थता में अविश्वास नहीं किया था। हम अनुमान लगा सकते है कि उनके आध्यात्मिक अभ्यास का उद्देश्य निर्वाण जीवन से चिपकी हुई वासना की पूर्ण परिसमाप्ति की एक अवस्था केवल थी, जीवन की ही परिसमाप्ति की अवस्था नहीं थी। *यह वासना ही जीवन को समग्र रूप से जीवित रहने से रोकती* है। —ए० जे० टी०।

२ थ० शरबाट्सकी द कन्सेप्शन आव बुद्धिस्ट निर्वाण, पृष्ठ ३६।

का विशेष लक्षण तथा उसकी सफलता का रहस्य, दोनो था। इस नये धार्मिक प्रभाव ने बौद्ध धर्म की आत्मा को ही गम्भीर रूप से परिवर्तित कर दिया। यह नया धार्मिक प्रभाव भारतीयता से दूर वसा ही विदेशी था जैसा यह हेलेनी दर्शन से दूर था। क्या यह भारतीय आन्तरिक सर्वहारा के अनुभव का फल था या यह सीरियाई अग्नि से निकली एक चिनगारी थी जिसने पारसी धर्म और यहूदी धर्म को प्रज्ज्वलित किया। दोनो दृष्टियो के पक्ष में प्रमाण दिये जा सकते है, किन्तु वास्तव में हम दोनो में से एक को भी चुनने की स्थिति में नही है। इतना कहना पर्याप्त है कि बौद्ध उच्चतर धर्म के सामने भारतीय समाज का धार्मिक इतिहास उसी प्रणाली से आरम्भ होना है जसा सीरियाई समाज में हुआ था, जिसे हम देख चुके हैं।

उच्चतर धर्म उस समाज के मध्य से आगे बढा जिसमें यह धर्म ईसू के सुसमाचार के प्रचार के लिए हेलेनी वृत्त ससार में विकसित हुआ। यह उच्चतर धर्म प्रत्यक्ष रूप से भारतीय था और ईसाई धर्म तथा मिथ्रवाद की प्रतिमूर्ति था। अपने हाथ की इसी कुजी से हम हेलेनी प्रिज़्म पर पडे हुए सीरियाई धर्म की उन किरणो को सरलतापूर्वक पहचान सकते है जो भारतीय उच्चतर धर्म' की प्रतिमूर्ति थी। यदि हम सीरियाई समाज के पूर्व हेलेनी राज्य के उन जीवाश्मो के भारतीय धर्मों पर दृष्टि डालें, जो यहूदियो एव पारसियो में बच गये थे तो हम वह पायेंगे जिन्हें लका, बर्मा, स्याम और कम्बोडिया के बाद के हीनयानी बौद्ध धर्म में हम खोजते है। ये पूर्व महायानी बौद्ध धर्म के अवशेष है। सीरियाई समाज को इस्लाम के उत्थान की प्रतीक्षा उस धर्म पर अधिकार जमाने के लिए करनी पडी जो हेलेनीवाद को उखाड फेंकने के लिए प्रभावशाली साधन के रूप में समर्थ था। ठीक उसी प्रकार हम देखते है कि भारतीय समाज से हेलनी भावना के प्रवेश के पूर्ण तथा अन्तिम निष्कासन का कार्य बौद्ध धर्म से प्रभावित होने के बाद हिन्दुत्व के विशुद्ध भारतीय धार्मिक तथा अ-हेलेनी आन्दोलन के द्वारा बौद्धवादी हिन्दू धर्म के बाद सम्पन्न हुआ, न कि महायान के द्वारा।

जहाँ तक हमने उसे वर्तमान स्थिति में देखा है महायान का इतिहास उस कैथालिक ईसाई सम्प्रदाय के इतिहास के इस बात में समान है कि जिस अ-हेलनी समाज में वे पदा हुए थे उसे परिवर्तित करने के बजाय दोनो ने अपने कार्य-क्षेत्र हेलनी ससार में बनाये। किन्तु महायान के इतिहास का एक दूसरा अध्याय वह है जिसमें ईसाई धर्मतन्त्र का इतिहास अप्रतिम दिखाई देता है। ईसाई धर्म ने ध्वसाभिमुख हेलेनी समाज के क्षेत्र में शरण ली और अन्ततोगत्वा वह दो सभ्यताओ को ईसाई सम्प्रदाय प्रदान करने के लिए जीवित रहा। इन ईसाई सम्प्रदायो में एक हमारा सम्प्रदाय और दूसरा परम्परावादी ईसाई सम्प्रदाय था। ये दोनो हेलेनी से सम्बन्धित थे। दूसरी ओर महायान मध्य एशिया के उच्च प्रदेशो को पार कर नश्वर हेलेनी बक्टरियाई राज्य में होता हुआ ध्वसाभिमुख चीनी ससार में पहुचा और अपनी जन्मभूमि से दो ओर बढकर चीनी आन्तरिक सर्वहारा का सार्वभौम धर्म बन गया।

सुमेरी आन्तरिक सर्वहारा वर्ग की विरासत

बबिलोनी तथा हित्ताइती, दोनो समाज सुमेरी समाज से सम्बन्धित हैं किन्तु इस विषय में हम 'सुमेरी आन्तरिक सर्वहारा के मध्य किसी उस सर्वव्यापी धर्मतन्त्र का अन्वेषण नही कर सकते है जिसका निर्माण किया गया हो तथा जिसने अपनी सम्बन्धित सभ्यताओं को विरासत

में कुछ दिया हो। बबिलोनी समाज सुमेरी शक्तिशाली अल्पसख्यक का धम ग्रहण करते हुए ज्ञात होता है और हिताइती धम का कुछ अश इसी उद्गम से निकला हुआ मालूम पडता है। किन्तु हम सुमेरी ससार के धार्मिक इतिहास के सम्बन्ध म बहुत कम जानते ह। यदि तम्मूज[1] तथा इश्तार की पूजा सुमेरी आन्तरिक सवहारा के अनुभव का स्मारक है तो हम कह सकते ह कि इस पूजा के सजन की चेष्टा सुमेरी समाज में *अकाल प्रसूत थी और इसका फल कही और मिला।*

इन सुमेरी देवी देवताओ के लम्बे जीवन थे तथा यात्रा के लिए विस्तृत क्षेत्र था। उनके परवर्ती इतिहास का एक मनोरजक लक्षण उनके सापेक्षित महत्त्व की भिन्नता है। इन दोहरे देवताओ की पूजा के हिताइती सस्करण में देवी की प्रतिमा ने उस देवता को महत्त्वहीन तथा निष्प्रभ कर दिया जिसने एक साथ ही पुत्र तथा प्रमी एव सरक्षक और विपद्ग्रस्त की विरोधात्मक भूमिका देवी के समक्ष अदा की थी। सीबेलेइश्तर के समक्ष एटिस-तम्मूज तुच्छ मालूम पडता है और सुदूर उत्तर पश्चिम सागर से घिरे अपने द्वीप में नेथस इश्तर बिना किसी पुरुष (देवता) के अकेली वैभवसम्पन्न मालूम पडती है। किन्तु, सीरिया और मिस्र के दक्षिण पश्चिम यात्रा के बीच तम्मूज का महत्त्व बढता है तथा इश्तर का कम होता है। जिस एटार-गेटिस की पूजा बबाइस से एसक्लान तक प्रचलित है, नाम से ही उसका इश्तर होना ज्ञात होता है। इसका सम्मान एटी की सगिनि के कार्यों पर आधत था। फोनिसिया में एडोनिस 'तम्मूज' देवता था। जिसका निधन दिवस एस्टारटे इश्तर दुख के साथ मनाता था। मिस्री ससार में ओसाइरिस ने अपनी स्त्री और बहिन को निश्चित रूप से वैसे ही निष्प्रभ किया जसे आइसिस ने बाद में ओसाइरिस को निष्प्रभ किया जबकि इसके बाद उसने हेलेनी आन्तरिक सवहारा के हृदय में अपने लिए एक साम्राज्य बना लिया। सुमेरी धार्मिक विश्वास के इस सस्करण में विलाप करने वाली देवी *की नही वरन् नश्वर देवता था जिसकी उपासक पूजा करते थे। यह* सुमेरी धार्मिक विश्वास सुदूर उस स्कडेनेवियाई बबरो में फला हुआ ज्ञात होता है, जहाँ बाल्डर तम्मूज की देवता कहा जाता था जबकि उसकी प्रभावहीन पत्नी नाना का नाम सुमेरी मातृदेवी' के रूप में अब तक प्रचलित था।

(३) पश्चिमी ससार के आन्तरिक सर्वहारा

आन्तरिक सवहारा के सर्वेक्षण की समाप्ति करते हुए हम उस क्षेत्र का परीक्षण कर रहे ह जो हमारे घर के निकट है। क्या पश्चिम के इतिहास में वे ही लक्षण पुन दिखाई देते है। जब हम पश्चिम के आन्तरिक सवहारा के अस्तित्व का प्रमाण खोजते ह, तब हम प्रचुर प्रमाणो के सवेग से आविभूत हो जात ह।

हम पहले देख चुके ह कि आन्तरिक सवहारा का एक सामान्य उद्गम प्रचुर परिणाम में हमारे पश्चिमी समाज से नये रगरूटो की भरती है। पिछले चार सौ वर्षों में, कम-से-कम दस विघटोन्मुख सभ्यताओ की मानवीय शक्तिया का पश्चिमी समाज में बलात् विलयन किया गया है। हमारे पश्चिमी आन्तरिक सवहारा को मिलाने में उनका इतना मानवीकरण हो गया है

१ तम्मूज—*बबिलोनिया का सूय देवता जो यूनानियों में एडोनिस के नाम से विख्यात है।*
—अनुवादक

कि उनकी विशिष्टताएँ धूमिल हो गयी है, कुछ तो नष्ट हो गयी हैं जिनके द्वारा यह अनमिल समुदाय एक-दूसरे से भिन्न था। हमारा समाज अपने ही समान सभ्य समाज का लूटने में सन्तुष्ट नही हुआ। इसने करीब करीब सभी आदिम जीवित समाजा को पराजित किया जैसे टास-मेनियन तथा उत्तरी अमेरिका के अधिकाश इडियन कबीले। उनमें से कुछ इस आघात से नष्ट हो गये। दूसरी जातियो ने, जसे उष्णकटिबधीय अफ्रीका के नेग्रो, जीवित रहने की व्यवस्था की और नाइजर को हडसन की ओर तथा कागो को मिसीसीपी की ओर वैसे ही बहने दिया जसे उन्ही पश्चिमी दानवा ने मागटसी को मलक्का[1] जलडमरूमध्य की ओर बहने दिया। नेग्रो दासो को जहाजो में बठाकर अमरीका में तथा तमिल या चीनी कुलिया को भूमध्यरेखीय क्षेत्र या हिन्द महासागर की दूसरी ओर लाया गया। ये तमिल तथा चीनी कुली उन दासो के प्रतिमूर्ति थे जिन्हें ईसा के पूव की दो शतिया में भूमध्य सागर के सभी तटा से लेकर रामन इटली के क्षेत्रो में भेज दिया गया था।

हमारे पश्चिमी आन्तरिक सर्वहारा में अनिवाय भरती किये जाने वाले विदेशिया का एक और अश है। जिनका निर्मूलन तथा आमूल रूप से परिवतन भौतिक रूप से उनके अन्य स्थानो से हटाये बिना आध्यात्मिक रूप से किया गया। किसी भी समुदाय का जो अपने जीवन को विदेशी सभ्यता के अनुरूप बनाने का प्रयत्न कर रहा हो एक विशेष सामाजिक वग की आवश्यकता हाती है जो ट्रासफामर की भाँति विद्युत के एक वोल्टज से दूसरे वोल्टेज में परिवर्तित हो सके। यह वग जो अचानक तथा कृत्रिम रूप से इस आवश्यकता की पूर्ति करने के लिए आता है रूसी नाम 'बुद्धिजीवी वग के नाम से कहा जाता है। यह बुद्धिजीवी वग एक प्रकार का सम्पक अधिकारियो का वग है जिसने सभ्यताओ के प्रवेश करने की युक्ति यहा तक सीखी है कि जिस सभ्यता में प्रवेश किया जाय वे अपने सामाजिक जीवन का छोडकर प्रवेश करने वाली सभ्यता के जीवन के अनुरूप उसे बना दें। इस प्रकार उन विदेशियो पर जो विजयी सभ्यता अधिक स अधिक अपनी सभ्यता लाद देता है।

इस बुद्धिजीवी वग में पहले प्रवेश करने वाले सैनिक तथा नाविक अधिकारी थे। ये प्रभावशाली समाज के युद्ध-कौशल को उतना जानते थे जितना रूस के पीटर महान को पश्चिमी स्वाडन द्वारा पराजित होन से रोकने तथा बाद के युगो में तुर्की और जापान को रूस द्वारा पराजित होने से रोकने के लिए आवश्यक था। इस समय तक आक्रामक का जीवन-यापन आरम्भ करन में स्वत समथ होने के लिए रूस का स तापप्रद रूप से पश्चिमीकरण हो गया था। अब हम कूटनीतिक लोगो पर आते हैं जो पश्चिमी सरकारा के समझौता के अनुसार व्यवहार करना जानते ह, जा युद्ध में असफल होने के बाद उनके समुदाय पर लाग जाता है। हम देख चुके ह कि उसमानली राजवश के लागो न अपनी रियाया को राजनीतिक काय के लिए तब तक भरती किया, जब तक उसमानली वग स्वय इस अरुचिपूण काय में प्रवीण न हुए। इसके बाद व्यापारी आते ह हाग सौदागरा का कण्टन मे और भूमध्यमागर के पूर्वी किनारे के तथा ग्रीक और अमरीकी

[1] रोमन लेखक जुवनल ने अपने समय में (ईसा के बाद की दूसरी शती का आरम्भ) अद्ध हेलेनो कृत सीरियाई पूर्वी लोगा के रोम में अन्त प्रवेश को लिखा है कि 'ओरोन्टस टाइबर में मिल चुकी है।

सौदागरो को उसमानिया बादशाह के साम्राज्य में देखिए। अन्ततो गत्वा बुद्धिजीवी वग अपने चरित्रगत विशेषताओ को उस समाज में विकसित करता है जिसके सामाजिक जीवन में पश्चिमी करणवाद का खमीर' और विषाणु गम्भीर रूप से प्रभाव करता रहता है। वह समाज आत्मसात् तथा लिप्त हो जाने की प्रणाली में रहता है। ये बुद्धिजीवी वग के लोग ह, अध्यापक जो पश्चिमी विषयो के पढाने की कला जानते हैं, नागरिक अधिकारी जो पश्चिम के अनुसार नागरिक प्रशासन की कला का अभ्यास करते हैं तथा वकील जिन्हें फास की न्याय काय प्रणाली के अनुसार 'नेपोलियन कोड' के सस्करण लागू करने की दक्षता प्राप्त है।

जहाँ कही हम बुद्धिजीवी वग को पाते ह, हम निष्कष निकाल सकते ह कि केवल दो सभ्यताएँ ही सम्पक में नही आती, किन्तु दो में से एक अपने विरोधी आन्तरिक सवहारा में आत्मसात् होने की प्रणाली में ह। हम बुद्धिजीवी वग के जीवन में एक दूसरे तथ्य का और निरीक्षण कर सकते हैं जो प्रत्येक बुद्धिजीवी के मुखमण्डल पर सबके पढने के लिए अकित रहता है कि बुद्धिजीवी दुखी रहने के लिए ही पदा हुआ है।

यह सम्पक वग ऐसा वणसकर है, जन्मजात दु ख के रोग से पीडित है, जो उन दोनो परिवारो से बहिष्कृत रहता है, जिनसे उनका जन्म हुआ है। बुद्धिजीवी वग अपनी ही जनता द्वारा घणित एव तिरस्कृत किया जाता है क्योकि बुद्धिजीवी वग का अस्तित्व ही उनके लिए भत्सनापूण होता है। उनके बीच ये बुद्धिजीवी वग घणाभरी विदेशी सभ्यता के अटल एव जीवित स्मारक ह। इस विदेशी सभ्यता को हटा नही सकते, इसलिए उसे प्रसन्न किया जाता है। जब फरीसी पबलिकन से मिलता है तो प्रत्येक बार उसे यह स्मरण दिलाया जाता है जीलाट प्रत्येक बार हिरोडियन से मिलता है तो उसे स्मरण दिलाया जाता है। इस प्रकार बुद्धिजीवी अपने घर में ही लोगा को प्रसन्न नही करते। उसे उस देश में भी सम्मान नही दिया जाता जिसके रीति रिवाज तथा कौशल को परिश्रम और बुद्धिमत्ता से उसने नकल की है।[१] भारत और इग्लैण्ड के ऐतिहासिक सम्पक के आरम्भिक दिनो में वे हिन्दू बुद्धिजीवी अग्रेजो के उपहास के पात्र थे, जिनको ब्रिटिश राज्य ने अपनी प्रशासनिक सहूलियत के लिए पाला था। भारतीय बाबुओ का जितना अधिक अधिकार अग्रेजी भाषा पर होता था उतना ही अधिक अग्रेज साहब बाबुओ की भाषा में अनिवाय रूप से आयी बेमेल गलतियो पर व्यग्यपूण हँसी हँसते थे। ये व्यग्य मधुर होते हुए भी चोट पहुँचाते थे। इस प्रकार बुद्धिजीवी दोहरे रूप में हमारे सवहारा की परिभाषा के अनुकूल होता है। यह सवहारा केवल एक समाज में नही दोनो समाजो में' होते ह उन समाजो के नही होते। बुद्धिजीवी वग अपने इतिहास के प्रथम अध्याय में यह अनुभव करते हुए स्वय सान्त्वना दे सकता है कि हम दोनो समाजो के अनिवाय अग ह, जबकि जसे-जसे समय बीतता जाता है उसे सान्त्वना भी नही मिलती। जहाँ मानव स्वय व्यापारिक वस्तु है और समय पाकर बुद्धिजीवी मानव अधिक उत्पादन तथा बेकारी से पीडित होते ह वहाँ माँग और पूर्ति की व्यवस्था मनुष्य की बुद्धि से परे है।

१ कदाचित पाठकों को याद होगा कि १९३९–४० ई० के विश्वयुद्ध के समय राजनीतिक जीव को 'देश-द्रोही' शब्द से थी टवायनबी ने वणन किया था, उसी के सामाजिक रूप से समानान्तर 'बुद्धिजीवी' शब्द का प्रयोग किया गया है।

पीटर महान् को अनेक रूसी उच्च पदाधिकारियों की या ईस्ट इण्डिया कम्पनी को अनेक क्लर्कों की या मुहम्मद अली को अनेक मिस्री मिल मजदूरों और जहाज बनाने वाले कारीगरों की आवश्यकता थी। इन कुम्हारों (पीटर महान्, मुहम्मद अली, तथा ईस्ट इण्डिया कम्पनी) ने मानवी मिट्टी में ही तुरत उनके (उच्च पदाधिकारी, क्लर्क और मजदूर आदि) निर्माता का काय आरम्भ किया किन्तु बुद्धिजीवी के निर्माण की प्रणाली का अन्त होना उसके आरम्भ होने से अधिक कठिन है, क्योंकि घृणा से वे उस सम्पर्क वाले वर्ग को देखते हैं जो उनकी सेवाओं से लाभान्वित होता है। उनकी दृष्टि में इस घृणा की क्षतिपूर्ति उनकी उस प्रतिष्ठा द्वारा होती थी जो उन्हें सम्पर्क वर्ग में भरती होने के अधिकारी होने में प्राप्त होती थी। इन प्रार्थियों की संख्या अवसर के अनुसार बढ़ती जाती है। नियुक्त हुए बुद्धिजीवी से उस बौद्धिक सर्वहारा की संख्या अधिक होती है जो बेकार अनाथ तथा बहिष्कृत है। ये थोड़े से रूसी उच्च पदाधिकारी क्रान्तिकारियों (निहिलिस्टों) की अपार संख्या द्वारा पुनः शक्तिशाली बनाये जाते हैं और काम चलाने वाले बाबुओं की संख्या बी० ए० फेल लोगों से बढ़ाई जाती है। बुद्धिजीवी वर्ग में आपस की कटुता आरम्भिक अवस्थाओं की अपेक्षा बाद की अवस्थाओं में अधिक होती है। वास्तव में हम इस प्रकार का एक सामाजिक कानून बना सकते हैं कि अंकगणितीय अनुपात में बढ़ते हुए समय के साथ बुद्धिजीवी वर्ग में जन्मजात अप्रसन्नता ज्यामितीय अनुपात में बढ़ती जाती है। १९१७ की विध्वंसात्मक रूसी क्रान्ति में बुद्धिजीवी वर्ग ने बहुत दिनों से एकत्र हुई उस घृणा को प्रकट किया, जिसका आरम्भ ईसा की १७ वीं शती में हुआ था। जिसका आरम्भ १८ वीं शती के अंतिम भाग में हुआ था वह बंगाली बुद्धिजीवी वर्ग आज भी उस हिंसात्मक क्रान्ति की मनोवृत्ति का प्रदर्शन करता है, जिसे ब्रिटिश भारत के दूसरे भागों में नहीं देखा जा सकता। इन भागों में ५० या १०० वर्षों बाद भी स्थानीय बुद्धिजीवी अस्तित्व में नहीं आये।

यह सामाजिक विकार वहीं तक सीमित नहीं थी जिसमें यह उगी थी यह बाद में पश्चिमी संसार के हृदय में अर्द्धपश्चिमी रूप में दिखाई दी। इस निम्न मध्यम वर्ग ने माध्यमिक शिक्षा ही नहीं, उच्च शिक्षा भी ग्रहण की थी। यह वर्ग बिना अपनी प्रशिक्षित योग्यता प्रदर्शित किये इटली में फासिस्ट दल और जर्मनी में राष्ट्रीय समाजवादी दल का मेरुदण्ड था। वे दबी संचालक शक्तियाँ जिन्होंने मुसोलिनी और हिटलर को शक्ति के लिए उत्तेजित किया था बुद्धिजीवी सर्वहारा के आक्रोश से यह जानकर पैदा हुई थी कि आत्मसुधार के कष्टपूर्ण प्रयत्न स्वतः उन्हें संगठित पूंजी तथा संगठित श्रम की चक्की के ऊपर तथा नीचे के पाटों के बीच से बचाने में पर्याप्त नहीं थे।

वास्तव में पश्चिमी समाज के स्थानीय गठनों से पश्चिमी आन्तरिक सर्वहारा का संवर्द्धन देखने के लिए वर्तमान शती तक हमें राह नहीं देखना होगा क्योंकि पश्चिमी तथा हेलेनी संसार में ये सर्वहारा लोग केवल पराभूत विदेशी लोग नहीं थे जिनका जड़ से उन्मूलन कर दिया गया था। १६ वीं तथा १७ वीं शती के धर्मयुद्धों ने उन प्रत्येक देश से कैथोलिकों को निकाल दिया या उन्हें कष्ट दिया जहाँ शक्ति प्रोटेस्टेंटों के हाथ में थी तथा जहाँ शक्ति कैथोलिकों के हाथ में थी वहाँ से प्रोटेस्टेंट निकाले गये या दण्डित हुए। इसीलिए फ्रांस के प्रोटेस्टेंट (हिंगुनोट) उत्तराधिकारी प्रशा से लेकर दक्षिण अफ्रीका तक फैले हुए हैं और आयरलैण्ड के कैथोलिकों के उत्तराधिकारी आस्ट्रिया से चीली तक फैले हैं। यह राग थकान की शान्ति और उस मानव

वेस्टफालिया के द्वारा नहीं समाप्त हुआ जिसका आरम्भ धार्मिक युद्धों में हुआ था। फ्रांस की राज्यक्रान्ति से और उसके बाद धार्मिक विद्वेष ने राजनीतिक मतान्तरों के आरम्भ के लिए प्रेरणा दी और नये विरोधी दल निर्मित हुए। ये विरोधी १७८९ में फ्रांस के क्रान्ति १८४८ के यूरोपीय उपद्रवों १९१७ के रूसी क्रान्ति १९२२ तथा १९२३ में जर्मन तथा इटालियन प्रजातान्त्रिक, १९३२ में आस्ट्रिया के राजनीतिक और स्पेनी तथा १९३९ से ४५ तक के युद्ध में निखार हुए लाखों लोग हैं।

पुनः हम देखते हैं कि मध्यकाल में देखते हैं कि इटली तथा सिसिली में किस प्रकार स्वतन्त्र जनता को कृषि की व्यवस्था में आर्थिक क्रान्ति द्वारा ग्रामों से निर्मूल करके नगरों में और भगाया गया। दासों के उपनिवेशों के द्वारा जीविका के लिए छोटे पैमाने पर मिश्रित खेती की पुनःस्थापना की गया। यह पुनःस्थापना विशिष्ट खेती की वस्तुओं के सामूहिक उत्पादन के स्थान पर हुई। अपने आधुनिक पाश्चात्य इतिहास में प्राय हम ठीक ऐसा ही सामाजिक संकट उस ग्रामीण आर्थिक क्रान्ति में पाते हैं जिसमें नीग्रो दास स्वतन्त्र श्वेत अमरीकी संघ में कपास के क्षेत्र में लाये गये थे। ये श्वेत काश्तकार जिनका भाग इस प्रकार सर्वहारा की श्रेणी तक हो गया, रोमन इटली के अधिकार भ्रष्ट एवं दरिद्र स्वतन्त्र काश्तकारों के समान थे। उत्तरी अमरीका में इस ग्रामीण आर्थिक क्रान्ति का प्रसार की भाँति दोहरा विकास नाइजीरिया के दासों एवं स्वतन्त्र भिखारियों के रूप में हुआ। यही ग्रामीण आर्थिक क्रान्ति शीघ्र और क्रूर ढंग से उत्तरी अमरीका में ग्रामीण आर्थिक क्रान्ति के रूप में हुई। इस क्रान्ति का विस्तार तीन शतियों तक अंग्रेजी इतिहास में था। अंग्रेजों ने दासों का प्रयोग नहीं किया किन्तु उन्होंने रोमवालों का अनुकरण किया और अमरीकी किसानों तथा ढोर पालने वालों की पहले से ही कल्पना की और स्वतन्त्र किसानों को निर्मूल करके उनके खेतों तथा चरागाहों के स्थान पर कुछ धनवानों के लिए बाड़ बनवाए। पश्चिमी संसार में गाँवों से नगरों की ओर जनसंख्या के जाने का मुख्य कारण कोई आर्थिक क्रान्ति नहीं थी। इसके पीछे मुख्य प्रेरणा किसानों के छोटे खेतों को बड़े कृषि क्षेत्रों में बदलने की नहीं थी बल्कि भाप से चलने वाली मशीनों के द्वारा हस्त-कौशल को हटा करके नागरिक औद्योगिक क्रान्ति को आगे बढ़ाने में थी।

करीब १५० वर्ष पहले जब पश्चिमी औद्योगिक क्रान्ति पहली बार इंग्लैण्ड में फली तब इसकी उपयोगिता इतनी विस्तृत दिखाई दी कि इस परिवर्तन का प्रगतिशील लोगों ने उत्साह के द्वारा स्वागत किया तथा इसे आशीर्वाद दिया। यद्यपि बच्चों और औरतों का कारखानों में मजदूरों की प्रथम पीढ़ी का लम्बे घण्टों से पीड़ित होने का विरोध किया गया, औद्योगिक क्रान्ति के प्रशंसकों ने इन मजदूरों के घर तथा कारखानों की हीन दशा को वह क्षणिक बुराई कहा जो दूर की जा सकती है और दूर की जायेगी। यह भाग्य की विडम्बना का प्रतिफल है कि यह सुन्दर भविष्यवाणी विस्तृत रूप से सत्य निकली, किन्तु उतने ही विश्वास के साथ धरती को स्वर्ग बनाने का आशीर्वाद उस अभिशाप द्वारा निष्फल हो गया जो एक शती पहले आशावादियों तथा निराशावादियों की आँखों में समान रूप से छिपा था।[1] एक ओर बाल श्रम समाप्त किया

१ मकाले के निबन्ध 'सदेज कालोक्विज' (१८३०) में आशावाद और निराशावाद की सम रूप से प्रतिष्ठित व्याख्या मिलती है।—संपादक

गया। स्त्रियों का श्रम उनकी शक्ति के अनुसार निर्धारित हुआ। श्रमिकों के घण्टे कम किये गये। सभी मान्यताओं के अनुसार भी घरों मे तथा कारखानों में जीवन की दशाएँ सुधारी गयी जिन्हें हम पहचान भी नहीं सकते। औद्योगिक मशीनों के जादू के द्वारा सम्पत्ति आयी। इसी समय यह संसार बेकारी के भूतों से निष्प्रभ भी हुआ। प्रत्येक बार नागरिक सर्वहारा अपना 'बेकारी का अनुदान' पाता है और उसे याद दिलाया जाता है कि वह समाज 'में' है, समाज 'का' नहीं है।

अनेक स्रोतों में से यह दिखाया गया है कि किस प्रकार हमारे आधुनिक पश्चिमी संसार में आन्तरिक सर्वहारा की भरती की गयी। अब हमें विचार करना है कि यहाँ भी, जिस प्रकार और देशों में, हिंसा और अहिंसा के दो विशिष्ट गुण अपने पश्चिमी आन्तरिक सर्वहारा की कठिन परीक्षा की प्रतिक्रिया में दिखाई देते हैं और यदि दोनों विशेषताएँ देखी जायें तो इन दोनों में कौन प्रबल होगी ?

अपने पश्चिमी संसार के निम्नस्तरीय लोगों में सत्यवादी प्रवृत्ति तुरन्त दिखाई देती है। अंतिम १५० वर्षों की रक्तरंजित क्रान्ति की गणना करना आवश्यक है। जब हम उसके विपरीत अहिंसात्मक भावनाओं का प्रमाण खोजते हैं तब दुख के साथ कहना पड़ता है कि इसके सम्बन्ध में कोई भी सकेत नहीं मिलता। यह सत्य है कि इस अध्याय के आरम्भिक अनुच्छेद में लिखित अन्याय से पीड़ित धार्मिक या राजनीतिक उत्पीड़ित या निष्कासित अफ्रीकी दासों, उजड़े किसानों ने पहली पीढ़ी में नहीं तो दूसरी पीढ़ी में अनुकूल परिस्थिति में अपनी अवस्था को सुधार लिया था। यह हमारी सभ्यता की यौवनशील प्रवृत्ति का उदाहरण हो सकता है, किन्तु हमारी खोजों पर इसका प्रभाव नहीं है। यह सर्वहारा वर्ग की समस्या का समाधान है कि हिंसात्मक तथा अहिंसात्मक प्रवृत्तियों को न चुनकर, सर्वहारा वर्ग से ही निकल भागे। आधुनिक पश्चिम में अहिंसात्मक सामना करने वालों में अपनी खोज में हम अंग्रेजी क्वेकर[1] और डच मेननाइट[2] में और मोराविया में जर्मनी के ऐनाबाप्टिस्ट[3] शरणार्थी पाते हैं। ये दुर्लभ नमूने हमसे छूट गये थे। क्योंकि हम देखेंगे कि ये सर्वहारा न हो सके।

इंगलिश सोसायटी आव फ्रेण्ड्स के जीवन की प्रथम पीढ़ी में हिंसात्मक प्रवृत्ति का कुछ प्रभाव इंग्लैंड तथा मसाचुसेट्स में दिखाई पड़ा। यह हिंसात्मक प्रवृत्ति भविष्यवाणियों में तथा चर्च में पूजा के समय मर्यादाविहीन शोरगुल में अभिव्यक्त हुआ। किसी प्रकार यह हिंसा शीघ्र ही और स्थायी रूप से उस शिष्टता द्वारा हटा दी गयी जो क्वेकर के जीवन का खास अंग बन गयी। ऐसा जान पड़ा कुछ समय के लिए सोसायटी आव फ्रेण्ड्स पश्चिमी संसार में आरम्भिक ईसाई धर्मतन्त्र की भूमिका अदा कर सकता है, जिसकी भावना तथा व्यवहार ईसा के शिष्यों के धार्मिक कानून के रूप में दिया गया है उसी के अनुसार उन्होंने (क्वेकर, एनाबाप्टिस्ट आदि) ईसाई धर्म की आध्यात्मिकता तथा धार्मिक कृत्यों पर अपने जीवन का निर्माण किया।

१ सोसायटी आव फ्रेंडस के सदस्य जो शान्ति और सरलता के उपासक थे।—अनुवादक।

२ एक प्रकार के प्रोटेस्टेंट जो क्वेकरों के समान थे।—अनुवादक

३ जिसका दो बार बपतिस्मा हो।—अनुवादक

किन्तु ये मित्र अहिंसा के नियमों से कभी नहीं हटे और सर्वहारा के प्रतिकूल रास्ते पर दृढ़ होकर चलते रहे। एक प्रकार अपने गुणों के ही शिकार हुए। यह कहा जा सकता है कि विश्व में उन्होंने भौतिक उन्नति प्राप्त की क्योंकि व्यापार में उनकी सफलता उनके उन महान् निश्चयों में देखी जाती है जिसे वे लाभ के लिए नहीं, वरन् आन्तरिक प्रेरणा से करते हैं। भौतिक उन्नति के मंदिर की अनिच्छित तीर्थयात्रा का प्रथम चरण बिना सोचे-समझे तब उठा, जब ये ग्रामों से नगरों की ओर आये। नागरिक लाभों के प्रलोभनों से नहीं, वरन् यही एक सत्य राह एपिसकोपलियन[1] चर्च को अपनी आय का दसवाँ भाग कर देने से बच सकें और इस टैक्स के वसूल करने वालों का शक्तिपूर्वक विरोध कर सकें। उसके बाद जब क्वेकर मोची बनाने लगे क्योंकि वे नशे का विरोध करते थे उन्होंने फुटकर दुकानदारी के सामानों पर उनके निश्चित दामों का उल्लेख कराया क्योंकि वे बाजार के उतार चढ़ाव में मूल्यों की अस्थिरता नहीं चाहते थे। वे जान बूझकर अपने धार्मिक विश्वास के लिए सम्पत्ति को जोखिम में डाल रहे थे। इसके फलस्वरूप उन्होंने इस कथन की सत्यता प्रमाणित की 'ईमानदारी सबसे अच्छी नीति है' और इस स्वर्गिक आनन्द का उद्घाटन किया कि विनम्र धरती का शासन करेंगे। इन्हीं संकेतों के द्वारा उन्होंने अपने विश्वासों को सर्वहारा के धर्मों की सूची से हटाया। ये ईसा के अनुकरणीय शिष्यों के समान नहीं थे। ये अब भी उत्साही धर्मावलम्बी नहीं थे। ये चुने लोग बने रहे यदि क्वेकर अपनी श्रेणी से अलग विवाह करते तो नियमानुसार उन्हें समाज का सदस्य नहीं होने दिया जाता था।

एनाबाप्टिस्ट के दोनों दलों का इतिहास यद्यपि अनेक दृष्टियों से क्वेकरों से भिन्न है, एक दृष्टि से उनमें समानता है। इसी से यहाँ मेरा सम्बन्ध है। हिंसा के आरम्भ होने के बाद जब उन्होंने अहिंसा के नियमों का पालन किया तब वे शीघ्र ही सर्वहारा नहीं रह गये।

पश्चिमी सर्वहारा के अनुभव पर प्रकाश डालने वाले नये धर्म के सम्बन्ध में हमारा अन्वेषण अभी कोरा है। हमें स्मरण रहे कि चीनी आन्तरिक सर्वहारा ने महायान के रूप में नया धर्म पाया था। अनजाने में ही यह महायान पिछले बौद्ध दर्शन का परिवर्तित रूप था। मार्क्सवादी साम्यवाद में हम अपने आधुनिक पश्चिमी दर्शन के बीच एक कुख्यात प्रमाण पाते हैं। यह आधुनिक पश्चिमी दर्शन अपने जीवनकाल में एकदम प्रच्छन्न रूप से सर्वहारा के धर्म में बदल लिया गया। ऐसा करने में हिंसा का मार्ग ग्रहण किया गया और नये जरुसलेम की रचना रूस के धरातल पर बलपूर्वक तलवार के जोर से हुई।

यदि कार्ल मार्क्स से अपने आध्यात्मिक नामकरण तथा पता देने के लिए कुछ विक्टोरियन सेंसर अधिकारियों द्वारा माँग की गयी होती तो उसने अपने को आर्थिक तथा राजनीतिक क्षेत्रों में हिगेल के द्वन्द्ववाद का प्रयोग करने वाला हिगेल का शिष्य बताया होता, किन्तु जिन तत्त्वों ने साम्यवाद का निर्माण विस्फोटक शक्ति के रूप में किया वे हिगल की सृष्टि नहीं थे। इन तत्त्वों पर स्पष्ट रूप से पश्चिम के पूर्वजों के धार्मिक विश्वास का प्रमाण अंकित है। यह धार्मिक विश्वास उस ईसाई धर्म का है, जिसे डेकार्ट[2] की धार्मिक चुनौती के तीन सौ वर्षों बाद भी पश्चिम

१ वह ईसाइयों का धर्मतन्त्र जिसमें बिशप द्वारा शासन हो।—अनुवादक

२ १५९६–१६५० फ्रांस का दार्शनिक।—अनुवादक

का प्रत्येक बालक अपनी माता के दूध के साथ ही ग्रहण करता है और पश्चिम के प्रत्येक स्त्री तथा पुरुष में श्वास के रूप में प्रवाहित है। इन तत्वो का पता यदि ईसाई धम म कही लग सकता तो यहूदी धम में लगाया जा सकता है। ये तत्व ईसाई धम के अवशिष्ट रूप हैं जो यहूदी डस्पोरा द्वारा सुरक्षित रखे गये थ। ये अवशिष्ट यहूदिया के गैटो[1] के स्थापन तथा मावस के पूवजो की पीढी में पश्चिमी यहूदियो की मुक्ति की भावना द्वारा भाप की भांति उडा दिये गये। मावस ने अपने देवी देवताओ के लिए जेहोवा के स्थान पर 'ऐतिहासिक आवश्यकता' नामक देवी को ग्रहण किया। अपनी चुनी हुई जनता के लिए यहूदिया के स्थान पर पश्चिमी ससार के आ तरिक सवहारा को स्वीकार किया था। अपने 'मसीहाई राज्य' को सवहारा की तानाशाही के रूप में सोचा। यहूदिया के ईश्वर ज्ञान का प्रमुख लक्षण इसके पीछे स्पष्ट रूप में दिखाई देता है।

ऐसा मालूम होता है कि यह धार्मिक रूप साम्यवाद के विकास में अस्थायी होगा। ऐसा जान पडता है कि स्टालिन के अनुदार राष्ट्रीय साम्यवाद ने पूणरूप से ट्राटस्की के सावभौम क्रातिकारी साम्यवाद को पराजित कर दिया। सोवियत सघ अब बहिष्कृत ससार नही है। निकोल्स या पीटर के समय जसा रूसी साम्राज्य था, वैसा ही रूस पुन हो गया। आदर्शो की अपेक्षा किये बिना रूस ने महान् शक्ति के रूप में अपन मित्र और शत्रु का चुनाव राष्ट्रीयता के आधार पर किया। यदि रूस 'दाहिने' मुड चुका है तो उसके पडोसी बायें। जमनी का राष्ट्रीय समाजवाद और इटली का फासिस्ट आरम्भ में तडक भडक दिखाकर केवल समाप्त ही नही हुआ, वरन् उसके प्रत्यक्ष रूप स प्रजातान्त्रिक देशो की असगठित अथव्यवस्था की योजना पर अबाधित अतिक्रमण किया। इन प्रजातान्त्रिक देशा ने सुझाव दिया कि निकट भविष्य में सभी देशा की सामाजिक बनावट सम्भवत राष्ट्रीय और समाजवादी दोनो होगी। पूजीवादी तथा साम्यवादी शासन एक साथ जारी रहते सम्भवत नही दिखाई देते। यह हो सकता है कि पूजीवाद तथा साम्यवाद एक वस्तु के ही दो भिन्न नाम हो जसा टलेरण्ड के व्यग्यात्मक कथन के अनुसार हस्तक्षेप और अहस्तक्षेप एक ही बात थी। यदि ऐसा है तो हमारा निश्चय है कि साम्यवाद का जो उन्नति क्रातिकारी सवहारा के धार्मिक रूप में हुई थी उससे साम्यवाद वचित हो गया। इसम पहली बात यह है कि मानव मात्र के कल्याण के बजाय यह स्थानीय राष्ट्रीयता रह गयी। दूसरी बात यह कि उसने अपने समकालीन विश्व के दूसर राज्यो को लगभग मानव बनकर आत्मसात् कर लिया है।

मेरी इस खोज का निष्कष यह मालूम होता है कि आ तरिक सवहारा मे नये रगरूटो की भरती के प्रमाण कम-से-कम उतने ही प्रचुर ह जितने हमारे पश्चिमी ससार के आधुनिक इतिहास में ह या जितने किसी भी सभ्यता के इतिहास में ह। जहां तक सवहारा के सावभौम धमतन्त्र की स्थापना का प्रश्न है, हमारे पश्चिम में पश्चिमी इतिहास में एक भी प्रमाण नहीं है। यहां तक कि किसी प्रभावशाली सवहारा का उत्थान भी नही दिखाई देता, जिसने उच्चतर धम की नीव रखी हो। इस तथ्य का निरूपण कसे किया जाय।

१ नगर में यहूदियों के रहने का महल्ला।—अनुवादक

किन्तु ये मित्र अहिंसा के नियमा से कभी नही हटे और सवहारा के प्रतिकूल रास्ते पर दढ होकर चलते रहे। एक प्रकार अपने गुणा के ही शिकार हुए। यह कहा जा सकता है कि विश्व में उन्हाने भौतिक उन्नति प्राप्त की क्योकि व्यापार में उनकी सफलता उनके उन महान् निश्चयो में देखी जाती है जिसे वे लाभ के लिए नही, वरन् आतरिक प्रेरणा से करते है। भौतिक उन्नति के मंदिर की अनिच्छित तीथयात्रा का प्रथम चरण बिना सोचे-समझे तब उठा, जब ये ग्रामा से नगरो की ओर आये। नागरिक लाभो के प्रलोभना से नही, वरन् यही एक सत्य राह एपिसकोपलियन[1] चच को अपनी आय का दसवाँ भाग कर देने से बच सकें और इस टैक्स के वसूल करने वाला का शक्तिपूवक विरोध कर सके। उसके बाद जब क्वेकर कोको बनाने लगे क्याकि वे नदा का विराध करते थे उन्होने फुटकर दुकानदारो के सामानो पर उनके निश्चित दामो का उल्लख कराया क्योकि वे बाजार के उतार-चढाव में मूल्यो की अस्थिरता नही चाहते थे। वे जान बूझकर अपने धार्मिक विश्वास के लिए सम्पत्ति को जोखिम में डाल रहे थे। इसके फलस्वरूप उन्होन इस कथन की सत्यता प्रमाणित की ईमानदारी सबसे अच्छी नीति है' और इस स्वर्गिक आनन्द का उद्घाटन किया कि विनम्र धरती का शासन करगे। इन्ही सकेतो के द्वारा उन्होने अपने विश्वासो को सवहारा के धर्मों की सूची से हटाया। ये ईसा के अनुकरणीय शिष्यो के समान नही थे। ये अब भी उत्साही धर्मावलम्बी नही थे। ये चुने लोग बने रहे यदि क्वकर अपनी श्रेणी से अलग विवाह करते तो नियमानुसार उन्हें समाज का सदस्य नही होन दिया जाता था।

एनाबाप्टिस्ट के दोनो दलो का इतिहास यद्यपि अनेक दष्टियो से क्वकरो से भिन्न है, एक दृष्टि से उनमें समानता है। इसी से यहाँ मेरा सम्बन्ध है। हिंसा के आरम्भ होने के बाद जब उन्हाने अहिंसा के नियमा का पालन किया तब वे शीघ्र ही सवहारा नही रह गये।

पश्चिमी सवहारा के अनुभव पर प्रकाश डालन वाल नये धम के सम्बन्ध में हमारा अन्वपण अभी कोरा है। हमें स्मरण रहे कि चीनी आन्तरिक सवहारा ने महायान के रूप में नया धम पाया था। अनजान में ही यह महायान पिछले बौद्ध दशन का परिवर्तित रूप था। मार्क्सवादी साम्यवाद में हम अपन आधुनिक पश्चिमी दशन के बीच एक कुख्यात प्रमाण पाते है। यह आधुनिक पश्चिमी दशन अपने जीवनकाल में एकदम प्रच्छन्न रूप से सवहारा के धम में बदल लिया गया। ऐसा करने में हिंसा का माग ग्रहण किया गया और नये जरुसलेम की रचना रूस के धरातल पर बलपूवक तलवार के जोर से हुई।

यदि काल मार्क्स से अपने आध्यात्मिक नामकरण तथा पता देने के लिए कुछ विक्टोरियन सेंसर अधिकारियो द्वारा माँग की गयी होती तो उसने अपन को आर्थिक तथा राजनीतिक क्षेत्रा में हिगेल के द्वन्द्ववाद का प्रयोग करने वाला हिगल का शिष्य बताया होता किन्तु जिन तत्त्वा ने साम्यवाद का निर्माण विस्फोटक शक्ति क रूप में किया वे हिगल की सृष्टि नही थ। इन तत्त्वा पर स्पष्ट रूप स पश्चिम के पूवजा के धार्मिक विश्वास का प्रमाण अकित है। यह धार्मिक विश्वास उस ईसाई धम का है जिसे डकार्टे[2] की धार्मिक चुनौती के तीन सौ वर्षों बाद भी पश्चिम

१ यह ईसाइयों का धमतन्त्र जिसमें बिशप द्वारा शासन हो।—अनुवादक

२ १५६६–१६५० फ्रांस का दार्शनिक।—अनुवादक

का प्रत्यक बालक अपनी माता के दूध के साथ ही ग्रहण करता है और पश्चिम के प्रत्येक स्त्री तथा पुरुष में स्वास के रूप में प्रवाहित है। इन तत्त्वो का पता यदि ईसाई धम में कही लग सकता तो यहूदी धम में लगाया जा सकता है। ये तत्त्व ईसाई धम के अवशिष्ट रूप हैं जो यहूदी डस्पोरा द्वारा सुरक्षित रखे गये थे। ये अवशिष्ट यहूदियो के गेटो[1] के स्थापन तथा मार्क्स के पूवजो का पीढी में पश्चिमी यहूदियो की मुक्ति की भावना द्वारा भाप की भाँति उडा दिये गय। मार्क्स ने अपने देवी देवताओ के लिए जेहोवा के स्थान पर 'ऐतिहासिक आवश्यकता' नामक देवी को ग्रहण किया। अपनी चुनी हुई जनता के लिए यहूदियो के स्थान पर पश्चिमी ससार के आन्तरिक सवहारा को स्वीकार किया था। अपने 'मसीहाई राज्य' को सवहारा की तानाशाही के रूप में सोचा। यहूदियो के ईश्वर नान का प्रमुख लक्षण इसके पीछे स्पष्ट रूप में दिखाई देता है।

ऐसा मालूम होता है कि यह धार्मिक रूप साम्यवाद के विकास में अस्थायी होगा। ऐसा जान पडता है कि स्टालिन के अनुसार राष्ट्रीय साम्यवाद ने पूणरूप से ट्राट्स्की के सावभौम क्रांतिकारी साम्यवाद को पराजित कर दिया। सोवियत सघ अब बहिष्कृत ससार नहीं है। निकोलस या पीटर के समय जसा रूसी साम्राज्य था, वसा ही रूस पुन हो गया। आदर्शों की अपेक्षा किये बिना रूस न महान् शक्ति क रूप में अपने मित्र और शत्रु का चुनाव राष्ट्रीयता के आधार पर किया। यदि रूस 'दाहिने मुड' चुका है तो उसक पडोसी 'बायें'। जमनी का राष्ट्रीय समाजवाद और इटली का फासिज्म आरम्भ में तडक भडक दिखाकर केवल समाप्त ही नही हुआ, वरन् उसके प्रत्यक्ष रूप स प्रजातांत्रिक देशा को असगठित अथव्यवस्था की योजना पर अबाधित अतिक्रमण किया। इन प्रजातान्त्रिक देशा न सुझाव दिया कि निकट भविष्य में सभी देशो की सामाजिक बनावट सम्भवत राष्ट्रीय और समाजवादी होगी। पूजीवादी तथा साम्यवादी शासन एक साथ जारी रहते सम्भवत नहीं दिखाई देते। यह हो सकता है कि पूजीवाद तथा साम्यवाद एक वस्तु के ही दो भिन्न नाम हो जसा टल्रण्ड के व्यग्यात्मक कथन के अनुसार हस्तक्षेप और अहस्तक्षेप एक ही बात थी। यदि ऐसा है तो हमारा निश्चय है कि साम्यवाद की जो उन्नति क्रांतिकारी सवहारा के धार्मिक रूप में हुई थी उससे साम्यवाद वचित हो गया। इसमें पहली बात यह है कि मानव मात्र के कल्याण के बजाय यह स्थानीय राष्ट्रीयता रह गयी। दूसरी बात यह कि उसने अपने समकालीन विश्व के दूसरे राज्यों को लगभग मानक बनकर आत्मसात् कर लिया है।

मेरी इस खोज का निष्कष यह मालूम होता है कि आन्तरिक सवहारा में नये रगरूटो की भरती के प्रमाण कम-से-कम उतने ही प्रचुर है जितने हमारे पश्चिमी ससार के आधुनिक इतिहास में है या जितने किसी भी सभ्यता के इतिहास में हैं। जहाँ तक सावभौम धमतन्त्र की स्थापना का प्रश्न है हमारे पश्चिम में, पश्चिमी इतिहास में इसका प्रमाण नही है। यहाँ तक कि किसी प्रभावशाली सवहारा का उत्थान भी नहीं दिखाई दिया, जिसने उच्चतर धम की नीव रखी हो। इस तथ्य का निरूपण कसे किया जाय।

१ नगर में यहूदियों के रहने का महल्ला।—अनुवादक

शाखाओ में व्यक्त रूप से प्रवाहित हुआ। इस दृश्य से ऐसा ज्ञात होता है कि इन सबके बाद पश्चिमी इतिहास का अगला अध्याय कदाचित् हेलेनी इतिहास के अंतिम अध्याय का अनुसरण नहा कर सकता। नष्ट हुई तथा विघटित सभ्यता के अवशिष्ट विरासत पाये लोगो की भाँति हम आतरिक सवहारा की जोती गयी धरती से उत्पन्न नये ईसाई धम का सिंहावलोकन करने के स्थान पर उस सभ्यता का अध्ययन करेंगे जिसने अपने पैतक धमतत्र के उन्ही हाथा सुरक्षित होने की सभावना समझी। जिसे उसने दूर रखने की असफल चेष्टा की। इस क्रिया में भौतिकता पर दिखावटी विजय के नशे में लडखडाती हुई सभ्यता ने आध्यात्मिक उन्नति के लिए दूसरे की सम्पत्ति (धम) ईश्वर की ओर *ध्यान किये बिना अपने ही लिए रख ली। उसे उस* अपराध से मुक्त किया जा सकता है, जो उसने अपने ऊपर आरोपित किया—अर्थात् कोरोस यूबरीस ऐथ का माग। हेलेनी भाषा में त्यागा पश्चिमी ईसाई समाज सावभौम ईसाई समाज के रूप में फिर से जन्म ले जो उसका पहले का तथा उत्तम आदश था।

क्या ऐसा आध्यात्मिक पुनजन्म सम्भव है? यदि म निकाडेमस का प्रश्न प्रस्तुत करूँ कि क्या एक मनुष्य दूसरी बार पुन माता के गभ में जा सकता है और पदा हो सकता है, तो उसके प्रशिक्षक का ही उत्तर दिया जा सकता है कि म तुमसे सत्य कहता हूँ कि वह मनुष्य जो आध्यात्मिक जल स नही पदा होता, वह ईश्वर के राज्य मे प्रवेश नही कर सकता।[1]

(४) बाहरी सवहारा

आतरिक सवहारा के समान बाहरी सवहारा भी शक्तिशाली पतित सभ्यता के अलग होने स उत्पन्न होता है। जिससे अलगाव होता है वह भेद स्पष्ट है। आतरिक सवहारा शक्तिशाली अल्पसख्यक के साथ भौगोलिक दृष्टि से आपस मे मिलते रहते ह, जिनसे नतिक *खाई द्वारा यह विभाजित हो जाते ह। बाहरी सवहारा न केवल नतिक दृष्टि से परिवर्तित* किया जाता है वरन् शक्तिशाली अल्पसख्यक द्वारा भौतिक रूप से सीमाओ म विभाजित किया जाता है। यह सीमा मानचित्र पर देखी जा सकती है।

यह सीमा ही वास्तव में वह स्पष्ट चिह्न है जिसस यह विभाजन होता है। जब तक सभ्यता विकासोन्मुख रहती है उसके अग्रभाग के अतिरिक्त उसकी कोई निश्चित सीमा नहीं रहती। जहाँ वह दूसरी सभ्यता और उसकी जातियो से टकराती है। दो या अधिक सभ्यताओ की ऐसी टक्कर एसा आभास उत्पन्न करती ह जिसके परीक्षण का अवसर हमें इस अध्ययन के अंतिम भाग में मिलेगा।[2] किंतु इस समय हम इस पर विचार करना छोड देंगे और अपना ध्यान उस स्थिति पर हो केंद्रित करेंगे जिसमें सभ्यता का पडोसी दूसरा सभ्यता नहीं है बल्कि आदिम जातियो का समाज है। इस परिस्थिति में हम देखेंगे कि जब तक सभ्यता विकासोन्मुख रहती है उसकी सीमाएँ अस्पष्ट रहती ह। हम विकासोन्मुख सभ्यता के विकास तथा उसकी विकास यात्रा की प्रणाली पर आने को केंद्रित करें और बाहर की ओर चलें तो कभी-न-कभी हम एक

१ जान ३, ४-५

२ उस खण्ड में जो अवतक अप्रकाशित ह।

वातावरण में पहुँच जायेंगे जो निश्चित रूप से आदिम ह। ऐसी यात्रा में कही भी हम एक रेखा खाच कर नहा कह सकते कि "यहा सभ्यता समाप्त होती है और हम आदिम समाज में प्रविष्ट होते ह।"

वस्तुत जब एक क्रियाशील अल्पसख्यक सभ्यता क विकास के जीवन म अपने कत्तव्य का निर्वाह करता है और एक ऐसी चिनगारी प्रज्ज्वलित करता है जो घर की सभा वस्तुआ को प्रकाशित करने के लिए दीपक जलाती है, तब इस ज्योति की किरणें बाहर भी जाती ह। ये घर की दीवारा से बडी नही बनायी जा सकती। क्याकि वास्तव म कोई दीवार है नहा और बाहरा पडासिया से प्रकाश छिप नही सकता। स्वभावत प्रकाश तब तक चमकता रहता है, जब तक वह लोप बिन्दु (वर्निशिग पाइट) पर नहीं पहुँच जाता। इसका क्रम सूक्ष्म है। गाधूली की धुधली कहा समाप्त होती है और अधकार कहा स आरम्भ होता है इसकी विभाजन रेखा खीचना असम्भव है। वस्तुत विकासोमुख मभ्यताआ क विकिरण की सचालक शक्ति इतनी महान् है कि बहुत पहले ही कम-से-कम कुछ अशा में वह शक्ति जीवित आदिम समाजा की सम्पूर्ण व्यवस्था में व्याप्त होने में सफल हो चुकी है। यद्यपि सभ्यताए सापेक्ष रूप से मानव की अत्यत आधुनिक उपलब्धि ह। कही भी एसे आरम्भिक समाज की खाज करना असम्भव हागा जो किसी एक या दूसरी सभ्यता के प्रभाव से पूर्णत मुक्त हो। उदाहरणाथ १९३५ में पापुआ[1] (ब्रिटिश न्यूगियाना द्वीप का दक्षिणा पूर्वी भाग) के आन्तरिक भाग म एक ऐसे समाज की खोज हुई जो पहले पूर्ण रूप स अज्ञात था। यह समाज सघन खती की वह तकनीक जानता था जा किसी अज्ञात काल म किसी अज्ञात सभ्यता से अवश्य सीखी गयी हागी।

आदिम समाजा का जो कुछ शेष है उससे हम जब इस विशेष स्थिति का निरीक्षण करत हैं तब हमें आदिम समाज क प्रभाव की व्यापकता सभा सभ्यताआ में दिखाई पडती है। दूसरी ओर यदि हम एक सभ्यता की दृष्टि से इसका निरीक्षण करें तो हम इस तथ्य द्वारा शक्तिशाली ढग स प्रभावित हुए बिना नही रहते कि जसे ही क्षेत्र बढता जाता है वसे ही प्रभाव की शक्ति का विकिरण कम होता जाता है। जब हम उस सिक्के पर हेलेनी कला के प्रभाव को देखकर अपने आश्चय का समाप्त करते ह जा ईसा के पूर्व की अंतिम शती में ब्रिटेन में ढाला गया था अथवा युग की प्रथम शती म अफगानिस्तान के कब्र की तराशी शव पटी को देखते ह तब पता चलता है कि ब्रिटिश सिक्का मसेडानिया का व्यग्य चित्र है और अफगानिस्तान का वह शव पेटी व्यापारी कला का नकली उत्पादन है। उच्च कोटि की अनुकृति भी उपहास की वस्तु हा जाती है। अनुकृति का आह्वान आकषण स हाता है। इसे क्रम से अनक सजनात्मक अल्पसख्यक काम में लाते ह। उसस केवल यहा नही कि घर में विभाजन स रक्षा हानी है अपने पडासिया द्वारा आक्रमण स रक्षा होना है, जहा तक यह आदिम समाज पडासी ह। सजनशील अल्पसख्यक के क्रमिक अनुगमन द्वारा ही यह आकषण सभ्यता के विकास में दिखाई दता है। जब कभी विकासोमुख सभ्यता आदिम समाजो के सम्पक में आती है तब उसका सजनशील अल्पसख्यक उनकी अनुकृति का आकृष्ट करता है, साथ ही असजनशील बहुसख्यक वग की

१ दि टाइम्स, १४ अगस्त १९३६, और पापुअन वडर लण्ड जे० जी० हाइडस।

शाखाओ में व्यक्त रूप से प्रवाहित हुआ । इस दृश्य से ऐसा ज्ञात होता है कि इन सबके बाद पश्चिमी इतिहास का अगला अध्याय कदापि हेलेनी इतिहास के अंतिम अध्याय का अनुसरण नही कर सकता । नष्ट हुई तथा विघटित सभ्यता के अवशिष्ट विरागी पाये जाते थे भाँति हम आन्तरिक सवहारा की जानी गयी धरती से उत्पन्न नय ईसाई धर्म का सिहावलोकन करने के स्थान पर उस सभ्यता का अध्ययन करेंगे जिसने अपने पतृक धर्मतन्त्र के उदय होने का गुणित होने की सभावना समझी । जिस उसने दूर रखने की असफल चेष्टा की । इस क्रिया में भौतिकता पर दिखावटी विजय के नशे में लड़खड़ाती हुई सभ्यता ने आध्यात्मिक उन्नति के लिए दूसरे की सम्पत्ति (धर्म) ईश्वर की ओर ध्यान किये बिना अपने ही लिए रख ली । उस उस अपराध से मुक्त किया जा सकता है, जो उसने अपने ऊपर आरोपित किया—अर्थात आराम यूवरीस ऐथ का मार्ग । हेलेनी भाषा में, त्यागी पश्चिमी ईसाई समाज सार्वभौम ईसाई समाज के रूप में फिर से जन्म ले जो उसका पहले का तथा उत्तम आदर्श था ।

क्या ऐसा आध्यात्मिक पुनर्जन्म सम्भव है ? यदि हम निकोडेमस का प्रश्न प्रस्तुत करें कि क्या एक मनुष्य दूसरी बार पुन माता के गर्भ में जा सकता है और पैदा हो सकता है, तो उसके प्रशिक्षक का ही उत्तर दिया जा सकता है कि *मैं तुमसे सत्य कहता हूँ कि वह मनुष्य जो आध्यात्मिक जल से नही पैदा होता, वह ईश्वर के राज्य में प्रवेश नही कर सकता ।*[1]

(४) बाहरी सर्वहारा

आन्तरिक सर्वहारा के समान बाहरी सर्वहारा भी शक्तिशाली पतित सभ्यता के अलग होने से उत्पन्न होता है । जिसस अलगाव होता है वह भेद स्पष्ट है । आन्तरिक सर्वहारा शक्तिशाली अल्पसंख्यक के साथ भौगोलिक दृष्टि से आपस में मिलते रहते है, जिनसे नैतिक खाइ द्वारा यह विभाजित हो जाते है । बाहरी सर्वहारा न केवल नैतिक दृष्टि से परिवर्तित किया जाता है, वरन् शक्तिशाली अल्पसंख्यक द्वारा भौतिक रूप से सीमाओ में विभाजित किया जाता है । यह सीमा मानचित्र पर देखी जा सकती है ।

यह सीमा ही वास्तव में वह स्पष्ट चिह्न है जिससे यह विभाजन होता है । जब तक सभ्यता विकासोन्मुख रहती है उसके अग्रभाग के अतिरिक्त उसकी कोई निश्चित सीमा नही रहती । जहाँ वह दूसरी सभ्यता और उसकी जातियो से टकराती है । दो या अधिक सभ्यताओ की ऐसी टक्करे ऐसा आभास उत्पन्न करती है जिसके परीक्षण का अवसर हमें इस अध्ययन के अंतिम भाग में मिलेगा ।[2] किन्तु इस समय हम इस पर विचार करना छोड़ देंगे और अपना ध्यान उस स्थिति पर ही केन्द्रित करेंगे जिसमें सभ्यता का पडोसी दूसरी सभ्यता नही है, बल्कि आदिम जातियो का समाज है । इस परिस्थिति में हम देखेंगे कि जब तक सभ्यता विकासोन्मुख रहती है उसकी सीमाएँ अस्पष्ट रहती है । हम विकासोन्मुख सभ्यता के विकास तथा उसकी विकास यात्रा की प्रणाली पर अपने को केन्द्रित करें और बाहर की ओर चलें तो कभी न कभी हम ऐसे

१ जान ३, ४–५

२ उस खण्ड में जो अब तक अप्रकाशित है ।

वातावरण में पहुँच जायेंगे जो निश्चित रूप से आदिम है। ऐसी यात्रा में कही भी हम एक रेखा खोच कर नही कह सकते कि "यहाँ सभ्यता समाप्त होती है और हम आदिम समाज में प्रविष्ट होते है।'

वस्तुत जब एक क्रियाशील अल्पसख्यक सभ्यता के विकास के जीवन में अपने कर्तव्य का निर्वाह करता है और एक ऐसी चिनगारी प्रज्वलित करता है जो घर की सभी वस्तुओ को प्रकाशित करने के लिए दीपक जलाती है तब इस ज्योति की किरणें बाहर भी जाती है। ये घर की दीवारो से बडी नही बनायी जा सकती। क्योकि वास्तव में कोई दीवार है नही और बाहरी पडोसियो से प्रकाश छिप नही सकता। स्वभावत प्रकाश तब तक चमकता रहता है, जब तक वह लोप बिन्दु (वर्निशिंग पाइंट) पर नही पहुँच जाता। इसका क्रम सूक्ष्म है। गोधूली की धुधली कहा समाप्त होती है और अधकार कहा से आरम्भ होता है इसकी विभाजन रेखा खीचना असम्भव है। वस्तुत विकासोन्मुख सभ्यताओ के विकिरण की सचालक शक्ति इतनी महान् है कि बहुत पहले हो, कम-से कम कुछ अशो में, वह शक्ति जीवित आदिम समाजो की सम्पूर्ण व्यवस्था में व्याप्त होने मे सफल हो चुकी है। यद्यपि सभ्यताए सापेक्ष रूप से मानव की अत्यन्त आधुनिक उपलब्धि है। वहा भी ऐसे आरम्भिक समाज की खोज करना असम्भव होगा जो किसी एक या दूसरी सभ्यता के प्रभाव से पूर्णत मुक्त हो। उदाहरणार्थ १९३५ में पापुआ[1] (ब्रिटिश न्यूगियाना द्वीप का दक्षिणी पूर्वी भाग) के आन्तरिक भाग में एक ऐसे समाज की खोज हुई जो पहले पूर्ण रूप से अज्ञात था। यह समाज सघन खेती को वह तकनीक जानता था जो किसी अज्ञात काल मे किसी अज्ञात सभ्यता से अवश्य सीखी गयी होगी।

आदिम समाजो को जो कुछ शेष है उससे हम जब इस विशेष स्थिति का निरीक्षण करते है तब हम आदिम समाज के प्रभाव की व्यापकता सभी सभ्यताओ मे दिखाई पडती है। दूसरी ओर यदि हम एक सभ्यता की दृष्टि से इसका निरीक्षण करें तो हम इस तथ्य द्वारा शक्तिशाली ढग से प्रभावित हुए बिना नही रहते कि जैसे ही क्षेत्र बढता जाता है वैसे ही प्रभाव की शक्ति का विकिरण कम होता जाता है। जब हम उस सिक्के पर हेलेनी कला के प्रभाव को देखकर अपने आश्चर्य को समाप्त करते है जो ईसा के पूर्व की अन्तिम शती में ब्रिटेन में ढाला गया था अथवा युग की प्रथम शती में अफगानिस्तान के कब्र की तराशी शव पेटी को देखते है तब पता चलता है कि ब्रिटिश सिक्का मसेडोनिया का व्यग्य चित्र है और अफगानिस्तान की वह शव पेटी व्यापारी कला का नकली उत्पादन है। उच्च कोटि की अनुकृति भी उपहास की वस्तु हो जाती है। अनुकृति का आह्वान आकर्षण से होता है। इसे क्रम से अनेक सजनात्मक अल्पसख्यक काम में लाते है। उससे केवल यही नही कि घर में विभाजन से रक्षा होता है अपने पडोसियो द्वारा आक्रमण से रक्षा होती है जहा तक यह आदिम समाज पडोसी है। सजनशील अल्पसख्यक के क्रमिक अनुगमन द्वारा ही यह आकर्षण सभ्यता के विकास में दिखाई देता है। जब कभी विकासोन्मुख सभ्यता आदिम समाजो के सम्पर्क में आती है, तब उसका सजनशील अल्पसख्यक उनकी अनुकृति को आकृष्ट करता है साथ ही असजनशील बहुसख्यक वर्ग को

1 दि टाइम्स, १४ अगस्त १९३६, और पापुअन वडरलण्ड जे० जी० हाइड्स।

अनुकृति को भी आकृष्ट करता है। किन्तु, यदि चारो ओर के आदिम समाजो और सभ्यता के बीच यह सामान्य सम्बन्ध तब तक है, जब तक सभ्यता विकासोन्मुख रहती है। तब उस समय महत्त्वपूर्ण परिवर्तन होता है, जब सभ्यता का पतन होता है, तब वह विघटित हो जाती है। सजनशील अल्पसख्यक ने आकर्षण द्वारा स्वेच्छा से राजभक्ति पायी है। सजनशील अल्पसख्यक ने अपने से भक्ति प्राप्त की है क्योंकि उनमें सृजनात्मकता है, शक्तिशाली बहुसख्यक में सृजनशीलता नही है इसलिए उस शक्ति का सहारा लेना पडता है। इनके चारो ओर के आदिम समाज के लोगो पर आकर्षण नही होता, वे अलग कर दिए जाते हैं। विकासोन्मुख सभ्यता के ये सरल अनुयायियो ने शिष्यता का परित्याग कर दिया और ये वे बन गये जिन्हें बाहरी सर्वहारा कहा जाता है। ये विघटित सभ्यता 'में' होते हैं कभी उस 'के' नही होते।[1]

किसी सभ्यता के विकिरण का विश्लेषण तीन तत्त्वो में हो सकता है, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक। जब तक समाज विकास की अवस्था में होता है ये तीनो तत्त्व समान शक्ति से विकीर्ण होते हुए समान आकर्षक मालूम होते हैं। मैं यह बात भौतिक दृष्टि से नही, वरन् मानवी दृष्टि से कर रहा हूँ। किन्तु सभ्यता का विकास ज्यो ही बन्द हो जाता है उसकी संस्कृति का आकर्षण भाप की भाँति उड जाता है। उसकी आर्थिक और राजनीतिक विकिरण की शक्तियाँ वास्तव में पहले की अपेक्षा अधिक तेजी से विकसित होती हैं। यह विकास अर्थ, युद्ध और राक्षस के बनावटी धर्मों के सफलतापूर्वक संवर्धन के लिए होता है जो पतनोन्मुख सभ्यताओ के विशिष्ट लक्षण हैं। किन्तु सांस्कृतिक तत्त्व सभ्यता का सार है और आर्थिक तथा राजनीतिक तत्त्व अपेक्षित रूप से उस जीवन की नगण्य अभिव्यक्ति है जो उनमें है। ऐसा मालूम होता है कि आर्थिक और राजनीतिक विकिरण की अत्यधिक प्रदर्शनीय विजय अपूर्ण तथा खतरनाक है।

यदि हम आदिम जनता की दृष्टि से इस परिवर्तन पर ध्यान दें तो हम पूर्वोक्त सत्य की ही अभिव्यक्ति करेंगे कि पतित सभ्यता की शक्ति की कला की उनकी अनुकृति समाप्त हो जाती है किन्तु वे उसके सुधारो तथा उनकी प्राविधिक युक्तियो की नकल करना जारी रखते हैं। ये उद्योग धन्धे युद्ध और राजनीति में उनकी नकल करते हैं इसलिए नही कि वे उनके साथ एक हो सकें, वरन् इसलिए कि उनकी हिंसा के विरुद्ध वे अपनी रक्षा प्रभावशाली ढंग से कर सकें क्योंकि यही अब उनका विशिष्ट गुण हो जाता है।

आन्तरिक सर्वहारा की प्रतिक्रियाओ और अनुभवो के पहले सर्वेक्षण में हमने देखा है कि किस प्रकार हिंसा के मार्ग ने उन्हें आकृष्ट किया तथा किस प्रकार इस आकर्षण के कारण अपने विनाश को पहुँचे। थियूडास और जूडास ऐसे लोग अवश्य ही तलवार से नष्ट हुए। जब वे नम्रता के पैगम्बर का अनुसरण करते हैं तभी आन्तरिक सर्वहारा अपने विजेताओ को बन्दी बना पाते हैं। यदि बाहरी सर्वहारा हिंसा की प्रतिक्रिया करना चाहता है तो वह ऐसा नही

१ जब हम इस 'में' कहते हैं, तब हमारा तात्पर्य भौगोलिक दृष्टि से नहीं होता। बाहरी कहे जाने पर भी स्पष्ट रूप से वे बाहर नहीं होते, वरन 'उनमें' ही तब तक रहते हैं, जब तक वे स्वेच्छा से सक्रिय सम्बन्ध की स्थिति में रहना जारी रखते हैं।

कर सकता। सम्पूर्ण आन्तरिक सर्वहारा शक्तिशाली अल्पसंख्यक के निकट ही रहता है। किसी सीमा तक बाहरी सर्वहारा शक्तिशाली अल्पसंख्यक की सैनिक क्रिया के प्रभाव क्षेत्र से बाहर रहता है। अब जो संघर्ष होता है उसका परिणाम यह है कि पतित सभ्यता अनुकृतियों को नहीं आकृष्ट करती, शक्ति का विकिरण करती है। इस परिस्थिति में बाहरी सर्वहारा के निकटतम सदस्य सम्भवत जीत लिये जाते हैं और आन्तरिक सर्वहारा में उन्हें शामिल किया जाता है। किन्तु एक समय ऐसा आता है, जब शक्तिशाली अल्पसंख्यक की सैनिक शक्ति उनके सम्पर्कों की अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ हो जाती है।

जब यह अवस्था आती है तब सभ्यता और उसके बर्बर पड़ोसियों के बीच परिवर्तन क्रिया पूरी होकर सम्पर्क स्थापित हो जाता है। जब तक एक सभ्यता विकासोन्मुख अवस्था में ही रहती है तब तक वह अपनी पूरी शक्ति से व्याप्त रहती है और उसका घर छिपा रहता है। और उस पर असभ्यों का आक्रमण नहीं होता क्योंकि दोनों के बीच एक दीवार होती है जहाँ जहाँ सभ्यता क्रमश क्षीण होते-होते असभ्यता में बदल जाती है। दूसरी ओर जब सभ्यता पतित हो जाती है और उसमें भेद पैदा हो जाता है, और जब शक्तिशाली अल्पसंख्यक तथा बाहरी सर्वहारा के बीच का लगातार संघर्ष समाप्त हो जाता है और ये युद्ध की खाई में सुव्यवस्थित हो जाती है, तब हमें अन्तस्थ क्षेत्र अदृश्य हो जाता है। सभ्यता से बर्बरता की ओर भौगोलिक परिवर्तन कभी धीरे धीरे नहीं होता, वरन् अचानक होता है। इन दोनों प्रकारों के सम्पर्कों के विरोध तथा सम्बन्ध को पूर्ण रूप से व्यक्त करने वाला लैटिन शब्द 'लिमेन' (अवसीमा) या अंग्रेजी शब्द थ्रेशहोल्ड (देहली) है। यह पहले एक क्षेत्र था जो अब सैनिक सीमा द्वारा बन गया है। जिसमें लम्बाई है पर चौड़ाई नहीं। इस रेखा के पार पराजित शक्तिशाली अल्पसंख्यक और अपराजित बाहरी सर्वहारा शस्त्रों द्वारा एक-दूसरे का सामना करते हैं। यह सैनिक मोर्चा सैनिक तकनीक को छोड़कर सभी सामाजिक विकिरण को रोकता है। इस सैनिक तकनीक का तात्पर्य सामाजिक आदान प्रदान की उन वस्तुओं से है जो शान्ति के लिए नहीं, वरन् उनके युद्ध के लिए बनायी जाती है, जिनके बीच इन वस्तुओं का आदान प्रदान होता है।

यह सामाजिक आभास तब होता है, जब युद्ध सैनिक मोर्चे की 'अवसीमा' पर रुक जाता है। इस आभास पर हमारा ध्यान बाद में जायगा।[1] यहाँ इस मुख्य तथ्य का उल्लेख करना ही पर्याप्त होगा कि समयानुसार यह अस्थायी खतरनाक शक्ति का सन्तुलन अनिवार्य रूप से असभ्यों के पक्ष की ओर झुकता है।

एक हेलेनी दृष्टान्त

हेलेनी इतिहास के विकास की दशा अन्तस्थ क्षेत्र तथा अवसीमा के अनेक दृष्टान्तों से सम्पन्न है जो विकासोन्मुख सभ्यता के घर में बहुत मिलते हैं। यूरोप महाद्वीप में यूनान का सार थरमोपिली के उत्तर अर्ध हेलेनी थेसली में, डेलफी के पश्चिम अर्ध-हेलेनी एतालिया में मिल गया है। अर्द्ध हेलेनीवाद, थ्रेस तथा इलीरिया की पूर्ण बर्बरता से पूर्ण रूप से ढँक लिया

१ उस खण्ड में, जो अब तक प्रकाशित नहीं है।

गया। पुन एशिया माइनर की ओर, एशिया के तट के ग्रीक नगरो के निकट प्रदेशो में हल्नी वाद का ह्रास हो गया है। ये नगर करिया, लीडिया और फ्राइजिया ह। एशिया की इस सीमा पर हेलेनीवाद को अपने बबर विजेताओ को बन्दी बनाते हुए हम देख सकते ह। यह इतना शक्तिशाली था कि ईसा से पूव छठी शती के द्वितीय चतुर्थांश में लीडिया की राजनीति में यूनान प्रेमियो तथा यूनान से डरने वाला का पहली बार युद्ध सामन आया। जब लीडिया के राज्य का यूनान प्रेमी महत्त्वाकाक्षी पन्टालिओन अपने सौतेले भाई क्रीसस द्वारा पराजित किया गया, तब हेलेनी विरोधी दल का नेता हल्नी पक्ष के ज्वार के विरुद्ध तरने में ऐसा नपुसक सिद्ध हुआ कि वह हेल्नी तीर्थों का उदार सरक्षक बन गया, जिस प्रकार वह हल्नी भविष्यवक्ताओ की सलाह में विश्वास करता था।

समुद्रपार की पष्ठभूमि में शान्तिपूण सम्बन्धा तथा धीरे धीरे परिवतन के नियम जान पडते है। हेलनीवाद शीघ्रता से इटली के महान् ग्रीस मैगना ग्राइसिया की पष्ठभूमि में फला। रोम के प्रारम्भिक विस्तत साहित्य मे अफलातून के शिष्य हेराक्लीडीस पान्टिक्स के हाथो की कृति का अवशेष है, जिसमे यह लैटिन' राष्टमण्डल हलेना नगर के नाम से वर्णित है।

इस प्रकार हलेनी ससार की सभी सीमाओ पर अपने विकास की अवस्था म ओरफ्यूिज की सुन्दर आकृति हमे दिखाई देती है। यह ओरफ्यूिज चारो ओर के बबर लोगा पर प्रभाव डालता हुआ और उन्हें अपन जादू भरे सगीत को पुन सुनने के लिए अनुप्राणित करता हुआ दिखाई देता है। अपने अनगढ बाजे के जादूभरे सगीत से वह अपनी पितृभूमि की पष्ठभूमि के आदिम मानव को अनुप्राणित करता मालूम पडता है। किन्तु हलेनी सभ्यता के पतन पर उसी क्षण इस प्रबन्ध गीत का स्वर चित्र नष्ट हो जाता है। जिस क्षण सगीत की लय कक्श ध्वनि मे बदलती है मोहित श्रोता (असभ्य लोग) एकाएक तन्द्रा से जागते दिखाई देत ह और अपने निदय रूप मे पुन लौट आते ह। वे दुष्ट असनिका के विरुद्ध प्रबल वेग से कूद पडते ह जो सदल ईशदूतो के परदे के बाहर आते ह।

हेलेनी सभ्यता के पतन के लिए बाहरी सवहारा की सनिक प्रतिक्रिया महान ग्रास म अत्यन्त हिंसात्मक और प्रभावशाली थी। वहा ब्रूटिया और लुकानिया के लोगा न ग्रीक नगरा पर आक्रमण किया और एक के बाद दूसरे पर कब्जा किया। ईसा पूव ४३१ स सौ वर्षों तक के युद्ध का आरम्भ हलनी लोगा के लिए महान् दोपा का आरम्भ था। महान् ग्रीस के सम्पन्न प्रारम्भिक समुदाया में स कुछ जीवित रह गये। इन्हें समुद्र की ओर भगाये जाने से सुरक्षा करने के लिए कुछ भाड के सनिका का अपनी मातृभूमि स बुलाया गया। यह सनिका का अव्यवस्थित प्रबलन (रि इनफोसमेंट) इटली क आदिम निवासिया के वेग को रोकने में पूरा असमथ हुआ क्योकि बबरो न मसिना का जलडमरूमध्य पार कर लिया था इसके पहले ही हलनी कृत रामन सगोत्री इटाल्यिाई आदिमवासिया क बीच-बचाव स सम्पूण आन्दोलन अचानक समाप्त कर दिया गया। रोमन राजममनता तथा उसकी सना न 'महान् ग्रीस' को ही नहा हल्नीवाद क लिए सारे इटली प्रायद्वीप का, आसन्ना पर पीछ से हमला करके बचा लिया और इटाल्यिाई बबरा तथा इटाल्यिाई यूनानिया, दोना में शान्ति स्थापित की।

इस प्रकार हेलेनीवाद और बबरता के बीच का दक्षिणी इटालियाई मोरचा नष्ट हो गया। इसके बाद रामन सनिका के चरणा ने हेलेनी शक्तिशाली अल्पसख्यक के साम्राज्य का विस्तार यूरोप महाद्वीप तथा उत्तर-पश्चिमी अफ्रीका में किया। ऐसा ही विस्तार एशिया म मेसडोनिया के सिकन्दर के द्वारा हो चुका था। इन सनिक विस्तारो का प्रभाव बबरो के विरोधिया के मोरचा को हटाना नही था, किन्तु उनका विस्तार करना तथा शक्ति के केन्द्र से दूर-दूर तक फलाना था। कई शतियों तक उन्हें स्थिर किया गया, किन्तु नियमानुसार समाज के विघटन की क्रिया चलती रही, जब तक कि अन्तिम रूप से बबरा ने आक्रमण कर दिया।

अब हम यह दखना चाहते ह कि हेलेनी शक्तिशाली अल्पसख्यक पर बाहरी सवहारा के दवाब की प्रतिक्रिया क्या रही ? अहिसक तथा हिंसक कोई भी प्रतिक्रिया का चिह्न दिखाई देता है ? और क्या बाहरी सवहारा में किसी प्रकार की रचनात्मक क्रियाशीलता थी ?

पहली ही दृष्टि में यह देखा जा सकता है कि हेलेनी स्थिति में इन दोना प्रश्नो का उत्तर नकारात्मक होगा। हम हेलेनी विरोधी बबरा का अनेक अवस्थाआ और परिस्थितियो मे निरीक्षण कर सकते ह। एरिओविसटस के रूप में सीजर द्वारा वह रणक्षेत्र से भगा दिया जाता है, आरमिनिअस के रूप में अगस्टस का सामना करता है, आडावसर के रूप मे वह रोमुलस अगस्टस स बदला लेता है। सभी युद्धा में जय, पराजय और बराबरी के तीन ही विकल्प ह। सभी विकल्पा में हिंसा का ही शासन होता है और सजनात्मक शक्ति मन्द पड जाती है। हमें यह देखकर और स्मरण करके उत्साह प्राप्त होता है कि आन्तरिक सवहारा भी अपनी आरम्भिक प्रतिक्रियाओ में ऐसी ही हिंसा और अनुवरता दिखाते हैं। अन्त में 'उच्चतर धम' एसे शक्तिशाली निर्माण में जो अहिंसा द्वारा अभिव्यक्त होता है, और सावभौम धम को सामान्य रूप में प्रमुखता प्राप्त करने के लिए, समय तथा कठोर श्रम दाना की आवश्यकता हाती है।

उदाहरणाथ, विभिन्न बबर गिरोहा के युद्धा में अहिंसा को भिन्न भिन्न मात्राआ में हम अनुभव करते ह। अध-अध हलनी विसिगाथ ऐलेरिक द्वारा रोम की ४१० ई० की बरबादी, उसी नगर की वाडलो और बबरो द्वारा की गयी जो ४५५ ई० की बरबादी से कम क्रूर थी। यह वह बरबादी थी जो रेडागाइसस (४०६ ई०) द्वारा हुई थी। अलारिक की सापेक्षित अहिंसा का सन्त आगस्टाइन ने वणन किया है

'क्रूर नृशसता इतनी हल्की दिखाई देती है कि विजेताआ ने चर्चों में विश्राम के लिए पर्याप्त अवसर दिया था। आज्ञा दी गयी थी कि इस पुण्यस्थली में किसी पर भी तलवार से प्रहार न हो और कोई भी बन्दी न बनाया जाय। वास्तव में कोमल हृदय शत्रुओ द्वारा अनेक ऐसे बन्दी इन चर्चों में लाय गये थे। किसी पर भी दास बनाने की गरज स क्रूर शत्रुआ ने अस्त्र स प्रहार नहीं किया।[१]

अलारिक के साले और उत्तराधिकारी अतावुल्फ से सम्बन्धित एक विचित्र प्रमाण और है

१ सत अगस्टाइन डि सिवाइटट डेइ, पुस्तक १, अध्याय ७।

गया। पुन एशिया माइनर की ओर, एशिया के तट के ग्रीक नगरो के निकट प्रदेशों में हलेनीवाद का ह्रास हो गया है। ये नगर करिया लीडिया और फ्राइजिया है। एशिया की इस सीमा पर हलेनीवाद को अपने बबर विजेताओ को बन्दी बनाते हुए हम देख सकते है। यह इतना शक्तिशाली था कि ईसा से पूव छठी शती के द्वितीय चतुर्थांश में लीडिया की राजनीति में यूनान प्रेमिया तथा यूनान से डरन वाला का पहली बार युद्ध सामने आया। जब लीडिया के राज्य का यूनान प्रेमी महत्त्वाकाक्षी पन्टालिओन अपने सौतेल भाई क्रीसस द्वारा पराजित किया गया, तब हलेनी विरोधी दल का नेता हलनी पक्ष के ज्वार के विरुद्ध तरने में एसा नपुसक सिद्ध हुआ कि वह हलनी तीर्थों का उदार सरक्षक बन गया, जिस प्रकार वह हलेनी भविष्यवक्ताओ की सलाह में विश्वास करता था।

समुद्रपार की पष्ठभूमि में शान्तिपूण सम्बन्धा तथा धीरे धीरे परिवतन के नियम जान पडते ह। हलेनीवाद शीघ्रता स इटली के महान् ग्रीस-मँगना ग्राइसिया की पष्ठभूमि में फला। रोम के प्रारम्भिक विस्तत साहित्य में अफलातून के शिष्य हराक्लीडीस पान्टिकस के हाथा की कृति का अवशेष है, जिसमें यह लटिन राष्ट्रमण्डल हलनी नगर के नाम से वर्णित है।

इस प्रकार हलेनी ससार की सभी सीमाओ पर अपन विकास की अवस्था में ओरफियूज की सुन्दर आकृति हमें दिखाई दती है। यह आरफियूज चारा ओर के बबर लागा पर प्रभाव डालता हुआ और उन्हें अपने जादू भरे सगीत को पुन सुनन के लिए अनुप्राणित करता हुआ दिखाई देता है। अपने अनगढ बाजे के जादूभर सगीत स वह अपनी पितृभूमि की पष्ठभूमि के आदिम मानव को अनुप्राणित करता मालूम पडता है। किन्तु हलनी सभ्यता के पतन पर उसी क्षण इस प्रबन्ध गीत का स्वर चित्र नष्ट हो जाता है। जिस क्षण सगीत की लय ककश ध्वनि में बदलती है मोहित श्रोता (असभ्य लोग) एकाएक तन्द्रा स जागत दिखाई देते ह और अपन निन्य रूप में पुन लौट आत ह। व दुष्ट असनिको के विरुद्ध प्रबल वग स कूद पडते ह जो सन्ल ईसाइना के परदे क बाहर आते ह।

हलनी सभ्यता के पतन के लिए बाहरी सवहारा की सनिक प्रतिक्रिया महान् ग्रीस में अत्यन्त हिंसात्मक और प्रभावशाली था। वहाँ ब्रूटिया और लूकानिया क लोगा न ग्रीक नगरो पर आक्रमण किया और एक क बाद दूसरे पर कब्जा किया। ईसा पूर्व ४३१ स सौ वर्षों तक क युद्ध का आरम्भ हलनी लोगा क लिए महान् दाषा का आरम्भ था। महान् ग्रीस क सम्पन्न प्रारम्भिक समुदायो में स कुछ जीवित रह गय। इन्हें समुद्र की ओर भगाए जाने स सुरक्षा करन क लिए कुछ भाड क सनिका को अपनी मातृभूमि स बुलाया गया। यह सैनिको का अव्यवस्थित प्रयत्न (रिइनफोर्समेंट) इटली क आदिम निवासियो क बग का रोकन में पूरा असमथ हुआ, क्योंकि बबरो न मसिना का जलडमरूमध्य पार कर लिया था इस पहल ही हलनी कृत रोमन सामाजिक इटालियाई आदिमवासियो क बाढ-प्रवाह स सम्पूर्ण आत्मरक्षा प्रयत्न समाप्त कर दिया गया। रोमन राजममज्ञा तथा उसका गता। 'महान् ग्रीस' का हो नहीं हलनीवाद क लिए सार इटली प्रायद्वीप की आगरिता पर था, स हलनी करक बचा लिया और इटालियाई बबरो तथा इटालियाई यूनानियो दोनो में शान्ति स्थापित की।

इस प्रकार हेलेनीवाद और बबरता के बीच का दक्षिणी इटालियाई मोरचा नष्ट हो गया। इसके बाद रोमन सैनिकों के चरणों ने हेलेनी शक्तिशाली अल्पसख्यक के साम्राज्य का विस्तार यूरोप महाद्वीप तथा उत्तर-पश्चिमी अफ्रीका में किया। ऐसा ही विस्तार एशिया में मेसेडोनिया के सिकन्दर के द्वारा हो चुका था। इन सैनिक विस्तारों का प्रभाव बबरों के विरोधियों के मोरचा को हटाना नहीं था, किन्तु उनका विस्तार करना तथा शक्ति के केन्द्र से दूर-दूर तक फैलाना था। कई शतियों तक उन्हें स्थिर किया गया, किन्तु नियमानुसार समाज के विघटन की क्रिया चलती रही जब तक कि अन्तिम रूप से बबरों ने आक्रमण कर दिया।

अब हम यह देखना चाहते हैं कि हेलेनी शक्तिशाली अल्पसख्यक पर बाहरी सवहारा के दबाव की प्रतिक्रिया क्या रही? अहिंसक तथा हिंसक कोई भी प्रतिक्रिया का चिह्न दिखाई देता है? और क्या बाहरी सवहारा में किसी प्रकार की रचनात्मक क्रियाशीलता थी?

पहली ही दृष्टि में यह देखा जा सकता है कि हेलेनी स्थिति में इन दोनों प्रश्नों का उत्तर नकारात्मक होगा। हम हेलेनी विरोधी बबरों का अनेक अवस्थाओं और परिस्थितियों में निरीक्षण कर सकते हैं। एरिओविस्टस के रूप में सीजर द्वारा वह रणक्षेत्र से भगा दिया जाता है आरमिनिअस के रूप में अगस्टस का सामना करता है, आडोवेसर के रूप में वह रोमुलस अगस्टस से बदला लेता है। सभी युद्धों में जय पराजय और बराबरी के तीन ही विकल्प हैं। सभी विकल्पों में हिंसा का ही शासन होता है और सृजनात्मक शक्ति मन्द पड़ जाती है। हमें यह देखकर और स्मरण करके उत्साह प्राप्त होता है कि आन्तरिक सवहारा भी अपनी आरम्भिक प्रतिक्रियाओं में ऐसी ही हिंसा और अनुवरता दिखाते हैं। अन्त में 'उच्चतर धर्म' ऐसे शक्तिशाली निर्माण में जो अहिंसा द्वारा अभिव्यक्त होता है और सार्वभौम धर्म को सामान्य रूप में प्रमुखता प्राप्त करने के लिए, समय तथा कठोर श्रम दोनों की आवश्यकता होती है।

उदाहरणार्थ, विभिन्न बबर गिरोहों के युद्धों में अहिंसा को भिन्न भिन्न मात्राओं में हम अनुभव करते हैं। अध-अध हलना विसिगाथ ऐलेरिक द्वारा रोम की ४१० ई० की बरबादी, उसी नगर की वाडलों और बबरों द्वारा की गयी जो ४५५ ई० की बरबादी से कम क्रूर थी। यह वह बरबादी थी जो रेडागाइसस (४०६ ई०) द्वारा हुई थी। अलारिक की सापेक्षित अहिंसा का सन्त आगस्टाइन ने वर्णन किया है

'क्रूर नृशंसता इतनी हल्की दिखाई देती है कि विजेताओं ने चर्चों में विश्राम के लिए पर्याप्त अवसर दिया था। आज्ञा दी गयी थी कि इस पुण्यस्थली में किसी पर भी तलवार से प्रहार न हो और कोई भी बन्दी न बनाया जाय। वास्तव में कोमल-हृदय शत्रुओं द्वारा अनेक ऐसे बन्दी इन चर्चों में लाये गये थे। किसी पर भी दास बनाने की गरज से क्रूर शत्रुओं ने अस्त्र से प्रहार नहीं किया।'[१]

अलारिक के साले और उत्तराधिकारी अतावुल्फ से सम्बन्धित एक विचित्र प्रमाण और है

१ सत अगस्टाइन डि सिवाइटेट डेइ, पुस्तक १, अध्याय ७।

जिसका उल्लेख आगस्टाइन के शिष्य ओरोसियस ने नरवोन के एक सज्जन के कथन के आधार पर किया था जो थियाडोसियस सम्राट् की सेना में काम करता था ।

'इस सज्जन ने हमसे कहा कि नारवोन में अतावुल्फ का मै घनिष्ठ मित्र हो गया हूँ । और उसने अनेक बार मुझसे कहा है—और इस गम्भीरता से मानो साक्षी दे रहे हो—अपने सम्बन्ध की कहानी, जो इस बबर की, जो उत्साह, शक्ति और सजीवता का उदाहरण है, जिह्वा पर सदा रहती है । अतावुल्फ की अपनी जीवन की कहानी के अनुसार रोम के नाम की सम्पूण स्मृति को मिटा देने की प्रबल इच्छा के साथ उसने अपना जीवन आरम्भ किया था । उसकी इच्छा सम्पूण रोमन राज्य को एसे साम्राज्य में बदलने की थी जो गाथा साम्राज्य में लीन हो जाय ।

समय पाकर अनुभव से उसे विश्वास हो गया कि एक ओर तो अपनी बबरता के कारण नियन्त्रित जीवन के लिए गोथ अनुपयुक्त हैं दूसरी ओर राज्य से कानून का शासन नष्ट करना अपराध होगा । जब कानून का शासन समाप्त हो जाता है, राज्य समाप्त हो जाता है । जब अतावुल्फ को सत्य का ज्ञान हो गया, तब उसने वैभव की प्राप्ति का प्रयत्न किया । यह ऐश्वय उसकी पहुँच में था । उसने सबके लिए रोमन नाम के पुन स्थापनाथ गोथो की शक्ति का प्रयोग किया । रोम के नाम की पुन स्थापना उसके लिए सबसे अधिक महत्त्वपूण थी ।'[१]

यह उद्धरण हेलेनी बाहरी सवहारा के लोकाचार में हिंसा से अहिंसा के परिवतन का प्रामाणिक दृष्टान्त है और उसके प्रकाश में हम आध्यात्मिक रचनात्मक शक्ति के तात्कालिक निश्चित लक्षण देख सकते हैं जिसने किसी प्रकार बबर आत्माओ की मौलिकता का आंशिक रूप से उद्धार किया था ।

उदाहरणाथ, स्वय अतावुल्फ अपने साले एलारिक के समान ईसाई थे, किन्तु उनकी ईसाइयत सन्त आगस्टाइन और कैथोलिक धमतन्त्र की ईसाइयत नही थी । यूरोप के मोरचे पर उस पीढी के बबर आक्रामक एरियन' लोग थे । सम्भवत वे बिल्कुल विधर्मी (पैगन) नही थे । यद्यपि उनका कैथोलिक धम में न होकर एरियन धम में परिवतन सयोग मात्र था । इस विधर्मी भावना की समाप्ति जान बूझकर हुई थी । इसके पश्चात् एरियन धम विशिष्ट चिह्न था जिसे जान-बूझकर धारण किया गया था । कभी-कभी अहकार के साथ इसका प्रदशन विजेता और विजित जनता म सामाजिक अन्तर दिखाने के लिए होता था । रोमन साम्राज्य के बहुसख्यक ट्यूटोनी उत्तराधिकारी राज्यो में से अधिकाश के एरियन धम दा शासनो के अन्तकाल के अधिक बडे भाग म जीवित रहा । यह समय ३७५ ई० – ६७५ ई० का था । पोप ग्रेगरी न, (५९० ई०–६०४ ई०) जो किसी एक आदमी की अपेक्षा पश्चिमी ईसाई साम्राज्य की नयी सभ्यता जो शून्य से निकली, के सस्थापक के मान जा सकते ह लोमबार्डी रानी थियोडेलिण्डा के कैथोलिक धम का परिवतन करके बबरा के इतिहास का एरियन अध्याय समाप्त किया । फ्राक कभी एरियन नही थे किन्तु विधर्मियो से सीधे कैथोलिक बनाये गये थे । एसा क्लोविस व रीमस (४९६ ई०) में ईसाई धम की दीक्षा के बाद हुआ था । विधर्मियो से कैथोलिक बनाया जाना दो शासना के अन्त काल में उन्हें जीवित रहने में सहायक हुआ और एसे राज्य निर्माण में सहायता दी जो नयी सभ्यता की राजनीतिक नीव बना ।

१ पी० ओरोसियस एडवरसम पगानोस, पुस्तक ७, अध्याय ४३ ।

एरियन धर्म में जो बबर परिवर्तित हो गये, उन्हें उसी रूप म स्वीकार कर लिया। किन्तु साम्राज्य की दूसरी सीमाओ पर दूसरे बवर लोग थे, जो अपने-अपने धार्मिक जीवन के प्रति विशिष्ट गौरव का अनुभव करते थे जो जाति की भावना से कही अधिक था। ब्रिटिश द्वीपो की सीमाओ पर 'कल्टिक' किनारे के असभ्य लोग एरियन ईसाई धम में नही, वरन कथोलिक धम में परिवर्तित किये गये थे। उन्होने अपने बवर विरासत के अनुरूप इस ढालो और सीमा पर अरब वग के अफ्रेशियाई स्टेप सीमा के बबरा के सामने अपनी मौलिकता बहुत अधिक मात्रा में दिखायी। मुहम्मद साहब की रचनात्मक आत्मा में यहूदी धम तथा ईसाई धम का विकिरण आध्यात्मिक शक्ति में रूपान्तरित हो गया था जो स्वय इस्लाम के 'उच्च धम' के रूप में प्रकट हुआ।

यदि हम अपनी खोज थोडी दूर तक ले जायें तो हम देखेंगे कि अभी-अभी उल्लिखित ये धार्मिक प्रतिक्रियाएँ पहली नही थी, जो हेलेनी सभ्यता के विकिरण से आदिम जातियों म हुई थी। अपने असली तथा पूर्ण रूप मे सभी आदिम धम भिन्न भिन्न रूपो मे 'उवर' धम थे। आदिम समाज मुख्य रूप से रचनात्मक शक्ति का पूजक था। यह शक्ति प्रजनन मे, तथा अनाज के उत्पादन में दिखाई देती थी। विनाशक शक्ति की पूजा या तो नही थी या न्यून थी। चूंकि आदिम समाज के मानव का धम सदा उसकी सामाजिक दशाओ की छाया है, जब उसका सामाजिक जीवन विरोधी तथा विदेशी समाजो के सम्मुख आता है और जीवन अस्त-व्यस्त हो जाता है तब उसके धम में क्रान्ति होती है। जब एक आदिम समाज धीरे धीरे शान्तिपूर्वक विकासोन्मुख सभ्यता के लाभप्रद प्रभावो को ग्रहण करता है तब इस आदिम समाज को मोहक वीणा के साथ ओरफियुस की प्रभावशाली आकृति दिखायी नहा देती और उसके स्थान पर नष्ट होती शक्तिशाली अल्पसख्यक की भयप्रद भद्दी आकृति अशिष्ट प्रतिकूलता के साथ सामने आती है।

इस घटना में आदिम समाज बाहरी सवहारा के एक अश म परिवर्तित हो जाता है और इस अवस्था में बवर समुदाय के जीवन में सृजनात्मक और विनाशक क्रियाओ का सापेक्ष रूप में एक क्रान्तिकारी विपयय होता है। अब युद्ध पूर्ण रूप से समुदायो का काय हो जाता है। जब युद्ध क्योंकि काय और भोजन प्राप्त करने के सामान्य काय की अपेक्षा अधिक सरलता से बहुत अधिक उत्तेजक होने के साथ-साथ लाभप्रद हो जाता है तब डमीटर या एफ्रोडाइट अपने को एरेस के विरुद्ध ईश्वर की महत्तम अभिव्यक्ति के रूप में रखने की कैसे आशा कर सकता है? ईश्वर को दवी युद्ध के नेता के रूप में पुन गढा जाता है। हम ओलिम्पियन बहु-देवता पूजा मे इस बवर जाति के देवी-देवताओ को पाते ह। इनकी पूजा मिनोई सागर राज्य के एकियन बाहरी सवहारा में हम देख चुके ह, हमने यह भी देखा कि ओलिम्पस के डाकू देवता के रूप में असगड के निवासियो की प्रतिमूर्ति थे, जिनकी पूजा स्कडेनेविया क कथोलिक साम्राज्य के बाहरी सवहारा करते थे। इस प्रकार के दूसरे देवाल्यो की पूजा एरियन या कथोलिक धम में परिवर्तन होने के पहले रोमन साम्राज्य की सुदूर यूरोपीय सीमाओ के ट्यूटानी बबरो द्वारा होती थी। ये लुटेरे देवी-देवता अपने सैनिक बन पुजारियो के ही प्रतिबिम्ब थे। इन देवी-देवताओ की गणना रचनात्मक कार्यों में की जानी चाहिए। ये हेलेनी ससार के ट्युटोनी बाहरी सवहारा की यशस्वी कृति समझे जाने चाहिए।

धम के क्षेत्र से रचनात्मक कार्यों को एकत्र करते हुए क्या हम एक बार फिर इस दृष्टान्त से कुछ और जोड सकते ह? उच्चधम जो आन्तरिक सवहारा की शक्तिशाली खोज थी,

यह कला के क्षेत्र में कुख्यात ढग से कुछ सम्बधित है। क्या बाहरी सवहारा के निम्न धम में तत्सम्बधी कलाकृतियाँ देखन के लिए मिलती हैं ?

इसका उत्तर निश्चित रूप से सकारात्मक होगा, क्योंकि हम ज्यो ही आलिम्पियाई देवताओ का निरीक्षण करते हैं त्यो ही हम उन्हें होमर के महाकाव्यो में चित्रित देखते ह। यह काव्य उस धम से उतना ही निश्चित रूप से सम्बद्ध है, जितना भगारी का मरगिया या गाथिक वास्तु कला मध्ययुगीन पश्चिमी कैथोलिक ईसाइयत से सम्बद्ध है। आपानिया के ग्रीक महाकाव्य की प्रतिमूर्ति इग्लण्ड के टयूटोनी महाकाव्य में तथा स्कन्डेनेविया के आइसलड क गद्य साहित्य में दिखाई देती है। स्कन्डेनविया की गद्य-कथा असगाड क साथ सलग्न है अग्रजी महाकाव्यो में जिनमें बेडवुल्फ मुख्य जीवित श्रेष्ठ रचना है वोडेन तथा उसके दैवी सामन्त उसी प्रकार सलग्न हैं, जसा होमर का महाकाव्य ओलिम्पस के साथ। वास्तव में महाकाव्य बाहरी सवहारा की प्रतिक्रियाओ के अत्यन्त लाक्षणिक तथा विशिष्ट फल ह जो मानवता को वसीयत क रूप में दी गयी ह। कोई काव्य जो सभ्यता से उत्पन्न हुआ है "होमर की तीव्रता और भव्यता को न कभी पा सकता है न पायेगा।[1]

हमने महाकाव्य के तीन उदाहरणो का उल्लेख किया है। इस सूची को बढ़ाना तथा इसके प्रत्येक उदाहरण को उस सभ्यता के लिए बाहरी सवहारा की प्रतिक्रिया बताना आसान है, जिसके साथ वाह्य सवहारा का सघर्ष होता है। उदाहरणाथ, चसान डि रालण्ड सीरी साक भौम राज्य के यूरोपी बाहरी सवहारा की कृति है जो अद्ध असभ्य फ्रासीसी धम-युद्ध करने वाले अडालूशियाई उम्मैयद खलीफा के पाइरेनियन मोरचे को तोडकर ईसाई युग की ११वी शती में आगे बढे उन्होन एक कलाकृति को प्रोत्साहन दिया जो उस समय तक पश्चिमी ससार की सभी जन भाषाओ में रचित काव्यो की जननी थी। चसन डि रोलण्ड एतिहासिक महत्ता में बडवुल्फ से उतना ही आगे था, जितना साहित्यिक महत्ता में वह इससे पीछे है।[2]

(५) पश्चिमी ससार के बाहरी सवहारा

जब हम अपने पश्चिमी ससार के और उसका सामना करने वाले आदिम समाजो के सम्पक के इतिहास पर आते ह तब हम आरम्भिक अवस्था में हेलनीवाद के विकास की दशा के समान उस पश्चिमी ईसाई समाज को पहचान सकते ह, जिसने स्वधमत्यागियो को अपने

१ सी० एस० लेविस ए प्रिफेस टु पराडाइज लास्ट, पृ० २२।

२ जहाँ तक प्रमाण उपलब्ध होते ह श्री टवायनबी ने सभी सभ्यताओ के बाहरी सवहारा का विवेचन किया है। म अयो को छोड कर सीधे पश्चिमी समाज के बाहरी सवहारा पर उपसहार करने की ओर बढ़ा हूँ। इस तथ्य के लिए न तो कुछ कहने की आवश्यकता है और न क्षमायाचना की। मने अय स्थलो पर भी कुछ कम तीव्रता के साथ ऐसी ही योजना का अनुसरण किया है। उदाहरणाथ, आन्तरिक सवहारा के अध्याय में श्री टवायनबी सभी की परीक्षा करते ह। मने उनमें से वतमान रुचि के स्वरूपो पर विचार करते हुए आधे को छोड दिया है।—सपादक

जादू से आकृष्ट किया था। इनमें अत्यन्त विशिष्ट वे आरम्भिक धर्मत्यागी लोग थे जो स्कैंडेनेविया की अकालप्रसूत सभ्यता के सदस्य थे। अन्तत ये आरम्भिक धर्मत्यागी लोग उस सभ्यता के आध्यात्मिक शौर्य से झुकने के लिए विवश हुए, जिस सभ्यता पर सैनिक शक्ति से वे आक्रमण कर रहे थे। यह पराजय सुदूर उत्तर में उनके स्थानीय निवासस्थानों में, इनके पडाव से दूर आइसलण्ड में तथा ग्रीनलैंड और नारमण्डी की ईसाई धरती पर इनके शिविर में हुई। समकालीन खानाबदोश मागयरो और जंगलनिवासी पोलो का धर्म परिवर्तन वैसा ही स्वतःप्रेरित था, किन्तु आरम्भिक अवस्था में पश्चिमी विस्तार दमनकारी हिंसात्मक आक्रमणों से भी पूर्ण था, जो उत्पीडन उससे कहीं अधिक था, जितना यूनानियों ने अपने पडोसियो के प्रति किया था। हम सक्सनो के विरुद्ध 'शार्लमान' का धर्मयुद्ध देखते है, और दो शतियो बाद एल्ब और ओडर के बीच स्लावो के विरुद्ध सैक्सनो का युद्ध है, और इससे भी अधिक भयंकर तेरहवी तथा चौदहवी शती का युद्ध है, जिसमें ट्युटोनी सरदारो ने प्रशियनो का विश्चुला के पार निकाल दिया।

ईसाई साम्राज्य की उत्तरी पश्चिमी सीमा पर यही कहानी दुहराई जाती है। प्रथम अध्याय में रोमन मिशनरी द्वारा शान्तिपूर्ण ढंग से अंग्रेजो के धर्म परिवर्तन का है किन्तु इसका अनुसरण सुदूर पश्चिमी ईसाइयो में बलपूर्वक हुआ। जो निश्चय ६६४ ई० में ह्विटबी की सभा (साइनोड) में आरम्भ हुआ तथा आयरलण्ड पर पोप की स्वीकृति के साथ इंग्लैंड के हेनरी द्वितीय के ई० ११७१ के सशस्त्र आक्रमण में पूर्ण पराकाष्ठा पर पहुँचा। यही कहानी समाप्त नही होती। बीभत्सता की ये आदतें अटलाटिक के पार गयी और उत्तरी अमरीका के इण्डियनो में विस्तार करने में इसका अभ्यास किया गया। बीभत्सता के ये ढंग स्काटलैंड के पहाडो के केल्टिक किनारो तथा आयरलण्ड के दलदलो में ग्रेट ब्रिटेन ने सीखे थे।

आधुनिक शतियो में सम्पूर्ण धरती पर पश्चिमी सभ्यता का विस्तार वेग इतना तीव्र था तथा इसके आदि प्रतिद्वन्द्वियो में असमानता के स्रोत इतने अधिक थे कि यह आन्दोलन अबाधित रूप में तबतक चलता रहा जबतक यह न केवल अस्थिर अवसीमा तक ही नहीं पहुँचा, प्राकृतिक सीमा की अन्तिम छोर तक पहुँच गया। आदिम समाजो के पार्श्व में पश्चिमी लोगो का संसारव्यापी मूलोच्छेदन या बलपूर्वक शासन या शोषण नियम सा हो गया है और धर्म परिवर्तन केवल अपवाद। वास्तव में ऐसे आदिम समाजो की गणना हम एक हाथ की उँगलियो पर कर सकते है। जिसे आधुनिक पश्चिमी समाज ने अपने साथ लिया हो। स्काटी पहाडी लोग है जो प्राचीन बर्बरो के अवशेष आधुनिक पश्चिमी समाज और मध्ययुगीन ईसाई संसार के बीच पडे हुए है न्यूजीलैंड के माओरी है एंडियन सार्वभौम राज्य के चीली के आन्तरिक बर्बर प्रान्त के अराओकनियन है, जिनसे स्पेन वालो ने कुव्यवहार किया क्योकि इनकी पराजय के बाद से इन लोगो का सम्बन्ध था।

इतिहास में सबसे बडा प्रमाण वह है जब जकोबाइट (जन्म द्वितीय तथा उसके पुत्र 'प्रिटेण्डर' के अनुयायी) विप्लव (१७४५) के बाद स्काटी पहाडी लोग इंग्लैंड में मिला लिये गये, जब इन उजले बर्बरो का अन्तिम लात चलाना निष्फल हो गया। डॉ० जानसन या हौरेस वाल्पोल और उन स्काट गिरोहो के बीच जो राजकुमार चार्ली का डरबी ले गये की सामाजिक खाई पाटना उतना कठिन नहीं था, जितना न्यूजीलैंड के यूरोपीय विस्थापितो या चीली और माओरी

यह कला के क्षेत्र में मुख्यात ढग से कुछ सम्बधित है। क्या बाहरी सवहारा के निम्न धर्म में तत्सम्बधी कलाकृतियाँ देखने के लिए मिलती हैं ?

इसका उत्तर निश्चित रूप से सकारात्मक होगा, क्योकि हम ज्यो ही ओलिम्पियाई देवताओ का निरीक्षण करते हैं त्यो ही हम उन्हें होमर के महाकाव्यो में चित्रित देखते ह। यह काव्य उस धर्म से उतना ही निश्चित रूप से सम्बद्ध है, जितना ग्रेगोरी का मर्रासिया या गोथिक वास्तु कला मध्ययुगीन पश्चिमी कैथोलिक ईसाइयत से सम्बद्ध है। आपानिया के ग्रीक महाकाव्य की प्रतिमूर्ति इग्लैंड के टयुटोनी महाकाव्य में तथा स्कडेनेविया के आइसलड के गद्य साहित्य में दिखाई देती है। स्कडेनेविया की गद्य-कथा अगगाड के साथ सलग्न है, अग्रेजी महाकाव्यो में जिनमें बेडवुल्फ मुख्य जीवित श्रेष्ठ रचना है वोडेन तथा उसके दवी सामत उसी प्रकार सलग्न है जसा होमर का महाकाव्य ओलिम्पस के साथ। वास्तव में महाकाव्य बाहरी सवहारा की प्रतिक्रियाओ के अत्यत लाक्षणिक तथा विशिष्ट फल ह जो मानवता को वसीयत के रूप में दी गयी है। कोई काव्य जो सभ्यता से उत्पन्न हुआ है 'होमर की तीव्रता और भव्यता को न कभी पा सकता है न पायेगा।'[१]

हमने महाकाव्य के तीन उदाहरणो का उल्लेख किया है। इस सूची को बढाना तथा इसके प्रत्येक उदाहरण को उस सभ्यता के लिए बाहरी सवहारा की प्रतिक्रिया बताना आसान है, जिसके साथ बाह्य सवहारा का सघर्ष होता है। उदाहरणाथ, चसन डि रालण्ड सीरी साव भौम राज्य के यूरोपी बाहरी सवहारा की कृति है जो अद्ध असभ्य फासीसी धर्म-युद्ध करने वाले अडालूशियाई उम्मेयद खलीफो के पाइरेनियन मोरचे का तोडकर ईसाई युग की ११वी शती में आगे बढे, उन्होने एक कलाकृति को प्रोत्साहन दिया जो उस समय तक पश्चिमी समाज की सभी जन भाषाओ में रचित काव्यो की जननी थी। चसन डि रालण्ड ऐतिहासिक महत्ता में 'बडवुल्फ से उतना ही आगे था, जितना साहित्यिक महत्ता में वह इससे पीछे है।'[२]

(५) पश्चिमी ससार के बाहरी सवहारा

जब हम अपने पश्चिमी ससार के और उसका सामना करने वाले आदिम समाजो के सम्पर्क के इतिहास पर आते ह तब हम आरम्भिक अवस्था में हेलेनीवाद के विकास की दशा के समान उस पश्चिमी ईसाई समाज को पहचान सकते है, जिसने स्वधर्मत्यागियो को अपन

१ सी० एस० लेविस ए प्रिफेस टु पराडाइज लास्ट, पृ० २२।

२ जहाँ तक प्रमाण उपलब्ध होते ह श्री टवायनबी ने सभी सभ्यताओ के बाहरी सवहारा का विवेचन किया है। म अयों को छोड कर सीधे पश्चिमी समाज के बाहरी सवहारा पर उपसहार करने की ओर बढा हूँ। इस तथ्य के लिए न तो कुछ कहने की आवश्यकता है और न क्षमायाचना की। मने अय स्थलो पर भी कुछ कम तीव्रता के साथ ऐसी ही योजना का अनुसरण किया है। उदाहरणाथ, आतरिक सवहारा के अध्याय में श्री टवायनबी सभी की परीक्षा करते ह। मने उनमें से वतमान रुचि के स्वरूपो पर विचार करते हुए आधे को छोड दिया है।—सपादक

जादू से आकृष्ट किया था। इनमे अत्यन्त विशिष्ट वे आरम्भिक धर्मत्यागी लोग थे जो स्कैंडेनेविया की अकालप्रसूत सभ्यता के सदस्य थे। अन्तत ये आरम्भिक धर्मत्यागी लोग उस सभ्यता के आध्यात्मिक शौर्य से झुकने के लिए विवश हुए जिस सभ्यता पर सैनिक शक्ति से वे आक्रमण कर रहे थे। यह पराजय सुदूर उत्तर में उनके स्थानीय निवासस्थानों में, इनके पड़ाव से दूर आइसलण्ड में तथा डनलॉ और नारमण्डी की ईसाई धरती पर इनके शिविर में हुई। समकालीन खानाबदोश मागयरों और जंगलनिवासी पोलों का धर्म परिवर्तन वैसा ही स्वत प्रेरित था, किन्तु आरम्भिक अवस्था में पश्चिमी विस्तार दमनकारी हिंसात्मक आक्रमणों से भी पूर्ण था, जो उत्पीडन उससे कहीं अधिक था, जितना यूनानियों ने अपने पडोसियों के प्रति किया था। हम सक्सनों के विरुद्ध शार्लमान' का धर्मयुद्ध देखते है, और दो शतियां बाद एल्ब और ओडर के बीच स्लावों के विरुद्ध सैक्सनों का युद्ध है, और इससे भी अधिक भयकर तेरहवी तथा चौदहवी शती का युद्ध है, जिसमें ट्युटोनी सरदारों न प्रशियनों को विमचूला के पार निकाल दिया।

इसाई साम्राज्य की उत्तरी पश्चिमी सीमा पर यही कहानी दुहराई जाती है। प्रथम अध्याय में रोमन मिशनरी द्वारा शान्तिपूर्ण ढग से अग्रजों के धर्म परिवर्तन का है, किन्तु इसका अनुसरण सुदूर पश्चिमी ईसाइयों में बलपूर्वक हुआ। जो निश्चय ६६४ ई० में ह्विटबी की सभा (साइनोड) में आरम्भ हुआ तथा आयरलण्ड पर पोप की स्वीकृति के साथ इग्लैंड के हेनरी द्वितीय के ई० ११७१ के सशस्त्र आक्रमण में पूर्ण पराकाष्ठा पर पहुँचा। यहां कहानी समाप्त नही होती। बीभत्सता की य आदतें अटलाटिक के पार गयी और उत्तरी अमरीका के इण्डियनों में विस्तार करने में इसका अभ्यास किया गया। बीभत्सता के ये ढग स्काटलैंड के पहाड़ों के केल्टिक किनारों तथा आयरलैण्ड के दलदलों में ग्रेट ब्रिटेन ने सीखे थे।

आधुनिक शतियों में सम्पूर्ण धरती पर पश्चिमी सभ्यता का विस्तार वेग इतना तीव्र था तथा इसके आदि प्रतिद्वंद्वियों में असमानता के स्रोत इतने अधिक थे कि यह आन्दोलन अबाधित रूप में तबतक चलता रहा जबतक यह न केवल अस्थिर जवसीमा तक ही नहीं पहुँचा, प्राकृतिक सीमा की अन्तिम छोर तक पहुँच गया। आदिम समाजों के पादक में पश्चिमी लोगों का समारव्यापी मूलोच्छेदन या बलपूर्वक शासन या शोषण नियम सा हो गया है और धर्म-परिवर्तन केवल अपवाद। वास्तव में ऐसे आदिम समाजों की गणना हम एक हाथ की उँगलियों पर कर सकते है। जिन आधुनिक पश्चिमी समाज ने अपने साथ लिया हो। स्काटी पहाडी लोग है जो प्राचीन बर्बरों के अवशेष आधुनिक पश्चिमी समाज और मध्ययुगीन ईसाई मगार के बीच पड़े हुए हैं, न्यूजीलैंड के माओरी हैं एडियन सार्वभौम राज्य के चीलों के आतरिक बर्बर प्रात के अराओकनियन हैं, जिनसे स्पेन वालों न कुव्यवहार किया क्योंकि इनका पराजय क बाद स इन लोगों का सम्बन्ध था।

इतिहास में सबसे बड़ा प्रमाण वह है जब जैकोबाइट (जेम्स द्वितीय तथा ... प्रिटेण्डर' के अनुयायी) विप्लव (१७४५) के बाद स्काटी पहाड़ी लोग ... में ...,
जब इस उजल बर्बरों का अन्तिम लात चलाना निष्फल हो गया। डॉ० जानसन या ...
और उन लड़ाकू गिरोहों क बीच, जो राजकुमार चार्ली का ... , की ...
पाटना उतना कठिन नहीं था, जितना न्यूजीलैंड के यूरोपीय विस्थापितों या ... और ...

या आराओवेनियो के बीच । आज राजकुमार चार्ली के पौत्र और विग पहने, पाउडर लगा लोलडा[1] तथा अग्रेजा के जिन्होने अन्त में विजय पायी, वशज निश्चय रूप से समान सामाजिक स्त के हैं और यह लडाई अभी दो सौ साल ही पहले हुई थी । यह सघष ऐसा हुआ कि ऐसी कथा बन गयी कि पहचानी नही जाती । स्काटलैण्ड के निवासियो ने अपने को नही तो अग्रेजा व प्रेरित किया कि स्काटलैण्ड का ऊनी चारखाना स्काटलण्ड की राष्ट्रीय पोशाक है । उसी प्रका जैसे इडियन के सिर की पर लगी उनकी टोपी । और आज लोलड के मिठाई बनाने वा 'एडिनबरा राक' को चारखाने से ढके डब्बे में बेचते ह ।

ऐसी बबर परिसीमाएँ जो हमारे आज के पश्चिमीकृत ससार में पायी जाती है, अब त पूण रूप से पश्चिमी समाज में आत्मसात् न हुए अपश्चिमी सभ्यताओ की देन ह । इन भारत के उत्तर पश्चिम की सीमा विशेष महत्त्व की है, कमस कम पश्चिम के स्थानीय राज्यो वे नागरिको के लिए जिन्होने विघटोन्मुख हिन्दू सभ्यता को सावभौम राज्य बनाने का काम अप ऊपर ले रखा है ।

हिन्दुओ के सकटकाल में (सम्भवत ११७५–१५७५) यह सीमा तुर्को और ईरानी लुटेर द्वारा बार-बार तोडी गयी । एक समय इसकी सुरक्षा हिन्दू ससार के सावभौम राज्य को मुगल राज्य के रूप में स्थापित करके की गयी । जब मुगल राज्य समय के पूव ही १८ वी शती वे आरम्भ में समाप्त हुआ, तब पूर्वी ईरानी रुहेला और अफगानी बबर भीतर घुसे । ये विदेशी सावभौम राज्य के विरुद्ध मराठा नेताओ की सैन्यवादी हिन्दू प्रतिक्रिया के एकमात्र शव को प्राप्त करने के लिए सघष कर रहे थे । जब अकबर का काय विदेशियो ने पुन किया और हिन्दू सावभौम राज्य ब्रिटिश राज्य के रूप में पुन स्थापित किया गया, तब उत्तर पश्चिम की सीमा की सुरक्षा सम्बन्धी वचनबद्धता सबसे अधिक महत्त्व की सिद्ध हुई । सीमा सुरक्षा सम्बन्धी जिम्मेदारी ब्रिटिश राज्य के निर्माताओ को लेनी पडी थी । अनक सीमा-नीतियाँ निर्धारित हुइ, पर उनमें से कोई भी पूण रूप से सन्तोषजनक सिद्ध न हुई ।

पहला विकल्प जिसके द्वारा ब्रिटिश राज्य के निर्माताओ ने प्रयत्न किया, सम्पूण पूर्वी ईरानी सीमा को जीतना तथा उसे हिन्दू ससार में मिलाना था । यह काय ठीक उसी तरह था जसे मुगल राज्य अपने पूण विकास पर अपन राज्य में उजबक उत्तराधिकारी राज्यो के ओक्सस जक्साटस के दोआब तथा सफावी साम्राज्य के साथ पश्चिमी ईरान को मिलाने की चेष्टा की थी । यह साहसिक काय अलक्जेडर बरनस द्वारा १८३१ स लेकर और आग तक चलाया गया था । इसके बाद सन् १८३८ में ब्रिटिश इडियन सेना को अफगानिस्तान में भेजकर खतरनाक कदम उठाकर सघष किया गया । किन्तु उत्तर पश्चिमी सीमा समस्या का एकदलीय शासन के रूप में समाधान इस महत्त्वाकाक्षी प्रयास का विनाशकारी अन्त हुआ । १७९९ और १८१८ के बीच सिन्ध के बसिन के दक्षिण पूव में सम्पूण भारत की सफलतापूण विजय के प्रथम आनन्द में ब्रिटिश राज के निर्माताओ ने अपनी शक्ति को अधिक आका और अपने विरोधियो की शक्ति और प्रभाव का कम । इन विरोधियो की आक्रामकता ने उन उच्छृखल बबर लोगों को उत्तेजित किया जिन्हें

[1] लोलड—हालड, बेलजियम ।

वे अधीन बनाना चाहते थे । वास्तव में ई० १८४१–२ में आक्रमण उससे भी अधिक विनाश पर समाप्त हुआ, जितना १८९६ में अबीसिनिया के पहाडी प्रदेश में इटालियाई विनाश में हुआ था ।

इस पहाडी प्रदेश पर स्थायी विजय प्राप्त करने की महत्त्वाकाक्षा को इस प्रसिद्ध पराजय के बाद ब्रिटिश शासको ने कभी प्रयोगात्मक रूप से जीवित नही किया । १८४९ ई० में पजाब की विजय के बाद सीमा नीति की भिन्नताएँ युद्धनीतिक होने की अपेक्षा सामरिक कौशल की अधिक थी । वस्तुत यहाँ वसी ही राजनीतिक विन्यास सम्बन्धी 'अवसीमा' हम दखते है, जसी ईसाई युग की आरम्भिक शती में राइन और डयूब से निश्चित रोमन साम्राज्य की अवसीमा थी । जब ब्रिटिश इण्डियन अल्पसख्यक हिदू आन्तरिक सवहारा के अनुशासन की ओर झुके और अपने बढते हुए व्यय के श्रम को उन्होंने समाप्त कर दिया, तब यह देखना मनोरजक है कि इस मुक्ति में आन्तरिक सवहारा का उत्तर पश्चिम की सीमा समस्या सुलझाने में कहा तक समर्थ हो सकता है जब अपने घर में वे अपने मालिक हो जायेंगे ।

यदि अब हम यह पूछें कि इतिहास की भिन्न अवस्थाओ में पश्चिमी ससार ने जो दुनिया के विभिन्न भागो में बाहरी सवहारा को जन्म दिया है उन्हें कविता तथा धर्म के क्षेत्र में रचनात्मक कार्यों के लिए भी प्रेरित किया है ? तो हमें शीघ्र ही केल्टिक सीमा में तथा स्कण्डेनविया में किये गये ववर पष्ठ भाग के दलो के सुदर रचनात्मक कार्यों का स्मरण हो जाता है । ये बबर सभ्यताओ को जन्म देने के लिए भरसक प्रयत्न करते थे किन्तु पश्चिम के ईसाई साम्राज्य की नवजात सभ्यता के साथ इनके सघर्ष में ये असफल हो गये । इस अध्ययन के दूसरे सन्दर्भों में इन सघर्षों पर पहले ही विचार किया जा चुका है । आधुनिक युग के विस्तृत पश्चिमी ससार से पदा हुए बाहरी सवहारा पर हम अब विचार कर सकते है । इस विशाल क्षेत्र के सर्वेक्षण में हमें दोनो भू-खण्डो में बबरो की रचनात्मक शक्ति का एक एक उदाहरण पर्याप्त होगा । इन दोनो भू-खण्डो की हमें परीक्षा करनी पडेगी ।

काव्य के क्षेत्र में हमें 'वीर' काव्य पर ध्यान देना होगा । ये काव्य ईसाई युग की १६ वी तथा १७वी शता में डन्यूवी हैप्सबुग राजतन्त्र की दक्षिण पूर्वी सीमा से दूर बोसनिया के बबरो द्वारा रचे गये थे । यह उदाहरण मनोरजक है क्योकि पहली दृष्टि में यह उस नियम का अपवाद दिखाई देगा कि विघटोन्मुख सभ्यता का बाहरी सवहारा तब तक वीर काव्य के निर्माण की प्रेरणा देने योग्य नही होता, जब तक विचाराधीन सभ्यता सार्वभौम राज्य की स्थिति से नही गुजरता और अन्त काल नही आता जिसमें बबर जनरेलो के लिए अवसर मिलता है । लदन और पेरिस की दृष्टि में डयूबी हैप्सबुर्ग का राजतन्त्र पश्चिमी ससार की राजनीतिक विभक्त परिस्थिति अनेक स्थानीय राज्यो में से एक के अतिरिक्त और कुछ भले ही न रहा हो, न ही इनकी प्रजा तथा अपश्चिमी पडोसियो और विरोधियो की दृष्टि में इस राजतन्त्र में पश्चिमी सर्वव्यापी राज्य की सभी योग्यताएँ एव विशेषताएँ जान पडती थी जिनके विरोध में उन्होने सम्पूर्ण पश्चिमी ईसाई समाज के लिए ढाल बनायी थी । पश्चिमी ईसाई समाज के सदस्यो को इसने शरण दी और उन्हे अपने विश्वव्यापी मिशन से सहायता भी की ।

बोसनियाई यूरोप महाद्वीप के बबरो के पीछे के दस्ते थे, जिन्हें पश्चिमी ईसाई समाज तथा

परम्परावादी ईसाई समाज की दो आक्रामक सभ्यताओं की ज्वालाओं के बीच उत्पन्न हुए असामान्य दुखद अनुभव को असाधारण रूप से पहले सहना पड़ा था। परम्परावादी ईसाई सभ्यता का विकिरण बोसनियाई लोगों तक पहले पहुँचा। इन लोगों ने उसके परम्परावादी स्वरूप को अस्वीकार किया और उन्होंने इसकी स्थापना बोगोमिल्वाद के सम्प्रदायवादी रूप में स्वत की। इस अधार्मिकता ने दोनों ईसाई सभ्यताओं का ध्यान आकृष्ट किया। इन परिस्थितियों में, जहाँ तक धर्म का सम्बन्ध है, मुस्लिम उसमानलियों के आगमन का स्वागत किया और बोगोमिल धर्म को त्याग कर वे तुर्क हो गये। इसके बाद उसमानियाँ सुरक्षा में युगोस्लाविया के परिवर्तित मुसलमान निवासियों ने उसमानिया-हैप्सबुर्ग सीमा पर वही कार्य किया जो हैप्सबुर्ग की ओर युगोस्लाविया के ईसाई शरणार्थियों द्वारा उस क्षेत्र में किया गया जो उसमानिया शासन में चला गया था। युगोस्लाविया के दो विरोधी वर्गों का आक्रमण में एक सा ही कार्य था। एक ओर उसमानिया साम्राज्य था और दूसरी ओर हैप्सबुर्ग राज्यतन्त्र। *उसी सीमा-युद्ध की उर्वर मिट्टी में वीर काव्य के दो स्वतन्त्र सम्प्रदाय पैदा हुए और स्पष्ट रूप* में बिना एक दूसरे पर प्रभाव डाल साथ ही पनपे। दोनों प्रकार के वीर काव्यों में सर्वोत्कृष्ट भाषा का प्रयोग किया गया।

धर्म के क्षेत्र में बाहरी सर्वहारा की सर्जनात्मकता के दृष्टान्त अनेक स्थानों से मिलते हैं, १९ वीं शती में रेड इण्डियनों के विरुद्ध यूनाइटेड स्टेट की सीमा पर के अनेक दृष्टान्त दिये जायेंगे।

यह ध्यान देने की बात है कि उत्तरी अमरीका के इण्डियनों के यूरोपियन आक्रमण पर भी सर्जनात्मक धार्मिक प्रतिक्रिया रेड इण्डियनों में होती। यह देखते हुए कि अंग्रेज अधिवासियों के प्रथम आगमन से लेकर सीयो के युद्ध (१८९०) में जब इण्डियनों ने अन्तिम सैनिक विरोध किया और जब वह कुचल दिये गये अर्थात दो सौ अस्सी साल तक वे लड़ते ही रहे। यह भी विशेष ध्यान देने योग्य है कि इण्डियनों की प्रतिक्रिया अहिंसात्मक ढंग की थी। हम इण्डियनों के युद्धक दलों से ऐसी आशा करते थे कि वे या तो अपने इच्छानुसार बहुदेवतावादी धर्म इरोक्वाय आलिम्पस या असगार्ड के रूप में निर्माण करेंगे या अपने आक्रामकों के काल्विनिस्टिक प्रोटेस्टेंट धर्म के विशिष्ट सैनिक तत्त्वों को स्वीकार करेंगे। परन्तु १७६२ ई० के डेलावार के अनाम पैगम्बर से लेकर १८८५ ई० के करीब नेवाडा में आविर्भूत वावोका तक ने एक दूसरे ही प्रकार का धार्मिक उपदेश दिया। उन्होंने शान्ति का उपदेश दिया तथा अपने शिष्यों से उन तकनीकी भौतिक विकासों को त्याग देने के लिए कहा जिन्हें उन्होंने अपने श्वेत शत्रुओं[1] से बन्दूकों के युद्ध में आरम्भ में पाया था। उन्होंने घोषणा की कि यदि उनकी शिक्षाओं का अनुसरण किया जाता है तो धरती के स्वर्ग में ही उन इण्डियनों को आनन्द का जीवन बिताने का सौभाग्य प्राप्त होगा। इस धरती के स्वर्ग में उनका जीवन अपने पूर्वजों की आत्माओं से सम्बन्धित होगा और यह रेड इण्डियन मसीहाई राज्य टोमहाको (उत्तरी अमरिका के रेड इण्डियनों का एक अस्त्र) से गोली से नहीं, जीता जा सकता। इस प्रकार की शिक्षाओं के ग्रहण करने का क्या परिणाम हुआ हम यह नहीं

१ यह स्पष्ट रूप से भारत के स्वदेशी आन्दोलन के समान है।—सम्पादक

सकते । जिन्हें इस प्रकार की शिक्षाएँ दी गयी थी, उन बबर वीरो के लिए ये शिक्षाएँ अधिक कठिन तथा ऊँची सिद्ध हुईं । किन्तु, अधकार से पूर्ण तथा भयानक क्षितिज पर अहिंसा के प्रकाश की झिलमिलाहट में हम आदिम मानव के हृदय में ईसाई धम के सामाजिक जीवन का आकर्षक दृश्य देखते ह ।

वतमान समय में ऐसा जान पडता है कि कुछ बबर समाज नक्शे पर शेष रह गये ह । उनके जीवित रहने की एक मात्र सम्भावना उन अवोट्राइटो और लिथुआनियनो की नीतियो को अपनाने में है, जिन्होंने हमारे पश्चिमी विस्तार के इतिहास के मध्य अध्याय मे, पहले से ही आक्रामक सभ्यता की सस्कृति को स्वच्छा से स्वीकार कर लेने की शक्तिशाली दूरदर्शिता दिखलायी । यह आक्रामक सभ्यता उनके विरोध को रोकने में बडी शक्तिशाली थी । आज जो हमारे प्राचीन बबरो के ससार के अवशेष ह उनमें बबरता के दो गढ घिरे हुए मौजूद ह । उनमें से प्रत्येक में जोखिम सहने वाले बबरो के सैनिक सरदार शक्तिशाली प्रयत्न कर रहे हैं कि उस स्थिति को जो अभी बिल्कुल बेकाबू नही हो गयी है सास्कृतिक आक्रमण से जो सुरक्षा भी होगी बचा ल ।

पूर्वी ईरान में यह सम्भव प्रतीत होता है कि भारत के उत्तर-पश्चिम सीमा की समस्या का समाधान हो जाय । भारत अफगानिस्तान सीमा पर असभ्य बबरो के विरुद्ध किसी उग्र काय द्वारा नही वरन् स्वेच्छा से अफगानिस्तान के पश्चिमीकरण द्वारा । क्योकि यदि अफगानो का प्रयास सफल हो जाय तो इसका एक परिणाम यह होगा कि भारत की ओर के सनिक दो आक्रमणो के बीच पड जायेंगे और इस प्रकार इनकी स्थिति अरक्षणीय हो जायेगी । अफगानिस्तान में पश्चिमीकरण का आन्दोलन सम्राट अमानुल्लाह (१९१९-२९) द्वारा अधिक बौद्धिक उत्साह से आरम्भ हुआ । इसके परिणामस्वरूप बादशाह ने गद्दी से हाथ धोया । किन्तु अमानुल्लाह की व्यक्तिगत असफलता से अधिक महत्त्व इसका है कि इस अवरोध के कारण आन्दोलन नहीं रुका । १९१९ तक पश्चिमीकरण की प्रणाली इतनी दूर तक चली गयी कि बच्चा सक्का ऐसे लुटेरा के काय को वे सहन नहीं कर सकते थे । राजा नादिर तथा उसके उत्तराधिकारियो के शासन में पश्चिमीकरण की यह प्रणाली बराबर जारी रही ।

किन्तु अवरुद्ध बबरता के किले का अधिक पश्चिमीकरण करने वाले नज्द और हजाज के राजा अब्दुल अजीज अल साउद है जो राजमर्मज्ञ और सनिक ह । इनका जन्म देश के बाहर हुआ था । सन १९०१ से जब ये राजनीतिक वनवास में थे इन्होंने अपने को रबल्खाली के पश्चिम से लेकर यमन के उत्तर के सेना के राज्य तक अरब का स्वामी बना लिया । बबरो के युद्ध के सरदार के रूप में इब्न साउद की तुलना बौद्धिक दृष्टि से विसिगोथ अताउल्फ से हो सकती है । उन्होंने आधुनिक पश्चिमी वैज्ञानिक तकनीक की शक्ति का अनुभव किया और उसके उपयोगो के प्रति अपनी निर्णायक दृष्टि दिखायी । यह दृष्टि पाताल तोड कुआँ, मोटर गाडियाँ और वायुयानो के प्रयोग में दिखाई दी । ये सभी मध्य अरब के स्टेप में प्रभावशाली हुए । किन्तु, इन सबसे ऊपर उन्होंने दिखाया कि पश्चिमी जीवन का अनिवाय आधार शान्ति और व्यवस्था है ।

किसी प्रकार जब अन्तिम विरोधी पश्चिमीकृत ससार के नक्शे से अलग हो जायगा, तब क्या हम अपने को बधाई देंगे कि बबरता अन्तिम रूप से समाप्त हो गयी । बाहरी **सर्वहारा** की

इस अत्यावश्यक प्रश्न पर क्या और अधिक विचार नही करना चाहिए ? क्या हम अपने को स्मरण नही दिलाते कि इस अध्याय में प्रस्तुत प्रमाणो के आधार पर शक्तिशाली अल्पसख्यक तथा बाहरी सवहारा के बीच के युद्धो में मूल रूप से आक्रामक शक्तिशाली अल्पसख्यक ही पाया जाता है। हमें स्मरण रखना पडेगा कि सभ्यता तथा बबरता के सघर्ष का इतिहास करीब-करीब एकमात्र सभ्य लोगो द्वारा ही लिखा गया है। बाहरी सवहारा द्वारा वर्ग का यह कला-सिकी चित्र जो अपनी बबरतापूर्ण मारकाट को निर्दोष सभ्यता के प्रदेश में ले जाने का बना है, वह सत्य की वस्तुपरक अभिव्यक्ति नहीं है। किन्तु 'सभ्य' दल के उस आक्रोश की अभिव्यक्ति है कि उसे आक्रमण का निशाना बनाया जाता है, जिस आक्रमण का कारण वह स्वय है।

(६) विदेशी तथा देशी प्रेरणाएँ

क्षितिज का विस्तार

विवेचन करने के बाद, इस अध्ययन के आरम्भ में ही अग्रजी इतिहास से उदाहरण दिया गया था कि राष्ट्रीय राज्य का इतिहास केवल अपने में बोधगम्य नही है। हमारी ऐसी धारणा है कि सम्बद्ध समुदायो के अध्ययन के लिए जिन्हें हम समाज कहते है, इन समाजो का अध्ययन आवश्यक है। दूसरे शब्दो में, हमारी धारणा थी कि सभ्यता की जीवन प्रणाली स्वत निश्चित होती है किसी विदेशी सामाजिक शक्ति की प्रक्रिया के बिना ही स्वत इसका अध्ययन किया जा सकता है तथा इस समझा जा सकता है। सभ्यताओ के विकास और उनकी उत्पत्ति के अध्ययन से ही हमारी यह धारणा पुष्ट हुई है। सभ्यताओ के पतन और विघटन के हमारे अध्ययन का खण्डन नही होता। यद्यपि पतनोन्मुख समाज टुकडे-टुकडे होकर बिखर जाता है। प्रत्येक टुकडे पुरानी लकडी के ही टुकडे होते ह। बाहरी सवहारा भी पतनोन्मुख समाज के क्षेत्र के ही तत्त्वो से निकलते ह। साथ ही साथ समाजो के विघटित टुकडो के सर्वेक्षण में—और यह विदेशी सवहारा की ही बात नही है आन्तरिक सवहारा तथा शक्तिशाली अल्पसख्या की भी बात है—हमें देशी तथा विदेशी शक्तियो पर भी विचार करना पडा है।

वस्तुत यह स्पष्ट हो चुका है कि अध्ययन की सफलता के लिए समाज की यह परिभाषा, कि वह अध्ययन का क्षेत्र है, बिना किसी प्रतिबन्ध के तभी तक स्वीकार की जा सकती है जब तक समाज विकासोन्मुख रहता है। इस परिभाषा को हम प्रतिबन्ध के साथ तब स्वीकार कर सकते ह, जब हम विघटन की अवस्था में आते हैं। यह सत्य है कि सभ्यताओ का पतन आन्तरिक आत्मविश्वास के नष्ट होने से होता है, बाहरी आघातो से नही। यह सत्य नही है कि पतित समाज के विघटित होकर विनाश की अवस्था का बिना बाहरी शक्तियो तथा क्रियाओ को जाने हम अध्ययन कर सकते ह। सभ्यता के विघटन के समय के इतिहास के अध्ययन के लिए 'बोधगम्य क्षेत्र' अधिक विस्तृत है। केवल एक समाज का विस्तार अध्ययन के लिए उतना नही है। इसका तात्पर्य यह है कि विघटन की प्रणाली में सामाजिक जीवन का झुकाव केवल उन तीन अगो को अलग करने मात्र से नही होता जिनका अध्ययन हम कर चुके है किन्तु विघटन की प्रणाली में सामाजिक जीवन को विदेशी तत्त्वो के योग से नवीन सगठनो के निर्माण की स्वतन्त्रता होती है। इस प्रकार हम देखते ह कि वह धरती ही हमारे पैर के नीचे से खिसक गयी है जिस पर हम अध्ययन के आरम्भ में दृढ होकर खडे थे। आरम्भ में हमने

सभ्यताओ को अपने अध्ययन के लिए चुना, क्योकि ये अध्ययन के लिए बोधगम्य क्षेत्र जान पड़ा जिनका अध्ययन अलग-अलग हम कर सकते थे। अब हम अपने को इस दृष्टि से दूसरी दृष्टि की ओर जाते हुए पाते हैं जिस पर हम उस समय विचार करेंगे जब हम सभ्यताओ के एक-दूसरे के सम्पर्क की परीक्षा करेंगे।

इस बीच विदेशी और देशी प्रेरणाओ के प्रभावो की तुलना करने और उनके भेद दिखाने में सुविधा होगी। ये प्ररणाए उन अनेक इकाइयो के कार्यों में दिखाई देती ह, जिनमें सामाजिक जीवन का विघटन होता है। हम देखेंगे कि शक्तिशाली अल्पसख्या एव बाहरी सवहारा के कार्यों में विदेशी प्रेरणा मतभेद और विनाश उत्पन्न करने में समथ होती है जब कि आतरिक सवहारा के कार्यों में समन्वय और सजन का प्रभाव डालती है।

शक्तिशाली अल्पसख्या और बाहरी सवहारा

हम देख चुके ह कि सावभौम राज्य में शक्तिशाली अल्पसख्या होती है जो देश के समाज के लिए मूल्यवान् सेवा करती है। वे देशी साम्राज्य निर्माता बाहरी सीमा के मनुष्य हो सकते हैं जहाँ राजनीतिक एकता स्थापित कर वे उन्हें शान्ति स्थापित करते हैं। किन्तु इससे यह नही मालूम होता कि उनकी सस्कृति विदेशी रग है। हमारे पास ऐस उदाहरण ह जिनमें शक्तिशाली अल्पसख्या की नैतिक पराजय इतनी तीव्र है कि इसके पहल विघटनोन्मुख समाज सावभौम राज्य के लिए परिपक्व हो, शक्तिशाली अल्पसख्या का कुछ भी शेष नही रह जाता जिसमें साम्राज्य निर्माता के गुण हो। एसी स्थिति में सावभौम राज्य प्रदान करने का काय साधारणत अपूण नही रहने दिया जाता, कुछ विदेशी साम्राज्य निर्माता आ जाते ह और वे आशान्त समाज के लिए वह काय करते रह जिसे वहाँ के लोगो के हाथो होना चाहिए था।

विदेशी तथा देशी सभी सावभौम राज्य समान रूप से धन्यवाद और उदासीनता से स्वीकार किये जाते हैं यद्यपि उत्साह के साथ नही। भौतिक दृष्टि से इससे एक प्रकार सकट-काल की अवस्था से सुधार ही होता है। किन्तु ज्यो ज्यो समय बीतता जाता है, 'नया राजा सामने आता है। 'जो जोसेफ को नही जानता' सीधी भाषा में सकट-काल और उसके आतक की स्मृति लोग भूल जाते ह। वतमान में जब सारी सामाजिक धरती पर सावभौम राज्य हो जाता है, लोग ऐतिहासिक सन्दभ भूल जाते ह। इस अवस्था पर देशी तथा विदेशी सावभौम राज्यो के भाग्य *अलग-अलग हो जाते हैं। देशी सावभौम राज्य, चाहे जो भी उसके गुण हो अपनी प्रजा द्वारा* स्वीकार किये जान योग्य बनने लगता है और सामाजिक जीवन के ढाँचे में अधिक से-अधिक उपयुक्त समझा जाता है। दूसरी ओर विदेशी सावभौम राज्य बहुत अधिक अप्रिय हो जाता है। उसकी प्रजा उसके विदेशी लक्षणो पर बहुत अधिक नाराज हो जाती है और अपनी आँखें दृढतापूवक उसकी उस लाभदायक सेवा की ओर से मूद लती है जिसे वे राज्यो के लिए कर चुके होते ह या करते रहते ह।

इस विरोधी उदाहरण में एक रोमन साम्राज्य है जिसने हेलेनी ससार को सावभौम राज्य दिया तथा ब्रिटिश राज्य जिसन हिन्दू सभ्यता को विदेशी सावभौम राज्य दिया। अनक उद्धरण दिये जा सकते हैं जिनसे मालूम होता है रोमन साम्राज्य की बाद की प्रजा की साम्राज्य के प्रति कितनी भक्ति तथा प्रेम था। उस समय के बाद भी जब यह अपना काय समुचित दक्षता स

समाप्त कर देती है जब यह प्रत्यक्षत नष्ट हो जाती है। ४०० ई० में सिकन्दरिया के क्लाडियन द्वारा लटिन की षटपदी में रचित 'डि कान्सुलेट स्टी स्टीलिकोनिस' नामक कविता के इस अश में कदाचित् रोमन साम्राज्य के लिए अत्यन्त प्रभावोत्पादक सम्मान दिखाया गया है—

वह दूसरे विजेताओ से अधिक गर्वीली थी
अपने बन्दियो को आलिंगन करती थी
माँ की भाँति, प्रियतमा की भाँति नही, मित्रो को दास बनाती
अपने बाहुपाश में उसने सारे राष्ट्रो को भर लिया
कौन आज विश्व भर के राज्यो पर शासन करता है
और उसका (रोम का) ऋणी नही है।[1]

यह सिद्ध करना सरल होगा कि ब्रिटिश राज अनेक दृष्टियो से बहुत ही उदार तथा रोमन साम्राज्य की अपेक्षा अधिक लाभप्रद था, किन्तु हिन्दुस्तान के किसी क्लाडियन रूपी कवि ने उसकी प्रशसा में रचना नही की।

यदि हम दूसरे विदेशी सार्वभौम राज्यो के इतिहास पर ध्यान दें तो हम उनकी प्रजा में विपरीत भावनाओ को वैसा ही उठता हुआ ज्वार देखेंगे जसा हमने ब्रिटिश भारत म देखा है। बबिलोनी समाज पर साइरस द्वारा आरोपित विदेशी सीरियाई सार्वभौम राज्य घणा का ऐसा पात्र हुआ कि अस्तित्व में आने के बाद वह दो ही शती पूरी कर सका कि ई० पू० ३३१ में बबिलोनी पुरोहित वसे ही विदेशी विजेता मकदुनिया के सिकन्दर के हार्दिक स्वागत के लिए तयार हो गये जसा कि इस युग में भारत के कुछ उग्र राष्ट्रवादी किसी जापानी क्लाइव के स्वागत की योजना बनाते। ईसा की १४वी शती के प्रथम चतुर्थांश में परम्परावादी ईसाई ससार में जिस विदेशी उसमानिया राज्य का मारमोरा सागर के एशियाई किनार के उसमानिया राष्ट्रमण्डल के यूनानी समथको न स्वागत किया वही १८२१ ई० में राष्ट्रवादी यूनानियो की घणा का पात्र बन गया। पाँच शतियो न यूनानियो में भावना का परिवर्तन कर दिया। इसके ठीक विपरीत भावना का परिवर्तन गआल में वरसिनगेटारिक्स के रोमन-आतक और सिडोनिअस अपोल्लिनरिस के रोमन प्रेम में हुआ।

विदेशी सस्कृति के साम्राज्य निर्माताओ द्वारा उत्पन घृणा का दूसरा प्रसिद्ध उदाहरण उन मगोल विजताओ क प्रति चीनियो की घोर घणा का है, जिन्होने सुदूर पूर्वी ससार में बहुत आवश्यक सार्वभौम राज्य बनाया। यह घृणा उस सहनशील्ता का विचित्र विरोध जान पडती है जो ढाई शतियो के माचू शासन के बाद उसी समाज ने स्वीकार किया था। इसका कारण यह है कि माचू लोग सुदूरपूर्वी ससार के जगली थे। इनमें किसी विदेशी सस्कृति का स्पश नही था। जब कि मगालो की बबरता सीरियाई सस्कृति के मिलने से, जो नेस्टोरी ईसाई अग्रगामियो के लान से कम हो गयी थी और कुछ उस उदारता के कारण जिससे उन्होने योग्य तथा अनुभवी लोगो की सेवाओ को ग्रहण करके प्राप्त किया था। चीन ने मगोली शासन की अप्रियता का

1 आर० ए० नाक्स का अनुवाद—सी० आर० एल फ्लेचर द्वारा—द मेकिंग आफ वेस्टन यूरोप, पृ० ३। हिन्दी अनुवाद।—अनुवादक

वास्तविक विवेचन चीनी प्रजा और परम्परावादी ईसाई सनिका तथा मगोल खाकान के मुसल्मान शासको के बीच विस्फोटक सम्पक सम्बधी मार्कोपोलो के विवरण से स्पष्ट है।

यह कदाचित् सुमेरी सस्कृति का ही मिश्रण है जिसने मिस्री प्रजा के लिए हाइक्सो को अग्राह्य बनाया जब कि लिबिया के बबरा का मिस्र में बाद के अनधिकारी प्रवेश बिना किसी विरोध के स्वीकार कर लिया गया। वास्तव म हम सामान्य सामाजिक नियम बनाने का साहस इसलिए कर सकते ह कि वे बबर आक्रामक जो बिना किसी विदेशी प्रभाव के आते ह अपना भाग्य निर्माण करने में समर्थ होते हैं और जो जनरेला के पहले विदेशी या अधर्मी प्रभाव लिये होते ह, उन्हें अपने को किसी-न किसी प्रकार शुद्ध रखना पडता है नहीं तो या तो व निष्कासित कर दिये जाते ह या निमूल कर दिय जाते हैं।

अमिश्रित बबरो का पहले लें। आय, हित्ताइत और अरक्यिन में से प्रत्येक ने सभ्यता के द्वार पर रखते हुए अपने लिए बबर देवस्थान का निजी रूप स आविष्कार किया और आक्रमण के बाद भी इस बबर उपासना पर डटे रहे। उनमें स प्रत्येक सफल हुए अनान पर भी और नयी सभ्यता सस्थापित की जैसे भारतीय, हित्ताइत और हेलेनी और फ्रैंक, अंग्रेज, स्कैंडिनेवियाई, पोलण्डवासी और मगयार लोग जो स्थानीय बहुदेवतावाद स पश्चिमी कथोलिक धम में परिवर्तित हुए तथा पश्चिमी ईसाई साम्राज्य के निर्माण के सम्पूण और पश्चिमी ईसाई समाज के मुख्य निर्माता हुए। इसके विपरीत हाइक्सा जो 'सेट' के उपासक थे वे मिस्री ससार से तथा मगोल लोग चीन से उखाड फेंके गय।

अरब के आदिम मुसल्मान हमारे नियम का अपवाद ह। यहाँ हेल्नी समाज के बाहरी सवहारा का एक बबर दल था जिसे उस जनरला में अत्यधिक सफलता प्राप्त हुई जिसके साथ ही उस समाज का विघटन हो गया यद्यपि व सीरियाई धम के विद्रूप को ग्रहण किय हुए थ और उस प्रजा के मोनोफाइसाइट ईसाई धम को स्वीकार नहीं किया, जिसका देश उन्होंने रोमन साम्राज्य से छीना था। जब रोमन साम्राज्य के पूर्वी प्रदेशों के आक्रमण के साथ सारा ससानियाई साम्राज्य पराजित हो गया, रोमन साम्राज्य के उत्तराधिकारी राज्यो ने, जिन्हें अरबा ने सीरियाई धरती पर स्थापित किया था, अपने को सीरियाई सावभौम राज्य में परिवर्तित कर दिया, जो असमय ही एक हजार साल पहले उस समय नष्ट हो गया था, जब सिकन्दर ने अकेमिनाडी को पराजित किया था। और अरबी मुसलिमो के सामने इस्लाम के लिए नया क्षितिज सामने आया।

ऐसा जान पडता है कि इस्लाम का इतिहास असाधारण उदाहरण है जिससे हमारी खोज का सामान्य परिणाम अमान्य नहीं ठहरता। सामान्य रूप में यह निष्कष निकालना उचित होगा कि बाहरी सवहारा तथा शक्तिशाली अल्पसख्यक के लिए विदेशी प्रेरणा बाधक है क्योंकि उन दोनो टुकडो के व्यवहार में यह कुठा तथा सघष उत्पन्न करता है, जिनमें विघटनोन्मुख समाज बँट जाता है।

आन्तरिक सवहारा

शक्तिशाली अल्पसख्यक तथा बाहरी सवहारा के सम्बन्ध में निकाले गय निष्कर्षों के विपरीत हम देखते ह कि आन्तरिक सवहारा के लिए विदेशी प्रेरणा अभिशाप नहीं है वरन् वरदान है। जिन लोगो को यह प्राप्त होती है वे अपने विजेताओ को महान् शक्ति द्वारा बन्

में कर लेते हैं तथा और उस उद्देश्य को प्राप्त करते है, जिसके लिए वे पैदा हुए ह । इस वक्तव्य की जाच उन उच्चतर धर्मों तथा सावभौम धमतन्त्रा की परीक्षा से की जा सकती है जो आन्तरिक सवहारा के विशेष काय रहे हैं । इस सर्वेक्षण से हम जानते ह कि यह शक्ति उनकी आत्मा में उपस्थित विदेशी शक्ति और उसके अनुपात की चिनगारी पर निभर है ।

उदाहरणाय, ओसाइरिस की पूजा मिस्री सवहारा का 'उच्चतर धम रहा है । इसके पहले का पता लगाया जा सकता है कि यह तम्मूज की सुमेरी पूजा की विदेशी उत्पत्ति है ।हेलेनी आन्तरिक सवहारा के उच्चतर धर्मों के विभिन्न रुपा का पता हम पिछले अनेक विदेशी मूलो में निश्चित रूप से पा सकते है । आइसिस की पूजा में मिस्री सिबेले की पूजा में हित्ताइत ईसाइयत तथा मिस्रवाद में सीरियाई और महायान में भारतीय प्रभाव है । इन उच्चतर धर्मो में से प्रथम चार मिस्री, हित्ताइत तथा सीरियाई लोगा द्वारा सम्यापित किये गये थे । जो सिकन्दर की विजया से हेलेनी आन्तरिक सवहारा में बलात् सम्मिलित किये गये थे । पाचवा उच्चतर धम भारतीय जनता की उत्पत्ति थी । इसे भी ईसा पूव दूसरी शती में उपर्युक्त पद्धति से इयुथि डेमिक बक्ट्रिया के यूनानी राजकुमारो की भारतीय ससार में विजय द्वारा बलात सम्मिलित किया गया था । यद्यपि गम्भीरतापूवक ये आन्तरिक आध्यात्मिक तत्त्व की दष्टि से एक-दूसरे से भिन्न ह तो भी उनमें से पाँचो कम स कम ऊपरी दष्टि में मूलरूप से विदेशी हैं ।

कुछ ऐसे भी उदाहरण हैं जिनमें समाज पर विजय प्राप्त करने का 'उच्चतर धम का प्रयत्न असफल रहा है । इन दष्टान्ता से हमारे निष्कप विफल नही हो सकते । उदाहरणाथ उसमानिया शासन में इस्लाम के शिया सम्प्रदाय को परम्परावादी ईसाई ससार में सावभौम धम के रूप में निर्मित करने का निष्फल प्रयत्न किया गया । चीन में ऐसा ही निष्फल प्रयत्न किंग राज्यवश के अन्तिम और माचू राज्यवश की प्रथम शती में कथोलिक ईसाई धम को सावभौम धम बनाने में तथा जापान में सकट-काल से टोकुगावा शोगुनेट के सक्रमण के समय तक किया गया । उसमानिया साम्राज्य के शिया तथा जापान के कथोलिक धर्मावलम्बी अपनी सम्भावी आध्यात्मिक विजयो से धोखा खा गये और अपने नकली राजनीतिक उद्देश्य के लिए शोषित किये गये । सुदूर पूर्वी दशन और सस्कृति की परम्परागत भाषा में विदेशी कथोलिक धम के व्यवहारा के रूपान्तर के काय को चलाते रहने के लिए जेजुइट मिशनरी को पोपतन्त्र की अनुमति न दना ही चीन में कथोलिकवाद की असफलता का कारण था ।

हम निष्कप निकाल सकते हैं कि धम परिवर्तित लोगो को जीतने में विदेशी 'झलक' उच्चतर धम के लिए सहायक है बाधक नही । कारण खोजने के लिए दूर नही जाना होगा । उस पतनोन्मुख समाज स जिससे वह अलग हो रहा है, आन्तरिक सवहारा अपनी नयी अभिव्यक्ति खोजना है । और इसी तरह विदेशी चिनगारी प्राप्त होती है । उसकी नवीनता ही आकृष्ट करती है । किन्तु इसके आकषक हो सकने के पहले ही नये सत्य का समझना पडता है और जब तक अभिव्यक्ति का यह आवश्यक काय नही हो जाता तब तक नवीन सत्य लोगो को आकृष्ट नही कर सकता । यदि सन्त पाल से लेकर बाद के धमतन्त्र पादरी स्वय पहली चार या पाँच शतिया तक दढ न होते तो रोमन साम्राज्य में ईसाई धम की विजय नही हो सकती थी । ईसाई सिद्धान्त को हेलनी दशन में रूपान्तरित करने, रोमन असैनिक सेवाओ के नमूने पर ईसाई धार्मिक शासन का निर्माण करने, ईसाई सस्कार-पद्धति को यूनानियो एव रोमवासिया के गुप्त धार्मिक कृत्या

वास्तविक विवेचना चीनी प्रजा और परम्परावादी ईसाई शक्ति तथा मंगोल खाकान के मुसलमान धाराओं के बीच विस्फोटक सम्पर्क सम्बन्धी मार्जीनालों में विवरण से स्पष्ट है।

यह कदाचित् सुमेरी संस्कृति का ही मिश्रण है जिसने मिस्री प्रजा के लिए हाइक्सास को असह्य बनाया जब कि लिबिया के बर्बरों का मिस्र में बाद के अधिकारी प्रवेश बिना किसी विरोध के स्वीकार कर लिया गया। वास्तव में हम सामान्य सामाजिक नियम बनाने का साहस इसलिए कर सकते हैं कि वे बर्बर आक्रामक जो बिना किसी विदेशी प्रभाव के आते हैं अपना भाग्य निर्माण करने में समर्थ होते हैं और जो जारेला के पदों विदेशी या अधर्मी प्रभाव लिए होते हैं, उन्हें अपने को किसी-न किसी प्रकार युद्ध रखना पड़ता है नहीं तो या तो वे निष्कासित कर दिये जाते हैं या निर्मूल कर दिए जाते हैं।

अमिश्रित बर्बरों को पहले लें। आर्य, हिताइत और अरबियन में से प्रत्येक ने सभ्यता के द्वार पर रहते हुए अपने लिए बर्बर देवस्थान का निजी रूप से आविष्कार किया और आक्रमण के बाद भी इस बर्बर उपासना पर डटे रहे। उनमें से प्रत्येक शक्त हुए अपान पर भी और नयी सभ्यता संस्थापित की जैसे भारतीय, हिताइत और हलनी और फ्रैंक, अंग्रेज, स्कैंडिनेवियाई, पोलैण्डवासी और मगयार लोग जो स्थानीय बहुदेवतावाद से पश्चिमी कैथोलिक धर्म में परिवर्तित हुए तथा पश्चिमी ईसाई साम्राज्य के निर्माण के सम्पूर्ण और पश्चिमी ईसाई समाज के मुख्य निर्माता हुए। इसके विपरीत हाइक्सास जो 'सेट' के उपासक थे वे मिस्री संसार से तथा मंगोल लोग चीन से उखाड़ फेंके गये।

अरब के आदिम मुसलमान हमारे नियम का अपवाद हैं। यहाँ हेलेनी समाज के बाहरी सर्वहारा का एक बर्बर दल था जिसे उस जनरला में अत्यधिक सफलता प्राप्त हुई जिसके साथ ही उस समाज का विघटन हो गया यद्यपि वे सीरियाई धर्म के विद्रूप को ग्रहण किये हुए थे और उस प्रजा के मोनोफाइसाइट ईसाई धर्म को स्वीकार नहीं किया, जिनका देश उन्होंने रोमन साम्राज्य से छीना था। जब रोमन साम्राज्य के पूर्वी प्रदेशों के आक्रमण के साथ सारा ससानियाई साम्राज्य पराजित हो गया, रोमन साम्राज्य के उत्तराधिकारी राज्यों ने, जिन्हें अरबों ने सीरियाई धरती पर स्थापित किया था, अपने को सीरियाई सार्वभौम राज्य में परिवर्तित कर दिया, जो असमय ही एक हजार साल पहले उस समय नष्ट हो गया था, जब सिकन्दर ने अकेमिनीडी को पराजित किया था। और अरबी मुसलिमों के सामने इस्लाम के लिए नया क्षितिज सामने आया।

ऐसा जान पड़ता है कि इस्लाम का इतिहास असाधारण उदाहरण है जिससे हमारी खोज का सामान्य परिणाम अमान्य नहीं ठहरता। सामान्य रूप में यह निष्कर्ष निकालना उचित होगा कि बाहरी सर्वहारा तथा शक्तिशाली अल्पसंख्यक के लिए विदेशी प्रेरणा बाधक है, क्योंकि उन दोनों टुकड़ों के व्यवहार में यह कुंठा तथा संघर्ष उत्पन्न करता है, जिनमें विघटनोन्मुख समाज बँट जाता है।

आन्तरिक सर्वहारा

शक्तिशाली अल्पसंख्यक तथा बाहरी सर्वहारा के सम्बन्ध में निकाले गये निष्कर्षों के विपरीत हम देखते हैं कि आन्तरिक सर्वहारा के लिए विदेशी प्रेरणा अभिशाप नहीं है, वरन् वरदान है। जिन लोगों को यह प्राप्त होती है वे अपने विजेताओं को महान् शक्ति द्वारा व

में कर लेते ह तथा और उस उद्देश्य को प्राप्त करते हैं, जिसके लिए वे पैदा हुए ह । इस वक्तव्य की जाच उन उच्चतर धर्मों तथा सावभौम धमतन्त्रो की परीक्षा से की जा सकती है जो आन्तरिक सवहारा के विशेष काय रहे हैं । इस सर्वेक्षण से हम जानते ह कि यह शक्ति उनकी आत्मा में उपस्थित विदेशी शक्ति और उसके अनुपात की चिनगारी पर निभर है ।

उदाहरणाथ, ओसाइरिस की पूजा मिस्री सवहारा का 'उच्चतर धम रहा है । इसके पहले का पता लगाया जा सकता है कि यह तम्मूज की सुमेरी पूजा की विदेशी उत्पत्ति है । हेलेनी आन्तरिक सवहारा के उच्चतर धर्मां के विभिन्न रूपा का पता हम पिछले अनेक विदेशी मूलो में निश्चित रूप से पा सकते ह । आइसिस की पूजा में मिस्री, सिबेले की पूजा में हिताइत ईसाइयत तथा मित्रवाद में सीरियाई और महायान में भारतीय प्रभाव है । इन उच्चतर धर्मों में से प्रथम चार मिस्री, हिताइत तथा सीरियाई लोगो द्वारा सस्थापित किये गये थे । जो सिकन्दर की विजया से हलेनी आन्तरिक सवहारा में बलात् सम्मिलित किये गये थे । पाचवा उच्चतर धम भारतीय जनता की उत्पत्ति थी । इसे भी ईसा पूव दूसरी शती में उपयुक्त पद्धति से इयुथि डेमिक बक्ट्रिया के यूनानी राजकुमारो की भारतीय ससार में विजय द्वारा बलात सम्मिलित किया गया था । यद्यपि गम्भीरतापूवक ये आन्तरिक आध्यात्मिक तत्व की दष्टि से एक-दूसरे से भिन्न ह तो भी उनमें से पाचा कम से कम ऊपरी दष्टि में मूलरूप से विदेशी हैं ।

कुछ एसे भी उदाहरण ह जिनमें समाज पर विजय प्राप्त करने का 'उच्चतर धम का प्रयत्न असफल रहा है । इन दष्टान्तो से हमारे निष्कष विफल नही हो सकते । उदाहरणाथ उसमानिया शासन में इस्लाम के शिया सम्प्रदाय को परम्परावादी ईसाई ससार में सावभौम धम के रूप में निर्मित करने का निष्फल प्रयत्न किया गया । चीन में ऐसा ही निष्फल प्रयत्न किंग राज्यवश के अन्तिम और माचू राज्यवश की प्रथम शती में कैथोलिक ईसाई धम को सावभौम धम बनाने में तथा जापान में सकट-काल से टोकुगावा शोजुनेट के सक्रमण के समय तक किया गया । उसमानिया साम्राज्य के शिया तथा जापान के क्योलिक धर्मावलम्बी अपनी सम्भावी आध्यात्मिक विजयो से धोखा खा गये और अपने नकली राजनीतिक उद्देश्य के लिए शोषित किये गये । सुदूर पूर्वी दशन और सस्कृति की परम्परागत भाषा में विदेशी कथोलिक धम के व्यवहारा के रूपान्तर के काय को चलाते रहने के लिए जेजुइट मिशनरी को पोपतन्त्र की अनुमति न देना ही चीन में कथोलिकवाद की असफलता का कारण था ।

हम निष्कष निकाल सकते ह कि धम परिवर्तित लोगा को जीतने में विदेशी झलक' उच्चतर धम के लिए सहायक हैं बाधक नहीं । कारण खोजने के लिए दूर नही जाना होगा । उस पतनोन्मुख समाज से जिससे वह अलग हो रहा है आन्तरिक सवहारा अपनी नयी अभिव्यक्ति खोजता है । और इसी तरह विदेशी चिनगारी प्राप्त होती है । उसकी नवीनता ही आकृष्ट करती है । किन्तु इसके आवषक हो सकने के पहले ही नये सत्य का समझना पडता है और जब तक अभिव्यक्ति का यह आवश्यक काय नही हो जाता, तब तक नवीन सत्य लोगा को आकृष्ट नहा कर सकता । यदि सन्त पाल से लेकर बाद के धमतन्त्र पादरी स्वय पहली चार या पाँच शतिया तक दृढ न होते तो रोमन साम्राज्य में ईसाई धम की विजय नही हो सकती थी । ईसाई सिद्धान्त को हेलेनी दशन में रूपान्तरित करने, रोमन असनिक सेवाओं के नमूने पर ईसाई धार्मिक शासन का निर्माण करने, ईसाई सस्कार-पद्धति को यूनानिया एव रोमवासियो के गुप्त धार्मिक कृत्या

के अनुसार ढालने तथा बहुदेवतावादी धम को ईसाई त्योहारो में परिवर्तित और ईसाई सन्तो के सम्प्रदायो द्वारा बहुदेवतावादी नायको के सम्प्रदाया में स्थानान्तरित करने में उन ईसाई पादरियो ने दढता दिखायी । यह ऐसा काय था जो चीन के जेजुइट मिशनरी के पोप शासन के निर्देश द्वारा जड से नष्ट कर दिया गया । यदि सन्त पाल के विरोधी यहूदी ईसाई सम्मेलनो और सघर्षों में विजयी होते—जैसा ईसा के शिष्यो के सिद्धान्ता तथा सन्त पाल के आरम्भिक धमपत्रो में वर्णित है—तो अहिंसा के धरातल पर ईसाई मिशनरियो की प्रथम चढाई के बाद हेलेनी ससार का धार्मिक परिवतन विनाशात्मक ढग से रोका जा सकता था ।

हमारे 'उच्चतर धर्मों' में यहूदीवाद, पारसी धम तथा इस्लाम स्थानीय प्रेरणा है । इन तीना धर्मों का कायक्षेत्र सीरियाई ससार में था और इन्हाने प्रेरणाएँ भी उसी क्षेत्र से ग्रहण की । हिन्दू धम भी स्पष्ट रूप से प्रेरणा तथा कायक्षेत्र से भारतीय था । हिन्दू धम तथा इस्लाम दोनो हमारे नियम के अपवाद रूप में अवश्य समझे जाने चाहिए, किन्तु यहूदी तथा पारसी धम अन्तत हमारे नियम के उदाहरण ह । ई० पू० आठवी से लेकर छठी शती के बीच यहूदी एव पारसी धम से उत्पन्न हुई सीरियाई जनता के रूप में वे विच्छखल लोग थे जिनकी बबिलोनी समाज के आन्तरिक सवहारा में बबिलोनी प्रभावशाली अल्पसख्यका की असीरी सेना द्वारा बलात् भरती की गयी । यह वह बबिलोनी आक्रमण था जिसने यहूदी तथा पारसी धार्मिक प्रतिक्रियाओ का आह्वान उस सीरियाई आत्मा से किया था जिसकी कठोर परीक्षा अपेक्षित थी । इतना देखने पर हमें यहूदीवाद तथा पारसी धम का उन धर्मों के रूप में स्पष्ट वर्गीकरण करना पडता है, जिनका आरम्भ बबिलोनी समाज के आन्तरिक सवहारा में सीरियाई रगरूटा की अनिवाय भरती द्वारा किया गया था । यहूदीवाद 'बबिलोनिया के जल से' उत्पन्न हुआ जसे ईसाई धम ने हेलेनी ससार की पाल की सभाओ में अपना रूप ग्रहण किया था ।

यदि बबिलोनी सभ्यता का विघटन वसा ही हुआ जैसा हेलेनी सभ्यता का हुआ था और यदि ये सभ्यताए उन्ही अवस्थाओ से गुजरी ह तो यहूदी तथा पारसी धम का जन्म तथा विकास ऐतिहासिक दृष्टि से वसा ही है जसी बबिलोनिया की घटनाओ की कहानी है तथ्यत वसी ही हेलेनी इतिहास की घटनाए ह । ऐसा ही ईसाई धम तथा मिथ्रवाद के जन्म तथा विकास में हुआ । बबिलोनी इतिहास की समाप्ति समय स पूव हो गयी । इस तथ्य से हमारी दृष्टि बिलकुल बदल जाती है । बैबिलोनी सावभौम राज्य का नष्ट करने का काल्डियन प्रयास विफल हो गया और *अपने आन्तरिक सवहारा में भरती सीरियाई रगरूट केवल परम्परा तोड देने में ही समर्थ नहीं* हुए वरन् उन्होंने बैबिलोनी विजेताओ को शारीरिक के साथ-ही-साथ आत्मिक रूप से भी बन्दी बनाकर रखना ही बदल दिया । ईरानी लोग सीरियाई धम में परिवर्तित हुए, बबिलोनी संस्कृति में नही । साइरस द्वारा निर्मित अकैमेनी साम्राज्य ने सीरियाई सावभौम राज्य की भूमिका अदा करने लगा । यह इस दृष्टि से हुआ कि यहूदी तथा पारसी धर्मों ने अपना वतमान आविर्भाव देशी प्रेरणाओ के साथ सीरियाई धर्मों के रूप में किया । अब हम देख सकते हैं कि ये धम अपने मूल रूप में बबिलोनी आन्तरिक सवहारा के धम थे जिनमें सीरियाई प्रेरणा मिली थी ।

यदि 'उच्चतर धम' में विदेशी प्रभाव हो तो स्पष्ट रूप से उस धम की प्रकृति का दो सभ्यताओ के सम्पर्कों पर ध्यान दिये बिना कभी भी नहीं समझा जा सकता । हम देखते हैं कि इस नियम के दो मुख्य अपवाद हैं । इन दो सभ्यताओ में से एक वह है जिसमें आन्तरिक सवहारा द्वारा नया

धम पदा होता है तथा दूसरा वह है जिससे विदेशी प्रेरणा या प्रेरणाएँ ली जाती है। इस तथ्य के विचार के लिए नयी बौद्धिक प्रवृत्ति की आवश्यक्ता है क्योंकि हमें वह आधार ही त्याग देने की आवश्यक्ता है जिस पर अब तक हमारा अध्ययन स्थापित था। जहा तक हमने सभ्यता शब्द की व्याख्या की है हम स्वीकार कर चुके ह कि कोई अकेली सभ्यतापूण सामाजिक इकाई के रूप में अध्ययन का व्यावहारिक क्षेत्र प्रस्तुत करने में सक्षम होगी। ऐसी कोई भी सभ्यता विदेश की सीमाओ से बाहर किसी भी सामाजिक तत्त्व के रूप में किसी विशेष समाज से पृथक् होने पर भी अध्ययन की जा सकती है। किन्तु हम स्वय वैसे ही जाल में उलझे हुए पाते है जैसा इस पुस्तक के आरम्भिक पृष्ठो में उलझे थे कि पृथक राष्ट्रीय इतिहास बोधगम्य होता है। इसके पश्चात् हमें उन सीमाओ को पार करना पडेगा जिनमें हम अब तक काय करने में समथ थे।

१९ सामाजिक जीवन में आत्मा का भेद

(१) आचरण, भावना और जीवन का विकल्प

जिस सामाजिक विकास में भेद की अवस्था हम परीक्षा कर रहे थे यह सामूहिक अनुभूति है, इसीलिए यह ऊपरी है । इसका महत्त्व इसलिए है कि यह आंतरिक तथा आध्यात्मिक भेद का बाहरी चिह्न है । मानव की आत्माओं में भेद की वृत्ति अपने अन्दर छिपा उस भेद का छिपाये हुए पायी जाती है जो समाज के धरातल पर स्पष्ट होता रहता है । समाज ही मानव का तत्सम्बन्धी क्रिया-क्षेत्र का सामान्य स्थल है और उसके उन विविध रूपों पर हम अब ध्यान देंगे, जिनमें आन्तरिक भेदवृत्ति पैदा होती है ।

विघटनोन्मुख समाज के सदस्यों की आत्माओं में भेद स्वयं अनेक रूपों में दिखाई देता है, क्योंकि प्रत्येक में यह जीवन, भावना और आचरण की भिन्नताओं के साथ उत्पन्न होता है जिसे हम मानव की क्रियाशीलता के लक्षण के रूप में पा चुके हैं जो अपनी भूमिका सभ्यताओं की उत्पत्ति एवं विकास में अदा करता है । विघटन की अवस्था में इनमें से प्रत्येक की क्रिया पारस्परिक विरोधात्मक तथा विभिन्नतापूर्ण रूपों में अलग हो जाती है । इसमें चुनौती की प्रतिक्रिया दो विकल्पों का रूप धारण करती है । उनमें एक सक्रिय है और दूसरी निष्क्रिय, किन्तु इनमें से कोई भी सजनात्मक नहीं है । उस आत्मा के लिए इतनी ही स्वतन्त्रता है कि निष्क्रिय एवं सक्रिय विकल्पों के बीच केवल एक को चुन ले । जो सामाजिक विघटन के दुखान्त नाटक में अपनी सजनात्मक क्रिया के लिए अवसर (यद्यपि क्षमता को नहीं) खो चुकी है । विघटन की प्रणाली जैसे-जैसे कार्य करती रहती है यह विकल्प अपनी सीमा में अधिक दृढ़, अपने रास्ते से विचलित होने में अधिक तीव्र और उसके परिणामों में महत्त्वपूर्ण हो जाता है । यह कहना पड़ता है कि आत्मा में भेद का आध्यात्मिक अनुभव गत्यात्मक आन्दोलन है स्थैतिक नहीं ।

व्यक्तिगत आचरण के दो मार्ग हैं जो सजनात्मक शक्ति के अभ्यास के लिए विकल्प हैं । ये दोनों आत्माभिव्यक्ति का प्रयत्न करते हैं । निष्क्रिय प्रयत्न समर्पण में होता है जिसमें आत्मा अपने को छोड़ देती है इस विश्वास पर कि वह अपनी इच्छाओं और अनिच्छाओं पर बन्धन न लगाकर प्रकृति के अनुसार रहेगी तथा वह रहस्यपूर्ण देवी से सजनात्मकता का मूल्यवान् उपहार फिर पा जायगी जिसे वह जानती है कि खो जायेगा । सक्रियता का विकल्प आत्म निग्रह का प्रयास है जिसमें आत्मा नियन्त्रित होती है और अपने स्वाभाविक आवेगों को मर्यादित रखती है । ऐसा करने में उसे दूसरा विश्वास है कि प्रकृति क्रियाशीलता में बाधक है वह क्रियाशीलता का उद्गम नहीं है । और प्रकृति पर अधिकार करना ही खोई हुई मन शक्ति की सजनात्मकता को पुनः प्राप्त करना है ।

इस प्रकार सामाजिक आचरण के दो मार्ग हैं जो उन सजनात्मक व्यक्तियों के अनुकरण के विकल्प हैं जिन्हें हमने खतरनाक होने पर भी सामाजिक विकास के लिए सरल मार्ग समझा

है। अनुकरणा के ये दोना विकल्प उस व्यूह से अलग करने का प्रयत्न है जो 'सामाजिक अभ्यास' में असफल हो चुका है। सामाजिक गतिरोध को तोडने का यह निष्क्रिय प्रयत्न भगदड का रूप ले लेता है। सैनिक व्याकुलता के साथ अनुभव करता है कि टुकडी अपनी मर्यादा खो चुकी है जो अब तक अपने मनोबल दृढ किये थी। इस अवस्था में उसका ऐसा विश्वास हो जाता है कि वह अपने सनिक कतव्यो से मुक्त कर दिया गया है। इस निम्न मनोवत्ति में वह अपने साथिया को मँझधार में छोडकर अपनी सुरक्षा की व्यर्थ की आशा में श्रेणी से पीछे की ओर भागता है। इसी कठिन परीक्षा का सामना करने का एक दूसरा विकल्प है जिसे बलिदान कहते ह। वास्तव में शहीद वह सनिक है जो कतव्य की प्रेरणा से अपनी पक्ति से आगे बढ जाता है। जब कि सामान्य परिस्थिति में कतव्य की माँग है कि सैनिक को अपनी जान की जोखिम वही तक उठानी चाहिए जहाँ तक बडे अफसरा के आदेशा के पालन के लिए आवश्यक हो। शहीद अपने आदश के पालन का प्रसाद प्राप्त करने के लिए मृत्यु का आलिंगन करता है।

जब हम आचरण के धरातल से भावना की ओर बढते ह, तब हमें व्यक्तिगत भावना के दो मार्गों पर ध्यान देना चाहिए, जो जीवन शक्ति के उस आन्दोलन के विपरीत विकल्प ह जिसमें विकास की प्रवत्ति प्रकट होती है। ये दाना अनुभूतियाँ वे वेदनापूण चेतनाएँ ह जो उन पाशव शक्तिया से भाग जाने में प्रकट होती ह जो आक्रामक हो गयी ह और जिन्हाने अपना प्रभुत्व जमा लिया है। इस क्रमबद्ध और निरन्तर नैतिक पराजय की चेतना की निष्क्रिय अभिव्यक्ति टाल मटोल में है। अपने वातावरण को नियत्रित करने की असफलता के ज्ञान से पराजित आत्मा दुबल हो जाती है। यह विश्वास करने लगती है कि सारा विश्व और आत्मा भी उस शक्ति की कृपा पर है जो उतनी ही अविवेकी है जितनी अजेय जो देवत्वहीन देवी है दोहरे मुख वाली जिसका नाम है या जिसे 'आवश्यकता' के नाम से पुकारा जाता है। थामस हार्डी के 'डाइनास्टस' के कोरसो में देविया के इस जोडे का साहित्यिक रूप दिया गया है। वकल्पिक रूप से जो नतिक पतन पराजित आत्मा को त्याग देता है, आत्मा को नियत्रित नही कर सकता। इस दृष्टि स टालमटोल की जगह पाप की भावना है।

हमें सामाजिक भावना के दो मार्गों को भी देखना है जो उस ज्ञान के विकल्प ह जो सभ्यताओ के विकास के अन्तर की वस्तुपरक प्रक्रिया के आत्मपरक रूप ह। ये दोनो भावनाएँ रूप (फाम) का ज्ञान नही प्राप्त कर सका। यद्यपि चुनौती का सामना करने में वे एक-दूसरे के नितान्त विपरीत ह। निष्क्रिय प्रतिक्रिया सकीणता की वह भावना है जिसमें आत्मा स्वय रूपान्तरित होने के लिए आगे बढती है। भाषा, साहित्य और कला के माध्यम में यह सकीणता की भावना देश भाषा (लिंगुआ फ्राका) के रूप में प्रकट होती है और उसी प्रकार साहित्य, चित्रकला, मूर्ति कला और वास्तुकला को मानक रूप देने में प्रकट होती है। यही सकीणता दशन और धम के क्षेत्र में सहतिवाद को पैदा करती है। सक्रिय प्रतिक्रिया जीवन के उस रूप को नष्ट करती है जो स्थानीय और नश्वर होती है। सक्रिय प्रतिक्रिया का आह्वान जीवन की दूसरी शली का अनुसरण करती है जो विश्वव्यापी और शाश्वत है। जो सवव्यापी है, जो सब जगह है जो पूण है। यह सक्रिय प्रतिक्रिया एकता की भावना को जागत करती है जो ज्या ज्या मानवता को एकता का विस्तार होता है, मानव की एकता से सृष्टि के द्वारा ईश्वर की एकता को पहुँचती है।

यदि हम तीसरी बात में जीवन के धरातल पर आयें तो हमें पुरा विकल्पिक प्रतिक्रियाओं के दो जोडे दिखेंगे। किन्तु, इस धरातल पर चित्र पिछले नमूने से तीन दृष्टियों से भिन्न है। पहली बात यह है कि विकास का मुख्य लक्षण एक ओर की गति है उसके स्थान पर जो विकल्प होता है, वह गति का स्थान नही लेता, गति में परिवर्तन करता है। दूसरी बात यह है कि विकल्पों के जोडे उसी एक गति के भिन्न रूप होते हैं। इस एक मात्र गति को हम ब्रह्माण्ड से सूक्ष्म जगत् की ओर की गति का क्षेत्र कह सकते हैं। तीसरी बात यह है कि दोनों जोडों में इतना अन्तर है कि उनके दोहरे होने का कारण स्पष्ट हो जाता है। एक जोडे में प्रतिक्रिया हिंसात्मक है और दूसरे में अहिंसात्मक। हिंसात्मक जोडे में निष्क्रिय प्रतिक्रिया को पुरातनवाद कहा जा सकता है और सक्रिय प्रतिक्रिया को भविष्यद्वाद। अहिंसात्मक जोडे में निष्क्रियता को अलग होने तथा सक्रियता को रूपान्तरण कहा जा सकता है।

पुरातनवाद और भविष्यद्वाद समय के आयाम में विकल्प मात्र प्रयत्न हैं। यह उस कार्य क्षेत्र की एक आध्यात्मिक धरातल से दूसरे धरातल की ओर ले जाने के परिवर्तन का विकल्प है, जो गतिशीलता की विशेषता है। दोनों में, ब्रह्माण्ड के स्थान पर सूक्ष्म जगत् में रहने का प्रयत्न छोड दिया जाता है और यूटोपिया की खोज की जाती है—मान लीजिए, वास्तविक जीवन में वह मिल भी जाय—और आध्यात्मिकता के देश में जाने की कठोरता का सामना नहीं किया जाता। यह यूटोपिया—आदर्शलोक—'परलोक' के स्थान पर बनाया गया। किन्तु यह परलोक छिछला और असन्तोषदायक है क्योंकि वह वर्तमान अवस्था में ब्रह्माण्ड के नकारात्मक होने की भावना है। आत्मा वह कार्य करना चाहती है जिसकी उसे विघटित समाज की वर्तमान अवस्था से ऐसे लक्ष्य की ओर गतिशील होने के लिए आवश्यकता होती है, जो साधारण तौर पर वही समाज है जो कभी अतीत में रहा है या किसी समय भविष्य में बन सकता है।

पुरातनवाद की परिभाषा समकालीन सृजनात्मक व्यक्तियों के अनुकरण को छोडकर कबीलों के पूर्वजों का अनुकरण करना कहा जा सकता है। अर्थात् इसे सभ्यता की गत्यात्मक क्रिया से हटकर स्थैतिक दशा में आना कहा जा सकता है जिसमें आदिम मानव समाज आज दिखाई पडता है। इसकी परिभाषा यह भी की जा सकती है कि यह बलपूर्वक परिवर्तन को रोकने का प्रयत्न है जो यदि सफल हुआ तो सामाजिक पापों की उत्पत्ति है। तीसरे उस पतित और विघटित समाज को स्थिर करने की चेष्टा है, जिसे हमने दूसरे सन्दर्भ में यूटोपिया ऐसी पुस्तकों के लेखकों का सामान्य लक्ष्य पाया है। इसी भाषा में भविष्यद्वाद की परिभाषा, यह कर सकते हैं कि किसी के अनुकरण को न स्वीकार किया जाय तथा परिवर्तन को शक्तिशाली ढंग से पूरा किया जाय और ये प्रयत्न यदि सफल हों तो ऐसी सामाजिक क्रान्तियाँ हों जिनसे ऐसी प्रतिक्रिया हो कि अपना ही उद्देश्य सफल न हो।

जिनका विश्वास इनमें से किसी विकल्प पर होता है, जो कार्य क्षेत्र ब्रह्माण्ड से सूक्ष्म जगत् की ओर ले जाता है, उनके लिए सामान्य दुर्भाग्य बैठा रहता है। अपने विकल्प में सरल मार्ग चुनने के कारण ये पराजित लोग अपने को उस हिंसात्मक उपसंहार से दण्डित करते हैं जो उनके लिए निश्चित है क्योंकि वे ऐसा करना चाहते हैं, जो प्रकृति के विरुद्ध है। आन्तरिक जीवन की खोज कठिन हो सकती है परन्तु असम्भव नही है। किन्तु जो आत्मा बाहरी जीवन बिता रही है, उसके लिए यह कठिन है कि वर्तमान की सदा प्रवाहित धारा में से निकल कर अतीत की ओर

छलांग मार सके या भविष्य की ओर जा सके । पुरातनवादी तथा भविष्यद्वादी दोनो आदश हैं और आदश होने के कारण कही नही ह । इन दो मोहित करने वालो को जो वतमान में नही ह, पहले ही समझा जा सकता है कि उनमें से किसी ओर जाना सकट उपस्थित करना है, जिसके साथ हिसा अनिवाय है और जो ओपधि नही है ।

अपने दुखद उत्कप में भविष्यद्वाद पैशाचिकता के रूप में प्रकट होता है ।

"इस विश्वास का सार यह है कि ससार की व्यवस्था पाप और झूठ है । अच्छाई और सच्चाई उत्पीडित विद्रोही ह । यह विश्वास अनेक ईसाई सन्तो, शहीदो, विशेपत एपोके लिप्स[1] के लेखक का है । किन्तु हमें ध्यान देना चाहिए कि करीब-करीब सभी महान् नतिक दाशनिका के उपदेश इसके घोर विरोधी ह । अफलातून, अरस्तू और स्टोइक, सन्त आगस्टाइन, सन्त थामस एक्वीनास, काट और जे० एस० मिल, काम्टे तथा टी० एच० ग्रीन, सभी तक देते हैं कि विश्व में कोई दैवी व्यवस्था और क्रमबद्धता है अच्छाई एक स्वरता में है और बुराई उसके विरुद्ध असगति में है । मैं देखता हूँ कि ज्ञानवादी सम्प्रदाया में एक हिपोलाइटस चच के पादरी ने शतान की परिभाषा यह बतायी है कि वह "ससार की व्यवस्था के विरुद्ध काय करने वाली शक्ति है" जो विद्रोही या विरोधी है जो सम्पूण की इच्छा के विरुद्ध काय करता है तथा वह उसी समुदाय की अवहेलना करने की चेष्टा करता है जिसका वह सदस्य है ।"[2]

शान्ति की भावना का परिणाम उन सभी स्त्रियो और पुरुषा को मालूम है जो स्वय शान्तिकारी नही है, इस आध्यात्मिक नियम की क्रिया के ऐतिहासिक दृष्टान्तो को खोजना कठिन नही है ।

उदाहरणाथ, सीरियाई समाज में भविष्यद्वाद का मसीहाई रूप प्रथम बार अहिंसात्मक माग पर चलता हुआ दिखाई दिया । असीरियाई सैनिक आक्रमण के विरुद्ध, अपनी स्वतन्त्रता को सुरक्षित करने के लिए भीपण प्रयत्न करने के बजाय इसरायल निवासिया ने उस समय राजनीतिक दासता में अपनी गदन झुका दी और अपनी सारी राजनीतिक सम्पत्ति दुखी होकर समर्पित कर दी इस आशा से कि भविष्य में कोई त्राता राजा आयेगा जो गिरे राष्ट्र को फिर ऊँचा उठायेगा । जब हम मसीहाई आशा के इतिहास का पता यहूदी समुदाय में लगाते ह तब हम देखते ह कि ५८६ ई० पू० से लेकर चार सौ वर्षों से भी अधिक तक यह अहिंसात्मक ढग से काय करता रहा । उस समय से जब यहूदियो को नबुकद्नजार बैबिलोनिया में बन्दी बनाकर ले गया था और १८६ ई० पू० तक जब एंटिओक्स एपिफेनीज द्वारा हेलेनी उत्पीडन के व शिकार हुए विश्वासपूण और सुखद सासारिक भविष्य और अतीव दुखपूण सासारिक वतमान के बीच असगति के कारण वे अन्त में हिंसात्मक हो गये । 'एलीजर' तथा 'सेवेन भाइयो' के आत्मोत्सग का अनुसरण जूडास मकावियस के सशस्त्र विद्रोह द्वारा दो वर्षों में हुआ । अधिक धर्मोन्मत्त सत्य-वादी यहूदियो की पद्धति का मैकाबीमने आरम्भ किया । गैलिली के असख्य यहूदी तथा थिपुडेस भी इसी प्रकार के थे जिनकी हिंसा ई० ६६-७० और ई० ११५-१७ तथा ई० १३२-५ की पाशव यहूदी शान्ति में भयानक पराकाष्ठा पर पहुँची ।

१ सत जान को जो इलहाम हुआ था ।

२ गिलबट मरे 'सेटानिजम् एण्ड दि वल्ड आडर, एसे और एड्रेस, पृ० २०३

यदि हम तीसरी बात में जीवन के धरातल पर आयें तो हमें पुन पवल्पिक प्रतिक्रियाओं के दो जोडे दिखेंगे। किन्तु इस धरातल पर चित्र पिछले नमूने से तीन दृष्टियों से भिन्न है। पहली बात यह है कि विकास का मुख्य लक्षण एक ओर की गति है, उसके स्थान पर जो विकल्प होता है, वह गति का स्थान नही लेता, गति में परिवतन करता है। दूसरी बात यह है कि विकल्पों के जोडे उसी एक गति के भिन्न रूप होते हैं। इस एक मात्र गति को हम ब्रह्माण्ड से सूक्ष्म जगत् की ओर की गति का क्षेत्र कह सकते हैं। तीसरी बात यह है कि दोनों जोडों में इतना अन्तर है कि उनके दोहरे होने का कारण स्पष्ट हो जाता है। एक जोडे में प्रतिक्रिया हिंसात्मक है और दूसरे में अहिंसात्मक। हिंसात्मक जोडे में निष्क्रिय प्रतिक्रिया को पुरातनवाद कहा जा सकता है, और सक्रिय प्रतिक्रिया को भविष्यद्वाद। अहिंसात्मक जोडे में निष्क्रियता को अलग होने तथा सक्रियता को रूपान्तरण कहा जा सकता है।

पुरातनवाद और भविष्यद्वाद समय के आयाम में विकल्प मात्र प्रयत्न हैं। यह उस काय क्षेत्र की एक आध्यात्मिक धरातल से दूसरे धरातल की ओर ले जाने के परिवतन का विकल्प है, जो गतिशीलता की विशेषता है। दोनों में, ब्रह्माण्ड के स्थान पर सूक्ष्म जगत् में रहने का प्रयत्न छोड दिया जाता है और यूटोपिया की खोज की जाती है—मान लीजिए, वास्तविक जीवन में वह मिल भी जाय—और आध्यात्मिकता के देश में जाने की कठोरता का सामना नहीं किया जाता। यह यूटोपिया—आदर्शलोक—परलोक के स्थान पर बनाया गया। किन्तु यह परलोक छिछला और असन्तोषदायक है क्योंकि वह वतमान अवस्था में ब्रह्माण्ड के नकारात्मक होने की भावना है। आत्मा वह काय करना चाहती है, जिसकी उसे विघटित समाज की वतमान अवस्था से ऐसे लक्ष्य की ओर गतिशील होने के लिए आवश्यकता होती है, जो साधारण तौर पर वही समाज है जो कभी अतीत में रहा है या किसी समय भविष्य में बन सकता है।

पुरातनवाद की परिभाषा समकालीन सजनात्मक व्यक्तियों के अनुकरण को छोडकर कबीलों के पूवजों का अनुकरण करना कहा जा सकता है। अर्थात् इसे सभ्यता की गत्यात्मक क्रिया से हटकर स्थतिक दशा में आना कहा जा सकता है जिसमें आदिम मानव समाज आज दिखाई पडता है। इसकी परिभाषा यह भी की जा सकती है कि यह बलपूवक परिवतन को रोकने का प्रयत्न है जो यदि सफल हुआ तो सामाजिक पापों की उत्पत्ति है। तीसरे उस पतित और विघटित समाज को स्थिर करने की चेष्टा है जिसे हमने दूसरे सन्दभ में यूटोपिया ऐसी पुस्तकों के लेखकों का सामान्य लक्ष्य पाया है। इसी भाषा में भविष्यदवाद की परिभाषा, यह कर सकते हैं कि किसी के अनुकरण को न स्वीकार किया जाय तथा परिवतन को शक्तिशाली ढग से पूरा किया जाय और ये प्रयत्न यदि सफल हो तो ऐसी सामाजिक क्रान्तियाँ हो जिनसे ऐसी प्रतिक्रिया हो कि अपना ही उद्देश्य सफल न हो।

जिनका विश्वास इनमें से किसी विकल्प पर होता है, जो काय क्षेत्र ब्रह्माण्ड से सूक्ष्म जगत् की ओर ले जाता है, उनके लिए सामान्य दुर्भाग्य बैठा रहता है। अपने विकल्प में सरल माग चुनने के कारण ये पराजित लोग अपने को उस हिंसात्मक उपसहार से दण्डित करते हैं जो उनके लिए निश्चित हैं क्योंकि वे ऐसा करना चाहते हैं, जो प्रकृति के विरुद्ध है। आन्तरिक जीवन की खोज कठिन हो सकती है, परन्तु असम्भव नही है। किन्तु जो आत्मा बाहरी जीवन बिना रही है, उसके लिए यह कठिन है कि वतमान की सदा प्रवाहित धारा में से निकल कर अतीत की ओर

छलाँग मार सके या भविष्य की ओर जा सके । पुरातनवादी तथा भविष्यद्वादी दोनों आदर्श ह और आदश होने के कारण वही नही ह । इन दो मोहित करने वालो को जो वतमान में नही ह, पहले ही समझा जा सकता है कि उनमें से किसी ओर जाना सकट उपस्थित करना है, जिसके साथ हिंसा अनिवाय है और जो ओपधि नही है ।

अपने दुखद उत्कप में भविष्यद्वाद पर्शाचिकता के रूप में प्रकट होता है ।

"इस विश्वास का सार यह है कि ससार की व्यवस्था पाप और झूठ है । अच्छाई और सच्चाई उत्पीडित विद्रोही हैं । यह विश्वास अनेक ईसाई सन्तो, शहीदो, विशेपत एपोकेलिप्स[1] के लेखक का है । किन्तु हमें ध्यान देना चाहिए कि करीब करीब सभी महान् नतिक दाशनिको के उपदेश इसके घोर विरोधी हैं । अफलातून, अरस्तू और स्टोइक, स त आगस्टाइन स त थामस एक्वीनास, काट और जे० एस० मिल, काम्टे तथा टी० एच० ग्रीन, सभी तक देते ह कि विश्व में कोई दवी व्यवस्था और क्रमबद्धता है अच्छाई एक स्वग्ता में है और बुराई उसके विरुद्ध असगति में है । म देखता हूँ कि ज्ञानवादी सम्प्रदायो में एक हिपोलाइटस चच के पादरी ने शतान की परिभाषा यह बतायी है कि वह "ससार की व्यवस्था के विरुद्ध काय करने वाली शक्ति है" जो विद्रोही या विरोधी है जो सम्पूण की इच्छा के विरुद्ध काय करता है तथा वह उसी समुदाय की अवहेलना करने की चेष्टा करता है जिसका वह सदस्य है ।"[2]

क्रान्ति की भावना का परिणाम उन सभी स्त्रियो और पुरुषो को मालूम है जो स्वय क्रान्तिकारी नही है, इस आध्यात्मिक नियम की क्रिया के ऐतिहासिक दृष्टान्तो को खोजना कठिन नही है ।

उदाहरणाथ, सीरियाई समाज में भविष्यद्वाद का मसीहाई रूप प्रथम बार अहिंसात्मक माग पर चलता हुआ दिखाई दिया । असीरियाई सैनिक आक्रमण के विरुद्ध, अपनी स्वतन्त्रता को सुरक्षित करने के लिए भीपण प्रयत्न करने के बजाय इसरायल निवासियो ने उस समय राजनीतिक दासता में अपनी गदन झुका दी और अपनी सारी राजनीतिक सम्पत्ति दुखी होकर समर्पित कर दी इस आशा स कि भविष्य में कोई त्राता राजा आयेगा जो गिरे राष्ट्र को फिर ऊँचा उठायेगा । जब हम मसीहाई आशा के इतिहास का पता यहूदी समुदाय में लगाते ह तब हम देखते ह कि ५८६ ई० पू० से लेकर चार सौ वर्षों से भी अधिक तक यह अहिंसात्मक ढग स काय करता रहा । उस समय से जब यहूदियो को नबुकद्नजार बैबिलोनिया में बन्दी बनाकर ले गया था और १८६ ई० पू० तक जब एटिओकस एपिफेनीज द्वारा हेलेनी उत्पीडन के व शिकार हुए विश्वासपूण और सुखद भासारिक भविष्य और अतीव दुखपूण सासारिक वतमान के बीच असगति के कारण वे अन्त में हिंसात्मक हो गये । 'एलीजर' तथा सेवेन भाइयो के आत्मोत्सग का अनुसरण जूडास मकावियस के सशस्त्र विद्रोह द्वारा दो वर्षों में हुआ । अधिक धर्मोन्मत्त सैन्य-वादी यहूदियो की पद्धति का मैकाबीस ने आरम्भ किया । गैलिली के असख्य यहूदी तथा सिपुर्डस भी इसी प्रकार के थे जिनकी हिंसा ई० ६६–७० और ई० ११५–१७ तथा ई० १३२–५ को पाशव यहूदी क्रान्ति में भयानक पराकाष्ठा पर पहुँची ।

१ सत जान को जो इलहाम हुआ था ।

२ गिलबट मरे 'सेटानिजम् एण्ड दि वल्ड आडर, एसे और एड्रेस, पृ० २०३

भविष्यवाद का प्रतिशोध जिसका यह बलात्कारी उदाहरण है अज्ञात नहीं है। किन्तु यह और भी आश्चर्य की बात है कि पुरातनवाद, जो विरोधी प्रतिक्रिया है उसके अन्त में भी इसी प्रकार का प्रतिशोध देखने में आता है। यह विरोधाभास सा लगता है कि इस पुरागामी प्रक्रिया का परिणाम भी हिंसात्मक ढग का होता है। किन्तु ऐतिहासिक तथ्य यही बताते हैं।

हेलेनी समाज के राजनीतिक विघटन के इतिहास में पुरातनवादी प्रथम राजमगण स्पार्टा में राजा एजीस चतुर्थ और रोम में जनरक्षक टाइबीरियस ग्रेक्स थे। दोनो असामान्य धवता और सज्जनता के व्यक्ति थे। दोनो ने सामाजिक भूलो को सुधारने का कार्य किया। इस विश्वास से कि पतन के पहले के स्वर्णयुग का कोई विधान था उसी को वे पुन स्थापित करना चाहते थे। उनका उद्देश्य था एकरसता की पुन स्थापना। फिर भी अनिवार्य रूप से व हिंसा की ओर गये क्योंकि उनकी पुरातनवादी नीति सामाजिक जीवन की धारा के विपरीत प्रयत्न थी। उनकी निजी नम्रता उस हिंसा के हिमानी वेग को नही रोक सकी, जिस उन्होंने अनजान में गति प्रदान कर दी थी। वे उस प्रतिहिंसा के सघर्ष में चरम सीमा पर जाने की अपेक्षा आत्म बलिदान के लिए तत्पर हो गये जो हिंसा के विरुद्ध विवश होकर उभाड दी गयी थी। उनके आत्मबलिदान से केवल एक उत्तराधिकारी को उनका कार्य आगे बढाने की प्रेरणा मिली और क्रूर हिंसा द्वारा उसे सफलता मिली। इस हिंसा में शहीद स्वय हतोत्साहित दिखाया दिय। अहिंसक राजा एजीस चतुर्थ के बाद हिंसात्मक राजा क्लिओमिनीस ततीय आया और अहिंसात्मक प्रजा रक्षक टाइबीरियस ग्रक्स के बाद हिंसात्मक भाई गैअस आया। दोनो की कहानी का अन्त यही नही था। इन दोनो अहिंसक पुरातनवादियो के कारण हिंसा की बाढ उमड आयी। यह बाढ तब तक शान्त नही हुई जब तक इसने उन मण्डलो के सम्पूर्ण ढाँचे को बहा नहीं दिया जिनमें उन्होंने अपनी सुरक्षा करने की कोशिश की थी।

यदि हम अब अपने हेलेनी और सीरियाई उदाहरणो के उनके इतिहासो के दूसरे अध्यायो पर, ध्यान दें तो हम देखेंगे कि एक ओर पुरातनवादियो ने दूसरी ओर भविष्यवादियो ने हिंसा की जो उच्छखलता उत्पन्न कर दी थी वह आश्चयजनक ढग से उसी अहिंसा के पुनरागमनद्वारा कम हुई जिसे हिंसा की बाढ़ ने डुबो दिया था और समाप्त कर दिया था। जसा हम देख चुके ह, हेलेनी शक्तिशाली अल्पसख्यक के इतिहास में ई० पू० की अन्तिम दो शतियो में क्रूरो के गिरोह के बाद सजग तथा योग्य सावजनिक कार्यकर्ता उत्पन्न हुए, जिन्होंने सार्वभौम राज्य का सगठन किया और उसकी रक्षा की। इसी समय हिंसात्मक पुरातनवादी सुधारको के उत्तराधिकारी अभिजात दार्शनिको के रूप में बदल गये। ये अभिजात दार्शनिक एरिया, कसिनापीटस, थ्रेसिया पीटस सेनेका हेल्वीडिअस प्रिसकस थे जिन्होंने जनता की भलाई के लिए भी अपनी वशपरम्परा के प्रभाव का प्रयोग नही किया और यहाँतक आत्मत्याग किया कि निरकुश सम्राटो की आज्ञा से अपनी आत्महत्या तक कर दी। हेलेनी ससार के आन्तरिक सवहारा के सीरियाई भाग में ठीक इसी प्रकार इसी ससार में मकेबियाई सेना की मसीहाई राज्य की स्थापना की चेष्टा नितान्त असफल हो गयी और उसके बाद यहूदियो के उस राजा की विजय हुई जिसका राज्य अलौकिक था। दूसरी पीढी में यहूदी सत्यवादी उत्साहियो की बबरतापूर्ण वीरता जब विनाश पर थी उस समय उसकी सरक्षा ऊँचे वीरतापूर्ण अहिंसापूर्ण ढग से रब्बी जोहानन बिन जक्काई ने की और यहूदी जेल्टा से इसलिए अलग हुआ था कि युद्ध के बाहर अपनी शिक्षा को जारी रख

सकें। जब अनिवार्य विनाश का समाचार उनके पास लाया गया और समाचार लाने वाला शिष्य दारुण दुख से चिल्लाया,—'हम लोगो पर वज्र गिरा है, क्योकि वह स्थान नष्ट हो गया, जहा हम इसरायल के पापो के लिए आराधना करते थे। स्वामी ने उत्तर दिया— मेरे बेटे, इसके लिए दुखी मत हो। हमारे पास आराधना का एक और ढग है, वह है दया का दान। यह लिखा भी गया है, "म दया की इच्छा करता हूँ। बलिदान की नही।'

इन दोनों विषयो में हिंसा का आवेग जो जान पडता था कि राह की सभी वस्तुओ को बहा ले जायगा, कैसे रुका और शात हुआ। दोना अवस्थाओ मे इस आश्चयजनक परिवतन का कारण जीवन के ढग का परिवतन है। हेलेनी शक्तिशाली अल्पसख्यक के रोमन भाग की आत्माओ में पुरातनवाद के आदश के स्थान पर अनासक्ति की भावना थी। हेलेनी आ तरिक सवहारा के यहूदी भाग की आत्माओ में भविष्यवाद के आदश को हटाकर ईसा का आदश स्थापित किया गया।

हम कदाचित् इन दो अहिंसात्मक व्यक्तियो के जीवन के गुणो को उसी दष्टि से समझ सकते ह जसे उनकी उत्पत्ति हुई थी, यदि हम एक विख्यात धम परिवर्तित व्यक्ति के व्यक्तित्व तथा जीवन को देखें। उदाहरणाथ रोमन पुरातनवादी केटोमाइनर जो स्टोइक दाशनिक हो गया था तथा यहूदी भविष्यवादा साइमन बार जानास हैं जो ईसा के शिष्य पीटर हुए। इन दोनो महापुरुषो में एक धार्मिक अधविश्वास था, जिसने उनकी शक्तियो को गलत रास्ता दिखाकर उनके बडप्पन को धुधला कर दिया था। जब तक वे अपनी शक्तियो को गलत राह पर यूटोपिया—(काल्पनिक आदश) के फेर में पडे हुए थे, जिसे उन्होने उचित समझा था। और प्रत्येक का जब धम परिवतन हुआ उनकी इतन दिनो की चकित और भ्रमित आत्माओ को पता चला कि उसमें कितनी शक्ति है।

ऐसे काल्पनिक रोमन राजतन्त्र की कल्पना का समथन करने के कारण केटो हास्यास्पद सा हो गया था। ऐसी पीढी की राजनीति में वह बराबर छाया का पीछा करता रहा और वास्तविकता से अलग रहा। जिस रूप में उसे राजनीति मिली उसने स्वीकार नहा किया। अत में जब उसे घरेलू युद्ध में सम्मिलित होना पडा, जिसके लिए वह उत्तरदायी था, यद्यपि उसने इसे स्वीकार नही किया, उसकी राजनीतिक कल्पना चूर हो गयी क्योकि जो शासन उनके उन सहयोगियो के विजय के बाद होता, वह कम-से-कम केटो के पुरातनवादी आदर्शों के उतना ही प्रतिकूल होता जितना, अत में, विजयी सीजर का अधिनायकवाद। इस द्विविधा में सनकी राजनीतिक को स्टोइक दाशनिको ने मूखता के दाप से बचा लिया। जो व्यक्ति पुरातनवाद में अपना जीवन बिता रहा था उसे स्टोइक के रूप में इतनी अच्छी मृत्यु मिली कि अन्त में उसने सीजर तथा सीजर के बाद एक शती स भी अधिक तक उसके उत्तराधिकारियो को इतना कष्ट दिया कि कोई भी रिपब्लिकन दल इतना कष्ट नहा दे सकता था। केटो के अन्तिम दिनो की कहानी ने अपने समकालीनो पर इतना प्रभाव डाला जो आज भी प्लूटाक का कोई भी पाठक पढ़ सकता है। अपनी प्रतिभा से सीजर ने उस आघात की गम्भीरता का अनुभव कर लिया था जो उसके विरोधी स्टोइक की मृत्यु के कारण राजनीतिक प्रतिद्वद्वी के रूप में हुई थी और जिस पर उसने कभी गम्भीरता से ध्यान नही दिया था और जब वह गृहयुद्ध की आग बुझा कर नये सिरे से एक ससार बना रहा था इस विजयी अधिनायक ने केटो की तलवार का उत्तर अपनी कलम स

दिया। यह अद्वितीय प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति अच्छी तरह जानता था कि जो आक्रमण सेना से हटाकर दार्शनिक स्तर पर लाया गया था, और जिसके फलस्वरूप केटो ने स्वय अपने हृदय में तलवार भाकी, उसका उत्तर कलम से ही दिया जा सकता है। फिर भी सीजर अपने वैरी को नष्ट करने में असफल रहा, जिसने चलते चलाते यह आघात किया था। केटो की मृत्यु ने सीजरवाद के विरुद्ध नये दार्शनिक सम्प्रदाय का जन्म दिया। सीजरवाद के विरोधी अपने सस्थापक के उदाहरण के अनुसार अपने को नष्ट करके नये अत्याचार से मुक्त हुए। क्योंकि इस स्थिति को न वे स्वीकार कर सकते थे और न इसको सुधार सकते थे।

पुरातनवाद से अनासक्ति का परिवतन विस्तत रूप से मार्कस ब्रूटस की कहानी में वर्णित है। यह कहानी प्लूटार्क द्वारा कही गयी थी तथा शेक्सपीयर द्वारा दुहरायी गयी। ब्रूटस का विवाह केटो की पुत्री से हुआ था। वह जुलियस सीजर की मत्यु का भी साझीदार था जो हिंसात्मक पुरातनवाद का ही काय था। तिस पर भी हम ऐसा सोचते ह कि हत्या के पहले उसे सन्देह था कि म ठीक रास्ते पर हूँ या नही। हत्या का परिणाम देख लेने पर उसे और भी सन्देह हो गया। फिलिप के युद्ध के बाद उन अतिम शब्दों में, जिसे शेक्सपीयर ने उसके मुख से कहलाया है, उसने केटो वाले समाधान को स्वीकार किया जिसकी वह पहले निन्दा कर चुका था। आत्महत्या करत समय वह कहता है--

सीजर! अब तुम शान्त हो जाओ,

मन बहुत प्रसन्नता से तुम्हें नही मारा है।

पीटर का भविष्यवाद वैसा ही अनुपयुक्त मालूम पडा जसा केटो का पुरातनवाद। वह ईसा का पहला शिष्य था जिसने उसे मसीहा के रूप में माना। उसने अपने स्वामी के इस इल हाम का भी विरोध किया कि मसीहाई राज्य साइरस के ईरानी विश्व साम्राज्य का यहूदी सस्करण नही है। और अपने निश्चित विश्वास के पुरस्कार के रूप में विशेष आशीर्वाद भी प्राप्त किया और इस कारण अपने इस विश्वास के लिए कि उसके स्वामी की राज्य की कल्पना शिष्य की ही कल्पना के अनुसार होनी चाहिए, ताव्र भत्सना भी सहन करनी पडी। अर्थात्—
शैतान, मेरे पीछे जाओ। तुम मरे लिए अभिशाप हो। ईश्वर की वस्तुओं की तुम प्रशसा नही करते, बल्कि मानवी वस्तुओं की प्रशसा करते हो।'

यहाँ तक कि जब पीटर की भूलें उसके स्वामी के भयानक धिक्कार के कारण उसकी आँखों के सामने आयी शिक्षा का इतना कम प्रभाव हुआ कि वह दूसरी परीक्षा में पुन असफल हो गया। जब वह रूपान्तरण का तीन में से एक साक्षी हुआ, तब उसने देखा कि मूसा तथा इलियास उसके स्वामी की बगल में खडे ह। और यह एक सकत था। इस दृश्य का अर्थ गलत समझकर उसने शिविर का केन्द्र स्थापित किया (तीन खेमे बनाकर) जसा बन में गलिली के यहूदियों और थियुडास ने उसके बहुत पहले ही स्थापित किया था जब रोमन अधिकारियों को यह सूचना मिल गया और उन्हें तितर बितर करने के लिए अपनी सेना भेज दी। इस असगत ध्वनि का तुरन्त दृश्य लोप हो गया, यह चेतावनी देते हुए कि मसीहा ने जो स्वय राह दिखायी है उसे स्वीकार करना चाहिए। इस दूसरी शिक्षा ने भी पीटर की आँखें नही खोली यहाँ तक कि प्रभु के जीवन के चरम उत्कर्ष पर जब जो कुछ प्रभु ने कहा था सत्य उतरना जा रहा था—यह कट्टर

भविष्यवादी गेथ्समन के बाग में लड़ने के लिए तैयार हो गया और हो सकता है कि बाद में उसी सध्या को अपने प्रभु के प्रति विश्वासघात उसके मस्तिष्क की उलझन का परिणाम रहा हो जो भविष्यवाद पर विश्वास छूट जाने के कारण और उसके बदले किसी बात पर विश्वास न होने के कारण उत्पन्न हुई हो।

अपने जीवन के इस सर्वोच्च अनुभव के बाद भी जब ईसा को शूली पर चढाया जाना, उनका पुनरुज्जीवन और आरोहण ने अ तत उसे बता दिया था कि ईसा का राज्य इस ससार का राज्य नही है, पीटर का फिर भी विश्वास था कि इस रूपा तरित राज्य में यहूदियो के लिए ही मताधिकार होना चाहिए, जसा भविष्यवादी मसीहाई आदशलोक में होगा। अर्थात् एक ऐसा समाज जिसने स्वग में ईश्वर के राज्य को मान लिया था पृथ्वी पर इस प्रकार सीमित कर दिया जाता जिसमें एक के अतिरिक्त और सभी ईश्वर की स तान बहिष्कृत होती। अपासिल्स के एक्टों' के एक अन्तिम दश्य में जिसमें पीटर आता है वह विरोध करता है जो स्वग से उतरा है। फिर भी पीटर कहानी में पाल को समयका में तब तक स्थान नही देता, जब तक कथा के अनुसार वह बात समय नही लेता जो फरीसी (यहूदिया की एक शाखा) पाल ने क्षण भर में आध्यात्मिक अनुमति द्वारा लिया था। पीटर की प्रबुद्धता का काय तब पूरा हुआ जब ऊपरी झाँकी के बाद कार्नीलियस के स देशवाहक द्वार पर आ गये। कारनीलियस के घर पर धम की स्वीकृति और जेरूसलम में लौटने के पहले यहूदी ईसाइया के समुदाय के सामने अपने काय के समथन के रूप में पीटर ने ईश्वर के राज्य का उपदेश जिन शब्दो में किया, उसका तिरस्कार ईसा नही कर सकता था।

जीवन के वे दो माग क्या ह जिन्होने ऐसे आध्यात्मिक प्रभाव उत्पन्न किये ? जो पुरातनवाद के स्थान पर केटो ने और भविष्यवाद के स्थान पर पीटर द्वारा स्वीकार किये गये। एक और सामा य अ तर की ओर हम ध्यान दें जा एक ओर अनासक्ति और रूपा तरण के बीच है और दूसरी ओर पुरातनवाद और भविष्यवाद के बीच है।

रूपा तरण और अनासक्ति समान रूप से भविष्यवाद तथा पुरातनवाद दानो से इस रूप में भिन्न है कि वे आध्यात्मिक क्षेत्र में परिवतन करते हैं। रूपा तरण और अनासक्ति का भविष्यवाद और पुरातनवाद में समय के विस्तार का केवल अ तर नही है, इनका विशेष कायक्षेत्र ब्रह्माण्ड स सूक्ष्म जगत् म परिवतन के रूप में रहा है। इसी को हम सभ्यता के विकास की कसौटी मानते ह। वे दोना राज्य जिनकी प्राप्ति उनका उद्देश्य है पारलौकिक है इस दृष्टि से कि उनमें किसी का भी काल्पनिक अतीत में एव भविष्य में लौकिक अस्तित्व नही है। सामा य अलौकिकता उनकी एक मात्र समानता है और दूसरी दृष्टियो मे वे एक-दूसरे के भिन्न हैं।

जिसे हम पथक्करण या अनासक्ति कहते है भिन विद्वाना के भिन्न भिन्न सम्प्रदाया द्वारा हुआ है। विघटनो मुख हेलेनी ससार से स्टोइक 'अभेदयता' में जाते थे तथा एपिकुरीअन (इन्द्रिय-सुखानुरागी) 'शान्तचित्तता' में अलग हाते थे। जैसा कवि होरस के आत्मचेतनायुक्त भोगवादी घापणा द्वारा ऐसा प्रदर्शित किया गया है। वह कहता है विनष्ट हुए ससार के टुकडे से हमें शान्ति मिलती है। विघटनो मुख भारतीय समार से बौद्धा का अलगाव निर्वाण के रूप में हुआ। निर्वाण एक माग है जो हमें ससार के बाहर ले जाता है। उसका उद्देश्य एक शरण-स्थल है। वह शरण-स्थल इस ससार का बहिष्कार करता है। यही तथ्य इसे आकषक बनाता है।

सभ्यताओं का एक और वर्ग है। यह वर्ग भारतीय, बबिलोनी, हिताइत और माया का है। ये सभ्यताएँ विघटित होते समय आदिम मानव की प्रकृति की ओर लौटती दिखाई देती हैं, क्योंकि उनके धर्म के काम भावना के त्याग और उनके दर्शन की अतिशय तप भावना में बहुत अन्तर था, जिसे वह समझ न सके। भारतीय सभ्यता में एक विरोधाभास मालूम पडता है जिसका पहले समाधान नहीं जान पडता। वह है योग तथा लिंग-पूजा का सामंजस्य। उसी प्रकार विघटनोन्मुख बबिलोनी समाज के नक्षत्रीय दर्शन और मन्दिरों में व्यभिचार, माया सभ्यता के मनुष्य के बलिदान के बीच और तप पूर्ण आत्म-दमन के बीच तथा हिताइत के आनन्दोत्सव और साधनामय उपासना, जो सिबिले और अनीस की पूजा में वे करते थे, सम्भवत यह अतिशय पर-पीडन की सामान्य प्रवृत्ति थी जो उनके त्याग के अभ्यास तथा आत्मविग्रह में समान रूप से प्रविष्ट हुई। जिसने इन चारों विघटित सभ्यताओं के सदस्यों की आत्माओं में अभ्यासों के बीच भावात्मक समरसता बनाये रखा। किन्तु जब विदेशी दर्शक की उदासीन विश्लेषणात्मक दृष्टि उनकी परीक्षा करती है तब वे उनमें सामंजस्य नहीं देख पाते।

हमारे पश्चिमी समाज के इतिहास के आधुनिक अध्याय में क्या आचरण के ये दो विपरीत ढंग, विस्तृत रंगमंच पर वही कार्य पुन कर रहे हैं ? त्याग के प्रमाणों की कमी नहीं है। सिद्धान्त के क्षेत्र में त्याग के पैगम्बर रूसो ने प्रकृति की ओर लौटने का मोहक निमन्त्रण दिया है। और व्यवहार में चारों ओर उदाहरण मिलते हैं। दूसरी ओर हम तपस्या के पुनरज्जीवन की खोज में असफल होंगे और इस कारण हम इस मानवता विमुख परिणाम पर पहुँच सकते हैं कि यदि हमारी पश्चिमी सभ्यता सचमुच पतित हो चुकी है तो अभी उसका विघटन बहुत दूर तक नहीं पहुँचा है।

(३) पलायन तथा प्राणोत्सर्ग

पलायन तथा प्राणोत्सर्ग, दोनों सामान्य अर्थ में, क्रमश कायरता के कलंक तथा साहस के गुणों के परिणाम हैं। और इसलिए सभी समाजों और सभी युगों में मानव आचरण के समान गुण हैं। पलायन एवं प्राणोत्सर्ग, जिन पर हम विचार कर रहे हैं जीवन के प्रति विशिष्ट भावना द्वारा प्रेरित होते हैं। केवल कायरता के पलायन अथवा विशुद्ध साहस के प्राणोत्सर्ग से हमारा अभिप्राय नहीं है। पलायित आत्मा जिसकी हम खोज कर रहे हैं, वह आत्मा है जो इसलिए पलायन करती है कि वह सचमुच यह समझती है कि जिस उद्देश्य के लिए वह कार्य कर रहा है वह इस योग्य नहीं है कि उसके लिए काम किया जाय। उसी प्रकार शहीद आत्मा जिसकी हम खोज कर रहे हैं वह आत्मा है जो मुख्यत या केवल उद्देश्य की पूर्ति के लिए आत्मोत्सर्ग नहीं करती बल्कि उसकी इच्छा होती है कि वह

इस अबोधगम्य संसार का
गम्भीर और कठिन भार[1] से

[illegible] प्राप्त कर। ऐसा शहीद सज्जन हो सकता है किन्तु मनोवैज्ञानिक रूप से वह अर्द्ध आत्म

१ वर्ड्सवर्थ टिंटर्न एबे।

हृता है। वह आधुनिक गवारूँ भाषा में पलायनवादी है, जिस प्रकार हमारा पलायनवादी भी निम्न कोटि का पलायनवादी है। इस दृष्टि से रोमन पुरातनवादी जो अनासक्तिवाद के दशन का ग्रहण कर चुके थे, शहीद थे। अपने इस महान् काय से वे अनुभव करते थे कि हम जीवन स हाथ नहा धो रहे ह, उससे स्वतन्त्र हो रहे हैं। और यदि उसी वग और इतिहास के उसी युग से पलायन का कोई उदाहरण खोज तो हम रोम के पलायनवादी माक एटानी का उदाहरण दे सकते ह। जो रोम तथा रोमनो के गम्भीर आदर्शों को छोडकर अधपूर्वी क्लिआपेट्रा की गोद में चला गया।

दो शतिया बाद, ईसाई युग के द्वितीय शती के बीतने वाले अधकारपूण दशका में हम साक्षात् मार्क्स आरीलियस राजकुमार को देखते हैं जिसको शहीदो के सिरमौर की पदवी देना अनुचित न होगा क्योकि मृत्यु की किसी अतिम प्रहार का इस पर वश नही चला। माक्स के पुत्र और उत्तराधिकारी कोमोडस में हम साम्राज्य के पलायनवादी का पाते ह जो अपने कधे पर उत्तराधिकार का भार वहन करने का प्रयत्न नही करता और सीधे नतिकता से पलायन कर जाता है और सवहारा की अधम राह पर चल देता है। सम्राट के रूप में पदा हाकर शौकिया अखाडिया होना उसे अधिक पसद आया।

हेलनी शक्तिशाली अल्पसख्यक का अतिम समय ईसाई धमतन्त्र पर आघात था, जो मृत्यु की पीडा के समय सभ्यता से परे हो गया, क्योकि यह मरणासन्न अन ईसाई शासक वग इस हृदय विदारक सत्य को स्वीकार न कर सका कि अपने पतन और विनाश का वह स्वय उत्तरदायी है। मरते समय भी उसने यही कहकर अपने आत्मसम्मान की रक्षा करने का प्रयत्न किया कि सवहारा के कायरतापूण आक्रमण के कारण ही मेरा विनाश हो रहा है। और जब बाहरी सवहारा भीषण युद्ध गिरोहा में परिवर्तित हो गये, जो साम्राज्य के शासन के उन आक्रमणो से बच कर निकल जाते थे, जा शासन उनके हमलो के जवाब में करता था, तो सारी चोट ईसाई चच को सहनी पडी जा भीतरी सवहारा की प्रमुख सस्था थी। इस कठोर परीक्षा मे ईसाई गोठ की भेडे स्पष्ट रूप से उन बकरो से अलग की गयी और उन्हें यह चुनौती दी गयी कि अपना धम छोडो या अपनी जान से हाथ धोओ। धम छोडने वाला की सख्या बहुत थी। वास्तव में इनकी सख्या इतनी अधिक थी कि जब अत्याचार समाप्त हुआ तब धार्मिक राजनीति की बडी समस्या हा गयी कि इनके साथ कसा व्यवहार किया जाय। किन्तु प्राणोत्सग करने वालो का यह छोटा सा दल अपनी सख्या के अनुपात से कही अधिक शक्तिशाली था। इन वीरा के शौय को धन्यवाद है कि ठीक सकट के समय ईसाई दलो से आगे आये और जान देकर उनके लिए साक्षी दी और धमतन्त्र विजयी हुआ। यह छोटी किन्तु महान् स्त्री पुरुषा की सेना इतिहास में विश्वासघातियो के विरुद्ध उच्चकोटि के शहीदो के नाम से अमर है। इनका उचित से अधिक सम्मान नही हुआ। इतिहास में इन्हें बहुत बडा शहीद कहा गया है इसके विरोध में दूसरा को विश्वासघाती कहा गया है जिन्होने अन ईसाई साम्राज्य के अधिकारिया की माग पर पवित्र धमग्रन्थ तथा चच का पुनीत पात्र अर्पित कर दिया।

यह आपत्ति की जा सकती है कि एक ओर केवल कायरता है और दूसरी आर विशुद्ध उत्साह इसीलिए यह दृष्टान्त वतमान उद्देश्य के लिए व्यथ है। जहा तक भगोडा का सम्बन्ध है हमारे पास इस आपत्ति का उत्तर देने के लिए साधन नही है। उन्हाने ऐसा क्यो किया जो कलक-

पूर्ण विस्मृति में दबा है। किन्तु प्राणोत्सर्गिया की प्रेरणा को सिद्ध करने के लिए प्रचुर प्रमाण हैं कि कम या बेश जैसा पाठक समझे, नि स्वार्थ उत्साह ही उनकी प्रेरणा का मुख्य स्रोत है। पुरुष और स्त्रिया ने उत्साहपूर्वक शहीद होना स्वीकार किया और इसे द्वितीय बार बपतिस्मा समझा जिससे उनके पापो को क्षमा मिलेगी और स्वर्ग के लिए राह निश्चित हो जायगी। एन्टिओक का इगनेशियस, द्वितीय शती का एक प्रसिद्ध शहीद अपने को 'ईश्वर का गेहू' कहता है और उस दिन की आकाक्षा करता है, जब वह 'जगली जानवरो के दाँतो द्वारा पीसा जायगा और ईसा के लिए शुद्ध रोटी बनेगी।

अपने आधुनिक पश्चिमी ससार में क्या हम सामाजिक आचरण के ऐसे दो विरोधी ढग पा सकते है? निश्चित रूप से हम पश्चिम के पलायन के अनिष्टसूचक परिणाम के लिए 'पादरियो के विश्वासघात' (ला ट्राहिजन डि क्लर्क) में देख सकते है। इस विश्वासघात की जडें इस गहराई से निकली है जिस गहराई का पता इन शब्दा का निर्माता प्रतिभासम्पन्न फ्रासीसी लेखक कदाचित् न लगा सके[1]। यद्यपि वह स्वीकार करता है कि दोष कितनी गहराई तक पहुँच चुका है क्योकि उसने आधुनिक बुद्धिजीविया को दोषी ठहराने के लिए मध्ययुगीन धार्मिक नाम चुना है। विश्वास घाती कार्यों के उस जोडे के साथ उनका विश्वासघात आरम्भ नही हुआ था, जिन्हें उन्होने उसी काल में किया है जो भूला नही गया है। यह आधुनिक स्थापित सिद्धान्ता का अविश्वास तथा उदारतावाद के नये प्राप्त लाभा का कायरतापूर्ण समर्पण है। यह पलायन, जिसका नवीनतम प्रदर्शन हुआ है, शतिया पहले आरम्भ हो चुका था, जब पादरिया ने पश्चिमी ईसाई सभ्यता के विनाशोन्मुख भवन को धर्म के स्थान पर धर्म निरपेक्षता के आधार पर लाने की चेष्टा की। यह मुबरीस का पहला कार्य था, जो आज के 'ऐथ' के रूप में बदल रहा है, जो शतिया से चक्रवृद्धि ब्याज के समान बढ रहा है।

यदि हम चार सौ वर्षों पीछे देखें और पश्चिमी ईसाई ससार के उस खण्ड पर ध्यान दें जो इग्लैण्ड के नाम से विद्यमान है तो हम वहाँ टामस, उल्जे को पायेंगे। इस विलक्षण बुद्धि के आधुनिक विचारो वाले पादरी ने, राजनीतिक अपमान के समय अपना अपराध स्वीकार किया कि हमने ईश्वर की सेवा राजा की सेवा से बहुत कम की। टामस उल्जे पलायनवादी था। जिसका पलायन पूरे क्लर्क के साथ पाँच वर्षों के भीतर ही, उनके समकालीन शहीदो सन्त जान फिशर और सन्त टामसमूर के आत्मोत्सर्ग से प्रकट हो गया।

(४) विचलन का भाव तथा पाप का भाव

विचलन का भाव उस समय होता है, जब विकास की शक्ति समाप्त हो जाता है। यह एसा भारी विपत्ति है जो उन स्त्रिया और पुरुषो पर आ पडता है, जो सामाजिक विघटन के युग में रहते है। यह पीडा सम्भवत उस भक्ति के पाप का दण्ड है, जिसमे सर्जक के स्थान पर सर्जित वस्तु की पूजा की जाती है। क्योकि यह उन कारणो मे से एक है जिसे हम देख चुके है, जिसके कारण सभ्यताओ का [illegible] पतन के बाद होता है।

[1] [illegible] कम की [illegible] लिखित देखिए।

सयोग और आवश्यक्ता उस शक्ति के वैकल्पिक रूप ह जो विचलन के भाव वालो की आँखो के सामने ससार पर शासन करते दिखाई देते ह । यद्यपि पहली दृष्टि में दोनो एक दूसरे के विपरीत दिखाइ देते हैं, किन्तु सूक्ष्म परीक्षा के बाद दोना एक ही भ्रम के दो विभिन्न पहलू मिलेंगे।

मिस्री सक्टकाल के साहित्य में सयाग की उपमा घूमते हुए कुम्हार के चक्र से दी गयी है। और हेलेनी सकटकाल के साहित्य में उसकी उपमा लहरो और हवा के झाका की कृपा पर छाडे गये चालक विहीन जहाज से दी गयी है।[1] यूनान के नर देवत्व ने सयोग' को देवी का रूप दिया—'हमारी स्वय चालित देवी' साइराक्यूज के मुक्तिदाता टिमोलियन ने उसके लिए उपासना-गह बनाया, जिसमें उसने बलि की और होरेस ने उसके लिए कविता लिखी।[2]

जब हम अपने दिला में देखते हैं हम इस हेलेनी देवी को ठीक उसी प्रकार सिंहासनारूढ पाते हैं, जसा एच० ए० एल० फिशर ने अपनी पुस्तक 'यूराप के इतिहास की भूमिका में अपना विश्वास प्रकट किया है —

'एक बौद्धिक उद्दीपन मुझे नही मिला। मुझसे चतुर तथा बुद्धिमान् लोग इतिहास में एक कथावस्तु एकलय तथा एक पूव निश्चित नमूना देख चुके ह। यह समरसता मुझे नही प्राप्त हुई। म केवल यह देखता हूँ कि एक सक्टकाल दूसरे क बाद वसे ही आता है जैसे एक लहर दूसरे के बाद आती है। यही तथ्य है जिसका समायीकरण नही हो सक्ता, क्योकि वह बेजोड है इतिहासकार के यही निरापद नियम ह कि मानव के भाग्या के विकास को अदृश्य और सयोग का खेल मानना चाहिए।"

सवशक्तिशाली 'सयोग में आधुनिक पश्चिमी विश्वास का जन्म उन्नीसवी शती में हुआ। जब पश्चिम के साथ अहस्तक्षेप की नीति के कारण सब ठीक से चलता जान पडता था। यह जीवन दशन का व्यावहारिक रूप था जो स्वाथ की अद्भुत प्रबुद्धता पर अवलबित था। अस्थायी सतापप्रद अनुभव के कारण हमारे उन्नीसवी शती के पितामहो ने इस ज्ञान का दावा किया कि सभी वस्तुएँ उन लोगा की भलाई करती हैं, जो 'सयाग की देवी को प्यार करते हैं। और बीसवी शती में भी जब इस देवी ने अपना विकराल रूप दिखाना आरम्भ किया, तब वह इग्लड की वदेशिक नाति की देवी रही। १९३१ के शरद से आरम्भ होने वाले इग्लड के महत्त्व पूण साल में जो बात इग्लैंड की जनता के साथ ही साथ वहा की कैबिनेट में भी प्रमुख थी, वह बात एक वडे अग्रेजी उदारवादी समाचार पत्र से लिये गये एक अग्रलेख की निम्नलिखित पक्तिया में ठीक-ठीक से अभिव्यक्त है।

"कुछ वर्षों की शान्ति का अथ है कुछ वप प्राप्त हो गये और जिस युद्ध के बारे में सोचा जाता है कि कुछ दिना मे होगा वह शायद कभी न हो।'[3]

मानव के ज्ञान भाण्डार में अहस्तक्षेप के सिद्धान्त को पश्चिम की मौलिक देन स्वीकार नही किया जा सकता, क्याकि दो हजार वप पहले यह चीनी दुनिया में प्रचलित था। मगर 'सयोग'

१ अफलातून की पालिटिक्स, २७२, डी० ६–२७३ ई०।
२ होरेस ओडस, पुस्तक १, ओड ३५।
३ द मनचेस्टर गार्जियन, १३ जुलाई १९३६।

की चीनी पूजा हमारी अधम प्रकार से उत्पन्न पूजा से भिन्न थी। १८ वा शती के फ्रासीसी बूर्जुआ अहस्तक्षेप एव अबाध्य प्रवेश में विश्वास करने लगे, क्योंकि उन्होंने अपने विरोधी अंग्रेजों की सम्पन्नता देखी, उसकी स्पर्द्धा की और उसका विश्लेषण किया तथा इस परिणाम पर पहुँचे कि बूर्जुआ फ्रास भी उसी प्रकार उन्नति कर सकता है यदि सम्राट् लुई भी सम्राट् जार्ज का अनुकरण करने के लिए प्रोत्साहित किया जाय कि बूर्जुआ जो चाहे उसका उत्पादन बिना बाधा के करे, और बिना चुगी के जिस बाजार में चाहे माल भेज सके। दूसरी ओर ईसा के जन्म से पहले दूसरी शती के आरम्भिक दशकों में थका हुआ चीनी ससार विचलन के मार्ग पर चल रहा था। यह सरल मार्ग यह नही कि मिल से तैयार माल व्यस्त बाजार में चलतू रास्ते से टट्टुओ द्वारा पहुँचाया जाय, किन्तु वह राह जो जीवन को शाश्वत मार्ग और सत्य है। यह शाश्वत मार्ग है 'ताओ'। जिसका अर्थ है—वह प्रणाली जिसमें विश्व का कार्य होता है और अन्त में कुछ-कुछ ईश्वर के समान, जिसे हम अमूर्त और दार्शनिक रूप में समझते हैं।[1]

महान् ताओ एक नौका है, जो विचलन के पथ पर चलती है
यह इधर भी जा सकती है उधर भी जा सकती है।[2]

किन्तु अहस्तक्षेप की देवी का एक दूसरा रूप भी है, जहाँ वह 'सयोग' के रूप में नहीं, वरन् 'आवश्यकता' के रूप में पूजी जाती है। आवश्यकता और सयोग के सम्बन्ध में दो विचार एक ही बात को दो ढंगों से देखना है। उदाहरणार्थ, अफलातून की दृष्टि में पतवारहीन नौका की गति उस विश्व की अव्यवस्था के समान है, जिसे ईश्वर ने त्याग दिया है किन्तु ऐसे व्यक्ति की दृष्टि में, जिसे गति विज्ञान (डाइनेमिक्स) और भौतिक विज्ञान (फिजिक्स) का ज्ञान है पर इसे हवा तथा जल के माध्यम में लहरों तथा धाराओं का बहुत ही व्यवस्थित उदाहरण समझेगा। जब विचलन के पथ पर मनुष्य की आत्मा यह अनुभव करती है कि धोखा देने वाली शक्ति आत्मा की केवल नकारात्मक इच्छा नहीं है बल्कि स्वयं एक वस्तु है तब इस अपूर्व देवी का चेहरा आत्मपरक अर्थात् नकारात्मक स्वरूप से वस्तुपरक और सकारात्मक रूप में बदल जाता है। इसके आत्मपरक और नकारात्मक रूप को सयोग और इसके वस्तुपरक तथा सकारात्मक रूप को 'आवश्यकता' के नाम से पुकारते हैं। किन्तु इससे देवी की मुख्य प्रवृत्ति में कोई परिवर्तन नहीं होता न देवी से जो विपद्ग्रस्त लोग हैं उनकी दशा में परिवर्तन होता है।

जीवन के भौतिक धरातल पर आवश्यकता के सर्वशक्तिशाली मन को दार्शनिक डीमोक्रिटस ने हेलेनी विचारों में प्रवेश किया। इस दार्शनिक की लम्बी जिन्दगी (सम्भवत ई० पू० ४६०–३६०) तक थी। इस अपनी यौवनावस्था में हेलेनी सभ्यता का पतन देखने का अवसर मिला और इसके बाद ७० वर्षों तक वह उसके विघटन की प्रणाली देखता रहा किन्तु भौतिक क्षेत्र से नैतिक क्षेत्र पर नियतिवाद के साम्राज्य के विस्तार की सभी समस्याओं की उसने अवहेलना की। भौतिक नियतिवाद बेबिलोनी ससार के शक्तिशाली अल्पसख्यक के ज्योतिष दर्शन का आधार था और काल्डियनों ने उसी सिद्धान्त का मानव जीवन और भाग्य में विस्तार करने में सकोच नहीं किया। सम्भव है कि स्टोइक दर्शन के प्रतिष्ठापक जीनो ने, अपने भाग्यवाद को,

१ ए० वली द वे एण्ड इट्स पावर, पृ० ३०।
२ टाओ टे किंग, अध्याय ३४ (वली के अनुवाद से)

जिसे उसने अपने सारे सम्प्रदाय को प्रभावित कर दिया था, डिमाक्रिटस से नहीं बैबिलोनी स्रोतों से पाया था। यह स्रोता के सबसे विख्यात शिष्य सम्राट मार्कस आरीलियस के 'चिन्तना' में सर्वत्र दिखाई देता है।

आधुनिक पश्चिमी जगत् ने 'आवश्यकता' के साम्राज्य का आर्थिक जगत् में विस्तार करने के लिए नयी बात पैदा की। आर्थिक क्षेत्र वास्तव में सामाजिक जीवन का ऐसा क्षेत्र है, जिसे प्रायः उन सभी विचारकों ने छोड़ दिया जिन्होंने दूसरे समाजों के विचारों को निश्चित किया था। आर्थिक नियतिवाद की कलागिरी अभिव्यक्ति निश्चित रूप से कार्ल मार्क्स का दर्शन या धर्म है, किन्तु आज के पश्चिमी जगत् में मार्क्सवादी ऐसे लोगों की संख्या अधिक है जो जान में या अनजान में अपना काम आर्थिक नियतिवाद के विश्वास पर करते हैं उन लोगों की अपेक्षा जो मार्क्सवाद को स्वीकार करते हैं और उनमें अनेक विशिष्ट पूँजीपति लोग भी हैं।

मानसिक क्षेत्र में भी 'आवश्यकता' की सत्ता आधुनिक पश्चिमी मनोवैज्ञानिकों के कम-से-कम एक नये गुट ने घोषित की है जिसने व्यक्तित्व की भावना में आत्मा की नियति की भावना में आत्मा के अस्तित्व को अस्वीकार किया है। यह इस कारण कि आत्मा का मनोविषयक आचरण की प्रणाली के विश्लेषण में उन्हें आरम्भिक सफलता प्राप्त हुई। यद्यपि मनोविश्लेषण का विज्ञान अभी नया है आत्मा के माध्यम से 'आवश्यकता' की पूजा ने इस युग के सबसे कुख्यात राजनीतिज्ञ को उसके अल्पकालीन विजय के क्षण में अपना अनुगामी बना लिया।

'निश्चर (सोमनेंबुलिस्ट) के विश्वास के साथ मैं अपने रास्ते पर चल रहा हूँ जिस मार्ग को परमात्मा ने मेरे लिए निश्चित किया है।'

१४ मार्च १९३६ को म्यूनिख में दिये गये एडाल्फ हिटलर के भाषण से ये शब्द उद्धृत किये गये हैं। इन शब्दों ने तीसरे जर्मन साम्राज्य की सीमाओं से दूर के (और कदाचित् साम्राज्य के भीतर भी) लाखों यूरोपीय नर-नारियों में कँपकँपी उत्पन्न कर दी, जिन्हें अभी सात दिन पहले जर्मन सेना का राइन भूमि पर पुनः कब्जा होने से धक्का लगा था और जो उस धक्के से सँभल नहीं पाये थे।

मनोवैज्ञानिक नियतिवाद के मत का दूसरा रूप भी है जो संसार में एक मानव-जीवन के समय के संकुचित विस्तार की सीमा को तोड़ देता है और कारण और कार्य की शृंखला को समय में भूत तथा भविष्य में ले जाता है। भूत में धरती पर मानव के आगमन की ओर और भविष्य में उसके अंतिम विसर्जन की ओर। इस सिद्धान्त के दो रूप हैं जो अलग-अलग उत्पन्न हुए हैं। एक रूप ईसाई धर्म के मूल पाप की धारणा है, दूसरा रूप भारतीय कर्म की धारणा है जिसने हिंदू धर्म तथा बौद्ध दर्शन में प्रवेश किया है। एक ही सिद्धान्त के दोनों स्वरूप कारण और कार्य की आध्यात्मिक शृंखला की मूल बात पर सहमत हैं और ये निरंतर एक लौकिक जीवन से दूसरे लौकिक जीवन तक चलते रहते हैं। ईसाई और भारतीय दोनों दृष्टियों में आज के मनुष्य का चरित्र और आचरण अतीत के जीवनों या एक पहले के जीवन से बने हुए हैं। यहाँ तक हिन्दू और ईसाई विचार मेल खाता है किन्तु इसके आगे वह एक दूसरे से भिन्न हो जाता है।

मूल पाप का ईसाई सिद्धान्त कहता है कि मानव जाति के पुरखा के एक विशेष वैयक्तिक पाप ने अपने सभी वंशजों पर उत्तराधिकार के रूप में आध्यात्मिक दुर्बलता प्रदान की है और यदि आदम अपने ईश्वर की कृपा से तिरस्कृत न होता—और आदम की प्रत्येक सन्तान को आदम

का यह पाप विरासत में मिला है—यद्यपि प्रत्येक आत्मा का अलग व्यक्तित्व है और उसकी निजी मनोवैज्ञानिक प्रकृति है, और ईसाई धर्म के ये मुख्य मत है। इस सिद्धान्त के अनुसार आदम में यह क्षमता थी कि अर्जित आध्यात्मिक गुण को अपने वंशजो में संचारित कर सके और केवल वही उस प्रजाति को ये गुण दे सकता था जिसका वह पूर्वज था।

मूल पाप के सिद्धान्त का यह अन्तिम रूप कर्म की कल्पना में नहीं पाया जाता है। इस भारतीय सिद्धान्त के अनुसार कोई भी विशेषता जिसे कोई भी व्यक्ति अपने कर्मों से प्राप्त करता है और भला या बुरा, बिना अपवाद के आरम्भ से अन्त तक संचारित होता है। इस संचारित आध्यात्मिक उत्तराधिकार का प्राप्तकर्ता कोई वंशवृक्ष नही है, जिसमें विभिन्न व्यक्तियो की शृंखला है बल्कि यह एक आध्यात्मिक अटूट क्रम है, जो बोधजगत् में बराबर आना-जाना रहता है पुनर्जन्म के रूप में। बौद्ध दर्शन के अनुसार कर्म की निरन्तरता 'आत्माओ' के पुनर्जन्म का कारण है, धर्म का एक मूल सिद्धान्त है।

अन्त में हमें नियतिवाद का ईश्वरीय रूप देखना है। यह रूप कदाचित् अत्यधिक उटपटांग और सभी में पतित है क्योंकि इस ईश्वरीय नियतिवाद में मूर्ति के रूप में सच्चे ईश्वर की पूजा होती है। इस प्रकार के प्रच्छन्न मूर्तिपूजक उपासना की वस्तु में ईश्वर के सब गुणो का आरोपित किये रहते है और साथ ही साथ एक गुणातीतत्त्व पर इतना अधिक जोर देते है कि उनका ईश्वर अज्ञेय, अनाराध्य एवं व्यक्तित्वहीन हो जाता है जैसे स्वयं आवश्यकता की देवी। सीरियाई समाज के आन्तरिक सर्वहारा से उद्भूत उच्चतर धर्म ऐसे आध्यात्मिक क्षेत्र है जिनमें इस प्रकार के गुणातीत विकृत ईश्वरवाद की मूर्तिपूजा बहुत दिखाई पडती है। इसके दो क्लासिकी उदाहरण इस्लाम की किस्मत की कल्पना है और काल्विन के नियतिवाद का सिद्धान्त है। काल्विन जीनेवा के उग्र प्रोटेस्टेंट धर्म के संस्थापक तथा व्यवस्थापक थे।

काल्विनवाद ने ऐसी समस्या उत्पन्न की जिसने अनेक लोगो को उलझन में डाल दिया। इसके लिए हमें कुछ समाधान ढूढ निकालना चाहिए। हमने बताया है कि नियतिवादी मत उस विचलन की भावना की अभिव्यक्ति है जो सामाजिक विघटन का एक मनोवैज्ञानिक लक्षण है। किन्तु इससे इन्कार नही किया जा सकता कि अनेक नियतिवादी लोगो में वयक्तिक तथा सामूहिक रूप में भी असाधारण शक्ति तथा क्रियाशीलता उद्देश्यपूर्णता तथा असाधारण उत्तरदायित्व के गुण रहे हैं।

'धार्मिक नीति का एक मुख्य विरोधाभास है कि उन्ही लोगो में संसार को उलट देने की शक्ति है जिनको विश्वास है कि यह पहले से ही निश्चित है कि सबसे अच्छी तरह यह कार्य ऐसी शक्ति द्वारा होना है जिसके हाथ की वे केवल कठपुतली है—यह काल्विन वाद में विशेष रूप से पाया जाता है।'[1]

भाग्यवादी मत के अनेक कुख्यात उदाहरणो में से काल्विनवाद केवल एक है, किन्तु उस मत के अनेक विचारको के आचरण उससे भिन्न है। काल्विनवादियो (जेनेवी ह्यूजिनो, स्काटी, अंग्रेजी और अमेरिकन) की मनोवृत्ति इसी प्रकार ईश्वरवादी दूसरे नियतिवादियो के समान

१ आर० एच० टानी रिलीजन एण्ड दि राइज आव कैपिटलिज्म, पृ० १२६।

दिखाई पड़ती है। यहूदी जीलाट, अरब के आदिम मुसलमान, और दूसरे युगो के तथा दूसरी जाति के मुसलमान जैसे उसमानिया साम्राज्य के जानिसारी और सूडान महदियो को इसी उदाहरण में लिया जा सकता है। और १९ वी शती के पश्चिमी उदार प्रगतिवादी २० वी शती के रूस के साम्यवादी मार्क्सवादियो में हमें दो वास्तविक भाग्यवादी मिलते है। इन नास्तिको की प्रकृति उनके साथी 'आवश्यकता' की देवी के आस्तिक पुजारियो के समान है। साम्यवादियो और काल्विनवादियो की समानता अंग्रेजी इतिहासकार ने, जिसे ऊपर उद्धृत किया गया है, सुन्दरता से चित्रित किया है।

"यह कहना नितान्त काल्पनिक नही है कि सकीर्ण क्षेत्र में किन्तु शक्तिशाली ढग से, काल्विन ने १६ वी शती में बूर्जुआ के लिए वही किया जो १९ वी शती में मार्क्स ने सर्वहारा के लिए किया या नियतिवादी सिद्धान्त ने एक आश्वासन की भूख की तृप्ति की कि विश्व की शक्तियां ईश्वर के द्वारा मनोनीत लोगो के साथ रहती है। एक दूसरे युग में इसी प्रकार ऐतिहासिक भौतिकवाद के सिद्धान्त ने ढाढस दिलाया था। उसने उन्हें यह अनुभव कराया कि वे विशिष्ट लोग है और यह कि ईश्वर की योजना में उन्हें योगदान करना है, इसको उन्हें समझना चाहिए।"[1]

सोलहवी शती के काल्विनवाद और २० वी शती के साम्यवाद के बीच की ऐतिहासिक कड़ी १९ वी शती का उदारवाद (लिबरालिज्म) है।

'इस समय तक नियतिवाद का अधिक प्रचलन था किन्तु नियतिवाद का मत अवसादी क्या होना चाहिए? जिस विधान से हम मुक्त नही हो सकते, वह प्रगति का शुभ नियम है, वह उन्नति जिसे हम आंकड़ो में नाप सकते हैं। ऐसी परिस्थिति मे रखने और शक्तिपूर्वक विकास की उस राह का अनुसरण करने के लिए हमें अपने नक्षत्रो को धन्यवाद देना चाहिए जिसे प्रकृति ने हमारे लिए निश्चित कर रखा है और जिसका विरोध करना अपावन और बेकार है। इस प्रकार प्रगति का अंधविश्वास दृढ रूप से स्थापित हो गया। लोकप्रिय धर्म होने के लिए केवल अंधविश्वास को दर्शन के अधीन कर देने की आवश्यकता है। प्रगति के अंधविश्वास का ऐसा विशिष्ट भाग्य था कि उसने कम से-कम तीन दर्शनो को अधीन कर लिया था। ये तीन दर्शन है हिगेल, कामटे और डारविन के। आश्चर्यजनक बात यह है कि इन दर्शनो में से कोई वास्तविक रूप से उस विश्वास के पक्ष में नही है जिसका वह समर्थन करता है।"[2]

क्या हमें तब इस निष्कर्ष पर पहुँचना चाहिए कि नियतिवादी दर्शन की स्वीकृति स्वय वह प्रेरणा है जो कार्य की सफलता के लिए उत्तेजित करता है? नही, हम ऐसा निर्णय नही कर सकते क्योकि नियतिवादी मतावलम्बियो पर उनके धार्मिक विश्वास का दृढ और प्रेरणात्मक ऐसा प्रभाव हुआ कि उन्होने समझा कि उनकी इच्छा और ईश्वर की इच्छा या प्रकृति का विधान या 'आवश्यकता' के आदर्श सब एक है, इसीलिए वे निश्चय रूप से होगे ही। काल्विनवादी जेहोवा वह ईश्वर है जो अपने विशेष लोगो की रक्षा करता है। मार्क्सवादी ऐतिहासिक आवश्यकता अवैयक्तिक शक्ति है जो सर्वहारा की तानाशाही स्थापित करती है। इस प्रकार की धारणा हमें उस विजय में विश्वास दिलाती है जो नैतिकता का एक स्रोत है और अपना औचित्य

१ वही, पृ० ११२।

२ डब्ल्यू० आर० इगे दि आइडिया आव प्रोग्रेस, पृ० ८-९।

इसीलिए स्थापित करती है, जसा कि युद्ध का इतिहास हमें बताता है और वह इस परिणाम पर पहुँचती है जिसे पहले ही सोच रखा है। पोसट क्रिया पोएसे विडन्टयूर' 'वह अमुक काय कर सकते ह क्योकि इनका विश्वास है कि हम कर सकते है। यही वरजीलियन नौका के दौड में विजयी दल की सफलता के रहस्य का यह सूत्र है कि 'वे कर सकते ह क्याकि उन्हें ऐसा विश्वास है कि वे कर सकते ह।' सक्षेप में, आवश्यकता सम्भवत सहायक हो सकती है, जब वह ऐसा मान ली जाती है, किन्तु वास्तव में यह धारणा 'यूबरीस और बडे रूप में है—जो बाद के परिणामो से पता चलता है कि यह धारणा झूठी है। विजय का विश्वास अन्त में गोलियथ के विनाश से सिद्ध हुआ जब उसके सफल युद्धो की लम्बी शृखला टूट गयी तथा डेविड के साथ युद्ध में समाप्त हो गयी। मार्क्सवादी करीब सौ वर्षों तक अपने इसी विश्वास में रह चुके ह और कार्ल्विनवादी चार शतिया तक यद्यपि अभी उनकी पराजय नही हुई। किन्तु मुसलमानो ने तेरह शतियो के पहले ऐसे ही गौरवपूण विश्वास में अपने आरम्भिक काल में कम महान् काय नही किये। किन्तु अन्त में उनका बुरा समय आया। आपत्ति के बाद के दिनो में उनकी प्रतिक्रिया की दुवलता हमें बताती है कि जब तक चुनौतियाँ अपनी प्रभावशाली प्रतिक्रिया के क्षेत्र में स्वय भिडती रहती ह तब तक नियतिवाद प्रतिकूल रूप में सदाचार की जड खोखली करने में ठीक उतना ही समथ होता है, जितना वह उसे उत्तेजित करने में। भ्रातिपूण नियतिवादी को अपने कठोर अनुभव के द्वारा यह शिक्षा मिली है कि उनका ईश्वर अन्ततो गत्वा उनके पक्ष में नही है और अन्त में वह दुर्भाग्यपूण निष्कप पर पहुँचता है कि वह और उसके बौने मित्र

> असहाय मोहरे ह उस खेल के जिसे वह (परमात्मा) खेलता है
> रात और दिन के सतरज की बिसात पर
> वह इधर उधर चलता है, शह लगाता है और गोटिया मारता है
> और एक के बाद एक अपने डब्बे में रखता जाता है।[2]

विचलन की भावना निष्क्रिय है और उसका प्रतिरूप तथा उल्टा पाप की भावना है जो नैतिक पराजय की भावना की ठीक प्रतिक्रिया है। मूल में और भावना में पाप तथा विचलन की भावना एक-दूसरे के विरोधी ह। क्योकि विचलन की भावना में अफीम का नशा सा होता है जिससे आत्मा बुराई को स्वीकार कर लेती है क्योकि वह उस व्यक्ति के नियन्त्रण से परे है और बाहरी परिस्थितियो में रहती है। पाप की भावना में उत्तेजक प्रभाव होता है क्योकि वह पापी से कहती है कि पाप अन्ततो गत्वा बाहरी नही है। यह व्यक्ति म ही है। इसीलिए व्यक्ति की इच्छा पर निभर है। केवल यदि वह परमात्मा के उद्देश्यो की पूर्ति करे और अपने को ईश्वर की कृपा पर छोड दे। यही पर उन दोना भावो में अन्तर है जब ईसाई निराशा के दलदल में फँसा था और जब वह फाटक की ओर दौडा था।

किन्तु एक प्रकार की अवान्तर भूमि है जिसमें दो भावनाएँ एक दूसरे से मिल जाती ह जसा भारतीय कम की धारणा में यह स्पष्टत होता है। कम मूल पाप' की भाँति उत्तरा

१ वर्जिल एनाड, पुस्तक, पचम, १, २३१।
२ ई० फिटजेराल्ड रुबाइयात आव उमर खय्याम, (चौदहवाँ सस्करण) २६६।

धिकार की आध्यात्मिक विरासत माना गया है। जिससे आत्मा लदी हुई है और आत्मा उसे हटा नही सकती, किन्तु यह बोध व्यक्ति के निजी कार्यों से किसी भी क्षण घटाया या बढाया जा सकता है। उस ईसाई धम में भी इसी प्रकार का रास्ता अजेय भाग्य से जेय पाप तक है। क्योकि ईसाई धम में आत्मा को मूल पाप से शुद्ध होने की सम्भावना प्रदान की गयी है जो पाप आदम से उत्तराधिकार में मिला है। परमात्मा की कृपा को ढूढने और उसके पाने पर उस पाप से हम शुद्ध हो सकते है और मानव के प्रयत्न और ईश्वर की कृपा से हो सकता है।

मिस्री सकटकाल में, मृत्यु के बाद जीवन में पाप की भावना का पता लगता है, किन्तु क्लासिकी उदाहरण इसरायल के पैगम्बर तथा सीरियाई सकटकाल में जूडा का आध्यात्मिक अनुभव है। जब ये पगम्बर सत्य की खोज कर रहे थे और अपना सन्देश उस समाज को दे रहे थे जिससे वे निकले थे, तथा जिसके सदस्यो को उपदेश दे रहे थे, वह समाज असीरियाई शेर के पजा में असहाय होकर कष्ट में पडा था। उन आत्माओ के लिए उन कष्टो की प्रत्यक्ष रूप से अवहेलना करना महान् और अदभुत आध्यात्मिक काय था कि वे अपने कष्ट के कारण को बाहरी और भौतिक अनिवाय कारण न समझकर यह समझे कि बाहरी आभास के बावजूद उनका ही पाप था जो उनके कष्टो का कारण था और उन पर सच्ची मुक्ति प्राप्त करना उनके अपने ही हाथा में था।

इस सत्य का जिसे सीरियाई समाज ने अपने पतन और विघटन के कठोर परीक्षाकाल में पाया है इसरायल के पगम्बरो से उत्तराधिकार के रूप में मिला था तथा उसका प्रचार हेलेनी ससार के सीरियाई आतरिक सवहारा द्वारा ईसाई मत के रूप में किया गया। इस विदेशी सिद्धान्त के बिना जिसे उन अन्हेलेनी विचारा वाले सीरियाई लोगो ने जिसे ग्रहण किया था हेलेनी समाज वह शिक्षा न ग्रहण कर पाता जो उसकी अपनी प्रकृति के विपरीत थी। साथ ही हेलेनियों ने उस शिक्षा को बहुत अधिक कठिन पाया होता यदि वे स्वय उसी दिशा में अपने से न चलते होते।

जब सीरियाई धारा के साथ हेलेनी प्रवाह ईसाई धम की सरिता में मिला इसके शतियो पहले से ही पाप की भावना की चेतना को हेलेनीवाद के आध्यात्मिक इतिहास में खोजा जा सकता है।

यदि ओरफीवाद के उद्देश्य प्रकृति और उद्भव की हमारी व्याख्या ठीक है तो प्रमाण है कि हेलेनी सभ्यता के पतन के पूव कम से-कम कुछ हेलेनी आत्माआ ने अपनी स्वाभाविक सास्कृतिक विरासत में आध्यात्मिक रिक्तता का अनुभव किया कि उन्होंने कृत्रिम रूप से 'उच्चतर धम' का आविष्कार करने में असाधारण शक्ति लगायी जो उनसे उत्पन्न मिनोई सभ्यता उन्हें देने में असफल रही। किसी भी तरह यह निश्चित है कि ई० पू० ४३१ के पतन के बाद सबसे पहली पीढी में ओरफीवाद का प्रयोग एव दुरुपयोग किया जा रहा था। ऐसा उन आत्माआ का सन्तोष देने के उद्देश्य से किया जा रहा था जो पहले से ही पापग्रस्त थी और किसी प्रकार उससे मुक्ति के लिए अधकार में रास्ता ढूढ रही थी। इसके लिए प्रमाणस्वरूप अफलातून का एक उदाहरण है। ऐसा ही लूयर की लेखनी से निकल सकता था

"नीमहकीम और ज्योतिषी अपना सौदा अमीरो के हाथ बेचते है और उन्हें विश्वास दिलाते ह कि हमार पास परमात्मा से प्राप्त शक्ति है तथा यह शक्ति हमने बलिदान और जादू-टोने से

इसीलिए स्थापित करती है, जैसा कि युद्ध का इतिहास हमें बताता है और यह इस परिणाम पर पहुँचती है जिसे पहले ही सोच रखा है। पोसट त्रिया पोएस विइन्टयूर' 'वह अमुक काय कर सकते हैं, क्योंकि इनका विश्वास है कि हम कर सकते हैं। यही वरजीलियन नौका के दौड में विजयी दल की सफलता के रहस्य का यह सूत्र है कि 'वे कर सकते ह क्योंकि उन्हें ऐसा विश्वास है कि वे कर सकते हैं।' सक्षेप में, आवश्यकता सम्भवत सहायक हो सकती है, जब यह ऐसा मान ली जाती है किन्तु वास्तव में यह धारणा 'यूकरीस' और बडे रूप में है—जो बाद के परिणामो से पता चलता है कि यह धारणा झूठी है। विजय का विश्वास अन्त में गोलियथ के विनाश से सिद्ध हुआ जब उसके सफल युद्धो की लम्बी शृखला टूट गयी तथा डेविड के साथ युद्ध में समाप्त हो गयी। माक्सवादी करीब सौ वर्षों तक अपने इसी विश्वास में रह चुके ह और काल्विनवादी चार शतिया तक यद्यपि अभी उनकी पराजय नहा हुई। किन्तु मुसलमानो ने तेरह शतिया के पहले ऐसे ही गौरवपूर्ण विश्वास में अपने आरम्भिक काल में कम महान् काय नही किये। किन्तु अन्त में उनका बुरा समय आया। आपत्ति के बाद के दिनो में उनकी प्रतिक्रिया की दुबलता हमें बताती है कि जब तक चुनौतियाँ अपनी प्रभावशाली प्रतिक्रिया के क्षेत्र में स्वय भिडती रहती ह तब तक नियतिवाद प्रतिकूल रूप में सदाचार की जड खोखली करने में ठीक उतना ही समय होता है जितना वह उसे उत्तेजित करने में। भ्रान्तिपूर्ण नियतिवादी को अपने कठोर अनुभव के द्वारा यह शिक्षा मिली है कि उनका ईश्वर अन्ततो गत्वा उनके पक्ष में नही है और अन्त में वह दुर्भाग्यपूर्ण निष्कर्ष पर पहुँचता है कि वह और उसके बौने मित्र

> असहाय मोहरे ह उस खेल के जिसे वह (परमात्मा) खेलता है
> रात और दिन के सतरज की बिसात पर
> वह इधर उधर चलता है, शह लगाता है और गोटियाँ मारता है
> और एक के बाद एक अपने डब्बे में रखता जाता है।[2]

विचलन की भावना निष्क्रिय है और उसका प्रतिरूप तथा उल्टा पाप की भावना है जो नैतिक पराजय की भावना की ठीक प्रतिक्रिया है। मूल में और भावना में पाप तथा विचलन की भावना एक दूसरे के विरोधी ह। क्योंकि विचलन की भावना में अफीम का नशा सा होता है जिससे आत्मा बुराई को स्वीकार कर लेती है क्योंकि वह उस व्यक्ति के नियन्त्रण से परे है और बाहरी परिस्थितियो में रहती है। पाप की भावना में उत्तेजक प्रभाव होता है क्योंकि वह पापी से कहती है कि पाप अन्ततो गत्वा बाहरी नही है। यह व्यक्ति में ही है। इसीलिए व्यक्ति की इच्छा पर निभर है। केवल यदि वह परमात्मा के उद्देश्यो की पूर्ति करे और अपने को ईश्वर की कृपा पर छोड दे। यही पर उन दोना भावो में अन्तर है जब ईसाई निराशा के दलदल में फँसा था और जब वह फाटक की ओर दौडा था।

किन्तु एक प्रकार की अवान्तर भूमि है जिसमें दो भावनाएँ एक दूसरे से मिल जाती ह जैसा भारतीय कम की धारणा में यह स्पष्टत होता है। कम 'मूल पाप' की भाँति उत्तरा

१ वर्जिल एनीड, पुस्तक, पचम, १, २३१।
२ ई० फिटजेराल्ड रुबाइयात आव उमर खय्याम, (चौदहवाँ सस्करण) २६६।

धिकार की आध्यात्मिक विरासत माना गया है। जिससे आत्मा लदी हुई है और आत्मा उसे हटा नही सकती, किन्तु यह बाझ व्यक्ति के निजी कार्यों से किसी भी क्षण घटाया या बढाया जा सकता है। उस ईसाई धम में भी इसी प्रकार का रास्ता अजेय भाग्य से जेय पाप तक है। क्योकि ईसाई धम में आत्मा को मूल पाप से शुद्ध होने की सम्भावना प्रदान की गयी है जो पाप आदम से उत्तराधिकार में मिला है। परमात्मा की कृपा को ढूंढने और उसके पाने पर उस पाप से हम शुद्ध हो सकते हु और मानव के प्रयत्न और ईश्वर की कृपा से हो सकता है।

मिस्री सकटकाल में, मत्यु के बाद जीवन में पाप की भावना का पता लगता है, किन्तु क्लासिकी उदाहरण इसरायल के पैगम्बर तथा सीरियाई सकटकाल में जूडा का आध्यात्मिक अनुभव है। जब ये पैगम्बर सत्य की खोज कर रहे थे और अपना सन्देश उस समाज को दे रहे थे जिससे वे निकले थे, तथा जिसके सदस्या को उपदेश दे रहे थे, वह समाज असीरियाई शेर के पजा में असहाय होकर कष्ट में पडा था। उन आत्माओ के लिए उन कष्टा की प्रत्यक्ष रूप से अवहेलना करना महान् और अदभुत आध्यात्मिक काय था कि वे अपने कष्ट के कारण को बाहरी और भौतिक अनिवाय कारण न समझकर यह समझे कि बाहरी आभास के बावजूद उनका ही पाप था जो उनके कष्टा का कारण था और उन पर सच्ची मुक्ति प्राप्त करना उनके अपने ही हाथा में था।

इस सत्य का जिसे सीरियाई समाज ने अपने पतन और विघटन के कठोर परीक्षाकाल में पाया है इसरायल के पैगम्बरो से उत्तराधिकार के रूप में मिला था तथा उसका प्रचार हेलेनी ससार के सीरियाई आन्तरिक सवहारा द्वारा ईसाई मत के रूप में किया गया। इस विदेशी सिद्धान्त के बिना जिसे उन अन्हेलेनी विचारा वाले सीरियाई लोगा ने जिसे ग्रहण किया था हेलेनी समाज वह शिक्षा न ग्रहण कर पाता जो उसकी अपनी प्रकृति के विपरीत थी। साथ ही हेलेनियो ने उस शिक्षा को बहुत अधिक कठिन पाया होता यदि वे स्वय उसी दिशा में अपने से न चलते होते।

जब सीरियाई धारा के साथ हेलेनी प्रवाह ईसाई धम की सरिता में मिला इसके शतिया पहले से ही पाप की भावना की चेतना को हेलेनीवाद के आध्यात्मिक इतिहास में खोजा जा सकता है।

यदि ओरफीवाद के उद्देश्य प्रकृति और उद्भव की हमारी व्याख्या ठीक है तो प्रमाण है कि हेलेनी सभ्यता के पतन के पूव कम से-कम कुछ हेलेनी आत्माओ ने अपनी स्वाभाविक सास्कृतिक विरासत में आध्यात्मिक रिक्तता का अनुभव किया कि उन्होने कृत्रिम रूप से 'उच्चतर धम' का आविष्कार करने में असाधारण शक्ति लगायी जो उनसे उत्पन्न मिनोई सभ्यता उन्हें देने में असफल रही। किसी भी तरह यह निश्चित है कि ई० पू० ४३१ के पतन के बाद सबसे पहली पीढी में ओरफीवाद का प्रयोग एव दुरुपयोग किया जा रहा था। ऐसा उन आत्माआ को सन्तोष देने के उद्देश्य से किया जा रहा था जो पहले से ही पापग्रस्त थी और किसी प्रकार उससे मुक्ति के लिए अधकार में रास्ता ढूढ रही थी। इसके लिए प्रमाणस्वरूप अफलातून का एक उदाहरण है। ऐसा ही लूथर की लेखनी से निकल सकता था

"नीमहकीम और ज्योतिषी अपना सौदा अमीरो के हाथ बेचते है और उन्हें विश्वास दिलाते ह कि हमारे पास परमात्मा से प्राप्त शक्ति है तथा यह शक्ति हमने बलिदान और जादू-टोने से

इसीलिए स्थापित करती है, जैसा कि युद्ध का इतिहास हमें बताता है और वह इस परिणाम पर पहुँचती है जिसे पहले ही सोच रखा है। 'पासट गिया पोएस विडट्यूर' 'वह अमुक काय कर सकते हैं, क्योंकि इनका विश्वास है कि हम कर सकते ह। यही वरजीलियन नौका के दौड में विजयी दल की सफलता के रहस्य का यह सूत्र है कि 'वे कर सकते ह क्योंकि उन्हें ऐसा विश्वास है कि वे कर सकते हैं।'[1] संक्षेप में, आवश्यकता सम्भवत सहायक हो सकती है, जब यह ऐसा मान ली जाती है किन्तु वास्तव में यह धारणा यूकरीस और बड़े रूप में है—जो बाद के परिणामों से पता चलता है कि यह धारणा झूठी है। विजय का विश्वास अन्त में गालियथ के विनाश से सिद्ध हुआ जब उसके सफल युद्धो की लम्बी शृंखला टूट गयी तथा डेविड के साथ युद्ध में समाप्त हो गयी। मार्क्सवादी करीब सौ वर्षों तक अपने इसी विश्वास में रह चुके ह और काल्विनवादी चार शतियो तक यद्यपि अभी उनकी पराजय नहा हुई। किन्तु मुसलमानो ने तरह शतियो के पहले ऐसे ही गौरवपूर्ण विश्वास में अपने आरम्भिक काल में कम महान् काय नही किये। किन्तु अन्त में उनका बुरा समय आया। आपत्ति के बाद के दिनो में उनकी प्रतिक्रिया की दुबलता हमें बताती है कि जब तक चुनौतियाँ अपनी प्रभावशाली प्रतिक्रिया के क्षेत्र में स्वय भिडती रहती ह तब तक नियतिवाद प्रतिकूल रूप में सदाचार की जड खोखली करने में ठीक उतना ही समर्थ होता है जितना वह उसे उत्तेजित करने में। भ्रान्तिपूर्ण नियतिवादी को अपने कठोर अनुभव के द्वारा यह शिक्षा मिली है कि उनका ईश्वर अन्ततो गत्वा उनके पक्ष में नही है और अन्त में वह दुभाग्यपूर्ण निष्कर्ष पर पहुँचता है कि वह और उसके बौने मित्र

> असहाय मोहरे हैं उस खेल के जिसे वह (परमात्मा) खेलता है
> रात और दिन के सतरंज की बिसात पर
> वह इधर उधर चलता है शह लगाता है और गोटियाँ मारता है
> और एक के बाद एक अपने डब्बे में रखता जाता है।[2]

विचलन की भावना निष्क्रिय है और उसका प्रतिरूप तथा उल्टा पाप की भावना है जो नैतिक पराजय की भावना की ठीक प्रतिक्रिया है। मूल में और भावना में पाप तथा विचलन की भावना एक दूसरे के विरोधी हैं। क्योंकि विचलन की भावना में अफीम का नशा सा होता है जिससे आत्मा बुराई को स्वीकार कर लेती है, क्योंकि वह उस व्यक्ति के नियन्त्रण से परे है और बाहरी परिस्थितियों में रहती है। पाप की भावना में उत्तेजक प्रभाव होता है क्योंकि वह पापी से कहती है कि पाप अन्ततो गत्वा बाहरी नही है। यह व्यक्ति में ही है। इसीलिए व्यक्ति की इच्छा पर निभर है। केवल यदि वह परमात्मा के उद्देश्यों की पूर्ति करे और अपने को ईश्वर की कृपा पर छोड दे। यही पर उन दोनो भावो में अन्तर है जब ईसाई निराशा के दलदल में फँसा था और जब वह फाटक की ओर दौडा था।

किन्तु एक प्रकार की अवान्तर भूमि है जिसमें दो भावनाएँ एक दूसरे से मिल जाती ह जैसा भारतीय कम की धारणा में यह स्पष्टत होता है। कम मूल पाप की भाँति उत्तरा

१ वर्जिल एनीड, पुस्तक, पचम, १, २३१।
२ ई० फिटजेराल्ड रुबाइयात आव उमर खय्याम, (चौदहवाँ संस्करण) २६६।

धिकार की आध्यात्मिक विरासत माना गया है। जिससे आत्मा लदी हुई है और आत्मा उसे हटा नहीं सकती, किन्तु यह बाध्य व्यक्ति के निजी कार्यों से किसी भी क्षण घटाया या बढ़ाया जा सकता है। उस ईसाई धर्म में भी इसी प्रकार का रास्ता अजेय भाग्य से जेय पाप तक है। क्योंकि ईसाई धर्म में आत्मा को मूल पाप से शुद्ध होने की सम्भावना प्रदान की गयी है जो पाप आदम से उत्तराधिकार में मिला है। परमात्मा की कृपा को ढूंढने और उसके पाने पर उस पाप से हम शुद्ध हो सकते ह और मानव के प्रयत्न और ईश्वर की कृपा से हो सकता है।

मिस्री सकटकाल में, मृत्यु के बाद जीवन में पाप की भावना का पता लगता है, किन्तु क्लासिकी उदाहरण इसरायल के पैगम्बर तथा सीरियाई सकटकाल में जूडा का आध्यात्मिक अनुभव है। जब ये पैगम्बर सत्य की खोज कर रहे थ और अपना सन्देश उस समाज को दे रहे थे जिससे वे निकले थे, तथा जिसके सदस्यों को उपदेश दे रहे थे, वह समाज असीरियाई शेर के पजा में असहाय होकर कष्ट में पडा था। उन आत्माओं के लिए उन कष्टो की प्रत्यक्ष रूप से अवहेलना करना महान् और अदभुत आध्यात्मिक कार्य था कि वे अपने कष्ट के कारण को बाहरी और भौतिक अनिवार्य कारण न समझकर यह समझें कि बाहरी आभास के बावजूद उनका ही पाप था जो उनके कष्टों का कारण था और उन पर सच्ची मुक्ति प्राप्त करना उनके अपने ही हाथों में था।

इस सत्य का जिसे सीरियाई समाज ने अपने पतन और विघटन के कठोर परीक्षाकाल में पाया है इसरायल के पैगम्बरो से उत्तराधिकार के रूप में मिला था तथा उसका प्रचार हेलेनी ससार के सीरियाई आन्तरिक सर्वहारा द्वारा ईसाई मत के रूप में किया गया। इस विदेशी सिद्धान्त के बिना जिसे उन अ-हेलेनी विचारों वाले सीरियाई लोगो ने जिसे ग्रहण किया था हेलेनी समाज वह शिक्षा न ग्रहण कर पाता जो उसकी अपनी प्रकृति के विपरीत थी। साथ ही हेलेनियो ने उस शिक्षा को बहुत अधिक कठिन पाया होता यदि वे स्वय उसी दिशा में अपने से न चलते होते।

जब सीरियाई धारा के साथ हेलेनी प्रवाह ईसाई धर्म की सरिता में मिला इसके शतियों पहले से ही पाप की भावना की चेतना को हेलेनीवाद के आध्यात्मिक इतिहास में खोजा जा सकता है।

यदि ओरफीवाद के उद्देश्य, प्रकृति और उद्भव की हमारी व्याख्या ठीक है तो प्रमाण है कि हेलेनी सभ्यता के पतन के पूर्व कम-से-कम कुछ हेलेनी आत्माओं ने अपनी स्वाभाविक सांस्कृतिक विरासत म आध्यात्मिक रिक्तता का अनुभव किया कि उन्होंने कृत्रिम रूप से 'उच्चतर धर्म' का आविष्कार करने में असाधारण शक्ति लगायी जो उनसे उत्पन्न मिनोई सभ्यता उन्हें देने में असफल रही। किसी भी तरह यह निश्चित है कि ई० पू० ४३१ के पतन के बाद सबसे पहली पीढ़ी में ओरफीवाद का प्रयोग एव दुरुपयोग किया जा रहा था। ऐसा उन आत्माओं को सन्तोष देने के उद्देश्य से किया जा रहा था जो पहले से ही पापग्रस्त थी और किसी प्रकार उससे मुक्ति के लिए अधकार में रास्ता ढूढ रही थी। इसके लिए प्रमाणस्वरूप अफलातून का एक उदाहरण है। ऐसा ही लूथर की लेखनी से निकल सकता था

'नीमहकीम और ज्योतिषी अपना सौदा अमीरों के हाथ बेचते ह और उन्हें विश्वास दिलाते ह कि हमारे पास परमात्मा से प्राप्त शक्ति है तथा यह शक्ति हमने बलिदान और जादू-टोने से

प्राप्त की है। ये किसी भी पाप का दमन मनोरंजन एवं उत्सवों से करते हैं जिन्हें उन्होंने स्वयं या उनके पूर्वजों ने किया है। ये इन पुस्तकों (म्यूसियस या ओरफियुज की) के मार्गदर्शन का अनुसरण करते हैं। ये सरकार के साथ ही साधारण जनता को भी कहलाते हैं कि पाप से मुक्ति तथा शुद्धि बलिदान से या सुखद बच्च के खेल से प्राप्त की जा सकती है। वे यह भी कहते हैं कि ये धार्मिक 'कृत्य' (जैसा व इन्हें इस सन्दर्भ में कहते हैं) मरे हुए लोगों के लिए उतने ही लाभकारी हैं जितने जीवित के लिए। मृत्यु के बाद के संसार की घोर यन्त्रणा से मुक्त करते हैं यदि हम यहाँ और अब, बलिदानों की उपेक्षा करते हैं तो हमें भयावह दुर्भाग्य का सामना करना पड़ेगा।"[1]

हेलेनी शक्तिशाली अल्पसख्यक की आत्माओं में पाप की भावना की यह प्रथम झलक उतनी ही निराशाजनक दिखाई देती है जितनी वह घृणापूर्ण है। तिस पर भी चार शतियों के बाद हम हेलेनी पाप की भावना पाते हैं जो कष्ट की अग्नि में इतनी शुद्ध हो गयी कि पहचानी नहीं जाती, क्योंकि आगस्टन युग के हेलेनी शक्तिशाली अल्पसख्यक की आवाज में करीब-करीब ईसाई मत की प्रतिध्वनि है, जो स्वयं वर्जिल की कविता में सुनी जा सकती है। पहली जार्जिक कविता के अन्त में विख्यात प्रार्थना है कि दुखदायी विचलन के पथ से मुक्ति हो और यह प्रार्थना पाप की स्वीकृति का रूप हो जाती है और यद्यपि यह पाप जिससे मुक्ति की कवि ईश्वर से अर्चना करता है मूल पाप ही है जो पौराणिक ट्रोजन पूर्वजों से दाय के रूप में प्राप्त हुआ है। पदों की सम्पूर्ण शक्ति पाठकों को यह मानने के लिए बाध्य करती है कि वह एक दृष्टान्त है और जिस पाप को रोमन वर्जिल के समय में वास्तविक रूप से नियोजित कर रहे थे, वह दो शतियों की लम्बी प्रगति में किया गया पाप था, जब वे हेनिबली युद्ध में अग्रसर थे।

वर्जिल की कविता के रचने के एक शती भीतर ही, जो भाव इस कविता में है हेलेनी समाज के एक क्षेत्र में शक्तिशाली हो चुकी थी। यह हेलनी समाज अभी-अभी ईसाई धर्म के प्रभाव में आया था। सिंहावलोकन से स्पष्ट है कि प्लूटार्क और सेनका तथा एपिक्टेटस और मार्कस आरीलियस की पीढ़ियाँ सर्वहारा के उद्गम से आये प्रकाश तक पहुँचने के लिए अनजान ही तैयार हो रही थी। यद्यपि इन चतुर हेलेनी बौद्धिक लोगों ने कभी इस स्रोत से किसी अच्छी बात के होने का अनुमान नहीं किया था। दोनों ने, हृदय की अज्ञात तैयारी में तथा इस चुने गये विषय में, सर्वहारा की इस प्रदत्त प्रबुद्धता को चतुराई से अस्वीकार किया। इसका चित्रण राबर्ट ब्राउनिंग के पात्र 'क्लिओन' में बड़ी ही अन्तर्दृष्टि एवं खूबी के साथ किया गया है। ईसाई युग की प्रथम शती में हेलेनी शक्तिशाली अल्पसख्यक का क्लिओन काल्पनिक दार्शनिक था। अपने एतिहासिक अध्ययन से उसके मन की ऐसी दशा हो गयी जिसे वह गम्भीर निरुत्साह कहता है। फिर भी जब यह उसे बताया गया कि वह अपनी समस्याओं को जिन्हें वह स्वयं सुलझा न सका था किसी एक पाल्स को बताना चाहिए तब उसने स्वीकार किया कि उसका आत्मसम्मान उत्तजित हो उठा है।

> तुम नहीं सोच सकते कि एक बर्बर यहूदी,
> जैसा पाल्स, जिसका खतना हुआ है,

[1] प्लेटो रिपब्लिक, ३६४ बी–३६५ ए।

उस रहस्य को जानता है, जो हम लोगो से छिपा है ।[1]

हेलेनी और सीरियाई समाज ही केवल वे सभ्यताएँ नही है, जिनमें सामाजिक ढाचे के नष्ट होने के आघात से पाप की भावना का जागरण हुआ है । ऐसे समाजो की सूची बनाने का प्रयत्न किये बिना, उपसहार में हम कह सकते है कि हमारे अपने समाज को उस सूची में सम्मिलित होना चाहिए ।

निश्चय रूप से पाप की भावना ऐसी है जिससे आधुनिक पश्चिमी बौना जगत अच्छी तरह परिचित है । यह परिचय उस पर लादा गया है, क्योकि पाप की भावना 'उच्चतर धम का महत्वपूण रूप है, जो हमें उत्तराधिकार में प्राप्त हुआ है । इस स्थिति में किन्तु, घनिष्ठता से उतनी घणा नही, विरक्ति अधिक उत्पन हुई । आधुनिक पश्चिमी ससार के और इसके विपरीत छठी शती के हेलेनी ससार के स्वभाव के बीच मानव स्वभाव में भ्रष्टता दिखाई देती है । हेलेनी समाज ने अपना जीवन, बबर बहुदेव-पूजा की नीरस और अस तोषपूण धार्मिक विरासत से आरम्भ किया था । वह समाज अपनी आध्यात्मिक दरिद्रता के प्रति सचेत दिखाई पडा और उसने उस रिक्तता को पूरा करने के लिए ओरफीवाद के उच्चतर धम का आविष्कार किया, जैसा दूसरी सभ्यताओ ने अपने पूवजो से प्राप्त किया था । ओरफीवाद के सस्कार और सिद्धान्त से स्पष्ट होता है कि पाप की भावना अवरुद्ध धार्मिक भावना है जिससे छठी शती के हेलेनी सामान्य स्वाभाविक ढग से प्रकट करने के लिए बहुत उत्सुक थे । हेलेनी समाज के विपरीत हमारा पश्चिमी समाज ऐसी उदारतापूण सभ्यता है जो सभ्यताएँ उच्चतर धम की छत्रछाया तथा सावभौम धम की प्रारम्भिक अवस्था में विकसित हो चुकी है । और चूकि पश्चिमी मनुष्य अपने का जन्म सिद्ध ईसाई समझता है । उसने बहुधा ईसाई धम का अवमूल्यन किया है और अस्वीकार करने की सीमा तक पहुँच गया है । वास्तव में हेलेनीवादी पन्थ इटालियाई पुनर्जागरण के बाद से पश्चिमी धमनिरपेक्ष सस्कृति में बहुत शक्तिशाली तथा अनेक दृष्टियो से सफल रहा है । इसे हेलेनीवाद के रूढिवादी विचार के अनुसार कुछ अशो में पुष्ट किया गया है और जीवित रखा गया है । इसे जीवन का ढग बनाया गया है जिसमें सब आधुनिक पश्चिमी गुणो का समावेश है जिसमें पश्चिम का मानव जो सरलता से अपने को पाप की भावना से मुक्त कर देता है और अब बडे परिश्रम से ईसाइयत के आध्यात्मिक विरासत से शुद्ध कर रहा है । यह सयोग की बात नही है कि प्रोटेस्टेंटवाद के अनेक अद्यतन रूपो ने स्वग की धारणा रखे रहन पर भी नरक की धारणा का बिलकुल तिरस्कार किया और शतान की धारणा हास्य-अभिनेताओ और व्यग्यकारो के लिए छोड दी है ।

आज हेलनीवाद को भौतिक विज्ञान कोने में ढकेलता जा रहा है किन्तु पाप की भावना से मुक्ति का उससे सुधार नही हुआ । हमारे सुधारक और उदारवादी लोग गरीबो के पाप को

१ उपर्युक्त अनुच्छेद में उदधृत प्रमाण के अनुसार ब्राउनिंग का काल्पनिक कवि क्लीओन का औचित्य इस तथ्य से अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि किंग प्रोटस द्वारा क्लीओन के समक्ष उठायी गयी ईश्वरपरक समस्या केवल पाप की भावना से ही सम्बन्धित थी, वरन् आत्मा की अन श्वरता से भी सम्बन्धित थी ।

बाहरी परिस्थितियो के कारण से उत्पन्न दुर्भाग्य बताते हैं। 'गन्दी बस्ती में पले हुए मनुष्य से आप क्या आशा कर सकते हैं?' और हमारे मनोविश्लेषणवर्ता अपने रोगियो के पापो को आन्तरिक परिस्थितिया, ग्रन्थियो एव नाडियो के विकार के कारण उत्पन्न दुर्भाग्य रूप में मानते है। पाप का यही कारण माना जाता और रोग के रूप में उसका दमन करने की चेष्टा की जाती है। इसी प्रकार का विचार सैमुएल बटलर के अरह्वोन के दार्शनिको द्वारा पहले ही बताया गया है। अरह्वोन में, जसा पाठको को याद होगा, गरीब श्री नासनिबोर को पारिवारिक चिकित्सक को बुलाना पडा क्योकि वह *गबन के रोग से पीडित था।*

क्या आज का पश्चिम का मानव 'एथ' के प्रतिशोध के पहले अपने 'मूकरीस' से दूर रहकर उसके लिए पश्चात्ताप करेगा? इसका उत्तर अभी नही दिया जा सकता, किन्तु हम किसी निदान के लिए व्यग्रतापूर्वक आध्यात्मिक जीवन के आध्यात्मिक धरातल की सूक्ष्म परीक्षा कर सकते हैं। इस निदान से हमें यह आशा प्राप्त हो सकती है कि हम उस आध्यात्मिक मन शक्ति के प्रयोग को पुन प्राप्त कर रहे है, जिसे हम करीब-करीब निर्जीव कर चुके हैं।

(५) असामजस्य की भावना

(अ) व्यवहार में बबरता तथा अभद्रता

व्यवहार में बर्बरता तथा अभद्रता के असामजस्य की भावना उस मनोवत्ति का निष्क्रिय विकल्प है, जो सभ्यता के विकास के साथ-साथ विकसित होती है। मन की इस अवस्था का व्यावहारिक रूप तब प्रकट होता है, जब वह व्यावहारिक अनिर्णयात्मक रूप में रहती है और सामाजिक विघटन की क्रिया में जीवन के प्रत्यक क्षत्र में प्रकट होता है। जीवन के भिन्न-भिन्न क्षत्र, धम, साहित्य, भाषा, कला के साथ ही-साथ अधिक विस्तृत एव अनिश्चित व्यवहार *एव रीति रिवाज के क्षत्र में भी यह प्रकट होता है। अन्तिम क्षत्र से ही* विचार करना सरल होगा।

इसका प्रमाण खोजने के लिए हम सम्भवत महान् आशा के साथ अपनी दृष्टि आन्तरिक सवहारा की ओर मोडेंगे, क्योकि हम पहले से ही देख चुके है कि आन्तरिक सवहारा की मूल तथा सामान्य विपत्ति जड से निर्मूल होने का सकट है। सामाजिक उन्मूलन का यह भयावह अनुभव और अनुभवो से अधिक पीडित आत्माओ में असामजस्य की भावना उत्पन्न कर देती है। यह पहले से ही सोची सम्भावना तथ्यो से प्रमाणित नही होती। क्योकि बहुधा जिस कठिन विपत्ति में आन्तरिक सवहारा पडता है, वह अधिकतम कठिनाई प्रेरणा का काय करती है और हम देखते है कि निर्मूलित, निर्वासित एव अरक्षित लोग जिनसे आन्तरिक सवहारा बना है अपनी सामाजिक विरासत को मजबूती से पकड ही नही है बल्कि प्रभावशाली अल्पसख्यक में प्रसारित *भी कर रहे है जिनसे यह सम्भावना कि अपनी सस्कृति* इन लावारिसो और आश्रयहीन लोगो पर लादेंगे, जिन्हें उन्होने अपने जाल में फँसाया है और अपने अधीन रखा है।

यह और भी आश्चयजनक है जसा हम देखते हैं कि शक्तिशाली अल्पसख्यक बाहरी सवहारा के सास्कृतिक प्रभाव को इसी प्रकार ग्रहण करते है। यह विचार करते हुए कि ये लडाकू दल शक्तिशाली अल्पसख्या से सीमा पर सनिको द्वारा अलग रहते है, ऐसी सम्भावना होती है

कि इनके बबर एव सामाजिक विरासत में आकपण और सम्मान दोना की कमी होती है। यद्यपि यह सम्मान और आकपण स्पष्ट रूप से उन जीण सभ्यताआ से अब भी सम्बद्ध है, आन्तरिक सवहारा जिनका कम-से-कम कुछ रगरूटा के रूप में वारिस है।

फिर भी हम देखते हैं कि तीन विभागा में, जिनमें विघटित सभ्यता बँट जाती है शक्तिशाली अल्पसख्या ही है जो शीघ्र असामजस्य की भावना ग्रहण करती है। शक्तिशाली अल्पसख्यक के सवहाराकरण का अन्तिम परिणाम यह होता है कि सामाजिक जीवन म भेद समाप्त हो जाता है, जो सामाजिक पतन के दण्ड की सूचना है। अन्त में शक्तिशाली अल्पसख्यक अपने पाप का प्रायश्चित्त उस भेद को समाप्त करके करता है जो उसी के कारण हुआ था और अपने ही सवहारा में मिल जाता है।

सवहाराकरण की यह प्रणाली दो समानान्तर रेखाओ में चलती है, एक तो आन्तरिक सवहारा से सम्पक के कारण अभद्रता तथा बाहरी सवहारा के सम्पक के कारण बबरता। यह उचित होगा कि साम्राज्य निर्माताओ की ग्रहणशीलता के प्रमाण को हम देखें क्योंकि शायद यह क्षमता परिणाम का कुछ समाधान कर सके।

वे सावभौम राज्य जिनके निर्माता साम्राज्य शिल्पी ह अधिकाश सनिक विजय द्वारा बने हैं। इसीलिए हम सैनिक तकनीक के क्षेत्र में ग्रहणशीलता के उदाहरण देखने की चेष्टा कर। उदाहरणाथ, पालीबियस के अनुसार, रोमना ने अपनी स्थानीय रिसाले की सेना की सज्जा समाप्त कर ग्रीका की अपनायी जिन्हे वे पराजित कर रहे थे। मिस्र के 'नये साम्राज्य' के थीबी सस्थापका ने अपने पराजित खानाबदोश हाइक्सो से घोडे और रथ का लडाई का आयुध लिया था। विजयी उसमानलियो ने पश्चिम की आविष्कार की हुई बदूका को ग्रहण किया और जब इस विशेष लडाई का तख्ता पलटा तब पश्चिमी ससार ने उसमानलियो से अनुशासित अभ्यास-युक्त और युनिफामयुक्त पेशेवर पैदल सेना को अपनाया।

किन्तु ऐसा ऋणादान सेना तक ही सीमित नही है। हिरोडोटस ने लिखा है कि परशियनो ने, जो अपने को अपने पडोसिया स श्रेष्ठ समझते थे, मीडीस से उनकी वेशभूषा ली और अनेक विदेशी विलास की बातें ग्रहण की जिनमें यूनानियो का अस्वाभाविक व्यभिचार भी था। पाचवी शती में एथेन्स की उग्र आलोचना करते हुए बूढे धनिक तत्री ने कहा है कि सामुद्रिक प्रभुत्व के कारण उसके देशवासिया का विदेशी रीति रिवाजो द्वारा अधिक पतन हुआ है। और जो यूनानी समुदाय कम बाहर जाने वाले थे उनका पतन कम हुआ। हमारा धूमपान उत्तरी अमेरिका के आदिम रेड इडियना के उन्मूलन का स्मारक है, हमारा काफी तथा चायपान पोलो खेलना, पायजामा पहनना, तुर्की स्नान, यूरोपीय व्यापारिया का उसमानिया कसरे रूम और मुगला के कैसरे हिन्द की गद्दी पर फिरगी व्यापारियो के विजय की याद दिलाता है। हमारा जैज नृत्य अफ्रीकी नेग्रो को दास बनाने, अटलान्टिक के पार निवासित होकर अमरीका की धरती पर श्रम करने तथा तम्बाकू की खेती की याद दिलाता है। जिसने रड इडियनो के विनाश करने का स्थान लिया है।

विघटित समाज के शक्तिशाली अल्पसख्यक की ग्रहणशीलता के कुछ अधिक कुख्यात प्रमाणा के बाद जब हम अपना सर्वेक्षण पहले उस आन्तरिक सवहारा के शान्तिमय सम्पक से

बाहरी परिस्थितियो के कारण से उत्पन्न दुर्भाग्य बताते हैं। 'गन्दी बस्ती में पैदा हुए मनुष्य स आप क्या आशा कर सकते हैं?' और हमारे मनोविश्लेषणकर्ता अपने रोगियो के पापो को आन्तरिक परिस्थितिया, ग्रन्थियो एव नाडियो के विकार क कारण उत्पन्न दुर्भाग्य रूप में मानते ह। पाप का यही कारण माना जाता और रोग के रूप में उसका दमन करने की चेष्टा की जाती है। इसी प्रकार का विचार समुएल बटलर के अरह्वोन के दार्शनिको द्वारा पहले ही बताया गया है। अरह्वोन में, जसा पाठको को याद होगा, गरीब श्री नासनिबोर को पारिवारिक चिकित्सक को बुलाना पडा क्योकि वह गबन के रोग से पीडित था।

क्या आज का पश्चिम का मानव 'ऐम' के प्रतिशोध के पहले अपने 'यूकरीस' से दूर रहकर उसके लिए पश्चात्ताप करेगा? इसका उत्तर अभी नही दिया जा सकता, किन्तु हम किसी निदान के लिए व्यग्रतापूर्वक आध्यात्मिक जीवन के आध्यात्मिक धरातल की सूक्ष्म परीक्षा कर सकते है। इस निदान से हमें यह आशा प्राप्त हो सकती है कि हम उस आध्यात्मिक मन शक्ति क प्रयोग को पुन प्राप्त कर रहे ह, जिसे हम करीब-करीब निर्जीव कर चुके ह।

(५) असामजस्य की भावना

(अ) व्यवहार में बबरता तथा अभद्रता

व्यवहार में बबरता तथा अभद्रता के असामजस्य की भावना उस मनोवृत्ति का निष्क्रिय विकल्प है जो सभ्यता के विकास के साथ-साथ विकसित होती है। मन की इस अवस्था का व्यावहारिक रूप तब प्रकट होता है, जब वह व्यावहारिक अनिर्णयात्मक रूप में रहती है और सामाजिक विघटन की क्रिया में जीवन के प्रत्यक क्षत्र में प्रकट होता है। जीवन के भिन्न भिन्न क्षत्र, धम, साहित्य, भाषा, कला के साथ ही-साथ अधिक विस्तृत एव अनिश्चित व्यवहार एव रोति रिवाज के क्षत्र में भी यह प्रकट होता है। अन्तिम क्षत्र से ही विचार करना सरल होगा।

इसका प्रमाण खोजन के लिए हम सम्भवत महान् आशा के साथ अपनी दृष्टि आन्तरिक सवहारा की ओर मोडेंगे क्याकि हम पहल से ही दख चुके ह कि आन्तरिक सवहारा की मूल तथा सामान्य विपत्ति जड से निमूल होन का सकट है। सामाजिक उन्मूलन का यह भयावह अनुभव और अनुभवो से अधिक पीडित आत्माओ में असामजस्य की भावना उत्पन्न कर देती है। यह पहल से हो सोची सम्भावना तथ्यो से प्रमाणित नही होती। क्याकि बहुधा जिस कठिन विपत्ति में आन्तरिक सवहारा पडता है, वह अधिकतम कठिनाई प्ररणा का काय करती है और हम देखते ह कि निमूलित, निर्वासित एव अरक्षित लोग जिनसे आन्तरिक सवहारा बना है अपनी सामाजिक विरासत को मजबूती से पकड ही नही ह वल्कि प्रभावशाली अल्पसख्यक में प्रसारित भी कर रहे ह जिनसे यह सम्भावना कि अपनी सस्कृति इन लावारिसो और आश्रयहीन लोगो पर लादेंग, जिन्हें उन्होने अपन जाल में फसाया है और अपने अधीन रखा है।

यह और भी आश्चयजनक है, जसा हम देखते ह, कि शक्तिशाली अल्पसख्यक बाहरी सवहारा के सास्कृतिक प्रभाव को इसी प्रकार ग्रहण करते ह। यह विचार करते हुए कि ये लडाकू दल शक्तिशाली अल्पसख्या से सीमा पर सनिको द्वारा अलग रहते ह, ऐसी सम्भावना होती है

कि इनके बर्बर एवं सामाजिक विरासत में आकर्षण और सम्मान दोनों की कमी होती है। यद्यपि यह सम्मान और आकर्षण स्पष्ट रूप से उन जीर्ण सभ्यताओं से अब भी सम्बद्ध है, आन्तरिक सर्वहारा जिनका कम-से-कम कुछ रंगरूटों के रूप में वारिस है।

फिर भी हम देखते हैं कि तीन विभागों में, जिनमें विघटित सभ्यता बँट जाती है शक्तिशाली अल्पसंख्या ही है जो शीघ्र असामंजस्य की भावना ग्रहण करती है। शक्तिशाली अल्पसंख्यक के सर्वहाराकरण का अन्तिम परिणाम यह होता है कि सामाजिक जीवन में भेद समाप्त हो जाता है, जो सामाजिक पतन के दण्ड की सूचना है। अन्त में शक्तिशाली अल्पसंख्यक अपने पाप का प्रायश्चित्त उस भेद को समाप्त करके करता है जो उसी के कारण हुआ था और अपने ही सर्वहारा में मिल जाता है।

सर्वहाराकरण की यह प्रणाली दो समानान्तर रेखाओं में चलती है, एक तो आन्तरिक सर्वहारा से सम्पर्क के कारण अभद्रता तथा बाहरी सर्वहारा के सम्पर्क के कारण बर्बरता। यह उचित होगा कि साम्राज्य निर्माताओं की ग्रहणशीलता के प्रमाण को हम देखें क्योंकि शायद यह क्षमता परिणाम का कुछ समाधान कर सके।

व सार्वभौम राज्य जिनके निर्माता साम्राज्य शिल्पी हैं अधिकांश सैनिक विजय द्वारा बने हैं। इसीलिए हम सैनिक तकनीक के क्षेत्र में ग्रहणशीलता के उदाहरण देखने की चेष्टा करें। उदाहरणार्थ, पालीबियस के अनुसार, रोमनों ने अपनी स्थानीय रिसालों की सेना की सज्जा समाप्त कर ग्रीकों की अपनायी जिन्हें वे पराजित कर रहे थे। मिस्र के 'नये साम्राज्य' के थीबी संस्थापकों ने अपने पराजित खानाबदोश हाइक्सों से घोड़े और रथ को लड़ाई का आयुध लिया था। विजयी उसमानलियों ने पश्चिम की आविष्कार की हुई बन्दूकों को ग्रहण किया और जब इस विशेष लड़ाई का तख्ता पलटा तब पश्चिमी संसार ने उसमानलियों से अनुशासित अभ्यास-युक्त और युनिफार्मयुक्त पेशेवर पैदल सेना को अपनाया।

किन्तु ऐसा ऋणादान सेना तक ही सीमित नहीं है। हिरोडोटस ने लिखा है कि परशियनों ने, जो अपने को अपने पड़ोसियों से श्रेष्ठ समझते थे, मीडीस से उनकी वेशभूषा ली और अनेक विदेशी विलास की बातें ग्रहण की जिनमें यूनानियों का अस्वाभाविक व्यभिचार भी था। पाँचवीं शती में एथेंस की उग्र आलोचना करते हुए बूढ़े धनिक तन्त्री ने कहा है कि सामुद्रिक प्रभुत्व के कारण उसके देशवासियों का विदेशी रीति रिवाजों द्वारा अधिक पतन हुआ है। और जो यूनानी समुदाय कम बाहर जाने वाले थे उनका पतन कम हुआ। हमारा धूम्रपान उत्तरी अमेरिका के आदिम रेड इंडियनों के उन्मूलन का स्मारक है हमारा काफी तथा चायपान पोलो खेलना, पायजामा पहनना, तुर्की स्नान, यूरोपीय व्यापारियों का उसमानियों के सरे रूम और मुगलों के कसरे हिन्द की गद्दी पर फिरंगी व्यापारियों के विजय की याद दिलाता है। हमारा जाज नृत्य अफ्रीकी नेग्रो को दास बनाने, अटलांटिक के पार निर्वासित होकर अमरीका की धरती पर श्रम करने तथा तम्बाकू की खेती की याद दिलाता है। जिसने रेड इंडियनों के विनाश करने का स्थान लिया है।

विघटित समाज के शक्तिशाली अल्पसंख्यक की ग्रहणशीलता के कुछ अधिक कुख्यात प्रमाणों के बाद जब हम अपना सर्वेक्षण पहले उस आन्तरिक सर्वहारा के शान्तिमय सम्पर्क से

उत्पन्न शक्तिशाली अल्पसंख्यक से कर जो उसकी दया पर आश्रित है, तब बाहरी सर्वहारा म सैनिक सम्पर्क से जिससे उसमें बबरता उत्पन्न होती है जिसका अनुशासन यह हटा देता है।

जब शक्तिशाली अल्पसख्यक का सम्पर्क आन्तरिक सर्वहारा से साथ शान्तिमय होता है इस रूप में कि सर्वहारा पर विजय प्राप्त हो चुकी है, तब बहुधा ऐसा होता है कि शासक और शासित का पहला सम्पर्क इस भूमिका के रूप में होता है कि सर्वहारा क रगरूट साम्राज्य बनाने वालों की सेना में भर्ती होते हैं। उदाहरणार्थ रोमन साम्राज्य की स्थायी सेना का इतिहास क्रमागत मिश्रण की कहानी है जो तदर्थ और दीर्घिया सेना में भर्ती होने वालों से बदलकर उसके बाद ही स्थायी और पेशेवर सेना में आगस्टस द्वारा हुई। कुछ शतियों में जो सेना मूल में सम्भवत पूरी-की-पूरी शक्तिशाली अल्पसख्यकों से बनायी गयी थी अब आन्तरिक सर्वहारा की बनने लगी और अन्त में अधिकांश बाहरी सर्वहारा की भी। रोमन सेना का ही इतिहास थ्योरे के अन्तर के साथ ईसाई युग की सत्रहवीं शती के मांचू साम्राज्य निर्माताओं द्वारा निर्मित सुदूरपूर्वी सार्वभौम राज्य की सेना का है तथा अरब के इतिहास में उम्मेयद और अब्बासी खलीफाओं की अरब की सेना का है।

यदि हम उस महत्त्व के मूल्याकन करने का प्रयत्न कर जो शक्तिशाली अल्पसख्यक तथा आन्तरिक सर्वहारा के बीच का भेद मिटाने के लिए सेना न किया है, तो हम देखेंगे, जसी हम आशा भी करते ह—कि यह तथ्य वहाँ बडे महत्त्व का है जहाँ शक्तिशाली अल्पसख्यक साम्राज्य निर्माता रहे ह और जो केवल सीमावर्ती नहीं थे, बल्कि विदेशी सीमा के लोग थे अर्थात् बबर वग के साम्राज्य निर्माता। क्योंकि सीमा वाले जीवन की सुविधाओं को ग्रहण करने में जितने कुशल ह उससे कहीं अधिक बबर विजेता अधिक ग्रहणशील ह, उन लोगों क बीच जिन पर उन्होंने विजय पायी है। ऐसा कुछ न-कुछ मचुओं तथा मुचुरियाई चीनी प्रजा के बीच सेना के सम्पर्क से हुआ निष्कर्ष था। मांचू पूर्ण रूप से चीनियों में मिल गये और दक्षिणी पश्चिमी एशिया के विजेता आदिम अरब मुसलमानों के इतिहास में भी यही झुकाव दिखाई देता है कि कानूनी अलगाव को छोडकर वास्तविक सहजीवन ग्रहण किया, और ये अनजाने ही सीरियाई सार्वभौम राज्य को पुन स्थापित कर रहे थे, जिसे उन्होंने अद्ध परिपक्व रूप में पराभूत एकेमेनिडी साम्राज्य से पहले पाया था।

जब हम विकासोन्मुख समाज में विकसित होते हुए शक्तिशाली अल्पसख्यक के इतिहास की ओर जसा कि प्रभावशाली अल्पसख्यक सामान्यत विकसित होता है, दृष्टि डालते ह तब सनिक तथ्य को छोड नहीं सकते। किन्तु हम देखेंगे कि सनिक समागम के स्थान पर व्यापार की साझेदारी आ जाती है। प्राचीन धनतन्त्री ने कहा है कि सागरतन्त्री एथेन्स में गलियों के निम्न वग के नागरिकों तथा विदेशी दासों में कोई अन्तर नहीं जान पडता था। रोम गणराज्य के बाद के दिनों में रोमन अभिजात परिवारों की व्यवस्था उनके असख्य नौकरों तथा विस्तृत सगठन के साथ अनेक योग्यतम स्वामियों के स्वतन्त्र किये हुए दास अतिरिक्त अग के रूप में कर रहे थे और जब सीजर का परिवार सिनट और रोमन सार्वभौम राज्य की व्यवस्था करने वाले लोगों के साथ हो गया, तब सीजर के मुक्त दास केबिनेट के मन्त्री हो गये। आरम्भिक रोमन साम्राज्य के मुक्त दास उसमानिया साम्राज्य के घरेलू दासों के समान ही थे, जिन्हें बहुत शक्ति मिल गयी थी और जो प्रधान मन्त्री के शक्तिशाली तथा खतरनाक पद तक पहुँच गये थे।

शक्तिशाली अल्पसख्यक और आतरिक सवहारा के बीच के सहजीवन के सभी उदाहरणो में दोनो दल प्रभावित होते थे। प्रत्येक पर प्रभाव ऐसा होता था कि एक वग दूसरे से मिल जाने की ओर अग्रसर होना था। 'व्यवहार' के ऊपरी धरातल पर आतरिक सवहारा मताधिकार की ओर चलता था और शक्तिशाली अल्पसख्यक अभद्रता की ओर। ये दोनो गतिया पूरक ह और हर समय होती रहती हैं। किन्तु सवहारा का मताधिकार आरम्भिक काल में अधिक स्पष्ट है, यही बाद में शक्तिशाली अल्पसख्यक की अभद्रता हमारा ध्यान बलपूवक आकृष्ट करती है। रोमन शासक वग के 'रजत युग' की अभद्रता इसका क्लासिकी प्रमाण है। इस निम्न स्तर की ट्रेजडी का उल्लेख अथवा व्यग्य चित्रण—एक लैटिन साहित्य में किया गया है जिसमें दूसरी शलियों की प्रेरणा समाप्त हो चुकने पर भी व्यग्य चित्रण की प्रतिभा अब भी सुरक्षित है। रोमन विलास की प्रगति (अग्रेज चित्रकार) होगाथ के चित्रो में देखी जा सकती है। जिनमे मुख्य नायक केवल कोई अभिजात कुल का ही नही है, वरन् सम्राट् जैसे ह, कलीगुला नीरो, कोमोडस और कराकैला।

अतिम के विषय में हम गिबन के इतिहास में पढते हैं "कैराकला का व्यवहार उद्धत एव अहकारपूण था, किन्तु अपनी सेना के साथ तो उसे अपने पद तथा श्रेणी तक का ध्यान नही रहता था तथा बदतमीजी से भरी हुई मित्रता को प्रोत्साहित करता था। जनरल के आवश्यक कतव्यो की उपेक्षा करता तथा साधारण सनिक के शिष्टाचार तथा वेश की नकल करता था।"

सवहारा बनने का कराकैला का ढग उतना न भावनात्मक था न इतना रोगमूलक, जितना सगीत कलाकार नीरो का या तलवार के धनी कोमोडस का। किन्तु इनका महत्व सामाजिक निदान के रूप में है। हेलेनी शक्तिशाली अल्पसख्यक के, जिसने अपने सामाजिक विरासत को अस्वीकार कर दिया था, प्रतिनिधि का चित्रण एक सम्राट के रूप में किया गया है जो एकेडेमी और स्टोआ की स्वतन्त्रता से अलग हटकर सवहारा के बैरको के कमरो की स्वतन्त्रता में आया। इस एकेडेमी तथा स्टोआ की स्वतन्त्रता को उसने बरदाश्त नही किया, क्योकि वह जानता था कि वह उसका जन्मसिद्ध अधिकार है। वास्तव में इस समय तक आगस्टन समाहरण के बाद हेलेनी समाज के पुन स्खलन के पहले दो विरोधी धाराएँ वेग गति तथा परिणाम के साथ शक्तिशाली अल्पसख्या और आन्तरिक सवहारा से चलकर सवहारा की धारा में बदल गयी। और वह भी यहा तक कि आज का देखने वाला यह समझ सकता है कि मैं एक ही धारा की गति देख रहा हूँ और जो अब दूसरी दिशा में बदल गयी है।

यदि हम अपनी दृष्टि सुदूर पूर्वी ससार की ओर डालें, तो रोमन शासक वग के सवहाराकरण की कहानी के प्रथम अध्याय में हम देखेंगे कि वतमान समय वह फिर जन्म ले रहा है। एक जीवित पश्चिमी विद्वान् ने निम्नलिखित लेख में बताया है कि एक ही पीढी में मताधिकार के स्थान पर सवहाराकरण हो रहा है। मचू बना चीनी पिता अपने सवहारा हुए बच्चे से अलग है।

'मचूरिया में यह सम्भव था कि मुख्य चीन का कोई चीनी अपने जीवन काल में ही पूण रूप से मचू बन जाय। इसका एक उदाहरण मुझे उस समय मिला जब एक चीनी सनिक अधिकारी तथा उसके बूढे पिता स मेरी जान पहचान हुई। बूढा पिता, होनान में पैदा हुआ था और अपनी

यौवनावस्था में मचूरिया में गया। तीन प्रान्तो के सुदूर प्रदेशो की उसने यात्रा की तथा अन्त में सिसिहार में बस गया। एक दिन मैने उस जवान से पूछा—'सिसिहार में पैदा होकर भी तुम सामान्यत मचूरो चीनियो जसे क्या बोलते हो ? जब कि तुम्हारे पिता जी होनान में पैदा हुए थे, केवल बोलते ही नहीं हो बल्कि मचूरिया के मूलो की भाँति व्यवहार एव हाव भाव भी है। वह हँसा और बोला— जब मेरे पिता जवान थे तब मिनजेन (राजवशी नहीं वरन् मामूली चीनी, जन साधारण नागरिक) के लिए उत्तरी क्षेत्र में जीवन बिताना कठिन था। माचू लोगो का प्रभाव सब पर था। किन्तु जब मैं तरुण हुआ तब राजवशी होना किसी काम का नहीं था। अतएव मैं अपनी पीढी के अन्य नवजवानो की भाँति हो गया।' यह एक कहानी है जो अतीत और वर्तमान की प्रक्रिया को बताती है क्योकि मचूरिया के युवक मचूरिया में पैदा हुए चीनियो के साथ एक समान हो गये है।[1]

किन्तु १९४६ ई० में किसी अग्रेज को सर्वहाराकरण की प्रणाली के अध्ययन के लिए न तो गिबन के इतिहास पढ़ने की आवश्यकता है और न ट्रास साइबेरियन रेल में यात्रा करने की। वह अपने घर में यह कर सकता है। सिनेमा में वह देख सकता है कि सब लोग ऐसे फिल्म देखते है जो बहुसख्यक सर्वहारा के मनोरजन के लिए बनी है। और कल्बो में भी यही प्रेस का बहिष्कार नहीं होता है। यदि हमारे आधुनिक काल का जुवेनाल पारिवारिक मनुष्य होता घर के अन्दर रहता, फिर भी उसकी प्रतिमूर्ति मिल जाती यदि वह अपने कान खोलता (जो बन्द करने से सरल होता) तो वह जाज अथवा विविध कार्यक्रम रेडियो पर सुनता जिसे उसके लडके सुनते है। और छुट्टियो की समाप्ति पर जब वह अपने बच्चो को 'पब्लिक स्कूल' में जाते देखता जो सामाजिक अल गाव के कारण लोकतन्त्रियो की घृणा का पात्र था, तब इन बच्चो से यह कहना न भूलता कि उसके स्कूल में कितने अभिजात कुल के है। और जब हमारे विचित्र कुल पिता युवक सजीव कोमोडस को देखते तो उन्हें पता चलता कि हैट किस बाँकपन से लगायी गया है और गुडो के ढग का रूमाल, जो देखने में मालूम पडता है यो ही गले में डाल लिया गया है, वास्तव में चतुराई से इस प्रकार रखा गया है कि आवश्यक सफेद कालर को छिपा ले। यह निश्चित प्रमाण है कि सर्वहारा का फशन चल रहा था। जसे तिनके से वास्तव में हवा का रुख मालूम पडता है वसे ही व्यग्यकार का साधारण मजाक इतिहासकारो की चक्की के लिए अनाज का काम देता है।

जब हम शक्तिशाली अल्पसख्यक का सर्वहारा के साथ शान्तिपूर्ण समागम द्वारा उत्पन्न अभद्रता की ओर देखते है और उसके बाद सीमा के परे बाहरी सर्वहारा के युद्धजनित सम्पर्क से बर्बरता उत्पन्न होते देखते हैं, तब हमे पता चलता है कि दोनो नाटको का कथानक समान है। इसमें दूसरे का दृश्य और साज सज्जा कृत्रिम सैनिक सीमा है—सार्वभौम राज्य की सीमा जिसके पार शक्तिशाली अल्पसख्या तथा बाहरी सर्वहारा एक दूसरे के सामने परदा उठते समय दिखाई देते है और इस रूप में कि एक दूसरे से अलग है और विरोधी है। जसे-जसे नाटक आगे बढ़ता है अलगाव घनिष्ठता में बदल जाता है, किन्तु इससे शान्ति नहीं होती, और जसे-जसे युद्ध

१ ओ लटिमोर मचूरिया, क्रैडिल आफ कान्फ्लिक्ट (१९३२) पृ० ६२-३।

बढता है समय बबरता के अनुकूल रहता है । अत में सीमा टूट जाती है तब तक उस राज्य पर विजय होती जिसकी शक्तिशाली अल्पसख्या अबतक रक्षा कर रही थी ।

पहले अक में बबर शक्तिशाली अल्पसख्या के देश में बधक और फिर वैतनिक सनिक के रूप में आता है और दोना स्थितिया में वह स्वय को थोडा बहुत विनम्र बना लेता है । दूसरे अक में वह आक्रमणकारी, अनियन्त्रित तथा अवाछित हो जाता है, जो अत में उपनिवेशक या विजयी के रूप में बस जाता है । इस प्रकार प्रथम तथा द्वितीय अका के बीच सैनिक प्रभुता बबरो के हाथा में चली जाती है । इस प्रकार शक्ति और ऐश्वय का शक्तिशाली अल्पसख्यका से बबर लोगो के पास जाना शक्तिशाली अल्पसख्यका की धारणा को विशेष रूप से प्रभावित करता है । बबरता की पुस्तक का एक के बाद दूसरे पृष्ठ से वह अपनी शीघ्र ह्रासा मुख सनिक तथा राजनीतिक दशा सुधारना चाहता है । और अनुकृति तो चापलूसी है ही ।

इस प्रकार नाटक के कथानक का वणन करते हुए हम आरम्भ की आर लौट सकते है और मच के पहले ही दृश्य में बबरा को शक्तिशाली अल्पसख्यक के शिष्य के रूप में देखते ह । फिर हम शक्तिशाली अल्पसख्यक को मिलने जुल्ने की ओर अग्रसर होते हुए पाते ह । और थोडे समय में ही हम दोनो विरोधिया की ऐसी झल्क पाते है कि एक दूसरे के उधार लिये पखा को धारण करके वे अनाडी की भाँति विकृत बन जाते है । और नकल करते करते काइमेरा (शेर क मुख, बकरे की धड और साप की पूछ वाला विशाल काल्पनिक जन्तु) के समान मिश्रित वस्तु बन जाते ह । अततो गत्वा पहले वाले शक्तिशाली अल्पसख्यक का अपना अतिम चिह्न भी खो देते है । और शक्तिशाली अल्पसख्यक बबरता के साधारण धरातल पर आ जाता है ।

बबर युद्ध गिरोह की सूची में जो सभ्य शक्तिया के हाथ में बधक होकर प्रसिद्ध हुए ह उनमें कुछ ये है कास्टटिनापल के रोमन कोट में थियोडोरिक ने बधक के रूप में ही शिक्षा पायी । एड्रियानापुल के उसमानिया दरबार में स्कडरबग को भी इसी प्रकार शिक्षा मिली । मसेडान के फिलिप ने युद्ध और शान्ति की कला इयमिनानडास से थीबेस में सीखी थी । मोरक्को सरदार अब्दुल करीम ने जिसने अनवाल में स्पेन की अभियानी सना का नाश सन् १९२१ में किया था तथा चार वर्षों बाद मोरक्को में फ्रासीसी शक्ति का जड से हिला दिया, स्पेन के मेलिला जेल में ११ महीने तक शिक्षा पायी ।

उन बबरा की सूची लम्बी है जो विजयी के रूप क पहले वेतनभोगी सनिक थे । ईसवी पाँचवा और सातवा शती में रोमन प्रदेशा क टयुटोनी और अरब बबर विजेता के उन अनेक पीडियो के वशज थे, जिन्होने रामन सेना में सेवा का थी । इसा की नवा शती में अब्बासी खलीफा के तुर्की अगरक्षक ने तुर्की उन समुद्री दस्युआ के लिए माग बनाया, जिन्हाने ११ वी शती में खलीफा के उत्तराधिकारी राज्या के लिए जगह बनायी । और उदाहरण भी दिये जा सकते ह । और हमारी सूची और भी बडी होती यदि सभ्यताआ के अतिम पीडाओ का ऐतिहासिक उल्लेख इतना कम न होता । किन्तु हम कम-से-कम अनुमान कर सकते ह कि समुद्रा में विचरण करने वाले उन बबरो ने—जो मिनोई समुद्री राज्य की सामाआ पर चक्कर काटा करते थे और जिन्होने सम्भवत १४०० ई० पू० में नासास को लूटा था—अपना प्रशिक्षण मिनोस के भाडे के टट्टू के रूप में ग्रहण किया था । ऐसा उन्हाने उनका विनाश करने के पहले

यौवनावस्था में मचूरिया में गया । तीन प्रान्तो के सुदूर प्रदेशो की उसने यात्रा की तथा अन्त में सितिहार में बस गया । एक दिन मैने उस जवान से पूछा—'सितिहार में पैदा होकर भी तुम सामान्यत मचूरी चीनियो जैसा क्या बोलते हो ? जब कि तुम्हारे पिता जो होनान में पैदा हुए थे, केवल बोलते ही नहीं हैं वरन् मचूरिया के बूढ़ो की भाँति व्यवहार एव हाव भाव भी है । वह हँसा और बोला—'जब मेरे पिता जवान थे तब मिनजेन (राजवशी नहीं वरन् मामूली चीनी, जन साधारण नागरिक) के लिए उत्तरी क्षेत्र में जीवन बिताना कठिन था । माचू लोगो का प्रभाव सब पर था । किन्तु जब मै तरुण हुआ तब राजवशी होना किसी काम का नहीं था । अतएव मै अपनी पीढ़ी के अन्य नवजवानो की भाँति हो गया ।' यह एक कहानी है जो अतीत और वर्तमान की प्रक्रिया को बताती है क्योकि मचूरिया के युवक मचूरिया में पैदा हुए चीनियो के साथ एक समान हो गये हैं ।[1]

किन्तु १९४६ ई० में किसी अंग्रेज को सर्वहाराकरण की प्रणाली के अध्ययन के लिए न तो गिबन के इतिहास पढ़ने की आवश्यकता है और न ट्रासससाइबेरियन रेल में यात्रा करने की । वह अपने घर में यह कर सकता है । सिनेमा में वह देख सकता है कि सब लोग ऐसे फिल्म देखते हैं जो बहुसख्यक सर्वहारा के मनोरजन के लिए बनी हैं । और क्लबो में भी मैलो ड्रामा का बहिष्कार नहीं होता है । यदि हमारे आधुनिक काल का जुवेनाल पारिवारिक मनुष्य होता घर के अन्दर रहता, फिर भी उसकी प्रतिमूर्ति मिल जाती यदि वह अपने कान खोलता (जो बन्द करने से सरल होता) तो वह जाज अथवा विविध कार्यक्रम रेडियो पर सुनता जिसे उसके लड़के सुनते हैं । और छुट्टियो की समाप्ति पर जब वह अपने बच्चो को 'पब्लिक स्कूल' में जाते देखता जो सामाजिक अलगाव के कारण लोकतन्त्रियो की घृणा का पात्र था, तब इन बच्चो से यह कहना न भूलता कि उसके स्कूल में कितने अभिजात कुल के हैं । और जब हमारे विचित्र कुल पिता युवक सजीव कामोडस को देखते तो उन्हें पता चलता कि हैट किस बाँकपन से लगायी गयी है और गुंडो के ढग का रूमाल, जो देखने में मालूम पड़ता है यो ही गले में डाल लिया गया है, वास्तव में चतुराई से इस प्रकार रखा गया है कि आवश्यक सफेद कालर को छिपा ले । यह निश्चित प्रमाण है कि सर्वहारा का फैशन चल रहा था । जैसे तिनके से वास्तव में हवा का रुख मालूम पड़ता है वैसे ही व्यग्यकार का साधारण मजाक इतिहासकारो की चक्की के लिए अनाज का काम देता है ।

जब हम शक्तिशाली अल्पसख्यक का सर्वहारा के साथ शान्तिपूर्ण समागम द्वारा उत्पन्न अभद्रता की ओर देखते हैं और उसके बाद सीमा के परे बाहरी सर्वहारा के युद्धजनित सम्पर्क से बर्बरता उत्पन्न होते देखते हैं, तब हमें पता चलता है कि दोनो नाटको का कथानक समान है । इसमें दूसरे का दृश्य और साज सज्जा कृत्रिम सैनिक सीमा है—सार्वभौम राज्य की सीमा-जिसके पार शक्तिशाली अल्पसख्या तथा बाहरी सर्वहारा एक दूसरे के सामने परदा उठते समय दिखाई देते हैं और इस रूप में कि एक दूसरे से अलग हैं और विरोधी हैं । जैसे-जैसे नाटक आगे बढ़ता है अलगाव घनिष्ठता में बदल जाता है किन्तु इससे शान्ति नहीं होती और जैसे-जैसे युद्ध

१ ओ लटिमोर मचूरिया, क्रैडिल आफ कान्फ्लिक्ट (१९३२) पृ० ६२-३ ।

बढता है समय बबरता के अनुकूल रहता है । अन्त में सीमा टूट जाती है, तब तक उस राज्य पर विजय होती जिसकी शक्तिशाली अल्पसख्या अबतक रक्षा कर रही थी ।

पहले अक में ववर शक्तिशाली अल्पसख्या के देश में बधक और फिर वैतनिक सनिक के रूप में आता है और दोनो स्थितिया में वह स्वय को थोडा बहुत विनम्र बना लेता है । दूसरे अक में वह आक्रमणकारी, अनियन्त्रित तथा अवाछित हो जाता है, जो अन्त में उपनिवेशक या विजयी के रूप में बस जाता है । इस प्रकार प्रथम तथा द्वितीय अको के बीच सैनिक प्रभुता बबरो के हाथा में चली जाती है । इस प्रकार शक्ति और ऐश्वय का शक्तिशाली अल्पसख्यको से बबर लोगो के पास जाना शक्तिशाली अल्पसख्यको की धारणा को विशेष रूप से प्रभावित करता है । बबरता की पुस्तक का एक के बाद दूसरे पृष्ठ से वह अपनी शीघ्र ह्रासोन्मुख सैनिक तथा राजनीतिक दशा सुधारना चाहता है । और अनुकृति तो चापलूसी है ही ।

इस प्रकार नाटक के कथानक का वणन करते हुए हम आरम्भ की ओर लौट सकते है और मच के पहले ही दृश्य में बबरा को शक्तिशाली अल्पसख्यक के शिष्य के रूप में देखते हैं । फिर हम शक्तिशाली अल्पसख्यक को मिलने जुलने की ओर अग्रसर होते हुए पाते है । और थाडे समय में ही हम दोनो विरोधिया की ऐसी झलक पाते ह कि एक दूसरे के उधार लिये पखा को धारण करके वे अनाडी की भाँति विकृत बन जाते ह । और नकल करते करते काइमेरा (शेर के मुख, बकरे की धड और साप की पछ वाला विशाल काल्पनिक जन्तु) के समान मिश्रित वस्तु बन जाते हैं । अन्ततो गत्वा पहले वाले शक्तिशाली अल्पसख्यक का अपना अन्तिम चिह्न भी खो देते हैं । और शक्तिशाली अल्पसख्यक बबरता के साधारण धरातल पर आ जाता है ।

ववर युद्ध गिरोह की सूची में जो सभ्य शक्तियो के हाथ में बधक होकर प्रसिद्ध हुए ह उनमें कुछ ये ह कार्स्टेंटिनापल के रोमन कोट मे थियोडोरिक ने बधक के रूप में ही शिक्षा पायी । एड्रियानोपुल के उसमानिया दरबार में स्कडरवग को भी इसी प्रकार शिक्षा मिली । मसेडान के फिलिप ने युद्ध और शान्ति की कला इपमिनानडास से थीवेस में सीखी थी । मोरक्को सरदार अब्दुल करीम ने जिसने अनवाल में स्पेन की अभियानी सेना का नाश सन् १९२१ में किया था तथा, चार वर्षों बाद मोरक्को में फ्रासीसी शक्ति को जड से हिला दिया, स्पेन के मेल्लिा जेल में ११ महीने तक शिक्षा पायी ।

उन बबरो की सूची लम्बी है जो विजयी के रूप के पहले वेतनभोगी सनिक थे । ईसवी पाँचवी और सातवी शती में रोमन प्रदेशा के ट्यूटोनी और अरब बबर विजेता के उन अनेक पीढियो के वशज थे, जिन्होने रोमन सेना में सेवा की थी । ईसा की नवी शती में अब्बासी खलीफा के तुर्की अगरक्षक ने तुर्की उन समुद्री दस्युआ के लिए माग बनाया, जिन्होने ११ वा शती में खलीफा के उत्तराधिकारी राज्या के लिए जगह बनायी । और उदाहरण भी दिय जा सकते ह । और हमारी सूची और भी बडी होती यदि सभ्यताओ के अन्तिम पीडाओ का एतिहासिक उल्लेख इतना कम न होता । किन्तु हम कम-से-कम अनुमान कर सकते ह कि समुद्रा में विचरण करने वाले उन बबरो ने—जो मिनोई समुद्री राज्य की सीमाओ पर चक्कर काटा करते थे और जिन्होने सम्भवत १४०० ई० पू० में नासास को लूटा था—अपना प्रशिक्षण मिनोस के भाडे के टट्टू के रूप में ग्रहण किया था । ऐसा ध्यान उनका विनाश करने के पहले

यौवनावस्था में मचूरिया में गया। तीन प्रान्तों के सुदूर प्रदेशों की उसने यात्रा की तथा अन्त में सिकिहार में बस गया। एक दिन मैंने उस जवान से पूछा—'सिकिहार में पैदा होकर भी तुम सामान्य मचूरी चीनियों जैसे क्या बन गये हो? जब कि तुम्हारे पिता जो हुनान में पैदा हुए थे, केवल बोलने में ही नहीं, बल्कि मचूरिया के बूढ़ों की भाँति व्यवहार एवं हाव भाव भी है।' वह हँसा और बोला—'जब मेरे पिता जवान थे तब सिविलियन (राजकर्मी नहीं वरन् मामूली चीनी, जन साधारण नागरिक) के लिए उत्तरी क्षेत्र में जीवन बिताना कठिन था। मंचू लोगों का प्रभाव सब पर था। किन्तु जब मैं तरुण हुआ तब राजकर्मी होना किसी काम का नहीं था। अतएव मैं अपनी पीढ़ी के अन्य नवजवानों की भाँति हो गया।' यह एक कहानी है जो अतीत और वर्तमान की प्रक्रिया को बताती है क्योंकि मचूरिया के युवक मचूरिया में पैदा हुए चीनियों के साथ एक समान हो गये हैं।[1]

किन्तु १९४६ ई० में किसी अंग्रेज को सर्वहाराकरण की प्रणाली के अध्ययन के लिए न तो गिबन के इतिहास पढ़ने की आवश्यकता है और न ट्रांससाइबेरियन रेल में यात्रा करने की। वह अपने घर में यह कर सकता है। सिनेमा में वह देख सकता है कि सब लोग ऐसे फिल्म देखते हैं जो बहुसंख्यक सर्वहारा के मनोरंजन के लिए बनी हैं। और कल्ब में भी येलो प्रेस का बहिष्कार नहीं होता है। यदि हमारे आधुनिक काल का जुवनाल पारिवारिक मनुष्य होता घर के अन्दर रहता, फिर भी उसकी प्रतिमूर्ति मिल जाती यदि वह अपने कान खोलता (जो कि बन्द करने से सरल होता) तो वह जाज अथवा विविध कार्यक्रम रेडियो पर सुनता जिसे उसके लड़के सुनते हैं। और छुट्टियों की समाप्ति पर जब वह अपने बच्चों को पब्लिक स्कूल में जाते देखता जो सामाजिक अलगाव के कारण लोकतंत्रियों की घृणा का पात्र था, तब इन बच्चों से यह कहना न भूलता कि उसके स्कूल में कितने अभिजात कुल के हैं। और जब हमारे विचित्र कुल पिता युवक सजीव कामोडस को देखते तो उन्हें पता चलता कि हैट किस बाँकपन से लगायी गयी है और गुलूबन्द के ढंग का रूमाल, जो देखने में मालूम पड़ता है यों ही गले में डाल लिया गया है वास्तव में चतुराई से इस प्रकार रखा गया है कि आवश्यक सफेद कालर को छिपा ले। यह निश्चित प्रमाण है कि सर्वहारा का फैशन चल रहा था। जैसे तिनके से वास्तव में हवा का रुख मालूम पड़ता है वैसे ही व्यंग्यकार का साधारण मजाक इतिहासकारों की चक्की के लिए अनाज का काम देता है।

जब हम शक्तिशाली अल्पसंख्यक का सर्वहारा के साथ शान्तिपूर्ण समागम द्वारा उत्पन्न अभद्रता की ओर देखते हैं और उसके बाद सीमा के परे बाहरी सर्वहारा के युद्धजनित सम्पर्क से बर्बरता उत्पन्न होते देखते हैं, तब हमें पता चलता है कि दोनों नाटकों का कथानक समान है। इसमें दूसरे का दृश्य और साज सज्जा कृत्रिम सैनिक सीमा है—सार्वभौम राज्य की सीमा-जिसके पार शक्तिशाली अल्पसंख्या तथा बाहरी सर्वहारा एक दूसरे के सामने परदा उठते समय दिखाई देते हैं और इस रूप में कि एक दूसरे से अलग हैं और विरोधी हैं। जैसे-जैसे नाटक आगे बढ़ता है अलगाव घनिष्ठता में बदल जाता है, किन्तु इससे शान्ति नहीं होती और जैसे-जैसे युद्ध

१ ओ लटिमोर मचूरिया, क्रेडिल आफ कान्फ्लिक्ट (१९३२) पृ० ६२-३।

के रूप में भरती होने के अतिरिक्त और कोई आकांक्षा नहीं थी। दूसरी तरफ रोमन चाहते थे कि युद्ध में बबरों को सेना में भर्ती किया जाय।[1]

ईसा की चौथी शती के करीब-करीब मध्य में यह दिखाई देता है कि रोमन सेवा में नियुक्त जमनों ने अपने निजी नामों को ही रखने का अभ्यास आरम्भ कर दिया था। शिष्टाचार का यह परिवर्तन जो अचानक हो गया, बबर अधिकारियों के मन में आत्मविश्वास का द्योतक है, जो पहले बिना हिचकिचाहट के रोमन बनने में सन्तुष्ट थे। उनके सांस्कृतिक व्यक्तित्व को इस नये आग्रह के विपरीत रोमनों ने कोई अबबर काय नहीं किया। इसके विपरीत इसी समय बबर रोमनों की सेना में कौंसल होने लगे। यह सबसे बडा पद था जो सम्राट दे सकता था।

इस प्रकार जब बबर अपना पाँव रोम की सामाजिक सीढी पर सबसे ऊपर रख रहे थे, तब रोमन स्वयं इसकी विपरीत दिशा की ओर चल रहे थे। उदाहरणार्थ सम्राट ग्रैशियन (३७५–३८३ ई०) का रईसी के विपरीत सनक सूझी। यह अभद्रता नहीं, बबरता थी कि उसने बबर ढंग के वस्त्रों को धारण किया और बबर खेल-कूद में सम्मिलित होने लगा। एक शती के बाद हम रोमनों को वास्तविक रूप से स्वतन्त्र युद्ध के बबर सरदारों के दलों में सम्मिलित होते देखते हैं। उदाहरणार्थ, सन् ५०७ ई० में गआल को प्राप्त करने के लिए वोयले में विसीगोथों तथा फिरंगियों में जब लडाई हो रही थी, विसीगोथों की ओर सिडोनियस एपोल्नारीस के उस पौत्र की हत्या हो गयी, जो अपनी पीढी में भी सांस्कृतिक क्लासिकी साहित्यिक के रूप में जीवन-यापन कर रहा था। इसका प्रमाण नहीं है कि ईसवी छठी शती के आरम्भ में प्रांतीय रोमनों के वंशजों ने युद्ध की ओर अधिनायक के अनुसरण करने में कम उत्सुकता दिखायी, जितनी समकालीन बबरों के वंशजों ने दिखायी थी। जिनके लिए शतियों पहले से ही युद्ध का खेल प्राणस्वरूप हो गया था। इस समय तक दोनों दल बबरता में सांस्कृतिक समानता प्राप्त कर चुके थे। हम पहले ही देख चुके हैं कि चौथी शती में रोम की सेवा में लगे बबर अधिकारी अपने बबरी नाम का प्रयोग करने लगे थे। बाद की शती में इसके विपरीत प्रयास हुआ और असली रोमन गआल में जमन नाम रखने लगे और आठवीं शती के अन्त के पहले यह प्रयोग व्यापक हो गया। शार्लमान के समय तक गआल का प्रत्येक निवासी जमन नाम रख रहा था चाहे उसके पूवज जो भी रहे हों।

यदि हम रोमन साम्राज्य की अवनति और विनाश के साथ-ही साथ चीनी संसार की बबरताकरण की कहानी प्रस्तुत करें, जिसका मुख्य समय दो सौ साल पहले पडता है, तो अन्तिम विषय में विशेष अन्तर हमें देख पडेगा। चीनी सार्वभौम राज्य के उत्तराधिकारी बबर राज्यों के संस्थापक चीनी नाम का शुद्ध रूप ग्रहण करके अपनी बबरता की नग्नता को छिपाने में बहुत सतर्क थे। और यह केवल कल्पना नहीं है कि इस साधारण प्रयोग तथा चीनी सार्वभौम राज्य के पुनर्जीवन के अन्तर में कुछ गहरा सम्बन्ध है जो उस समानता में नहीं है जो शार्लमान द्वारा स्थापित छायास्वरूप रोमन साम्राज्य में पायी जाती है।

शक्तिशाली अल्पसंख्यक के बबरताकरण की जाँच समाप्त करने के पहले हम थोडे समय के

१ एस० डिल सोसाइटी इन द लास्ट सेंचुरी आव द वस्टन एम्पायर, पृ० २९१।

लिया था, और किंवदन्ती है कि सेन्ट में ब्रिटिश राजा आर्थर ने इसी सागर के किनारे नौकरी में रखा था, उसके पहले जब यह हेंगिस्ट तथा हारसा जैसे असामर्थीय लुटेरा द्वारा हराया गया।

हम उन अनेक प्रमाणों का भी पता लगा सकते हैं जिनमें बर्बर लोग अपना आक्रमण तक नहीं पहुँच सके। उदाहरणार्थ, पूर्वी रोमन साम्राज्य बर्बरों (बर्बर जो अरब में डाकू हो गये। यूरोप के पूर्वी तथा दक्षिणी सम्राटों के अंगरक्षक प्रायः बर्बर ही हुए थे) का शिकार हो जाता, यदि उन्हें नारमन तथा साल्जुक ने पराजित न कर दिया होता और अन्त में उसमानलियों द्वारा पूरा-का-पूरा हड़प न लिया गया होता। इधर उसमानिया साम्राज्य निश्चित रूप से बालिनिवका तथा अल्बेनियन धनलोलुपों में विभाजित हो गया होता, जो प्रान्तीय पाशाओं तथा तुर्की सरकार पर भी ईसा की अठारहवीं तथा उन्नीसवीं सदी में शीघ्रता से अधिकार कर रहे थे। किन्तु विदेशी व्यापारियों ने उसमानिया इतिहास के अन्तिम अध्याय को लेवाट (पूर्वी भूमध्य सागर) में पश्चिमी राजनीतिक विचारों तथा मनचेस्टर के सामानों की बाढ़ से अप्रत्याशित ढंग से मोड़ दिया। ओसमन धनलोलुप जिन्हें कमनिया के यूनानी नगर राज्यों में और महत्तर यूनान तथा सिसिली में सेवाओं के लिए अच्छा अवसर मिला था, अपने यूनानी मालिकों को जब भी अवसर होता था हटा देते थे या निकाल देते थे। और इसमें सन्देह नहीं कि प्रायः मालिकों के उन्मूलन का काम तब तक चलता जब तक ओट्रान्टो के जलडमरूमध्य के पश्चिम एक भी यूनानी समुदाय बच जाता। यदि संकट के समय रोमनों ने ओसकनों को उन्हीं के देश में पीछे से आक्रमण न किया होता।

इन उदाहरणों से हम समकालीन परिस्थिति का संकेत करते हैं जिसके सम्बन्ध में हम ठीक नहीं कह सकते कि ये धनलोलुप लुटेरे बन जायेंगे और यदि बन गये तो उनका यह कार्य ओसकन और अलबेनियनों के समान आरम्भ में ही नष्ट हो जायगा कि टयूटनों और तुर्कों की भाँति सफल होगा। आज के भारतीय देश के भाग्य के प्रति उन बर्बरों की भविष्य की भूमिका के सम्बन्ध में सोच सकता है जो भारत सरकार की प्रशासन की सीमा से परे स्वतन्त्रता के गढ़ में रहते हैं और जिनमें से १९३० के युद्ध में भारतीय सेना में एक बटे सात भाग थे। क्या उन दिनों के धनलोलुप गोरखा तथा आक्रमणकारी पठान बर्बरों के विजयी पिता और पितामह के रूप में इतिहास में याद किये जायेंगे जो ब्रिटिश राज के उत्तराधिकारी राज्यों के निर्माता हिन्दुस्तान में बनेंगे?

इस उदाहरण में हम नाटक के दूसरे अंक से अपरिचित हैं। इस अवस्था में नाटक की प्रगति देखने के लिए हमें हेलेनी सार्वभौम राज्य तथा रोमन साम्राज्य की उत्तरी परिसीमा से परे यूरोपीय बर्बरों के बीच के सम्बन्ध की कहानी की ओर अवश्य लौटना पड़ेगा। इस ऐतिहासिक मंच पर हम आरम्भ से अन्त तक समानान्तर क्रियाएँ देखते हैं जिनसे शक्तिशाली अल्पसंख्यक बर्बरता में परिणत हो जाते हैं और बर्बर उनके बलिदान पर अपने भाग्य चमकाते हैं।

प्रबुद्ध स्वार्थ के उदार वातावरण में नाटक आरम्भ होता है।

बर्बरों के लिए साम्राज्य घृणा का पात्र नहीं था। वास्तव में वे बहुधा उसकी सेवा करने के लिए लालायित रहते थे। उन्हें अलारिक या अतावुल्फ के समान ऊँचे सैनिक अधिकारी

या दूसरे रूप में विघटनोन्मुख सभ्यता की कला अपनी शैली की विशिष्टता को, जो अच्छे गुणो का लक्षण है, छोडकर विस्तृत और असामान्य रूप से व्यापक हो जाती है।

अभद्रता के दो क्लासिकी उदाहरण है वे फशन जिन्हें विघटनोन्मुख मिनोई तथा विघटनोन्मुख सीरियाई सभ्यता ने बारी-बारी से अपनी कला के रूप में भूमध्यसागर के तटो के चारो ओर फैलाया। अन्त काल (सम्भवत ई० पू० १४२५–११२५) जो मिनोई सागर तन्त्र के बाद आया उसे 'बाद का तीसरा मिनोई' के अभद्र फशन के नाम से पुकारते ह, जो सब पुरानी मिनोई शैली का सत्यानाश कर डालती है। इसी प्रकार सकटकाल (लगभग ई० पू० ९२५–५२५) जो सीरियाई सभ्यता के विघटन के बाद आयी फीनिशायी कला उतनी ही अभद्र है और उसका साभिप्राय भी यान्त्रिक मिलावट से मुक्त है। हेलेनी कला के इतिहास में जो कोरिंथियन वास्तु कला के साथ रवाज में आया, यह अतिशयता हलेनी प्रतिभा की विशेषता के विपरीत है। और जब हम इस फैशन का विशेष उदाहरण खोजते ह जो रोमन साम्राज्य के काल में उच्च शिखर पर था, तब हम उसे हेलेनी ससार के हृदय में नही, वरन बालवक के अ-हेलनी देवताओ के मदिरो के खंडहरो में या कलात्मक कब्रो में पाते हैं जो सुदूर पूर्वी ईरानी पठारो के किनारे बबर युद्ध सरदारो की लाशो को गाडने के लिए हेलेनी स्मृति गृह निर्माताओ ने बनायी थी।

यदि हम हेलेनी समाज के विघटन के समय के पुरातत्त्व को छोडकर साहित्यिक प्रमाणो की ओर मुड़ें तो हम देखेंगे कि ई० पू० ४३१ के पतन के बाद प्रथम कुछ पीढिया के विचारको ने हेलनी सगीत की अभद्रता के लिए विलाप किया था। हम एक अन्य सन्दभ में 'यूनाइटेड आर्टिस्ट लिमिटेड' के हाथो में 'एटिक नाटक' की अभद्रता देख चुके हैं। आधुनिक पश्चिमी ससार में हम देख सकते ह कि यह केवल भडकीला ह्रास था, न कि विशुद्ध हेलेनी कला की क्लासिकी शली, जिसने हमारे पश्चिमी हेलेनी बैरोक (१७वी तथा १८वी शती की कला की विशेष शली) और रोकोको (कला की अलकृत शैली) को प्रेरणा प्रदान की और हमारी विक्टोरियन व्यापारिक आट की तथाकथित 'चाकोलेट बाक्स' शली में हम 'बाद के तीसरे मिनोई' के समान कला देख सकते हैं यह पश्चिमी शली अपनी विशिष्ट तकनीक द्वारा अपने व्यापारिक सामानो से सम्पूर्ण ससार पर विजय प्राप्त करना चाहता है—

'चोकोलेट बाक्स' शली की मूढता उतनी उदासीपूर्ण है कि यह हमारी पीढी को निरुत्साही बनने के लिए प्रेरित करती है। बाइजतीवाद से पूव रेफेल तक की प्राचीन प्रयोगवादी उडान पर विचार अगले अध्यायो में किया जायगा। किन्तु यहाँ हम अभद्रता से बबरता की ओर सम-कालीन उडान उसके स्थान पर देखते ह। आज के आत्म सम्मानी पश्चिमी मूर्तिकलाविदो ने अपनी निगाहें बेनिन की ओर मोडी है जिन्होने बाइजैती कला में सुखमय शरण नही पायी। केवल नक्काशी की कला में ही पश्चिमी ससार की मौलिकता का स्रोत सूख गया और वह अफ्रीका के बबरो से नयी प्रेरणा ले रहा है। पश्चिमी अफ्रीका का सगीत तथा नृत्य और वास्तुकला भी अमरीका की राह से यूरोप के हृदय में प्रवेश कर रहा है।

साधारण मनुष्य की दृष्टि में बेनिन तथा बाइजटियम की ओर की उडान से पश्चिमी कलाकारों को उनकी खोई आत्मा प्राप्त नही हो सकती। इसपर भी, यदि वह अपने को नही बचा सकता तो दूसरो की मुक्ति का साधन हो सकता है। बगसा कहता है—कि साधारण बुद्धि

लिए यह प्रश्न करने के लिए रुक सकते हैं कि क्या इस सामाजिक स्थिति का कोई लक्षण हमारे अपने पश्चिमी ससार में दिखाई देता है ? प्रथम बार विचार करने पर कदाचित हम यह सोचेंगे कि हमारे प्रश्न का निश्चय रूप से उत्तर मिल जायगा, इस बात से कि हमारा समाज सम्पूर्ण ससार को अपने में समेट चुका है और बाहरी सवहारा अधिक परिमाण में हमें बबर बनाने के लिए नही छोडा गया है । किन्तु हमें विकल करने वाले इस तथ्य को याद रखना चाहिए कि हमारे पश्चिमी समाज की नयी दुनिया, उत्तरी अमेरिका, के बीच आज भी बहुत से इग्लैंड तथा मैदानी स्काटलड के वशज रहते ह जो प्रोटेस्टेंट पश्चिमी ईसाई सामाजिक पीढी के है जो यूरोप की 'केल्टिक सीमा' पर कुछ दिनो तक निर्वासित रहकर अपालेशियन जगलो में आवारा होकर बबर हो गये हैं ।

इस विषय के प्रमुख विद्वान् अमरीकी इतिहासकार ने अमरीकी सीमा पर बबरताकरण के प्रभाव का यो वणन किया है—

'अमरीका की बस्ती में हमें देखना है कि यूरोप का जीवन कैसे महाद्वीप में आया । और किस प्रकार अमरीका ने उस जीवन को परिवर्तित और विकसित किया और यूरोप पर उसकी क्या प्रतिक्रिया हुई । हमारा आरम्भिक इतिहास यूरोपीय कीटाणुओ का अमरीकी वातावरण में विकास का इतिहास है । सीमावर्ती प्रदेश में अति शीघ्रता से प्रभावशाली अमरीकीकरण हुआ है । जगल उपनिवेशको पर प्रभुत्व जमा लेता है । वह यूरोपीय वेश उद्योग, यत्र, यात्रा के साधन तथा यूरोपीय विचार के सामने आता है । वह उसे रलगाडी से उतार कर सकडी (बच) की डोगी (कनू) में लाता है । सभ्यता के वस्त्रो को उतरवा देता है तथा शिकारी कमीज और मृगचम के जूते पहनाता है । चिरोकी और इरोक्वाइस के लकडी के झोपडा में उन्हें रखता है तथा रेड इडियनो के समान उनके चारो ओर घेरे बनाता है । शीघ्र ही वह मक्का की खेती आरम्भ करता है और नुकीली लकडी से खेत जोतता है । युद्ध घोष करता है सच्चे रेड इडियनो की भाति वरी के शीश को ग्रहण करता है । सक्षेप में सीमा पर वातावरण मनुष्य के लिए बहुत शक्तिशाली होता है । धीरे धीरे वह जगल को बदलता है, किन्तु इसका परिणाम पुराना यूरोप नही होता । तथ्य यह है कि नया परिणाम होता है जो अमरीकी है ।'[1]

यदि यह वक्तव्य ठीक ह तो हम यह कहने के लिए विवश है कि कम-स-कम उत्तरी अमरीका में अपरिमित सामाजिक शक्ति बाहरी सवहारा के एक भाग द्वारा हमारे शक्तिशाली अल्पसख्यक के एक भाग पर पडी है । अमरीकी उपक्रम के इस प्रकाश में यह सोच लना गलत होगा कि बबरता की यह आध्यात्मिक व्याधि एक उपक्रम है जिसका हमारी आधुनिक पश्चिमी अल्पसख्या पूण उपेक्षा कर सकती है । यह दिखाई देता है कि विजित एव विनष्ट बाहरी सवहारा अपना बदला ले सकते हैं ।

(ब) कला में अभद्रता तथा बर्बरता

यदि हम व्यवहार और रीति रिवाज के सामान्य क्षेत्र से कला के विशेष क्षेत्र की ओर चले तो हम यहाँ फिर असामजस्य की भावना पायेंगे चाह वह अभद्रता हो या बबरता । उस एक

१ एफ० जे० टनर द फ्रान्टियर इन अमेरिकन हिस्ट्री, पृ० ३–४ ।

या दूसरे रूप में विघटनो मुख सभ्यता की कला अपनी शैली की विशिष्टता को, जो अच्छे गुणा का लक्षण है, छोडकर विस्तत और असामा य रूप से व्यापक हो जाती है ।

अभद्रता के दो क्लासिकी उदाहरण है वे फैशन जिन्हें विघटनो मुख मिनोई तथा विघटनो मुख सीरियाई सभ्यता ने बारी बारी से अपनी कला के रूप में भूमध्यसागर के तटा के चारा ओर फैलाया । अ त काल (सम्भवत ई० पू० १४२५–११२५) जो मिनोई सागर त त्र के बाद आया उसे 'बाद का तीसरा मिनोई' के अभद्र फशन के नाम से पुकारते है, जो सब पुरानी मिनोई शैली का सत्यानाश कर डालती है । इसी प्रकार सकटकाल (लगभग ई० पू० ९२५–५२५) जो सीरियाई सभ्यता के विघटन के बाद आयी फीनिशायी कला उतनी ही अभद्र ह और उसका साभिप्राय भी यान्त्रिक मिलावट से मुक्त है । हेलेनी कला के इतिहास में जो कारिथियन वास्तु कला के साथ रवाज में आया, यह अतिशयता हेलनी प्रतिभा की विशेषता के विपरीत है । और जब हम इस फैशन का विशेष उदाहरण खोजते ह जो रोमन साम्राज्य के काल में उच्च शिखर पर था, तब हम उसे हेलेनी ससार के हृदय में नही, वरन बालबक के अ-हेलेनी देवताओ के म दिरा के खंडहरा में या कलात्मक कब्रा में पाते ह जो सुदूर पूर्वी ईरानी पठारो के किनारे बबर युद्ध सरदारो की लाशो को गाडने के लिए हेलेनी स्मति गृह निर्माताआ ने बनायी थी ।

यदि हम हेलेनी समाज के विघटन के समय के पुरातत्त्व को छोडकर साहित्यिक प्रमाणो की ओर मुडें तो हम देखगे कि ई० पू० ४३१ के पतन के बाद प्रथम कुछ पीढियो के विचारका ने हेलेनी सगीत की अभद्रता के लिए विलाप किया था । हम एक अ य स दभ में 'यूनाइटेड आर्टिस्ट लिमिटेड' के हाथा में 'एटिक नाटक' की अभद्रता देख चुके है । आधुनिक पश्चिमी ससार में हम देख सकते है कि यह केवल भडकीला ह्रास था, न कि विशुद्ध हेलेनी कला को क्लासिकी शली, जिसन हमारे पश्चिमी हेलेनी बरोक (१७ वी तथा १८ वी शती की कला की विशेष शैली) और रोकोको (कला की अल्कृत शली) को प्रेरणा प्रदान की और हमारी विक्टोरियन व्यापारिक आट की तथाकथित 'चोकाल्ट बाक्स' शैली में हम 'बाद के तीसरे मिनोई' के समान कला देख सकते ह यह पश्चिमी शली अपनी विशिष्ट तकनीक द्वारा अपने व्यापारिक सामानो स सम्पूण ससार पर विजय प्राप्त करना चाहता है—

'चोकोलेट बाक्स' शैली की मूढता उतनी उदासीपूण है कि यह हमारी पीढ़ी को निरुत्साही बनने के लिए प्रेरित करती है । बाइजतीवाद से पूव रेफैल तक की प्राचीन प्रयोगवादी उडान पर विचार अगले अध्यायो में किया जायगा । किन्तु यहाँ हम अभद्रता से बबरता की ओर सम-कालीन उडान उसके स्थान पर देखते है । आज के आत्म सम्मानी पश्चिमी मूर्तिकलाविदा ने अपनी निगाहें बेनिन की ओर मोडी है जिन्होन बाइजेंती कला में सुखमय शरण नही पायी । केवल नक्काशी की कला में ही पश्चिमी ससार की मौलिकता का स्रोत सूख गया और वह अफ्रीका के बबरा से नयी प्रेरणा ले रहा है । पश्चिमी अफ्रीका का सगीत तथा नृत्य और वास्तुकला भी अमरीका की राह से यूरोप के हृदय में प्रवेश कर रहा है ।

साधारण मनुष्य की दृष्टि में बनिन तथा बाइजटियम की ओर की उडान से पश्चिमी कलाकारो को उनकी खोई आत्मा प्राप्त नही हो सकती । इसपर भी यदि वह अपने को नहीं बचा सकता ता दूसरो की मुक्ति का साधन हो सकता है । बगसा कहता है—कि साधारण बुद्धि

लिए यह प्रश्न करने के लिए रुक सकते हैं कि क्या इस सामाजिक स्थिति का कोई लक्षण हमारे अपने पश्चिमी ससार में दिखाई देता है ? प्रथम बार विचार करने पर कदाचित हम यह सोचेंगे कि हमारे प्रश्न का निश्चय रूप से उत्तर मिल जायगा, इस बात से कि हमारा समाज सम्पूर्ण ससार को अपने में समेट चुका है और बाहरी सर्वहारा अधिक परिमाण में हमें बबर बनाने के लिए नही छोडा गया है । किन्तु हमें विकल करने वाले इस तथ्य को याद रखना चाहिए कि हमारे पश्चिमी समाज की नयी दुनिया, उत्तरी अमेरिका, के बीच आज भी बहुत से इंग्लड तथा मदानी स्काटलड के वशज रहते हैं जो प्रोटेस्टेंट पश्चिमी ईसाई सामाजिक पीढी के हैं जो यूरोप की 'केल्टिक सीमा' पर कुछ दिनो तक निर्वासित रहकर अपालशियन जगलो में आवारा होकर बबर हो गये हैं ।

इस विषय के प्रमुख विद्वान्, अमरीकी इतिहासकार ने अमरीकी सीमा पर बबरताकरण के प्रभाव का यो वणन किया है—

'अमरीका की बस्ती में हमें देखना है कि यूरोप का जीवन कैसे महाद्वीप में आया । और किस प्रकार अमरीका ने उस जीवन को परिवर्तित और विकसित किया और यूरोप पर उसकी क्या प्रतिक्रिया हुई । हमारा आरम्भिक इतिहास यूरोपीय कीटाणुओ का अमरीकी वातावरण में विकास का इतिहास है । सीमावर्ती प्रदेश में अति शीघ्रता से प्रभावशाली अमरीकीकरण हुआ है । जगल उपनिवेशको पर प्रभुत्व जमा लेता है । वह यूरोपीय वेश, उद्योग, यन्त्र यात्रा के साधन तथा यूरोपीय विचार के सामने आता है । वह उसे रलगाडी से उतार कर सकडी (बच) की डोगी (कनू) में लाता है । सभ्यता के वस्त्रो को उतरवा देता है तथा शिकारी कमीज और मगचम के जूते पहनाता है । चिरोकी और इरोक्वाइस के लकडी के झोपडो में उन्हें रखता है तथा रेड इडियनो के समान उनके चारो ओर घेरे बनाता है । शीघ्र ही वह मक्का की खेती आरम्भ करता है और नुकीली लकडी से खेत जोतता है । युद्ध घोष करता है सच्चे रेड इडियनो की भाँति वरी के शीश को ग्रहण करता है । सक्षेप में सीमा पर वातावरण मनुष्य के लिए बहुत शक्तिशाली होता है । धीरे धीरे वह जगल को बदलता है, किन्तु इसका परिणाम पुराना यूरोप नही होता । तथ्य यह है कि नया परिणाम होता है जो अमरीकी है ।'[1]

यदि यह वक्तव्य ठीक है तो हम यह कहने के लिए विवश है कि कम-से-कम उत्तरी अमरीका में अपरिमित सामाजिक शक्ति बाहरी सर्वहारा के एक भाग द्वारा हमारे शक्तिशाली अल्पसख्यक के एक भाग पर पडी है । अमरीकी उपक्रम के इस प्रकाश में यह सोच लेना गलत होगा कि बबरता की यह आध्यात्मिक व्याधि एक उपक्रम है जिसका हमारी आधुनिक पश्चिमी अल्पसख्या पूर्ण उपेक्षा कर सकती है । यह दिखाई देता है कि विजित एव विनष्ट बाहरी सर्वहारा अपना बदला ले सकते हैं ।

(ब) कला में अभद्रता तथा बबरता

यदि हम व्यवहार और रीति रिवाज के सामान्य क्षेत्र से कला के विशेष क्षेत्र की ओर चलें तो हम यहाँ फिर असामजस्य की भावना पायेंगे चाहे वह अभद्रता हो या बबरता । उस एक

1 एफ० जे० टनर द फ्रॉटियर इन अमेरिकन हिस्ट्री, पृ० ३–४ ।

कोई अलबेनी, कोई बासनियाई, कोई मिग्रेली, कोई तुर्की, कोई इटालवी बोलता है।[1] उसमानिया इतिहास की इस साधारण घटना की स्थिति 'पवित्र आत्मा' के अवतरण की महान् घटना के बिलकुल विपरीत है जसा 'ऐक्टस आव अपासिल' में लिखा है। उस दृश्य में जो बोलिया बोली जाती ह उन्हें बोलने वाले खुद नही समझते। अपढ गैलीलियन जिन्होने अपनी स्थानीय एरामी भाषा के अतिरिक्त कोई दूसरी भाषा न सुनी है न उसे बोला है। दूसरी बोलियो में अचानक उनका बोलना ईश्वर के चमत्कार का वरदान समझा जाता है।

इस रहस्यपूण अश की व्याख्या विभिन्न रूप से की गयी हैं, किन्तु जिससे हम सम्बन्धित हैं उसमें कोई विवाद नही है। यह स्पष्ट है कि एक्टस के लिखने वाला की दष्टि में भाषा का वरदान उनकी प्राकृतिक मन शक्तियो की पहली वद्धि थी जिसकी ईसा के शिष्यो को आवश्यकता थी क्योकि इनके सामने नये प्रकाशित 'उच्चतर धम को फैलाकर सम्पूण मानव-समाज का बदल देने का महान् काय था। किन्तु जिस समाज में ये ईसा के शिष्य पैदा हुए थे, वह समाज सामान्य भाषा की दष्टि से आज के ससार की अपेक्षा दरिद्र था। गैलीलियना की एरामी मातभाषा उत्तर में एकानस तक, पूव में जाग्रोस तक तथा पश्चिम में नील तक ही जा सकती थी, किन्तु यूनानी भाषा जिसमें एक्टस लिखे गये थे वह राम और रोम से समुद्र पार ईसाई मिशनरियो द्वारा जा सकती थी।

यदि हम स्थानीय मातभाषा के सम्पूण ईसाई जगत की सामान्य भाषा में परिवतन के कारणा एव परिणामा की परीक्षा आरम्भ करे तो हम देखेंगे कि जिस भाषा को इस प्रकार की विजय अपने विरोधिया पर प्राप्त हाती है उसका कारण यह है कि उस भाषा ने सामाजिक विघटन के समय किसी समुदाय की सेवा की है और वह युद्ध अथवा व्यापार मे शक्तिशाली रहा है। हम यह भी देखेंगे कि मानव की भाँति भाषा भी बिना कीमत चुकाये विजय प्राप्त करने में समथ नही होती। सामान्य भाषा बनने के लिए भाषा को अपनी निजी विशेषताआ का बलिदान करके मूल्य चुकाना पडता है। क्याकि वही लाग पूण शुद्धता से कोई भाषा बोल सकते ह जिन्हें उन्हाने बचपन से सीखा है। यह शुद्धता प्रकृति की देन है कला इसे नही सिखा सकती। इस निष्कष की सचाई प्रमाणा से सिद्ध की जा सकती है।

हेलेनी समाज के विघटन के इतिहास में हम दो भाषाएँ एक दूसरे के बाद देखते हैं—पहली 'एटिक ग्रीक' और बाद में लैटिन। ये भाषाएँ एटिका और लैटिअम दो छोटे जिला की मात-भाषाआ के रूप में आरम्भ हुई थी। बाद में ये बाहरी दुनिया में फैलती रही यहाँ तक कि ईसाई युग के आरम्भ में हम एटिक ग्रीक को थेलम के तट पर दरबार में और लैटिन को राइन के किनारे खेमा में प्रयाग हाते देखते ह। एटिक ग्रीक भाषा का विस्तार ई० पू० पाँचवी शती में एथेनी सागरतन्त्र की सस्थापना के साथ आरम्भ हुआ था। बाद मे मेसेडोनी फिलिप ने एटिक भाषा को अपने क्षेत्र की सरकारी भाषा के रूप में स्वीकार किया। इससे इसका विस्तार बढ गया। जहा तक लैटिन का प्रश्न है यह विजयी रोमन सेनाआ की ध्वजा के साथ चलती गयी। इन भाषाआ के विस्तार की सराहना करने के बाद यदि हम भाषा वज्ञानिक तथा साहित्य पारखी की दष्टि से उनके समकालिक विकास का अध्ययन करे तो हम उनकी विकृति से भी उसी प्रकार

1 पी० राइकाट द प्रेजेन्ट स्टेट आव दि ओटमन एम्पायर (१६६८) पृ० १८।

का अध्यापक जो उस विज्ञान की जिसे प्रतिभाशाली व्यक्तियों ने रचा है, यन्त्रवत् शिक्षा देता है अपने शिष्यों को इतना जाग्रत कर सकता है कि वे ऐसा कार्य करें जिसका उसने कभी अनुभव नहीं किया था। और यदि विघटनोन्मुख हेल्लनी संसार की व्यावसायिक कला' द्वारा महायानी बौद्ध धर्म ने भारतीय धरतीपर दूसरे विघटनोन्मुख संसारके मिलने के फलस्वरूप बहुत ही मौलिक कला उत्पन्न की तो इसी तर्क पर हम यह नहीं कह सकते कि आधुनिक पश्चिमी जगत् की 'चोकोलेट बाक्स' की शैली वैसा ही चमत्कार दिखाने में अक्षम्य है जब कि वह संसार भर में बड़े तड़क-भड़क के साथ विज्ञापन बाजों के तख्तों पर तथा ऊँचे ऊँचे स्थानों पर वह दिखाई पड़ रही है।

(स) सामान्य भाषा (लिंगुआ फ्राका)

भाषा के क्षेत्र में असामंजस्य की भावना स्थानीय विशेषता को छोड़कर बोलियों के मिश्रण के फलस्वरूप अस्तव्यस्तता प्रकट करती है।

यद्यपि भाषा की स्थापना मानव के बीच विचारों के आदान प्रदान के उद्देश्य से की गयी है किन्तु मानव के इतिहास में इसका सामाजिक प्रभाव अब तक वास्तविक रूप से सम्पूर्ण मानव को विभाजित करने तथा न मिलने देने के लिए रहा है, क्योंकि भाषाओं के इतने विभिन्न रूप हो गये कि ऐसी भी भाषा जो बहुत चलती है मानव समाज के छोटे-से अंश से अधिक में समान रूप से नहीं रही। भाषा का न समझना विदेशी होने का प्रमुख लक्षण है।

विघटनोन्मुख सभ्यताओं के विनाश की ओर बढ़ी अवस्था में भाषाओं को भी उन्हीं लोगों की भाँति आपस में विनाशकारी संघर्ष करते हुए तथा एक-दूसरे पर विजय प्राप्त करते हुए देखते हैं, जिनकी ये भाषाएँ हैं और इसका विजेता भी अपनी भाषा का विस्तार करता जाता है। यदि बोलियों के मिश्रण की उस कथा में कुछ भी तथ्य है जो शिनार में अपूर्ण मन्दिर के नीचे हुई थी तो यह कहानी सम्भवतः हमें बबिलोन के उस युग में ले जाती है जिसमें सुमेरी सार्वभौम राज्य का पतन हो रहा था। क्योंकि सुमेरी इतिहास के संकट-कालिक अन्तिम अध्याय में सुमेरी संस्कृति को वहन करने वाली मूल भाषा के रूप में अपनी एतिहासिक भूमिका पूरी करने के बाद सुमेरी भाषा मर गयी थी और अक्कादी भाषा को जो अभी उन्नति करके सुमेरी भाषा के समान हुई थी, बाहरी सर्वहारा के दलों की बोलियों के साथ भिड़ना पड़ा था। ये बोलियाँ स्वामी विहीन राज्य में बर्बर युद्धकारी दल लाये थे। बोलियों के सम्मिश्रण की कहानी जीवन में सत्य है क्योंकि नवीन और अभूतपूर्व सामाजिक संकटकाल में यह अबोध गम्यता सामाजिक एकता के कार्य में बाधक होती है। भाषा की विभिन्नता तथा सामाजिक जड़ता साथ-साथ होती है इसके उदाहरण विशिष्ट रूप से इतिहास में दिखाई देते हैं।

हमारी अपनी पीढ़ी के पश्चिमी संसार में यह कमजोरी डेन्यूबी हैप्सबुर्ग के राजाओं की जिनकी समाप्ति पहले विश्वयुद्ध (१९१४–१८) में हो गयी घातक दुर्बलताओं में से एक थी। यह बोलियों की कमजोरी १६५१ ई० में अपनी प्रौढ़ावस्था में उसमानिया बादशाहों के अमानवीय रूप से समय दासों में भी थी। हम केवल का अभिशाप उत्तराधिकार के रूप में इख-ओगलानों के ऊपर देखते हैं जब वे रनिवास के प्रांगण में दरबारी शान्ति के संकट के क्षणों में अशक्य हो जाते हैं। घबराहट में बच्चे कृत्रिम रूप से सीखे उसमानलियों के मुहावरे भूल जाते हैं। दर्शकों के आश्चर्यचकित कान विभिन्न ध्वनियों और भाषाओं के कोलाहल से फट जाते हैं। कोई जार्जी,

जो १४ वीं शती के अन्त से आरम्भ हुई थी और १८वी शती के अत तक चलती रही। १४ वें लुई के युग के बाद से फ्रासीसी सस्कृति ने आकषण उत्पन्न किया जिसके साथ ही फ्रासीसी सेना का भी विकास हुआ। और जब नपोलियन वे बूर्बोन पूवजो की आकाक्षा को सभी नगर राज्या के टुकडो को फ्रासीसी डिजाइन के अनुसार मिलाकर पूरा किया, जो टुकडे राष्ट्र के द्वार पर, उत्तरी महासागर से लेकर वाल्टिक सागर तक यूरोप में बिखरे हुए थे आ गये। उस समय नपोलियन का साम्राज्य सैनिक प्रणाली के साथ साथ सास्कृतिक शक्ति भी बन गया।

यह वास्तव में फ्रास का सास्कृतिक मिशन था, जिसने नैपोलियन के साम्राज्य का विनाश किया था। क्योकि जिन विचारो का उसने प्रसार किया (रोग के अथ में) वह आधुनिक पश्चिमी सस्कृति की अभिव्यक्ति थी, जिसका अभी विकास हो रहा था। नपालियन का उद्देश्य पश्चिमी ईसाई राज्य के बीच नगर राज्या की व्यवस्था के समान उप समाज के लिए उप सावभौम राज्य बनाना था, किन्तु सकटकाल से बहुत दिना तक पीडित समाज के लिए शान्ति प्रदान करना सावभौम राज्य का काय है। सावभौम राज गत्यात्मक तथा क्रान्तिकारी विचारा से प्रेरित हा विरोध मूलक बातें ह, जस तुरही पर लोरी गाना। फ्रासीसी क्रान्ति के विचार इटालियना, फ्लेमिंग, राइन प्रदेश निवासी, जमन, और हसिआटको[1] का शान्त करने या इसलिए कि फ्रासीसी साम्राज्य निर्माताओ के बाझ को बरदाश्त कर लें, जिन्हाने इन विचारा को प्रवाहित किया था नही चलाया गया था। इसके विपरीत नैपोलियन के फ्रास की क्रान्ति ने इन देशा की गतिरुद्ध जनता को एक उत्तजक धक्का दिया, जिससे उनकी जडता भागी तथा जाग्रत होने और फ्रासीसी साम्राज्य नष्ट करने की उन्हें प्रेरणा दी। आधुनिक पश्चिमी ससार में नव निर्मित राष्ट्रा को उचित स्थान दिलाने का यह पहला कदम था। इस प्रकार नैपोलियन के साम्राज्य के अन्दर अपनी निश्चित विफलता के प्रोमीथियन[2] बीज मौजूद थे, क्योकि वह ऐसे पतनोन्मुखी ससार में सावभौम राज्य की सेवा करना चाहता था। जब कि उसका मध्याह्नकाल फ्लोरेंस और वेनिस तथा ब्रूजेज और ल्यूबेक के वभव के साथ बीत चुका था।

अज्ञात रूप से नपालियनी साम्राज्य ने यह किया कि माध्यमिक नौ सेना के टूटे फूटे बिखरे जहाजा को पश्चिमा जीवन की धारा में खीच लाया और साथ उसके वेचन नाविको को उनके जहाजा को समुद्र में चलने योग्य बनाने की प्रेरणा दी। फ्रासीसिया का यह वास्तविक काय इस विषय में अल्पकालीन और व्यथ हो जाता यदि नैपोलियन दूसरे राष्ट्र राज्या को जसे ब्रिटेन, रूस स्पेन—जा नगर राज्या की व्यवस्था से दूर थे, और जो सचमुच उसका कायक्षेत्र था, करीन भी बनाता। फिर भी आज के इस महान् समाज में दो सौ वष पुराने ढग की एक विरासत

१ यह सघ जिसमें उत्तरी यूरोप के कई नगर शामिल थे। यह सघ व्यापार के लिए बना था।—अनुवादक

२ प्रोमीथ्यूस का विशेषण। यूनानी पुराण में कथा है कि प्रोमीथ्यूस स्वग में चला गया और वहां से सूय से अग्नि चुरा लाया कि मनुष्यों को जीवन दान दे। उसे यह दण्ड दिया गया कि काकेशस पहाड पर बाँध दिया गया। एक गिद्ध आकर रोज उसके कलेजे को खाता था। —अनुवादक

प्रभावित होगे । अफलातून तथा सोफोक्लीस सुदर स्थानीय एटिक ग्रीक सेप्टु आजिन्ट और पोलीवियस तथा नयी बाइबिल में बदल कर विकृत हो करके कोइह् हो गयी । और सिसरो और वर्जिल का साहित्यिक माध्यम अन्त में भ्रष्ट लटिन हो गया । १८ वी शती के आरम्भ तक यही 'भ्रष्ट लटिन' अपने सम्बधी पश्चिमी ईसाई समाज में अतर्राष्ट्रीय सम्पर्क के गम्भीर कार्यों में व्यवहार की जाती थी । उदाहरणार्थ, मिल्टन क्रामवेल शासन का लैटिन सचिव था । १८४० तक हगरी ससद में 'भ्रष्ट लटिन लेन देन के माध्यम के रूप में चलती रही । इस त्याग का एक कारण था जिसके परिणामस्वरूप सन् १८४८ की मिश्रित राष्ट्रो की भ्रातृहता लडाई आरम्भ हुई ।

सीरियाई तथा बबिलोनी सभ्यताओ के विघटन के साथ-ही साथ दो मरणासन्न समाजो का विनाश भी मिल गया जिनका अतर नही जान पडता था जितना ही अधिक उनका विस्तार सामान्य भाषा पर होता था । इस अस्त व्यस्त मल्बे के टूटे धरातल पर एरामी भाषा झखाड की भाँति फली । यद्यपि लैटिन और ग्रीक के समान इसे अपने सफल विजेताओ का सरक्षण प्राप्त नही हुआ । यह एरामी भाषा अपने समय में यद्यपि अच्छी तरह प्रचलित थी, किन्तु वर्णमाला तथा लिपि की अपेक्षा कम चली और क्षेत्रो में चली । इसका एक रूप भारत तक पहुँचा । बौद्ध सम्राट अशोक द्वारा इसका प्रयोग अपने प्राकृत चौदह अभिलेखो के प्रचार में दो में इस लिपि का प्रयोग किया गया था । उस लिपि का दूसरा रूप सोगडियन कहा जाता है । यह धीरे धीरे उत्तर-पूरब की ओर जक्सर्टीज से आमूर की ओर बढी । १५९९ ई० तक यह माचू लोगो की वर्णमाला बनी । एरामी वर्णमाला का तीसरा रूप अरबी भाषा की लिपि बनी ।

पश्चिमी ईसाई साम्राज्य के तथाकथित 'मध्ययुग में विकसित उत्तरी इटली पर विशेष ध्यान देते हुए यदि हम नगर राज्यो की अपरिपक्व व्यवस्था की ओर पुन मुडें तो हम इटली की टसकन बोली को अपनी प्रतिद्वन्द्वी बोलियो पर वैसे ही छाप लेते देखेंगे जैसे एटिक बोली ने अपनी प्राचीन ग्रीक की प्रतिद्वन्द्वी बोलियो को अच्छादित कर लिया था । उसी समय यह बोली भूमध्यसागर के सभी तटो पर वेनिस तथा जेनेवा के व्यापारियो तथा साम्राज्य निर्माताओ द्वारा प्रचलित हुई । इटली की टसकन बोली के सारे भूमध्य सागर के प्रदेशों में चलने के कारण यह इटली के नगर राज्यो की स्वतन्त्रता के बाद तक भी जीवित रही। सोलहवी शती में इटालियाई भाषा उसमानिया नौ-सेना की भाषा रही जो इटालियाइयो को पूर्वी भूमध्यसागर से भगा रही थी । पुन १९ वीं शती में यही इटालियाई भाषा हैप्सबुर्ग नौ-सेना की भाषा हुई, जिसके राजा सन् १८१४ स १८५९ तक इटली की राष्ट्रीय आशाओ को निष्फल करने में सफल रहे । लेवाट की (भूमध्यसागर का पूर्वी भाग) यह सामान्य भाषा जिसका इटालियाई आधार विभिन्न विदेशी भाषा की बढियो के भार से करीब-करीब दब गया था भाषा के वर्ग का एसा प्रशसनीय उदाहरण है उसका ऐतिहासिक नाम वर्ग के नाम को व्यक्त करता है ।

बाद में किस प्रकार यह विकृत टसकन भाषा लेवाट के अनुकूल क्षेत्र से भी विकृत फासीसी भाषा द्वारा हटाया गया । फासीसी भाषा का भाग्य इस कारण उदय हुआ कि इटालियाई, जर्मन और फ्लेमिश नगर राज्यो की व्यवस्था के पतन के सकटकाल में फ्रास ने इन महाशक्तियो पर विजय प्राप्त की जो विनाशोन्मुख केन्द्र पर शासन करने के लिए परिधि पर अपना विस्तार कर रहे थे । इन नगर राज्यो की व्यवस्था उन समाजो के उस विघटन के इतिहास की एक घटना थी,

जो १४ वी शती के अन्त से आरम्भ हुई थी और १८वी शती के अन्त तक चलती रही । १४ वें लुई के युग के बाद से फ्रासीसी सस्कृति ने आकषण उत्पन्न किया जिसके साथ ही फ्रासीसी सेना का भी विकास हुआ । और जब नपोलियन वे बूर्बोन पूवजो की आकाक्षा को सभी नगर राज्यो के टुकडा को फ्रासीसी डिजाइन के अनुसार मिलाकर पूरा किया, जा टुकडे राष्ट्र के द्वार पर, उत्तरी महासागर से लेकर बाल्टिक सागर तक यूरोप में बिखरे हुए थे आ गये । उस समय नपोलियन का साम्राज्य सैनिक प्रणाली के साथ साथ सास्कृतिक शक्ति भी बन गया ।

यह वास्तव में फ्रास का सास्कृतिक मिशन था, जिसने नैपोलियन के साम्राज्य का विनाश किया था । क्योकि जिन विचारो का उसने प्रसार किया (रोग के अथ में) वह आधुनिक पश्चिमी सस्कृति की अभिव्यक्ति थी, जिसका अभी विकास हो रहा था । नपोलियन का उद्देश्य पश्चिमी ईसाई राज्य के बीच नगर राज्यो की व्यवस्था क समान उप समाज के लिए उप सावभौम राज्य बनाना था, किन्तु सकटकाल से बहुत दिनो तक पीडित समाज के लिए शान्ति प्रदान करना सावभौम राज्य का काय है । सावभौम राज गत्यात्मक तथा क्रान्तिकारी विचारो से प्रेरित हो विरोध मूलक बातें है, जसे तुरही पर लोरी गाना । 'फ्रासीसी क्रान्ति के विचार इटालियना, फ्लेमिंग, राइन प्रदश निवासी, जमन, और हसिआटको[1] को शान्त करने या इसलिए कि फ्रासीसी साम्राज्य निर्माताओं के बोझ को बरदाश्त कर लें, जिन्हाने इन विचारा को प्रवाहित किया था नही चलाया गया था । इसके विपरीत नपोलियन के फ्रास की शान्ति ने इन देशा की गतिरुद्ध जनता को एक उत्तजक धक्का दिया, जिससे उनकी जडता भागी तथा जाग्रत होने और फ्रासीसी साम्राज्य नष्ट करने की उन्हें प्रेरणा दी । आधुनिक पश्चिमी ससार में नव निर्मित राष्ट्रा को उचित स्थान दिलाने का यह पहला कदम था । इस प्रकार नपोलियन के साम्राज्य के अन्दर अपनी निश्चित विफलता के प्रामीथियन[2] बीज मौजूद थे, क्योकि वह ऐसे पतनोन्मुखी ससार में सावभौम राज्य की सेवा करना चाहता था । जब कि उसका मध्याह्नकाल फ्लारेंस और वेनिस तथा ब्रूजेज और ल्यूबेक के वभव के साथ बीत चुका था ।

अज्ञात रूप से नैपोलियनी साम्राज्य ने यह किया कि माध्यमिक नौ सेना के टूटे फूटे बिखरे जहाजा का पश्चिमी जीवन की धारा में खीच लाया और साथ उसके बेचैन नाविका को उनके जहाजा को समुद्र में चलने योग्य बनाने की प्रेरणा दी । फ्रासीसियो का यह वास्तविक काय इस विषय में अल्पकालीन और व्यथ हो जाता यदि नपोलियन दूसरे राष्ट्र राज्यो को जसे ब्रिटेन, रूस, स्पेन—जो नगर राज्यो की व्यवस्था से दूर थे, और जो सचमुच उसका कायक्षेत्र था, करीन भी बनाता । फिर भी आज के इस महान समाज में दो सौ वष पुराने ढग की एक विरासत

१ यह सघ जिसमें उत्तरी यूरोप के कई नगर शामिल थे । यह सघ व्यापार के लिए बना था । —अनुवादक

२ प्रोमीथ्यूस का विशेषण । यूनानी पुराण में कथा है कि प्रोमीथ्यूस स्वग में चला गया और वहाँ से सूय से अग्नि चुरा लाया कि मनुष्यों को जीवन दान दे । उसे यह दण्ड दिया गया कि काकेशस पहाड पर बाँध दिया गया । एक गिद्ध आकर रोज उसके कलेजे को खाता था । —अनुवादक

प्रभावित होंगे। अरामाइक तथा गोलोवेनीय गुप्त स्थानीय लैटिन ग्रीक हेलेनिक और पोलीनियन तथा नयी बाइबिल में बदल कर विलुप्त हो करके गौरव हो गयी। और जिसको और यवन का साहित्यिक माध्यम अन्त में समाप्त लैटिन हो गया। १८वीं सदी के आरम्भ तक यही 'सच्चे लैटिन' अपने सम्बन्धी पश्चिमी ईसाई समाज में अन्तर्राष्ट्रीय सम्पर्क के गम्भीर कार्यों में व्यवहार की जाती थी। उदाहरणार्थ मिल्टन क्रामवेल शासन का लैटिन सचिव था। १८४० तक हंगरी संसद में 'सच्ची लैटिन' सार्वजनिक माध्यम के रूप में चलती रही। इस त्याग का एक कारण था जिसके परिणामस्वरूप सन् १८४८ की मिश्रित राष्ट्रों की भाषा लड़ाई आरम्भ हुई।

सीरियाई तथा बेबिलोनी सभ्यताओं के विघटन के साथ ही साथ जो सार्वभौम समाज का विनाश भी मिल गया जिसका असर नहीं जान पड़ता था जितना ही अधिक उसका विस्तार सामान्य भाषा पर होता था। इस अस्त-व्यस्त समय के टूटे घराने पर एरामी भाषा सन्तान की भाँति फैली। यद्यपि लैटिन और ग्रीक के समान इस अपने सार्वभौम विजेताओं का संरक्षण प्राप्त नहीं हुआ। यह एरामी भाषा अपने समय में यद्यपि अच्छी तरह प्रचलित था किन्तु वर्णमाला तथा लिपि की अपेक्षा कम चली और दोनों में चली। इसका एक रूप भारत तक पहुँचा। बौद्ध सम्राट अशोक द्वारा इसका प्रयोग अपने प्राकृत बौद्ध अभिलेखों के प्रचार में दो में इस लिपि का प्रयोग किया गया था। उस लिपि का दूसरा रूप सोगडियन कहा जाता है। यह धीरे धीरे उत्तर-पूरब की ओर जैक्सर्टीज से आमूर की ओर बढ़ी। १५९९ ई० तक यह मांचू लोगों की वर्णमाला बनी। एरामी वर्णमाला का तीसरा रूप अरबी भाषा की लिपि बनी।

पश्चिमी ईसाई साम्राज्य में स्थापित 'मध्ययुग' में विकसित उत्तरी इटली पर विचार ध्यान देते हुए यदि हम नगर राज्यों की अपरिपक्व व्यवस्था की ओर पुनः मुड़ें तो हम इटली की टसकन बोली को अपनी प्रतिद्वन्द्वी बोलियों पर वरीयता प्राप्त करते देखेंगे जब टसकन बोली ने अपनी प्राचीन क्षेत्र की प्रतिद्वन्द्वी बोलियों को अन्तर्भुक्त कर लिया था। उसी समय यह बोली भूमध्यसागर के सभी तटों पर वनिस तथा जेनेवा के व्यापारियों तथा साम्राज्य निर्माताओं द्वारा प्रचलित हुई। इटली की टसकन बोली के सारे भूमध्य सागर के प्रदेशों में चलने के कारण यह इटली के नगर राज्यों की स्वतन्त्रता के बाद तक भी जीवित रही। सोलहवीं शती में इटालियाई भाषा उसमानिया नौ-सेना की भाषा रही जो इटालियाइयों को पूर्वी भूमध्यसागर से भगा रही थी। पुनः १९ वीं शती में यही इटालियाई भाषा हैप्सबुग नौ-सेना की भाषा हुई जिससे राजा सन् १८१४ से १८५९ तक इटली की राष्ट्रीय आशाओं को निष्फल करने में सफल रहे। लेवांट की (भूमध्यसागर का पूर्वी भाग) यह सामान्य भाषा जिसका इटालियाई आधार विभिन्न विदेशी भाषा की वृद्धियों के भार से करीब-करीब दब गया था भाषा के वर्ग का ऐसा प्रशंसनीय उदाहरण है, उसका ऐतिहासिक नाम वर्ग के नाम को व्यक्त करता है।

बाद में किसी प्रकार यह विकृत टसकन भाषा लेवांट के अनुकूल क्षेत्र से भी विकृत फ्रांसीसी भाषा द्वारा हटायी गयी। फ्रांसीसी भाषा का भाग्य इस कारण उदय हुआ कि इटालियाई, जर्मन और फ्लेमिश नगर राज्यों की व्यवस्था के पतन के संकटकाल में फ्रांस ने इन महाशक्तियों पर विजय प्राप्त की जो विनाशोन्मुख केन्द्र पर शासन करने के लिए परिधि पर अपना विस्तार कर रहे थे। इन नगर राज्यों की व्यवस्था उन समाजों के उस विघटन के इतिहास की एक घटना थी,

जो १४ वी शती के अन्त से आरम्भ हुई थी और १८वी शती के अन्त तक चलती रही । १४ वें लुई के युग के बाद से फ्रासीसी संस्कृति ने आकर्षण उत्पन्न किया जिसके साथ ही फ्रासीसी सेना का भी विकास हुआ । और जब नपोलियन ने बूर्बोन पूर्वजो की आकाक्षा को सभी नगर-राज्यो के टुकडा को फ्रासीसी डिजाइन के अनुसार मिलाकर पूरा किया, जो टुकडे राष्ट्र के द्वार पर, उत्तरी महासागर से लेकर बाल्टिक सागर तक यूरोप में बिखरे हुए थे आ गये । उस समय नपोलियन का साम्राज्य सैनिक प्रणाली के साथ साथ सास्कृतिक शक्ति भी बन गया ।

यह वास्तव में फ्रास का सास्कृतिक मिशन था, जिसने नपोल्यिन के साम्राज्य का विनाश किया था । क्योकि जिन विचारा का उसने प्रसार किया (रोग के अर्थ में) वह आधुनिक पश्चिमी सस्कृति की अभिव्यक्ति थी, जिसका अभी विकास हो रहा था । नैपालियन का उद्देश्य पश्चिमी ईसाई राज्य के बीच नगर-राज्यो की व्यवस्था के समान उप समाज के लिए उप सार्वभौम राज्य बनाना था, किन्तु सकटकाल से बहुत दिनो तक पीडित समाज के लिए शान्ति प्रदान करना सार्वभौम राज्य का कार्य है। सार्वभौम राज गत्यात्मक तथा क्रान्तिकारी विचारो से प्रेरित हो विरोध मूलक बातें है, जसे तुरही पर लोरी गाना । 'फ्रासीसी क्रान्ति के विचार' इटाल्यिनो, फ्लेमिग, राइन प्रदेश निवासी, जर्मन, और हसिआटको[1] को शान्त करने या इसलिए कि फ्रासीसी साम्राज्य निर्माताओ के बोझ को बरदाश्त कर लें जिन्होने इन विचारा को प्रवाहित किया था नही चलाया गया था । इसके विपरीत नैपोलियन के फ्रास की क्रान्ति ने इन देशा की गतिरुद्ध जनता को एक उत्तेजक धक्का दिया, जिससे उनकी जडता भागी तथा जाग्रत हाने और फ्रासीसी साम्राज्य नष्ट करन की उन्हें प्रेरणा दी । आधुनिक पश्चिमी ससार में नव निर्मित राष्ट्रो को उचित स्थान दिलाने का यह पहला कदम था । इस प्रकार नपोलियन के साम्राज्य के अन्दर अपनी निश्चित विफलता के प्रोमीथियन[2] बीज मौजूद थे, क्योकि वह ऐसे पतनोन्मुखी ससार में सार्वभौम राज्य की सेवा करना चाहता था । जब कि उसका मध्याह्नकाल फ्लारेस और वेनिस तथा ब्रूजेज और ल्यूबेक के वैभव के साथ बीत चुका था ।

अज्ञात रूप से नैपाल्यिनी साम्राज्य ने यह किया कि माध्यमिक नौ सेना के टूटे फूटे बिखरे जहाजा का पश्चिमी जीवन की धारा में खीच लाया और साथ उसके बेचैन नाविका को उनके जहाजा को समुद्र में चलने योग्य बनाने की प्रेरणा दी । फ्रासीसिया का यह वास्तविक कार्य इस विषय में अल्पकालीन और व्यर्थ हो जाता यदि नपोलियन दूसरे राष्ट्र राज्या को जसे ब्रिटेन, रूस, स्पेन—जो नगर राज्यो की व्यवस्था से दूर थे, और जो सचमुच उसका कार्यक्षेत्र था, वरी न भी बनाता । फिर भी आज के इस महान् समाज में दो सौ वर्ष पुराने ढग की एक विरासत

१ यह सघ जिसमें उत्तरी यूरोप के कई नगर शामिल थे । यह सघ व्यापार के लिए बना था । —अनुवादक

२ प्रोमीथ्यूस का विशेषण । यूनानी पुराण में कथा है कि प्रोमीथ्यूस स्वर्ग में चला गया और वहाँ से सूर्य से अग्नि चुरा लाया कि मनुष्यो को जीवन दान दे । उसे यह दण्ड दिया गया कि काकेशस पहाड पर बाँध दिया गया । एक गिद्ध आकर रोज उसके कलेजे को खाता था । —अनुवादक

शासन, पहले की अपेक्षा अरबी भाषा की प्रगति के लिए अधिक सुविधाएँ है। यूरोपीय उपनिवेशी शासन से अरबी का सबसे बड़ा लाभ यह हुआ कि मिली जुली भाषा को सरकारी प्रोत्साहन मिला, क्योंकि उन्हें शासन के लिए इसकी आवश्यकता थी। ये संकर भाषाएँ अरबी के साथ साथ विभिन्न प्रदेशो में धीरे धीरे प्रवेश कर रही थी। ऊपरी नाइगर में, फ्रेंच साम्राज्य में, निचली नाइगर में, ब्रिटिश साम्राज्य में और जांजिबार की पूर्वी अफ्रीकी पृष्ठभूमि में क्रमश फुलानी, हाउसा तथा स्वाहिली का विकास होता रहा है। ये भाषाएँ मिश्रित ह जिनका मूल अफ्रीकी है और अरबी मिलावट है तथा इन्हें अरबी लिपि में लिपिबद्ध किया गया है।

(द) धर्म में सहतिवाद

धर्म में सहतिवाद या धार्मिक कृत्या, उपासना पद्धतिया और विश्वासा का मिलन आन्तरिक अ-सामजस्य की बाहरी अभिव्यक्ति है। और यह सामाजिक विघटन के काल में आरम्भ होता है। यह परिस्थिति सामाजिक विघटन का लक्षण कुछ विश्वास के साथ समझी जा सकती है, क्योंकि सामाजिक विकास के समय सभ्यताओ के इतिहास में धार्मिक सहति के उदाहरणो के जो आभास मिलते ह वे भ्रामक सिद्ध होते ह। क्योंकि जब हम अनेक नगर राज्या की स्थानीय पौराणिक कथाओ को एक सब हेलेनी व्यवस्था में हेसियाद तथा और प्राचीन कविया द्वारा, एक साथ सम्मिलित करते और एकरूपता देते देखत ह तब केवल हमें नामा का इन्द्रजाल मिलता है। विभिन्न धार्मिक आवेगा, विभिन्न धार्मिक कृत्यो का विलयन तदनुसार नहा मिलता। और जब हम लैटिन देवताओ को ओलिम्पियाई देवताओ के साथ समता करत दखते ह जसे ज्युपिटर का जीयूस के साथ, और जूना का हीरा के साथ तब हम यह देखते ह कि वास्तव में आदिम लटिन जीववाद का हटा कर उनके स्थान पर यूनानी, मानव दव कुल को स्थापित किया जा रहा है।

देवताओ के नाम में एक दूसरे ढग की समता भी है, जिसमें विघटन के काल की शाब्दिक समता है जिससे सामजस्य की भावना भी प्रकट होती है, किन्तु परीक्षा करने पर वे वास्तविक धार्मिक परिस्थितियाँ नही ह केवल राजनीतिक आवरण में धार्मिक है। विभिन्न स्थानीय देवताओ के नामा में इस प्रकार की समता उस समय लायी जाती है जब विघटनोन्मुख समाज में स्थानीय राज्यो को युद्ध में पराजित कर राजनीतिक धरातल पर जबरदस्ती मिलाया जाता है, जो विकास काल में पहले समाज से विभाजित हो गये थे। उदाहरण के लिए जब सुमेरी इतिहास के अन्तिम अध्याया में निप्पर के स्वामी (बेल) एनलील को बैबिलोन के मारडूक से मिला दिया गया था और जब बैबिलोन के मारडूक—बेल कुछ समय के लिए खारबे के नाम से अन्तर्धान हो गये, इस प्रकार देवताओ का एकीकरण विशुद्ध राजनीतिक था। पहला परिवर्तन उस समय हुआ जब बबिलानी वंश द्वारा सुमेरी सार्वभौम राज्य बना, और दूसरा जब कस्साइट सेना नायको ने सार्वभौम राज्य पर विजय पायी।

विभिन्न स्थानीय राज्या के सम्मिलित हो जाने के कारण अथवा ऐसे साम्राज्य में राजनीतिक अधिकार एक सेना सरदार से दूसरे सेना-सरदार के पास चले जाने के कारण, समाज का विघटन हुआ और इस विघटन के परिणामस्वरूप स्थानीय देवताओ की तद्रूपता स्थापित हुई। बात यह थी कि एक ही शक्तिशाली अल्पसंख्या के वर्गों के ये प्राचीन देवता थे और इस कारण इनमें सादृश्य

था । इसलिए राजनीतिक धारणा से देवताओ का सम्मिलन धार्मिक प्रवृत्ति तथा भावना के के प्रतिकूल नही था । ऐसी धार्मिक सहृति के उदाहरण खोजना जिनकी गहराई राजनीतिक धारणा के सम्मिलन से अधिक थी और जो धार्मिक आचार तथा विश्वास का अधिक स्पर्श करते थे, हमें अपना ध्यान, उस धर्म से जो प्राचीन गुप्तमय दर्शन से शक्तिशाली अल्पसंख्या को विरासत में मिलता है, दूसरी ओर मोडना चाहिए । यह दर्शन सकट-काल की चुनौती का परिणाम होता है और हमें इसपर ध्यान देना चाहिए कि दर्शन की प्रतिद्वद्वी शालियाँ आपस में ही एक दूसरे से टकराती और मिलती नही, आन्तरिक सर्वहारा द्वारा विकसित दार्शनिक शालिया से भी टकराती है और उनमें सम्मिलित होती है । चूँकि ये ऊँची श्रेणी के धर्मदर्शन से टकराने के साथ-साथ आपस में भी सघर्ष करते है। पहले इस पर विचार करना सुविधाजनक होगा कि उनके अलग सामाजिक क्षेत्रों में ऊँचे धर्मों में आपस में क्या सम्बन्ध है और दर्शनों में आपस में क्या सम्बन्ध है । और तब हम उस गत्यात्मक आध्यात्मिक परिणाम पर विचार करेंगे जो धर्म तथा दर्शन का आपस में सघर्ष होने का कारण होता है ।

हेलेनी समाज के विघटन में पोसिडोनियस की पीढी (लगभग १३५–५१ ई० पू०) से एक युग का आरम्भ होता है, जिसमें दर्शनो की अनेक विचारधाराएं जो अभी तक आपस में तीव्रता से लड रही थी, सब, एपिक्युरियनो को छोडकर उन बातो पर जोर देने लगी, जिनकी उनमें समता थी और उन्हें छोड दिया जिनमें भेद था । और रोमन साम्राज्य की पहली तथा दूसरी शती में एक ऐसा समय आया, जब एपिक्युरियनो को छोडकर हेलेनी संसार के सभी दार्शनिक, अपने को चाहे जिस नाम से पुकारते हो एक सब मत दर्शन के सिद्धान्तो का मानने लगे । इसी युग में चीनी समाज के विघटन के इतिहास में ऐसे ही दार्शनिक असामजस्य की ओर झुकाव की प्रवृत्ति दिखाई देती है । ईसा के पूर्व दूसरी शती मे जो हैन के साम्राज्य की पहली शती थी, टाओवाद में भी सर्वमतवाद पाया जाता है । सम्राट् का राजदरबार भी इसे मानता था और कनफूशियस-वाद भी जो बाद को चीन का राजधर्म हुआ ।

प्रतिद्वन्द्वी दर्शनो का यह सहृतिवाद प्रतिद्वन्द्वी उच्च धर्मों में भी पाया जाता है । उदाहरण के लिए *सीरियाई ससार में सोलोमन की पीढी से आगे* इसरायली यहोवा की पूजा मे पडोसी सीरियाई समुदायो के स्थानीय बआलिम की पूजा मे सामजस्य की प्रवृत्ति हमें मिलती है । यह समय महत्त्व का है, क्योकि सोलोमन की मृत्यु से सीरियाई समाज का पतन आरम्भ होता है । निश्चय ही इसरायली धार्मिक इतिहास में विशेष महत्त्व की यह बात है कि उस युग मे ईश दूता को असामजस्य की भावनाओ से लडने में विशेष सफलता प्राप्त हुई और उन्होने इसरायली धार्मिक विकास को सहृतिवाद की सरल राह से हटाकर नये और कठिन मार्ग की ओर मोडा जो इसराय लियो की विशेषता थी । फिर भी जब हम सीरियाई आपसी धार्मिक प्रभाव के हिसाब में खर्च की ओर न देखकर आमदनी की ओर देखते है तब हम स्मरण करेंगे कि सीरियाई सकटकाल में पश्चिमी ईरान के लोगो की धार्मिक भावना पर यहोवा की उपासना का प्रभाव पडा होगा, क्योंकि इसी पश्चिमी ईरान में असीरियाई सत्यवादियो ने इसरायली निर्वासितो को ले जाकर बठा दिया था । जो भी हो यह निश्चित सा है कि अकेमिनियाई *साम्राज्य के समय और उसके बाद* भी यहूदी धार्मिक भावनाओ पर ईरानी धर्म का बलशाली प्रतिघात हुआ था । ईसा के पूर्व दूसरी शती तक यहूदी तथा जरथुस्त्री धर्म आपस में इतने मिल घुल गये थे कि आधुनिक पश्चिमी

इ] तिहासकारों के लिए इन दोनों सरिताओं से मिलकर जो नदी प्रवाहित हुई उसमें से यह निकालना बहुत कठिन हो गया कि किसकी कितनी देन है।

यही भारतीय संसार के आंतरिक सर्वहारा के उत्कृष्ट धर्मों के विकास का भी हाल है। ऐसा मिलन हो गया है कि केवल नाम का ही समीकरण नहीं है, जैसे कृष्ण की उपासना में और विष्णु की उपासना में।

विघटन के समय धर्म धर्म में और दर्शन दर्शन की दीवार में इस प्रकार के विच्छेद के कारण दर्शनों और धर्मों में एक-दूसरे से मिलने की राह बन जाती है और इस धर्म दर्शन की संहति में, हम देखेंगे कि आकर्षण दोनों ओर से होता है और दोनों ओर से मिलने की गति होती है। जिस प्रकार हमने देखा कि सार्वभौम राज्य की सैनिक सीमा पर सम्राट् के गैरिसन के सैनिक तथा बर्बर सेना सरदारों के सिपाही अपने सामाजिक जीवन के ढंग में एक दूसरे के निकट आते हैं और अंत में अन्तर मिट जाता है, उसी प्रकार हम देखते हैं कि सार्वभौम राज्य के अंदर दार्शनिक विचारधारा के अनुगामी और लोकधर्म के अनुयायी आकर एक दूसरे से मिलते हैं। यह समानता बहुत ठीक है, क्योंकि जैसे उसमें, उसी प्रकार इसमें भी, यद्यपि सर्वहारा के प्रतिनिधि शक्तिशाली अल्पसंख्या से मिलने के लिए थोड़ी दूर बढ़ते हैं, शक्तिशाली अल्पसंख्या अपने ढंग के सर्वहाराकरण की राह में इतना आगे बढ़ जाती है कि अंत में सर्वहारा के रूप में ही मिलन होता है। दोनों ओर की मिलन की इस चेष्टा का अध्ययन करने के लिए पहले सर्वहारा की छोटी आध्यात्मिक यात्रा का सर्वेक्षण करना सुविधाजनक होगा और उसके बाद शक्तिशाली अल्पसंख्या की लम्बी यात्रा का अध्ययन हम करेंगे।

जब आंतरिक सर्वहारा के उत्कृष्ट धर्म शक्तिशाली अल्पसंख्या के आमने सामने आ जाते हैं, तब कभी कभी वे पहले ही कदम पर ठहर जाते हैं और शक्तिशाली अल्पसंख्या की कला की नकल करते हैं जिससे इस अल्पसंख्या का ध्यान उधर आकृष्ट होता है। जब हेलेनी संसार का विघटन होने लगा ईसाई धर्म के सब असफल प्रतिद्वंद्वियों ने अपने मिशनरी परिश्रम को सफल बनाने के लिए सारे चाक्षुष ईश्वरीय तत्त्वों को हेलेनी आँखों को प्रसन्न करने के लिए, हेलेनी रूप में बनाने लगे। किन्तु इसके आगे वे नहीं बढ़े कि अंदर और बाहर से समाज का हेलेनीकरण करें। ईसाई धर्म ही था जिसने अपने को हेलेनी दर्शन के माध्यम से अभिव्यक्त किया।

ईसाई धर्म का जिसका मूल सीरियाई था, बौद्धिक हेलेनीकरण होने का आभास पहले ही मिल गया था, क्योंकि नयी बाइबिल की भाषा एटिक बनायी गयी, आरामेइक नहीं, क्योंकि इस भाषा की शब्दावली में ही अनेक दार्शनिक तात्पर्य निहित थे।

'सिनाप्टिक सुसमाचारों में (मथ्यू मार्क तथा ल्यूक के सुसमाचार, गोसपेल) ईसू को ईश्वर का पुत्र बताया गया है और यह विश्वास चौथे सुसमाचार में भी लिया गया है और अधिक दृढ़ किया गया है। किन्तु चौथे सुसमाचार के आमुख में यह विचार भी व्यक्त किया गया है कि संसार का त्राता ईश्वर का सर्जनात्मक वाक्य (लागोस) भी है। स्पष्ट नहीं फिर भी संकेत रूप से बता दिया गया है कि ईश्वर का पुत्र और ईश्वर का वाक्य एक ही है पुत्र को ईश्वर का वाक्य कहकर ईश्वर के सर्जनात्मक उद्देश्य का एक ही बताया गया है और वाक्य का ईश्वर के पुत्र से

ह कि जिन कथाओ को अफलातून ने पुरानी देवताओ की कहानी के स्थान पर रखने की चेष्टा की वे ईसाई धर्म की विरोधी नही, अपूर्ण था । इधर उधर के रावेता से पता चलता है कि अफलातून को स्वय होने वाले ईश्वरीय अवतार का धुंधला भान था और उसके दृष्टात भविष्य-वाणियाँ थी । सुकरात ने 'अपालाजी' में एथीनियनो का चेतावनी दी थी कि आत्मा के दूसरे साक्षी उसकी मृत्यु के बाद आ सकते हैं जो उसकी मृत्यु का बदला ले सकते ह । दूसरे स्थल पर उसने स्वीकार किया है कि मने बहुत तक किये ह और अनेक दार्शनिकता की बात कही है, परन्तु पूरा सत्य तब तक नही जाना जा सकता, जब तक मनुष्य के लिए उसकी अभिव्यक्ति ईश्वर की कृपा से न हो ।"[1]

दर्शन के धार्मिक रूप में परिवतन होने का ऐतिहासिक वर्णन हेलेनी ससार में इतना अधिक मिलता है कि उसके बाद की परिस्थितियो की प्रक्रिया को हम भलीभाँति परख सकते ह ।

जिस प्रकार अफलातून के सुकरात ने ध्रम के बेंडीस के धर्म के प्रति अपना शान्त बौद्धिक कौतूहल दिखाया है उसी प्रकार ऐतिहासिक सुकरात के समकालीन हरोडोटस ने धर्म के तुलनात्मक अध्ययन में प्रासगिक लेखो मे बताया है । उसने इन बातो को वैज्ञानिक ढग से देखा है । जो भी हो जब अकेमीनियाई साम्राज्य को सिकन्दर ने पराजित किया और उत्तराधिकारी राज्यो के हेलेनी शासको को मिली-जुली प्रजा की धार्मिक आवश्यकताओ के लिए कुछ उपासना की विधि खोजनी पडी, तब धार्मिक समस्याओ की व्यावहारिक आवश्यकता शक्तिशाली अल्प सख्या के सामने आयी । उसी समय स्टोइक तथा एपिक्युरियन दर्शनो के संस्थापक और प्रचारक व्यक्तिगत रूप से उन लोगो की आध्यात्मिक भूख के लिए भोजन की व्यवस्था कर रहे थे जो आध्यात्मिक जगल में खोये भटक रहे थे । किन्तु यदि हम इस युग की हेलेनी दार्शनिक प्रवृत्ति का माप अफलातून की दार्शनिक विचारधारा को मानें तो हम देखेंगे कि इसके शिष्य सिकन्दर की मृत्यु के बाद दो सौ सालो में सशयवाद की ओर आगे बढते चले जा रहे थे ।

धारा का प्रवाह निश्चयात्मक ढग से उस समय मुडा, जब सीरियाई यूनानी दार्शनिक अपामिया के पासिडानियस (लगभग १३५–५१ ई० पू०) ने लोकप्रिय धार्मिक विश्वासो के स्टोइकवाद का द्वार खोल दिया । दो सौ वर्षों के कुछ पहले ही स्टाइक विचारधारा का नेतृत्व गेल्यिो के भाई सेनेका के हाथो में चला गया जो सन्त पाल का समकालीन था । सेनेका की दार्शनिक पुस्तको में ऐसे स्थल ह जो ऐसे विचित्र ढग से सन्त पाल के पत्रो का भाव प्रकट करते ह कि कुछ छोटे ढग के आलोचक यह कल्पना करते ह कि रोमन दार्शनिक और ईसाई मिशनरी के बीच पत्राचार होता रहा । ऐसी कल्पनाएँ बेकार ह और असम्भव भी क्योकि यह कोई आश्चर्य की बात नही है कि एक ही युग में जब एक ही सामाजिक युग की अभिव्यक्ति हो तब यदि दो आध्यात्मिक सगीत हो तो समान स्वर निकले ।

जब पहले अध्याय में पतनोन्मुख सभ्यता की सीमा के सरक्षको और उसके आगे की बर्बर सेनाओ के सम्बन्ध में हमने अध्ययन किया था तब हमने देखा था कि वे इतने निकट पहुँच गये कि पहचानना कठिन था और दूसरे अध्याय में वे मिल जाते ह तथा बर्बरता के स्तर पर आ

१ पी० ई० मोर क्राइस्ट द वर्ड, पृ० ६–७ ।

जाते हैं। इसी के समान वह घटना भी है जब शक्तिशाली अल्पसख्या के दार्शनिका और सवहारा धम के उपासका का समागम हाता है, ऊँचे धरातल पर सेनेका और सन्त पाल एक दूसरे के निकट पहुँचते ह। यहाँ पहला अध्याय समाप्त होता है। दूसरे अध्याय में दशन कम ज्ञानवधक धार्मिक प्रभावा में आ जाता है, और धार्मिक भक्ति अधविश्वास में बदल जाती है।

शक्तिशाली अल्पसख्या के दशन का यह दुखदायी अत हाता है। यह उस समय भी होता है जब दशन अपनी सारी शक्ति लगाकर सवहारा की उवर आध्यात्मिक भूमि पर पहुँचने की जी जान से चेष्टा करते ह, जहाँ उच्च धम का बीजारोपण हो सकता है। इन दशना को इससे कोई लाभ नही होता कि अत में यह भी सुमना की भाँति खिल गये क्याकि विलम्ब से और अनिच्छा से खिले ये सुमन अपने से ही प्रतिशोध लेते ह और बढकर पतित और अनुपयोगी झाड झखाड बन जाते ह। सभ्यता के विघटन के अतिम अक (ऐक्ट) में दशना की मत्यु हो जाती है और उच्च श्रेणी के धम जीवित रहते हैं और भविष्य के दावदार होते हैं। ईसाई धम का अस्तित्व बना रहा और नव-अफलातूनी (निओ-प्लेटोनिक) दशन को उसने निष्कासित कर दिया क्याकि बुद्धिवाद को हटाकर इसमें जीवन के लिए कोई सजीवनी नही रह गयी। वास्तविकता यह है कि जब दशन और धम का सम्मिलन होता है धम का उन्नयन होता है और दशन का अवनयन। हम इस अध्ययन से, इस प्रश्न पर विचार किये बिना नहीं हट सकते कि जब ये दोना मिलते ह तब क्या कारण है कि हम पहले से ही समय लेते हैं कि इसका परिणाम दशन की पराजय होगी।

तब वे कौन-सी दुबलताएँ ह जा दशन की पराजय करा देती है जब वह धम का प्रतियोगी बनकर अखाडे में प्रवेश करता है? सबसे घातक और मूल दुबलता है, जिसके कारण अय दुबलताएँ भी आ जाती ह, आध्यात्मिक शक्ति का अभाव। इस सजीवता के अभाव के कारण दशन दो ढग से लँगडा हो जाता है। इनके कारण जनता का आकपण कम हा जाता है और जिसे उसका आकपण भी होता है उसे यह उत्साह नही हाता कि उसके प्रति मिशनरी काय करे। सच बात यह है कि दशन कुछ बौद्धिक श्रेष्ठ लागा के प्रति जो 'योग्य किन्तु अल्प' हाते ह अनुराग दिखाता है, उस बौद्धिक कवि के समान जिसके पाठक कम होते ह और इस कारण का वह अपनी रचना की श्रेष्ठता का प्रमाण समझता है। सेनेका की पहली पीढी में होरेस ने अपने 'रामन गान' के दार्शनिक देशभक्तिपूण अभ्यथना को इस प्रकार आरम्भ करन म कोई असगति नही समझा—

अग्रगामिया कलुपित समूहो!
चुप रहो! कोई अपवित्र मुख
गीत के पवित्र सस्कार को अशान्त मत करो,
जब म, नवा देविया का श्रेष्ठ पुरोहित,
केवल युवक और युवतियो के लिए
नवीन और ऊँचे गीत लिख रहा हूँ।[1]

ईसू के दृष्टान्त से यह बहुत दूर की आवाज है जिसने कहा था—

१ होरेस खण्ड, ३, गीत १,२, १-४—सर स्टेफेन डि वियर का अनुवाद।

'सडको पर और झाडिया में जाओ और उनको यहाँ आने के लिए विवश करो, जिससे मेरा घर भर जाये।'

इस प्रकार ऊँची से-ऊँची अवस्था में दशन धम की शक्ति पाने की कभी आकांक्षा नही कर सकता। जिस धम की प्रेरणा ने सेनेका और एपिक्टिस की पीढी में हेलेनी बौद्धिक मूर्तिया में कुछ समय के लिए सजीवता का सचार किया था, वह मारकस आरीलियस की पीढ़ी में मिथ्या धार्मिक आडम्बर में परिवर्तित हो गया और दार्शनिक परम्परा के उत्तराधिकारी दो कुर्सियो के बीच गिर पडे। उन्होने बौद्धिक आह्वान का तिरस्कार कर दिया हृदय तक पहुँचने की राह नही निकाली। वे ज्ञानी न होकर साधु नही हुए, सनकी हो गये। सम्राट जूलियन अपने दार्शनिक आदश के लिए सुकरात को छोडकर डायोजिनीज की ओर मुडा। वही पौराणिक डायोजिनीज जिससे—ईसा मसीह से नही—सत सीमिओन एटालाइटस तथा उसके सह-तपस्वियो की ईसाई तपस्या का आविर्भाव हुआ है। वास्तव में इस दुख-सुख पूण अन्तिम अक में, अफलातून और जीनो के शिष्यो ने अपने स्वामियो की अपूणता को स्वीकार किया और उसका उदाहरण स्वय आन्तरिक सर्वहारा का अनुकरण करके उपस्थित किया। यह और कुछ नहीं था, वास्तव में उस जनसाधारण की सच्ची चाटुकारिता थी, जिस जनता को होरेस ने अपने श्रोताओ से अलग कर दिया था। अन्तिम नव-अफलातूनवादी, आयमब्लिकस और प्रोक्लस उतने दार्शनिक नही ह जितन एक काल्पनिक अस्तित्वविहीन धम के पुरोहित। जूलियन जिसका सस्कार और उपासना के प्रति बहुत उत्साह था, इनकी योजना का कायवाहक था। उसकी मत्यु के समाचार के बाद उसके राज्य-सहायता प्राप्त धार्मिक सस्थान का तुरन्त समाप्त हो जाना उस विवेचन की सत्यता को प्रमाणित करता है जो आधुनिक मनोविज्ञान के प्रतिष्ठापक ने व्यक्त किया है

'बड-बड प्रवतन ऊपर से नही आते वे सदा निचले वग से आते ह (उनसे) जो देश के शान्त और तिरस्कृत लाग ह—जिन पर शास्त्रीय पक्षपात का प्रभाव नही पडा है, जो प्रतिष्ठित व्यक्तिया पर पडा करता है।[1]

(च) शासक धम का निणय करता ह[2]

ऊपर क अध्याय के अन्त में हमन देखा कि सम्राट जूलियन अपनी प्रजा को उस मिथ्या धम को मानन के लिए विवश न कर सका जिसका वह दार्शनिक होन के कारण अनुगामी था। इससे यह साधारण प्रश्न उठता है कि क्या अधिक अनुकूल परिस्थिति में शक्तिशाली अल्पसख्या अपनी आध्यात्मिक दुबलता की कमी को पूरा करन के लिए भौतिक शक्ति का प्रयोग कर सकती है और राजनीतिक दबाव स किसी दशन या धम को अपनी प्रजा पर लाद सकती है और जो

१ सी० जी० जुग—माडन मन इन सच आव ए सोल—पृ० २४३-४४।

२ यह वाक्य सन् १५५५ को आग्सबुग की सन्धि का सक्षेप है। उसमें निणय हुआ था कि प्रत्यक स्थानीय जमन राज्य के शासकों को अधिकार था कि वह चाहे रोमन कथालिक धम या लूथरी धम स्वीकार करे। और वह चाहे (शासक के) धम पर चलने को प्रजा को विवश कर सकता था। यह सन्धि पहली अनिर्णीत जमन धार्मिक लड़ाई के बाद हुई।

अवैधानिक होने पर भी प्रभावकारी हो सकती है। यद्यपि यह प्रश्न हमारे अध्ययन के मूल विषय के बाहर है, फिर भी आगे बढने के पहले इसका उत्तर ढूढने की हम चेष्टा करेंगे।

इस विषय का ऐतिहासिक प्रमाण यदि हम खोजेंगे तो हमें पता चलेगा कि साधारणत ऐसे प्रयत्न असफल हुए है, समय पाकर। यह निष्कर्ष प्रबुद्धता के सामाजिक सिद्धान्तो के विरुद्ध है, जो हेलेनी सकटकाल में प्रतिपादित हुई थी, क्योकि इस सिद्धान्त के अनुसार धार्मिक आचार जान-बूझकर ऊपर से नीचे की ओर लादे गये थे। ये न तो असाधारण बातें थी, न असम्भव। समाजों की सभ्यता की प्रक्रिया में धार्मिक सस्थाओ के आरम्भ का यही ढग था। रोम के धार्मिक जीवन के सम्बन्ध में यह सिद्धान्त लागू कर दिया गया है और पोलीबियस ने (लगभग २०६–१३१ ई० पू०) उसका इस प्रकार वर्णन किया है

'मेरी राय में रोमन सविधान जिन बातो में दूसरे सविधानो से उत्कृष्ट है वह इसका धर्म के प्रति निर्वाह है। मेरी राय में रोमनो ने अपनी सामाजिक व्यवस्था को उन चीजो से बाधा है जिससे सारा ससार घृणा करता है, मेरा अभिप्राय है अन्धविश्वास से। उन्होने अपने अन्ध-विश्वास को नाटक का रूप दिया है और उसे निजी तथा सार्वजनिक जीवन में प्रवेश कर दिया है, और इस कार्य में रोमन लोग उतनी दूर तक चले गये है जहाँ तक बुद्धि जा सकती है यह बात बहुत लोगो को विचित्र लगेगी। मेरी राय में रोमनो ने जनता को ध्यान में रखकर ऐसा किया है। यदि ऐसा सम्भव होता कि सब निर्वाचक विद्वान होते तो यह प्रवचना आवश्यक न होती कि वास्तव में जनता सदा अस्थिर रहती है गैर कानूनी आवेगो, अविवेकपूर्ण प्रवृत्ति तथा हिंसात्मक क्रोध से भरी रहती है इसलिए उन्हें नियन्त्रित रखने के लिए 'अज्ञात के भय' का अथवा ऐसे ही नाटक की स्थापना आवश्यक है। मैं समझता हूँ कि इसी कारण हमारे पूर्वजो ने जन-साधारण के बीच उन धार्मिक विश्वासो तथा तर्क की कल्पना को प्रस्तुत किया है जो अब परम्परा बन गये है, और मेरी यह भी धारणा है कि ऐसा करने में हमारे पूर्वज अटकल-पच्चू कार्य नही कर रहे थे, किन्तु सब समझ-बूझकर कर रहे थे। अधिक उचित होगा यदि हम अपने समकालीन लोगो पर यह आरोप लगायें कि जिस कार्य को करते हुए हम उन्हें देख रहे है धर्म को मिटाने में वे अनुत्तरदायित्व तथा बुद्धिहीनता से कार्य कर रहे है।'[1]

धर्म की उत्पत्ति के सिद्धान्त सत्य से उतनी ही दूर है जितना राज्यो की उत्पत्ति से सामाजिक अनुबन्ध। यदि हम प्रमाणो की परीक्षा करें तो हमें पता चलेगा कि राजनीतिक शक्ति आध्यात्मिक जीवन को प्रभावित करने में बिलकुल असमर्थ तो नही है किन्तु इस क्षेत्र में उसके कार्य करने की क्षमता विशेष परिस्थितियो के मिल जाने के कारण सम्भव होती है और तब उसका क्षेत्र सीमित होता है। सफलता अपवाद के रूप में होती है, असफलता ही अधिक होती है।

पहले हम अपवादो को लें। राजनीतिक अधिपति किसी पथ को सस्थापित करने में कभी-कभी सफल हो जाते है जब वह पथ वास्तव में किसी धार्मिक भावना की अभिव्यक्ति नही होता बल्कि धर्म की आड में राजनीतिक मनोभाव होता है। उदाहरण के लिए कोई ऐसा मिथ्या धार्मिक कर्मकाण्ड जो उस समाज में राजनीतिक एकता की पिपासा को शान्त करता है,

१ पोलीबियस हिस्ट्री, खण्ड ६, अध्याय ५६।

जो (समाज) सकट-काल का कड़आ प्याला आकण्ठ पी चुका है। ऐसी परिस्थिति म जिस शासक ने अपनी प्रजा का हृदय उनका त्राता बनकर जीत लिया है पथ की सस्थापना करके अपने को तथा अपने वश को पूजा का विषय बना सकता है।

इस प्रकार की महान् शक्ति का क्लासिकी उदाहरण रोमन सम्राटो को देवता की भांति मानना है। सीजर की पूजा शान्ति के समय का धम था, किन्तु वास्तविक धम का उल्टा था, जो 'सामयिक विपत्ति के समय सहायक' होता है। सीजर की दविकता, दूसरी तथा तीसरी शती ई० पू० के बाद जब रोमन साम्राज्य का पहली बार पतन हुआ, ठहर न सकी। और इस जुटाव के सब योद्धा सरदार इधर उधर बिखरने लगे कि उनका अपना प्राप्त साम्राज्यवादी प्रतिभा के समथन में कोई अलौकिक समथन मिल जाता। आरीलियन और वालरटियस क्लोरियस एक अमूत और सावभौम नेता सौल इनविक्टस के झण्डे के नीचे आये और एक पीढ़ी के बाद कास्टेंटाइन महान् (३०६–३७ ई०) ने अपनी भक्ति उस आतरिक सर्वहारारूपी ईश्वर को अर्पित कर दी जो सौल या सीजर दोनो से शक्तिमान् था।

यदि हम हेलेनी से सुमेरी ससार की ओर दृष्टि डालें तो सीजरपूजा के समान ही व्यक्तित्व पूजा इसमें (सुमेरी राज्य में) देखेंगे। यह पूजा इस सावभौम राज्य के सस्थापक उर एनगूर ने नही चलायी थी, उसके उत्तराधिकारी डगी (लगभग २२८०–२२३३ ई० पू०) ने चलाया। किन्तु यह भी शांति के समय की युक्ति मात्र थी। जो भी हो, अमाराइट हमूरबी जिसका स्थान सुमेरी इतिहास में वही है जो रोमन साम्राज्य में कासटाइन का था, देवता बनकर राज्य नही करता था, अलौकिक देवता मारडुक बेल का दास बनकर राज्य करता था।

इसी प्रकार के सीजर-पूजा के चिह्न दूसरे सावभौम राज्य में भी पाये जाते हैं जैसे एडियाई, मिस्री या चीनी में, जो हमारे इस विचार का समथन करते हैं कि राजनीतिक शासकों द्वारा ये चलाये पथ जन्मजात दुबल होते हैं। उस समय भी जब ये पथ धम के आवरण में मूल रूप से राजनीतिक ही होते हैं और जब ये सावजनिक भावना के अनुकूल भी होते हैं तब भी इनमें तूफानो से बचने की शक्ति नही होती।

एक और वग होता है जिसमें राजनीतिक शासक कोई पथ चलाता है जो धार्मिक आवरण में राजनीतिक सस्था नही होती, सचमुच धार्मिक पथ होता है। इस क्षेत्र में भी हम दिखा सकते कि इस प्रयोग को कुछ सफलता मिली है उसमें धम को चलता हुआ होना चाहिए, कम से कम राजनीतिक शासक की प्रजा की अल्पसख्यक आत्मा में, और जब यह शत पूरी हो जाती है और सफलता मिलती है तब इसका जो मूल्य चुकाना पडता है वह बहुत अधिक होता है। क्योंकि जो धम राजनीतिक अधिकार के बल पर शासक द्वारा अपनी प्रजा के शरीर और आत्मा पर सफलतापूवक लादा जाता है वह उस थोडे से भाग पर तो चल जाता है, किंतु इसका मूल्य यह चुकाना पडता है कि वह सावभौम धम नही हो सकता।

उदाहरण के लिए ई० पू० दूसरी शती में जब मक्काबी लोग बलपूवक हेलेनीकरण के विरोध में यहूदी धम के सत्यवादी समथक होने के स्थान पर सेल्यूकस के उत्तराधिकारी एक राज्य के सस्थापक और शासक हो गये तब ये उत्पीडन का हिंसात्मक विरोध करने वाले, स्वय उत्पीडक हो गये और अहिंसावादी यहूदियो पर, जिन्हें उन्होने जीता था, जबरदस्ती जूडावाद लादने लगे। इस नीति ने विजय पायी और जूडावाद का क्षेत्र इडूमिया, अ-यहूदियो के गलिला,

और ट्रांसजारडोनियाई सीरिया तक विस्तृत हो गया। इतने पर भी शक्ति की विजय सकीण क्षेत्र में ही थी। क्योंकि यह समग्रिया की विशिष्टतावाद पर न तो विजय पा सकी न उन हेलेनी कृत नगर राज्य के नागरिक दल को चूर कर सकी जो मकाबी राज्य की दाता आर पहले थे, एव भूमध्यसागर के किनारे फिलिस्तीन और दूसरा डिकापोलिस में मरुस्थल के किनारे। वास्तव में शक्ति द्वारा यह विजय अधिक नहीं थी और यहूदी धम का सारा भविष्य इसके मूल्य में चुकाना पडा। यहूदी इतिहास की यह महान् विडम्बना है कि अलेक्जेंडर जनियस (१०२-७६ ई० पू०) ने जूडायाद के लिए जो यया दन विजय किया था, वहीं सौ साल के भीतर ही गैलीलिया के यहूदी देन्द्रत्व का जन्म हुआ जिसके सादन में पहले के यहूदी धम की सारी अनुभूतियों का तरीकरण हो गया और जबरदस्ती परिवर्तित किये हुए गैलीली अ यहूदी के इस उत्प्रानित वशज को उसके युग के यहूदी धम के जूडाई नेताओं ने तिरस्कृत कर दिया। इस प्रकार जूडायाद ने अपने प्राचीन का ही नहा ह्रास्यास्पद बनाया, भविष्य का भी नाश कर दिया।

अब हम यदि यूरोप के धार्मिक तत्त्वों की ओर ध्यान दें तो स्वभावतः हम यह जानना चाहेंगे कि मध्ययुग के ईसाई जगत् के स्थानीय उत्तराधिकारियों में कथालिक और प्रोटस्टेंट राज्यों की सीमाओं में कितनी कूटनीति का कमी है और कितनी सेना के बल से? इसमें सन्देह नहीं कि सोलहवीं और सत्रहवीं शती के धार्मिक सघर्ष में बाहरी सैनिक और राजनैतिक बातों पर बहुत महत्त्व नहीं देना चाहिए। क्योंकि दो चरम उदाहरणों पर विचार करने पर यह ज्ञात होता है कि कोई राजनीतिक शक्ति कालिक राज्यों को कैथालिक धमतन्त्र में या भूमध्यसागर के देशों को प्रोटेस्टेंट तन्त्र में नहीं रख सकती थी। उसी के साथ एक बीच का विवादास्पद क्षेत्र था जिसमें सैनिक शक्ति अवश्य ही प्रभावशाली थी—ये क्षेत्र है, जरमनी, निचले देश (लो कंट्रीज), फ्रास और इंग्लैंड। जरमनी में कि‍सका इस सूत्र का आविष्कार और प्रयोग हुआ था कि 'शासक धम का निणय करता है'। हमें इस बात को मानना होगा कि धर्म-सम्बन्धी मध्य यूरोप में राजाओं ने, अपनी शक्ति से सफलतापूर्वक अपनी प्रजाओं पर ईसाई धम का वह रूप, जिस पर उनका विश्वास था, जबरदस्ती लादा। हमें यह भी मानना पडेगा कि इस राजनीतिक सरक्षण के कारण और इस राज्य की अधीनता से पश्चिमी ईसाई धम के दोनों रूपों—कैथालिक तथा प्रोटेस्टेंट—को हानि हुई है।

पहला मूल्य यह चुकाना पडा कि जापान से कैथालिक धम के मिशन को हटाना पडा। कैथालिक ईसाई धम के बीज को जेसुइट मिशनरियों ने जो सोलहवीं शती में बोये थे उन्हें सत्रहवीं शती के मध्य में नये जापानी सार्वभौम राज्य के शासकों ने उखाड फेंका क्योंकि ये राजममन इस परिणाम पर पहुँचे थे कि कैथालिक धम के माध्यम से स्पेन का सम्राट साम्राज्य का विस्तार चाहता है। मिशनरियों के इस क्षेत्र का चला जाना उस हानि के सामने कुछ भी नहीं था जो 'शासक धम का निणय करता है' की नीति से अपने देश में आध्यात्मिक दरिद्रता उपस्थित हुई और पश्चिमी ईसाई धम को उससे हानि हुई। धम के युद्ध के युग में पश्चिमी ईसाई धम के सभी प्रतिद्वन्द्वी इस बात पर तत्पर थे कि अपने विचार के अनुसार धम चलाने का कोई सरल माग निकल आये और इसके लिए राजनीतिक शक्ति के प्रयोग पर वह तरह दे जाते थे, और कभी उसकी माँग भी करते थे। और इसके परिणामस्वरूप आत्मा में विश्वास की सारी जड उन्होंने सुखा दी, जिस विश्वास को जमाने की वे ही चेष्टा करते थे। सोलहवें लुई की बबरतापूण प्रणाली ने फ्रास

की आध्यात्मिक धरती से प्रोटेस्टेंट ईसाई धम को निष्कासित कर दिया और अनेक प्रकार के सशयवाद को जम दिया। नैंटीज़ के एडिक्ट के निरसन के नौ साल के बाद वाल्टेयर का जम हुआ। इसी प्रकार के सशयवाद की भावना प्युरिटन क्रांति के धार्मिक सैयवाद के कारण इग्लैंड में उत्पन्न हुई। एक नयी प्रवुद्धता की भावना उत्पन्न हुई जो उसी के समान थी। इस अध्ययन के इस अध्याय के आरम्भ में पोलीबियस के कथन में व्यक्त की गयी है। उस प्रकार के विचार के लोग हो गये जो धम का मजाक उडाते थे। यहाँ तक कि सन् १७२६ में बिशप बटलर को अपनी पुस्तक—'एनालोजी आव रिलिजन, नेचुरल एण्ड रिवील्ड, टु द कास्टिट्यूशन एण्ड कोस आव नेचर', की भूमिका में लिखना पडा—

मैं कह नही सकता कि यह कसे हुआ, किंतु ऐसा बहुत लोगो का निश्चित मत है कि ईसाई धम के सम्बंध में बहुत खोज करने की आवश्यकता नही है, यह पता चल गया है कि यह धम काल्पनिक है। और इसलिए वे मान लेते ह कि सब समझने वाले लोग इस बात पर सहमत हैं कि इसमें कुछ तथ्य नही है और यह केवल हँसी दिल्लगी और परिहास का विषय है। ऐसा जान पडता है कि यह इसका बदला है जो इस धम ने अब तक सासारिक आनंद को रोक रखा है।'

यह मनोवृत्ति जिसने बुझते हुए धार्मिक विश्वास के मूल्य पर धर्मा धता का विसक्रमण किया है सत्रहवी से बीसवी शती तक चलती आयी है और हमारे पश्चिमी महान् समाज में इस सीमा तक पहुच गयी है कि लोग उसके ठीक रूप को समझने लगे हैं। अर्थात् लोग समझने लगे ह कि यह केवल आध्यात्मिक स्वास्थ्य के लिए ही नहा विनाशकारी है, पश्चिमी समाज के भौतिक जीवन के लिए भी भयकारी है। यह उससे भी भयकर है जो राजनीतिक और आर्थिक रोग हमारे समाज में आ गये हैं जिनके बारे म नित्य हम लोगा का ध्यान आकृष्ट करते रहते ह और विज्ञापित करते रहते ह। यह आध्यात्मिक रोग इतना बढ गया है कि इसकी उपेक्षा नही की जा सकती। किन्तु रोग का निदान सरल है, औषधि बताना कठिन है। क्योकि धार्मिक विश्वास व्यापार की कोई स्टण्डड वस्तु नही है कि माँग होने पर तुरत बना दी जाय। ढाई सौ साल से धार्मिक विश्वास के क्रमश ह्रास से पश्चिम के हृदय में जा आध्यात्मिक शूयक उत्पन्न हो गया है उसे भरना कठिन है। हम अब भी धम को राजनीति का अनुचर मानते ह जो हमारे सोलहवी और सत्रहवी शती के पूवजा का अपराध था।

यदि हम पश्चिमी ईसाई धम के वतमान रूपो पर साधारण ढग से विचार करें और प्रत्येक की शक्ति का तुलनात्मक विवेचन करें तो हम देखगे कि शक्ति उसी के अनुसार घटती बढ़ती मिलगी कि किस धम का कितना राजनीतिक नियत्रण रहा है। निस्स देह पश्चिमी ईसाई धम का कथालिक रूप आज सबसे शक्तिशाली दीखता है। इसके हाने पर भी कि कुछ देशो में और कुछ काला में अपने देशा के अदर कथालिक राजाओ ने अपनी प्रजा पर अपने विचार के अनुसार धम लादा कथालिक धमतत्र का यह गुण कभी लोप नही हुआ कि वह एक महान् धार्मिक अधिकारी के नियत्रण में रहा। कथालिक तत्र के बाद शक्ति के हिसाब से हम प्रोटेस्टेंट धारा के स्वतत्र धम तत्रो को रखेंग जिहाने राजनीतिक शासना के बाहर अपने को निस्तार रखा है। और सबसे नाचे वे प्रोटेस्टेंट सस्थापित तत्र हैं जो किसी-न किसी सीमित राज्य के अधीन हैं। और अत में यदि हम विभिन्न धार्मिक विचारा और विश्वासा की शक्तियो की तुलना करें जो चर्च आव इग्लैंड तत्र में विस्तार से फैले हुए ह तो अग्रेजी धमतत्र में सबसे

शक्तिशाली रूप, ऐंग्लो-कैथोलिक शाखा है, जो १८७४ ई० के कानून के बाद, 'जनता को बहलाने के' लिए बनाया गया था, राजनीतिक विधान को तिरस्कारपूर्ण उदासीनता से देखता है।

इस कुत्सित तुलना की शिक्षा स्पष्ट है। आधुनिक युग में पश्चिमी ईसाई धर्मतन्त्र की विभिन्न शाखाओं की विभिन्न परिस्थितियों से हमारे इस कथन का समर्थन होता है कि धर्म को कोई लाभ नहीं होता बल्कि हानि होती है, यदि वह राजनीतिक सहायता की याचना करता है या अपने को राजनीतिक शक्ति को समर्पित कर देता है। इसका एक ही अपवाद है जिसका कारण हमें देखना पड़ेगा, इसके पहले कि इस नियम को हम उचित और व्यापक मान लें। वह है इस्लाम। क्योंकि सीरियाई समाज के विघटन को इसने सार्वभौम धर्मतन्त्र में परिवर्तित किया यद्यपि उसके पहले ही वह राजनीति में सम्मिलित हो गया था, और किसी दूसरे धर्म की अपेक्षा वह निश्चित रूप से राजनीति में सम्मिलित हो गया था और उसे राजनीति में उसके संस्थापक ने ही प्रविष्ट किया।

पैगम्बर मुहम्मद का सार्वजनिक जीवन निश्चय रूप से दो भागों में विभाजित होता है और दोनों एक दूसरे के विरोधी हैं। पहले भाग में वह शान्तिमय देवदूत के रूप में इल्हामी धर्म का प्रचार करते हैं, दूसरे अध्याय में राजनीतिक तथा सैनिक शक्ति का निर्माण करते हैं और इन शक्तियों का उसी प्रकार प्रयोग करते हैं, जो प्रयोग और लोगों के लिए विनाशकारी सिद्ध हुए। इस मदीना वाले अध्याय में मुहम्मद ने अपनी नवीन भौतिक शक्ति को इस कार्य के लिए प्रयोग किया कि, जिस धर्म की संस्थापना उन्होंने मक्का से मदीना आने के पहले की थी कि उसमें कम-से-कम बाहरी ढंग से एकरूपता आ जाय। इस प्रकार तो हिजर में इस्लाम का विनाश होना चाहिए और न कि इस धर्म की प्रतिष्ठापना की तिथि। इसका क्या कारण हम बता सकते हैं कि जो धर्म संसार में बर्बर युद्धप्रिय गिरोह द्वारा सैन्यवादी रूप में संस्थापित हुआ था, वह सार्वभौम धर्मतन्त्र बनने में सफल हुआ। यद्यपि जब वह स्थापित हुआ उसमें आध्यात्मिकता की कमी थी, जिसके कारण और धर्मों से तुलना करते हुए उसकी असफलता जान पड़ती थी।

जब हम इस प्रश्न को इन रूपों में रखते हैं तो हमें अनेक आंशिक उत्तर मिलते हैं। सम्भव है सबको एकत्र कर लेने पर समाधान मिल जाय।

पहले तो हमें इस विचारधारा को, जो ईसाई संसार में प्रचलित है, अधिक बल नहीं देना चाहिए कि इस्लाम धर्म शक्ति के बल पर फैलाया गया है। पैगम्बर के उत्तराधिकारियों ने इस धर्म के लिए थोड़ी ऐसी बाहरी विधियों को पालन करने पर अवश्य जोर दिया था जो बहुत कठोर नहीं थी, और यह भी उन बहु मूर्तिपूजक समुदायों की सीमा के बाहर नहीं जो अरब की उस अवान्तर भूमि में रहते थे जहाँ इस्लाम का जन्म हुआ था। जिन रोमन तथा ससानियाई साम्राज्यों के प्रदेशों को इन्होंने जीता, वहाँ यह विकल्प इन्होंने नहीं रखा कि 'इस्लाम या मृत्यु', इन्होंने यह कहा—इस्लाम या अधिकार और इस नीति की प्रबुद्धता की प्रशंसा परम्परागत की गयी थी जब उसके बहुत दिनों बाद इंग्लैण्ड में निरुत्साही महारानी एलिजाबेथ ने उसे प्रचलित किया था। उमैयदी शासन में अरबी खलीफा के गैर-मुस्लिम प्रजा पर यह विकल्प ईर्ष्यामय नहीं था क्योंकि उमयदी (पीढ़ी के एक शासक को छोड़कर जिसने केवल तीन साल तक शासन किया) सब उत्साहहीन थे। सच पूछिए तो उम्मयदी प्रच्छन्न बहुमूर्ति-पूजक

थे और इसलाम धम के प्रचार के प्रति उदासीन या विरोधी भी थ, जिसने तेरह की पन्थी उहाने धारण कर रखी थी।

इन विचित्र परिस्थितियो में खिलाफत के गैर-अरबी प्रजाओ में इसकी प्रगति अपने धार्मिक गुणो के कारण हुई। उसका विस्तार धीरे धीरे किन्तु निश्चित ढंग से हुआ। भूतपूर्व ईसाइयो और भूतपूर्व पारसियो ने अपन शासक उमैय्यी खलीफा के विरोध न गहीं तो उदासीनता के वातावरण में यह धम स्वीकार किया और इन लोगो के हाथो में इस्लाम उस इस्लाम से भिन्न था जो अरब योद्धाओ ने प्रचलित किया था और जो विशेषाधिकार प्राप्त राजनीतिक प्रतिष्ठा का चिह्न था। नय गैर-अरबो ने जिन्होने इस्लाम कबूल किया था, अपनी बौद्धिक धारणा के अनुरूप इस धम को स्वीकार किया और पैगम्बर के अपरिष्कृत तथा अशिक्षित कथनो को ईसाई धम और हेलनी दर्शन के सूक्ष्म और संगत रूप में परिवर्तित किया और इस वेश में इस्लाम उस सीरियाई ससार के एकीकरण करने में शक्तिशाली हुआ, जो अभी तक अरबो की सनिक विजय द्वारा केवल ऊपरी ढग से एकता के रूप में था।

मुआविया की शक्ति प्राप्ति के सौ साल के भीतर ही खिलाफत की गैर-अरब मुस्लिम प्रजा इतनी शक्तिशाली हो गयी थी कि उदासीन उमय्यदो को उसने निकाल बाहर किया और एक वश को गद्दी पर बठाया जो धम में दृढ था और जिन लोगो ने उस गद्दी पर आसीन किया उनका समर्थक था। सन् ७५० ई० में, जब गैर-अरब मुसलमानो ने उमैय्यो को हराकर अब्बासियो को गद्दी पर बठाया इस वग की जनसख्या जिसन यह विजय प्राप्त करायी, अरब साम्राज्य की पूरी आबादी के अनुपात में उतनी ही थी जितनी रोमन साम्राज्य में ईसाइयो की जनसख्या का अनुपात उस समय था जब कास्टटाइन ने मैक्सेंटियस को हराया था। डा० एन० एच० बेस ने अनुमान लगाया है कि यह दस प्रतिशत थी।[1] खिलाफत की प्रजा का सामूहिक धम-परिवतन ईसा की नवी शती के पहले आरम्भ नही हुआ और तेरहवी शती तक जब अब्बासी साम्राज्य का विनाश हुआ, समाप्त नहा हुआ था। और यह विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि इस्लामी मिशन के क्षेत्र में विलम्ब से यह परिणाम राजनीतिक दबाव के कारण नहा था लोकप्रिय और स्वत प्रिय आदोलन था क्योकि थियोडोसियस और जस्टीनियन का जिन्होने अपनी राजनीतिक शक्ति का अपने तथाकथित धार्मिक उत्साह में कु प्रयोग किया था पाँच शती के अब्बासी खलीफा के बीच कोई प्रतिरूप नही था।

हमने जो नियम प्रस्तुत किया कि राजनीतिक शक्ति को जबरदस्ती धम के प्रसार में थोडी सफलता मिल जाना असम्भव नही है आगे चलकर इस राजनीतिक समथन का मूल्य इतना अधिक चुकाना पडता है कि वह उससे अधिक हो जाता है जितना धार्मिक प्रसार होता है उसका अपवाद इस्लाम क्यो हुआ ऊपर के तथ्यो को पढने से समझ में ठीक-ठीक आ जाता है।

जब राजनीतिक समथन से तुरत कोई लाभ नही होता, तब उस राजनीतिक शक्ति को वह दण्ड भुगतना पडता है। जो कुख्यात उदाहरण ऐसे ह जहा धम को राजनीतिक बल से सहायता मिली है और धम की निश्चित रूप से क्षति हुई है उनमें से कुछ ये ह। जस्टीनियन टारस पवत

[1] एन० एच० बेस कास्टटाइन द ग्रेट एण्ड द क्रिश्चियन चच, पृ० ४।

के पार अपने मोनोफाइसाइट प्रजा के ऊपर अपना कट्टर कथोलिक धर्म नहीं लाद सका, लिओ साइरस तथा कांस्टटाइन पंचम यूनान और इटली में अपनी मूर्ति प्रिय प्रजा में अपनी मूर्ति भंजकता का प्रचार नहीं कर सका, अंग्रेजी राजा अपनी आयरलैण्ड की कैथोलिक प्रजा में प्रोटेस्टेंट धर्म नहीं फैला सके, और औरंगजेब अपनी हिन्दू प्रजा पर अपना इस्लाम नहीं लाद सका। जब उस धर्म का यह हाल है जो 'चलता सिक्का' है तब यह और भी कठिन है कि राजनीतिक शक्ति शक्तिशाली अल्पसंख्या के दर्शन को लाद सकेगी। हम सम्राट जूलियन के सम्बन्ध में कह चुके हैं, वास्तव में यहीं से हमने यह खोज आरम्भ की। इसी प्रकार सम्राट अशोक अपना हीनयानी बौद्धधर्म अपनी भारतीय प्रजा पर स्थापित नहीं कर सका, यद्यपि उसके समय बौद्ध दर्शन अपनी बौद्धिकता और नैतिकता के यौवनकाल में था। और उसकी तुलना हम मारकस आरीलियस के स्टोइकवाद से कर सकते हैं, न कि जूलियन के नव-प्लेटोवाद से।

अब हम उन उदाहरणों पर विचार करेंगे जहाँ कि किसी शासक ने अथवा शासक समुदाय ने किसी ऐसे धर्म की सम्यापना की चेष्टा नहीं की जो 'चलता सिक्का' था, न शक्तिशाली अल्पसंख्या के दर्शन को प्रसारित करने का प्रयत्न किया, बल्कि नये सिरे से अपनी कल्पना के धर्म का प्रसार करना चाहा। उन असफलताओं को ध्यान में रखते हुए जहाँ ऐसे धर्म का दर्शन के, जिनमें जन्मजात शक्ति थी, लाने की चेष्टा की गयी, हम यदि यह परिणाम मान लें कि इन निजी कल्पना वाले धर्मों के प्रसार में भी असफलता ही मिलगी, तो अनुचित न होगा। इसमें प्रमाण की भी आवश्यकता नहीं होगी। और सचमुच ऐसा ही हुआ भी है। परन्तु ये कल्पना वाले धर्म इतिहास की विचित्रताएँ हैं। और किसी कारण से नहीं तो इस कारण सरसरी दृष्टि उन पर डाल देना ठीक होगा।

सबसे चरमसीमा का उदाहरण विरोधी इस्मायली शियाई खलीफा अल्हकीम (९९६-१०२० ई०) का है। जो कुछ विचार इन्होंने बाहर से लिया हो इनके 'ड्रूस' धर्म की विशेषता यह है कि अल्हकीम का ही पूजा जाय और ईश्वर के दस अवतारों में यही सबसे पूर्ण है। यह ईश्वरीय अमर मसीहा है जो विजयी होकर उस ससार में फिर लौटेंगे जहाँ से पहली बार अवतरित होने के बाद रहस्यमय ढंग से अदृश्य हो गये। इस नये धर्म के मिशनरियों को केवल एक सफलता मिली कि उन्होंने सन् १०१६ में हरमोन पहाड की तलैटी में वादिल-तेम जिले के सीरियाई शिष्य 'दरजी' (नाम है) का परिवर्तन किया। पन्द्रह साल बाद इस नये धर्म में सारी दुनिया को परिवर्तित करने का विचार त्याग दिया गया और उस दिन से ड्रूस समुदाय में न तो परिवर्तन कर नये लोग मिलाये गये न किसी को धर्म छोडने की आज्ञा दी गयी। वह सीमित वंशानुगत धार्मिक समुदाय बन गया है जिसके सदस्य उस देवता का नाम नहीं धारण करते जिसकी वे पूजा करते हैं बल्कि उस मिशनरी का जिसने पहले-पहल अलहकीम के विचित्र धर्म से उन्हें परिचित किया। हरमोन और लबानान के पहाड़ों में बसकर ड्रूस धर्मतन्त्र किले में पथराये धर्म का पूर्ण उदाहरण है। और इसी चिह्न से अल्हकीम का कल्पना का धर्म असफल हो गया।

अल्हकीम का धर्म कम-से-कम जीवाश्म के रूप में वर्तमान है किन्तु सीरिया के पथभ्रष्ट वेरियस एविटस बैसेनिस के प्रगल्भ प्रयत्न का कुछ भी परिणाम नहीं हुआ, जब उसने रोमन साम्राज्य के बहुसंख्यक देवताओं में 'अपने को नहीं, अपने स्थानीय देवता—एमेसन सूर्यदेवता—

एलागेबालस को मुख्य रूप में प्रतिष्ठित किया और उसका यह महत्त्व बन बैठा और जब भाग्यवश यह सन् २१८ ई० में रोमन साम्राज्य की गद्दी पर बैठ गया, यही नाम उसने धारण किया। चार साल बाद उसकी हत्या कर दी गयी। और उसका धार्मिक प्रयोग एकाएक समाप्त हो गया।

सम्भवत इस बात पर आश्चर्य न होगा कि किसी एलागबालस या अल्हकीम को राजनीतिक शक्ति द्वारा अपने धार्मिक राज्य के प्रसार में असफलता मिली हो, किन्तु हम उन लोगो की कठिनाइयो को अच्छी तरह समझ सकते है जिन्होने अपनी राजनीतिक क्रियाओ द्वारा ऊपर से नीचे की ओर धर्म और मतो के प्रसार की चेष्टा की और असफल हुए, यद्यपि यह धार्मिक भावना उनकी केवल वयक्तिक सनक नही थी, उसमें गम्भीर प्रेरणा थी। ऐसे शासक हुए हैं जिन्होन राज्य को दृष्टि में रखकर कल्पना वाले धर्म' के प्रसार की चेष्टा की और असफल रहे। यह भावना धार्मिक भले ही रही हो उच्च राजममता की दृष्टि से उसे हम अनुचित या निन्द्य नही कह सकते। ऐसे भी शासक हुए हैं जिन्हो कल्पना वाले धर्म के प्रसार में असफलता प्राप्त की यद्यपि वे स्वय उस धर्म में पूर्ण रूप से विश्वास करते थे और अपना दायित्व समझते थे कि जितनी भी शक्ति उनके पास थी उसका पूरा उपयोग अपनी प्रजा में उस धर्म के प्रसार में करें, जिससे उन्हें अंधकार में प्रकाश मिले और व शान्ति के पथ पर चल सकें।

राजनीतिक प्रयोजन की पूर्ति के लिए नये धर्म की संस्थापना का क्लासिकी उदाहरण सेरामिस की मूर्ति तथा उसका पंथ है जिसका आविष्कार टाल्मी सोटर न किया था। टोलेमी सोटर मिस्र के अकामीनियाई साम्राज्य के उत्तराधिकारी हेल्नी राज्य का संस्थापक था। उसका उद्देश्य यह था कि अपनी मिस्री तथा हेल्नेनी प्रजा के बीच का भेद इसके द्वारा दूर हो। और उसने विशेषज्ञो के जत्थे का जत्था इस योजना की पूर्ति के लिए नियुक्त किया। इस सश्लेषात्मक धर्म के बहुत से अनुयायी दोनो वर्गों में हो गये, जिनके लिए यह चलाया गया था किन्तु भेद दूर न हो सका। जैसे और बातो में उसी प्रकार सेरामिस की पूजा में भी प्रत्येक अपने मन माने ढग से चला। टोलमी साम्राज्य में दोनो समुदायो के बीच का आध्यात्मिक भेद अन्त में एक-दूसरे धर्म द्वारा मिटा। यह धर्म सर्वहारा के हृदय से अपने से टालमियाई प्रदेश कोएले-सीरिया में उत्पन्न हुआ जब टोल्मियाई साम्राज्य के पूर्ण विनाश के बाद एक पीढ़ी बीत चुकी थी।

टोलमी सोटर के राज्य के एक हजार वर्ष पहले मिस्र के एक दूसरे शासक फेरो इखनाटन ने परम्परावादी मिस्री देवकुल के स्थान पर अलौकिक तथा एक ही ईश्वर की पूजा की सस्थापना की जिसकी अभिव्यक्ति मानव के लिए 'एटान' अथवा सूर्य के चक्र के रूप में की गयी। जहाँ तक पता है इस देवता की स्थापना किसी राजनीतिक भावना से नही की गयी थी जसे टोलेमी सोटर ने की थी, न यह किसी अर्धविक्षिप्तता या सनक के फलस्वरूप थी जैसे अल्हकीम और एलागेबाल्स ने की थी। वह उच्च धार्मिक भावनाओ से प्रेरित हुआ था और अशोक की भाँति उसने अपने दार्शनिक विश्वासो को धार्मिक कार्यों में परिणत किया। इखनाटन विशुद्ध धार्मिक भावना से प्रेरित हुआ था, उसमें उसका कोई स्वार्थ नही था और यह उसका निजी विश्वास था। कहा जा सकता है कि उसे सफलता मिलनी चाहिए थी फिर भी वह पूर्ण रूप से असफल रहा। इस असफलता का कारण यही था कि एक राजनीतिक शासक ने अपने काल्पनिक धर्म को ऊपर

ने बधाई दी। उसने बाद में वैदेशिक मन्त्री टलेरड ने कहा—'जहाँ तक मैं समझता हूँ मुझे एक ही बात कहनी है। अपने धर्म को संस्थापित करने के लिए ईसू मसीह शूली पर चढ़े और फिर जी उठे। आपको भी कुछ इसी प्रकार करना चाहिए। टलेरड ने विधानिक प्रार्थिया को जो व्यंग्यात्मक शब्दों में उत्तर दिया वह वही था जो अलाउद्दीन खिलजी के मन्त्री ने सीधे शब्दों में दिया था। *यदि लारवीलियर एपा का सम्प्रदाय अपना धर्म का प्रचारक था, तो उस* निदेशक का पद छोड़कर सवहारा का पैगम्बर बनना चाहिए था।

अन्त में पहले कौंसल बोनापार्ट ने देखा कि फ्रांस कैथोलिक है और इसलिए उसने निश्चय किया कि यह सरल भी होगा, राजनीतिक भी होगा कि कोई नया धर्म फ्रांस में न चलाया जाय, ज्यों का त्यों रहने दिया और स्वयं शासक उसी धर्म का स्वीकार कर ले।

यह अन्तिम उदाहरण केवल यही नहीं बताता कि जो धर्म राजा का है वही प्रजा का होना चाहिए धोखा और फरेब है, वह उसका दूसरा रूप भी बताता है कि जो प्रजा का धर्म हो वही राजा का भी होना चाहिए के सिद्धान्त में बहुत कुछ सचाई है। शासकों ने उस धर्म का स्वीकार कर लिया है जो उनकी प्रजा की अधिक संख्या का रहा है या जो अधिक शक्तिशाली रहा है और इसमें उन्हें सफलता मिली है। चाहे यह धार्मिक सचाई के कारण किया गया हो या राजनीतिक कारणों से जैसे हेनरी चतुर्थ ने कहा था—पेरिस का मूल्य एक प्रार्थना है।' ऐसे शासकों की सूची जिन्होंने जनता का धर्म अपनाया, लम्बी है। उनमें है—रोमन सम्राट कांस्टेंटाइन जिसने ईसाई धर्म स्वीकार किया, चीनी सम्राट हैनवूती जिसने कनफूशियस धर्म स्वीकार किया। इसी सूची में क्लोविस चतुर्थ नपोलियन भी है किन्तु इसका सबसे विशिष्ट उदाहरण ब्रिटिश शासन का विचित्र विधान है जिसके अनुसार यहाँ का शासक इंग्लैंड में बिशप धर्म संघ (एपिस कोपेलियन) का अनुयायी है और सीमा पार स्काटलैंड में पादरी संघ शासित (प्रेसबिटेरियन) है। सन १६८९ और १७०७ के बीच राजनीति और धर्म के सम्बन्ध में जो समझौते हुए हैं और उनके परिणामस्वरूप ब्रिटिश राजा को जो धार्मिक स्थान प्राप्त हुआ है वह उसके बाद ब्रिटिश विधान का संरक्षक रहा है। क्योंकि कानून की दृष्टि में दोनों देशों में धार्मिक संस्थानों की समानता का प्रतीक इस प्रकार स्थापित किया गया है जो दोनों देशों के लोग समझ सकते हैं। इसका प्रत्यक्ष रूप यह है कि राजा उस धर्म को स्वीकार करता है जो सरकारी रूप में देश का धर्म है और इससे धार्मिक समता निश्चित रूप से हो गयी। इस भावना का उस शती में अभाव था जो दोनों राज्यों के सम्मिलित होने और दोनों पार्लिमेंटों के सम्मिलित होने के बीच (१६०३ १७०७) बीती। इस धार्मिक समता के द्वारा दोनों राज्यों में स्वतन्त्रता और समान राजनीतिक सम्मिलन की मनोवैज्ञानिक नींव पड़ी नहीं तो इन दोनों देशों में परम्परागत विरोध था और वैमनस्य के कारण ये अलग थे और जो सदा से सम्पत्ति तथा जनसंख्या में एक दूसरे से भिन्न चले आ रहे हैं।

(६) एकता की भावना

हमने व्यवहारों के विभिन्न वैकल्पिक ढंगों के सम्बन्ध का प्रारम्भिक सर्वेक्षण किया। यह व्यवहार हमने ऐसा पाया कि सामाजिक विघटन की कठिन परीक्षा में भावना और जीवन पर मानव की आत्मा की प्रतिक्रिया होती है। हमने इसमें असामंजस्य भी देखा जिसकी

अभिव्यक्तिया के अनेक रूपो का हमने अध्ययन किया । यह असामजस्य व्यक्ति की स्पष्ट रेखाओ के अस्पष्ट हो जाने और मिल जाने का मनोवैज्ञानिक उत्तर है । जब सभ्यताएँ विकास के पथ पर ही रहती हैं, ये व्यक्तिगत रेखाएँ प्रकट होती ह । हमने यह भी देखा कि उसी अनुभूति का दूसरा उत्तर भी हो सकता है जो ऐसी एकता की भावना उत्पन्न करे जो अ-सामजस्य से भिन्न ही नही, उसके बिलकुल विपरीत हो सकती है । परिचित रूप जब नष्ट होने लगते ह तब हम उद्विग्न और दुखी हो जाते हैं । दुबल आत्माएँ इससे यह समझती ह कि अतिम सत्ता केवल दुरवस्था के अतिरिक्त कुछ नही है । किन्तु स्थिर बुद्धि वाला को और अधिक आत्मिक दृष्टि वाला को यह सचाई प्रकट होती है कि इस प्रपचयुक्त ससार का अस्थिर महत्त्व केवल छलना है जो उस शाश्वत एकता को ठग नही सकता जो उसके पीछे है ।

दूसरी सत्यताओ की भाँति आत्मिक सत्यता भी किसी बाहरी और प्रत्यक्ष वस्तु की सामान्यता से सरलता से पहले समझी जा सकती है । इस एकता का, जो आत्मिक और अतिम है झलक हम समाज के सावभौम राज्य में परिवर्तित हो जाने म मिलती है । सच बात यह है कि चाहे रोमन साम्राज्य हो या कोई दूसरा साम्राज्य हो, कभी सावभौम राज्य न बनता, न बना रहता यदि उसमें राजनीतिक एकता की भावना उस समय न हुई होती जब सकट चरम सीमा को पहुँच गया । हेलेनी इतिहास में यह भावना—अथवा सम्भवत विलम्ब से आया हुआ सन्तोष—आगस्टी काल के लटिन काव्य में जाग्रत है, और पश्चिमी समाज की हम सतान आज की परिस्थिति में अपने ही अनुभव से इस बात से कितने अवगत ह कि हमारी कितनी प्रबल इच्छा है कि ससार में सुव्यवस्था स्थापित हो । जब हम देख रहे ह कि मानव की एकता के लिए विफल चेष्टा हो रही है ।

सिकन्दर महान् की एकता की कल्पना उस समय तक हेलेनी जगत से नही मिटी, जब तक हेलेनीवाद का कुछ भी चिह्न शेष रहा । सिकन्दर की मृत्यु के तीन सौ साल बाद हम देखते ह कि आगस्टस ने अपनी मुद्रा की अँगूठी पर सिकन्दर का सिर अकित कराया था । इसमें यह स्वीकृति थी कि इसी स्रोत स हमने रोमन साम्राज्य के शासन की प्रेरणा पायी है । प्लूटाक ने सिकन्दर का एक कथन उद्धत किया है—ईश्वर सब मानव का समान रूप से पिता है, कितु उनमें जो विशिष्ट है उन्हें वह विशेष रूप से अपना बना लेता है । यदि यह युक्ति ठीक है तो इससे पता चलता है कि सिकन्दर ने समझ लिया था कि मानव के बन्धुत्व की कल्पना यह स्वीकार कर लेती है कि ईश्वर सबका पिता है । इस सत्यता में इसका विपरीत भाव भी निहित है कि यदि मानव परिवार में से ईश्वर को हटा दिया जाय, तो केवल मानव समाज के सगठन में आपस में एक-दूसरे को बाँधने की कोई शक्ति नही रह जाती । सारी मानवता को एक में बाधने के लिए कोई समाज है तो वह अतिमानवीय ईश्वरीय समाज है । ऐसे समाज की कल्पना जिसमें मनुष्य ही मनुष्य है कोरा धोखा है । स्टोइक दाशनिक एपिक्टिटस इस महान् सत्य को जानता था और ईसाई देवदूत पाल भी इसे जानता था । अतर इतना था कि एपिक्टिटस ने दार्शनिक परिणाम के तथ्य के रूप में इसे प्रकट किया है, और सत पाल ने इसे ईश्वर की वाणी के रूप में प्रस्तुत किया जो ईसामसीह के जीवन और मृत्यु के माध्यम से मानव को भेजी गयी थी ।

चीनी सकटकाल के समय एकता की भावना केवल सासारिक स्तर पर नही प्रकट हुई थी ।

'चीनियों के लिए इस भाव में 'एक' शब्द (एकता, एकत्व) का अभिप्राय गम्भीर भावनात्मक था। इसका प्रतिबिम्ब राजनीति पर भी पड़ा था और टाओ के तत्त्वमीमांसा पर भी। और वास्तव में जो अभिलाषा थी, या और सच पूछिए तो जो मनोवैज्ञानिक आवश्यकता थी, वह राजनीतिक एकता की अपेक्षा विश्वास की एकरूपता थी जो अधिक गम्भीर तथा आवश्यक थी। सब मिलाकर मनुष्य, बिना धर्मपरायणता और बिना ईश्वरीय विश्वास के निश्चित आदर्श के जी नहीं सकता।''[1]

यदि चीनियों का एकता की खोज का यह व्यापक ढंग मानव के रूप में मान लिया जाय और मनमाने ढंग से अलग की हुई मान्यता का हमारा पश्चिमी सम्प्रदाय अथवा स्वरूप था, व्याधि का रूप समझ कर हटा दिया जाय, तो हम देखेंगे कि मानवी एकता और विश्व की एकता का साथ-साथ आत्मिक प्रयत्न हुआ है। यह आत्मिक प्रयत्न केवल इसलिए कि एक समय विभिन्न क्षेत्रों में हुआ, इसलिए विभिन्न नहीं माना जा सकता। वास्तव में हम देख चुके हैं कि जब स्थानीय समुदाय सार्वभौम राज्य में मिल जाते हैं तब साथ-साथ स्थानीय देवता भी मिलकर एक कुल-देवता हो जाते हैं जिसमें से एक देवता का प्रादुर्भाव होता है जैसे थीबीज का एमान रे, अथवा बैबिलोन का मारदुक-बेल। यह संसार के राजाओं के आत्मिक समानार्थी राजाओं के राजा और महाराजाओं के महाराज हैं।

परन्तु यह मालूम होगा कि मानवी कार्यों की जिन परिस्थितियों के जिन कारणों से अति मानव प्रतिबिम्ब के स्वरूप में इस प्रकार के देवताओं का उदय होता है वे तभी उपस्थित होती हैं जब सार्वभौम राज्य का जन्म होता है। उस संगठन के कारण नहीं, जो इस प्रकार के राजतन्त्र का परिणाम है, क्योंकि सार्वभौम राज्य का अन्तिम संगठन वह शासन नहीं होता जिसमें केवल विभिन्न अंगों को सुरक्षित रखा जाय और विभिन्न सत्ताओं को सम्मिलित करके उनमें से एक सबसे ऊपर शासन करे। समय के साथ-साथ वह ठोस एकात्मक साम्राज्य (यूनिटरी एम्पायर) बन जाता है। वास्तव में परिपक्व सार्वभौम साम्राज्य में दो प्रमुख विशेषताएँ होती हैं, जो सारे सामाजिक भूदृश्य पर अपना प्रभुत्व बनाये रखती हैं, वे दो हैं—सर्वोच्च व्यक्ति राजा के रूप में और सर्वोच्च अवैयक्तिक कानून। जिस संसार का शासन इस योजना के अनुसार होता है उसी ढाँचे के अनुसार विश्व के शासन की भी कल्पना होती है। यदि सार्वभौम का मानवी शासक इतना शक्तिशाली और साथ-ही-साथ इतना परोपकारी है कि उसकी प्रजा उसे ईश्वर का अवतार समझकर उसकी पूजा करे तो प्रबल युक्ति से वह उस शासक को धरती पर स्वर्ग के ईश्वर का प्रतिरूप समझेंगे जो वैसा ही शक्तिशाली और दयालु है। यह ईश्वर अमान रे या मारदुक-बल के समान केवल ईश्वरों-का ईश्वर नहीं है। यह वह है जो अकेले सच्चे ईश्वर के समान शासन करता है। दूसरे, जिस कानून में सम्राट की इच्छा कार्यान्वित हो जाती है, वह कानून सार्वभौम और अनिवार्य शक्ति है। तुलनात्मक दृष्टि से इसके द्वारा प्रकृति के अवैयक्तिक कानून का भी संकेत होता है। जिस कानून द्वारा भौतिक विश्व का ही शासन नहीं होता, अपितु मानव जीवन के गहरे तल में सुख और दुख, भलाई और बुराई पुरस्कार

१ ए० केले क क एण्ड इटस पावर, भूमिका, पृष्ठ ६८–७०।

और दण्ड का भी रहस्यमय रूप से वितरण होता है। जिसे कोई समझ नही सकता और जहाँ 'सीजर की आज्ञा नही चलती।'

ये दो सकल्पनाएँ—सावभौम तथा शक्तिशाली कानून और अद्वितीय तथा सर्वशक्तिमान् देवता—विश्व के उन सभी प्रतिरूपा में पायी जाती है जिनकी मनुष्य की बुद्धि ने कभी कल्पना की है और जो किसी भी सामाजिक परिस्थिति में सावभौम राज्य के रूप में प्रकट हुए है। किन्तु इन ससृति विज्ञानो के सर्वेक्षण से पता चलता है कि ये दो विभिन्न स्वरूपो (टाइप) में से किसी एक या दूसरे के निकट पहुँचते है। एक स्वरूप वह है जिसमें ईश्वर की उपेक्षा करके कानून की प्रतिष्ठा होती है, दूसरा वह जिसमें कानून की उपेक्षा करके ईश्वर को प्रतिष्ठापित किया जाता है। और हम देखेंगे कि शक्तिशाली अल्पसख्यका का शासन है कानून की प्रतिष्ठा और आन्तरिक सवहारा कानून को ईश्वर की सत्ता के सम्मुख गौण मानते ह। किन्तु यह अन्तर इतना ही है कि किस पर अधिक बल दिया जाय। सभी ससति विनाना में दोना सकल्पनाएँ पायी जाती ह। दोना एक साथ रहती है और मिली-जुली रहती ह, उनका अनुपात जो भी हो।

जो अन्तर हम स्थापित करने जा रहे ह, उनके सम्बन्ध में इतना प्रतिबन्ध लगाकर अब हम क्रम से पहले विश्व की एकता के उन प्रतिरूपा का सर्वेक्षण करें, जिनमें ईश्वर की उपेक्षा करके कानून को ऊँचा किया गया है और तब उन प्रतिरूपा का जिनमें ईश्वर की प्रतिष्ठा है और उसके बनाये कानूनो की उपेक्षा।

उन प्रणालियो में जिनमें 'कानून ही सबका राजा है'[1] हम देखेंगे कि ईश्वर का व्यक्तित्व धुधला होता जाता है और विश्व पर शासन करने वाला कानून स्पष्ट होता जाता है। उदाहरण के लिए हमारे पश्चिमी ससार में एथनेसियन मत के अनुसार त्रयातम ईश्वर का रूप धीरे धीरे पश्चिमी मन स अधिकाधिक मन्द पडता गया है। ज्यो-ज्यो भौतिक विज्ञान ने अपने बौद्धिक साम्राज्य की सीमा जीवन के एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में बढायी है और जब हमारे युग में विज्ञान आध्यात्मिक तथा भौतिक ससार पर अपना अधिकार स्थापित कर रहा है, वह ईश्वर जो गणित था, शून्यक ईश्वर का हटाकर उसके स्थान पर कानून के लिए स्थान बनाने की प्रक्रिया को आठवा शती ई० पू० में बबिलोनी ससार ने पहले ही सोच लिया था, जब नक्षत्रो की गति के क्रम का आविष्कार उन्होने किया। और उससे मुग्ध होकर काल्डिया के गणितज्ञा ने ज्यातिष के नये विनान के ज्ञान के उत्साह में मारदुक बेल के स्थान पर सात ग्रहो को प्रतिष्ठापित किया। भारतीय ससार में भी जब बौद्ध दशन कम के मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त के तक-सगत परिणाम के गम्भीर निश्चया पर पहुचा तब इस आत्मिक नियतिवाद के आक्रमणकारी सवसत्तावादी प्रणाली के शिकार वदिक देवता हुए। बबर योद्धा दल के इन बबर देवताओ को अपनी अरोमाटिक अधेड अवस्था मे आकुल यौवन की मानवी चचलता के लिए कष्टकारी परिणाम भोगना पडा। बौद्ध ससार में जहाँ सारी चेतना इच्छा और उद्देश्य सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक अवस्थाओ में परिवर्तित हो जाते थे और जो अपनी परिभाषा के अनुसार स्थायी या अबाध्य व्यक्तित्व मे सम्मिलित नही हो सकते थे, देवता मनुष्य के आत्मिक आकार मे सकुचित कर दिये गये और उनका मूल्य कुछ नही रह गया। सच पूछिए तो ईश्वर के और बौद्ध दशन की प्रणाली के मनुष्यो की मर्यादा में

१ हिरोडोटस पुस्तक ३, अध्याय ३८, पिंडार को उद्धत करते हुए।

जो कुछ भेद रहा वह इन्हीं मात्राओं के हित में रहा, क्योंकि यदि ताओ की मणि पूरी तरह से पार उत्तीर्ण हो गया तो यह साधारण मनुष्य बौद्ध भिक्षु तो बन ही सकता था और भौतिक सुखों को त्याग कर वह जीवन चक्र से मुक्त होकर निर्वाण प्राप्त कर सकता था ।

बौद्धों ने जो दण्ड अपने धार्मिक भावुकों के देवताओं को दिया उससे हेलेनी संसार के ओलिम्पस के देवता अच्छे रहे । क्योंकि हेलेनी दार्शनिकों ने विश्व की पराभौमिक (सुप्रा-टेरेस्ट्रियल) आयामों के 'महान्-समाज' के रूप में कल्पना की । इसमें एक दूसरे सदस्य का सम्बन्ध 'होमोनोइया' या सुसंगत व अनुप्राणित कानून के आधार पर था । इस विश्व में ज़ीयुस को, जिसने अपना जीवन ओलिम्पियाई योद्धा-दल के कुख्यात सरदार के रूप में आरम्भ किया था, स्टोइकों ने फिर से प्रतिष्ठित करके सार्वभौम नगर (कास्मोपालिस) का अध्यक्ष बनाकर अच्छी-सी पेन्शन दे दी और उसकी स्थिति कुछ वैसी ही बना दी जैसी आज के युग के वैधानिक राजा की होती है जो 'प्रभु तो है, किन्तु शासन नहीं करता ।' ऐसा राजा जो भाग्य की आज्ञाओं पर हस्ताक्षर कर देता है और प्रकृति की क्रियाओं पर अपना नाम दे देता है ।'

हमारे सर्वेक्षण से पता चला है कि जो कानून ईश्वर का स्थान ले लेता है उसके अनेक रूप हो सकते हैं । गणित के नियमों के रूप में उसने कैल्डियाई ज्योतिषियों और आधुनिक वैज्ञानिकों को दास बना लिया है, मनोवैज्ञानिक विधान के रूप में उसने बौद्ध तपस्वियों को दास बनाया है और सामाजिक कानून के रूप में हेलेनी दार्शनिकों को दास बनाया । चीनी संसार में जहाँ कानून की संकल्पना को लोगों ने नहीं ग्रहण किया, वहाँ भी हम देखते हैं कि ईश्वरत्व को एक व्यवस्था ने ढक लिया है । यह व्यवस्था चीनियों के मन में मनुष्य के आचरण और उसके वातावरण की इन्द्रजाली अनुरूपता है अथवा इनके बीच की सहानुभूति है । वातावरण का प्रभाव मनुष्य के ऊपर, भू शकुन की चीनी विद्या द्वारा प्रकट होती है किन्तु इसका उल्टा अर्थात् मनुष्य का प्रभाव वातावरण के ऊपर कुछ संस्कार तथा उपचारों द्वारा नियन्त्रित किया जाता है । और

१ किन्तु वहाँ ज़ीयुस था भी ? क्या यह सत्य नहीं होगा कि जिन दार्शनिकों ने दिवालिये ओलिम्पियाई संस्थान के लिए अ-वैयक्तिक आदाताओं को नियुक्त किया, उन्होंने एक फालतू ज्यष्ठ साझीदार का कारोबार के लिए प्रयोग किया । श्री टवायनबी ने एक दूसरे स्थल पर अपनी पुस्तक में मारकस आरीलियस का हवाला दिया है और उस पर टिप्पणी की है 'सार्वभौमिक नगर' के एक भक्त नागरिक की दुखदायी पुकार में हम सुनते हैं कि ज़ीयुस सभापति का पद छोड़कर भाग गया । किन्तु मारकस के ईसाई पाठकों को उसके प्रति कठोर विचार नहीं लाना चाहिए । क्योंकि ज़ीयुस ने कभी नहीं कहा कि हमें सार्वभौम जनतन्त्र का सभापति चुनो । उसने बर्बर योद्धा दल के सरदार के रूप में जीवन आरम्भ किया और जहाँतक हम समझते हैं, इस जीवन से वह प्रसन्न था । यदि ज़ीयुस को दार्शनिकों ने विलम्ब से पकड़कर बन्द कर दिया, और उसे स्टोइक सुधार गृह में ज्येष्ठ साझीदार बनाकर जबरदस्ती सम्मान प्रदान किया तो यदि उसे यह शाश्वत बन्दी-गृह अच्छा नहीं लगा तो उस बेचारे का क्या दोष ? परन्तु शायद स्क्रूज के साझीदार मारले के समान वह न दोष का भागी है, न प्रशंसा का, क्योंकि 'बहुत पहले वह मर चुका है ।'—सम्पादक

ये उतने ही विस्तृत और महत्त्वपूर्ण होते हैं जितनी विश्व की सरचना—जो इन उपचारो में प्रतिबिम्बित रहती है और जिनका कभी-कभी रूप भी बदल देते ह । सस्कारा का पुरोहित, जो ससार को घुमाता है, वह चीनी सावभौम राज्य का राजा है । और उसका काय अतिमानव का है इसलिए सम्राट् को विधानत ईश्वर का पुत्र कहते हैं, किन्तु यह ईश्वर, जो चीनी व्यवस्था में मुख्य पुरोहित का गोद लिया हुआ पिता है, उतना ही दुबल और अवैयक्तिक है जितना जाडे के पाले में उत्तरी चीन । चीनी मन में ईश्वरीय व्यक्तित्व की सकल्पना का इतना अभाव है कि जेजुइट मिशनरियो को 'दीउस' शब्द का चीनी भाषा में अनुवाद करन म बडी कठिनाई हुई ।

अब हम विश्व की दूसरी प्रतिमूर्तियो पर विचार करेंगे जिनमें एकता सवशक्तिमान् ईश्वर की दी हुई है । जहा कानून ईश्वर की इच्छा की अभिव्यक्ति है, न कि ऐसी सत्तात्मक शक्ति जो मनुष्य और देवताओ के कार्यों का व्यवस्थित करती है ।

हम देख चुके ह कि यह सकल्पना कि सब प्रकार की एकता ईश्वर द्वारा प्राप्त होती है और इसकी वकल्पिक सकल्पना कि सब प्रकार की एकता कानून द्वारा स्थापित हाती है, मनुष्य की बुद्धि मे सविधान से समानता करने के कारण उत्पन्न होती है । इस प्रकार का सविधान उस समय बनता है जब सावभौम राज्य अपने अतिम रूप में स्थिर हो जाता है । इस प्रक्रिया में वह मानव शासक जो पहले राजाओ का राजा था, और राजाओ को जो उसके साथी और सहकर्मी थे, निकाल बाहर करता है और, ठीक अथ में 'राजा' बन जाता है । इसी के साथ अब यदि हम उन लोगो और देशो की ओर दखें, जिन देशो का और लोगो को सावभौम राज्य ने आत्मसात् कर लिया है तो इन देवताओ का भी वही हाल है । उस देवस्थान में जिसमे एक उच्च देवता, उन देवताओ के समुदाय पर सत्ता स्थापित कर रखा है, जो देवता एक समय उसकी बराबरी के थे किन्तु उन्होने स्वतन्त्रता खोकर भी अपना देवत्व नही खोया था । अब वही देवता एक ईश्वर के रूप में प्रकट होता है और उसका मूल गुण यह है कि वह अद्वितीय है ।

यह धार्मिक क्रांति उस समय साधारणत आरम्भ होती है, जब देवता और उनके उपासको के सम्बन्ध में परिवतन होने लगता है । सावभौम राज्य के ढाचे के अन्दर देवतागण उन बन्धनो को त्यागने लगते ह जिनसे उनमे प्रत्येक किसी स्थानीय समुदाय से बधा था । वह देवता जो आरम्भ मे किसी विशेष कुल, नगर, पहाड या नदी का सरक्षक था, अब विस्तृत कार्यक्षेत्र में प्रवेश करता है और एक ओर व्यक्तियो की आत्मा को आकृष्ट करने लगता है दूसरी ओर सारी मानवता को । इस दूसरी स्थिति में वह देवता जो एक समय स्थानीय था, स्थानीय नेता का दिव्य प्रतिरूप था उस सावभौम राज्य के शासको के गुणो को ग्रहण कर लेता है, जिसमें समुदाय मग्न हो गये ह । उदाहरण के लिए हम अकेमीनियाई राज्य को देख सकते हैं, जिसने राजनीतिक दृष्टि से जूडिया को छोप लिया और उसका प्रभाव यहूदियो के इसरायल के ईश्वर की सकल्पना पर पडा । येहोवा की यह नयी सकल्पना सन् १६६–६४ ई० पू० तक पूरी हो गयी । यह लगभग वही समय है जब डनियल की पुस्तक का इल्हामी अंश लिखा गया था ।

म देखता रहा कि सिहासन फेंक दिये गये और ईश्वर बैठा था । उसका वस्त्र बर्फ के समान उज्ज्वल था, उसके सिर का बाल विशुद्ध ऊन-सा था । उसका सिहासन अग्नि शिखा के समान था जिसका पहिया भी प्रज्वलित अग्नि-सा था । आग की नदी निकली और उसके सामने आयी ।

हजारा उसकी सेवा कर रहे थे और लाखा उसके सामने खडे थे, न्याय आरम्भ हुआ और पुस्तकें खोली गयी ।'[1]

इस प्रकार अनेक पुराने स्थानीय देवता नये प्रतिष्ठापित सासारिक राजा का अधिकार चिह्न धारण करते ह और तब एकाधिपत्य के लिए, जो इन अधिकारा का अथ हाता है, एक-दूसरे से प्रतियोगिता करते है । और अन्त में एक प्रतियोगी दूसरे प्रतियोगिया का विनाश कर देता है और एक सच्चे ईश्वर होने के अधिकार को स्थापित करता है । किन्तु एक विशेष बात है, जिसमें इन 'देवताआ के युद्ध' और इस ससार के राजाआ के युद्ध की प्रतियोगिता में अन्तर है । और सब समानता है ।

सावभौम राज्य के वैधानिक विकास में जिस राजा के बारे में हमने कहा है कि अन्त में वह सब पर राज्य करने लगता है, वह वधानिक क्रम में सीधा—विना शृखला टूटे हुए बादशाह का उत्तराधिकारी होता है । वह सारे राजाआ का अधिराज हाता है । जसे जब आगस्टस, जो स्थानीय राजाओ या राज्यपाला (जसे अग्रेजी राज में भारतीय राजा) पर निरीक्षण करते हुए कपाडोनिया या फिलस्तीन पर अपना अधिकार अनुभव करा देने से सन्तुष्ट था, उसका उत्तराधिकारी हैड्रियन हुआ जो पहले प्रदेशो पर स्वय शासन करता था। इस प्रकार प्रमुख शासन की शृखला टूटा नही । किन्तु इसी प्रकार धार्मिक परिवतन में क्रमबद्धता नियम नही, अपवाद ही है । और कोई एक एतिहासिक उदाहरण देना सम्भव नहा । इस अध्ययन के लेखक को एक भी ऐसा उदाहरण याद नही है, जिसमें देवता-मण्डल का कोई भी वडा देवता उस ईश्वर का अवतार बन गया हो जो सवशक्तिमान् प्रभु और सबका सजनकर्ता है । न तो थीबीज का अमोन रे, न बबिलोनी का मारदुक बेल, न ओलिम्पस का जीयुस अपने परिवतन-शील परदे के भीतर उस एक सच्चे ईश्वर का रूप दिखला सका । सीरियाई सावभौम राज्य में भी, जहाँ साम्राज्य के वग के लोग जिस ईश्वर की उपासना करते थे वह एसा नही था जो अनेक देवताओ को मिलाकर बना हा या जो राजनाति के अभिप्राय से गढ लिया गया हो । जिस देवता में एक सच्चे ईश्वर के लक्षण हा वह जरथुष्ट्रा का अहुरमजदा नही था, जो अकेमिनीदियो का देवता था । वह था येहोवा जा अकेमिनीदिया की साधारण प्रजा का देवता था ।

दोनो प्रतियोगी देवताओ का यह अन्तर और उनके अनुगामिया का क्षणिक अच्छा या बुरा भाग्य स्पष्टत बताता है कि सावभौम राज्य की राजनीतिक परिस्थिति में जो लाग उत्पन हुए उनकी अनेक पीढ़िया का धार्मिक जीवन ऐतिहासिक अध्ययन का विषय है । वे इस बात के भी उदाहरण ह कि भाग्या में कितनी जल्दी परिवतन होता है । इस विषय पर सिड्रेला की भाँति अनक लोक-कथाएँ बनी ह, साथ ही-साथ निम्नता या अस्पष्टताएँ ही ऐसी विशेषताएँ नही ह जिनक कारण देवना, विश्वव्यापकता तक उठे हा ।

जब हम यहोवा के चरित्र का दखते ह जसा उसका चित्रण पुरान बाइबिल में हुआ है, तो

१ डेनियल, ७, ९–१० ।

दो और बातें हमें दिखाई देती हैं। एक तो यह कि येहोवा स्थानीय देवता के रूप में उत्पन्न हुआ, शाब्दिक अर्थ में सेवक। यदि हम इस पर विश्वास करें कि पहले-पहल वह इसरायलियों में एक 'जिन' के रूप में आया जो उत्तर-पश्चिम अरब में एक ज्वालामुखी पर्वत में रहता था और उसे जगाये रहता था। कम-से-कम वह ऐसा देवता था जिसका एक विशेष जनपद की धरती से सम्बन्ध था और एक स्थानीय समुदाय के लोग उसके भक्त थे। और जब वह एफ्रेम और जूदा के पहाडी प्रदेश में गया जहां वह बबरा के योद्धा-समूह का सरक्षक था, जिसने चौथी शती ई० पू० में मिस्र के 'नये साम्राज्य' फिलस्तीनी राज्य पर आक्रमण किया। दूसरी ओर येहोवा ईर्ष्यालु देवता है। अपने उपासकों को उसकी पहली आज्ञा है 'सिवाय मेरे किसी दूसरे देवता की पूजा मत करो।' इसमें आश्चय नहीं होता कि एक साथ दोनों विशेषताएँ प्रान्तीयता और बहिष्कार वृत्ति येहोवा में पायी जाती है। वह देवता जो अपने ही राज्य में रहता है, दूसरों को चेतावनी दे सकता है कि इधर मत आओ। आश्चर्य इसमें है—और घृणास्पद भी है, कम-से-कम पहली दृष्टि में—कि अपने प्रतियोगियों के प्रति बहुत अनुदारता का भाव उसमें है जिससे वह उस समय लडने के लिए भी तैयार होता है जब इसरायल और जूदा के राज्य पराजित हो जाते हैं और सीरियाई सार्वभौम राज्य स्थापित होता है। यह पहले वाला दो उच्च भूमियो (हाइलैंड) का देवता विस्तृत संसार में प्रवेश करता है और अपने पडोसियों के समान यह चाहता है कि सारा मानव हमारी पूजा करे। सीरियाई इतिहास की इस विश्वव्यापक स्थिति में येहोवा की इस प्रकार की अनुदार भावना, जो उसे प्राचीन सकीर्णता से उत्तराधिकार में मिली थी, समय के विपरीत थी। यह उस युग की प्रचलित भावना के प्रतिकूल थी, जो यहोवा के समान और पहले के देवताओं में व्याप्त थी। यह अप्रिय असामयिकता उसकी विशेषता थी जिसके कारण उसे आश्चयजनक विजय प्राप्त हुई।

इस प्रान्तीयता और बहिष्कार वृत्ति के गुणों को अधिक ध्यान से देखना श्रेयस्कर होगा। पहले हम प्रान्तीयता पर विचार करें।

एक प्रान्तीय देवता को उस ईश्वर का अवतार समझना, जो सर्वव्यापक और अद्वितीय है, पहले विरोधाभास जान पडता है, जो बात समझ में नहीं आती। क्योंकि यह सच है कि ईश्वर की यहूदी, ईसाई और इस्लामी सकल्पना कबायली येहोवा से आयी है। जहाँ यह एतिहासिक तथ्य है साथ ही यह भी निश्चित है कि ऐतिहासिक उद्गम को छोडकर इनमें ईश्वर के सम्बन्ध में जो धार्मिक तत्त्व है और जो तीनों धर्मों में समान है वह येहोवा की प्रारम्भिक सकल्पना से बहुत भिन्न है। वह अनेक दूसरी सकल्पनाओं के समान है जिनके लिए यहूदी, ईसाई और इस्लामी इसके या तो बहुत कम ऋणी हैं या बिल्कुल ऋणी नहीं हैं। विश्वव्यापकता की दृष्टि से इस्लामी ईसाई-यहूदी धर्मों की ईश्वर की सकल्पना प्रारम्भिक येहोवा की कल्पना से बहुत भिन्न है। बल्कि कुछ उस उच्च देवता के समान है जैसे अमान रे या मारदुक-बेल जो एक प्रकार सारे विश्व पर शासन करता है। या यदि आध्यात्मिकता को आदर्श मानें तो इस्लामी-ईसाई-यहूदी सकल्पना दार्शनिक सम्प्रदायों के विचारों के अधिक अनुकूल है जैसे स्टोइक जीयूस या नव-प्लेटोनिक हीलिआस। तब क्या कारण है कि उस रहस्य-नाटक (मिस्ट्री प्ले) में जिसकी कथा-वस्तु मनुष्य के मन में ईश्वर की अभिव्यक्ति है, मुख्य भूमिका दिव्य हीलिआस

या साम्राज्यवादी अमोन रे को नही दी गयी, बल्कि बबर और प्रान्तीय देवता येहोवा को जिसकी योग्यता, ऊपर के वणन के अनुसार, अपने असफल प्रतियोगिया से स्पष्टत कम जान पडती है।

इसका उत्तर यहूदी ईसाई इस्लामी सकल्पना के एक तथ्य को याद करने पर मिलेगा, जिसका वणन हमने अभी नही किया। हमने सवव्यापकता और एक अद्वितीयता के गुणा पर विचार किया है। किन्तु इनकी अलौकिकता के बावजूद ईश्वरीय प्रकृति के ये गुण मानव की बुद्धि के ही परिणाम ह, ये मानव हृदय की अनुभूतियाँ नही ह। क्योकि जन समुदाय के लिए ईश्वर का मूल तत्त्व यह है कि वह सजीव ईश्वर है, जिससे जीवित मनुष्य अपना सम्बन्ध जोड सकता है और वह ऐसा है जिससे मनुष्य वही आध्यात्मिक सम्बन्ध स्थापित कर सकता है जो वह अपने साथी मनुष्या के साथ स्थापित कर सकता है। जो ईश्वर के साथ सम्बन्ध स्थापित करना चाहता है, उसके लिए ईश्वर का जीवित रूप में होना आवश्यक है। आज जिस प्रकार यहूदी, ईसाई और मुसलिम ईश्वर की उपासना करते है उसका मूल ईश्वर को व्यक्ति के रूप में मान कर है। यह यहोवा का भी मूल है जसा पुरानी बाइबिल में लिखा है। येहोवा के विशिष्ट लोगो की गर्वोक्ति है—'कौन मांस का शरीर वाला है जिसने आग में से सजीव ईश्वर की वाणी सुनी है, जसी हमलोगो ने, और जीवित है।'[1] जब इसरायल के इस सजीव ईश्वर की अनेक दाशनिको के विचारो से भेंट होती है तब स्पष्ट है कि ओडेसी के शब्दो में 'वही जीवित है और सब छाया है।' येहोवा के इस प्रारम्भिक व्यक्तित्व ने दाशनिका के बौद्धिक गुण बिना उनका ऋण स्वीकार किये ले लिया और उनका नाम लेने की भी ईमानदारी नही दिखायी और वह ईसाइया की सकल्पना का ईश्वर बन गया।

जीवित रहने वाला गुण यदि येहोवा की आदिम प्रान्तीयता का प्रतिवतन (आववस) है तो हमें यह भी पता चलेगा कि बहिष्कारिता भी येहोवा के चरित्र का स्थायी और आदिम गुण है और यह गुण उस ऐतिहासिक भूमिका में महत्त्व का है जो इसरायल के ईश्वर ने मनुष्य को अपनी ईश्वरीय प्रकृति के अभिव्यक्त करने में अदा की है।

यह गुण तब और भी स्पष्ट हो जाता है जब हम 'ईर्ष्यालु देवता' की अन्तिम विजय की तुलना दो पडास के महान् देवताओ की पूण पराजय से करते ह, जिन्होने आपस के सघष से सीरियाई ससार को टुकड-टुकडे कर डाला। तब हमें उसकी विशिष्टता मालूम होती है। चूकि ये धरती से बँधे हुए थे और जीवन के रस से परिपूण थे। अमोन रे और मारदुक-बेल दोनो येहोवा से लडाई में बराबर होते। उन्हें यह भी लाभ था कि थीबीज और बबिलोन पर सासारिक सफलता के कारण उन्होने अपने उपासको के हृदय में घर कर लिया था। और येहोवा उनका अपमानजनक बन्दी बनकर पडा रहा और जहाँ तक बन पडा, उस कबीली देवता के गुणो के प्रतिष्ठापन की चेष्टा करता रहा जिससे एसा जान पडता था आवश्यकता के समय अपने कबाल क लागा को छोड दिया था। उनके पक्ष में इस बात के होते हुए यदि देवताआ के युद्ध' में अमान रे और मारदुक-बल अन्त में बेतरह हार गये तो उनकी पराजय का कारण हम यही कह सकते ह कि वह यहोवा की ईर्ष्यालु प्रवत्ति की निर्लेपता ही थी। भला हो या बुरा इन नामा के बीच क डना में जा दो सश्लिष्ट देवताआ को जोडता है, बहिष्कारिता स स्वतन्त्र होने को

[1] ड्यूटरोनोमी ५, २६।

भावना सन्निहित है। इसमें आश्चय नही कि अमोन रे तथा मारदुक-बेल उसी प्रकार अपने ढीले बधन की सीमा के बाहर बहु देवतावाद (पोलीथीइज्म) के प्रति उदार थे, जिस प्रकार अपनी परिवतनशील अनेकता से। दोनो का जन्म इस प्रकार हुआ था—या अधिक ठीक यह होगा कि एक साथ लाये गये थे—कि वे अनेक जीवों पर, जो उनसे शक्तिशाली भले ही न रहे हो किन्तु जिनमें देवत्व तो उतना था ही, आदिम ढग के शासन से सन्तुष्ट रहें। इस आकाक्षा के जन्मजात अभाव के कारण उन्हे ईश्वरत्व के एकाधिकार की प्रतियोगिता से हट जाना पडा। येहोवा की घोर ईर्ष्या न उसे उस दौड में सबसे आगे बढ जाने को प्रेरित किया जिसमें सभी सम्मिलित थे।

प्रतियोगिया के प्रति यही निदय अनुदारता उस समय भी प्रकट हुई जब इसरायल का ईश्वर ईसाई धमतन्त्र का भी ईश्वर हुआ और उसने बाद के देवताओ के युद्ध म जो रोमन साम्राज्य के भीतर हुआ था, सब प्रतियोगिया का मार भगाया। उसके प्रतिद्वन्द्वी—सीरियाई मिथ्रा, मिस्री आइसिस और हत्ती साइबील—एक-दूसरे से, तथा और जो मत उनके सम्मुख आये उनसे समझौता करने के लिए तयार थे। यही आलस्यपूण समझौते वाली भावना 'टरटूल्यिन के ईश्वर' के प्रतियोगिया के लिए घातक थी, जब उन्हें एसे बरिया का सामना करना पडा जो 'पूण' विजय से कुछ भी कम से सन्तुष्ट नही थे। क्योकि यदि कम होता तो ईश्वर के लिए उसके मूल को ही अस्वीकार करना होता।

येहोवा की इस ईर्ष्यालु प्रकृति का सबसे महत्त्वपूण प्रमाण भारतीय ससार से नकारात्मक ढग से मिलता है। और देशो की भाँति यहा भी सामाजिक विघटन के साथ साथ धार्मिक धरातल पर एकता की भावना का विकास हुआ। भारतीय आत्माओ में ईश्वर के एकत्व को अनुभव करने की भावना तीव्र थी, और आन्तरिक सवहारा के करोडो देवता धीरे धीरे शिव या विष्णु में सम्मिलित हो गये। ईश्वर की एकता के बोध की राह की यह उपान्तिम मजिल पर कम से कम डेढ हजार वष पहले हिन्दू पहुँच गये थे। परन्तु इतना समय बीतन पर भी हिन्दू धम ने वह अन्तिम कदम नही उठाया जो सीरियाइ धम ने उठाया था कि एक भी प्रतिद्वन्द्वी को येहोवा ने सहन नही किया और अहूरमज्दा का सम्पूण रूप से निगल गया। हिन्दू धम में सवशक्तिमान् ईश्वर की सकल्पना में देवता एक नही किये गये। दो बराबर शक्तिवाले विरोधी, किन्तु पूरक देवताओ को हिन्दू धम ने एक दूसरे के प्रति सहनशील बना दिया है।

इस विचित्र परिस्थिति में हम यह पूछगे कि हिन्दू धम ने ईश्वर की एकता की समस्या को क्या इस प्रकार सुलझाया। यह समझौता कोई समाधान नही है। क्योकि ऐसी सकल्पना असम्भव जान पडती है कि कोई देवता सवव्यापक और सवशक्तिमान् हो—जसे शिव तथा विष्णु माने जाते ह और फिर भी वह एक न हो। इसका उत्तर यह है कि शिव और विष्णु एक दूसरे के ईर्ष्यालु नही ह। वे एक दूसरे के साझीदार होने म सन्तुष्ट ह और इसीलिए आज तक वतमान ह जब कि उन्ही के समान हेलेनी ससार के मिथ्र, आइसिस और साइबील समाप्त हो गये। इसका कारण यह है कि हिन्दू धम में उनसे लडने के लिए येहोवा नही था। हम इस परिणाम पर पहुँचते ह कि जब उपासको का देवता एसा हुआ है कि उसमें अनुदार बहिष्कारिता की भावना हुई है तभी उसके माध्यम द्वारा ईश्वर के एक होने की भावना मानव के हृदय में स्थापित हुई है।

(७) पुरातनवाद (आरकेइज्म)

हमने इस बात पर विचार कर लिया कि सामाजिक विघटनायुग समाज में जो आत्माएँ जन्म लेती हैं उनकी भावनाएँ और व्यवहार क्या होते हैं और उनका विकल्प क्या होता है। अब हम जीवन के उन वैकल्पिक ढंगों पर विचार करेंगे जो कभी ही पुरानी स्थायी परिस्थिति में उपस्थित होते हैं। हम उस विकल्प से आरम्भ करेंगे जिसे प्रारम्भिक सर्वेक्षण में हमने 'पुरातन' कहा था और इसकी परिभाषा की थी। यह वह अवस्था है कि लोग पुराने आनन्द के युग में लौट जाना चाहते हैं। संकटकाल में उस युग के लिए बार बार संताप होता है और जितना ही पीछे होते जाते हैं उतना ही अनतिहासिक ढंग से उस पर भक्ति बढ़ती जाती है।

> ओह! कितनी इच्छा होती है कि पीछे लौट चलूँ
> और फिर पुरानी राह को ग्रहण करूँ।
> कि फिर एक बार उस मैदान में पहुँचूँ
> जहाँ मैंने अपने महान् साथियों को छोड़ा था
> जहाँ से प्रबुद्ध आत्माएँ देख रही हैं
> पाम के पेड़ों की छाया वाला नगर
>
> कुछ लोग आगे बढ़ना चाहते हैं
> किन्तु मैं पीछे मुड़कर पीछे चलना पसन्द करता हूँ

इन पंक्तियों से सत्रहवीं सदी के कवि हेनरी वान ने प्रौढ़ व्यक्ति की अपनी बाल्यावस्था की स्मृति को व्यक्त किया है। यही भाव वल्टिटयूड भी व्यक्त करते हैं जो नयी पीढ़ी से कहा करते हैं तुम्हारे स्कूल के दिन जीवन के सबसे सुखमय दिन हैं। ऊपर की पंक्तियाँ पुरातन पंथियों के मनोभावों को व्यक्त करने के लिए भी उपयुक्त हैं जो समाज की प्राचीन अवस्था फिर से लाना चाहते हैं।

पुरातनवाद के उदाहरणों का सर्वेक्षण करने के लिए इस क्षेत्र को भी चार भागों में बाँटेंगे, जैसे संकीर्णता की भावना पर विचार करते समय हमने किया था। अर्थात् आचार, कला भाषा और धर्म। संकीर्णता की भावना स्वतः और अचेतन भावना से उत्पन्न होती है। और पुरातनवाद जीवन की धारा के विरुद्ध तरने के प्रयत्न के लिए आयोजित और जानी-बूझी नीति होती है। *वास्तव में यह एक असाधारण शक्ति होती है। इस कारण हम देखेंगे कि आचार* के क्षेत्र में पुरातनवाद स्वाभाविक आचार-व्यवहार न होकर औपचारिक संस्थाओं और रूढ़िवादी विचारों में अभिव्यक्त होता है और भाषा के क्षेत्र में शैली और विषयवस्तु के रूप में प्रकट होता है।

यदि हम संस्थाओं और विचारों का सर्वेक्षण करें तो सबसे अच्छी योजना यह होगी कि संस्थाओं के पुरातनवाद के उदाहरणों को ब्योरेवार देखें और तब पुरातनवादी मानसिक स्थिति का विस्तृत क्षेत्र में विस्तार करें और आदर्शवादी पुरातनवाद तक पहुँचें जो बहुत व्यापक होता है क्योंकि यह आदर्श सिद्धान्त पर बना होता है।

उदाहरण के लिए प्लूटार्क के समय जो हेलेनी सार्वभौम का उत्कर्ष काल था, आर्टेमिस ओरथिआ के सामने स्पार्टी बालकों को कोड़ा लगाया जाता था। स्पार्टा के यौवन काल में यह

दण्ड एक आदिम प्रसवन उपासना-पद्धति से लिया गया था और लाइक्रगियन खेल-कूद में सम्मिलित कर लिया गया था। उसे पुन विकृत अत्युक्ति के साथ आरम्भ किया गया। इस प्रकार की अत्युक्ति पुरातनवाद का लक्षण है। इसी प्रकार २४८ ई० में जब एक अराजकता के बाद, जिससे उसका क्षय हो रहा था, कुछ क्षण के लिए रोमन साम्राज्य को सास लेने का अवसर मिला सम्राट् फिलिप ने धर्म निरपेक्ष खेलो का उत्सव मनाया जिसे आगस्टस ने स्थापित किया था। दो साल बाद सेंसर की प्रथा फिर स्थापित की गयी। अपने ही समय में इटालियन फासिस्टो ने 'समवेत राज्य' (कारपोरेट स्टेट) की स्थापना की और बताया गया, यह इटली के मध्ययुगीन नगर राज्यों का ही प्रत्यावर्तन है। उसी देश में ई० पू० दूसरी शती मे ग्राची जनता का रक्षक बन बैठा। यह पद दो सौ साल पूर्व आरम्भ हुआ था। वैधानिक पुरातनवाद का एक सफल उदाहरण और है। रोमन साम्राज्य के सस्थापक आगस्टस ने अपने साझीदार सिनेट के प्रति सम्मान की भावना प्रदर्शित की। यह साझीदारी नाम की थी सिनेट रोमन शासन में सम्राट् के पहले की सस्था थी। इसकी तुलना हम ग्रेट ब्रिटेन के सम्राट के पार्लिमेंट के प्रति व्यवहार से कर सकते है, जो विजयी थी। दोनो उदाहरणो में शक्ति का हस्तान्तरण था। रोमन उदाहरण में अल्पतन्त्र (ओलिगार्की) से राजा को और ब्रिटेन म राजा से अल्पतन्त्र को। दोनो उदाहरणो में परिवर्तन प्राचीन उपचारों के आवरण से ढका था।

यदि हम विघटनोन्मुख चीनी ससार में देखे तो वहाँ व्यापक उद्देश्य का वैधानिक पुरातनवाद प्रकट होता दिखाई देगा जो सार्वजनिक से निजी जीवन तक फैला हुआ था। चीनी सकटकाल की चुनौती के समय चीनियो के मन में आत्मिक विक्षोभ उत्पन्न हुआ, जो पाचवी शती ई० पू० कनफ्युशियस के मानवतावाद में भी प्रकट हुआ और बाद के और क्रान्तिकारी 'राजनीतिज्ञो', 'सोफिस्टो' और वकीलो में प्रकट हुआ। किन्तु यह उद्वेग अस्थायी था। इसके बाद पुरातन के प्रति जुगुप्सा हो गयी। इसे हम स्पष्ट रूप से उस स्थिति में देख सकते हैं, जिसने कनफ्युशियस के मानवतावाद पर विजय पायी। मानव प्रकृति के अध्ययन के स्थान पर उसका पतन औपचारिक शिष्टाचार में हो गया। शासन के क्षेत्र में परम्परा यह हो गयी कि प्रत्येक शासन के कार्य के लिए ऐतिहासिक नजीर आवश्यक हो गयी।

सैद्धान्तिक पुरातनवाद का एक उदाहरण और दूसरे क्षेत्र में मिलता है। यह अधिकार काल्पनिक घुटनवाद का सम्प्रदाय है। यह आधुनिक पश्चिमी समाज के साधारण पुरातन रोमांटिकवाद के आन्दोलन का प्रदेशीय फल है। उन्नीसवी शती के कुछ अग्रेज इतिहासकारो को सन्तोष प्रदान कर और कुछ अमरीकी मानव-जाति विज्ञानियो को जातीय आत्माभिमान प्रदान कर, आदिम घुटन के काल्पनिक गुणो की पूजा जरमन देश के राष्ट्रीय समाजवादी आन्दोलन का धर्म बन गयी। हमें यहाँ ऐसा पुरातनवाद मिलता है जो बड़ा दुखदायी होता यदि वह इतना कुटिल न होता। एक महान् पश्चिमी राष्ट्र, आधुनिक युग के आत्मिक रोग के कारण, प्राय असाध्य राष्ट्रीय मृत्यु के समीप आ गया था और वर्तमान इतिहास की गति ने बहका कर उसे जिस जाल में डाल दिया था उससे बचने के जी-तोड प्रयत्न में वह उस काल्पनिक ऐतिहासिक अतीत के वैभवपूर्ण बर्बरता की ओर लौट गया।

बर्बरता की ओर लौटने के और पहलू का एक रूप है। रूसो का प्रकृति की ओर लौटने का और भद्र बर्बर' का प्रतिष्ठापन। अठारहवी शती के पुरातनवादी उस रक्त प्रियता के

उद्देश्य से अनभिन थे जो 'माइन कैंफ' में निलज्जता से वर्णित है । जहाँ तक रूसो फ्रास की क्रान्ति का कारण' था, और उन युद्धा का कारण जो इस क्रान्ति से हुए, इस सदभ, इन पुरातन वादिया की अनभिनता के कारण वे अहिंसक नही बने ।

पश्चिम के आधुनिक लोग कला में पुरातनवाद से इतने परिचित है कि उसकी अनिवायता व स्वीकार कर लेते ह । कलाआ में सबसे प्रत्यक्ष वास्तुकला है और हमारी उन्नीसवी शती की वास्तुकला को 'गोथिक पुनरुद्धार ने नष्ट कर दिया । यह आदोलन जमीदारो की सनक से आरम्भ हुआ, जिन्हाने अपने बागा में बनावटी 'खडहर' बनवाये और बड़े-बड़े घर ऐसी शली में बनवाये, जिससे मध्ययुगीन गिरजाघरो का प्रभाव दिखाई पडे । यह आन्दोलन गिरजाघरो तक पहुँचा और धार्मिक पुन स्थापन आरम्भ हुआ । जहाँ उसे पुरातनवादी 'आक्सफोड आदोलन' से बल प्राप्त हुआ और अन्त में होटलो कारखानो, अस्पताला और स्कूलो में भी इसी वास्तुकला का प्रचलन होने लगा । किन्तु वास्तुकला में पुरातनवाद पश्चिम के आधुनिक मानव की खोज नहीं है । यदि कोई लदन वाला कुसतुनतुनिया की यात्रा करे और इस्तम्बूल की पहाडियो पर सूर्यास्त की शोभा देखने लगे तो उसे मसजिदा के गुबद के बाद गुबद दिखाई पड़ेंगे जो उसमानिया शासन में बने हैं और जो बडी तथा छाटी हैगिया सोफिया के नमूने के अधानुकरण ह । ये दो बजतीनी गिरजाघर ह जिनमें क्लासिकी हेलेनी वास्तुकला के सिद्धाता की साहस के साथ अवहेलना की गयी है और जिनके निर्माण ने पत्थरा द्वारा घोषणा की थी कि मत हेलेनी ससार के ध्वसावशेष से परम्परावादी ईसाई सभ्यता के शिशु का आगमन हो रहा है । और अन्त में यदि हम हेलेनी समाज के 'भारतीय ग्रीष्म काल की ओर देखें तो हमें पता चलेगा कि सम्राट् हैड्रियन ने अपने गाँव व मकान में पुरातन काल की उत्कृष्ट हेलेनी मूर्तिया के प्रतिरूप गढवाकर सजाया था—यह बात सातवी तथा छठी ई० पू० की है । क्याकि उस काल के पारखी पूव रफाइली के जो फीडियाग और प्रक्साइटिली की उच्च कलाआ का मूल्याकन नही कर सकते थे ।

जब पुरातनवाद की आत्मा भाषा और साहित्य के क्षेत्र में पहुँचती है तब उसकी असाधारण शक्ति मरी हुई भाषा को सजीव करने की चेष्टा में लगती है, उसे वह जीवित जनभाषा बनाकर चलाना है । यही प्रयत्न आज हमारे पश्चिमी ससार में अनेक स्थाना पर हो रहा है । इस पतनामुख कार्य की प्रेरणा अलग रहने के राष्ट्रीयता के उन्माद से मिली है जो सास्कृतिक समथता का इच्छुक है । जो राष्ट्र स्वय सब प्रकार समथ होना चाहते ह और जिनके पास भाषा की साधनाओ का अभाव है वे पुरातनवाद की राह पकडते ह, क्योकि इस प्रकार बडी सरलता से वे भाषा को पा जाते ह जिसकी खोज में वे लगे रहते ह । इस समय कम-से-कम पाँच ऐसे राष्ट्र हैं जो अपनी विशेष राष्ट्रीय भाषा का निर्माण करने में लगे ह । वे किसी ऐसी भाषा को चलाना चाहते हैं जिसका बहुत समय हुआ प्रयोग बन्द हो चुका है और जिसका प्रयोग केवल साम्प्रदायिक क्षेत्रों में होता है । ये हैं नारवीजियन आयरिश उसमानिया तुर्क यूनानी और ज़ायनी

नारवीजियन राष्ट्र भाषा निर्माण करने की इसलिए आवश्यकता समझते हैं क्योंकि यह राजनीतिक घटना का परिणाम है। सन् १३९७ में नारवे के राजा मन्द पड़ गये, क्योंकि उसी साल नारवे डेनमार्क में मिल गया और १९०५ ई० तक उनकी सत्ता क्षीण रही। इस साल वह स्वीडेन से अलग होकर स्वतन्त्र राज बना। नारवे का अपना राजा हुआ जिसने आधुनिक बपतिस्मा किया, नाम चार्ल्स त्याग दिया और प्राचीन नाम हआक्न रख लिया। जो नाम ईसा की दसवीं से लेकर तेरहवीं शती तक अकालप्रसूत नारवीजियन समाज के चार राजाओं ने रखा था। उन पाँच शतियों में जब नारवे का राज्य डेनमार्क से मिला था, नार्स साहित्य के स्थान पर पश्चिमी साहित्य का एक रूप चला, जो डैनिश में लिखा जाता था, हाँ, उसका उच्चारण नारवे की जनपदीय भाषा के अनुकूल कर दिया गया था। जब सन् १८१४ में नारवे स्वीडेन के पास आया, तब वह अपनी निजी संस्कृति के निर्माण में लगा, किन्तु उसकी अभिव्यक्ति के लिए एक विदेशी भाषा को छोड़कर कोई माध्यम नहीं मिला। 'पेटोइस' के अतिरिक्त कोई मातृभाषा भी नहीं थी, और उसमें साहित्य का निर्माण नहीं हो सकता था। राष्ट्रीय जागरण में भाषा का इस प्रकार का अभाव देखकर उन्होंने एक स्थानीय भाषा का निर्माण करने का प्रयत्न आरम्भ कर दिया है जो ग्रामीण तथा नागरिक, देशी तथा संस्कृत सभी लोगों के व्यवहार में आ सकेगी।

आयरिश राष्ट्रवादियों के सामने समस्या और भी कठिन है। आयरलैंड में ब्रिटिश राज ने वही किया जो डनिश राज ने नारवे में किया। और भाषा सम्बन्धी परिणाम भी वैसा ही हुआ। आयरिश साहित्य की भाषा अंग्रेजी हो गयी। चूंकि अंग्रेजी और आयरिश भाषा का अन्तर दूर नहीं हो सकता, नार्स तथा डेनिश भाषाओं का अन्तर उतना अधिक नहीं है। आयरिश भाषा प्रायः समाप्त हो गयी है। आयरिश लोग पेटोइस' की भांति किसी चलती हुई भाषा का संस्कार नहीं कर रहे थे, बल्कि एक समाप्त हुई भाषा को पुनर्जीवित कर रहे थे जो आयरलैंड के पश्चिम की ओर फले हुए किसानों की समझ में नहीं आती क्योंकि वे गैल्कि भाषा ही माता की गोद से बोलते आये।

भाषा के जिस पुरातनवाद में उसमानिया तुर्क राष्ट्रपति मुस्तफा कमाल अतातुर्क के शासन में पड़े हुए थे वह दूसरे प्रकार का है। आधुनिक तुर्कों के पूर्वज आधुनिक अंग्रेजों के पूर्वजों की भाँति बबर थे। जो विघटित सभ्यता के त्यागे हुए ध्वंसावशेष में पहुँच कर जम गये। बबरों के ये दोनों वंशजों ने भाषा के निर्माण में वही किया जो सभ्यता ग्रहण करने में उन्होंने किया। जिस प्रकार अंग्रेजों ने अपनी क्षीण टयूटनी भाषा को फ्रेंच, लटिन और ग्रीक शब्दों और शब्दावलियों से समृद्ध किया है, उसी प्रकार उसमानलियों ने अपनी साधारण तुर्की को फारसी और अरबी भाषा के रत्नों से साजा है। तुर्की राष्ट्रवादियों ने भाषा के पुरातनवादी आन्दोलन को इस प्रकार चलाया है कि इन रत्नों को निकाल बाहर करें, किन्तु जब वे देखेंगे कि जो विदेशी शब्द उनकी भाषा में आये हैं वे इतने अधिक हैं जितने हमारी भाषा में (अंग्रेजी में)। तब वे समझेंगे कि यह साधारण काम नहीं है। जो भी हो भाषा के सम्बन्ध में भी इस तुर्की वीर ने वही ढंग अपनाया, जो उसने पहले अपने देश के सम्बन्ध में अपनाया था। सभी विदेशी तत्त्वों को अपने देश से निकाल बाहर करना। इस विकट संकटपूर्ण अवस्था में कमाल ने तुर्की से यूनानी और आरमीनियाई उच्च मध्यम वर्ग के लोगों को निकाला, जो पुराने थे और स्पष्ट देश के लिए आवश्यक थे। उसने यह सोचा कि इन लोगों के निकल जाने से समाज में जो

रिक्तता उत्पन्न होगी उसे पूर्ण करने के लिए तुर्क विवश होंगे और स्वयं वे सब कार्य करने लगेंगे जो अभी तक प्रमादवश उन्होंने दूसरों के कन्धों पर छोड़ दिया था। इसी सिद्धान्त पर गाज़ी ने बाद में फारसी-अरबी शब्दों को उस्मानिया तुर्की शब्द भण्डार से निकाला। इस उग्र कार्य ने प्रमाणित कर दिया कि मानसिक आलस्य मात्रा को भी किसी आत्मदर्शनात्मक बौद्धिक प्रेरणा मिलती है, जब वे देखते हैं कि हमारी जीवन की नित्य प्रति आवश्यकताओं के लिए हमारे मुँह और पास शब्द हैं। इस विषम परिस्थिति में कुछ लोग कमूस दलवार ही, आरखोन के अभिलेख, कुदगूर के गून, तथा चीनी पत्रावली के इतिहास में उन शब्दों को ढूंढ रहे हैं जो फारसी और अरबी के शब्द निकाल दिये गये हैं उनका वास्तविक तुर्की पर्याय प्राप्त करें।

अंग्रेजी पत्रकार के लिए इस प्रकार का शब्दों का चुनाव का प्रश्न प्रसन्न दिलासना मालूम होता है। क्योंकि वे डरते हैं कि यदि इस प्रकार की घटना कभी हुई और 'हमारे समाज के रक्षकों' 'शुद्ध अंग्रेजी' बनाने की सनक हुई तो बड़ा भयंकर भविष्य होगा। सच पूछिए तो इस प्रकार का प्रयत्न एक दूरदर्शी दौरान न किया भी है। तीस वर्ष के लगभग हुआ एक सज्जन ने जो अपने को सी० एल० डी० कहते हैं, एक पुस्तक प्रकाशित की। जिसका नाम है वर्ड बुक आफ इंगलिश टंग। यह उन लोगों के पथ प्रदर्शन के लिए है जो नारमन जूए का भार कन्धे से हटाना चाहते हैं, क्योंकि यह बहुत भारी लग रहा है। उनका कहना है— आज बहुत-से लेखक और वक्ता जिसे अंग्रेजी कहते हैं, वह बिल्कुल अंग्रेजी नहीं है, वह फ्रेंच है। सी० एल० डी० के अनुसार हम 'पराम्बुलेटर' को 'चाइल्डवन' और 'आम्निबस' को 'फोकवन' कहेंगे। किन्तु जब वह ऐसे विदेशी शब्दों को निकालने की बात कहते हैं जो बहुत पुराने हैं तब बहुत अनुपयुक्त जान पड़ता है। उनका प्रस्ताव है कि डिस अप्रूव के स्थान पर 'हिंग ... यू' या 'हूट' रखा जाय तो वह ठीक नहीं जँचता और स्वीकार करने को मन नहीं करता। और 'लाजिक' की जगह 'रीडी क्राफ्ट' 'रेटाट' की जगह 'बकजा' और 'एमिग्राट' की जगह 'आउटगगर' तो भद्दा और बहूदा मालूम पड़ता है।[1]

यूनानियों की स्थिति उसमानिया तुर्की साम्राज्य के साथ वैसी ही थी जैसी नारवीजियनों की डेनों के शासन में और आयरिशों की ब्रिटिश शासन में। जब यूनानियों में राष्ट्रीय चेतना आयी तब नारवीजियनों के समान उनके पास भी ग्रामीण जनबोली के अतिरिक्त कुछ नहीं था और सौ साल बाद आयरिशों के समान अपनी जन-बोली को अपनी पुरानी भाषा के शब्दों को मिला मिलाकर गढ़ने लगे। किन्तु इस प्रयोग में उनको एसी कठिनाई का सामना करना पड़ा जो आयरिशों को नहीं मिली। पुराने गलिक शब्दों का भाण्डार कम था, और क्लासिकी यूनानी भाषा का भाण्डार बहुत अधिक। सच पूछिए तो यूनानियों के सामने यह लालच था कि अधिक-से-अधिक शब्दों को वे लें और इसी लालच के जाल में वे फँस गये। और उन्होंने पुरानी भाषा से बड़ी उदारता से शब्दों का चयन किया। इसकी प्रतिक्रिया आधुनिक जन-साधारण में हुई। आधुनिक यूनानी भाषा 'शुद्धतावादियों की भाषा' और 'लोक भाषा' का युद्ध है।

१ जे० पी० स्क्वायर 'बुक्स इन जेनरल' में सी० एल० डी० की पुस्तक की पृ० २४६ में आलोचना है।

हमारा पाँचवा उदाहरण हिब्रू भाषा का नित्य की बोलचाल की भाषा मे प्रयोग का है। ह उन जायनिस्ट यहूदियो की भाषा है जो फिलस्तीन में बस गये ह। इसमें सबसे अधिक वशेषता है। क्योकि नारवीजियनो तथा आयरिशो में उनकी जनबोली मृत नहीं हुई थी, बोली ाती थी। फिलस्तीन में हिब्रू तेईस शतियो से मृत भाषा थी। उस समय उसका स्थान नेही-मया के पहले अरामाई भाषा ने ले लिया था। इतने समय तक और आज तक हिब्रू केवल हूदी धर्म में पूजा में प्रयोग होती रही है और वे विद्वान् इसका प्रयोग करते रहे है, जिनका म्बन्ध यहूदी कानून स है। और तब एक ही पीढी में यह मृत भाषा' यहूदियो के उपासना र से निकल कर पश्चिमी सस्कृति के सचारण का माध्यम बन गयी। पहले इसका प्रयोग र्वी यूरोप में यहूदियो के विनाश में समाचार-पत्रो में हुआ, फिर फिलस्तीन में घरो और स्कूलो ं। यहा यूरोप के यिड्डिश बोलने वाले आगन्तुक, अमरीका के अग्रेजी बोलने वाले आगन्तुक, मन के अरबी बोलने वाले आगन्तुक, बोखारा के फारसी बोलने वाले आगन्तुक, अपनी सामान्य ाषा समझकर इसका एक साथ प्रयोग करते है। वह भाषा ईसा की पीढी के पाँच सौ साल हले 'मर' चुकी थी।

यदि हम हेलनी ससार की ओर दृष्टि डाल तो हम देखेंगे कि यहा भाषा का पुरातनवाद वल सकीर्ण राष्ट्रीयतावाद का सहायक नही था, बल्कि अधिक व्यापक था।

यदि इन पुस्तको की ऐसी सन्दूक देखें जिनमें सातवी ईसवी शती तक की सारी पुस्तकें ूनानी भाषा में लिखी गयी रखी हो, और आज तक सुरक्षित हो तो हमें दो बातें देखने को मिलगी। पहली बात तो यह कि इस सग्रह में अधिकाश पुस्तकें एटिक (एथीनियनो द्वारा ोली जाने वाली) भाषा में लिखी है, कि यदि तिथिवार इन पुस्तको का वर्गीकरण किया जाय ो ये दो विभिन्न वर्गों में विभाजित की जा सकती ह। पहला वह जिसमें मौलिक एटिक साहित्य ह जो पाचवी और चौथी शती ई० पू० मे एथेन्स में अथीनियनो द्वारा रचा गया, जो अपनी स्वा भाविक भाषा में लिख रहे थ। दूसरा वग उन पुस्तको का होगा पुराने ऐटिक साहित्य का, जिसकी रचना ई० पू० अन्तिम शती से लेकर ईसा की छठी शती तक—छ या सात सौ वर्षों में हुई। ये उन लेखको की रचनाएँ ह जो न एथेन्स में रहते थे, न जिनकी भाषा एटिक थी। इन नव-लेखको का विस्तार उतना ही बडा है जितना हेलेनी सार्वभौम राज्य। क्याकि उनमें यरूश-लम क जोजेफस, प्रेनेसटे के एलियन राम के मारकस आरीलियम, सोमोसाटा के लूशियन और सिजारिया के प्रोकोपियस ह। किन्तु यद्यपि इन लेखको का उद्गम भिन्न है उनकी शब्दावली, उनकी पद-योजना, उनकी शली आश्चयजनक रूप से एक ढग की है, क्योकि ये सब निलज्जता था दासतापूवक एटिक साहित्य के सर्वोच्चकाल के अनुगामी ह।

उनके पुरातनवाद ने उनकी रक्षा निश्चित कर दी। क्योकि हेलेनी समाज के विघटन के समय प्रत्येक यूनानी लेखक का अस्तित्व उस युग के साहित्य की रुचि के अनुसार निर्णीत हो रहा था। लिपिका के सामने यह प्रश्न नहा था कि 'यह महान् साहित्य है।' वे यह देखते कि यह विशुद्ध एटिक है कि नही। परिणामस्वरूप हमें बहुत-सी पुस्तकें नव-एटिक साहित्य की मिलती है, जिन्हें हम बडी प्रसन्नता से केवल थोडे से उन खोये हुए अन-एटिक साहित्य से बदलने के लिए तयार है जो तीसरी तथा दूसरी शती ई० पू० में रचे गये।

हेलेनी साहित्य के पुरातन काल में केवल एटिकवाद के साहित्य की ही विजय नहीं हुई।

एक प्रकार की नकलची कविता भी कुछ पुरातनवादियों ने लिखी। दूसरी सदी ई० पू० में अपोलोनियस रोडियस से लेकर ईसा सन् की पाँचवीं छठी सदी में नानस पैनोपोलिटन तक यह सिलसिला चलता रहा। अलेक्जेंड्राइन[1] में यूनानी साहित्य के बाद की अ-पुरातनवादी रचनाएँ केवल दो प्रकार की हैं। तीसरी और दूसरी सदी ई० पू० के प्राचीन, जो पुरानी मूलवाली यूनानी भाषा के लिए सुरक्षित हैं, और ईसाई तथा यहूदी धर्मग्रन्थ।

यूनानी एटिक के पुनर्जीवित करने की पुरातनवाद के समान भारतीय इतिहास में संस्कृत के पुनर्जीवन का उदाहरण है। मूल संस्कृत उन यूरेशियाई खानाबदोश आर्यों की निराली बोली थी जो स्टेप को छोड़कर उत्तरी भारत, दक्षिण पश्चिम एशिया और उत्तरी मिस्र में दो हजार साल ई० पू० फैल गये। भारत में यह भाषा वेदों में सुरक्षित है जो भारतीय संस्कृति के मूलाधार हैं। किन्तु जब भारतीय सभ्यता पतनोन्मुख होकर विघटित होने लगी, संस्कृत प्रचलित भाषा नहीं रह गयी और क्लासिकी भाषा हो गयी, जिसका अध्ययन इसलिए होता है कि उसमें शाश्वत साहित्य भरा है। इस समय संस्कृत का स्थान अनेक स्थानीय बोलचाल की भाषाओं ने ले लिया। इन सबका स्रोत संस्कृत है, किन्तु उनमें प्रत्येक में इतना अन्तर है कि प्रत्येक स्वतन्त्र भाषा हो गयी है। इनमें से एक को प्राकृत एक की पाली—हीनयानी बौद्धधर्म-ग्रन्थों में व्यवहार किया गया, फिर उसका अशोक ने (२७२–२३२ ई० पू०) अपने घोषणाओं में प्रयोग किया। अशोक की मृत्यु के पश्चात् या कुछ पहले संस्कृत के पुनरुद्धार का कृत्रिम प्रयत्न आरम्भ हुआ और उसका विस्तार होता रहा। ईसा की छठी सदी तक नव-संस्कृत भाषा ने प्राकृतों पर विजय पायी और सारे देश में फैली। पाली केवल साहित्यिक कौतुकता के रूप में लंका में रह गयी। इस प्रकार हमारा प्रचलित संस्कृत वाङ्मय प्रचलित यूनानी वाङ्मय के समान दो भागों में है। एक पुराना भाग जो मौलिक है, एक नवीन जो अनुकरण किया गया है और पुरातनवादी है।[1]

भाषा और कला की भाँति धर्म के क्षेत्र में भी आधुनिक पश्चिमी सर्वेक्षक को पुरातनवाद मिलेगा जो अपने सामाजिक वातावरण में चल रहा है। उदाहरण के लिए ब्रिटिश एंग्लो कैथोलिक आंदोलन इस विश्वास पर आधारित है कि सोलहवीं शती का सुधार (रिफार्मेशन) बदले हुए अंग्रेजी रूप में भी, बहुत अधिक था। और इस आंदोलन का उद्देश्य यह है कि मध्य युगीन विचार और धार्मिक रीतियाँ पुनः स्थापित की जायें, जो चार सौ साल हुए, (इनके हिसाब से बिना विचारे) समाप्त कर दी गयी थीं।

हेलनी इतिहास में आगस्टस की धार्मिक नीति में हमें एक उदाहरण मिलता है।

राजधर्म का आगस्टस द्वारा पुनःस्थापित करना रोमन इतिहास में विशिष्ट घटना है, सम्भवतः सारे धार्मिक इतिहास में विशिष्ट है। शिक्षक वर्ग में पुरानी पूजा की उपयोगिता पर विश्वास हट गया था। सकर नागरिक पुराने देवताओं की खिल्ली उड़ाते थे और धर्म का बाहरी आचार नष्ट हो गया था। इसलिए हम लोगों को यह असम्भव जान पड़ता था कि ऐसे आचार और किसी सीमा तक, ऐसे विचार, केवल एक व्यक्ति की इच्छा से पुनर्जीवित किये जायें। इस बात को अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि यह पुनर्जीवन वास्तविक था

१ अलेक्जेंड्राइन एक प्रकार का पुराना यूनानी छन्द है।—अनुवादक

और देवता द्वारा शान्ति और ईश्वर की उपस्थिति एक बार फिर शक्तिशाली शब्द हो गये। पुराना धम कम-से कम तीन सौ साला तक चलता रहा और कुछ सीमा तक उस पर लोगा का विश्वास भी था।[1]

यदि हम हेलेनी समाज के सुदूर पूर्वी समाज की जापानी शाखा की ओर ध्यान दें तो हम देखेंगे कि वतमान काल में जापानियो ने आदिम मूर्ति-पूजा के एक स्थानीय स्वरूप को पुनर्जाग्रत करने का प्रयत्न किया है जिसे शिन्तो कहते ह। यह धार्मिक पुरातनवाद को चलाने का प्रयास है जो आगस्टस की धार्मिक नीति से और जरमना की ट्यूटनी मूर्तिपूजा को फिर से स्थापित करने के प्रयत्ना से मिलता-जुलता है। यह काय रोमन असाधारण शक्ति की अपेक्षा जरमन प्रयत्न के अधिक समान है। क्यांकि आगस्टस ने जा रोमन मूर्तिपूजा चलायी वह यद्यपि बहुत कुछ नष्ट हो गयी थी, फिर भी चालू थी। जापान में तथा जरमनी में पुरानी मूर्तिपूजा का धम हजार साल हुए समाप्त हो चुका था। जापान में उसका स्थान महायानी बौद्ध धम ने ले लिया था। इस आदोलन का पहला रूप शास्त्रीय था। क्यांकि शिन्तो के पुनर्जीवन का प्रयत्न पहले पहले एक बौद्ध भिक्षु केइचू (१६४०–१७०१) ने किया था। उसकी रुचि केवल शब्द शास्त्र की दृष्टि से इसमें थी। किन्तु दूसरो ने उसके काम को उठा लिया। हिराता आत्सुताने (१७७६–१८४३) ने महायान तथा कनफूशियस के धर्मों का विरोध यह कह कर किया कि ये दोना विदेशी ह।

ज्ञात रहे कि शिन्तो का पुनर्जावन आगस्टी पुनर्जीवन के समान उसी समय आरम्भ हुआ, जब जापान में संकटकाल समाप्त हुआ और वहा सावभौम राज्य बन गया। नव शिन्तो आ दोलन सघर्षात्मक रूप तक पहुँच चुका था, जब जापानी सावभौम राज पश्चिमी सभ्यता के आघात से समय से पहले चकनाचूर हो गया। सन् १८६७–६८ की क्रांति क समय जब जापान ने नयी नीति अपनायी कि पश्चिमी राष्ट्रीय ढग पर अपने को आधुनिक बनाकर अधपश्चिमीकृत महान् समाज में अपनी स्थिति वह दृढ रखे तब नव शिन्तो आन्दोलन उपस्थित हुआ और अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति में उसका निजत्व स्थापित करने की आवश्यकता की इसने पूर्ति की। नये शासन ने धम के सम्बध म पहला काम यह किया कि धम का राज्य धम बनाया। और एक समय ऐसा जान पडा कि बौद्ध धम जबरदस्ती समाप्त कर दिया जायगा। किन्तु सदा की भांति इतिहास में ऊँचे धम के वरिया ने देखा कि कितनी जबरदस्त शक्ति उसमें है। बौद्ध धम और शिन्तो धम को एक दूसरे को सहन करना पडा।

यदि पूण असफलता नही तो असफलता का वातावरण या निरथकता पुरातनवाद के चारो ओर व्याप्त रहती है। यह ऊपर के उदाहरणा में हमने दखा। इसका कारण ढूढने के लिए दूर जाने की आवश्यकता नही है। पुरातनवादी के लक्ष्य का ढग ही ऐसा है कि उसे प्राचीन और नवीन के साथ समन्वय करने की चेष्टा करनी पडती है। और दाना के अपने-अपने अधिकारा में असगति हाती है यही जीवन में पुरातनवाद की दुबलता है। पुरातनवादी दुविधा के सीगा के बीच हाता है, जिस ओर वह घूमा सीग उसमें घुसा। यदि वह वतमान को ध्यान में रखे बिना प्राचीन की स्थापना करना चाहता है तो जीवन की, जो सदा अग्रगामी है, शक्ति उसकी भगुर

१ डब्ल्यू वाड फाउलर द रिलिजस एक्सपीरिएन्सेज आव द रोमन पीपुल, पृ० ४२८ २६।

संरचना को चकनाचूर कर देगी। और यदि वह वर्तमान को कार्य रूप में लाना चाहता है और प्राचीन के पुनर्जीवन को वर्तमान के अधीनस्थ रखता है, तब उसका पुरातनवाद झूठा हो जाता है। दोनों परिस्थितियों में, अपने कार्य के अंत में पुरातनवादी को पता चलेगा कि मैं भविष्यवाद (फ्युचरिज्म) का खेल खेल रहा हूँ। समय के विपरीत वस्तु को स्थायी बनाने की चेष्टा में वास्तव में वह किसी ऐसी क्रूर नवीनता के लिए दरवाजा खोल रहा है, जो घुसने का अवसर पाने के लिए ताक में बैठी है।

(८) भविष्यवाद

भविष्यवाद और पुरातनवाद दोनों दुखदायी वर्तमान से अलग होने की चेष्टाएँ हैं। पृथ्वी पर के सांसारिक जीवन को छोड़े बिना दूसरी समय की सरिता में उछल कर कूदने की ये चेष्टाएँ हैं। ये दोनों प्रयत्न वर्तमान से बचने के हैं, किन्तु समय के आयाम से बच नहीं सकते। इन दोनों की असाधारण शक्तियाँ समान हैं, किन्तु परीक्षा के पश्चात् दोनों टूटी हुई आशाएँ ही हैं। इन दोनों का अंतर केवल दिशाओं का है। नदी के बहाव की ओर या उसके विपरीत। ये दोनों वर्तमान क्लेश से ऊबकर समय की सरिता में निराश होकर समान रूप से गोता लगाते हैं। साथ ही भविष्यवाद पुरातनवाद से अधिक मानव प्रकृति के विरुद्ध है। यह तो मनुष्य का स्वभाव है कि जब वह वर्तमान से ऊबे, तो प्राचीन की ओर शरण ले। किन्तु वह अप्रिय वर्तमान से चिपका रहना अधिक पसन्द करेगा, क्योंकि वह ज्ञात है इसके बजाय कि अज्ञात भविष्य की ओर जाय। इसलिए पुरातनवाद की अपेक्षा भविष्यवाद की मनोवैज्ञानिक शक्ति का स्वर अधिक ऊँचा होता है। और जिन लोगों ने पुरातनवाद लाने की चेष्टा की और विफल रहे उनकी आत्मा पर भविष्यवाद की धड़कन की प्रतिक्रिया होती है। भविष्यवाद से इसी प्रबल तर्क के अनुसार निराशा भी उत्पन्न होती है। कभी-कभी भविष्यवाद का कुछ परिणाम दूसरा होता है। भविष्यवाद कभी-कभी अपने से ऊपर उठकर किसी दूसरे रूप में परिवर्तित हो जाता है।

पुरातनवाद की दुर्घटना की उपमा यदि हम उस मोटरकार से दें जो सड़क पर अपनी राह पर फिसल कर पीछे मुड़ जाती है और विपरीत दिशा में जाकर टकरा जाती है तो भविष्यवाद के आनन्ददायी अनुभव की उपमा उस यात्री से दी जा सकती है जो मोटर से चालित गाड़ी पर सवार है और समझता है कि धरती पर गाड़ी चली जा रही है किन्तु यह देखकर भयभीत हो जाता है कि जिस धरती पर गाड़ी जा रही है वह अधिकाधिक ऊबड़-खाबड़ होती जा रही है और जब वह समझता है कि अब दुर्घटना अवश्यम्भावी है, गाड़ी एकाएक ऊपर उठ जाती है और खोह कन्दराओं से उठकर अपने हवा में चली जाती है।

पुरातनवाद की भाँति भविष्यवाद भी वर्तमान से अलग होना चाहता है। इसका हम अनेक सामाजिक क्षेत्रों के कार्यों में अध्ययन कर सकते हैं। सामाजिक आचार के क्षेत्र में भविष्यवाद का बहुधा वेश के सम्बन्ध में परिवर्तन होता है। परम्परागत पोशाक को छोड़कर विदेशी पहनावा धारण करते हैं और यद्यपि सतही ढंग से, फिर भी पश्चिमी समाज में व्यापक रूप से हम देखते हैं कि बहुत-से अ-पश्चिमी समाजों ने अपने पुश्तैनी और विशिष्ट पहनावे को छोड़कर अनाकर्षक विदेशी पश्चिमी वेश भूषा को अपना लिया है। जो इस बात का बाहरी

चिह्न है कि उन्होंने जान में या अनजान में पश्चिमी आन्तरिक सर्वहारा के साथ अपने को एक कर लिया है।

जबरदस्ती बाहरी पश्चिमीकरण का सबसे विख्यात और सम्भवत सबसे पुराना उदाहरण वह है जब पीटर महान की आज्ञा से रूसियो की दाढी मूड दी गयी और उन्हें कफ्तान (जामा) पहनने को मना कर दिया गया। वेश भूषा की इस रूसी क्रान्ति का अनुगमन उन्नीसवी शती के अंतिम चतुर्थाश में जापान ने किया और ऐसी ही अवस्था म इसी प्रकार की जबरदस्ती १९१४–१८ ई० पू० के युद्ध के बाद अनेक अपश्चिमी देशो ने की है। उदाहरण के लिए १९२५ का तुर्की का कानून है जिसमें यह आवश्यक कर दिया गया कि तुर्की का प्रत्येक पुरुष किनारे दार (ब्रिमवाले) हैट पहने और इसी प्रकार की आज्ञा ईरान के रजाशाह पहलवी ने निकाली और सन् १९२८ में अफगानिस्तान के बादशाह अमानुल्ला ने।

केवल बीसवी शती के इस्लामी देश ही नही ह जिन्होने किनारेदार हैट को सघपवादी भविष्यवाद का विशिष्ट चिह्न बनाया। १७०–१६० ई० पू० के सीरियाई समाज में यहूदिया के हेलेनीकरण के दल के नेता उच्च पुरोहित जेशुआ ने अपना नाम बदल कर जेसन रख दिया जो उसके कार्यक्रम का शाब्दिक सकेत था। किन्तु इसी से उसे सन्तोष नही हुआ। जिस विशेष कार्य की मक्काबियो में प्रतिक्रिया हुई वह यह था कि युवक पुरोहितो ने चौड़े किनारे की फेल्ट हैट अपने पहनने के लिए चुना। अकामीनियाई साम्राज्य के हेलेनी उत्तराधिकारियो के मूर्तिपूजक शक्तिशाली अल्पसख्यको का सिर का विशेष पहनावा था। भविष्यवाद के इस यहूदी प्रयास का अन्तिम परिणाम पीटर महान् की विजय के समान नही था बल्कि अमानुल्ला की भाँति हास्यास्पद विफलता हुई। क्योकि यहूदी धर्म पर सिल्यूसिड शक्तियो के स्पष्ट आक्रमण के कारण यहूदियो में हिंसात्मक प्रतिक्रिया हुई जिसका सामना एंटिओकस एफ्फिनीज़ और उसके उत्तराधिकारी नही कर सके। किन्तु भविष्यवाद का यह विशेष प्रयास विफल रहा, इसका अर्थ यह नही है कि यह उदाहरण शिक्षाप्रद नही है। भविष्यवाद की विशेष प्रकृति अधिनायक वाद है। जो यहूदी यूनानी चौडी हैट पहनता है वह यूनानी व्यायामशाला में शीघ्र ही जाना आरम्भ करेगा और अपने धर्म के नियमो को पोंगापन्थी पुरातन और मूर्खतापूर्ण समझेगा।

राजनीतिक क्षेत्र में भविष्यवाद अपने को भौगोलिक क्षेत्र में इस प्रकार व्यक्त कर सकता है कि जो सीमाएँ और भू चिह्न ह उन्हें जान-बूझकर समाप्त कर दे सामाजिक क्षेत्र में वर्तमान निगमो, दलो, धार्मिक सम्प्रदायो को विघटित कर देता है या सारे समाज को समाप्त कर देता है। भूचिह्नों और सीमाओ की व्यवस्थित ढग से मिटाने का क्लासिकी उदाहरण यूनान का है जब जान-बूझकर राजनीतिक अविच्छिन्नता को समाप्त करने के लिए सफल क्रान्तिकारी क्लेइसथिनीज़ ने ५०७ ई० पू० में अटिका का एक नया नक्शा बनाया। क्लेइसथिनीज़ का उद्देश्य था कि ढीली-ढाली राजनीतिक व्यवस्था को जिसमें समुदाय के स्वत्व के ऊपर वर्ग का स्वत्व था, समाप्त कर दे और एकात्मक (युनिटरी) राज्य स्थापित हो जिसमें सब प्रकार की भक्तियाँ गौण हो नागरिकता का दायित्व सबके ऊपर हो।

उसकी उग्र नीति विशेष रूप से सफल हुई और इस हेलेनी दृष्टान्त का अनुसरण पश्चिमी जगत् में फ्रास की क्रान्ति के नेताओ ने किया। चाहे जान-बूझकर इस हेलेनी पद्धति का अनुसरण किया अथवा स्वतन्त्र रूप से वैसे ही माध्यम को उन्होने अपनाया और परिणाम भी वैसा ही हुआ।

जिस प्रकार क्लेइसथिनीज का उद्देश्य अटिका को एक बनाने का था, उसी प्रकार फ्रेंच क्रान्तिकारियो ने पुराने सामन्ती प्रदेशो को समाप्त कर दिया और चुगी की सीमाओ को हटा दिया, जिससे देशभर एक आर्थिक क्षेत्र बन जाय और उन्हें शासन की सुविधा के लिए देश को तिरासी डिपार्टमेन्टो (प्रदेशो) में विभाजित कर दिया। ये सब बिल्कुल एक ढग के थे और केन्द्र के कठोर रूप से अधीन बना दिये गये थे, जिससे पुरानी स्थानीय विभिन्नताएँ और भक्तियो की स्मृति मिट जाय। जिन बाहर के प्रदेशो को नेपोलियन ने ले लिया था और अस्थायी रूप से नेपोलियनी साम्राज्य में मिला लिया था, उनकी सीमाओ को नये नक्शे में मिटा दिया गया। इससे इटली तथा जरमनी के एकात्मकता के राज्य के निर्माण में बहुत सहायता मिली।

हमारे समय में यही अभिव्यक्ति बोल्शविक प्रवृत्ति के भौगोलिक क्षेत्र में दिखाई देती है। इसमें सोवियत सघ के आन्तरिक भागो को फिर से नये रूप में परिवर्तित किया गया है। यदि हम नये शासकीय नक्शे को पुराने रूसी साम्राज्य के नक्शे के ऊपर रखकर देखें तो इसका पता चल जायगा। एक ही प्रकार के उद्देश्य के अनुसार काम करने में स्टालिन ने जिस चालाकी से काम किया उसमें वह अग्रगामी है। उसके पहले के लोगो ने अपने उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए अपने यहाँ के लोगो की स्थानीय राजनिष्ठा को दुर्बल किया, स्टालिन ने इसके विपरीत नीति का प्रयोग किया कि स्थानीय निष्ठा को सन्तुष्ट किया। उसने इस बात को पहले से सोच लिया था कि भूख पेट भर जाने से मर जाती है भूखा रखने से नही मरती। इस सम्बन्ध में याद रखने की बात है कि स्टालिन स्वय जार्जियन है। जब १९१९ में मनशेविक जार्जियनो का एक शिष्ट मण्डल पेरिस के शान्ति कानफरेन्स में गया और उसने अपने को अरूसी जाति बनाये जाने की माग की, उन्होने अपना दावा इस तर्क पर उपस्थित किया कि हमारी भाषा भिन्न है और साथ एक दुभाषिया लाये जिसका काम था कि इस विदेशी स्थानीय भाषा का फ्रेंच में अनुवाद करे। एक अग्रेजी पत्रकार जिसे जार्जियन नही जानते थे, वहाँ उपस्थित था। उसने बताया कि एक अवसर पर जार्जियन और उनका दुभाषिया रूसी में बात कर रहे थे। इससे परिणाम यह निकलता है कि आज का रूसी अपने से और अनजाने अपना राजनीतिक कामकाज रूसी में करेगा, जब तक रूसी जबरदस्ती उन पर लादी न जायगी।

धर्म के अतिरिक्त और सांस्कृतिक क्षेत्रो में भविष्यवाद की अभिव्यक्ति का प्रतीक पुस्तको का जलाना है। ऐसा कहा जाता है चीनी ससार के सम्राट क्रान्तिकारी सिन को ह्वाग-टी ने, जो चीनी सार्वभौम राज्य का सस्थापक था उन दार्शनिको की पुस्तकें जब्त करके जलवा डाली, जो चीनी सकट काल में हुए थे। उसे भय था कि उनके भयकर विचारो से उसके नये समाज के निर्माण का कार्य रुक जायगा। सीरियाई समाज में, खलीफा ऊमर ने, जिसने उस सीरियाई समाज का पुनर्निर्माण किया जो हेलनी आक्रमण के बाद एक हजार साल तक सुषुप्त था, एक सेनापति के पत्र का कहा जाता है, इस प्रकार का उत्तर दिया। सिकन्दरिया का नगर जब पराजित हो गया इस सेनापति ने लिखा कि पुस्तकालय का क्या किया जाय। खलीफा ने उत्तर दिया

यदि यूनानियो की पुस्तको के विचार ईश्वर की पुस्तक के विचारो से सहमत है तो उनकी रक्षा की कोई आवश्यकता नही है। और यदि असहमत है तो घातक हैं और उन्हें नष्ट कर

देना चाहिए ।' कथा के अनुसार उस पुस्तकालय की पुस्तकें जो नौ सौ वर्षों से एकत्र हो रही थी सावजनिक स्नानागारो में पानी गम करने के लिए प्रयाग में लायी गयी ।

हमारे युग में पुस्तकें जलाने में हिटलर ने भी, जो वह कर सकता था, किया । यद्यपि मुद्रण कला के आविष्कार हो जाने से इस प्रकार के नृशस काय पूण रूप से सफल नही हो पाते । हिटलर के समकालीन मुस्तफा कमाल अतातुक ने दूसरी सूक्ष्म पद्धति से काय किया । तुर्की अधिनायक का उद्देश्य था कि ईरानी सस्कृति, जो उत्तराधिकार म मिली है, लोगा के मन से जबरदस्ती हटा ले और पश्चिमी सस्कृति के साँचे में वह ढाली जाय । उसने पुस्तकें जलाने क स्थान पर वणमाला बदल दी । सन् १९२९ से सारी पुस्तका और समाचार-पत्रो को तथा कानूनी दस्तावेजो को लैटिन लिपि में छापना आवश्यक हो गया । इस कानून के पास होने से तथा बलपूवक उसका प्रयोग होने के कारण तुर्की गाजी को चीनी सम्राट् या अरब के खलीफा का अनुकरण नही करना पडा । फारसी, अरबी तथा तुर्की के क्लासिक नयी पीढी की पहुँच के बाहर कर दिये गये । पुस्तका के जलाने की समस्या नही रह गयी, जब उनकी लिपि बदल दी गयी जो उनकी कुजी थी । वे पुस्तकें अल्मारिया में सडने के लिए रख दी गयी, इस विश्वास के साथ कि मुट्ठी भर पुरातत्त्ववेत्ताओ को छोडकर उन्हें कोई स्पश भी न करेगा ।

धर्मेतर सस्कृति में साहित्य और विचार ही ऐसे क्षेत्र हैं जहाँ वतमान मे भविष्यत् ने प्राचीन की विरासत पर आक्रमण किया है । दष्टिपरक तथा श्रवणपरक और भी कलाओ के ससार ह जिन्हें भविष्यवाद पराजित करना चाहता है । वास्तव में दष्टिपरक कलाकारो ने ही 'भविष्य वाद' शब्द गढा है जिससे वे अपनी क्रान्तिकारी उच्च कलाओ को पुकारते हैं । किन्तु भविष्यवाद का एक कुख्यात रूप है जो दष्टिपरक कलाओ के क्षेत्र में व्याप्त है और धम में तथा धर्मेतर सस्कृति में समान रूप से पाया जाता है । वह है मूर्तिभजन (आइकोनोक्लाज्म) । मूर्तिभजन आधुनिक क्यूबिस्ट चित्रकारी के समथका के समान है, जो परम्परागत कला की शैली को अग्राह्य मानते ह । उसमें यह विशिष्टता है कि कला के विरोध का सम्बन्ध, धम से भी लगा देता है और उसके विरोध की भावना कला विषयक नही है धार्मिक है । ईश्वर के दृश्यमान प्रतिनिधि का विरोध मूर्तिभजक इसलिए करता है कि ईश्वर का या ईश्वर से नीचे के भी किसी प्राणी की मूर्ति नही बननी चाहिए जो मूर्ति पूजा को प्रोत्साहित कर सके, इस सिद्धान्त को लागू करने में केवल मात्रा का ही अतर रहा है । मूर्तिभजन का सबसे विख्यात समुदाय 'एकात्मवाद' का है जिसका प्रतिनिधि यहूदी धम है और उसके अनुकरण में इस्लाम । मूसा की दूसरी आज्ञा में यह कहा गया है

'तू कोई ऐसी मूर्ति न बनायेगा या उसके समान कोई चीज न बनायगा जो स्वग में है या जो धरती के नीचे पाताल में है या जो धरती के अदर पानी में है ।"

इसके विपरीत ईसाई धम में जो मूर्तिभञ्जक आदोलन चले वे अन्य इसी प्रकार के आदो

१ प्रकृति की वस्तुओ का अनुकरण करने के इस निषेध के कारण कलाकारों ने इस प्रकार की कला उपस्थित की जिसमें किसी का प्रतिनिधित्व नहीं है । इसी के लिए अराबेस्क शब्द का प्रयोग हुआ है ।—अनुवादक

रना से भिन्न थे और व ईसाई धम के अनुकूल बन गय । यद्यपि आठवी शती में परम्परावादी ईसाई धमतन्त्र में मूर्तिभजक आन्दोलन चला और सोलहवी शती में पश्चिमी ईसाई समाज में भी यह आन्दोलन चला, एसा जान पडता है कि आठवी शती में इस्लाम के उदाहरण न प्रभावित किया और सोलहवी शती में यहूदियो के उदाहरण ने, फिर भी दृश्यपरक कलाओ को पूर्णत इन्होने नही त्यागा । ईसाइयो ने यह आक्रमण धर्मेतर क्षेत्रो पर नहीं किया । धार्मिक क्षेत्र में भी कट्टर मूर्तिभजक विचित्र समझौते पर राजी हो गय । तीन आयामो के प्रतिरूपो को उन्होने इस स्पष्ट शत पर निषध किया कि दो आयामो के प्रतिरूप स्वीकार किय जायेंगे ।

(९) भविष्यवाद की निजी अनुभवातीतता (द सेल्फट्रान्सेन्डेन्स आव फ्यूचरिज्म)

सम्भव है कि राजनीतिक क्षत्र में भविष्यवाद को कभी सफलता मिल जाय जो लोग इस जीवन को माग बनाना चाहते ह उनके लिए यह ऐसा ऊसर है जहाँ जीवन के लक्ष्य की प्राप्ति नही हो सकती । यद्यपि खोज व्यथ और दुखदाई होगी फिर भी कुछ उसकी उपयोगिता होगी । क्योकि वह खोज करन वाला के निराशापूण चरणो को शान्ति की राह पर ल जा सकता है । भविष्यवाद अपने स्वाभाविक रूप में निराशा की योजना है इस पर भी कोई राह न मिलने पर यह एक राह है । क्योकि जब आत्मा वतमान से निराश हो चुकी है और सासारिक जीवन की उसकी भूख नही मिटी है तब वह पुरातन की समय-सरिता में गोता लगाती है । और जब पुरातन में पलायन की चेष्टा बेकार या असम्भव हो जाती है तब आत्मा भविष्यत् के कम स्वाभाविक राह को पकडती है ।

इस पवित्र—और उसी प्रतीक स पवित्र सासारिक—भविष्यवाद को कुछ उदाहरणो द्वारा व्यक्त किया जा सकता है ।

उदाहरण के लिए दूसरी शती ई० पू० के हलेनी ससार में हजारो सीरियाइयो और सस्कृत पूर्ववासियो की स्वाधीनता छीन ली गयी, वे देश से निकाल दिये गय परिवार स अलग कर दिये गये और सिसली तथा इटली में दास क रूप में उन खतो और चरागाहो म भेज दिये गय जो हैनिबली युद्धो में उजाड हो गय थे । इन निर्वासित दासो को जिन्हें वतमान से पलायन की अतीव आवश्यकता थी प्राचीन में जाने की कोई सम्भावना नही थी । इतना ही नही कि वे सशरीर अपने देश को नहा लौट सकते थे जो कुछ उन्होने अपने घरो को सुखी बनान के लिए किया था नष्ट हो गया । वह पीछे नही जा सकते थे आगे नही जा सकते थे इसलिए जब उन पर अत्याचार असह्य हो गया वे विद्रोह करने के लिए विवश हो गये । इन दासो के बड बडे विद्रोह उलटा रोमन राष्ट्रमण्डल स्थापित करने के हताश प्रयत्न थे जिनमे सम्प्रति दास स्वामी हो जायें और स्वामी दास हो जाय ।

सीरियाई इतिहास क और पहले के अध्याय में इसी प्रकार यहूदियो की प्रतिक्रिया हुई थी जब जूडा का स्वतन्त्र राज्य नष्ट हो गया था । जब नव-बबिलानी और अकेमीनियाई साम्राज्यो ने उन्हें निगल लिया और अयमिया (अयहूदियो) में व तितर बितर हो गये उन्हें यह आशा और विश्वास नही था कि हम फिर उस पुरानी अवस्था में पहुँचेंगे जिस स्थानीय स्वाधीनता में हम रहत थे । उन्हें ऐसी विश्वासजनक आशा नहा हो सकती थी कि जो अवस्था बीत गयी वह लौट आयगी और ऐसी परिस्थिति भी उनके अनुकूल नही थी, फिर भी व इस आशा को नही त्याग

सकते थे कि इस दुरवस्था से हम निकल जायेंगे। ये निर्वासित यहूदी यह कल्पना करने लगे कि भविष्य में ऐसा दाऊदी (यहूदी) राज्य स्थापित होगा जैसा यहूदिया के राजनीतिक प्राचीन इतिहास में कोई उदाहरण नही था। और ऐसे राज्य की कल्पना साम्राज्यो के युग में ही की जा सकती है। यदि नया दाऊद अपने शासन में सब यहूदिया का संयोजित कर ले—और इसके अतिरिक्त उसका क्या मिशन हो सकता है—तो सम्प्रति शासक से साम्राज्य की प्रभुता छीन कर वह कल जेरूसलेम को ससार का केन्द्र बनाये जसे बबिलोन या सूसा उस समय था। जेरुब्बबेल को भी विश्व पर शासन करने का वसा ही अवसर क्या न मिले जो दारा को था, या जूडास मक्काबियस भी एंटिओकस के समान और बार-कोकाबा हैड्रियन के समान क्या न राज करे।

इसी प्रकार का सपना किसी समय रूस के 'प्राचीन पथिया' ने देखा था। इन रासकोल निकिया की दृष्टि में जार पीटर का परम्परावाद हेय था। साथ-ही साथ यह कल्पना भी असम्भव थी कि धर्मेतर व्यवस्था के सामने, जो इस समय सवशक्तिशाली हो रही थी, और (पुरातन पथिया की दृष्टि में) शैतानी की, पुरानी धार्मिक व्यवस्था विजयी हो सके। इस कारण रासकोलनिकिया ने ऐसी बात पर आशा लगाया जो कभी हुई ही नही थी। वे सोचते थे कि किसी ऐसे जार मसीहा का अवतरण हो जो परम्परावादी धम को प्राचीन पवित्रता के साथ प्रतिष्ठापित करे।

विशुद्ध भविष्यवाद के इन उदाहरणा में एक समान गुण यह है कि जिन आशाओ का आश्रय इनके आदोलनकारियों ने लिया है वे सब वास्तविक तथा साधारण लौकिक रूप में हो सकते ह। यह बात *यहूदिया के भविष्यवाद में स्पष्ट है जिसका पर्याप्त लिखित प्रमाण* इतिहास में मिलता है। नेबुकदनजार के राज्य के विनाश के बाद जब जब उन्होंने देखा कि सावभौम राजनीतिक परिस्थिति के कारण ऐसा अवसर है कि नया यहूदी राज्य स्थापित हो सके बार बार उन्होने अपनी सम्पत्ति का उपयोग किया। कम्बाइसिस की मत्यु और दारा के आगमन के बीच अकामीनियाई साम्राज्य में थोडे काल के लिए अराजकता थी। उस बीच (सम्भवत ५२२ ई० पू०) *में जेरुब्बबेलने यहूदी राज्य स्थापित करने की चेष्टा की। इतिहास के बाद के* अध्याय में जब सेल्युकिड शक्तियो के ह्रास और लेवांट में रोमन सेनाओ के आगमन के बीच का अंत काल था, यहूदिया ने समझा कि मेकाबियो की विजय है, फिलस्तीन के यहूदी इस लौकिक विजय की मृगतृष्णा से इतने प्रभावित हो गये कि वे इस पवित्र परम्परा का त्याग देने के लिए तयार हो गये थे कि नये राज्य का संस्थापक कोई दाऊद का वंशज ही होगा जसा डियुटेरो *सायाा ने चार सौ साल पहले सोचा था।*

केवल सिल्युकिडा के विरुद्ध जो भी चाहे हो सकता था, किन्तु यहूदी रोम का सामना कसे कर सकते जब वह अपनी यौवनावस्था में था। इसका उत्तर इडयुमिया के अधिनायक हरार को दिन के समान स्पष्ट था। वह यह नही भूला था कि रोम की कृपा से फिलस्तीन का शासक हूँ और जब तक वह राज करता था, उसने अपनी प्रजाओ को उनकी मूखता के प्रतिशोध से रक्षा करने की तरकीब निकाल ली थी। परन्तु इसके विपरीत कि प्रजा कल्याणप्रद राजनीतिक शिक्षा देने के लिए अनुगृहीत होती उन्होंने उसे क्षमा नही किया और ज्योंही उसका बलशाली हाथ हटा, वे अपनी विपत्ति की ओर दौड पडे। फिर भी रोम का केवल एक प्रदशन पर्याप्त नहीं

हुआ। सन् ६६–६७ में भीषण अनुभव से फिर विपत्ति का बुलाने में ११५–१७ में ये गत चूके और फिर १३२–५ ई० में विनाश का आवाहन किया। छ सौ वर्षों में यहूदियो ने सीखा कि इस प्रकार का भविष्यवाद सफल नही हो सकता।

यदि यहूदियो की केवल इतनी कथा होती तो इसमें कोई रग नही था। यह केवल आधी कहानी है और भी कम महत्त्व वाली आधी। पूरी कथा यह है कि जहाँ कुछ यहूदियो ने न कुछ सीखा, न कुछ भूले, दूसरे यहूदियो ने वरवानो की भाँति, और कुछ पहले वाले यहूदियो की भाँति मनोवृत्ति बदल जाने के कारण अथवा कुछ आत्मिक ज्ञान के कारण जो उन्हें कटु अनुभव के कारण हुआ था, अपनी सम्पत्ति को दूसरे स्थानो में रखा। भविष्यवाद के घोषणा की अनुभूति के साथ-साथ उन्हें महान् ज्ञान यह भी हुआ कि ईश्वर के राज्य का अस्तित्व है। और नवियो से उनको यह दोनो अनुभव साथ साथ हो रहे हैं—एक नकारात्मक और दूसरा स्वीकारात्मक। उन्होने कल्पना की थी कि नये लौकिक राष्ट्र का सस्थापक शरीरी राजा होगा और वह ऐसा होगा जिसका वश चलेगा। परन्तु इस राज्य सस्थापक के लिए जिस पदवी की भविष्यवाणी की गयी थी और जेरूव-वबेल से लेकर वार-कोवावा तक प्रत्येक दावेदार को जिस पदवी से घोषित किया गया वह मालिक (राजा) नही था, मसीहा था—अर्थात् ईश्वर से दैवी अधिकार प्राप्त। इस प्रकार यहूदियो का देवता आरम्भ से यहूदियो की आशा से सबद्ध था, चाहे यह आशा परोक्ष में ही क्यो न रही हो। और लौकिक रूप निश्चयतापूर्वक लोप हो गया और सारे अन्तरिक्ष में ईश्वरी रूप व्याप्त हो गया।

किसी देवता को अपनी सहायता के लिए बुलाना कोई असाधारण बात नही है। यह धर्म के ही समान पुरानी प्रथा है कि किसी दुर्जेय कार्य के आरम्भ करने के पहले रक्षक देवता का आवाहन किया जाता है। नया मोड मसीहा की पदवी के अर्थ में जो व्यक्त होता है नहीं था, कि जनता के मानवी सहायक को देवता का बल प्राप्त है। जो नयी बात थी और महत्त्व की वह सरक्षक देवता के कार्य और शक्ति की प्रकृति में थी। विशेष दृष्टि से येहोवा तो यहूदियो का अपना देवता था ही, एक-दूसरे और विस्तृत रूप में वह ईश्वर का अधिकारी चित्रित किया गया। उत्तर नदी युग के यहूदी भविष्यवादी साधारण राजनीतिक प्रयास में नही लगे थे। उन्होने ऐसा कार्य करना ठाना था जो मनुष्य के लिए सम्भव नही था क्योकि वे अपनी छोटी स्थानीय स्वतन्त्रता को भी अक्षुण्ण नही रख सके, वे विश्व के स्वामी कैसे हो सकते थे? इस महान् कार्य में सफल होने के लिए कोई साधारण स्थानीय देवता उनका दैवी रक्षक नही हो सकता था, ऐसा देवता चाहिए था कि जो उनकी आकाक्षाओ के अनुकूल हो।

एक बार इसकी अनुभूति हो गयी तो अभी तक जो नाटक धर्मों के इतिहास में साधारण ढग का था आत्मिक आयाम में उसका उत्कर्ष हो जाता है। मानवी सहायक की भूमिका गौण हो जाती है और दृश्य में ईश्वर का प्रभुत्व हो जाता है। मानवी मसीहा पर्याप्त नही होता। ईश्वर को स्वय रक्षक की भूमिका में उतरना होगा। उसके जन का सहायक धरती पर स्वय ईश्वर का पुत्र होगा।

यदि कोई आधुनिक पश्चिमी मनोविश्लेषक ऊपर की पक्तियो को पढ़ता रहा होगा तो अपनी भौंहों को सिकोडेगा और कहेगा— आपने जिसे उदात्त आध्यात्मिक अन्वेषण बताया है वह और कुछ नही है केवल शिशुओ की वास्तविकता से पलायन करने की इच्छा के प्रति समर्पण है जो

मनुष्य के मन का सदा से प्रलोभन रहा है। आपने यह बताया है कि किस प्रकार कुछ दुखी लोग, जो मूखतावश ऐसी वस्तुओ को पाने का लक्ष्य बनाते है जा उन्हें कभी मिल नही सकती, अपने असम्भव काय के असह्य बोझ को दूसरे स्थानापन्न लोगो के कधे पर रख देते ह। पहले वे किसी मानवी सहायक को चुनते ह और जब उससे काम नही चलता, तब ऐसा कोई मानवी सहायक, जिसे काल्पनिक दैवी शक्ति का सहारा हाता है और अत में ये मूख हताश होकर अपनी रक्षा के लिए किसी काल्पनिक देवता का आवाहन करते ह जो स्वय इनका काय कर देगा। जो मनोविज्ञान से अभिज्ञ ह उसके लिए ऐसी मूख की पलायनवादी कथा परिचित और दुखदायी है।'

इस आलोचना के उत्तर में हम इस बात से सहमत ह कि उन सासारिक कार्यों को करने के लिए जिनको हमने चुना है और नही कर सके दवी शक्ति का आवाहन करना बच्चा का-सा काम है। यह प्रार्थना कि मेरी इच्छा पूण हो, स्वय इसकी निरथकता का प्रमाण है। इस विषय में यहूदियों की जो बात है, ऐसे यहूदी भविष्यवादियो का दल था, उन्हें यह विश्वास था कि येहोवा अपने उपासको के स्वय निर्धारित सासारिक कार्यों को अपने ऊपर ले लेगा और जसा हमने देखा इन यहूदी भविष्यवादियो का दुखद अन्त हुआ। उन उत्साहियो का नाटकीय ढग से आत्म हत्या हो गयी जिन्होने अपार सेना का सामना इस भ्रम से किया कि युद्ध के दिन समूह का स्वामी स्वय समूह के बराबर होगा। इसी के साथ विरागी दल था, जो इसी भ्रमपूण आधार पर विरोध में तक कर रहा था। उनका कहना था कि हमें किसी भी ऐसी बात में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए जिसका वारा-न्यारा हमने ईश्वर के सुपुद कर दिया है कि यह उसका काय है। किन्तु दूसरी दिशाओ से दूसरे रूप में प्रतिक्रिया हुई। जाहन बेन एक्काई के दल की प्रतिक्रिया और ईसाई धम की प्रतिक्रिया। ये दोनो प्रतिक्रियाएँ नकारात्मक बात म तो विरागियो के समान थी क्योकि अहिंसावादी थी, किन्तु विरागियो और उत्साहवादियो—दोनो से इनमें भेद था। महत्त्वपूण निश्चयात्मक रूप में यह अन्तर था कि इन्होने भविष्यवाद के पुराने सासारिक स्वार्थों की ओर से मुह मोड लिया था और अपनी सपदा को ऐसे ध्येय के लिए रखा जो मनुष्य नही ईश्वर के लिए है। और उसके लिए आत्मिक क्षेत्र में ही काय किया जा सकता है जिसमें ईश्वर सहायक नहीं, कार्यों का निदेशक होता है।

यह बात महत्त्व की है। क्योकि मनोविश्लेषक की उस आलोचना का उत्तर इसमे मिल जाता है जो उसने विरागियो और उत्साहियो दोनो के विरुद्ध की है। ईश्वर के आवाहन की, शैशव का पलायन कहकर भत्सना नही की जा सकती यदि मानवी अभिनेता अपनी शक्ति को (लिबिडो) सासारिक ध्येय से हटा लेता है। इसके विपरीत यदि आवाहन से इतना महान् और इतना सुन्दर आध्यात्मिक परिणाम निकलता है जैसा कि वह आत्मा, जो आवाहन करती है, चाहती है, तो यह स्वय सिद्ध हो जाता है कि जिस शक्ति को विश्वास करके पुकारा जाता है वह विश्वास केवल कपोल-कल्पना नही है। हम इस बात को मान लेंगे कि यह आध्यात्मिक पुनर्निर्धारण एक सच्चे ईश्वर का आविष्कार था। और मनुष्य ने सासारिक भविष्य के सम्बन्ध की जो कल्पना की थी उसका स्थान दूसरे ससार की ईश्वरीय अभिव्यक्ति ने ले ली है। सासारिक आशा जब भग्न हो गयी, तब हमें ऐसी वास्तविकता का ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त हुआ जो मनुष्य के बनाये रगमच के दृश्यो के पीछे सदा से रहा। मन्दिर का पर्दा दो टुकडो में फट गया।

अब हम इस महान् आध्यात्मिक पुर्ननिधारण की उपलब्धि में जो क्रम हैं उन पर कुछ विचार करेंगे। उसका मूल यह है कि जो सासारिक दश्य पहले मानवी अभिनेताओ का मच समझा जाता था, जिसमें ईश्वर सहायक था या नही, वह अब ईश्वर के राज के क्रमश आत्मज्ञान का क्षेत्र हो गया। जैसा कि समझा जा सकता है, पहले यह नया विचार पुरानी भविष्यवादी सकल्पना से प्राप्त आवरण से ढका रहता है। इस पष्ठभूमि के विपरीत डयुटेरो इसाया' ईश्वर के राज्य का चित्र बनाता है, जो स्वर्गिम तो है किन्तु उसके साथ लौकिक राज्य की कल्पना भी है, एक अकेमोनियाई साम्राज्य की कल्पना जिसमें उसके रक्षक नायक ने मूसा को छोडकर जरूशलेम को अपनी राजधानी बनाया है और जो परशियन यहूदी का राजकुल है। क्याकि येहोवा ने उसे यह आत्मज्ञान दिया है कि (अहूर मजदा नही) मने खुसरो (साइरस) को ससार के विजय करने में सहायता दी है। इस दिवा स्वप्न मे 'डयुटेरो इसाया मनोविश्लेषक की आलोचना के सम्मुख उग्र रूप में उपस्थित होता है। इस पगम्बर की सकल्पना सासारिक भविष्यवादी के विचारा से इस बात में आगे बढ जाती है कि मनुष्य तथा प्रकृति दोना चमत्कारी परमानन्द का अनुभव कर रहे ह। उसका ईश्वर का राज और कुछ नही है लौकिक स्वग है, एडेन उद्यान जो अद्यतन बना दिया गया है।

दूसरा क्रम आता है जब यह लौकिक स्वग केवल अस्थायी दशा समझी जाती है, जो शायद एक हजार साल[1] तक (मिलेनियम) रहे किन्तु निर्धारित समय के बाद ससार के साथ साथ उसका बीत जाना निश्चित है। किन्तु यदि यह ससार समाप्त होने वाला है और उसके स्थान पर आगे का ससार आने वाला है तब ईश्वर का राज्य उसी दूसरे ससार में होगा और जो राजा इस एक हजार साल तक शासन करेगा वह ईश्वर नही होगा केवल उसका प्रतिनिधि या मसीहा होगा। यह भी स्पष्ट है कि दूसरे ससार के आविर्भूत होने के पहले इस ससार म चमत्कारी मिलेनियम की सकल्पना उन विचारा में समझौता करने का असम्भव प्रयत्न है जो एक दूसरे से भिन्न ही नहीं, एक दूसरे के विरोधी ह। इनमें पहला विचार डयुटेरो इसाया का है जो कहता है कि भविष्यवाणी लौकिक राज्य में चमत्कारी सुधार होगे। दूसरा विचार यह है कि ईश्वर का राज्य समय से परे है और विभिन्न आध्यात्मिक आयामा में है। वह हमारे लौकिक जीवन में प्रवेश करता है और उसमें परिवतन कर सकता है। भविष्यवाद की मगतृष्णा से रूप परिवतन के दृश्य की ओर कठोर आध्यात्मिक चढाई करने के लिए मिलेनियम की प्रलय वाली योजना आवश्यक मानसिक सीढी हो सकती है किन्तु जब ऊँचाई पर पहुच गये तब सीढी गिरा दी जा सकती है।

फरीसी धर्मात्माओ ने हैसमानियना क शासन में इस ससार से स्वग की ओर और भविष्य की ओर अग्रसर होना मार्ग लिया था और हेरोद क शासन में विगत पीढिया में जो कुछ राष्ट्रीय भावनाओ का धागा था वे बडी शक्ति से अंधी दीवार से टकरा रहा था और उन्हें जान के लिए फरासियो को दिखाये हुए माग के अतिरिक्त कोई रास्ता न था। उसी जाति में जो कठोर

[1] इसी कारण साधारणत 'मिलेनियम' शब्द का प्रयोग किया जाता है, जिसका अभिप्राय है स्वण युग।'

आवश्यकता के बोझ से दबी हुई थी, यह अलौकिक विश्वास, मसीहाई आशाएँ जिनका पोषण फरीसी लोगो में हुआ था, नयी शक्ति से प्रसारित और प्रचारित हुई। फरीसी धर्म की जो पुस्तकें उपलब्ध है—एनक, द साम्स आव सालोमन, दि अजम्शन आव मोजेज—हमें बताती है कि इनके लेखकों के मन में क्या विचार थे। किन्तु वे उन बातों को नहीं बता सकती थी जो हम अपने धर्म-ग्रन्थों में पाते हैं। अर्थात किस प्रकार ये विचार लोगो में अच्छी तरह घुल मिल गये। किस प्रकार आने वाले सम्राट 'अभिषिक्त सम्राट' 'दाऊद के पुत्र', किस प्रकार पुनर्जीवन की कल्पना, दूसरा ससार, उन साधारण जातियो की साधारण मानसिक फरनिचर के अग थे जिन पर सम्राट के नाम टँगे हुए थे किन्तु जिस ईसा को ईसाई पूजते थे इनमें से किसी रूप का अग नही था जो इन भविष्यत के विचारों में उदय हुआ था। उसमें सारे पुराने आदर्श सारी पुरानी आशा मिल जुलकर एक हो गयी थी।"[1]

(१०) विराग और रूपान्तरण (डिटेचमेन्ट एण्ड ट्रान्सफिगरेशन)

भविष्यवाद और पुरातनवाद की समीक्षा से हम इस परिणाम पर पहुँचे है कि दोनो असफल हो जाते हैं क्योकि वे सासारिक समय सरिता के ऊपर उठे बिना वर्तमान से पलायन करने की चेष्टा करते हैं। हमने देखा है कि भविष्यवाद के दिवालियेपन से उस रहस्य का आभास मिल जाता है जिसे हम रूपान्तरण कहते है, एक महान ऐतिहासिक उदाहरण इस प्रकार का है भी। पुरातनवाद की विफलता द्वारा भी आध्यात्मिक आविष्कार सफलतापूर्वक हो सकता है। सम्भव है कि इस बात की सच्चाई का ज्ञान कि पुरातनवाद पर्याप्त नही है ऐसी चुनौती हो सकती है कि विफल पुरातनवादी विपरीत दिशा में भविष्यवाद की ढाल पर फिसल जाय। इसके विकल्प में ऐसा भी हो सकता है कि किसी नयी आध्यात्मिक दिशा में मुडकर वह इस चुनौती का सामना स्वीकार करे। और उसकी सबसे कम श्रम साध्य चेष्टा यह हो सकती है कि वह अपनी कुदान को, जो विनाश की ओर ले जा रही है ऐसी दिशा में बदल दे कि धरती पर गिरने की समस्या ही समाप्त हो जाय और वह सदा के लिए धरती का त्याग ही दे। यही विराग का दर्शन है, जिसे हमने बिना टिप्पणी के बिना यहूदी विरागियो के उदाहरण में बताया है।

पश्चिमी अनुसधानकर्ताओ के लिए इस दर्शन की सबसे परिचित व्याख्या लीब्ज फ्राम एस्टोइक फिलासाफर्स नोट बुक से प्राप्त होती है जो एपिक्टिटस तथा मारकस आरीलियस से हमें मिली है। किन्तु यदि हम विराग के सम्बन्ध में अधिक जानकारी प्राप्त करना चाहते तो हमें हेलेना को छोडकर भारतीय मार्गदर्शन की ओर जल्दी या देर में जाना पडेगा। जीनोके शिष्य बहुत दूर तक इस विषय में गये हैं किन्तु गौतम के शिष्यो का यह साहस हुआ कि विराग के अन्तिम तर्कसम्मत परिणाम आत्मोत्सर्ग तक ये पहुँचे। बौद्धिक उपलब्धि की दृष्टि से यह प्रभावशाली है, नैतिक उपलब्धि की दृष्टि से यह दुर्दम्य है। किन्तु इसका नैतिक परिणाम विकल कर देने वाला है, क्योंकि पूर्ण विराग दया को समाप्त कर देता है और इस कारण प्रेम को भी, उसी निष्ठुरता से जिस प्रकार वह सब अशिव आवेगो को त्याग देता है।

१ ई० बिवान जेरुसलेम अडर हाई प्रीस्ट्स पृ० १५८ तथा १६२।

'उस मनुष्य को जिसकी गति भी प्रेम और इच्छा से रिक्त है, जिसके कर्म ज्ञान की अग्नि में भस्म हो गये हैं, उसी को बुद्धिमान् लोग विद्वान् कहते ह । विद्वान् उनके लिए शोक नही करते जो मर गये हैं न उनके लिए जो जीवित हैं ।'[1]

भारतीय ऋषियो के मन म हृदय की यही विरक्ति दशन का कठोर मम है । हेलेनी दाशनिक भी स्वतत्र रूप से इसी परिणाम पर पहुँचे थे । एपिक्टिटस अपने शिष्यो को चेतावनी देता है 'यदि तुम अपने बच्चे को चूमते हो तो इस काय में अपनी कल्पना को बिना प्रतिबध के मत व्यवहार में लाओ और अपने आवेग को निरकुश मत छोड दो । सच तो यह है कि इसमें कोई हानि नही है यदि जब चूमते हो तो बच्चे के कान मे कह दो 'कल तुम मर जाओगे'[2] और सेनेका भी यह कहने में सकोच नही करता कि— दया मानसिक बीमारी है जो दूसरा के दुखो का दृश्य देखकर उमडती है दूसरे शब्दो में उसकी परिभाषा यह कर सकते ह कि यह निम्न कोटि की आत्माओ का सक्रामक रोग है जो दूसरा को दुख में देखकर पकड लेता है, जब रोगी यह समझता है कि यह दुख उसे नही होना चाहिए । बुद्धिमान् लोग इस प्रकार के मानसिक रोगो से ग्रसित नही होते ।[3]

तार्किक दृष्टि से यह परिणाम अनिवाय है किन्तु साथ-ही-साथ नतिक दृष्टि से असह्य है । विराग का दशन अपने ही कारण पराजित हो जाता है क्योकि वह हममें जुगुप्सा उत्पन्न करता है । जिस समस्या का समाधान करने वह चलता है उसका समाधान वह कर नही पाता क्योकि वह केवल मस्तिष्क से परामश करता है और हृदय का त्याग कर देता है, इस प्रकार इन दोनो को अलग कर देता है जिन्हें ईश्वर ने साथ रखा है । विराग का यह दशन रूपातरण के रहस्य स ढँका होगा ।

जब हम विघटन की उन्मुक्त राह के चौथे और अतिम मोड पर चलने को कमर कसते हैं, अस्वीकृति और उपहास की चिल्लाहट हमारे कानो में आती है । किन्तु हमें भयभीत नही होना चाहिए । क्योकि ये ऐसे दाशनिको तथा भविष्यवादियो की ओर से आती ह जो विराग की बौद्धिक दृष्टि स विचार करने वाले ह या राजनीतिक और आर्थिक भौतिकवाद के उत्साही लोग ह और हम पहले ही देख चुके हैं कि जो कोई भी सत्य हो ये मिथ्या ह ।

ईश्वर ने बुद्धिमानो को भ्रम में डालने के लिए मूखतापूण वस्तुएँ ससार में बनायी ह और ईश्वर ने शक्तिशाली वस्तुओ को भ्रांतिजनक बनाने के लिए दुबल वस्तुओ को बनाया है ।'[4]

जो सत्यता हम व्यावहारिक ज्ञान स प्राप्त कर सकते ह उसे अतर्ज्ञान से भी प्राप्त कर सकते ह । और उसके प्रकाश में तथा उसकी शक्ति म हम भविष्यवादियो तथा दार्शनिको की अस्वीकृति का एम पथ प्रदर्शको के चरण चिह्नो से हटकर, वीरतापूवक सामना कर सकते ह जो न शार बाबा ह न गौतम ह ।

१ भगवद्गीता ४,१६ तथा २,११—(बारनट का अनुवाद)

२ एपिक्टिटस डिसर्टेशन्स, पुस्तक ३, अध्याय २४, ८५–८ ।

३ सेनका डी० क्लेमन्शिया, पुस्तक २, अध्याय ५, ४–५ ।

४ कोर—१, २७ ।

'यहूदियो को एक चिह्न की आवश्यकता है और यूनानी बुद्धिवादी चाहते है, किन्तु हम शूली पर चढे ईसा का उपदेश करते ह, जो यहूदिया के लिए राडा है और यूनानिया के लिए मूखता ।'[1]

शूली पर चढे हुए ईसा भविष्यवादियो के लिए क्या उलझन है,जो अपने लौकिक कार्यों के लिए ईश्वरीय सहायता का कोई भी चिह्न प्राप्त करने में सफल नही हुए ? और क्या वह उन दाशनिको के लिए मूखता है, जिन्हाने कभी वह बुद्धिमत्ता नही पायी जिसे वे खोजते हैं ?

शूली पर चढ ईसा दाशनिक को इसलिए मूख ह क्योकि दाशनिक का उद्देश्य विराग है और वे इस बात को नही समझते कि काई समझदार आदमी जब एक बार उस अवरुद्ध लक्ष्य पर पहुँच गया, तब इतना पतित कसे हो सकता है कि उसे छोड दे जिसे इतने कठोर परिश्रम से उसने प्राप्त किया था । इसमें कौन बुद्धिमानी है कि पुनरागमन के लिए अलग हो जाय । और प्रवलतर युक्ति से—ऐसे ईश्वर की कल्पना से भ्रमित हो जायगा, जिसे इस असन्तोषजनक ससार से अलग हो जाने के लिए स्वय कष्ट भी नही करना पडा क्याकि वह अपने ईश्वरत्व के गुण के कारण उससे पूणत स्वतन्त्र है फिर भी वह जान-बूझकर ससार में आता है और उन लोगा के लिए, जो उसकी ईश्वरीय प्रकृति में बहुत निम्नकोटि के ह अधिक-से-अधिक उस यातना को सहता है, जो ईश्वर या मनुष्य भोग सकता है। 'ईश्वर ससार को इतना प्यार करता है कि उसने अपने पैदा किये एक ही लडके को उसे दे दिया ।' विराग ढूढने वाले के विचार से यह मूखता की पराकाष्ठा है ।

'यदि पूण अन्त में शान्ति है तो बुद्धिमान् मनुष्य का हृदय भय और इच्छाओ से स्वतन्त्र करने से क्या लाभ है जिनके कारण वह बाहरी बातो पर निभर रहता है, यदि सैकडो रास्ते तुरत खोल दिये जायँ जिनके द्वारा प्रेम और दया से उत्पन्न पीडा और अशान्ति उसके हृदय में प्रवाहित हा और इस प्रकार उसका हृदय चारा ओर के मनुष्यो के पीडित हृदया से सम्बन्ध स्थापित कर ले तो क्या लाभ होगा । सकडा रास्ते ? एक छेद सारी पीडा की धारा से हृदय को भर देने के लिए पर्याप्त है । किसी जहाज में एक छेद छोड दीजिए, सारा सागर उसमें भर जायगा । म समझता हूँ कि स्टोइक दाशनिक ने पूरी सत्यता का अनुभव किया था जब उन्होने कहा कि यदि थोडा भी प्रेम और करुणा का हृदय में जाने दिया तो ऐसी वस्तु का प्रवेश कराते हो जिसकी मात्रा पर नियन्त्रण नही हो सकता और आन्तरिक शान्ति की आशा फिर छोड देनी होगी ईसाइयो के आदश व्यक्ति को स्टाइक कभी बुद्धिमान् मनुष्य का उदाहरण नही मानेंगे ।'[2]

भविष्यवाद की राह में शूली की घटना बडी अडचन है क्योकि शूली पर की मृत्यु ईसा के इस कथन की पुष्टि करती है कि मेरा राज्य इस ससार का नही है । भविष्यवादी को जिस चिह्न की आवश्यकता है वह ऐसे राज्य की घोषणा है जिसमें सासारिक सफलता होनी चाहिए नही तो वह बेकार है । उसके हिसाब से मसीहा का काम वह हाना चाहिए जो ड्युटेरो इसाया ने खुसरा को सौंपा था और बाद के यहूदी भविष्यवादिया ने उस समय जूडास या थ्युडास का

१ कोर—१, २२–३ ।
२ ई० आर० बेवन स्टोइक्स एण्ड स्केपटिक्स, पृ० ६९–७० ।

सौंपा था, कोई जेरुब्बबल या साइमन मक्काबियस या साइमन बार-कोखाबा को जो सौंपा गया था।

ईश्वर युसुरो से, जो उसका अभिषिक्त सम्राट् है और जिसका दाहिना हाथ उसने पकड़ा है, कहता है, 'म तुम्हारे सामने जाऊँगा और टेढ़ स्थाना को सीधा करूँगा। म पीतल के फाटकों को तोड डालूगा, और लोहे के छड़ो को काट डालूँगा, अन्धकार में जो खजान रखे हैं तुम्हें म उनको दूँगा और छिपी सम्पत्ति मैं तुम्हारे हवाले करूँगा।'[1]

मसीहा की यह प्रामाणिक भविष्यवाणी सकल्पना का उस बन्दी के दावा से कसे मेल बैठ सकता है जिसन पाइलेट से कहा था 'तुम कहते हो कि म सम्राट हूँ और तब अपने उस राजकीय मिशन का विलक्षण विवरण बताया जिसके लिए उसका दावा था कि ईश्वर न मुझे भजा है। 'इसलिए पदा हुआ था और इस बात के लिए म ससार में आया कि सचाई की बात कहूँ।'

इन व्यग्र कर देन वाली बाता पर सम्भवत ध्यान न दिया जाय परन्तु अपराधी की मृत्यु का निराकरण नही हो सकता और न उसे सशोधित किया जा सकता है और पीटर की कठोर परीक्षा से पता चलता है कि यह अडचन कितनी दारुण थी।

ईश्वर का राज्य ईसा जिसका सम्राट है किसी एसे राज्य से नही नापा जा सकता जिसे ऐसे मसीहा ने सस्थापित किया हो जिसकी कल्पना अकामीनियाई विश्व विजता ने की हो जो यहूदी बन गया हो और भविष्य में जिसकी कल्पना की हो। जहाँ तक यह महान् देवता समय आयाम के अन्दर आता है वह भविष्य का स्वप्न नही है आध्यात्मिक वास्तविकता है जो वतमान में व्याप्त है। यदि हम पूछें कि पथ्वी पर किस प्रकार उसकी इच्छा की पूर्ति होती है जस स्वग में होती है, तो उत्तर धमशास्त्र की तकनीकी भाषा में दिया गया है। वह यह है कि ईश्वर सवव्यापक है इसलिए इस ससार में और उसमें रहने वाली प्रत्येक आत्मा में वह व्याप्त हो सकता है और स्वग में भी उसका अनुभवातीत अस्तित्व है। ईसाई धम की ईश्वर की सकल्पना में उसका अनुभवातीत रूप ईश्वर पिता का है और उसका व्याप्त रूप पवित्र आत्मा का है किन्तु ईसाई धम का सबसे विशिष्ट और प्रामाणिक लक्षण यह है कि ईश्वर द्वैत नही है त्रिगुट में एक है। और उसके ईश्वर पुत्र के रूप में एक व्यक्ति में दोना रूप मिले हुए ह। और इस रहस्य के कारण मनुष्य का हृदय उसके निकट पहुँच जाता है किन्तु मनुष्य की बुद्धि स वह परे है। ईसामसीह के व्यक्ति के रूप में—जो ईश्वर भी है और मानव भी ईश्वरी समाज और सासारिक समाज में वह समान सदस्य है जो इस ससार में सवहारा की कोटि में जन्म लेता है अपराधी की मौत मरता है जब कि दूसरे ससार में वह ईश्वर के राज्य का सम्राट है वह सम्राट् जो स्वय ईश्वर है।

किन्तु ये दोना प्रकृतियाँ—एक ईश्वरीय और दूसरी मानवी—एक व्यक्ति में रह सकती है? ईसाई धम पिताओ ने हेलेनी दाशनिका की तकनीकी भाषा में इसका उत्तर विभिन्न मतो को बताकर दिया है। किन्तु केवल यही दाशनिक ढग इसका उत्तर पाने का नही है। हम दूसरी अभिधारणा से आरम्भ कर सकते ह कि ईश्वरीय प्रकृति जहा तक वह हमारे लिए ग्राह्य

१ इसाया, १४, १–३।

सभ्यता के विघटन का पूरा चक्र यिन और याग के एक दूसरे के बाद आवागमन से होता है। पहली लय में विनाशकार याग क्रिया (विघटन) से यिन अवस्था (विराग) आती है। किन्तु लय यहाँ शात नही हो जाती। वह फिर सजनात्मक याग क्रिया (रूपातर) की ओर चलती है। इस विशेष रूप में यिन और याग की यह दोहरी गति अलगाव और पुनरागमन की साधारण क्रिया है जिसे हमने इस अध्ययन के आरम्भ में प्रयोग किया था। और उस समय हमने इसे भेद और पुनजन्म कहा था।

पुनजन्म के लिए यूनानी शब्द 'पलिजेनेशिया' है। इसका अथ है 'बार-बार जन्म होना, और इस शब्द में अनेकाथता है। क्या इसका अभिप्राय यह है कि ऐसी वस्तु का फिर से जन्म जिसका पहले जन्म हो चुका है जैसे किसी असाध्य विनष्ट सभ्यता के स्थान पर उसी जाति की दूसरी सभ्यता का आगमन ? हमारा यह अभिप्राय नही हो सकता क्योकि यह रूपातर का उद्देश्य नही है। यह उस क्रिया का उद्देश्य है जो समय-सरिता में सीमित है। वह न पुरातनवाद है न भविष्यवाद, जिस रूप में हम इन शब्दो का प्रयोग करते आये ह वह क्रिया एक ही शृखला की है। इस अथ में पुनजन्म अस्तित्व का चक्र होगा, जिसे बौद्ध दशन स्वीकार करता है और अलग होकर निर्वाण को प्राप्त करने की चेष्टा करता है। परन्तु पुनजन्म का अथ निर्वाण प्राप्त करना नही हो सकता क्योकि जिस प्रक्रिया से यह नकारात्मक स्थिति आती है उसे हम जन्म नही कह सकते।

किन्तु यदि पुनजन्म का अथ निर्वाण नही है तो उसका यही अथ हो सकता है कि एक पार लौकिक स्थिति प्राप्त हो जिसे जन्म का रूपक दिया जा सकता है क्योकि यह जीवन की निश्चित स्थिति है, यद्यपि इस ससार के जीवन से उसका आध्यात्मिक आयाम ऊँचा है। यही वह पुनजन्म है जिसके बारे में ईसा न निकोडेमस से कहा था

जबतक कि मनुष्य फिर से पदा न हो ईश्वर का राज्य वह नही देख सकता।'

और जिसके सम्बध में दूसरे स्थान पर अपन शारीरिक जन्म में कहता है—'म इसलिए आया हूँ कि लोगो को जीवन प्राप्त हो और उन्हें प्रचुर मात्रा में मिले।

जिस देवगीत को एक बार कविता की देवी ने एसक्रा के चरवाहे हेसिओद को सुनाया था, जब हलेनी सभ्यता का फूल खिल रहा था उसकी प्रतिध्वनि दूसर दवी गीत में सुनायी पडी जिसे देवदूता न बैतल्हम के चरवाहो का सुनाया था जब पतनोमुख हलनी सभ्यता अपने सकटकाल में अतिम पीडा झेल रही थी और जब उस पर सावभौम राज्य की मूर्छा आ रही थी। जिस जन्म का गीत देवदूत उस समय गा रहे थे वह यूनान के पुनजन्म का नहा था, और न हेलेनी जाति क दूसर समाजा के जन्म का। वह ईश्वर के राज्य के सम्राट के स शरीर जन्म का गीत था।

२० विघटन होने वाले समाज और व्यक्तियो का सम्बन्ध

(१) सजनात्मक प्रतिभा त्राता के रूप में

सभ्यताओ और व्यक्तियो के सम्बन्ध की समस्या पर हमने इस अध्ययन में पहले विचार किया है और हम इस परिणाम पर पहुँचे कि जिस सस्था को हम समाज कहते ह वह अनेक व्यक्तियो के समान कार्यों का क्षेत्र है, और यह भी, कि काय का स्रोत सदा व्यक्ति है जो एक दष्टि से प्रतिभा-सम्पन्न अतिमानव है, कि प्रतिभा वाला व्यक्ति दूसरी जीवित आत्माओ की भाँति उन कार्यों द्वारा अपनी अभिव्यक्ति करता है जिसका प्रभाव उसके साथिया पर पडता है, कि किसी समाज में सजनात्मक व्यक्ति थोडे अल्पसख्यक होते ह प्रतिभाओ का काय साधारण आत्माओ को कभी-कभी प्रत्यक्ष रूप से प्रकाशित करता है किन्तु साधारणत दूसरे प्रकार से जो सामाजिक अभ्यास होता है और जिसमें अनुकरण करने की शक्ति का प्रयोग होता है। ये असजनात्मक साधारण जन होने हैं और 'यन्त्रवत्' विकासोन्मुख होते ह। यह विकास वे अपनी प्रेरणा से नहा कर सकते थे। इन परिणामो पर हम विकास का विश्लेषण करते हुए पहुँचे और साधारणत किसी समाज की सब स्थितिया में समाज तथा व्यक्ति की यह क्रिया प्रतिक्रिया ठीक-ठीक उतरती है। इन पारस्परिक क्रियाओ के व्यार में क्या अन्तर हमें मिलेगा जब हम उस समाज पर विचार करेंगे जिसका पतन हो चुका है और विघटन हो रहा है?

वह सजनात्मक अल्पसख्या जिसमें से विकास की स्थिति में सजनात्मक व्यक्तियो का आविर्भाव हुआ था, अब सजनात्मक नहीं रह जाती और 'सुपुप्त' हो जाती है किन्तु सर्वहारा का समाज विच्छेद जो विघटन का प्रमुख चिह्न है सजनात्मक व्यक्तिया द्वारा पूरा हो गया। इन सजनात्मक व्यक्तिया के लिए विरोध के सगठन को छोडकर कोई काय करने की गुजाइश नही रह जाती और यह असजनात्मक शक्तिया के लिए दु स्वप्न की भाति डरावना होता है। इस प्रकार विकास से विघटन के काल में सजनात्मक चिनगारी बुझ नहीं जाती। सजनात्मक व्यक्तियो का उदय होता रहता है और अपनी सजनात्मक शक्ति के गुणो से वे नेतत्व ग्रहण किया करते हैं। किन्तु अब वे (विघटन के समय) अपना पुराना काय नये विशेषाधिकार से करते हैं। विकासोन्मुख सभ्यता में सजक को विजयी की भूमिका अदा करनी पडती है जो चुनौती का सामना विजता बनकर करती है विघटित होने वाली सभ्यता में उसे त्राता की भूमिका सम्पन्न करनी पडती है जो उस समाज की रक्षा के लिए आता है जो चुनौती का सामना करने में असमर्थ रहा क्योंकि अल्पसख्या सजनशील नही रह गयी, और चुनौती ने उसकी स्थिति और भी बदतर कर दी।

ऐसे त्राता उतने ढग के होगे जितने प्रकार के उपाया का वे सामाजिक रोग को दूर करने में प्रयोग करेंगे। कुछ विघटित होने वाले समाज के ऐसे त्राता होगे जो वतमान से निराश नही होगे और ऐसी चेष्टा करेंगे कि दीन निराशापूर्ण लोगा को आगे ले चलें और पराजय को विजय

में बदल। ये भावी त्राता शक्तिशाली अल्पसंख्यक लोग होंगे और उन सबकी विफलता म होगी कि अंत में वे रक्षा करने में विफल होंगे। एक भी त्राता होंगे जो विघटन शील समा 'में से होंगे जो उन चार सम्भावित राहों में पलायन करेंगे, जिनका वर्णन हम पहले कर चुके है, रक्षा का मार्ग खोजेंगे। जो त्राता इन चार राहों पर चलकर समाज की रक्षा करने का प्रयत्न करेंगे वे इस बात पर सहमत होंगे कि वर्तमान परिस्थिति का रक्षा नहीं हो सकती पुरातनवादी त्राता काल्पनिक प्राचीन की फिर से रचना करेगा। भविष्यवादी त्राता काल्पनिक भविष्य में कूदने का प्रयत्न करेगा। जो त्राता विराग की राह बतायेगा राजा के आवरण दार्शनिक होकर आयेगा, और जो त्राता रूपान्तरवाद की राह दिखायेगा वह मनुष्य के रूप देवता का अवतार बनकर प्रकट होगा।

(२) तलवार से सज्जित त्राता

विघटित होने वाले समाज का भावी त्राता निश्चय रूप से तलवार से सज्जित होगा तलवार खींची हुई हो या म्यान में हो। वह अपने चारों ओर लोगों को तलवार के घाट उतारता रहा हो या उसने तलवार को म्यान में रखकर कहीं भीतर रख दिया हो, वह राज करता है और उसने वैरियों का पूर्ण रूप से दमन कर दिया हो। वह कोई हरकुलीज हो कोई जीयूस हो कोई दाऊद हो या कोई सोलोमन हो। और यद्यपि कोई दाऊद या हरकुलीज, जो अपने श्रम को छोड़कर कभी आराम नहीं करता और कार्य में रत होता हुआ गत होता है, वैभवपूर्ण सोलोमन और प्रतापी जीयूस से अधिक रोमांटिक देख पड़ता हो, हरकुलीज के परिश्रम और दाऊद के युद्ध बेकार के परिश्रम होंगे यदि जीयूस की शान्ति और सोलोमन की समृद्धि उनका उद्देश्य न हो। तलवार का प्रयोग इस आशा से किया जाता है कि उससे भला होगा और भविष्य में इसकी आवश्यकता न होगी किन्तु यह आशा छलना है। जो लोग तलवार उठाते हैं सब तलवार के साथ नष्ट हो जायेंगे और उस त्राता के जिसने उस राज्य की घोषणा की जो इस संसार का नहीं है मत का खेदजनक समर्थन उन्नीसवीं शती के पश्चिमी राजमर्मज्ञों में से एक बड़े मानव द्वेषी यथार्थवादी ने किया। बाइबिल को अपने समय और देश की भाषा में अनुवाद करते हुए उसने कहा संगीनों से एक काम आप नहीं कर सकते उन पर बैठ नहीं सकते अहिंसावादी सच्चे दिल से अपनी हिंसा पर खेद भी प्रकट करे और उससे लाभ भी उठाये दोनों नहीं सम्भव है।

तलवार द्वारा रक्षा करने वाले वे सैनिक या राजा रहे हैं जिन्होंने सार्वभौम राज्यों को संस्थापित करने की चेष्टा की है अथवा संस्थापित करने में सफल हुए हैं या उन्हें पुनः प्रतिष्ठित करने में सफल हुए हैं और चूंकि संकटकाल से सार्वभौम राज्य की स्थापना में जितना समय लगता है उसमें इतनी अधिक तात्कालिक शांति मिल जाती है कि ऐसे राज्यों के संस्थापक देवता की भाँति पूजे गये हैं। किन्तु सार्वभौम राज जो भी हों अस्थायी हैं और यदि असाधारण शक्ति से वे अपने स्वाभाविक समय से अधिक जीवित भी रहे तो इस अस्वाभाविक दीर्घ जीवन का बदला उन्हें इस प्रकार चुकाना पड़ता है कि वे सामाजिक पाप बन जाते हैं और इस रूप में वे वैसे ही अनिष्टकारी हो जाते हैं जितना उनके पहले का संकट का काल या वह अन्त काल जो पतन के बाद होता है।

सच्ची बात यह है कि जिस तलवार ने एक बार रक्तपान कर लिया है उसे पुन रक्तपान से रोका नही जा सकता, जिस प्रकार शेर जब एक बार मनुष्य का मास चख लेता है वह मनुष्य भक्षी हो जाता है। मनुष्य भक्षी शेर एक दिन मरेगा, यदि गोली से बच गया तो खाल के रोग से मरेगा। किन्तु यदि शेर अपने विनाश को पहले से जान भी ले तब भी वह अपनी हत्याकारी भूख को रोक नही सकता। इसी प्रकार वह समाज है जो अपनी मुक्ति तलवार के माध्यम से खोजता है। उसके नेता अपने हत्याकारी कार्यों के लिए दुख प्रकट कर सकते है, सीजर की भाँति अपने वरियों पर दया दिखा सकते ह, *आगस्टस की भाति अपनी सेना को विघटित कर* सकते हैं और जब दुखपूर्वक अपनी तलवार को अलग छिपाकर रख देते ह, पूरी नेकनीयती से निश्चय करते ह कि फिर कभी हम उसे न उठायेंगे। केवल निश्चित कल्याण के लिए और उन अपराधियो को शमन करने के लिए हाथ में लेंगे जो अब भी सीमा पर स्वतन्त्रतापूर्वक घूम रहे है या उन बबरो के विरुद्ध जो बाहर अधकार म अनुशासनहीन बने बठे ह। यद्यपि यह देखने में सुदर सावजनिक शान्ति, *गडी हुई तल्वारा की क्रूर नीव। पर सौ-दो सौ साल तक चले* कतु शीघ्र या विलम्ब से समय उनका विनाश कर देगा।

क्या सावभौम राज्य का दवी शासक अधिक-से-अधिक विजय की अतप्त लालसा को शान्त कर सकता है, जो खुसरू के लिए घातक थी ? और यदि वह इस लालच पर नियन्त्रण नही कर सकता तो क्या वह वरजिल के उपदेश के अनुसार काय कर सकता है ? जब हम इन दोना प्रकारो से उसके कार्यों की परीक्षा करते ह तब वह बहुत दिनो तक अपने निश्चयो पर डटे रहने में असफल हो जाता है।

यदि पहल हम उस सघष पर विचार करे जो सावभौम राज्य तथा उसकी सीमा के बाहर के लोगो के प्रति विस्तार की नीति और अनाक्रमण की नीति के विकल्प में होती है तो हमें चीनी उदाहरण से आरम्भ करना चाहिए। क्योकि तलवार को म्यान में रखन का सबसे प्रभावकारी उदाहरण सिन शे हाग टी का है, जिसने यूरेशियन स्टेप की सीमा पर महान दीवार बनवायी। किन्तु उसका सुदर निश्चय कि यूरेशियन बर्रे के छत्ते को न छेडा जाय उसकी मत्यु के सौ साल के पहले ही टूट गया, जब उसक हैन उत्तराधिकारी वूती ने 'आग बढने वाली नीति' अपनायी। हेलेनी सावभौम राज्य में आगस्टस की स्थापित नर्मी की नीति को ट्राजन ने तोडा जब उसने पारथियन साम्राज्य को विजय करने की चेष्टा की। फरात से लेकर जेगरोस पहाड तक और फारस की खाडी के सिरे तक के अस्थायी बढाव का मूल्य यह हुआ कि रोमन साम्राज्य क साधना पर बडा बोझ पड गया और ट्राजन की तलवार ने जो विरासत अपने उत्तराधिकारी हैड्रियन को छोडी थी उसे चुकाने में उसकी अपनी सारी बुद्धि और योग्यता का प्रयाग करना पडा। हैड्रियन ने अपने पूवज के मारे विजयी प्रदेशो को खाली कर दिया किन्तु वह केवल धरती को युद्ध के पहल की स्थिति में ला सका। राजनीतिक स्थिति वह न आ सकी।

उसमानिया साम्राज्य के इतिहास में मुहम्मद द काकरर (१४५१–८१ ई०) ने सावभौम इस्लामी राज्य की लिप्सा ऐतिहासिक परम्परावादी ईसाई राज्य की सीमा तक रखी किन्तु रूस को उसम नही मिलाया और पडोसी पश्चिमी ईसाई राज्य को तथा ईरान को अपने राज्य में मिलाने के लालच का सवरण किया। किन्तु उसके उत्तराधिकारी सलीम द ग्रिम (१५१२–२० ई०) ने मुहम्मद के एशिया के त्याग की नीति को छोड दिया और इसका उत्तराधिकारी सुलमान

(१५२० ६६ ई०) और आगे बढ़ा और उस नीति को तोड़कर यूरोप की ओर बढ़कर उसने भयंकर भूल की। परिणाम यह हुआ कि इस समय से उसमानिया शक्ति दो सीमाओं पर युद्ध की चक्की में पिसने लगी। उसे ऐसे वैरियों का सामना करना पड़ा जिन्हें उसमानली या यांज रणक्षेत्र में तो हरा सकते थे, किन्तु शान्त नहीं कर सकते थे। यह विरूपी उसमानी राजनीति में इतनी गहरी घुस गयी थी कि सुलेमान की मृत्यु के बाद के पतन पर भी मुहम्मद की संयम की नीति की ओर ये लोग नहीं घूमे। उसमानिया साम्राज्य की बिखरी शक्ति को कोप्रोल्यूग ने एकत्र ही किया था कि कारा मुस्तफा ने उसे फिर से नया युद्ध करके नष्ट कर दिया। उसका उद्देश्य उसमानिया साम्राज्य की सीमा को राइन तक बढ़ाना था। यद्यपि वह इस उद्देश्य को पूरा नहीं कर सका, कारा मुस्तफा ने वियना पर घेरा डालकर सुलेमान के असाधारण कार्य की नकल की। किन्तु सन् १५२९ के समान सन् १६८२–३ में भी पश्चिमी ईसाई समाज के ड्यूबी कवच के स्वामी लोहे के चने हो गये जिन्हें उसमानिया सेना चबा नहीं सकी। इस दूसरी बार उसमानली के वंशज वियना से सुरक्षित होकर नहीं लौटे। इस दूसरे आक्रमण के परिणामस्वरूप पश्चिम से बदले में बराबर १६८३ से १९२२ तक आक्रमण होते रहे जिन्हें रोकने की कोई वास्तविक चेष्टा नहीं की गयी और इस अंतिम तारीख तक उसमानलिया का सारा साम्राज्य छिन गया और एक बार फिर वे अपने निवास केवल अनातोलिया में रह गये।

इस प्रकार पश्चिमी ईसाई जगत् के बर्रे के छत्ते को मूर्खता से छेड़कर अपने पूर्वज सुलेमान के समान कारा मुस्तफा ने वही क्लासिकी भूल की जो जरक्सीज ने की थी जब उसने यूरोपीय महाद्वीप में यूनान पर आक्रमण किया और इस प्रकार हेलेनिया को जवाबी आक्रमण के लिए उत्तेजित किया जिन्होंने अकामीनियाई साम्राज्य से एशिया के उसके यूनानी अंश को छीन लिया और जिससे उस साम्राज्य का भी विनाश हो गया। थेमिस्टोक्लीज के आरम्भ किये हुए इस विनाश के कार्य को सिकन्दर महान् ने पूरा किया। हिन्दू संसार के इतिहास में औरंगजेब के रूप में (१६५९–१७०७) जरक्सीज उत्पन्न हुआ जिसने सेना के बल पर महाराष्ट्रों पर अपना अधिकार बढ़ाना चाहा, जिसने महाराष्ट्रों को जवाबी आक्रमण करने के लिए विवश किया। उसके परिणामस्वरूप औरंगजेब के उत्तराधिकारियों का अधिकार हिन्दुस्तान के मैदान में क्षीण हो गया।

तलवार को म्यान में रखने की क्षमता की दो परीक्षाओं को हमने देखा कि सार्वभौम राज्य के शासक का कार्य-कौशल सुन्दर नहीं है। अब हम सीमा के बाहर के लोगों के प्रति अनाक्रमण की नीति को छोड़कर दूसरी परीक्षा पर विचार करें जो देश के अन्दर के लोगों पर उदारता की नीति है। हम देखें कि इस दूसरी परीक्षा में भी ऐसे शासक सफल नहीं होते।

उदाहरण के लिए रोमन साम्राज्य की सरकार ने यहूदियों के प्रति उदारता दिखाने का विचार किया और यहूदी छेड़ छाड़ पर भी अपने निश्चय पर दृढ़ रहे, किन्तु यह उदारता उस अधिक कठोर नैतिक कार्य के बराबर नहीं थी कि यहूदी अपधर्म (हेरेसी) के प्रति भी सहिष्णुता दिखायी जाय, जिस अपधर्म में वे हेलेनी संसार को परिवर्तित कर रहे थे। ईसाई समाज में जो बात रोमन शासन को असह्य थी वह यह कि वह शासन के इस अधिकार को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं था कि वे अपनी प्रजा को अपनी आत्मा के विरुद्ध करने को भी विवश कर सकते हैं। ईसाई लोग तलवार की सत्ता को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं थे और

अन्त में ईसाई शहीदों की आत्मा ने रोमन तलवार पर विजय पायी जिस पर टरटूलियन ने विजयपूर्ण गर्व से कहा था कि ईसाई रक्त ईसाइयों का बीज है।

रोमनों के समान आकेमीनियाइयों ने प्रजा के मतानुसार शासन करने का सिद्धान्त बनाया और अपनी नीति में केवल अंशतः सफल रहे। फोइनीशियनों और यहूदियों की आस्था प्राप्त करने में तो वे सफल हुए किन्तु मिस्री या बैबिलोनिया को वे सन्तुष्ट न कर सके। उसमानलियों को भी उनकी रिआया को सन्तुष्ट करने में सफलता नहीं प्राप्त हुई। यद्यपि उन्होंने मिल्लत प्रणाली में बहुत सांस्कृतिक तथा नागरिक स्वतन्त्रता भी दे रखी थी। इस सैद्धान्तिक स्वतन्त्रता को उस उद्दण्डता ने नष्ट कर दिया जिससे उसका प्रयोग होता था। ज्योंही उसमानिया साम्राज्य की कहीं-कहीं पराजय हुई, रिआया ने अपना विरोध आरम्भ कर दिया और यही कारण था कि सलीम द ग्रिम के उत्तराधिकारियों ने कहा (यदि यह कहानी सच है) कि दुख है कि सलीम को उसके प्रधान मन्त्री तथा शेखुलइस्लाम ने प्रजा के बहुसंख्यक परम्परावाले ईसाइयों को नष्ट करने से रोक दिया, जैसा कि उसने इमामी शियाई समुदाय को सचमुच नष्ट कर दिया था। भारत में मुगल राज के इतिहास में हिन्दू धर्म के प्रति अकबर ने जो उदारता की नीति साम्राज्यवाद के रहस्य के रूप में अपने वंशजों को दी थी उसे औरंगजेब ने त्याग दिया। इस प्रवृत्ति के कारण साम्राज्य का विनाश हुआ।

इन उदाहरणों से हमारा परिणाम और दृढ़ होता है कि तलवार को साथ लिये त्राता रक्षा नहीं कर सकता।

(३) समय-मशीन के लिए त्राता

'द टाइम मशीन' एच० जी० वेल्स की एक अर्ध-वैज्ञानिक पुस्तक का नाम है। उस समय इस बात की जानकारी हो गयी थी कि काल चौथा आयाम है। श्री वेल्स के उपन्यास का नायक एक ऐसी मोटरकार—उन दिनों यह भी नयी चीज थी—का आविष्कार करता है जो इच्छानुसार देश काल में आगे और पीछे जा सकती है। इस आविष्कृत गाड़ी पर संसार के इतिहास के गत कई कालों में वह क्रम से यात्रा करता है और सबसे अन्तिम को छोड़कर वह लौटकर आता है और यात्रा की कथा बताता है। वेल्स की यह काल्पनिक कहानी उन ऐतिहासिक असाधारण शक्तियों का रूपक है जो समाज की वर्तमान अवस्था और रुग्ण स्थिति को असाध्य समझकर आदर्श प्राचीन में लौटकर अथवा आदर्श भविष्य में जाकर उद्धार करना चाहते हैं। हम इस परिस्थिति पर अधिक विचार नहीं करना चाहते, क्योंकि हम इसका विश्लेषण कर चुके हैं और पुरातनवाद तथा भविष्यवाद दोनों की निरर्थकता सिद्ध कर चुके हैं। एक शब्द में ये टाइम मशीनें—वेल्स की कार के रूप में नहीं, जिसमें एक यात्री जाता है बल्कि सारे समाज के सर्ववाहन (आम्नीबस) के रूप में—काम नहीं कर सकती और इस विफलता के कारण भावी त्राता अपनी टाइम मशीन को अलग छोड़ देता है और तलवार लेता है और अपने को तिरस्कृत करके निराशा में, समर्पित कर देता है, जो चुपचाप बैठा रहता है कि तलवार वाले त्राता को वशीभूत कर ले जिनके बारे में हम अध्ययन कर चुके हैं।

पश्चिमी जगत् में ईसा की अठारहवीं शती में पुरातनवाद के सिद्धान्त को रूसो ने अपनी पुस्तक 'सोशल कंट्रैक्ट' के पहले वाक्य में रख दिया है "मनुष्य स्वतन्त्र पैदा होता है, किन्तु बराबर जंजीर में बंधा रहता है।" रूसो का सबसे विख्यात शिष्य रोब्सपीयर था, जो कहा जाता

है, सन् १७९३–४ में 'भीपण राज्य' का मुख्य नेता था। सरल सनकी प्रोफेसरो ने जिन्होने ईसा की उन्नीसवी शती को मूर्तिपूजक 'नारडिक' प्रजाति को आदर्श बनाने का प्रचार किया वे हमारे समय की नाजी विभीषिका के उत्तरदायित्व से अलग नही हो सकते। हमने देखा है कि पुरातनवादी आन्दोलन का शान्तिप्रिय नेता किस प्रकार हिंसक आक्रमणकारी के लिए रास्ता बनाकर अपने ही उद्देश्य को विफल कर देता है, जैसे टाइबीरयस ग्रैक्स ने अपने भाई गेयस का आवाहन किया और जिससे क्रान्ति की शती आ गयी।

पुरातनवाद और भविष्यवाद का अन्तर उतना ही स्पष्ट मालूम पडता है जो भूत कल और आगामी कल में। किन्तु यह निर्णय करना कठिन है कि किसी आन्दोलन को या त्राता को किस श्रेणी में रखा जाय क्योकि पुरातनवाद की पद्धति है कि वह इस भ्रम में कि इतिहास में प्राचीनता आ सकती है भविष्यवाद में कूद पडता है। परन्तु स्पष्टत ऐसा हो नही सकता। क्योकि यदि आप आगे बढ जाय और लौट आयें—यदि आप लौट आ सकते है—तो जिस स्थान पर आप लौट कर आते है वह भिन्न स्थान मिलेगा। रूसो के शिष्य 'प्रकृति की अवस्था' को आदर्श मानकर, या भद्र जगली की सराहना करके, या कला और विज्ञान की भर्त्सना करके क्रान्ति लाने में शीघ्रता ला सकते है किन्तु प्रबुद्ध भविष्यवादी क्रान्तिकारी जैसे कोडोरसेट, जिन्हें प्रगति के सिद्धान्तो से प्रेरणा मिली थी निश्चय ही अधिक दूरदर्शी थे। पुरातनवादी आन्दोलन का परिणाम सदा नया प्रयाण होगा। पुरातनवाद के सभी आन्दोलन भविष्यवाद की गाली (दवा वाली) के ऊपर के आवरण है। चाहे वह अभिलाषी विचार वाला की सरल कामना हो अथवा प्रचारवादियो की चतुराई हो। जो कुछ भी हो, गाली पर जब आवरण होता है तब सरलता से वह निगल ली जाती है, क्योकि भविष्य में अज्ञात भीषणता होती है और पुरातन खोया हुआ सुखद घर होना है जहाँ से पतनोन्मुख समाज भटकता हुआ वर्तमान में आ गया है। जैसे दोनो (यूरोपीय) युद्धो के बीच के वर्षों में एक प्रकार के समाजवाद के समर्थक मध्ययुग को आदर्श मानने वाले पुरातनवादी प्रकट हुए और उन्होने अपना कार्यक्रम श्रेणी समाजवाद (गिल्ड-सोशलिज्म) के नाम से उपस्थित किया और उनका यह सुझाव था कि इस समय मध्ययुगीन श्रेणी प्रणाली को फिर से स्थापित करने की आवश्यकता है। किन्तु हमें विश्वास है कि यदि इस प्रणाली को काम में लाया गया होता तो पश्चिमी ईसाई जगत् का तेरहवी शती का कोई टाइम मशीन का यात्री देखकर भौचक्का हो जाता।

यह स्पष्ट है कि पुरातनवादी भविष्यवादी त्राता समाज की रक्षा में उसी प्रकार असफल हो जाते है जिस प्रकार तलवार वाले त्राता लौकिक क्रान्तिकारी आदर्शवाद (यूटोपिया) में उसी प्रकार त्राण नही ला सकता जैसे सार्वभौम राज्यो में।

(४) राजा के आवरण में दार्शनिक

एक त्राण का कल्पना, जिसमें न टाइम मशीन की आवश्यकता है न तलवार की हेलेनी मस्तिष्क की पहली पीढ़ी में विराम की कला में सबसे कुशल और सबसे महान् हेलेनी द्वारा प्रचलित की गया था।

राज्यो (यूनान के) की बुराइयो कम होने की कोई आशा नही है और मेरी सम्मति में मानव मात्र की। यह केवल तभी सम्भव है जब राजनीतिक शक्ति और दर्शन में सहयोग हो। और उन साधारण लोगो को जबरदस्ती अयोग्य कर दिया जाय जो इनमें से किसी एक में कार्य

करते ह और दूसरे से अनभिज्ञ हा । यह सहयोग मेरी सम्मति में दो प्रकार सम्भव है । या तो दार्शनिक लोग हमारे राज्या के राजा हो जायँ या आज जो राजा और अधिपति कहे जाते हैं वे वास्तविक और पूण ढग से दार्शनिक हो जायँ ।[1]

इस औषधि का प्रस्ताव करते हुए अफलातून परिश्रम के साथ इसकी आलोचना का उत्तर देता है । क्योंकि वह समझता था कि उसकी आलोचना होगी । उसका प्रस्ताव विरोधाभास के समान है और अदार्शनिक इसकी हँसी उडायेंगे । किन्तु यदि अफलातून के उपचार को समझना साधारण आदमियो के लिए कठिन है—चाहे वे राजा हो या सामान्य जन—दार्शनिको के लिए इसका समझना और कठिन है । क्या दार्शनिक का लक्ष्य जीवन से विराग नही है और क्या व्यक्तिगत विराग और सामाजिक त्राण एक-दूसरे से इस सीमा तक असगत नही ह कि एक दूसरे के निषेधक हो । कोई कैसे विनाश होने वाले नगर की रक्षा कर सकता है जब वह उसमें स्वय अपनी रक्षा करने के लिए प्रयत्न कर रहा है ।

दार्शनिक की दृष्टि में आत्म-त्याग का अवतार—शूली पाया हुआ ईसा—मूर्खता का प्रतीक है । किन्तु बहुत कम दार्शनिकों को यह साहस हुआ कि इस विश्वास को प्रकट कर और उससे भी कम उनका जो इसके अनुसार काय करे । विराग की कला में कुशल व्यक्ति को जीवन एसे आरम्भ करना होगा कि वह सामान्य मानवी भावनाओं से पूण है । यदि उसका पडोसी कष्ट में है, जिसकी उसके हृदय में भी अनुभूति होती है, तो वह उसकी उपेक्षा नही कर सकता, न वह इस बात की उपेक्षा कर सकता है, जिस अनुभूति से उसे त्राण मिला है उसी से उसके पडोसी का भी उद्धार होगा, यदि उसको बल दिया जाय । तो क्या यदि हमारा दार्शनिक अपने पडोसी की सहायता करता है तो अपनी हानि होती है ? इस नैतिक द्विविधा में उसका इस भारतीय सिद्धान्त की शरण में जाना कि दया और प्रेम पाप है, बेकार है और अफलातून के इस सिद्धान्त का आश्रय लेना कि क्रिया ध्यान का दुबल रूप है निरथक है । और न वह इस बौद्धिक और नैतिक असगति के विश्वास पर चल सकता है जिसका दोषी प्लूटार्क स्टोइकों को ठहराता है । और जो उद्धरण देता है जिसमें क्रिसिप्पस एक ही पुस्तक में एक वाक्य मे क्षणिक विश्रान्ति (अकाडमिक लेजर) की भर्त्सना करता है और दूसरे वाक्य में उसकी अनुशसा करता है ।[2] अफलातून ने स्वय फतवा दिया है कि जो विराग की कला में पक्के हो गये हैं उन्हें फिर जीवन में कभी उस प्रकाश में जाने की आज्ञा नही मिलनी चाहिए जिसमे से प्रयत्न करके वे बाहर निकले ह । बहुत दुखी होकर उसने अपने दार्शनिको को पुन उस कन्दरा में उतरने का दण्ड दिया कि वे अपने अभागे साथी मानवो की सहायता करे जो दुख और यातना में बँधे पडे ह । और यह बात हृदय-स्पर्शी है कि अफलातून की इस आज्ञा का एपिक्युरियस ने अच्छी तरह पालन किया ।

जिस हेलेनी दार्शनिक का आदश पूण अविचलता था वह नजारेथ के पहले एक ही व्यक्ति था जिसे यूनानियो ने त्राता का नाम दिया था । यह सम्मान साधारणत राजनीतिक तथा सैनिक सेवको का एकाधिकार था । एपिक्युरियस को यह अभूतपूर्व विशेषता प्रदान की गयी

१ प्लेटो रिपब्लिक, ४७३ डी० ।
२ प्लूटार्क डी स्टोइकोरम रिपगननटिआइस, अध्याय २ तथा २० ।

उसका कारण उसको अपने हृदय की अनिवार्य पुकार थी जिसकी आज्ञा का पालन उसने आनन्द-पूर्वक किया । जिस कृतज्ञता के उत्साह से एपिक्युरियस के त्राण के कार्य की प्रशंसा ल्युक्रीशियस ने अपनी कविता में की है उससे स्पष्ट है कि कम-से-कम इस सम्बन्ध में यह पदवी केवल औपचारिक नहीं थी । यह गम्भीर तथा सजीव भावना की अभिव्यक्ति थी । यह भावना एपिक्युरियस के समकालीन लोगों द्वारा परम्पराबद्ध लटिन कवि तक पहुँची होगी ।

एपिक्युरियस का विरोधाभासपूर्ण इतिहास स्पष्ट कर देता है कि दार्शनिकों को अपने कंधों पर कितना दुखमय बोझ उठाना पड़ता होगा, यदि वे अफलातून के उपचार के इस विकल्प को अपनाते रहे होंगे कि दार्शनिक को राजा होना चाहिए । इसलिए आश्चर्य की बात नहीं है कि अफलातून के नुसखे का दूसरा विकल्प—राजाओं को दार्शनिक बनाने का—प्रत्येक दार्शनिक को जिसमें सामाजिक चेतना थी जिसमें अफलातून भी था, बहुत आकर्षणपूर्ण लगा । कम-से-कम तीन बार अफलातून अपने मन से, अपने ऐटिक आश्रम से निकलकर सागर पार कर साइराक्यूज गया कि सिसिली के एक निरंकुश शासक को अपनी कल्पना के अनुसार राजा का कर्तव्य पालन करने वाला राजा बनाये । इसका परिणाम हेलेनी इतिहास में विचित्र, किन्तु महत्त्वहीन है । ऐसे अनेक ऐतिहासिक राजा हुए हैं जिन्होंने अपने फालतू समय में दार्शनिकों से कम या अधिक गम्भीरता से, परामर्श किया है । इतिहास के पश्चिम के विद्यार्थी को इनमें सबसे प्रसिद्ध पश्चिमी जगत् में अठारहवीं शती के 'प्रबुद्ध निरंकुश शासक' मिलेंगे जो अनेक फ्रांसीसी दार्शनिकों के साथ, वाल्टेयर तथा उसके बाद औरों से कभी मुहब्बत करके, कभी उनसे लड़कर, अपना मनोरंजन करते थे । किन्तु हमें प्रशा के फ्रेडरिक द्वितीय या रूस की कैथरीन द्वितीय समुचित त्राता के रूप में नहीं मिलेंगी ।

ऐसे भी विख्यात शासक मिलेंगे जिन्होंने वास्तविक दार्शनिक शिक्षा उन गुरुओं से प्राप्त की है जो उनसे पहले गुजर चुके हैं । मारकस आरीलियस का कहना है कि हमने अपने गुरुओं, रसटिकस तथा सेक्सटस से शिक्षा ग्रहण की है किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि इन अज्ञात शिक्षकों ने प्राचीन महान् स्टाइकों के ज्ञान का केवल माध्यम का काम किया विशेषतः पेनेटियस के ज्ञान का, जो मारकस से तीन सौ साल ईसा के पूर्व दूसरी शती में हुआ था । भारत में अशोक बुद्ध का शिष्य था जो अशोक के शासक होने के दो सौ साल पहले मर चुके थे । अशोक का शासन भारत में और मारकस का शासन हलेनी जगत् में अफलातून के इस तर्क को प्रमाणित करते हैं कि सामाजिक सबसे सुखी और सामंजस्यपूर्ण होता है जब शासक की यह इच्छा नहीं होती कि शासक बनूँ । किन्तु इन शासकों की उपलब्धियाँ उन्हीं के साथ चली गयीं । मारकस का सारा दार्शनिक श्रम लुप्त हो गया क्योंकि उसने अपने पुत्र को अपना उत्तराधिकारी चुना, जो वैधानिक प्रथा के प्रतिकूल थी । वैधानिक प्रथा यह थी कि उत्तराधिकारी चुना जाता था और यह प्रथा सौ वर्षों तक सफलतापूर्वक चल रही थी । अशोक निजी रूप से पवित्र था । परन्तु यह पावनता कुछ न काम आयी और दूसरी पीढ़ी में पुष्यमित्र के एक ही प्रहार से राज्य नष्ट हो गया ।

इस प्रकार दार्शनिक शासक पतनोन्मुख समाज के जहाज पर से अपने साथियों की रक्षा करने में असमर्थ रहता है । जो तथ्य हैं वे सामने हैं । किन्तु हम यह देखेंगे कि उन तथ्यों से ही इसका स्पष्टीकरण होता है । यदि हम आगे और देखेंगे तो पता चलेगा कि हाँ, होता है ।

अफलातून ने रिपब्लिक में एक स्थान पर इसका संकेत किया गया है । जिसमें वह एक

राजा का वणन करता है जो जन्मजात दार्शनिक है । पहले वह यह अभिधारणा उपस्थित करता है कि किसी समय किसी स्थान पर ऐसा राजा जन्म लेगा और वह अपने पिता की गद्दी पर बैठेगा और तब वह अपने दार्शनिक सिद्धान्तो को व्यावहारिक रूप देगा । इसके बाद अफलातून इस निणय पर पहुँचता है कि 'एक भी ऐसा शासक पर्याप्त होगा, यदि अपनी प्रजा का समथन वह प्राप्त कर सके—तो वह अपने सारे कायक्रम को पूरा कर सकेगा जो वतमान परिस्थिति में असम्भव जान पडता है ।' आगे इस तक का उपस्थित करने वाला बताता है कि आशावाद का कारण क्या है । आगे चलकर वह कहता है—'यदि मान लिया जाय कि हमारा शासक आदश कानूनो को बनाता है और आदश सामाजिक परम्पराओ की स्थापना करता है तो यह बात सम्भावना की सीमा के बाहर नही है कि शासक की आज्ञाओ के अनुकूल ही उसकी प्रजा काय करेगी ।'[1]

अफलातून की योजना की सफलता के लिए ये अन्तिम प्रस्ताव स्पष्टत आवश्यक ह किन्तु वे अनुकरण की मन शक्ति पर भी निभर हैं । और हम पहले ही देख चुके ह कि इस प्रकार का सामाजिक अभ्यास एक प्रकार का सक्षिप्त उपाय है जिसके कारण अपने उद्देश्य पर शीघ्र पहुँचने के बजाय विनाश की ओर पहुँच जाते ह । दार्शनिक शासक की नीति की किसी प्रकार की जबरदस्ती चाहे वह शारीरिक हो या मानसिक, उसे असफलता प्रदान कर देगी और जिस त्राण के लिए वह चेष्टा करता है वह प्राप्त न होगा । और इस दृष्टि से हम उसकी नीति की परीक्षा कर तो हमें पता चलेगा कि उसकी जबरदस्ती विचित्र ढग से स्पष्ट है । क्योकि यद्यपि अफलातून कहता है कि दार्शनिक शासक के शासन में प्रजा की सहमति आवश्यक है, यह स्पष्ट है कि शासक दार्शनिक हो भी जाय तो उसे निरकुश राजा होने के कारण उसकी दार्शनिकता बेकार हो जायगी जब तक वह शारीरिक शक्ति की तैयारी न किये रहे क्योकि पता नही कब उसकी आवश्यकता पड जाय । जिस प्रकार यह तक समझने में स्पष्ट है उसी प्रकार यह भी स्पष्ट है कि यह परिस्थिति उत्पन्न हो सकती है ।

'लोगो का स्वभाव अस्थिर होता है किसी बात को करने के लिए उसे राजी कर लिया जा सकता है, परन्तु उसी बात पर दृढ रखना कठिन है । इसलिए यह उचित है कि इस प्रकार तयार रहना चाहिए कि इतनी शक्ति हो कि जब लोगो का विश्वास हट जाय तो जबरदस्ती उनको मनवाया जा सके ।'[2]

इस क्रूर कथन में मकियावली ने दार्शनिक राजा के काय-कौशल में ऐसी कुटिल बात कही है जिसे अफलातून ने जान-बूझकर गोपनीय रखा । यदि दार्शनिक राजा समझता है कि प्रेम से मेरा काम नही हो सकता तो वह अपने दशन का तिरस्कार करके तलवार से काम लेगा । मारकस आरीलियस ने भी ईसाइयो के प्रति ऐसा ही किया । एक बार फिर हम भीषण दृश्य देखते ह, ओरफयूज ड्रिल सारजट बन गया । सच बात तो यह है कि दार्शनिक राजा निश्चय ही असफल होगा क्योकि वह दो विरोधी प्रकृतियो का एक ही व्यक्ति में समावेश करना चाहता

१ अफलातून रिपब्लिक, ५०२ अ-ब ।
२ मकियावली द प्रिंस, अध्याय ६ ।

है। दार्शनिक, राजा के जबरदस्ती के क्षेत्र को अपनाकर अपने को प्रभावहीन बना देता है, और राजा दार्शनिक के आवेगहीन चिन्तन के क्षेत्र में प्रवेश करके अपने को प्रभावहीन कर देता है। जिस प्रकार 'टाइम मशीन' वाला त्राता अपने शुद्ध रूप में राजनीतिक आदर्शवादी है, उसी प्रकार दार्शनिक राजा अपनी असफलता प्रकट करता है, जब वह अस्त्र उठाता है और अपने को 'प्रच्छन्न रूप से त्राता' प्रकट करता है।

(५) मानव में ईश्वरत्व

हमने सृजनात्मक प्रतिभा के तीन अतिमानवों की परीक्षा की, जिन्होंने पतनोन्मुख समाज में जन्म लिया और जिन्होंने अपने बल और तेज को सामाजिक विघटन की चुनौती का सामना करने में लगाया, और प्रत्येक में देखा कि उसके त्राण के उपाय से शीघ्रता या विलम्ब से विनाश ही हुआ। उस भ्रम निवृत्ति से हम किस परिणाम पर पहुँचते हैं? क्या इसका यह अर्थ है कि पतनोन्मुख समाज के त्राण का प्रत्येक प्रयत्न विफल हो जायगा यदि उसका त्राता मनुष्य है? हमें उस क्लासिक कथन को स्मरण करना चाहिए जिसकी सत्यता अनुभव के आधार पर हम प्रमाणित करते चले आ रहे हैं अर्थात् 'वे सब लोग जो तलवार उठाते हैं तलवार के साथ नष्ट हो जायेंगे।' ये शब्द उस त्राता के हैं जिसने इसी कारण अपने एक अनुचर को फिर से तलवार को म्यान में रखने की आज्ञा दी जिसने तलवार खींची थी और उसका प्रयोग भी किया था। नजारेथ के ईसा ने पहले उस घाव को भरा जो पीटर की तलवार द्वारा हुआ था और फिर अपने शरीर को गहनतम अपमान और पीडा को झेलने के लिए समर्पित कर दिया। और यह भी स्मरण रखने की बात है कि उसका तलवार न उठाना इस कारण नहीं था कि इस विशेष अवस्था में उसकी शक्ति उसके वैरियों से कम थी। उसका विश्वास था जैसा कि उसने जजों से कहा था कि यदि मैं तलवार उठाता तो अपने देवदूतों की बारह अक्षौहिणियों से निश्चय ही वह विजय प्राप्त करता जो तलवार चलाने की कला से प्राप्त हो सकती है। यह विश्वास होते हुए उसने अस्त्र के प्रयोग से इनकार कर दिया। तलवार से विजय प्राप्त करने की अपेक्षा सूली पर चढ़ना उसने अधिक उत्तम समझा।

संकट के समय इस विकल्प के चुनने में ईसू ने उस परम्परा को तोड़ा जिसका उपयोग अन्य त्राताओं ने किया था जिनके सम्बन्ध में हमने अध्ययन किया है। इस महान् नयी विरोधी प्रवृत्ति की प्रेरणा ईसा को कैसे मिली? इसका उत्तर हमें एक दूसरे प्रश्न से मिलता है कि इसमें तथा अन्य त्राताओं में क्या अन्तर है जिन्होंने अपने दावों को छोड़ दिया और तलवार उठायी? इसका उत्तर यह है कि दूसरे जानते थे कि हम मनुष्य हैं और ईसा वह मनुष्य था जिसे विश्वास था कि मैं ईश्वर का पुत्र हूँ। क्या हम स्तोत्रकार डैविड के शब्दों में त्राण ईश्वर के हाथों में होता है—इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि जब तक मानवता को त्राण पहुँचाने वाले में किसी अर्थ में कुछ ईश्वरत्व न हो वह त्राता अपने मिशन को पूरा करने में अशक्त रहेगा। हमने उस पाखण्डी त्राताओं की परीक्षा की और देखा कि वे असफल रहे जो केवल मनुष्य रहे। अन्त में हम उन लोगों के सम्बन्ध में विचार कर जो देवता के रूप में हमारे सामने आये।

त्राता-देवताओं के जलूस की आलोचना करना और इसका मूल्यांकन करना कि जो होने का या करने का उनका दावा है वह कहाँ तक ठीक है हमारे अध्ययन के ढंग के अनुकूल नहीं है और अभूतपूर्व दुस्साहस जान पड़ेगा। किन्तु प्रयोग में कोई कठिनाई न होगी। क्योंकि हम

देखेंगे इन नाताओ के जलूस में एक व्यक्ति को छोडकर शेप में देवता बनने का जो भी दावा रहा है, मनुष्य बनने का दावा सदिग्ध है। हम छाया और कल्पनाओ में बक्ले की अयथार्थता में अपने को घूमता पायेंगे जिनका अस्तित्व अनुभव मात्र है। वे ऐसे व्यक्ति हैं जिनके सम्बन्ध में वही कहा जा सकता है जो आधुनिक खोज ने 'स्पार्टा के सम्राट लाइकरगस' के, जिनका अस्तित्व हमारे पूर्वज, एथेंस के सालन के समान ठोस और निश्चित समझते थे, सम्बन्ध में कहा है कि वह 'मनुष्य नही था, देवता था।' जो भी हो, हम आगे बढें। हम सीढी के सबसे नीचे के डण्डे से, जहाँ देवता अकस्मात् सहायता के लिए आता है सीढी के सबसे ऊँचे डण्डे तक चलेंगे जहाँ देवता को शूली दी जाती है। यदि शूली पर चढ़ना वह अन्तिम सीमा है जहा तक मनुष्य इस बात को प्रमाणित करने के लिए जा सकता है कि उसमें ईश्वरत्व है, तो मच पर प्रत्यक्ष होकर यह प्रकट करना कि मै देवता हूँ जो ससार का त्राण करेगा सबसे कम कष्टदायक कार्य है।

उस शती में जब हेलेनी सभ्यता का पतन हो रहा था, ऐटिक रगमच पर आकस्मिक देवता का प्रकट होना असमजस में पडे नाटककारो के लिए सामयिक सहायता हो जाती थी क्योकि ऐसे प्रबुद्ध काल में भी उन्हें अपने नाटक की कथा-वस्तु परम्परागत हेलेनी पुराणो से लेनी पडती थी। स्वाभाविक समाप्ति के पहले यदि नाटक में नैतिक दोष या व्यावहारिक असम्भावनाओ के कारण कुछ ऐसी उलझनें, कला की परम्परा का निर्वाह करने के कारण हो जाती थी, जिनमें से निकलना कठिन हो जाता था, तो लेखक कला की दूसरी परम्परा का सहारा लेता था। वह उलझन को दूर करने के लिए 'मशीन द्वारा' ऊपर से लटका कर मच पर देवता को ला सकता था या पहिये द्वारा मच पर ला सकता था। ऐटिक नाटककारो का यह कौशल विद्वानो के विवाद की अच्छी सामग्री बन गयी है। क्योकि इन आलिम्पियाई देवताओ द्वारा मानवी समस्याओ के हल करने की क्रिया से न तो मनुष्य की बुद्धि को सन्तोष होता है, न मनुष्य के हृदय को। उस विषय में यूरिपिडीज सबसे अधिक दोषी है। एक पश्चिमी विद्वान् ने सकेत किया है कि यूरिपिडीज जब मशीन द्वारा देवता को प्रकट करता है व्यग्य में बोलता है। वेरल के अनुसार तर्कवादी (ऐसा ही वह उसे कहता है) यूरिपिडीज ने यह परम्परावादी कौशल अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए प्रयोग किया था क्योकि इन व्यग्यो और आक्रमणो की बौछार को उसने आवरण बना लिया था। वह खुले हुए ढग से इनका व्यवहार उस युग मे करने का साहस नही कर सकता था। इस प्रकार का आवरण आवश्यक है क्योंकि साधारण विरोधी जनता इस समझकर नाटककार पर विरोध का तीर नही चला सकती थी और बुद्धिमान् सन्देहवादियो के लिए बात स्पष्ट थी। 'यह कहना ठीक होगा कि युरिपिडीज ने रगमच पर देवताओ से जो कहलाया है साधारणत वह अविश्वसनीय है। लेखक की ओर से वह आपत्तिजनक है और झूठ है। देवताओ को लाकर उसने मनुष्यो का यह विश्वास दिलाना चाहा कि उनका अस्तित्व नही है।'[१]

मनुष्य के दुख और वैभव से दूर और सराहना के अधिक उपयुक्त उपदेवता (डेमीगाड) हैं जिनकी माताएँ मानवी हैं और पिता अतिमानव। जैसे यूनानी उदाहरण हरक्युलीज या

१ ए० डब्लू० वेरल यूरिपिडीज द रेशनलिस्ट, पृ० १३८। अन्तिम वाक्य इस अवतरण में अरिस्टोफेनीज के एक अवतरण से लिया गया है—थेस्मोफोरियाजूसी—११ ४५०-१।

एडवानियोग या ओरफ्यूज । ये और ऐसे मानव शरीर धारण किए रहते हैं और मनुष्य के दुख को हरने के लिए और परिश्रम के काम करते हैं । ईर्ष्यालु देवता उन्हें कष्ट देते हैं और मानव शरीर धारण करने के कारण वे दण्ड का सहते हैं । यह उनका गौरव है कि वे मनुष्य की भाँति मृत्यु को प्राप्त होते हैं और इस उत्सर्ग का । मृत्यु के पीछे देवता का स्मरण होता है जो संसार के विभिन्न देशों में विभिन्न नामों से मरता है—मिनाई संसार में जगरियूस के नाम से, सुमेरी संसार में तम्मूज के नाम से, हित्ताइत जगत् में अत्तिस के नाम से, स्कैंडिनेवाई जगत् में बाल्डर के नाम से, सीरियाई संसार में अडोनिस के नाम से, मिस्री संसार में हूरस के नाम से और ईसाई जगत् में ईसा के नाम से ।

यह कौन देवता है जो विभिन्न अवतारों के रूप में प्रकट होता है किन्तु आशय एक है ? यद्यपि यह संसार में विभिन्न रूपों में प्रकट होता है किन्तु उसका वास्तविक रूप उस समय दिखाई देता है जब अभिनय का दुखान्त होता है और वह मृत्युदण्ड का भागी होता है । यदि हम मानव विचारों की खोज की प्रणाली को ग्रहण करते तो इस नाटक के रूप को इतिहास के आरम्भ में पायेंगे । यह उसी तरह कोमल पौधे के समान उगेगा और जैसे सूखी धरती में से जड़ निकलती है ।[1] मरता हुआ देवता पहले-पहल वनस्पति की आत्मा में हमें प्रकट होता है जो वसन्त में मनुष्य के लिए पैदा होती है और शरद में मनुष्य के लिए मर जाती है । मनुष्य इस प्रकृति के देवता की मृत्यु से लाभान्वित होता है और यह यदि मनुष्य के लिए मरता न रहे तो मनुष्य का विनाश हो जाय ।[2] हमारे पापों के कारण यह आहत हुआ, हमारे अन्यायों के कारण उसे चोट लगी, हमारी शान्ति के लिए उसने दण्ड भोगा और उस पर बेंतों की जो चोटें लगीं उससे हमारे घाव भरे ।[3] किन्तु कोई बाहरी उपलब्धि चाहे कितनी भी शानदार हो और उसके लिए चाहे कितना भी मूल्य चुकाना पड़े दुख के हृदय के भीतर के रहस्य का उद्घाटन नहीं कर सकती । यदि हम रहस्य जानना चाहें तो हमें लाभ प्राप्त करने वाले मानव और कष्ट प्राप्त करने वाले देवता के भी आगे देखना चाहिए । देवता की मृत्यु और मनुष्य का लाभ कथा को समाप्त नहीं कर देते । हम नाटक के मुख्य अभिनेता की परिस्थिति, भावना और उद्देश्यों को समझे बिना समझ नहीं सकते । मरने वाला देवता जबरदस्ती मारा जाता है कि अपने से मरता है ? उदारता के साथ मरता है कि कटुता के साथ ? प्रेम के साथ कि निराशा से ? जब तक हम इन प्रश्नों का उत्तर न समझ लें हम यह नहीं जान सकते कि देवता के कष्ट द्वारा प्राप्त यह त्राण मनुष्य के केवल लाभ के लिए है या वह एक आत्मिक सम्पर्क होगा जिसमें मनुष्य वह दैवी प्रेम और करुणा प्राप्त करके (जैसे दीपक बड़ी लौ से प्रकाश प्राप्त करता है[4]) जिसे ईश्वर ने विशुद्ध आत्म त्याग करके दिया है, उसे लौटायेगा ।

१ इसाया—५३-२ ।

२ सच बात तो यह है कि मनुष्य स्वयं उसे मार डालता है जिससे वह अपना अस्तित्व कायम रख सके । वनस्पति की आत्मा की उपासना राबर्ट बर्न्स की कविता 'जान बारली कार्न' में बहुत सुंदर बतायी गयी है । अंग्रेजी साहित्य में ऐसी सुन्दरता से कहीं नहीं लिखा गया है ।

३ इसाया—५३, ५ ।

४ प्लेटो के पत्र—७,३४१-सी०-डी० ।

देवता किस भावना से मृत्यु को स्वीकार करता है ? इस प्रश्न को ध्यान में रखते हुए यदि हम इन दुखदायी नाटकों पर एक बार फिर विचार करें तो हम देखेंगे कि किस प्रकार अपूर्ण बलिदान से पूर्ण अलग रहता है। ओरफ्यूज़ की मृत्यु पर जब कलियोप बहुत सुन्दर ढंग से विलाप करती है तब उसमें कटुता का स्वर है जो ईसाई कानों को खटकता है।

'हम मानव अपने पुत्रों की मृत्यु पर क्या शोक करते हैं जब हम जानते हैं कि देवताओं में भी यह शक्ति नहीं है कि अपने पुत्रों को मरने से रोक सकें।'[1]

मरते हुए देवता की कथा का विचित्र निष्कर्ष है। जान पड़ता है कि ओरफ्यूज़ की माता अपने पुत्र को कभी मरने न देती यदि उसका वश चलता। जैसे बादल सूर्य को छिपा लेता है, यूनानी कवि के वर्णन ने ओरफ्यूज़ की मृत्यु से प्रकाश को छीन लिया। किन्तु एंटिपेटर की कविता का उत्तर दूसरी महान् कृति ने दिया है

'ईश्वर संसार से इतना प्रेम करता था कि उसने अपना एकमात्र पुत्र संसार के लिए दे दिया कि जो उसमें विश्वास रखता है वह नष्ट नहीं होगा, सदा जीवित रहेगा।

धर्म पुस्तक ने इस प्रकार शोक गान का उत्तर दिया है और इस उत्तर में उसने भविष्यवाणी की है। 'एक रहता है, अनेक परिवर्तित होते रहते हैं और चले जाते हैं।'[2] और त्राताओं के सर्वेक्षण का यह हमारा अंतिम परिणाम है। जब हम अपनी खोज में चले तो हमें महान संख्या मिली, किन्तु ज्यों ज्यों हम आगे बढ़े दौड़ में हमारे साथी एक के बाद दूसरे पीछे रहते गये। पहले जो पराजित हुए वे तलवार वाले थे, दूसरे पुरातनवादी और भविष्यवादी थे, उसके बाद दार्शनिक, केवल देवता दौड़ते रह गये। अन्त में मृत्यु की कठिन परीक्षा में, इन त्राता देवताओं में भी कुछ ही रह गये जिन्होंने मृत्यु की सरिता में कूद कर त्राता होने की पदवी की रक्षा की है। और जब हम खड़े होकर सागर के उस पार क्षितिज पर देखते हैं तब जल में से एक रूप उभरता हुआ दिखाई देता है जो सारे अन्तरिक्ष में फैल जाता है। यही हमारा त्राता है, 'ईश्वर की इच्छा उसके हाथों पूरी होगी, वह अपनी आत्मा को देखेगा और उसे सन्तोष होगा।'[3]

१ ओरफ्यूज़ की मृत्यु पर एंटिप्लेटर का शोकगीत (सम्भवत ९० ई० पू०)
२ शैली—अडोनेस, ५२।
३ इसाया—५३, १०–११।

एसक्लेपियोस या ओरफ्यूज । ये अध देवता मानव शरीर धारण किये रहते ह और मनुष्य के दुख को हरने के लिए अनेक परिश्रम के काय करते हैं । ईर्ष्यालु देवता उन्हें दण्ड देते ह और मानव शरीर धारण करने के कारण वे दण्ड़ा को सहते हैं । यह उनका गौरव है कि वे मनुष्य की भाँति मत्यु को प्राप्त होते ह और इस उपदेवता की मृत्यु के पीछे देवता का स्वरूप होता है जो ससार के विभिन्न देशा में विभिन्न नामा से मरता है—मिनाई ससार में जगरियूस के नाम से, सुमेरी ससार में तम्मूज के नाम से, हिताइन जगत् में अत्तास के नाम से, स्कडिनेवाई जगत् में वाल्डर के नाम से, सीरियाई ससार में अडोनीस के नाम से, मियाई ससार में हुसन के नाम से और ईसाई जगत् में ईसा के नाम से ।

यह कौन देवता है जो विभिन्न अवतारा के रूप में प्रकट होता है, किन्तु आवेग एक है ? यद्यपि वह ससार में विभिन्न वेशा में प्रकट होता है किन्तु उसका वास्तविक रूप उस समय दिखाई देता है जब अभिनय का दुखद अत होता है और वह मृत्युदण्ड का भागी होता है । यदि हम मानव विनाशी की खोज की प्रणाली को ग्रहण करें तो इस शाश्वत नाटक को इतिहास के आरम्भ में पायेंगे । 'वह उसके सामने कोमल पौधे के समान उगेगा, और जसे सूखी धरती में से जड निकलती है ।'[1] मरता हुआ देवता पहले पहल वनस्पति की आत्मा में हमें प्रकट होता है जो वसन्त में मनुष्य के लिए पदा होती है और शरद में मनुष्य के लिए मर जाती है । मनुष्य इस प्रकृति के देवता की मत्यु से लाभान्वित होता है और वह सदा मनुष्य के लिए मरता न रहे तो मनुष्य का विनाश हो जाय ।[2] हमारे पापा के कारण वह आहत हुआ, हमारे अन्यायो के कारण उस चोट लगी, हमारी शांति के लिए उसन दण्ड भोगा और उस पर बेता की जो चोटें लगी उससे हमारे घाव भरे ।[3] किन्तु कोई बाहरी उपलब्धि चाहे कितनी भी शानदार हो और उसके लिए चाहे कितना भी मूल्य चुकाना पडे दुख के हृदय के भीतर के रहस्य का उद्घाटन नही कर सकती । यदि हम रहस्य जानना चाहें तो हमें लाभ प्राप्त करने वाले मानव और कष्ट प्राप्त करने वाले देवता के भी आगे देखना चाहिए । देवता की मत्यु और मनुष्य का लाभ कथा को समाप्त नहीं कर देते । हम नाटक को मुख्य अभिनेता का परिस्थिति, भावना और उद्देश्या का समझे बिना, समझ नही सकते । मरने वाला देवता जबरदस्ती मारा जाता है कि अपने से मरता है ? उदारता के साथ मरता है कि कटुता के साथ ? प्रेम के साथ कि निराशा से ? जब तक हम इन प्रश्ना का उत्तर न समझ लें हम यह नही जान सकते कि देवता के कष्ट द्वारा प्राप्त यह त्राण मनुष्य के केवल लाभ के लिए है या वह एक आत्मिक सम्पर्क होगा जिसमें मनुष्य वह दैवी प्रेम और करुणा प्राप्त करके (जसे दीपक बडी लौ से प्रकाश प्राप्त करता है[4]) जिसे ईश्वर ने विशुद्ध आत्म त्याग करके दिया है, उसे लौटायेगा ।

१ इसाया—५३-२ ।

२ सच बात तो यह है कि मनुष्य स्वय उसे मार डालता है जिससे वह अपना अस्तित्व कायम रख सके । वनस्पति की आत्मा की उपासना राबर्ट बन्स की कविता 'जान बारली कान' में बहुत सुन्दर बतायी गयी है । अंग्रेजी साहित्य में ऐसी सुन्दरता से कहीं नहीं लिखा गया है ।

३ इसाया—५३, ५ ।

४ प्लेटो के पत्र—७,३४१-सी०-डी० ।

देवता किस भावना से मृत्यु को स्वीकार करता है ? इस प्रश्न को ध्यान में रखते हुए यदि हम इन दुखदायी नाटकों पर एक बार फिर विचार करें तो हम देखेंगे कि किस प्रकार अपूर्ण बलिदान से पूर्ण अलग रहता है। ओरफ्यूज की मृत्यु पर जब कैलियोप बहुत सुन्दर ढंग से विलाप करती है तब उसमें कटुता का स्वर है जो ईसाई कानों को खटकता है।

'हम मानव अपने पुत्रों की मृत्यु पर क्या शोक करते हैं जब हम जानते हैं कि देवताओं में भी यह शक्ति नहीं है कि अपने पुत्रों को मरने से रोक सकें।'[1]

मरते हुए देवता की कथा का विचित्र निष्कर्ष है। जान पड़ता है कि आरफ्यूज की माता अपने पुत्र को कभी मरने न देती यदि उसका वश चलता। जैसे बादल सूर्य को छिपा लेता है, यूनानी कवि के वर्णन ने ओरफ्यूज की मृत्यु से प्रकाश को छीन लिया। किन्तु एटिपेटर की कविता का उत्तर दूसरी महान् कृति ने दिया है

'ईश्वर संसार से इतना प्रेम करता था कि उसने अपना एकमात्र पुत्र संसार के लिए दे दिया कि जो उसमें विश्वास रखता है वह नष्ट नहीं होगा सदा जीवित रहेगा।

धर्म पुस्तक ने इस प्रकार शोक गान का उत्तर दिया है और इस उत्तर में उसने भविष्यवाणी की है। 'एक रहता है, अनेक परिवर्तित होते रहते हैं और चले जाते हैं।'[2] और त्राताओं के सर्वेक्षण का यह हमारा अंतिम परिणाम है। जब हम अपनी खोज में चले तो हमें महान् संख्या मिली, किन्तु ज्यों ज्यों हम आगे बढ़े दौड़ में हमारे साथी एक के बाद दूसरे पीछे रहने गये। पहले जो पराजित हुए वे तलवार वाले थे, दूसरे पुरातनवादी और भविष्यवादी थे, उसके बाद दार्शनिक, केवल देवता दौड़ते रह गये। अंत में मृत्यु की कठिन परीक्षा में इन त्राता देवताओं में भी कुछ ही रह गये जिन्होंने मृत्यु की सरिता में कूद कर त्राता होने की पदवी की रक्षा की है। और जब हम खड़े होकर सागर के उस पार क्षितिज पर देखते हैं तब जल में से एक रूप उभरता हुआ दिखाई देता है जो सारे अन्तरिक्ष में फैल जाता है। यही हमारा त्राता है, ईश्वर की इच्छा उसके हाथों पूरी होगी, वह अपनी आत्मा को देखेगा और उसे सन्तोष होगा।[3]

१ ओरफ्यूज की मृत्यु पर एंटिप्लेटर का शोकगीत (सम्भवत ६० ई० पू०)

२ शेली—अडोनेस, ५२।

३ इसाया—५३, १०–११।

२१ विघटन का लयात्मक रूप

इसके पहले के अध्याय में हमने खोजा और एक समानता पायी—जिसमें स्वभावत विरोध भी था—जो विकासोन्मुख और विघटनोन्मुख समाजो के सृजनात्मक व्यक्तियो का गुण है। इसी ढग पर हम अपने विषय की दूसरी बात की आगे खोज करेगे और देखेंगे लयात्मक विकास और लयात्मक विघटन में कोई समानता है और सम्भवत विरोध भी। प्रत्येक स्थिति में हमारा फारमूला वही है जिसका अनुसरण हम अभी तक करते आये हैं, वह चुनौती और उसका सामना करने का फारमूला। विकासोन्मुख सभ्यता में एक चुनौती उपस्थित होती है और सफलतापूर्वक उसका सामना होता है जिसके परिणाम में नयी चुनौती सामने आती है और इसका भी सफलता से सामना होता है। इस विकास की प्रक्रिया का अन्त नही होता जब तक कि ऐसी चुनौती नही आती जिसका सामना करने में सभ्यता असफल हो जाती है, तब विकास रुक जाता है जिसे हमने पतन का नाम दिया है। यहा से सहसम्बन्धी लय आरम्भ होती है, चुनौती का सामना नही हो सका फिर भी चुनौती आती रहती है। सक्षोभ के साथ चुनौती का सामना करने के लिए दूसरा प्रयत्न किया जाता है, और यदि इसमें सफलता मिली तो विकास होता रहेगा। किन्तु हम यह मान कर चलेंगे कि थोडी अस्थायी सफलता के बाद यह सामना भी विफल हो जाता है। तब रोगाक्रमण फिर होगा, और सम्भवत कुछ समय के बाद चुनौती का सामना करने की चेष्टा होगी और कुछ समय में उसी कठोर चुनौती का सामना करके थोडी और अस्थायी सफलता प्राप्त होगी। इसके बाद फिर असफलता मिलगी जो अन्तिम रूप से समाज का विनाश करे या न करे। सनिक भाषा में इसे पराजय-जमाव पराजय जमाव (रूट एण्ड रैली, रूट एण्ड रैली) कह सकते है।

यदि हम उन तकनीकी शब्दो की शरण लें जिन्हें हमने इस अध्ययन के आरम्भ में सोच निकाला था और जिनका प्रयोग हम करते आये है तो हम स्पष्ट हो जायगा कि पतन के बाद का सकटकाल पराजय है, सार्वभौम राज्य की स्थापना जमाव है। सार्वभौम राज्य के पतन के बाद जो अन्त काल होता है वह अन्तिम पराजय है। किन्तु हमने एक सार्वभौम हेल्नी राज्य के इतिहास में देखा कि मारकस आरीलियस की मृत्यु के बाद अराजकता हो गयी और डायोक्लीशियन के समय फिर पुनरुज्जीवन आ गया। किसी सार्वभौम राज्य के इतिहास में एक बार से अधिक रोगाक्रमण और पुनरुज्जीवन हो सकता है। ऐसे आक्रमणो और पुनरुज्जीवन की सख्या उस लेंस की शक्ति पर निर्भर करती है जिसमें से देखकर हम परीक्षा कर रहे हैं। उदाहरण के लिए थोड समय के लिए किन्तु चकित कर देने वाला रोगाक्रमण ६९ में हुआ जिसे 'चार सम्राटो का वर्ष' कहते है। किन्तु हम प्रमुख घटनाओ पर ही विचार करेगे। सकटकाल के बीच भी पुनरुज्जीवन का समय आ सकता है। यदि हम सकट के काल में एक विशेष पुनरुज्जीवन तथा सार्वभौम राज के जीवन काल में एक रोगाक्रमण मान लें तो हमें फारमूला मिल जायगा

पराजय-जमाव पराजय-जमाव पराजय जमाव-पराजय जिसे हम कह सकते ह कि पराजय-जमाव के लय का साढे तीन निस्पन्दन है। स्पष्टत साढ़े तीन सख्या में कोई विशेष गुण नही है। विघटन के विशेष उदाहरण में ढाई या साढे चार या साढ पाच विस्पन्दन हो सकते है किन्तु विघटन की प्रक्रिया में कोई अन्तर नही होगा। किन्तु साढ तीन विस्पन्दन की सख्या साधारणत अनेक विघटनोन्मुख समाजो के इतिहास में मिलती है। उदाहरण के लिए उनमें से कुछ का वणन हम करगे।

हेलेनी समाज के पतन की ठीक ठीक तारीख ४३१ ई० पू० है और चार सौ साल बाद ३१ ई० पू० में आगस्टस ने सावभौम राज्य स्थापित किया। क्या हम इन चार सौ वर्षो में जमाव-पुन पतन की क्रिया को पाते ह ? निश्चय ही हम पाते ह। उसका एक चिह्न एकता के सामाजिक धम का प्रचार था जिसका साइराक्यूज़ में टिमोलिआन ने प्रचार किया था और अधिक विस्तत क्षेत्र में सिकन्दर महान् ने इसी एकता का प्रयत्न किया था। ये दोनो चेष्टाए चौथी शती ईसापूव के अन्तिम अधाश में हुई थी। दूसरा चिह्न विश्व राष्ट्रमण्डल की सकल्पना है जिसका जीनो तथा एपिक्यूरियस ऐसे दाशनिको ने तथा उनके शिष्यो ने प्रचार किया था। तीसरा चिह्न अनेक वधानिक प्रयोगो का है—सेल्यूकस का साम्राज्य, एकियन तथा एइटालियन सघ तथा रामन लोकतन्त्र। ये सब एसे प्रयत्न थे कि नगर-राज्य की प्रभुसत्ता के ऊपर एक प्रभुसत्ता की स्थापना हो। और चिह्न बताये जा सकते है किन्तु जिस पुनरुज्जीवन का सकत किया गया है उसके ज्ञान के लिए ये पर्याप्त ह, और इनसे समय का भी ज्ञान हो जाता है। पुनरुज्जीवन के ये प्रयत्न असफल हुए। इसका कारण मुख्यत यह था कि यद्यपि ये बडी-बडी राजनीतिक इकाइयाँ अलग अलग नगर राज्यो से आगे बढ गयी थी फिर भी आपसी सम्बन्ध में एक दूसरे के प्रति उनमें अनुदारता और असहयोग था जैसा कि पाचवी शती ई० पू० के यूनान के राज्यो में, था जब उन्होने एथेनो-पलोपोनेशियाई युद्ध का आरम्भ करके हेलेनी सभ्यता का पतन आरम्भ किया। यह दूसरा रोगाक्रमण अथवा (जो एक ही बात है) असफलता उस पुनरुज्जीवन की है जो २१८ ई० पू० में हैनिबली युद्ध के आरम्भ में हुआ। हमने पहले रामन साम्राज्य के इतिहास में एक सौ साल की लम्बी अवधि के रोगाक्रमण का वणन किया है और उसके बाद के पुनरुज्जीवन का। इसस साढे तीन विस्पन्दन का पता चलता है।

यदि हम चीनी समाज के विघटन पर ध्यान द तो हम देखेंगे कि पतन उस समय से आरम्भ हुआ, जब ६३४ ई० पू० में सिन और चू में विनाशकारी सघष आरम्भ हुआ और जब २२१ ई० पू० में सिन ने सभी को पराजित किया और चीन ने चीनी शान्तिमय राज्य की स्थापना की। चीनी सकटकाल की यदि ये दोनो आरम्भिक और अन्तिम तिथिया ह तो क्या हमें इस बीच पुनरुज्जीवन तथा रोगाक्रमण की क्रियाएँ मिलती ह ? इसका उत्तर 'हाँ' है। क्योकि चीनी सकटकाल में कनफूशियस (सम्भवत ५५१–४७९ ई० पू०) की पीढी के समय पुनरुज्जीवन का आन्दोलन दिखाई देता है जब निशस्त्रीकरण सम्मेलन ५४६ ई० पू० में हुआ था जो अन्त में असफल हुआ। आगे चलकर यदि हम चीनी सावभौम राज्य के इतिहास पर दृष्टि डालें तो पहली तथा पीछे वाली हनकी पीढी में, अर्थात् ईसवी सन् की पहली शती के आरम्भ में जब इनका अन्त काल था, रोगाक्रमण और पुनरुज्जीवन का कुख्यात क्रियाएँ हुई। यहाँ भी हमें

साढ़े तीन विस्पन्दन मिलते है । ये विस्पन्दन हेलेनी विस्पन्दन से दो सौ साल पहले समगति होकर मिलते है ।

सुमेरी इतिहास में हमें वही बात मिलती है । सुमेरी सकटकाल में जमाव-पराजय का विस्पन्दन स्पष्ट है । सुमेरी सावभौम राज्य में पराजय-जमाव का विपरीत विस्पन्दन बहुत स्पष्ट दिखाई देता है । यदि हम सुमेरी सकट का काल सयवादी एरेच के लुगाल्जग्गीसी (सम्भवत २६७७–२६५३ ई० पू०) के जीवन से और उसका अत सुमेरी सावभौम राज्य की स्थापना से मानें, जिसे अर के अर-एनगूर ने (सम्भवत २२९८–२२८१ ई० पू०) स्थापित किया था, तो कम-से-कम इस बीच के काल में पुनरुज्जीवन का एक चिह्न हमें काशुप-कला में मिलता है जो नरमसीन के समय में सम्पन्न हुई थी । सुमेरी शान्तिपूर्ण राज्य का समय अर-एनगूर के गद्दी पर बठने से हम्मूरवी की मृत्यु लगभग (१९०५ ई०पू०) तक है, किन्तु ध्यान से देखने पर पता चलता है कि यह शान्ति केवल हल्का आवरण था, अदर-अदर अराजकता व्याप्त थी । अर-एनगूर के गद्दी पर बठने क सौ साल बाद उसका 'चारो दिशाओ का साम्राज्य' टुकडे टुकडे हो गया और इन्ही टुकडो में ही सौ साल तक रहा, जब हम्मूरवी ने उसे फिर से सावभौम रूप में निर्मित किया जिसके बाद ही उसका विनाश हुआ ।

यही परिचित नक्शा हमें परम्परावादी ईसाई समाज के मूल शरीर के विघटन के इतिहास में दिखाई देता है । हम पहले बता चुके ह कि इस सभ्यता का पतन रोमानो-बुल्गेरियन युद्ध ९७७–१०१९ ई० से आरम्भ हुआ और शान्तिमय धार्मिक सावभौम राज्य १३७१–७२ की पुन स्थापना से आरम्भ होता है जब उसमानियो ने पसिडोनिया पर विजय प्राप्त की । इन दोनो तारीखो के बीच, जब परम्परावादी ईसाइयो का सकटकाल था, हम पुनरुज्जीवन की स्थापना की घटना देख सकते ह जिसका नेता पूर्वी रोमन सम्राट एलक्सियस केमननस (१०८१–१११८) था । यह क्रिया सौ साल तक चली । इसके बाद का शान्तिमय धार्मिक सावभौम राज्य का, सन् १७६८–७४ के रूसी-तुर्की युद्ध की पराजय के कारण पतन हो गया । इस पतन से उसमानिया शासन का पूर्णत अन्त हो गया । उसमानिया इतिहास से पता चलता है कि इसके पहले रोगाक्रमण हो चुका था जिसके बाद फिर से पुनरुज्जीवन हुआ । रोगाक्रमण उस समय हुआ जब बादशाह के दासो क परिवार का शीघ्रता से विनाश होने लगा जब सुलेमान महान् की सन् १५६६ में मृत्यु हुई । पुनरुज्जीवन का आरम्भ उस समय से होता है जब बादशाह ने परम्परावादी ईसाई रिआया को स्वतत्र मुसलमानो के साथ, जिन्होने शक्ति की बागडोर अपने हाथ में ले ली थी—शासन में लेने का प्रयोग किया । अब वह इस बात पर जोर नही देता था कि शासन में सहयोग करने के लिए उन्हें धर्म-परिवर्तन करना पडेगा । इस क्रान्तिकारी नवीनता ने, जो कोपरुलू वजीरो का काय था, उसमानिया साम्राज्य को साँस लेने का समय दिया, जिसे बाद के उसमानली 'ट्यूलिप काल' कहते है ।

हिन्दू समाज के विघटन के इतिहास में अभी आधे विस्पन्दन का समय नहा आया है । क्योकि हिन्दू सावभौम राज्य को, जिसे ब्रिटिश शासन ने स्थापित किया था, दूसरी किस्त का समय अभी पूरा नही हुआ है । इसके विपरीत पराजय—और पुनरुज्जीवन के पहले तीन विस्पन्दन का लेखा मौजूद है । तीसरा रोगाक्रमण उस समय हुआ जब मुगल साम्राज्य के पतन और ब्रिटिश राज्य के आगमन के बीच की अराजकता का समय था । पुनरुज्जीवन का

दूसरा विस्पंदन उस समय स्पष्ट है जब अकबर (१५६६–१६०२) ने मुगल राज्य की स्थापना की। इसके पहले की पराजय का आघात स्पष्ट नहीं है, किन्तु यदि हम हिंदू इतिहास के संकटकाल को देखें, जो ईसाई संवत् की बारहवीं शती के अन्तिम भाग में आरम्भ होता है जब हिंदुओं के स्थानीय राज्यों में आपसी युद्ध हो रहे थे, तब हमें पता चलेगा कि हिंदू शासकों और मुसलिम आक्रमणकारियों द्वारा बारहवीं और तेरहवीं शती में और बाद के मुसलिम आक्रमणकारियों ने, जिनमें अकबर के पूर्वज भी थे, पंद्रहवीं और सोलहवीं शती में जो विपत्ति ढायी उनके बीच अलाउद्दीन और फीरोज के शासन में चौदहवीं शती में कुछ शान्ति थी।

हम दूसरी सभ्यताओं के विघटन का भी विश्लेषण कर सकते हैं जहाँ हमें इतनी सामग्री मिलती है कि अध्ययन से हम परिणाम निकाल सकते हैं। किसी किसी स्थिति में हम देखेंगे कि 'विस्पंदन' की पूरी संख्या नहीं मिलती, क्योंकि उस सभ्यता को उसकी स्वाभाविक मृत्यु के पहले ही उसका पड़ोसी निगल गया। फिर भी हमें विघटन के लय का इतना प्रमाण मिल गया है कि हम इस लय के उदाहरण का अपनी पश्चिमी सभ्यता पर लगा कर देखें कि क्या वह उस प्रश्न का कुछ उत्तर दे सकती है, जिसे हमने कई बार पूछा कि जिसका अभी तक सन्तापजनक उत्तर हम नहीं दे सके। प्रश्न यह है कि क्या हमारी पश्चिमी सभ्यता का भी पतन हुआ है? यदि हाँ, तो विघटन की किस परिस्थिति में वह पहुँची है?

एक बात तो स्पष्ट है, हमारे यहाँ अभी सार्वभौम राज्य की स्थापना नहीं हुई है यद्यपि इस दिशा में दो दुस्साहसपूर्ण प्रयत्न इस शती के पहले अर्धांश में जरमनी द्वारा हुए और उसी प्रकार का दुस्साहसपूर्ण प्रयत्न सौ साल पहले नपोलियन के नाम ने किया था। एक बात और स्पष्ट है। हम लोगों में हार्दिक और गम्भीर अभिलाषा है कि एक संस्था की स्थापना हो जो सार्वभौम राज्य नहीं हो, किन्तु जिसके द्वारा विश्व की ऐसी व्यवस्था हो, जिस ढंग की एकता की संस्था स्थापित करने का प्रयत्न हेलेनी संकटकाल में वहाँ के राजमर्मज्ञों और दार्शनिकों ने किया था किन्तु निष्फल रहे। वह ऐसी संस्था होगी जिसमें सार्वभौम राज्य के वरदान तो सब आ जायगे, अभिशाप न आयेगा। सार्वभौम राज्य का अभिशाप यह है कि एक दल का व्यक्ति दूसरे दलों को सैनिक शक्ति से मार गिराता है। वह 'तलवार के द्वारा त्राण' का परिणाम है, जिसके बारे में हमने देखा है कि वह त्राण बिल्कुल नहीं है। हम चाहते हैं कि स्वतन्त्र लोग स्वतन्त्र सहमति से एक साथ रहें और बिना जबरदस्ती के सब प्रकार की बड़ी-से बड़ी सुविधाएँ प्राप्त कर और बड़े-से-बड़ा सामंजस्य स्थापित करें, जिसके बिना यह आदर्श व्यवहार में नहीं आ सकता। नवम्बर १९१८ के युद्ध विराम के कुछ मास पहले अमरीकी राष्ट्रपति विलसन को जो प्रतिष्ठा यूरोप में प्राप्त हुई—यद्यपि अपने देश में नहीं—उसमें हमारी आशाएं निहित थीं। राष्ट्रपति विलसन का सम्मान गद्य द्वारा व्यक्त किया गया था, आगस्टस के सम्बन्ध में जो सामग्री उपलब्ध है वह वरजिल या होरेस का पद्य है। चाहे गद्य हो या पद्य दोनों में जो विश्वास, आशा और धन्यवाद की भावनाएँ हैं वे प्रायः एक-सी हैं। परन्तु परिणाम भिन्न है। आगस्टस अपने संसार को सार्वभौम राज्य बनाने में सफल हुआ विलसन अपने संसार को और अच्छा बनाने में असफल रहा—

छोटा आदमी एक एक जोड़ता है,
जल्दी ही वह सौ तक एकत्र कर लेता है

बडे आदमी की अभिलाषा लाखा की होती है,
वह एक भी एकत्र नही कर पाता ।[1]

इन विचारो और तुलना से पता चलता है कि हम अपने सकटकाल में बहुत आगे बढ गये है थोर यदि हम पूछें कि निकट भूत में सबसे स्पष्ट और विशिष्ट क्या विपत्ति हमारे सामने उपस्थित हुई है जो उत्तर स्पष्ट है—राष्ट्रवादी परस्पर विनाशकारी युद्ध, जिसे लोकतन्त्र तथा उद्योगवाद द्वारा निमुक्त शक्तिया से वल मिला है, जसा कि इस अध्ययन में पहले हमने बताया है । इस भीषणता का आरम्भ अठारहवी शती के अत के मास के क्रातिकारी युद्ध से होता है । पहले जब हम इस विषय पर विचार कर रहे थे, तब पश्चिम के इतिहास के आधुनिक इतिहास में हमें पता चला कि इस प्रकार का हिंसात्मक सघर्ष पहला नही दूसरा था । पहला सघर्ष वह था जिसमें तथाकथित धार्मिक युद्ध हुए थे, जिसने सोलहवी शती के मध्य से सत्रहवी शती के मध्य तक पश्चिमी ईसाई जगत् को तहस-नहस कर डाला और हमने देखा कि इन दोना हिंसात्मक युद्धा के बीच सौ साल ऐसे बीते जिनमे युद्ध अपेक्षया हल्का रोग था, जिसमें राजाओ का खेल होता रहा जिसमें न तो धार्मिक उन्माद था, न साप्रदायिकता, न लोकतन्त्रीय राष्ट्रवाद। इस प्रकार अपने इतिहास में भी हमें सकटकाल का प्रतिरूपी (टिपिकल) उदाहरण मिलता है पतन, पुनरुज्जीवन और दूसरा रोगाक्रमण ।

हम देख सकते है कि सकटकाल में अठारहवी शती का पुनरुज्जीवन क्या अकाल प्रसूत और अस्थायी हुआ । उसका कारण यह था कि जो सदाशयता प्रबुद्धता' के कारण प्रयोग में लायी गयी वह विश्वास, आशा और उदारता के ईसाई गुणो पर आधारित नहीं थी बल्कि निराशा, भय और मानवता के प्रति घृणा के पाशविक रोगा के कारण प्रयाग की गयी । यह धार्मिक उत्साह की उपलब्धि नही थी उसकी कमी का सरल उपजात (बाई प्राडक्ट) था ।

क्या हम उस दूसरे और अधिक हिंसात्मक युद्ध के परिणाम को, किसी भी दशा में, देख सकते है जिसमें हमारा पश्चिमी समाज अठारहवी शती वाली प्रबुद्धता की आध्यात्मिक अपर्याप्तता के कारण फँस गया है ? यदि हम भविष्य की ओर दखने का प्रयत्न करे तो हमें पहले यह स्मरण कर लना चाहिए कि जितनी भी सभ्यताओ का इतिहास म वणन हुआ है वे चाहे मर गयी हो या मर रही हो जन्तु के शरीर के समान नही है जिनके लिए पहले से ही निश्चित है कि जीवन की एक अवधि समाप्त करके समाप्ति पर पहुँचेगे । यदि आज तक जितनी सभ्यताएँ हुई है उन्होने इस प्रथा का अनुगमन किया है, तो भी, एतिहासिक नियतिवाद का कोई ऐसा नियम नही है जो हमें विवश कर सके कि सकटकाल की असह्य कडाही में स सावभौम की धीमी और स्थिर अग्नि में अपने को फेंक दें जिसमें धीरे धीरे जलकर हम धूल और राख हो जायेंगे । साथ ही यदि दूसरी सभ्यताओ का इतिहास और प्रकृति के जीवन को हम देखगे और अपनी वतमान स्थिति के अमगल प्रकाश में निरीक्षण करेंगे तो ऐसा होना निश्चित जान पडता है । यह अध्याय १९३९–४५ के विश्वयुद्ध के आरम्भ में उन पाठको के लिए लिखा गया था जिन्होने १९१४–१८ का महाभारत देखा था । और इस दूसरे युद्ध की समाप्ति के बाद प्रकाशन के लिए इसे फिर से

[1] आर० ब्राउनिंग एपामेरियन्स फ्युनरल ।

लिखा गया। यह दूसरा युद्ध हमारे जीवन में ही ऐसे बम के आविष्कार तथा प्रयोग से समाप्त किया गया जिसमें एटमिक शक्ति को विमुक्त करने का नया ढग निकाला गया जिससे मनुष्य ने मनुष्य के जीवन तथा उसकी निर्मित वस्तुओ को नष्ट कर दिया जैसा पहले कभी नही हुआ था। इन विनाशकारी घटनाओ का शीघ्र शीघ्र होना और बढ़ता ही जाना भविष्य के अधकार का द्योतक है, इस अनिश्चयता के कारण, ऐसे समय जब हमारी आध्यात्मिक शक्तियो की नितान्त आवश्यकता है, हमारी आशा और विश्वास के टूट जाने की आशका है। यही वह चुनौती है जिसे हम अस्वीकार नही कर सकते और हमारा भविष्य हमारा सामना करने पर निर्भर है।

"मने स्वप्न देखा, और मने देखा कि एक मनुष्य चिथडो मे लिपटा एक स्थान पर खडा है। उसके मुह उसके घर के उल्टे है, उसके हाथ में एक पुस्तक है और पीठ पर बडा बोझ है। मने देखा कि उसने पुस्तक खोली और पढा, वह पढता रहा और रोता रहा और कांपता रहा। जब वह अपने को नही रोक सका, फूट फूटकर रोने लगा और दुख से चिल्ला उठा, 'मै क्या करूँ'?'

बुनयन का ईसाई बिना कारण ही इतना दुखी नही हुआ 'मुझे निश्चित रूप स बताया गया है (उसने कहा) कि हमारा यह नगर आकाश से बरसती आग स जल जायगा, जिसमें म, मेरी पत्नी और मेरे सुन्दर बच्चे भस्म हो जायेंगे जब तक कि कोई ऐसी राह न निकले (जो अभी मुझे दिखाई नही दती) जिससे मेरी रक्षा हो सके।

इस चुनौती का सामना ईसाई किस प्रकार करने जा रहा है? क्या वह इधर उधर देखेगा कि किस ओर दौड़ और फिर भी खडा रहेगा, क्योकि उसे पता नही कि किस ओर जाना चाहिए? या वह प्रकाश पुज की ओर देखते हुए और दूर फाटक की ओर पाव मोडते हुए जीवन, जीवन, शाश्वत जीवन' चिल्लाते हुए दौडेगा? यदि इस प्रश्न का उत्तर और कही कोई नही देगा, केवल ईसाई को देना होगा, तो हमारा मानवी प्रकृति की समानता का ज्ञान बताता है कि हम यह भविष्यवाणी कर सकते है कि ईसाई की मृत्यु विनाश के नगर में हो जायगी। किन्तु इस कथा के क्लासिक सस्करण में हमें बताया गया है कि मानव नायक कठिन समय में अपने ही साधनो पर नही छोड दिया गया था। बुनयन के अनुसार ईसाई को धर्मप्रचारक ने बचाया था। और यह मानकर ईश्वर की प्रकृति मनुष्य की प्रकृति से स्थिर नही होती। हमें प्रार्थना करनी चाहिए कि हमारे समाज को एक बार जो क्षमा ईश्वर ने प्रदान की उसे दूसरी बार वह इनकार नही कर सकता यदि हम प्रायश्चित्तपूर्ण हृदय से प्रार्थना करेंगे।

२२ विघटन द्वारा मानकीकरण

सभ्यताओ के विघटन की प्रक्रिया की खोज की समाप्ति पर हम पहुँच गये ह, किन्तु समाप्ति के पहले एक प्रश्न पर और विचार करना है । जिन बातो पर हम अभी तक विचार करते आये ह उनमें यह देखना है कि कोई प्रमुख प्रवत्ति तो नही काम कर रही है । और हम निश्चय रूप से देखते ह कि मानकीकरण और एकरूपता की प्रवृत्ति (विघटन में) काम करती है जिस प्रकार सभ्यताओ के विकास की स्थिति में इसके विपरीत विशिष्टीकरण और विभिन्नता की प्रवृत्ति होती है । ऊपर सतही दृष्टि से हमने देखा है कि विघटन में साढ़े तीन विस्पन्दन बराबर रूप के ढग पर होता है । इससे और महत्त्वपूर्ण एकरूपता का चिह्न यह है कि विघटनोन्मुख समाज में तीन स्पष्ट वर्गों में विभाजन का भेद हो जाता है और उनमें प्रत्येक एक ढग का सजनात्मक काय करता है । हमने देखा है कि शक्तिशाली अल्पसख्यक समान ढग से दार्शनिक काय करत ह और सावभौम राज्य स्थापित करते ह, आन्तरिक सवहारा समान रूप स महान् धर्मों का आविष्कार करते ह जो सावभौम धमतन्त्र मे अपने को व्यक्त करना चाहते ह और बाहरी सवहारा सना को एकत्र करते हैं और ऐसा काय करते ह कि उस युग को 'वीर काल' कहा जाता है । य सस्थाएँ समान रूप से उत्पन्न होती ह और वे इतनी महत्त्वपूर्ण ह कि जिस ढग स विघटन की यह प्रक्रिया होती रहती है उसी ढग से हमने इस अध्याय के अन्त में इस सारणी क रूप में अङ्कित किया है । इससे भी अधिक व्यवहार भावना और जीवन की समानता है और आत्मा के भेद के अध्ययन से प्रकट होता है ।

पनिलोप के जाला के दृष्टान्त तथा एसे ही समान उदाहरणा पर विचार करने से वही विषमता हमें मिलती है जो विकास में विभिनता और विघटन में एकरूपता में है । जब अनुपस्थित ओडीसियस की सती पत्नी ने अपने अनेक हठी प्रेमियो को वचन दिया कि ज्योही म वद्ध लेअरटेज (ओडीसियस के पिता) के लिए यह कफन बीनना समाप्त कर लूगी, तुममें से किसी से विवाह कर लूगी । तो वह अपने करघे पर प्रतिदिन कपडा बीनती थी और दिन में जितना बीनती थी उतना रात मे उधेड डालती थी । जब वह प्रात काल बीनना आरम्भ करती थी, उसके सम्मुख अनक नमून थ, और यदि वह चाहती तो प्रतिदिन नये नमूने के कपडे बुनती । किन्तु रात का काम एकरस था क्योकि उधेडने में कोई भी नमूना हो, कोई अन्तर नही हो सकता था । दिन में चाहे उसकी गति कितनी भी जटिल होती रही हो, रात मे तो केवल तागा निकालने का काम था ।

रात के इस अनिवाय नीरसता के लिए पेनिलोप पर दया आती है । यदि यह नीरसता उद्देश्यहीन होती तो यह श्रम असह्य होता । उसे जिससे प्रेरणा मिलती थी वह उसकी आत्मा के अन्दर एक गीत था— उससे मेरा मिलन होगा । वह आशा पर जीवित थी और काम कर रही थी और वह निराश नही हुई । नायक लोटकर आया, नायिका उसी की रही, अन्त में दोनो का मिलन हो गया ।

यदि पेनिलोप का धागा निकालना निरर्थक नहीं हुआ तो उस महान बुनकर का कैसे होगा जिसके काय का हम अध्ययन कर रहे ह, और जिसका गीत गोएटे की कविता में अभिव्यक्त है—

जीवन की धारा में, गति की झञ्झा में
काय के उत्साह में, अग्नि में, तूफान म
यहा और वहा
ऊपर और नीचे
मै चलता हूँ और घूमता हूँ
जन्म और मरण
असीम सागर
जहा विक्षुब्ध तरग
सदा उठती ह
उनके उत्तेजित सघर्ष के
नीचे और ऊपर
उभरती हैं और बुनती ह
जीवन के परिवतन।
समय के चलते करघे में निभय होकर
मै ईश्वर के लिए वस्त्र बुनता हूँ।[1]

धरती की आत्मा का यह काय, समय के करघे पर बुनना और फिर तागे का उधडना, मनुष्य का लौकिक इतिहास है। यह मानव समाज की उत्पत्ति, विकास और पतन तथा विघटन में व्यक्त होता है। जीवन के इस असमजस में और कम के तूफान मे तात्त्विक लय का विस्पन्दन हमे सुनाई देता है, जिसकी विभिन्नता हमने इन रूपो मे जाना है—चुनौती और सामना, बिलगाव और वापसी, पराजय और जमाव, विभाजित होना और सम्वर्धित होना, भेद और पुनजन्म। यह तात्त्विक लय हमें प्रत्यावर्ती यिन और याग के विस्पन्दन में मिलता है। इसके सुनने मे हमने यह जान लिया है कि चाहे (ग्रीक नत्य के) गायन का उत्तर विपरीत गायन[2] हो जय के बाद पराजय हो, रचना के बाद विनाश हो, जन्म के बाद मरण हो, इस लय के विस्पन्दन की गति न तो अनिर्णीत युद्ध की अस्थिरता है, न मशीन के पहिये के चक्र का आवतन है। पहिये का बराबर घूमना बेकार नही है, यदि प्रत्येक परिक्रमा में वह लक्ष्य के निकट पहुँचता है और यदि पुनजन्म का अभिप्राय कोई नवीन जन्म है, और केवल किसी ऐसी वस्तु का पुनजन्म नही जो मर चुकी है, तब जीवन का चक्र केवल पैशाचिक यन्त्र नही है जो इक्सियान को शाश्वत दण्ड देने के लिए बना है। इस प्रमाण स यिन और याग के सगीत के विस्पन्दन की लय सजन का गीत है और यदि हम उसे सुनकर उसमें यह पायें कि रचना के स्वर

१ गोएटे फाउस्ट २, ५०१-६ (आर० एसटेल का अनुवाद)

२ ग्रीक नत्य में एक गायन होता है, फिर घूमने पर दूसरा गायन होता है—जिसे स्ट्रोफी और एटीस्ट्रोफी कहते ह।— अनुवादक

के बाद विनाश का स्वर है, तो हम पथ भ्रष्ट नहीं होंगे। इस कारण यह गीत पैशाचिक कपट नहीं है, दोनों स्वर वास्तविकता के प्रमाण हैं। यदि हम अच्छी तरह सुनें तो हम देखेंगे कि जब दो स्वर टकराते हैं, तब विस्वरता नहीं सहस्वरता उत्पन्न होती है। रचना रचनात्मक न होती, यदि अपने विरोधी को भी वह निगल न जाती।

किन्तु उस सजीव वस्त्र का क्या जो धरती की आत्मा बुनती है? क्या वह ज्योंही बुना जाता है स्वर्ग में रख दिया जाता है या हम पृथ्वी पर भी उस अलौकिक बुनावट के कुछ टुकड़े देख सकते हैं? हम उन तन्तुओं का क्या समझें जो यन्त्र उधड़ते समय करघे के पास पड़े रह जाते हैं? सभ्यताओं के विघटन में हमने देखा कि उनकी यात्रा चाहे सारहीन हो, अपने पीछे भग्नावशेष छोड़े, वह समाप्त नहीं होती। जब सभ्यताओं का विनाश होता है तब अपने पीछे वे सार्वभौम राज्यों, सार्वभौम धर्मतन्त्रों और बर्बर सेना-दलों का अवशेष छोड़ जाती हैं। हम इन पदार्थों को क्या करें? क्या ये केवल उच्छिष्ट पदार्थ हैं, या यदि हम इन कचरों को चुन लें तो बुनकर की कला के नये उत्कृष्ट नमूने उनसे तैयार होंगे, जिसे उस घड़घड़ाते करघे के बजाय, जिस पर अभी तक उसका सारा ध्यान था, किसी अज्ञात करघे पर कौशल से बुना है?

इस प्रश्न पर विचार करते हुए यदि हम अपने पहले के अनुसंधानों के परिणाम पर ध्यान दें तो हम यह विश्वास कर सकेंगे कि ये अध्ययन की सामग्रियाँ सामाजिक विघटन की केवल उच्छिष्ट पदार्थ नहीं हैं। इससे कुछ अधिक हैं। क्योंकि पहले वे हमें विभाजन और सम्बन्ध के रूप में मिलती हैं और यही एक सभ्यता से दूसरी सभ्यता का सम्बन्ध है। स्पष्टतः इन तीनों संस्थाओं की व्याख्या किसी एक सभ्यता के इतिहास के माध्यम से नहीं हो सकती। उनके अस्तित्व के कारण एक सभ्यता से दूसरी सभ्यता का सम्बन्ध है, इसलिए इनका अध्ययन अलग-अलग स्वतन्त्र रूप से होना चाहिए। किन्तु उनकी यह स्वतन्त्रता उन्हें कितनी दूर तक ले जायेगी। सार्वभौम राज्यों पर विचार करते हुए हमने देखा कि जो शान्ति उन्होंने स्थापित की वह प्रभावोत्पादक होने के साथ ही अस्थायी थी और बर्बर सेना-दलों के सम्बन्ध में विचार करते हमने देखा कि मृत सभ्यता के शव के ये कीड़े उससे अधिक नहीं जी सकते, जब तक यह सड़ती लाश गलकर अपने तत्त्वों में न मिल जाय।

फिर भी यद्यपि सैन्य दल एकिलीज की अकाल मृत्यु को प्राप्त हो जाता है, बर्बर के अल्प जीवन की प्रतिध्वनि उन महाकाव्यों में सुरक्षित रहती है जो वीर काल में रचे जाते हैं।

इससे स्पष्ट है कि हम सम्प्रति इस नये प्रश्न का उत्तर तुरत नहीं दे सकते, यह भी स्पष्ट है कि हम उसकी अवहेलना भी नहीं कर सकते, क्योंकि इसी प्रश्न में बुनकर के कार्य का अभिप्राय निहित है। हमारा अध्ययन अभी पूरा नहीं हुआ है, परन्तु हम अपने अनुसंधान के क्षेत्र के किनारे पहुँच गये हैं।

सम्पादक का नोट

पहली चार सारणियाँ वही हैं जो श्री टवायनबी की मूल पुस्तक में ह। ये उस महान काय को बताती है जो सामाजिक विघटन के परिणाम ह। पाचवी सारणी थियालोजी आव टुडे, खण्ड पहला, अक ३ से सम्पादक डाक्टर जॉन ए० मेके तथा डॉक्टर उडवड डी० मायस की कृपा से ली गयी है। डॉक्टर मायस ने उसमें एक लेख लिखा था 'समलीडिग आइडियाज फ्राम टवायनबीज ए स्टडी आव हिस्ट्री' उसी के समझाने के लिए यह सारणी उन्हाने बनायी थी। इस सारणी से टवायनबी के पहले छ खण्डा के सारे क्षेत्र का सिहावलोकन हो जाता है।

पाठक को इस सक्षिप्त सस्करण में अनेक नाम तथा तथ्य एसे मिलेंगे जिनसे वह अपरिचित है। उसका कारण यह है कि इस सक्षिप्त सस्करण के सम्पादक ने बहुत-से नाम तथा उदाहरण जान बूझकर छोड दिये हैं। और बहुत-सा योरा छाट दिया है। इसलिए ये सारणियाँ यही नही कि लेखक के अध्ययन के बहुत से परिणामा को स्पष्ट करेंगी, किन्तु यह भी स्मरण दिलायेंगी कि इस सक्षिप्त सस्करण में पाठको को कितनी बातें नही मिल सकी।

पहली सारणी

सार्वभौम राज्य

सभ्यता	संकटकाल	सार्वभौम राज्य	विश्व शान्ति	साम्राज्य निर्माताओ का उद्गम
सुमेरी	स० २५२२–२१४३ या २६५८–२०७९ ई० पू०	सुमेर और अक्काद का साम्राज्य चार दिशाओं का राज्य	स० २१४३–१७५० या २०७९–१६८६ ई० पू०	निर्माता उरके नागरिक पुन स्थापितकर्ता अमोराइट सीमानिवासी।
बेबिलोनी	–६१० ई० पू०	नव-बबिलोनी साम्राज्य	६१०–५३९ ई० पू०	निर्माता नागरिक (?)[1] (काल्डियन उत्तराधिकारी बर्बर) अकामिनीडी और विदेशी सेल्युकेडी।
भारती	–३२२ ई० पू०	मौर्य साम्राज्य	३२२–१८५ ई० पू०	निर्माता नागरिक (?)[2] मगध से
		गुप्त साम्राज्य	सन् ३९०–४७५ स०	" "
चीनी	६३४–२२१ ई० पू०	त्सिन और हैन साम्राज्य	२२१ ई० पू०–स० सन् १७२	निर्माता त्सिन की सीमा से उत्तराधिकारी पहले तथा बाद के हैन।
हेलनी	४३१–३१ ई० पू०	रोमन साम्राज्य	३१ ई० पू० से सन ३७८	निर्माता सीमावाले (रोमन) पुन स्थापितकर्ता सीमावाले, इलीरियन।
मिस्री	स० २४२५–२०५० ई० पू०	मध्य साम्राज्य	स० २०५०–१६७५ ई० पू०	थीबीस की सीमावाले।
		नया साम्राज्य	स० १५८०–११७५ ई० पू०	" "
परम्परावादी ईसाई (रूस में)	म० सन् १०७५–१४७८ ई०	मसक्कोवाइट साम्राज्य	सन् १४७८–१८८१	मास्को के सीमावाले।
सुदूर पूर्व (जापान में)	सन् ११८५–१५९७	हिदयोशी अधिनायक तथा तोकुगावा शागुनेत	सन् १५९७–१८६८	क्वान्तो की सीमावाले।
पश्चिमी (मध्ययुगीन नगर राज्यों का समूह)	स० सन् १३७८–१७९७	नैपोलियन का साम्राज्य	सन् १७९७–१८१४	फ्रांस के सीमावाले।
पश्चिमी (उसमानलियों के विरुद्ध कवच)	स० ११२८–१५२६ ई०	डैन्यूबका हैप्सबुर्ग राज्य	सन् १५२६–१९१८	आस्ट्रिया की सीमावाले।

ऐंडियाई	स० सन् १४३०	इनका साम्राज्य (चारो दिशाआ का राज्य)	स० सन् १४३०–१५३३	निर्माता क्यूचको की सीमावाले उत्तराधिकारी (स्पेनी)
सीरियाई	स० ९३७–५२५ ई० पू०	अकिमीनियाई साम्राज्य	स० ५२५–३३२ ई० पू०	बारबारो सीमाप्रान्ती (ईरानी से)।
		अरब खलीफा	स० सन् ६४०–९६९	ववर अरव से।
सुदूर पूव (मुख्य अग)	सन् ८७८–१२८०	मगोल साम्राज्य	सन् १२८०–१३५१	बारबारो विदेशी मगोल।
		मचू साम्राज्य	सन १६४४–१८५३[4]	बारबारो सीमाप्राती (मचू)।
मध्य अमरीकी	सन १५२१	नये स्पेन के वायसराय	सन् १५२१–१८२१	अग्रगामी बारबारो सीमा प्रान्ती (एजटेक) निर्माता विदेशी (स्पेनी)
परपरावादी ईसाई (मुख्य अग)	सन् ९७७–१३७२	उसमानिया साम्राज्य	सन् १३७२–१७६८	विदेशी (उसमानली लोग)
हिदू	स० सन् ११७५–१५७२	मुगल रा`य	स० सन् १५७२–१७०७	विदेशी मुगल
		ब्रिटिश राज्य	स० सन् १८१८–१९४७	विदेशी ब्रिटिश
मिनोई	स०—१७५० ई० पू०	मिनोइयो का सागरी राज्य	स० १७५०–१४०० ई० पू०	प्रमाण नही

नोट— स० = सम्भवत।

१ बबिलोनिया के कालडियन सीमाप्रान्ती भी कहे जा सकते ह, नागरिक भी।

२ मगध को पूव मौयकाल तथा मौयकाल के भारत का आ`तरिक भाग कह सकते ह या उस काल के भारत का सीमाप्रान्त।

३ पूर्वी रोमन अग्रगामी उसमानलिया तथा हगरी के युद्ध के आरम्भ की तारीख।

४ ताईपिग आक्रामको द्वारा नानकिंग लेने का तिथि।

दूसरी सारणी

दशन

सभ्यताएँ	दशन
मिस्री	एटोनवाद (अकाल प्रसूत)
एडियाई	विराकोचेईवाद (अकाल प्रसूत)
चीनी	कनफ्युशियनवाद
	मोवाद
	टाओवाद
सीरियाई	जरवानवाद (अकाल प्रसूत)
भारतीय	हीनयान बौद्ध
	जन
पश्चिमी	कारटेसियनवाद
	हीगल्वाद[1]
हेलनी	प्लेटोवाद
	स्टोइकवाद
	एपिक्युरियनवाद
	पिरहूनवाद
बबिलोनी	ज्योतिष

1 हीगलवाद सामाजिक कार्यों तक सीमित = मार्क्सवाद, मार्क्सवाद पश्चिम से रूस में लाया गया = लेनिनवाद

तीसरी सारणी

ऊँचे धर्म

सभ्यताएँ	ऊँचे धर्म	प्रेरणा का स्रोत
सुमेरी	तम्मुज़की पूजा	देशी
मिस्री	ओसाइरीसकी पूजा	विदेशी (सुमेरी) ?
चीनी	महायान	विदेशी (भारतीय हेलेनी-सीरियाई)
भारतीय	हिन्दू धर्म	देशी
सीरियाई	इस्लाम	देशी
हेलेनी	ईसाई	विदेशी (सीरियाई)
	मिथ्रवाद	विदेशी (सीरियाई)
	मानिकेइज़्म	विदेशी (सीरियाई)
	महायान	विदेशी (भारतीय)
	आइसिस-उपासना	विदेशी (मिस्री)
	साइबेले-उपासना	विदेशी (मिस्री)
	नव-प्लेटोवाद	देशी (सी देवात दर्शन)
बबिलोनी	यहूदी	विदेशी (सीरियाई)
	पारसी	विदेशी (सिरियाई)
पश्चिमी	बहाईवाद	विदेशी (ईरानी)
	अहमदिया	विदेशी (ईरानी)
परम्परावादी ईसाई	इमामी शिया	विदेशी (ईरानी)
(मुख्य भाग)	बद्रुद्दीनवाद	अर्ध विदेशी (ईरानी मिलावट)
परम्परावादी ईसाई	सम्प्रदायवाद (सेक्टेरियनिज्म)	देशी
(रूस में)	पुनर्जागरणवादी (रिवाइवलिस्ट)	विदेशी (पश्चिमी)
	प्रोटेस्टेंट धर्म	
सुदूर पूर्व	कैथोलिकवाद	विदेशी (पश्चिमी)
(मुख्य भाग)	ताइपिंग	अर्धविदेशी (पश्चिमी मिलावट)
सुदूर पूर्व (जापान में)	जोडो	अर्ध विदेशी (सुदूर पूर्वी मुख्य भाग से)
	जोडो शिन्शू	देशी (जोडो से)
	निचेरीवाद	देशी
	ज़ेन	अर्धविदेशी (सुदूर पूर्व मुख्य भाग से)
हिन्दू	कबीर और सिक्ख	अर्धविदेशी (इस्लामी मिलावट)
	ब्रह्म समाज	अर्धविदेशी (विदेशी मिलावट)

		उत्तर-पश्चिम	लीवियन		
		पूरब	हिब्रू तथा आरमियाई		येहोवा की पूजा
		उत्तर पूव	यूरेशियाई खानावदोश		
			सरमेशियन तथा हूण		सेतकी पूजा
		दक्षिण-पश्चिम	अरव	हामरी महाकाव्य	ओलिम्पियाई
		दक्षिण पश्चिम	बबर		बहुदेवता पूजा ।
		पूव	हिब्रू और आरामियाई		येहोवा की पूजा ।
परम्परावादी	मसकोवाइट साम्राज्य	दक्षिण-पूव	यूरेशियाई खानावदोग (तातारी		इस्लाम
ईसाई (रूस में)			तथा तोरगुट कालमुक)		लामा वाला
सुदूर पूव	तोकुगावा शोगूनेत	उत्तर पूव	ऐनू		महायान बौद्ध धम ।
पश्चिमी	(यूरोप में)	उत्तर-पश्चिम	द्वीपवाले केल्ट	आयरिश महाकाव्य	सुदूरपूव पश्चिमी ईसाई
		उत्तर	स्कडिनेवियाई	आइसलडी सागा	स्कडिनेवियाई बहुदेवता
		उत्तर पूव	महाद्वीपी सक्सन		
			व ड लिथुएनियन		
		पूव	यूरेशियाई खानावदोश (मगयर)		
		दक्षिण पूव	बोसनियक	मुसलिम जुगोस्लव	पहले वोगोमिलिवाद
				वीर काव्य	फिर इस्लाम
इ डशाई	उत्तरी अमरीका में	पश्चिम	रेड इडियन		अहिंसावादी जेल्टवाद
	इनका साम्राज्य	पूव-दक्षिण	अमेजोनियन अरोकेनियन		
सीरियाई	अकेमोनियाई साम्राज्य	उत्तर पश्चिम	मसेडोनियन	सिकन्दरी रोमांस	
		उत्तर पूव	पारथियन शक	ईरानी महाकाव्य	
	अरब खिलाफत	उत्तर पश्चिम	फ्रंक	फ्रेंच महाकाव्य	क्योलिक धम

चौथी सारणी

ववर युद्ध दल

सभ्यता	सावभौम राज्य	सीमा	ववर	काव्य	धम
सुमेरी	सुमेर तथा अक्काद का साम्राज्य	उत्तर-पूव	गेटुइयन यूरेशियाई खानाबदोश (आय) क्स्साइत	संस्कृत महाकाव्य	वदिक वहुदेवता
		उत्तर पश्चिम	हिताइत		हिताइत वहुदेवता
बविलोनी	नव-बविलोनी साम्राज्य	उत्तर पूव	यूरेशियाई खानावदोश (सीथियाई)		
			मीड तथा परशियन		जरथूष्ट
भारती	मौय साम्राज्य	उत्तर-पश्चिम	शक	संस्कृत महाकाव्य	
	गुप्त साम्राज्य	"	हूण, गुजर	पुन निर्मित	
चीनी	तिसन तथा हैन साम्राज्य	उत्तर पश्चिम	यूरेशियाई खानाबदोश हियोगनू तोपा, जुआन जुआन		
		उत्तर-पूव	यूरेशियाई खानाबदोश (सिएनपी) ?		
हेलेनी	रोमन साम्राज्य	उत्तर पश्चिम	द्वीप के केल्ट	आयरिश महाकाव्य	सुदूर पश्चिम के ईसा
		उत्तर	महाद्वीपी टयूटान	टयूटोनी महाकाव्य	पहले महाद्वीपी टयूटनी वहुदेवता वाद फिर एरियनवाद ।
मिस्री	मध्य साम्राज्य	दक्षिण	न्यूबियन	पूव इस्लामी अरबी काव्य	इस्लाम
	नया साम्राज्य	उत्तर पूव	हाइक्सो		
		उत्तर	एकियाई		

सभ्यता	सावभौम राज्य	सीमा	बबर	काव्य	धम
			पूव रोमन सीमावाले	बाइजंतियाई महा काव्य	परम्परावादी ईसाई
		दक्षिण पश्चिम	बबर		इसमाइली शीवाद
		दक्षिण पूव	अरब		" "
		उत्तर	यूरेशियाई खानाबदोश खजार		जूडावाद
		उत्तर-पूव	यूरेशियाई खानाबदोश (मगोल, तुक)		नीकेईवाद, नैस्टोरीवाद
सुदूर पूर्वी (मुख्य अग)	सकट काल	उत्तर पूव	यूरेशियाई खानाबदोश खोतान, किन मगोल		
	मचू साम्राज्य	उत्तर-पूव	यूरेशियाई खानाबदोश (मगोल)		
		उत्तर पश्चिम	यूरेशियाई खानाबदोश (जुगर), काल्मुक		लामा वाला महायानी बौद्ध धम
मध्य अमरीकी	नये स्पेन का वायसराय	उत्तर	चिचिमेक		
परम्परावादी ईसाई (मुख्य अग)	उसमानिया साम्राज्य	उत्तर पश्चिम	सब	परम्परावादी ईसाई जूगोस्लाव के काव्य	
			अलबेनियाई	अलबेनियाई वीर काव्य	बेकताशी सुन्नी
			रूमेलियोट यूनानी	रोमेलियोट यूनानी आरमेटोल तथा क्लेपटिक वीर काव्य	
		उत्तर-पूव	लेज कुद		
		दक्षिण-पूव	अरब		नजदी वहाबी कोरदोफानी
		दक्षिण	अरब		

					महदीवाद	
हिन्दू	मुगल राज	उत्तर पश्चिम	उजबक, अफगान			
	ब्रिटिश राज	उत्तर पश्चिम	अफगान	होमरी महाकाव्य	ओलिम्पयाई बहुदेवतावाद यँहोवा की पूजा	
मिनोई	मिनोसका सागरतन्त्र	उत्तर	एकियाई			
		पूरब	हिब्रू तथा आरमियाई			
ईरानी	सक्ट का वाल	उत्तर पूव	उजवक अफगान			
हिताइत		उत्तर पूव	गसगा			
		उत्तर-पश्चिम	फ्रिजियाई			
		दक्षिण-पश्चिम	एकियाई	होमरी महाकाव्य	ओलिम्पियाई बहुदेवतावाद	
यूरेशियाई खानाबदोश	शाही सीथियन दल	उत्तर				
		पश्चिम	वैसतरनी			
		पूरब	सरमाशिया			
	खजार दल	पश्चिम	वराजियन	रूसी वीर काव्य गीत	परम्परावादी ईसाई	उत्तर
		पूरब	पेचेनेग			
		उत्तर-पश्चिम	कजाक	किरगिज कजाक के गीत		
	मुनहरा दल	उत्तर पूव	किरगिज कजाक			

पॉचवीं सारणी

सभ्यता		सम्बन्ध	उदगम का देश तथा समय
१ मिस्री		किसी से सम्बन्ध नही	नील नदी की घाटी, ४००० ई० पू० से पहले
२ एडियाई		किसी से सम्बन्ध नही	ऐडियाई तट तथा पठार । ईसाई सवत् के आरम्भ के समय से
३ चीनी		पहले किसी से सम्बन्ध नही । सुदूर पूर्वी से प्रजनित	हागहो नदी की निचली घाटी । सम्भवत १५००ई०पू०
४ मिनोई		पहले किसी से सम्बन्ध नही । हेलेनी तथा सीरियाई से (अदढ) प्रजनित	एजियन द्वीप—३००० ई० पू० से पहले
५ सुमेरी		पहले से सम्बन्ध नही ? वबिलोनी तथा हेलेनी से प्रजनित	दजला तथा फरात की निचली घाटी सम्भवत ३५०० ई० पू०
६ माया		पहले से सम्बन्ध नही—यूकेटी तथा मक्सीकी से प्रजनित	दक्षिण अमरीकी उष्ण कटिबन्ध सम्भवत ५०० ई०पू० से पहले
७ यूकेटी	मिल्कर मध्य अमरीकी निर्मित	माया से सबद्ध	यूकेटियाई प्राय द्वीप के जल्हीन, वक्षविहीन, चूना-पत्थर की पट्टी
८ मक्सीकी			
९ हितायती		सुमेरी से अदढ रूप से सम्बन्धित किन्तु धर्म ।-सुमेरी	सुमेरी सीमा से आगे कैपेडोशिया में १५०० ई० पू० से पहले
१० सीरियाई		मिनोई से अदढ सम्बन्ध ईरानी तथा अरबी से प्रजनित	सीरिया ११०० ई०पू० से पहले
११ बबिलोनी		सुमेरी से निकट सम्बन्ध	इराक १५०० ई०पू० से पहले
१२ ईरानी	मिलकर इस्लामी	दोनो सीरियाई से सम्बन्धित और सन १५१६ के बाद मिलकर इस्लामी समाज बना	अनातोलिया, ईरान, आक्सस-जक्सार्टीज सन् १३०० के पहले
१३ अरबी			अरब, इराक, सीरिया, उत्तरी अफ्रीका सन् १३०० के पहले
१४ सुदूर पूर्वी, मुख्य अग		चीनी से सम्बन्धित, एक शाखा जापान मे	सन् ५०० के पहले
१५ सुदूर पूर्वी जापानी शाखा		सुदूर पूर्वी के मुख्य अग की शाखा	जापानी द्वीप समूह सन् ५०० के बाद
१६ भारतीय		पहले के किसी से सम्बन्ध नही, हिन्दू से प्रजनित	सिन्धु तथा गगा नदी की घाटी सम्भवत १५००ई०पू०

१७ हिन्दू	भारतीय से सम्बन्धित	उत्तरी भारत, सन् ८०० से पहले
१८ हेलेनी	मिनोई से अदृढ सम्बन्धित, पश्चिमी तथा परम्परावादी ईसाई से प्रजनित	एजियन का तट तथा द्वीप, ११०० ई० पू०
१९ परम्परावादी ईसाई, मुख्य अग	हेलेनी से सम्बन्धित, एक शाखा रूस में	अनातोलिया सन् ७०० से पहले ११वी शती में
२० परम्परावादी ईसाई, रूसी शाखा	परम्परावादी ईसाई के मुख्य अग की शाखा	रूस, ईसाई सवत् की १० वी शती
२१ पश्चिमी	हेलेनी से सम्बन्धित	पश्चिमी यूरोप, सन् ७०० के पहले

चुनौती	सकट काल	सावभौम राज्य
१ भौतिक सूखा पडना	स० २४२४–२०५२ ई०पू०	मध्य साम्राज्य नया साम्राज्य
२ भौतिक तट की मरुभूमि मिट्टीविहीन पठार, जलवायु कठोर	स० १४३० "	इनका साम्राज्य आयरलैण्ड के बाद पेरू के स्पेनी वायसराय
३ भौतिक दलदल, बाढ, तापक्रम की पराकाष्ठा	स० ६३४–२२१ ई० पू०	त्सिन तथा हैन साम्राज्य
४ भौतिक सागर	?—१७५० ई० पू०	मिनोइयो का सागर तत्र
५ भौतिक सूखा पडना	स० २६७७–२२९८ ई० पू०	सुमेर और अक्काद का साम्राज्य
६ भौतिक उष्ण कटिबध के जगल। घन जगल	?—३०० ईस्वी	माया का साम्राज्य
७ भौतिक उजाड प्रायद्वीप सामाजिक	?—१५२१ ईस्वी	नये स्पेन के वायसराय। एजटेक सावभौम राज्य बनानेवाले ही थे कि स्पेनवाले आ गये।
८ पतनोमुख माया समाज		
९ सामाजिक पतनोमुख सुमेरी समाज	पद्रहवी शती ई० पू० तक	अपने ससार मे प्रमुख १३५२ ई० के बाद मिस्र से
१० सामाजिक पतनोमुख मिनोई समाज	स० ९३७–५२५ ई० पू०	अकिमीनियाई साम्राज्य, अरब के खलीफा
११ सामाजिक पतनोमुख सुमेरी समाज	?—६१० ई० पू०	नव बबिलोनी समाज

१२	सामाजिक	पानो मुखगीरियाई समाज		
१३	सामाजिक	पत्नो मुख सीरियाई समाज		
१४	सामाजिक	पतोमुख चीनी समाज		मंगोल साम्राज्य मचू, साम्राज्य
१५	भौतिक	नयी धरती	८७८–१२८० ई०	
	सामाजिक	मुख्यअग से सम्पर्क	११८५—१५९७ ई०	हिंदोयशी का अतिनायकवाद और कोकुगावा शोगुनेट
१६	भौतिक	उष्ण कटिबंध के घन जगल		
१७	सामाजिक	भारतीय समाज का विघटन	१—३२२ ई० पू०	मौर्य साम्राज्य , गुप्त साम्राज्य
१८	भौतिक	उजाड धरती और सागर	स० ११७५–१५७२ ईस्वी	मुगल राज, ब्रिटिश राज
	सामाजिक	मिनोई समाज का विघटन	४३१–३१ ई० पू०	रोमन साम्राज्य
१९	सामाजिक	हेलनी समाज का विघटन		
२०	भौतिक	नयी धरती	९७७–१३७२ ई०	उसमानिया साम्राज्य
	सामाजिक	मुख्य अग से सम्पर्क		मसकोवी साम्राज्य
२१	भौतिक	नयी धरती	१०७५—१४७८ ई०	
	सामाजिक	हेलेनी समाज का विघटन		

सावभौम शान्ति	दशन	धम	धम की प्रेरणा का स्रोत
१ स० २०५२–१६०० ई०पू०	एटनवाद अकाल प्रसूत	ओसाइरिस की उपासना	विदेशी ?—सुमेर ?
स० १५८०–११७५ ई०पू०		एटनवाद	
२ १४३०–१५३३ ई०	विराकोकेईवाद अकाल प्रसूत		
३ २२१ ई०पू० से १७२ ई०	पोवा, ताओवाद कन्फ्यूशियनवाद	महायान बौद्ध धम नव ताओ वाद	विदेशी भारतीय–हेलेनी-सीरियाई देशी किन्तु नकल
४ स० १७५०–१४०० ई०पू०			
५ स० २२९८–१९०५ ई०पू०	तम्बूज की पूजा—किन्तु सुमेरी समाज ने कोई ऐसी नयी कृति नही दी जो नया धम कहा जा सके। माया हितायती, बबिलानी तथा भारतीय समाज विघटन के साथ आदिम मानव की विशेषता की ओर लौटते जान पडते ह। अपने धम के काम प्रवत्ति तथा अपने दशन के अतिशय त्याग के बीच का, भावना के प्रति वे उदासीन हो जाते ह, जब वे प्राचीन सामाजिक सरचना को ढहते हुए देखते है, पाप की भावना का अनुभव करते ह।		
६ स० ३००–६९० ई०			
७ १५२१–१८२१ ई०			
८			
९			
१० स० ५२५–३७२ ई०पू०	जरवनवाद अकाल प्रसूत	इस्लाम	देशी
स० ६४०–९६९ ई०पू०			देशी
११ ६१०–५३९ ई०पू०	ज्योतिष	जूडावाद	विदेशी सीरियाई
		जोरास्टरवाद	विदेशी सीरियाई
१२			
१३			
१४ १२८०–१३५१ ई०		कैथोलिकवाद	विदेशी परिचमी
१६४४–१८५३ ई०		ताईपिंग	अर्ध विदेशी परिचमी अश
१५ १५९७–१८६३ ई०		जोडो	अद्ध विदेशी मूल अग से
		जोडो शिन्त	देशी
		निचिरेनवाद	देशी
		जेन	अद्धविदेशी मूल अग से
१६ ३२२–१८५ ई०पू०	हीनयान बुद्ध धम जन धम	हिन्दू	देशी
३००–४७५ ई० स०			देशी

१७ ग० १५७२–१७०७ ई०		कवीरपथ सिक्ख ब्रह्मसमाज	अद्ध विदेशी—इस्लामी
म० १८१८ ई०			अद्ध विदेशी—विदेशी अश
१८ ३१ ई०पू० ३७८ ई०	प्लटोवाद	ईसाई	विदेशी-सीरियाई
	स्टोइकवाद	मिथ्रवाद	विदेशी-सीरियाई
	एपिक्यूरियनवाद	मनिकेईवाद	विदेशी-सीरियाई
	पाइरसोनवाद	आर्सिस पूजा	विदेशी मिस्री
		महायान बुद्ध धम	विदेशी भारतीय
		सिबिले की पूजा	विदेशी–हित्तायती
		नव प्लेटोवाद	देशी
१९ १३७२–१७६८ ई०		इमापी शिया	विदेशी ईरानी
		बदरद्दीनवाद	अद्धविदेशी ईरानी अश
२० १४७८–१८८१ ई०		सम्प्रदायवाद	देशी
		पुनर्जीवित प्रोटस्टटवाद	विदेशी पश्चिमी
२१			

अकाल प्रसूत सभ्यताएँ—ये सभ्यताएँ जन्म से ही मत थी क्योकि इन्हें अति कठोर चुनौती का सामना करना पडा। अकाल प्रसूत सभ्यताएँ ये हैं—सुदूर पश्चिमी ईसाई सभ्यता, सुदूर पूर्वी ईसाई और स्कैंडिनेवियाई।

सुदूर पश्चिमी ईसाई सभ्यता—केल्टी किनार पर आरम्भ हुई। मुख्यत आयरलड मे, सम्भवत सन् ३७५ म। यह उस चुनौती का फल थी जो भौतिक थी तथा दोहरी सामाजिक चुनौती के कारण उत्पन हुई जो पतनामुख हेलेनी समाज से तथा नवजात पश्चिमी समाज से हुई। अलगाव का काल सम्भवत सन् ४५० से ६०० तक था। केल्टो ने ईसाइयत को अपने बबर सामाजिक परम्परा के अनुसार ढाला। छठी शती तक आयरलैंड पश्चिम में ईसाइयत का केन्द्र था। इसकी मौलिकता धम के सगठन तथा साहित्य और कला में वतमान है। इस सभ्यता पर अतिम प्रहार नवी से ग्यारहवी शती के बीच वाईकिंगा द्वारा हुआ और राम की धार्मिक शक्तिया ने तथा इग्लड की राजनीतिक शक्तियो ने बारहवी शती में किया।

सुदूर पूर्वी की ईसाई सभ्यता—*यह सभ्यता नेस्टोरी ईसाई धम के बाज से आक्सस-जक्सा* टिज बेसिन में उत्पन्न हुई और जब अरबो ने ७३७–४१ ई० में इस प्रदेश को ले लिया तब वह नष्ट हो गयी जिस समय वह लगभग नौ शतिया तक शप सीरियाई ससार से अलग हो गयी थी। यह शिशु सभ्यता मध्य एशियाई इतिहास के नौ शतिया का परिणाम थी, जिनमें यह बसिन म अपना निजी जीवन व्यतीत कर रही थी। उसकी विशेषता यह थी कि इसके द्वारा नय व्यापारिक मार्गों का निर्माण हुआ और बडी सख्या म इसके द्वारा यूनानी उपनिवेशक उत्पन हुए।

स्कडिनेवियाई सभ्यता—जब रामन सभ्यता का विघटन हुआ, उस समय हेलेनी बाह्री सवहारा से यह सभ्यता निकली। मूर्तिपूजक स्लावो क बीच मे आ जाने के कारण स्कडिनवियाई लोग रोमन ईसाई जगत से छठी शती की समाप्ति तक अलग रहे। जब पश्चिम से फिर स सम्पर्क स्थापित हुआ, तब से इनकी अपनी सभ्यता का विकास होने लगा। और जब आइसलैंड वाले ईसाई धम का अपनाने लगे इनकी सभ्यता का विनाश हाने लगा। इनकी सभ्यता की विशेपता सौन्दय भावना लिये हुए थी और यूनानी सस्कृति से बहुत मिलती है।

अविकसित सभ्यताएँ—इनमें पालीनेशियाई, एसकिमो, खानाबदोश, स्पाटन तथा उसमानली वग ह। इनका विघटन इस कारण हुआ कि इन्होंने असाधारण शक्ति अर्जित करने का प्रयास किया और उसे अर्जित किया। ये ऐसी चुनौती के परिणाम थी और उस सीमा पर ह जहाँ कुछ प्रेरणा मिलती है और उस स्थान पर पहुँचती ह जब क्रमागत ह्रास होन लगता है। स्पाटना तथा उसमानलिया के सम्बन्ध में यह चुनौती मानवी थी, और शेषो के सम्मुख चुनौती भौतिक थी। इन सबकी दो विशेपताएँ हैं—जातिवाद तथा विशिष्टीकरण। इन सबने मानवी इच्छा शक्ति का चमत्कार तथा विचक्षणता दिखायी, किन्तु उसका मूल्य चुकाना पडा मानवता के उग गुण से, जिसमें मनुष्य के सवतामुखी हाने की विशेपता हाती है। इन सबने मानवता से पशुता की ओर अपना पाँव रखा।

एसकिमो—आर्थिक लाभ की प्रेरणा ने इन्हें असाधारण शक्ति दी, जिसस ये समुद्रतट पर अथवा समुद्र पर जो सदा बफ से ढका रहता है जाडे में भी रहने लगे और सील मछली का शिकार करने लगे। इसमें इनकी शक्ति व्यय हाती है कि और किसी प्रकार की उन्नति के लिए शप नहा

रह जाती। आर्कटिक जल-वायु के चक्र के अनुकूल रहने के कारण इन्हें अविकसित होने का दण्ड भुगतना पड़ता है।

उसमानली—खानाबदोश समुदाय से विदेशी वातावरण में जाने की भौगोलिक चुनौती का सामना इन्हें करना पड़ा जिससे इन्हें विदेशी मानवी समुदाय पर, पशुओं के स्थान पर शासन करना पड़ा। उनकी सबसे बड़ी शक्ति उसमानिया दास-परिवार की प्रथा था। अर्थात् मानव को कुत्ते के स्थान पर बादशाह के रिआया पर रक्षा करने तथा वश में करने के लिए ये काम में लाये। अपनी मानवोचित प्रकृति का दूर करके जहाँ तक सम्भव था, इन्होंने सफलता प्राप्त की और पाशव प्रकृति को ग्रहण किया। तथा सहज प्रवृत्ति की एकता की राह का त्याग किया।

खानाबदोश—जिस प्रकार मिस्री तथा सुमेरी सभ्यताओं को सूखा का सामना करना पड़ा, उसी प्रकार इन्हें भी स्टेप पर सूखा का सामना करना पड़ा। स्टेप को वश में करने में इतनी शक्ति व्यय हो जाती है कि कुछ शेष नहीं रह जाता। खानाबदोशी कृषि से कई बातों में उत्कृष्ट है। पशुओं के पालन में तथा आर्थिक तकनीक के विकास में यह कृषि से बढ़कर है। उद्योगवाद के समान है। इसलिए खानाबदोशी में ऊँचे चरित्र तथा व्यवहार की आवश्यकता होती है। अच्छा गड़रिया ईसाई धर्म का प्रतीक है।

स्पार्टन—ईसा के पहले आठवीं शती में सारे हेलनी संसार में अति जनसंख्या की समस्या हो गयी थी और स्पार्टनों ने इस समस्या का समाधान इस प्रकार किया कि ऐसी शक्ति अर्जित की कि सारी आबादी को—उसमानिया संसार की भाँति—सैनिक शिक्षा केवल दी। मानव भावना का तनिक भी विचार नहीं किया। यह भी एकाकी राह थी। स्पार्टा की प्रथा में तथा उसमानिया प्रथा में अनेक समानताएँ हैं। इसका कारण यह है कि दोनों ने, एक-दूसरे से विभिन्न समुदायों ने स्वतन्त्र रूप से तथा एक-दूसरे के जाने बिना एक ही ढंग अपनाया।

पोलेनेशियाई—इनको सागर की चुनौती का सामना करना पड़ा और इन्होंने सागर-यात्रा करने की महान शक्ति अर्जित की। उनका कौशल साधारण कमजोर नौकाओं में महासागरों में यात्रा करने में था। इसका उन्हें दण्ड यह मिला कि प्रशान्त महासागर में ही ये रह गये। यह इस सागर का आर-पार करते रहे किन्तु आत्मविश्वास तथा विश्रान्ति का अभाव था। अन्त में इस तनाव के कारण ये शिथिल हो गये। ईस्टर द्वीप की पत्थर की मूर्तियाँ इस बात की प्रमाण हैं कि इनके निर्माता भूतकाल में महान् रहे होंगे। क्योंकि यह कला इनके पूर्वज अग्रगामी लाये होंगे जिसे उनके वंशजों ने भुला दिया जिस प्रकार नाविक विद्या को इन्होंने भुला दिया।

अनुक्रमणिका

१ विषय-प्रवेश

१ ऐतिहासिक अध्ययन की इकाई

ऐतिहासिक अध्ययन की समझ में आनेवाली इकाइया राष्ट्र अथवा काल नही ह 'समाज' है। सिलसिले से इग्लड के इतिहास की परीक्षा से पता चलता है कि वह केवल अपने में ही समझ में नही आ सकता, वह एक बडे पूण का टुकडा है। इस पूण में अनेक भाग है (जसे इग्लड, फ्रास नेदरलैंडस), जिन्हें उन्ही प्रेरणाओ अथवा चुनौती का सामना करना पडा है किन्तु उनकी प्रतिक्रिया अलग-अलग हुई है। इसके करने के लिए हेलेनी इतिहास से एक उदाहरण लिया गया। जिस 'पूण या 'समाज' में इग्लैंड सम्मिलित है उसे पश्चिमी ईसाई ससार कहा जाता है, समय तथा काल के अनुसार उसका विस्तार नापा गया है और समय के अनुसार उसका आरम्भ। वह अपने से उत्पन्न समाजो से पुराना है किन्तु कुछ ही। उसके आरम्भ के पता लगाने से मालूम हुआ है कि एक और समाज था जो नाश हो गया जिसे ग्रीको रोमन अथवा हेलेनी समाज कहते है उसी से हमारा समाज सम्बद्ध है। यह भी स्पष्ट है कि और भी अनक जीवित समाज है जसे परम्परावादी ईसाई समाज, इस्लामी, हिन्दू तथा सुदूरपूर्व समाजा और ऐसे जीवाश्मित समाजो के चिह्न जिनके बारे में जानकारी नही है, जसे यहूदी तया पारसी।

२ सभ्यताओ का तुलनात्मक अध्ययन

इस अध्याय का अभिप्राय यह है कि सब समाजो अर्थात् सभ्यताओ का निरूपण किया जाय, उनका गुण बताया जाय और उनका नाम बताया जाय जिनका जन्म आज तक हो चुका है और उनमें आदिम अर्थात् असभ्य समाज भी ह। पहली प्रणाली यह होगी कि हम उन सभ्यताओ को लेंगे जो मौजूद है और जिनका निरूपण हो चुका है उनके आरम्भ का अध्ययन करगे कि किसी लुप्त सभ्यता से तो ये सम्बद्ध नहीं रही हैं जसे हेलेनी सभ्यता से पश्चिमी सभ्यता सम्बद्ध है। इस सम्बद्धता के लक्षण ये हैं—(क) सावभौम राज्य (जसे रोमन साम्राज्य) (ख) अन्त काल जिसमें (ग) धमतन्त्र और (घ) वीरकाल में जनरेला दृष्टिगोचर होते हैं। धमतन्त्र तथा जनरेला विनाशोन्मुख सभ्यता के बाहरी तथा आन्तरिक सवहारा परिणाम ह। इन सकेता के सहारे हम देखते हैं कि परम्परावादी ईसाई समाज हमारे पश्चिमी समाज की भाँति हेलनी समाज से सम्बद्ध है। इस्लामी समाज के मूल का पता लगाने हुए हम देखते ह कि मूल में यह दो विभिन्न समाजा—ईरानी तथा अरबी का—मिश्रण है। इनका भी मूल जब हम देखत हैं तब पता चलता है कि हेलेनी प्रवेश के एक हजार साल पहले एक लुप्त समाज इनका मूल है जिसे सीरियाई समाज कहा जाता है।

हिन्दू समाज के पीछे भारतीय समाज था ।

सुदूर पूर्वी समाज के पीछे चीनी समाज था ।

जीवाश्म समाज उन एक अथवा अनेक लुप्त समाजो के अवशेष है ।

हेलेनी समाज के पूर्वज मिनोई समाज है किन्तु हम देखते है कि दूसरे समाजो के समान, जिनका हम निरूपण कर चुके हैं, हेलेनी समाज ने अपने पूर्वजो के आन्तरिक सर्वहारा द्वारा आविष्कृत धर्म को नही अपनाया । इसलिए कहा जा सकता है कि इनमे उनका वास्तविक सम्बन्ध नहीं था ।

भारतीय समाज के पीछे सुमेरी समाज था ।

भारतीय समाज के अतिरिक्त सुमेरी समाज के दो और वंशज थे, हित्ताइती तथा बबिलानी ।

मिस्री समाज का कोई पूर्वज नही था, न उत्तराधिकारी ।

नयी दुनिया में हम चार समाजो का पता पाते है—एडियाई, यूकेटी, मक्सिकी तथा माया ।

इस प्रकार कुल उन्नीस सभ्यताओ के नमूने हमें मिलते है । और यदि हम परम्परावादी ईसाई समाज का विभाजन करते है तो दो है—परम्परावादी बाइजेन्टाइनी (अनातोलिया और बालकन) और परम्परावादी रूसी समाज और सुदूर पूर्व के दो भाग चीनी तथा जापानी कोरियाई । इस प्रकार इक्कीस *समाज* है ।

३ समाजो की तुलना

(१) सभ्यताएँ और आदिम समाज

सभ्यताओ में एक बात समान है कि वे आदिम समाज में से भिन्न वर्ग है । इन अन्तिम वालो की संख्या बहुत अधिक है प्रत्येक बहुत छोटी है ।

(२) सभ्यता की अन्विति का भ्रम

यह भ्रम कि सभ्यता केवल एक है और वह हमारी, इसकी परीक्षा की गयी और अमान्य कर दी गयी । और यह भ्रमपूर्ण सिद्धान्त भी अमान्य कर दिया गया कि सब सभ्यताओ का स्रोत मिस्री है ।

(३) सभ्यताओ के सादृश्य का दावा

तुलनात्मक दृष्टि से सभ्यताएँ नूतन स्थितियाँ है, उनमे सबसे पुरानी का जन्म छ हजार वर्ष हुए हुआ । यह विचार है कि उन पर एक ही जाति के दार्शनिक समकालिक सदस्यो की भाति विचार किया जाय । इस बात की आलोचना की गयी है कि अर्ध सत्य कि 'इतिहास की पुनरावृत्ति नही होती' कोई समुचित कारण नही है और जो प्रणाली अपनायी गयी है उसके विरोध में उचित तर्क नहा है ।

(४) इतिहास, विज्ञान और कल्पना साहित्य

अपने विचारो को प्रस्तुत करने के लिए तीन प्रणालियाँ है जिनमें एक मानव जीवन का रूप भी है । इन तीनो तकनीको का अन्तर विचारा गया है और इतिहास के विषय को प्रस्तुत करने के लिए विज्ञान तथा कल्पना-साहित्य के प्रयोग पर विचार किया गया है ।

२ सभ्यताओं की उत्पत्ति

४ समस्या और उसका न सुलझाना

(१) समस्याका रूप

२१ सभ्य समाजा में १५ पुरानी सभ्यताओ से सम्बद्ध है किन्तु ६ सीधे आदिम समाजों से निकली ह । आज जो पुराने समाज ह वे स्थैतिक ह, किन्तु यह स्पष्ट है कि वे पहले गत्यात्मक तथा प्रगतिशील रहे होग । सामाजिक जीवन मानव प्रजाति से पुराना है कीडो तथा पशुओ में भी वह पाया जाता है, इन्ही आदिम समाजो से अवमानव मानव के स्तर पर आया होगा—ऐसी प्रगति किसी सभ्यता ने नही की । फिर भी जहा तक ज्ञान है आदिम समाज स्थैतिक ह । समस्या यह है कि आदिम से कैसे उन्नति हुई ।

(२) प्रजाति

जिस तथ्य की हम खोज कर रहे ह वह यह है कि मानव में जिन्होने सभ्यता का आरम्भ किया, कोई विशेष गुण रहा होगा या उस वातावरण में कोई विशेषता रही होगी जब दोनो का सामना हुआ होगा । पहला विचार कि एक एक उत्कृष्ट प्रजाति जसे नार्डिक (प्रजाति) ससार में थी जिसने सभ्यता का आरम्भ किया, परखा गया और त्याग दिया गया ।

(३) वातावरण

इस विचार की परीक्षा की गयी कि कुछ वातावरण ऐसे हाते हैं जो सुविधापूण होते ह जिस कारण सभ्यता का विकास होता है और यह सिद्धा त भी गलत निकला ।

५ चुनौती और उसका सामना

(१) पौराणिक सकेत

जिन दो विचारो की परीक्षा की गयी और त्याग दिया गया उनमें भ्रम है । वे भौतिक विज्ञान, जैसे जीव विनान तथा भू विनान का आधार लेते हैं । समस्या वास्तव में आध्यात्मिक है । मानव प्रजाति की पौराणिक कथाओ में जिनमें मानवता की बुद्धि सुरक्षित है पता चलता है कि सभ्यता विशेष भौगोलिक अथवा जीव-वैनानिक परिस्थितिया के कारण नही विकसित होती, इस कारण विकसित हाती है कि मानव के सामने कठिनाई उपस्थित हाती है और उसका सामना करने में उसमें प्रेरणा उत्पन्न होती है ।

(२) पौराणिक आधार पर समस्या

सभ्यता के आरम्भ के पहल अफ्रेशियन रेगिस्तान (सहारा और अरब के रेगिस्तान) जलयुक्त घास के मैदान थे । धीरे धीरे ये सूखने लगे । इस चुनौती का सामना विभिन्न ढग से वहाँ के निवासिया ने किया । कुछ वही रह गये और उन्हाने अपनी आदत बदल दी और खाना-बदोशी जीवन बिताने लगे । कुछ दक्षिण की ओर चले गये जिस ओर घास के मैदान खिसक रहे थे और उष्ण कटिबन्ध में आ गये । उन्होने अपना पुराना जीवन ज्या-का-त्या रखा और आज तक उसी प्रकार रहते ह । दूसरे नील नदी के डेल्टा में चले गये जहाँ उन्हाने दलदलो तथा जगलो की चुनौती का सामना किया, उन्हें साफ किया और मिस्री सभ्यता की नीव डाली ।

इसी प्रकार तथा इन्ही कारणा से सुमेरी सभ्यता का दजला फरात के डेल्टा में आविर्भाव हुआ ।

इसी प्रकार हांगहो नदी की घाटी में चीनी सभ्यता का आरम्भ हुआ। वहाँ किस प्रकार की चुनौती का सामना करना पड़ा अज्ञात है, किन्तु वह सरल नहीं, कठोर रही होगी।

माया सभ्यता का आरम्भ उष्ण कटिबन्धीय जंगलों की चुनौती से आरम्भ हुआ, एण्डियाई सभ्यता का उजाड़ पठार से।

मिनोई सभ्यता सागर की चुनौती से आरम्भ हुई। उसके निर्माता अफ्रीका के सूखे तट से भागे थे, उन्होंने सागर का आश्रय लिया, और तथा पास के टापुओं में बस गये। परन्तु वे न एशिया या यूरोप की मुख्य भूमि से नहीं आये।

सम्बद्ध सभ्यताएँ भौगोलिक कारणों से पैदा नहीं हुईं। मानवी वातावरण उनका कारण था। ये उस शक्तिशाली अल्पसंख्या से निकलीं जिस समाज से उनका सम्बन्ध था। शक्तिशाली अल्पसंख्या की परिभाषा है—वह शासक-वर्ग जिसका नेतृत्व समाप्त हो गया है और जो उत्पीड़क बन गयी है। इस पराङ्मुख सत्ता से आन्तरिक तथा बाहरी सर्वहारा उससे अलग हो जाते हैं और नयी सभ्यता की नींव रखते हैं।

६ विपत्ति के गुण

अन्तिम अध्याय में सभ्यताओं के जन्म का जो कारण बताया गया है वह इस परिकल्पना के आधार पर है कि सरल नहीं कठोर परिस्थितियों के कारण सभ्यताओं का जन्म होता है। इस परिकल्पना के लिए उन स्थलों से प्रमाण दिये गये हैं जहाँ किसी काल में सभ्यताएँ थीं, परन्तु उनका लोप हो गया और फिर वे पुरानी स्थिति में लौट गये।

जहाँ कभी माया सभ्यता थी वहाँ आज उष्ण कटिबन्ध का जंगल है।

भारतीय सभ्यता लंका के उस आधे भाग में थी, जहाँ पानी नहीं बरसता। आज वह प्रदेश फिर सूखा है। भारतीय सिंचाई के अवशेष बताते हैं कि वहाँ कभी सभ्यता थी।

पेटरा और पालमिरा के खंडहर अरब रेगिस्तान के एक नखलिस्तान में हैं।

पैसिफिक सागर के सुदूर द्वीप में ईस्टर की मूर्तियाँ बताती हैं कि वहाँ कभी पालिनेशियाई सभ्यता का केन्द्र रहा होगा।

न्यू इंग्लैंड, जहाँ के यूरोपियन उपनिवेशकों ने उत्तरी अमरीका के इतिहास में बहुत काम किया है, उस महाद्वीप का बहुत ही निर्जन और उजाड़ प्रदेश है।

रोमन कम्पेगना के लैटिन नगरों ने जो कुछ दिन पहले मलेरिया से पूर्ण उजाड़ थे रोमन शक्ति के विकास में बहुत सहायता की। उसकी तुलना कपुआ के सरल स्थिति किन्तु अनुपयुक्त परिणाम से कीजिए। हेरोडोटस, आडेसी तथा एक्सोडस की पुस्तकों से भी उदाहरण दिये गये हैं।

न्यासालैंड के निवासी जहाँ जीवन के साधन सरल हैं उस समय तक असभ्य थे जब सुदूर यूरोप के लोगों ने आक्रमण किया।

७ वातावरण की चुनौती

(१) कठोर देश की प्रेरणा

दो सटे हुए अनेक प्रदेशों की परीक्षा की गयी है। प्रत्येक में पहले वाला कठोर है और किसी-न किसी सभ्यता का वहाँ जन्म हुआ है। हांगहो नदी तथा यांगत्सी नदी की घाटी, अटिका

और बेओशिया, बाइजैन्तिया तथा कालचिडोन, इसरायल, फोएनीशिया और फिलस्तीन, ब्राडेंबुग और राइनलैंड, स्काटलड और इगलड, और उत्तरी अमरीका के अनेक उपनिवेश ।

(२) नयी भूमि द्वारा प्रेरणा

हम देखते है कि अक्षत भूमि की चुनौती अधिक श्रेयस्कर होती है बजाय उस भूमि के जो जोती जा चुकी है और जो पहले के सभ्य लोगो द्वारा सरल बना दी गयी है । इस प्रकार प्रत्येक सम्बद्ध सभ्यता के निरीक्षण से पता चलता है कि उस सभ्यता न उन स्थाना में अधिक उन्नति दिखायी है जो उनके पूवजो के क्षेत्र के बाहर थे । यदि नये क्षेत्र में समुद्र द्वारा आगमन हुआ तो अधिक विकास हुआ है । इसका कारण बताया गया है और यह भी बताया गया है कि नाटक का विकास स्वदेश में होता है और महाकाव्य का समुद्र पार नये उपनिवेश में ।

(३) आघात से प्रेरणा

हेलेनी तथा पश्चिम के इतिहास से अनेक उदाहरण दिये गये है । अचानक पूण पराजय से पराजित दल अपने प्रदेश को व्यवस्थित करता है और विजयी बन जाता है ।

(४) दबाव द्वारा प्रेरणा

अनेक उदाहरणों द्वारा बताया गया है कि जो लोग सीमा पर रहते ह और जिन्हें सदा आक्रमण का सामना करना होता है वे उन लोगा से अधिक विकास करते ह जो सुरक्षित स्थान मे रहते ह । जैसे उसमानली,जा रोमन साम्राज्य की सीमा पर थे अधिक उन्नति कर सके बजाय करमानलिया के जो उनके पूरब थे । बैवेरिया से अधिक उन्नति आस्ट्रिया ने की, क्याकि इन्हे तुर्कों के हमला का सदा सामना करना पडा । रोम के पतन तथा नारमन विजय के बीच के काल क ब्रिटेन का इस दृष्टि से अध्ययन किया गया है ।

(५) दण्डात्मक दबाव की प्रेरणा

अनेक वर्गों तथा प्रजातिया को उन वर्गों तथा प्रजातिया द्वारा शतिया तक दण्ड भोगना पडा । दण्डित वर्गो तथा प्रजातियो ने इस चुनौती को इस प्रकार स्वीकार किया कि उन बातो में उन्होने बहुत प्रगति की जो उनक लिए छोड दी गयी थी क्याकि बहुत सी सम्भावनाएँ उनसे छीन ली गयी थी । सबसे कठोर दण्ड दासता का है । ईसा के पूव अन्तिम दो शतिया मे पूर्वी भू मध्यसागर से जो दास इटली में लाये गय थे, वे ऐसे स्वतन्त्र वग हो गये जो भयानक रूप से शक्तिशाली हो गये ।

इस दास जगत से आन्तरिक सवहारा का नया धम उत्पन हुआ, जिनमें ईसाई धम भी है । इस दष्टि से उसमानलिया के शासन में पराजित ईसाइयो का भी अध्ययन किया गया है विशेषत फनारियोटो का । इस उदाहरण तथा यहूदियो के उदाहरण से प्रमाणित किया गया कि जिन्हें हम प्रजातिगत लक्षण कहते ह वे प्रजातिगत नही है,उस समुदाय की ऐतिहासिक अनुभूतिया के परिणाम ह ।

८ सुनहला मध्यम मार्ग

(१) पर्याप्त और आवश्यकता से अधिक

क्या हम यह कह सकते ह कि जितनी ही कठोर चुनौती होगा उतना ही बढिया सामना हागा ? या यह भी हो सकता है कि चुनौती इतनी कठोर हो कि सामना हो ही न सके ? ऐसा अवश्य

हुआ है कि कुछ चुनौतियो का सामना अनेक समाज नही कर सके, किन्तु अन्त में एक दल ने सफलतापूर्वक उसका सामना किया। उदाहरण के लिए बढते हुए हेलेनीवाद का सामना केल्ट नही कर सके, किन्तु ट्यूटना ने सफलता से उसका सामना किया। सीरियाई ससार में 'हेलेनी प्रवेश' का सामना सीरियाई जगत् ने—जो राष्ट्रियना, यहूदियो (मकाबियन), नस्टोरियना तथा मोनोफाइसाइटो ने असफलता से किया, किन्तु पाँचवाँ सामना इस्लाम ने सफलतापूर्वक किया।

(२) तीन पदो (टर्म्स) में तुलना

फिर भी यह प्रमाणित किया जा सकता है कि चुनौतियाँ बहुत कठोर हो सकती ह। श्रेष्ठतम चुनौती से सदा अधिकतम परिणाम नही निकलता। नार्वे के वाईकिंग प्रवासियो ने आइसलैंड की चुनौती का सफलता से सामना किया, किन्तु उससे कठोर चुनौती ग्रीनलड की वे बरदाश्त नही कर सके। यूरोपियन उपनिवेशको ने डिक्सी से कठोर चुनौती का मसाचसेट में सफलता से सामना किया, किन्तु उससे भी कठोर चुनौती में ल्बरेडर में वे असफल रहे। दूसरे उदाहरण भी ह। प्रहार यदि अधिक दिना तक रहे तो बहुत कठोर हो जाता है। जसे इटली में हैनिबली युद्ध का। चीनी लोग जब मलय में गये तब उन्होने सफलता से सामना किया, परन्तु गोरे चमडे वालो के देश कलिफोरनियाँ में वे असफल रहे। अन्त में पडोस के बबरा पर सभ्यताओ की चुनौतिया का अवलोकन किया गया है।

(३) दो अकाल प्रसूत सभ्यताएँ

इस अश में अन्तिम उदाहरण के विषय को और बढाया गया है। पश्चिमी ईसाई जगत के इतिहास के पहले अध्याय में जो दो बबर दल ईसाई जगत् की सीमा पर थे इतने उत्प्रेरित हुए कि उन्होने प्रतिद्वन्द्वी सभ्यता का विकास आरम्भ किया, किन्तु जन्मते ही उनका विनाश कर दिया गया। ये दो बबर दल थे—सुदूर पश्चिम के केल्टिक ईसाई (आयरलड और आयोवा) तथा स्कडिनेवियाई। इन पर विचार किया गया है कि यदि ये दोना प्रतिद्वन्द्वी रोम तथा राइनलड से चली ईसाई सभ्यता द्वारा समाप्त न कर दिये गये होते तो परिणाम क्या होता।

(४) ईसाई जगत् पर इस्लाम का आघात

पश्चिमी ईसाई जगत् पर इस प्रहार का परिणाम अच्छा हुआ। मध्ययुग में पश्चिमी सभ्यता मुसलिम आइबीरिया की बहुत ऋणी है। बाइजेन्ती ईसाई जगत् पर यह प्रहार बहुत कठोर था इस कारण सीरियाई ल्यिओ के नेतृत्व में रोमन साम्राज्य का फिर से उदय हुआ। मुसलिम ससार से घिरे किल क भीतर ईसाई अरिमत अबीसीनिया की भी परीक्षा की गयी है।

३ सभ्यताओ का विकास

९ अविकसित सभ्यताएँ

(१) पोलिनेशियाई, एस्किमो और खानाबदोश

ऐसा समझा जा सकता है कि एक बार किसी सभ्यता का जन्म हो गया तो वह विकसित होती चलेगी, किन्तु ऐसा नही होता। अनेक सभ्यताओ के उदाहरण दिये गये ह जिनका जन्म तो हो गया किन्तु उनका विकास नही हो सका। एसी अविकसित सभ्यताओ का कारण यह है कि वे कठोर चुनौती तथा कठोरतम चुनौती के बीच पड गयी जिनसे वे असफल हो गयी। ऐसे तीन

उदाहरण ह जिन्हे इस प्रकार के कठोर भौतिक वातावरण का सामना करना पडा । इनमें सामना करने वालो को अपनी सारी शक्ति सामना करने में लगा देनी पडी और आगे के विकास के लिए उनके पास शक्ति बच नही रह सकी ।

पोलिनेशियनो को अपनी सारी शक्ति पैसिफिक सागर के अनेक द्वीपा में आने-जाने में खच हो गयी । अन्त में वे पराजित हो गये और अनेक अलग-अलग द्वीपो में वे आदिम जीवन बिताने लगे ।

एसकिमो ने आकटिक सागर के तट पर के वार्षिक जलवायु के चक्र के अनुसार विशेष क्षमता प्राप्त कर ली ।

इसी प्रकार खानाबदोशो ने स्टेप के अध रेगिस्तान मे वार्षिक चक्र के अनुसार जीवन विताने की दक्षता प्राप्त की । सूखा के समय के खानाबदोश के जीवन के विकास का विश्लेषण किया गया है । यह बताया गया है कि शिकारी लाग खानाबदोश होने के पहले खेतिहर हो गये थे । केन ओ एबेल खेतिहर तथा खानाबदोश के प्रतीक ह । खानाबदोश लोग या तो सूखा बढने के कारण स्टेप के आगे सभ्यता के क्षेत्र में घुसते है या किसी सभ्यता के पतन के कारण जो शून्य उत्पन्न हो जाता है उसमें जनरेला के साथ घुसते है ।

(२) उसमानली वश

जिस चुनौती का परिणाम उसमानिया व्यवस्था थी वह खानाबदाश समुदाय का एस समुदाय पर शासन करना था जो स्थावर थी । उन्हाने समस्या को इस प्रकार सुलझाया कि अपनी नयी प्रजा को भेड-बकरी समझा और दासा को शासक और सनिक बनाकर उन्हें कुत्तो के समान भेड-बकरिया का रक्षक बनाया । ऐसे ही अन्य खानाबदोश साम्राज्या का जिक्र किया गया है । जसे मामलूक, किन्तु उसमानिया व्यवस्था सबसे दक्ष तथा टिकाऊ थी । किन्तु खानाबदोशो के समान इसमें भी कठोरता आ गयी थी ।

(३) स्पाटन

स्पाटना को अधिक आबादी की चुनौती का सामना करना पडा । उन्हाने एसी महान् शक्ति का विकास किया जो अनेक दष्टियों से उसमानलियो की व्यवस्था के समान थी । अन्तर यह था कि स्पार्टा की सनिक जाति स्पार्टा की घनिक वग ही थी । ये भी एक प्रकार क दास थे जिन्हाने अपने ऊपर साथी यूनानियो पर शासन करने का काय ले रखा था ।

(४) साधारण विशेषताएँ

एसकिमो और खानाबदोशा में, उसमानलिया और स्पाटना में एक बात समान है । पहले दोनो में कुत्ते बारहसिंघे, घोडे गाय-बैल उसमानलिया के शासा के दासा की जगह रहत है । इन सब समाजो में मानव को केवल घुडसवार या सिपाही बनाकर अवमानव के स्तर पर गिरा दिया जाता है । सवगुण सम्पन्न मानव नही रह जाते जसा पेरिक्लीज ने अन्त्यष्टि के भाषण में कहा था कि ऐसा ही मनुष्य सभ्यता का विकास कर सकता है । ये अविकसित समाज मक्खियो तथा चीटिया के समाज के समान हैं जो सष्टि के आरम्भ स आजतक वस ही हैं । ये उस समाज के समान भी हैं जिनका चित्रण यूटोपिया में किया गया है । यूटोपिया के सम्बन्ध में विचार किया गया है और बताया गया है कि जब सभ्यता पतनोन्मुख होती है तब एसी कल्पना

की जाती है। उसका अभिप्राय यह होता है कि पतन को रोका जाय और उसी स्तर पर कायम रखा जाय जिस स्तर पर सभ्यता उस समय है।

१० सभ्यताओं के विकास की प्रकृति

(१) दो भ्रामक सकेत

विकास उस समय होता है, जब किसी विशेष चुनौती का सामना ही नहा होता, बल्कि उस सफलता से नयी चुनौती उपस्थित होती है और फिर उस पर विजय प्राप्त होती है। इस विकास को हम कसे नाप सकते ह। क्या हम इससे नाप सकते ह कि समाज ने बाहरी वातावरण पर कितना नियत्रण प्राप्त कर रखा है ? इस प्रकार के नियत्रण की वद्धि दो प्रकार की होती है—या तो मानवी वातावरण पर नियत्रण हो जिसका अथ है पडासी लोगा पर विजय प्राप्त की जाय या भौतिक वातावरण पर विजय प्राप्त हो जिसका अथ है तकनीकी उन्नति। फिर उदाहरण दिये गये ह कि न तो सनिक और राजनीतिक विस्तार और न तकनीकी विकास वास्तविक उन्नति की कसौटी है। सैनिक विस्तार सनिकवाद का परिणाम है जो पतन का चिह्न है। तकनीकी उन्नति चाहे कृषि की हो चाहे औद्योगिक हो वास्तविक विकास की परिचायक नही है। वास्तविकता यह हो सकती है कि तकनीकी उन्नति ऐसे समय हो रही है, जब सभ्यता पतनोन्मुख है, इसके विपरीत भी हो सकता है।

(२) आत्मनिणय की ओर प्रगति

वास्तविक प्रगति अलौकिकीकरण की प्रक्रिया में पायी गयी जिसमें भौतिक कठिनाइयो पर विजय प्राप्त की गयी जिससे वह शक्ति बच रही जिससे बाहरी की अपेक्षा आतरिक चुनौती का सामना समाज कर सका भौतिक चुनौती नहा आध्यात्मिक चुनौती। इस प्रकार के अलौकिकीकरण का उदाहरण हेलेनी तथा आधुनिक पश्चिमी समाजो से दिया गया है।

११ विकास का विश्लेषण

(१) समाज और व्यक्ति

समाज तथा व्यक्ति के सम्बध के बारे में दो मत प्रचलित है—एक यह कि समाज व्यक्तियो के परमाणुओ का समूह है दूसरा यह कि समाज जीवित सगठन है जिसमे प्रत्येक व्यक्ति का उस समाज के बिना कोई अस्तित्व नही है। बताया गया है कि ये दोना विचार भ्रामक ह। वास्तविक बात यह है कि समाज व्यक्तियो के आपसी सम्बध की व्यवस्था है। मानव प्राणी बिना एक दूसरे के सम्बध के मानव नही रह जाता और समाज ही इनके आपसी सम्बध का क्षेत्र है। किन्तु क्रिया का स्रोत व्यक्ति है। सारा विकास क्रियाशील व्यक्तिया अथवा अल्पसख्यका द्वारा आरम्भ होता है। इनका काय दाहरा होता है। पहला यह कि वह अपनी खोज अथवा प्रेरणा की उपलब्धि करते ह और दूसरा यह कि अपने समाज को इस नये जीवन के अनुसार बनाते हैं। सिद्धान्त (यह परिवतन दो में से एक ढग से होता है) या तो जनता भी उसी अनुभूति को प्राप्त करे जो व्यक्ति ने प्राप्त की या उसके बाहरी रूप की नकल करे अर्थात अनुकरण। व्यवहार में थोड अल्पसख्यक को छोडकर यही दूसरा ढग अपनाया जाता है। अनुकरण सरल रास्ता है। इसी राह से जनता अपने नेताओ का अनुसरण कर सकती है।

(२) अलग होना और लौटना व्यक्ति

क्रियाशील व्यक्ति का काय अलग हान और लौटने का दोतरफा रास्ता है—अलग होते ह अपने व्यक्तिगत प्रबुद्धता के लिए, लौटते है अपने समाज का प्रबुद्ध बनाने के लिए। इसके लिए प्लेटो की गुफा का, सत पाल के बीज का, बाइबिल से तथा और स्थला से उदाहरण दिये गये ह। और फिर सन्त पाल, सत बेनेडिक्ट, सन्त ग्रेगरी महान्, बुद्ध, मुहम्मद मक्यिावली तथा दान्ते के व्यावहारिक जीवन से उदाहरण दिये गये ह।

(३) अलग होना तथा तथा लौटना सजनात्मक अल्पसख्यक वग

अलग हाना तथा लौटना अब समाजा का भी लक्षण है जिनके द्वारा मुख्यत समाज बना है। जिस काल में ये अब समाज अपने समाजा के विकास का काय करते ह उसक पहले वे समाज के काय-क्षेत्र से अलग हो जाते ह। उदाहरण के लिए हेलनी समाज क विकास के दूसरे अध्याय में एथ स, पश्चिमी समाज के विकास के दूसरे अध्याय में इटली और अपने तीसरे अध्याय में इग्लैंड। सम्भव है रूस भी अपने विकास के चौथ अध्याय में ऐसा ही करे।

१२ वृद्धि द्वारा भिन्नता

जिस विकास का वणन ऊपर किया गया है वह विकासोमुख समाज के विभिन अलग-अलग अगा की विभिनता है। प्रत्येक मजिल पर कुछ तो मौलिक काय करके मामना करेंगे कुछ उनका अनुकरण करगे तथा कुछ न तो मौलिक कोई काय करगे न अनुकरण करेंगे और समाप्त हो जायेंगे। विभिन समाजा के इतिहास में भी विभिनता होगी, स्पष्टत विभिन समाजो की अलग-अलग विशेषताएँ हागी। कुछ कला में उत्कृष्ट हागे, कुछ धम में और कुछ औद्योगिक आविष्कारा में। *किन्तु सब सभ्यताआ के मूल आधार को नहीं भूलना चाहिए। प्रत्यक बीज का* अपना भविष्य होता है,किन्तु सब बाज एक प्रकार के हाते ह। बोने वाला एक है और एक प्रकार के फस्ल की आशा वह करता है।

४ सभ्यताओ का विनाश

१३ समस्या का रूप

जिन २६ सभ्यताआ का वणन किया गया है (अविकसित सभ्यताआ को मिलाकर) सोलह मर चुकी है। शेष दस—हमारी सभ्यता को छोडकर—सबका पतन हो चुका है। पतन का प्रकार तीन बाता में बताया जा सकता है। सजनात्मक अल्पसख्या में सजनशील शक्ति की असफलता, जिसके कारण वह केवल शक्तिशाली अल्पसख्या रह जाती है बहुसख्या अपनी निष्ठा और अनुकरण करना छोड देती है और समाज में एकता नही रह जाती। हमारा दूसरा काय है यह जानना कि एसे पतना का कारण क्या है।

१४ नियतिवादी समाधान (डिटरमिनिस्टिक सोल्युशन)

कुछ विचारका का मत है कि सभ्यताआ का पतन एसे कारणा से हाता है जिन पर मनुष्य का वश नही है।

(१) हेलेनी सभ्यता के पतन के समय ईसाई तथा गर ईसाई लेखको ने बताया कि उनके समाज का पतन विश्व की जरावस्था के कारण है। किन्तु आधुनिक *भौतिक विज्ञानिया* ने बताया है कि विश्व की जरावस्था नही अनात सुदूर है और हमारी सभ्यता पर उसका कोई प्रभाव नही पड सकता।

(२) स्पेंगलर का कहना है कि समाज जीव के समान है और स्वभावत यौवन, जरा तथा मृत्यु को प्राप्त होगा। किन्तु समाज जीव या प्राणी नहीं है।

(३) कुछ का कहना है कि मानव की सभ्यता के जन्म में कुछ ऐसी बातें हैं कि कुछ दिनों के बाद प्रजाति की सभ्यता तभी जीवित रह सकती है,जब उसमें बर्बर के नये रक्त का संचार किया जाय। इस पर विचार किया गया और यह विचार त्याग दिया गया।

(४) अब रह जाता है चक्र वाला सिद्धान्त, जिसका वर्णन प्लेटो के टिमियस में वर्जिल के चौथ गोपगीत में अथवा और पुस्तकों में लिखा है। यह विचार शायद उस समय आया, जब काल्डियनों ने सौरमण्डल की जानकारी प्राप्त की। किन्तु वर्तमान ज्योतिष के आविष्कारों ने इस सिद्धान्त को अमान्य कर दिया। सिद्धान्त के पक्ष में कुछ नहीं है, विपक्ष में बहुत।

१५ वातावरण से नियन्त्रण का लोप होना

इस अध्याय का विषय अध्याय १० (१) का उल्टा है। जहाँ यह कहा गया था कि भौतिक वातावरण पर *नियन्त्रण की वृद्धि से, जिसे हम तकनीकी उन्नति से नाप सकते हैं और मानवी* वातावरण पर नियन्त्रण की वृद्धि से, जिसे हम भौगोलिक विस्तार से या सैनिक विजय से नाप सकते हैं वे उन्नति के कारण या कसौटी नहीं हैं। यहाँ बताया गया है कि तकनीकी अवनति या सैनिक आक्रमण से सीमा का संकुचित होना पतन के कारण नहीं है।

(१) भौतिक वातावरण

अनेक उदाहरणों द्वारा दिखाया गया है कि तकनीकी अवनति पतन का कारण नहीं, परिणाम है। रोमन सड़कों का त्यागना और मेसोपोटामिया की सिंचाई-व्यवस्था का त्यागना इनसे सम्बन्धित सभ्यताओं के विनाश के कारण हुआ, वे विनाश का कारण नहीं थे। मलेरिया को प्रकोप सभ्यता के विनाश का कारण कहा जाता है, किन्तु बताया गया है कि पतन के कारण मलेरिया का प्रकोप हुआ।

(२) मानवी वातावरण

गिबन का मन्तव्य कि रोम का पतन और विनाश बर्बरता और धर्म (अर्थात् ईसाइयत) के कारण हुआ देखा गया और अस्वीकार कर दिया गया। बाहरी तथा भीतरी सर्वहारा की ये अभिव्यक्तियाँ हेलनी समाज के पतन का परिणाम थीं, जो हो चुका था। गिबन और पीछे का इतिहास नहीं देखता। वह अन्टोनाइन युग को स्वर्ण युग समझता है जबकि वह केवल 'भारतीय ग्रीष्म' था। सभ्यताओं के विरुद्ध अनेक सफल आक्रमणों के उदाहरण देकर बताया गया है कि प्रत्येक में सफल आक्रमण पतन के बाद हुआ है।

(३) नकारात्मक अभिमत

उन्नति करते हुए समाज पर जब आक्रमण होता है तब उससे उन्नति में अधिक उत्तेजना प्राप्त होती है। ऐसा भी सम्भव है कि समाज यदि पतित हो चुका है तो आक्रमण उसे स्फुरण प्रदान करता है। (सम्पादक का नोट है कि पतन (विनाश) शब्द विशेष अर्थ में इस पुस्तक में प्रयुक्त हुआ है)।

१६ आत्मनिर्णय की असफलता

(१) अनुकरण की यान्त्रिकता

असर्जनशील बहुसंख्या सर्जनशील नेताओं का अनुकरण करके ही उनका अनुसरण कर सकती

है। यह अनुकरण केवल यान्त्रिक ढग का अभ्यास है। इस सरल राह मे खतरे है। नेताओ में उनके अनुगामियो की यान्त्रिकता आ सकती है। परिणामस्वरूप सभ्यता अविकसित रह जायगी। यह भी हो सकता है कि नेता प्रेम मार्ग को छोडकर दण्ड देने वाला मार्ग काम में लायें। इस परिस्थिति में सृजनशील अल्पसख्या शक्तिशाली अल्पसख्या हो जायगी और अनुगामी सब मजबूरी से सर्वहारा हो जायेंगे।

जब ऐसा होता है, समाज विघटन की राह पर चला जाता है। उसकी आत्मनिर्णय की शक्ति जाती रहती है। नीचे के उदाहरण बतायेंगे कि ऐसा किस प्रकार होता है।

(२) पुरानी बोतल में नयी शराब

आदर्श यह है कि सृजनशील अल्पसख्यक द्वारा जो नयी शक्ति उत्पन्न होती है उससे नयी सस्थाओ का जन्म होना चाहिए जिनमें वह कार्य करे। वास्तव में वह पुरानी सस्थाओ द्वारा कार्य करता है जो दूसरे कामो के लिए बनी है। किन्तु पुरानी उसके लिए अनुपयुक्त होती है। दो में से एक परिणाम होता है—या तो सस्थाएँ विघटित हो जाती है (क्रान्ति) या वह जीवित रहती है और नयी शक्तियो की विकृति हो जाती है (दुष्टता)। क्रान्ति की परिभाषा यह है कि वह अनुकरण के विलम्ब से उत्पन्न विस्फोट है, दुष्टता या भीषणता अनुकरण की कुण्ठा है। यदि शक्तियो का सस्थाओ से सामजस्य है तो विकास होता रहेगा, यदि क्रान्ति होगी तो विकास सकटमय हो जायगा, यदि दुष्टता होगी तो विघटन होगा। इसके बाद अनेक ऐसे उदाहरण दिये गये है जिनमें पुरानी सस्थाओ पर नयी शक्तियो का सघात हुआ है। पहले वर्ग में आधुनिक पश्चिमी समाज में दो नयी शक्तियो का सघात दिखाया गया है।

दास प्रथा पर उद्योगवाद का सघात—सयुक्त राज्य अमरीका के दक्षिणी राज्यो में युद्ध पर लोकतन्त्र तथा उद्योगवाद का प्रभाव—फ्रास की क्रान्ति के बाद युद्ध की तीव्रता सकुचित स्थानीय राज्यो पर लोकतन्त्र तथा उद्योगवाद का सघात जिसमें राष्ट्रीयतावाद की अतिवृद्धि होती है और मुक्त-व्यापार विफल होता है।

निजी सम्पत्ति पर उद्योगवाद का सघात जैसा पूजीवाद तथा समाजवाद के उदय से प्रकट होता है।

शिक्षा पर लोकतन्त्र का सघात जैसा रोमाचकारी पत्रकारिता तथा फासिस्ट अधिनायकवाद मे प्रकट होता है।

इटालियाई दक्षता का आल्पस पार के राज्यो पर प्रभाव जैसा इग्लैंड को छोडकर अन्य निरकुश शासन के उदय मे प्रकट होता है।

सोलोनी क्राति का हेलनी नगर राज्यो पर सघात जैसा निरकुशता, अवरोध तथा सरदारी से प्रकट होता है।

पश्चिमी ईसाई तन्त्र पर स्थानीयता का प्रभाव जैसा प्रोटेस्टेन्ट क्रान्ति राजाओ का ईश्वरीय अधिकार और देशप्रेम से ईसाइयत का मन्द होना प्रकट होता है।

धर्म पर एकता की भावना का सघात जैसा धार्मिक उन्माद तथा उत्पीडन मे प्रकट होता है।

जाति पर धर्म का प्रभाव जैसा हिन्दू सभ्यता से प्रकट होता है।

श्रमविभाजन पर सभ्यता का सघात जिससे नेताओं में रहस्यवाद और अनुगामियो में एकागी

(२) स्पेंगलर का कहना है कि समाज जीव के समान है और स्वभावतः यौवन जरा तथा मृत्यु को प्राप्त होगा। किन्तु समाज जीव या प्राणी नहीं है।

(३) कुछ का कहना है कि मानव की सभ्यता के जन्म में कुछ ऐसी बात है कि कुछ दिनों के बाद प्रजाति की सभ्यता तभी जीवित रह सकती है जब उसमें बर्बर के रक्त का संचार किया जाय। इस पर विचार किया गया और यह विचार त्याग दिया गया।

(४) अब रह जाता है चक्र वाला सिद्धान्त, जिसका वर्णन प्लेटो के टिमियस में वर्जिल के चौथे गोपगीत में अथवा और पुराणों में किया है। यह विचार सामने उस समय आया, जब काल्डियनों ने सौरमण्डल की जानकारी प्राप्त की। किन्तु आधुनिक ज्योतिष के आविष्कारों ने इस सिद्धान्त को अमान्य कर दिया। सिद्धान्त के पक्ष में कुछ नहीं है, विपक्ष में बहुत।

१५ वातावरण से नियन्त्रण का लोप होना

इस अध्याय का विषय अध्याय १० (१) का उल्टा है। वहाँ यह कहा गया था कि भौतिक वातावरण पर नियन्त्रण की वृद्धि से, जिसे हम तान्त्रिक उन्नति के नाम से जानते हैं और मानवी वातावरण पर नियन्त्रण की वृद्धि से, जिसे हम भौगोलिक विस्तार से या सैनिक विजय से नाप सकते हैं वे उन्नति के कारण या कसौटी नहीं हैं। यहाँ बताया गया है कि तकनीकी अवनति या सैनिक आक्रमण से सीमा का संकुचित होना पतन के कारण नहीं हैं।

(१) भौतिक वातावरण

अनेक उदाहरणों द्वारा दिखाया गया है कि तकनीकी अवनति पतन का कारण नहीं, परिणाम है। रोमन सड़कों का त्यागना और मेसोपोटामिया की सिंचाई-व्यवस्था का त्यागना इनसे सम्बन्धित सभ्यताओं के विनाश के कारण हुआ, वे विनाश का कारण नहीं थे। मलेरिया का प्रकोप सभ्यता के विनाश का कारण कहा जाता है, किन्तु बताया गया है कि पतन के कारण मलेरिया का प्रकोप हुआ।

(२) मानवी वातावरण

गिबन का मन्तव्य कि रोम का पतन और विनाश बर्बरता और धर्म (अर्थात् ईसाइयत) के कारण हुआ देखा गया और अस्वीकार कर दिया गया। बाहरी तथा भीतरी सर्वहारा की ये अभिव्यक्तियाँ हेलनी समाज के पतन का परिणाम थीं, जो हो चुका था। गिबन और पीछे का इतिहास नहीं देखता। वह अन्टोनाइन युग को स्वर्ण युग समझता है जबकि वह केवल 'भारतीय ग्रीष्म' था। सभ्यताओं के विरुद्ध अनेक सफल आक्रमणों के उदाहरण देकर बताया गया है कि प्रत्येक में सफल आक्रमण पतन के बाद हुआ है।

(३) नकारात्मक अभिमत

उन्नति करते हुए समाज पर जब आक्रमण होता है तब उससे उन्नति में अधिक उत्तेजना प्राप्त होती है। ऐसा भी सम्भव है कि समाज यदि पतित हो चुका है तो आक्रमण उसे स्फुरण प्रदान करता है। (सम्पादक का नोट है कि पतन (विनाश) शब्द विशेष अर्थ में इस पुस्तक में प्रयुक्त हुआ है)।

१६ आत्मनिर्णय की असफलता

(१) अनुकरण की यान्त्रिकता

असर्जनशील बहुसंख्या सर्जनशील नेताओं का अनुकरण करके ही उनका अनुसरण कर सकती

है। यह अनुकरण केवल यान्त्रिक ढग का अभ्यास है। इस सरल राह में खतरे है। नेताओ में उनके अनुगामियो की यान्त्रिकता आ सकती है। परिणामस्वरूप सभ्यता अविकसित रह जायगी। यह भी हो सकता है कि नेता प्रेम माग को छोडकर दण्ड देने वाला माग काम में लायें। इस परिस्थिति में सजनशील अल्पसख्या शक्तिशाली अल्पसख्या हो जायगी और अनुगामी सब मजबूरी से सवहारा हो जायेंगे।

जब ऐसा होता है, समाज विघटन की राह पर चला जाता है। उसकी आत्मनिणय की शक्ति जाती रहती है। नीचे के उदाहरण बतायेंगे कि ऐसा किस प्रकार होता है।

(२) पुरानी बोतल में नयी शराब

आदश यह है कि सजनशील अल्पसख्यक द्वारा जो नयी शक्ति उत्पन्न होती है उससे नयी सस्थाओ का जन्म होना चाहिए जिनमें वह काय करे। वास्तव में वह पुरानी सस्थाओ द्वारा काय करता है जो दूसरे कामो के लिए बनी है। किन्तु पुरानी उसके लिए अनुपयुक्त होती ह। दो में से एक परिणाम होता है—या तो सस्थाएँ विघटित हो जाती ह (क्रान्ति) या वह जीवित रहती है और नयी शक्तियो की विकृति हो जाती है (दुष्टता)। क्रान्ति की परिभाषा यह है कि वह अनुकरण के विलम्ब से उत्पन्न विस्फोट है, दुष्टता या भीषणता अनुकरण की कुण्ठा है। यदि शक्तियो का सस्थाओ से सामजस्य है तो विकास होता रहेगा, यदि क्रान्ति होगी तो विकास सकटमय हो जायगा, यदि दुष्टता होगी तो विघटन होगा। इसके बाद अनेक ऐसे उदाहरण दिये गये ह जिनमें पुरानी सस्थाओ पर नयी शक्तियो का सघात हुआ है। पहले वग में आधुनिक पश्चिमी समाज म दो नयी शक्तियो का सघात दिखाया गया है।

दास-प्रथा पर उद्योगवाद का सघात—सयुक्त राज्य अमरीका के दक्षिणी राज्यो में युद्ध पर लोकतन्त्र तथा उद्योगवाद का प्रभाव—फ्रास की क्रान्ति के बाद युद्ध की तीव्रता सकुचित स्थानीय राज्यो पर लोकतन्त्र तथा उद्योगवाद का सघात जिसमें राष्ट्रीयतावाद की अतिवृद्धि होती है और मुक्त-व्यापार विफल होता है।

निजी सम्पत्ति पर उद्योगवाद का सघात जसा पूजीवाद तथा समाजवाद के उदय से प्रकट होता है।

शिक्षा पर लोकतन्त्र का सघात जैसा रोमाचकारी पत्रकारिता तथा फासिस्ट अधिनायकवाद से प्रकट होता है।

इटालियाई दक्षता का आल्पस पार के राज्यो पर प्रभाव जसा इग्लैण्ड को छोडकर अन्य निरकुश शासन के उदय से प्रकट होता है।

सोलोनी क्रान्ति का हेलनी नगर राज्यो पर सघात जसा निरकुशता, अवरोध तथा गद्दारी से प्रकट होता है।

पश्चिमी ईसाई तन्त्र पर स्थानीयता का प्रभाव जसा प्राटस्टेन्ट क्रान्ति, राजाओ का ईश्वरीय अधिकार और देशप्रेम से ईसाइयत का मन्द होना प्रकट होता है।

धम पर एकता की भावना का सघात जसा धार्मिक उन्माद तथा उत्पीडन म प्रकट होता है।

जाति पर धम का प्रभाव जैसा हिन्दू सभ्यता स प्रकट होता है।

श्रमविभाजन पर सभ्यता का सघात जिससे नताओ में रहस्यवाद और अनुगामियो में एकागी-

पन हो जाता है। अन्तिम दोष उत्पीड़ित अल्पसंख्या से प्रकट होता है जैसे यहूदी और आधुनिक मीडा व्यवस्था से प्रकट होता है।

अनुकरण पर सभ्यता का सफर, जो प्राचीन काल की भाँति मचाल की परम्परा पर नहीं है अग्रगामियों पर है।

अधिकांश जो अग्रगामी अनुकरण के लिए चुन जाते हैं वे राजनीतिक नेता नहीं होते वे शासक होते हैं या राजनीतिक आंदोलन होते हैं।

(३) सजनात्मकता का प्रतिशोध अस्थायी अपनत्व की भक्ति

इतिहास का प्रमाण है कि जो वर्ग एक चुनौती का सामना करता है वह दूसरी चुनौती का सामना शायद ही कर पाता हो। अनेक उदाहरण दिये गये हैं और बताया गया है कि यूनानी तथा हिब्रू विचारों से इसका समर्थन होता है। जो एक चुनौती का सामना करने में सफल हो जाते हैं वे आराम करने लगते हैं। यहूदियों ने पुरानी बाइबिल का सामना किया किन्तु नया बाइबिल का करने में असफल रहे। परिक्लीज का एथेंस सत्ता पाल के एथेंस में सिकुड़ जाता है। इटालियाई पुनरुत्थान में जिन केन्द्रों ने सहयोग किया वे पुनर्जागरण में विफल रहे। पीडमांट ऐसे नगरों ने नेतृत्व ग्रहण किया जिनका इटालियाई अभ्युदय में कुछ भी हाथ न था। उन्नीसवीं शती के प्रथम तथा द्वितीय चतुर्थांश में दक्षिण कैरोलिना और वरजिनिया अमरिका के संयुक्त राज्यों में प्रमुख थे, किन्तु घरेलू युद्ध के पश्चात् वे नहीं बढ़ सके, उत्तरी करोलिना बढ़ गया।

(४) सजनात्मकता का प्रतिशोध अस्थायी संस्था की भक्ति

हेलेनी इतिहास के अन्तिम दिनों में नगर राज्यों की भक्ति के जाल में यूनानी फँस गये, रोमन नहीं। रोमन साम्राज्य के भूत ने परम्परावादी ईसाई समाज का विनाश किया। ऐसे उदाहरण भी दिये गये हैं कि राजा संसद शासक, जातियों ने प्रगति को अवरुद्ध किया है। चाहे नौकरशाही रही हो या पुरोहितशाही।

(५) सजनात्मकता का प्रतिशोध अस्थायी तकनीक की भक्ति

जीव विज्ञान के विकास के उदाहरण से पता चलता है कि वातावरण पर पूर्ण विजय पाने वाले जीव विकास में पिछड़ जाते हैं और जो समय के साथ चलते हैं वे आगे बढ़ते हैं। मछलियों से जलस्थलीय जीव अधिक प्रगतिशील रहे बृहदाकार सरिसृप से मानवों के चूहे के समान पूर्वज विकास में अधिक सफल हुए। औद्योगिक क्षेत्र में किसी समुदाय ने नयी तकनीक में पहले कुछ सफलता प्राप्त की जैसे पैडल से चलने वाले स्टीमर के आविष्कारकों ने किन्तु स्क्रू से चलने वाले स्टीमरों के आविष्कारकों के पीछे वे रह गये। डविड और गोलियथ से लेकर आजतक के युद्ध की तकनीक पर विचार किया गया है। एक आविष्कार वाले आराम करते हैं और उनके बदले दूसरा आविष्कार कर लेते हैं।

(६) सैनिकवाद की आत्मघाती प्रवृत्ति

ऊपर के तीन अंशों में आराम करनेवालों के उदाहरण दिये गये हैं। जिससे वे सजनशीलता के प्रतिशोध के शिकार हो जाते हैं। अब हम विपथन के रूप बताते हैं जो यूनानी सूत्र 'कोरोस, यूबरीस ऐथ से व्यक्त होता है। (बहुत अधिक अत्याचारी व्यवहार तथा विनाश)। सैनिकवाद स्पष्ट उदाहरण है। असीरियनों का विनाश इसलिए नहीं हुआ कि वे आराम कर

रहे थे, जैसा पहले अध्याया और विजेताओ क बारे में बताया गया है। ये बराबर सनिकता में उन्नति कर रहे थे। इनका विनाश इसलिए हुआ कि उनकी लडाकू प्रवृत्ति थी। और उनके पडोसियो के लिए वे असह्य हो गये थे। असीरियन का उदाहरण ऐसा है जिन्होन अपने आ तरिक पडोसी पर आत्रमण किया। ऐसा ही आस्ट्रेशियाई फ्रैंका ने तथा तैमूर लगने ने किया। और उदाहरण भी दिये गये ह।

(७) विजय का मद

ऊपर के पराग्राफ के समान ही अ सनिक क्षेत्र से एक उदाहरण दिया गया है। हिल्ड ब्रैड पोप का जा विकसित हाने के बाद अपने को ऊँचाई पर न ले जा सका। इसकी असफलता इसलिए हुई कि विजय के मद में अपने राजनीतिक शस्त्रा का व्यवहार पापात्मक कार्यो म उसने किया। इसी दष्टि से अभिषेक सस्कार की परीक्षा की गयी है।

५ सभ्यताओ का विघटन

१७ विघटन का स्वरूप

(१) साधारण सर्वेक्षण

क्या पतनो के बाद विघटन होना आवश्यक है? मिस्री तथा सुदूर पूव के समाजो मे पता चलता है कि एक और विकल्प है। अर्थात जडीभूत हो जाना। जो हेलेनी सभ्यता का परिणाम हुआ और हमारी सभ्यता का भी हो सकता है। विघटन की मुख्य कसौटी है सामाजिक शरीर का तीन अगा में विभाजन—शक्तिशाली अल्पसख्या, आन्तरिक सवहारा तथा बाहरी सवहारा। पहले जो कहा जा चुका है वह दुहराया गया और आगे के अध्यायो का आयोजन बताया गया।

(२) भेद और पुनर्जीवन

काल माक्स का इलहामी दशन कहता है कि सवहारा के अधिनायकवाद के बाद वग-युद्ध होगा—एक नय समाज द्वारा। माक्स के सिद्धान्त के अतिरिक्त जब समाज ऊपर के बताये तीन टुकडा में विभाजित हो जाता है तब यही होता है। प्रत्येक टुकडा एक नयी सष्टि करता है—शक्तिशाली अल्पसख्या सावभौम राज्य का निर्माण करती है, आन्तरिक सवहारा सावभौम धमतन्त्र बनाता है और बाहरी सवहारा बबर लडाकू दल।

१८ सामाजिक जीवन में भेद

(१) शक्तिशाली अल्पसख्यक

यद्यपि शक्तिशाली अल्पसख्या मे शोषक और सनिक मुख्य ह, भले लोग भी पाये जाते ह। जसे कानूनदा और शासक जो सावभौम राज्य का सचालन करते हैं दाशनिक जो पतनामुख समाजो को अपना दान नान देते हैं, उदाहरण के लिए सुकरात से लेकर प्लोटिनस तक दाशनिका की लम्बी शृखला। दूसरी सभ्यताओ से उदाहरण दिये गये ह।

(२) आ तरिक सवहारा

हेलेनी समाज का इतिहास बताता है कि तीन स्रोता से ये आये—आर्थिक तथा राजनीतिक कारणा से ध्वस्त तथा उनके उत्तराधिकारी हेलनी राज्यो के नागरिक, पराजित लोग दास व्यापार के शिकार ये सब सवहारा ह, समाज में किन्तु समाज के नही। पहले इनकी प्रतिक्रिया

तीव्र होती है परन्तु धीरे धीरे ये शान्त हो जाते हैं और ऊँचे धर्म जैसे ईसाई धर्म का आविष्कार करते हैं। यह धर्म मिथ्रवाद तथा दूसरे प्रतिद्वन्द्वी धर्मों के समान एक 'सभ्य समाज से उत्पन्न हुआ जिसे हेलनी शक्ति ने जीत लिया था। दूसरे समाजों के आन्तरिक सर्वहारा का भी परीक्षा की गयी और वही परिणाम निकला जैसे बेबिलोनी समाज से उत्पन्न यहूदीवाद तथा जरथुस्त्रवाद वैसे ही थे जैसे हेलनी समाज से उत्पन्न ईसाई धर्म और मिथ्रवाद यद्यपि उनका बाद का विकास विभिन्न था जैसा बताया गया है। बौद्ध दर्शन महायान के रूप में परिवर्तित हो गया और चीनी आन्तरिक सर्वहारा के लिए धर्म मिला।

(३) पश्चिमी संसार के आन्तरिक सर्वहारा

यहाँ भी आन्तरिक सर्वहारा के होने का पर्याप्त प्रमाण दिया जा सकता है। उनमें एक है सर्वहारा से एकत्र किये गये बौद्धिक लोग जो शक्तिशाली अल्पसंख्या के एजेंट का काम करते ह। बौद्धिक लोगों की विपत्ताओं का वर्णन किया गया है। किन्तु आधुनिक पश्चिमी समाज के आन्तरिक सर्वहारा नये 'उच्चतर धर्म' के उत्पन्न करने में असफल रहे। यह सुझाव दिया गया है कि इसका कारण यह था कि ईसाई धर्मतन्त्र जिसे पश्चिमी ईसाई समाज की उत्पत्ति हुई है बराबर सजीव रहा है।

(४) बाहरी सर्वहारा

जब तक किसी सभ्यता का विकास होता रहता है, उसका प्रभाव उसके आदिम पड़ोसियों के पास बहुत दूर तक पहुँचता रहता है। वे असृजनशील बहुसंख्या के अंग हो जाते हैं और ये सृजनशील अल्पसंख्या के नेतृत्व में चलने लगते हैं। किन्तु जब किसी सभ्यता का पतन हो जाता है तब यह जादू नहीं चल पाता। बर्बर विरोधी हो जाते हैं और सीमा पर सैनिक दल स्थापित हो जाता है जो आगे बढ़ता है किन्तु बाद में अचल हो जाता है। जब यह अवस्था पहुँच जाती है तब समय बर्बरों का साथ देता है। हेलनी इतिहास से इसका उदाहरण दिया गया है। बाहरी सर्वहारा का जोरदार और कोमल सामना दिखाया गया है। विरोधी सभ्यता का दबाव बाहरी सर्वहारा के आदिम धर्मों को ओलिम्पियाई देवी 'युद्ध दल' बदल देता है। बाहरी सर्वहारा की विजय का फल महाकाव्य होता है।

(५) पश्चिमी संसार के बाहरी सर्वहारा

उनके इतिहास का पुनरावलोकन किया गया और बाहरी सर्वहारा के जोरदार और कोमल सामना के उदाहरण दिये गये ह। आधुनिक पश्चिमी समाज की भौतिक दक्षता के आधिक्य के कारण ऐतिहासिक ढंग की बर्बरता लोप हो गयी। उसके दो गढ़ रह गये। अफगानिस्तान और साऊदी अरब जहाँ के शासक पश्चिमी संस्कृति का अनुकरण कर रहे ह। किन्तु पश्चिमी ईसाई जगत् के पुराने केन्द्रों में ही भीषण बर्बरता उत्पन्न हो रही है।

(६) विदेशी और देशी प्रेरणाएँ

शक्तिशाली अल्पसंख्या तथा बाहरी सर्वहारा को यदि विदेशी प्रेरणा मिले तो उन्हें रुकावट होती है। जब विदेशी शक्तिशाली अल्पसंख्या यदि सार्वभौम राज्य बनाये (जैसे भारत में अंग्रेजों ने) तो वे कम सफल होते ह देशी सार्वभौम राज्य के निर्माण की तुलना में जैसे रोमन साम्राज्य। बर्बर युद्ध-दलों का बहुत कठोर और जोरदार विरोध होता है यदि बर्बरों में विदेशी सभ्यता का कुछ प्रभाव होता है जैसे मिस्र में हाइक्सो का और चीन में मंगोलों का। इसके विपरीत

आन्तरिक सवहारा द्वारा जो 'उच्चतर घम उत्पन्न होता है उसका आकपण इसलिए होना है कि उसमें विदेशी प्रेरणा होनी है। सभी 'उच्चतर धम' यही बनाते हैं।

यह तथ्य कि 'उच्चतर धम' का इतिहास तब तक समझ में नही आ सकता जब तक दो सभ्यताओ का अध्ययन न किया जाय एक वह सभ्यता जिससे प्रेरणा प्राप्त हुइ है और दूसरी जिसने प्राप्त की है—यह बताता है कि जिस आधार पर यह अध्ययन किया गया है—यह आधार कि अलग-अलग सभ्यताएँ अध्ययन के उचित क्षेत्र नही हैं—इस स्थान पर समाप्त हो जाती हैं।

१९ सामाजिक जीवन में आत्मा का भेद

(१) आचरण, भावना और जीवन का विकल्प

जब किसी समाज का पतन आरम्भ होने लगता है तब विकास के काल में व्यक्तियो के आचरण, भावना तथा जीवन की जो विशेषताएँ रहती हैं उनका स्थान दूसरी बात ले लती ह। एक (पहले वाला एक जोडा) निष्क्रिय और दूसरा (बाद वाला) सक्रिय।

सजनात्मकता के दो विकल्प ह, (समपण और आत्मनिग्रह) अनुकरण की शिष्यता के लिए विचलन और आत्मोत्सग।

विकास में जो सजीवता रहती है उसके विकल्प विचलन और पाप की भावना होती है। विकास के साथ जो वस्तुपरक प्रक्रिया का भेद होता है उसकी आत्मपरक भावना में जो व्यवस्था का रूप होता है उसके स्थान पर असामजस्य तथा एकता की भावना आ जाती है। जीवन के स्तर पर काय के क्षेत्र में जाने पर दो विकल्प मिलते हैं। महान् की ओर से सूक्ष्म की ओर जाना जो अलौकिकीकरण की प्रक्रिया में निहित है। इसमे पहले दो विकल्प—पुरातनवाद तथा भविष्यवाद—परिवतन नही ला सकते और इनका अन्त हिंसा होती है। पुरातनवाद घडी को पीछे चलाना है भविष्यवाद ससार म असम्भव युग लाने का प्रयत्न है। दूसरा विकल्प अलगाव और रूपान्तरण परिवतन लाने में सफल होते ह और उनमें अहिंसा होती है। अलगाव पुरातनवाद का अध्यात्मीकरण है, आत्मा के गढ में जाकर ससार का त्याग करना है। रूपान्तरण भविष्यवाद का अध्यात्मीकरण है उससे उच्चतर धम' की उत्पत्ति होती है। जीवन के चारो ढग तथा उनके आपस के सम्बन्ध बताये गये ह। अन्त में यह दिखाया गया है कि इनमें से जीवन की कुछ भावनाएँ शक्तिशाली अल्पसख्या की आत्माओ की विशेषता ह और कुछ सवहारा की आत्माओ की।

(२) त्याग और आत्मनिग्रह की परिभाषा की गयी है उदाहरण दिये गये ह।

(३) पलायन और प्राणोत्सग की परिभाषा की गयी है और उदाहरण दिये गये ह।

(४) विचलन का भाव तथा पाप का भाव।

विचलन का भाव इस कारण होता है कि ससार का शासन सयोग से होता है या आवश्यकता से। बताया गया है कि ये दोनो एक ह। इसके उदाहरण दिये गये ह। कुछ नियतिवादी धम जस काल्विनवाद बहुत शक्तिशाली है और विश्वास उत्पन्न करते ह। इस विचित्रता का कारण बताया गया है।

जहाँ विचलन की भावना नशा है वहाँ पाप का भावना प्रेरणा है। धम मे तथा मूल पाप' के (जिसमें पाप तथा नियतिवाद मिला हुआ है) सिद्धान्त पर विचार किया गया है। हिन्दू दवदून

पाप को ही राष्ट्रीय दुर्भाग्य का कारण बताते हुए यद्यपि यह स्पष्ट नहीं दिखाई पड़ता । इस नैत दूता की शिक्षा ईसाइया ने ली और उनसे हेलेनी ससार ने जो उस समय के लिए नाश का स्वीकार कर रहा था ।

(५) असामजस्य की भावना

यह सभ्यता के विनाश की व्यवस्था म एक निष्क्रिय विकल्प है । यह आचार व्यवहार म प्रकट होता है । (अ) व्यवहार में अभद्रता और बबरता—शक्तिशाली अल्पसख्या सर्वहारा की ओर झुकती जाती है । आन्तरिक सवहारा की अभद्रता और बाहरी सवहारा की बबरता का यह अपनाती है । और विघटन की अन्तिम अवस्था में उनका जीवन और इन लोगो का जीवन बिना अन्तर का हो जाता है । (ब) कला में अभद्रता तया बबरता-विघटनाभिमुख सभ्यता अपनी कला के विस्तार का यही मूल्य चुकाती है । (स) सामान्य भाषा—जातियो के मिलने से अनेक भाषा होती है और भाषा के लिए आपस में होड होती है । उनम से कुछ सामान्य भाषा बन जाती है और उनका अपक्षय होता है । अनेक उदाहरण दिये गये हैं । (द) धम में सहतिवाद–तीन आन्दोलना का अन्तर समझना चाहिए । विभिन्न दशनो के सिद्धान्तो का मिलन, विभिन्न धर्मों का मिलन जैसे इसरायल के धम का पडोसी मतो स मिलन जिसका सफलतापूवक हिब्रू पगम्बरो ने विरोध किया था, और दशन तया धर्मों की एक-दूसरे से सहति । चूँकि दशन शक्तिशाली अल्पसख्या की उपलब्धि है और 'उच्चतर धम आन्तरिक सवहारा की उपलब्धि है' उनकी क्रिया प्रतिक्रिया की तुलना की गयी है उस उदाहरण से जो ऊपर (अ) में दिये गये हैं । जैसे वहाँ, यहा भी यद्यपि सवहारा शक्तिशाली अल्पसख्या की ओर बढता है शक्तिशाली अल्पसख्या आन्तरिक सवहारा की ओर बहुत अधिक बढता है । उदाहरण के लिए ईसाई धम अपने धार्मिक व्याख्या के लिए हेलेनी दशन का प्रयोग करता है । किन्तु यह उसकी तुलना में बहुत कम है जो परिवतन प्लेटो और जूलियन के बीच यूनानी दशन में हुआ । (य) शासक धम का निणय करता है ?—इस अश में हम कुछ विषय से अलग हो गये हैं । उस पर विचार करते हुए जो इसके पहले के अध्याय में दाशनिक सम्राट जूलियन के सम्बन्ध म विचार किया गया है । क्या शक्तिशाली अल्पसख्या उस आध्यात्मिक कमी को राजनीतिक दबाव से अपना दशन या धम लादकर पूरी कर सकती है ? इसका उत्तर है कि कुछ अपवाद को छोडकर यह नही हो सकता और जो धम राजनीति का समथन चाहता है हानि उठायेगा । एक अपवाद है इस्लाम । इस पर विचार किया और यह ऐसा अपवाद नही है जैसा समझा जाता है । इसका उलटा सूत्र कि प्रजा का धम शासक का धम होता अधिक सत्य है ।

(६) एकता की भावना

असामजस्य की निष्क्रिय भावना के विपरीत यह सक्रिय भावना है । इसका परिणाम सावभौम राज्य होना है और इसी भावना से सवशक्तिशाली कानून की कल्पना अथवा सव शक्तिमान् ईश्वर की कल्पना होती है जो विश्व पर शासन करता है । इन दो विचारो की परीक्षा की गयी और उदाहरण दिया गया है । इस सदभ में हिब्रुओ के 'ईर्ष्यालु देवता' जेहोवा को आरम्भ के काल से देखा गया है जब वह ज्वालामुखी सीनिया पवत पर 'जिन' था और एक सच्चे ईश्वर में रूपान्तरित हो गया । और ईसाई धम में भी उसी भाँति आज पूजा जाता

है। इसकी व्याख्या की गयी है कि कैसे वह अपने प्रतिबन्दिया पर विजयी हो गया।

(७) पुरातनवाद

यह वह चेष्टा है कि पतनोन्मुख समाज अपनी असहनीय परिस्थिति से ऊब कर पीछे के युग में जाना चाहता है। प्राचीन तथा आधुनिक उदाहरण दिये गये ह। आधुनिक उदाहरण में गोथिक तथा कृत्रिम पुनरुत्थान भी दिया गया है, राष्ट्रीय कारणा से और अनेक अप्रचलित भाषाओ के। पुरातनवादी आन्दोलन या तो मत हो जाते है या अपने विरोधी आन्दोलन में परिणत हो जाते ह जैसे—

(८) भविष्यवाद

यह ऐसा प्रयत्न है कि वतमान से बचने के लिए अधेरे मे कूदा जाता है जिसका भविष्य अज्ञात है। वह प्राचीन को लेकर परम्परा से शृखला बाधना चाहता है। कला में मूर्ति भजन का काम होता है।

(९) भविष्यवाद में आत्मोत्कृष्टता

जिस प्रकार पुरातनवाद के भविष्यवाद के गत में गिर जाने का भय होता है उसी प्रकार भविष्यवाद रूपान्तरवाद की ऊँचाई पर जा सकता है। दूसरे शब्दो में वह ससार में असम्भव यूटोपिया पाने का प्रयत्न त्याग दे और आत्मा मे अपना जीवन पाने की चेष्टा करे। इस दृष्टि से बन्दी होने के बाद के यहूदियो का इतिहास देखा गया। भविष्यवाद के कारण यहूदिया ने पृथ्वी पर अनेक साम्राज्य स्थापित करने का आत्मघाती प्रयत्न किया—जेरुबबबेल से बार कोकावा तक और रूपान्तर ईसाई धम में।

(१०) विराग और रूपान्तरण

विराग वह मनोवृत्ति है जिसकी बहुत उच्च तथा अटल अभिव्यक्ति बुद्ध की शिक्षा में हुई है। उसका तकपूण परिणाम आत्महत्या है क्याकि पूण विराग ईश्वर के लिए ही सम्भव है। इसके विपरीत ईसाई धम ऐसे ईश्वर को बताता है जो जान-बूझकर विराग का त्याग देता है जिसे वह अपनी शक्ति से कर सकता है। 'ईश्वर ससार को इतना प्यार करता है।

(११) पुनजन्म या पुनरागमन

जीवन के जो चार रूपो की परीक्षा की गयी है उसमें रूपान्तर ही सबसे स्पष्ट है। और वह सम्पूण से सूक्ष्म की ओर काय करता है। विराग के लिए भी यही सत्य है किन्तु विराग केवल अलगाव है और रूपान्तर विराग के बाद फिर लौटना है। यह पुनजन्म पुराने ढग का पुनजन्म नही है। इस पुनजन्म से नये समाज का जन्म होना है।

२० विघटन होने वाले समाज और व्यक्तियों का सम्बन्ध

(१) सजनात्मक प्रतिमा त्राता के रूप में

विकास के काल में सजनात्मक व्यक्ति बराबर चुनौतिया का सफलता से सामना करते ह। पतन के काल में वे पतनोन्मुख समाज के अथवा वहाँ से त्राता बनते ह।

(२) तलवार से सज्जित त्राता

ये लोग सावभौम राज्य के निर्माता तथा रक्षक होते ह। परन्तु तलवार के सारे काय अस्थायी होत ह।

(३) समय मशीन के लिए त्राता

ये पुरातनवादी तथा भविष्यवादी होते हैं। अन्त में ये भी तलवार को अपनाते ह और तलवार वालो के समान ही अन्त होता है।

(४) राजा के आवरण में दार्शनिक

यह प्लेटो की विख्यात औषधि है। यह असफल हो जाती है क्योकि दार्शनिक के विराग तथा राजनीतिक शासको के बलप्रयोग का सामजस्य नही होता।

(५) मानव में ईश्वरत्व

इस गुण के अनेक लोग असफल होते हैं, केवल ईसू ही सफल होता है।

२१ विघटन का लयात्मक रूप

विघटन एक सिलसिले से नही होता। वह पराजय-जमाव के लय से होता है। उदाहरण के लिए सकटकाल की पराजय के बाद सावभौम राज्य जमाव है। सावभौम राज्य का विनाश पूण पराजय है। साधारणत सकटकाल के समय एक जमाव पराजय के बाद होता है और साव-भौम राज्य के समय एक पराजय के बाद जमाव हाना है यह लय जान पडती है—पराजय-जमाव पराजय-जमाव-पराजय-जमाव-पराजय—कुल साढे तीन विस्पदन। अनेक विलुप्त समाजो के इतिहास से इसका उदाहरण दिया गया है। और अपने पश्चिमी ईसाई ससार पर भी यह लागू किया गया यह देखने के लिए कि हमारा समाज विकास के किस स्थान पर पहुँचा है।

२२ विघटन दवारा मानकीकरण

जिस प्रकार विभिन्नता विकास का लक्षण है उसी प्रकार विघटन का लक्षण मानकीकरण है। यहाँ अध्याय समाप्त होता है एव अगले खण्ड में और अध्ययन की बात बतायी जाती है।

(३) समय मशीन के लिए त्राता

ये पुरातनवादी तथा भविष्यवादी होते हैं। अन्त में ये भी तलवार को अपनाते ह और तलवार वाला के समान ही अन्त होता है।

(४) राजा के आवरण में दार्शनिक

यह प्लेटो की विख्यात औषधि है। यह असफल हो जाती है क्योंकि दार्शनिक के विराग तथा राजनीतिक शासको के बलप्रयोग का सामजस्य नही होता।

(५) मानव में ईश्वरत्व

इस गुण के अनेक लोग असफल होते ह, केवल ईसू ही सफल होता है।

२१ विघटन का लयात्मक रूप

विघटन एक सिलसिले से नही होता। वह पराजय-जमाव के लय से होता है। उदाहरण के लिए सकटकाल की पराजय के बाद सार्वभौम राज्य जमाव है। सार्वभौम राज्य का विनाश पूर्ण पराजय है। साधारणत सकटकाल के समय एक जमाव पराजय के बाद होता है और सार्वभौम राज्य के समय एक पराजय के बाद जमाव होता है यह न्य जान पडती है—पराजय-जमाव पराजय-जमाव-पराजय-जमाव-पराजय—कुल साढे तीन विस्पन्दन। अनेक विलुप्त समाजो के इतिहास से इसका उदाहरण दिया गया है। और अपने पश्चिमी ईसाई ससार पर भी यह लागू किया गया यह देखने के लिए कि हमारा समाज विकास के किस स्थान पर पहुँचा है।

२२ विघटन द्वारा मानकीकरण

जिस प्रकार विभिन्नता विकास का लक्षण है उसी प्रकार विघटन का लक्षण मानकीकरण है। यहाँ अध्याय समाप्त होता है एव अगले खण्डो में और अध्ययन की बात बतायी जाती है।